सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

११

(अप्रैल १९११ – नवम्बर १९१३)

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

११

(अप्रैल १९११ - मार्च १९१३)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें अप्रैल १९११ से मार्च १९१३ तक की सामग्रीका समावेश हुआ है। समझौतेकी बातचीत मार्चमें शुरू हुई थी और इस खण्डके प्रारम्भमें ऐसा दिखाई पड़ता है कि उसके फलस्वरूप सत्याग्रहका दीर्घकालसे चल रहा संघर्ष सफलतापूर्वक समाप्त हो जायेगा। लेकिन खण्डका अन्त होता है उस बवंडरकी आगाहीसे जो न्यायालयों द्वारा फरवरी और मार्च १९१३में दिये गये विवाह-सम्बन्धी निर्णयोंके कारण उठनको था। इन निर्णयोंमें भारतीय विवाहकी वैधताको चुनौती दी गई थी जिससे भारतीय नारीकी सामाजिक स्थिति बहुत विषम हो जाती थी। इसी बीच १९१२ की शरद् ऋतुमें श्री गोखलेकी दक्षिण आफ्रिकाकी ऐतिहासिक यात्रा हुई जिससे पारस्परिक सद्भावनाका सुन्दर वातावरण निर्माण हुआ और यह उम्मीद बँध चली थी कि अब सब-कुछ ठीक हो जायेगा। गांधीजी तो आफ्रिकासे छुट्टी पाकर भारत लौटनेकी बात भी सोचने लगे थे: "मैं यहाँसे मुक्त होते ही वहाँ आ जाऊँगा।" (पृष्ठ १६१)।

अप्रैल १ को भारत सरकारने भी अधिकृत तौरसे घोषित कर दिया कि जुलाई १ से गिरमिटिया मजदूरोंका दक्षिण आफ्रिका भेजा जाना बन्द हो जायेगा। यह एक महान विजय थी—दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीकी ही नहीं बल्कि भारत-स्थित उनके सहयोगियोंकी भी जिनमें मद्रासकी दक्षिण आफ्रिकी लीगका नाम खास तौरसे उल्लेखनीय है। यह घटना भारत सरकारमें प्रवासी भारतीयोंके प्रति अपने कर्तव्यकी नई भावनाके उदयकी सूचक थी।

गांधीजी प्रायः पूरा अप्रैल केप टाउनमें रहे। वे संघके प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकमें कुछ संशोधन कराना चाहते थे और इसी सिलसिलेमें संसदके सदस्योंसे मिलने-जुलने और उनका सहयोग प्राप्त करनेमें लगे हुए थे। परन्तु अपने इस व्यस्त कार्यक्रमके बीच ट्रान्सवाल, नेटाल और केपमें जो-कुछ चल रहा था उससे भी वे अपना सम्पर्क बनाये हुए थे। श्री रिच जोहानिसबर्गमें थे और ब्रिटिश भारतीय संघके दफ्तरको सम्हाले हुए थे। श्री पोलक डर्बनमें काम कर रहे थे। और इस प्रकार गांधीजी केप टाउनमें समझौता-वार्ताका नाजुक कार्य दक्षिण आफ्रिकी भारतीय समाजके सम्पूर्ण सहयोगके साथ चला रहे थे। गांधीजी और श्री रिच तथा पोलकके बीच विचारोंकी परिपूर्ण एकताके कारण ही ऐसा हो सका।

भारतीयोंकी यह बुनियादी माँग कि संघके प्रवासी कानूनसे जातीय प्रभेद हटा दिया जाये। विधेयकमें स्वीकार-सी कर ली गई थी; किन्तु ऑरेंज फ्री स्टेटके विधानमें यह जातीय प्रभेद अन्तर्निहित था और उसे कायम रखा जा रहा था। बेशक, भारतीयोंके मौजूदा अधिकारोंसे सम्बन्धित कुछ दूसरे मुद्दे भी थे। पर वे ऐसी समस्या उपस्थित नहीं कर रहे थे जिसका कोई हल ही न हो। असल कठिनाई ऑरेंज फ्री स्टेटके विधानमें अन्तर्निहित जातीय प्रभेदकी ही थी और जनरल स्मट्स या तो फ्री स्टेटके सदस्योंको इस बातके लिए राजी नहीं कर पाये या करना ही नहीं चाहते थे कि

वे—सिद्धान्त रूपसे ही सही—फ्री स्टेटसे प्रभेदमूलक माँगोंको हटाना स्वीकार कर लें और संघमें अन्यत्र चलते हुए रुखको अपना लें। जनरल स्मट्स इस बातके लिए उत्सुक थे कि संसदके इस सत्रकी समाप्तिके पूर्व ही यह विधेयक स्वीकृत हो जाये। इसका कारण था। राज्याभिषेकका उत्सव समीप आ पहुँचा था और वे इस कार्यक्रमको शान्तिपूर्वक सम्पन्न करना चाहते थे। गांधीजीने उन्हें एक वैकल्पिक हल सुझाया जिसे अपना लेनेपर न केवल फ्री स्टेटवालोंसे बचकर निकला जा सकता था बल्कि नेटाल और केपकी तत्कालीन समस्याएँ भी अधिक नहीं रह जाती थीं। गांधीजीका सुझाव यह था कि संघके प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकको उठा लिया जाये और उसके स्थानपर ट्रान्सवाल प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियममें संशोधन किया जाये—क्योंकि सत्याग्रह संघर्ष तो ट्रान्सवालके इसी कानूनको लेकर था। परन्तु जनरल स्मट्स इसे माननेको तैयार नहीं थे। उन्हें भय था कि गोरे लोग उसके फलस्वरूप उत्पन्न होनेवाली स्थितिको स्वीकार नहीं करेंगे। ऐसी दुविधामें जनरल स्मट्सने अपनी अड़चनें गांधीजीके समक्ष रखीं। उन्होंने मंजूर किया कि शायद विधेयकको मुल्तवी रखना होगा लेकिन साथ ही आग्रह किया कि सत्याग्रह बन्द कर दिया जाये। दूसरेकी कठिनाइयोंका खयाल करनेके लिए सदा तैयार और स्वभावसे उदार गांधीजीने स्मट्सकी कठिनाईको समझा और सत्याग्रहको मुल्तवी कर देना स्वीकार कर लिया। इसकी एवजमें उन्होंने स्मट्ससे यह अभिवचन जरूर माँगा कि अगले सत्रमें ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन अधिनियमको रद करते हुए; किन्तु नाबालिगोंके अधिकारोंकी रक्षा करते हुए उपयुक्त कानून पास किया जायेगा; मौजूदा अधिकार कायम रखे जायेंगे; जो सत्याग्रही पंजीयनके हकदार थे उन्हें पंजीयन कराने दिया जायेगा और जो शिक्षित सत्याग्रही उस समय ट्रान्सवालमें रहते थे किन्तु जिन्हें एशियाई अधिनियमके तहत पंजीयनका हक नहीं था उन्हें जबतक आगामी कानून पारित नहीं होता तबतक के लिए वहाँ रहनेकी विशेष अनुमति दी जायेगी। यह बात २१ अप्रैलको हुई थी। दूसरे दिन स्मट्सने आवश्यक आश्वासन दिये और कहा कि आगामी सत्रमें पास किये जानेवाले कानूनमें ऐसी धाराएँ होंगी जिनसे सब प्रवेशार्थियोंको कानूनी समानता मिल जायेगी। ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा २७ तारीखको अपनी सभामें "अनाक्रामक प्रतिरोध बन्द करनेके प्रस्तावको जनरल स्मट्स द्वारा दिये गये वादोंके पूरा होनेकी शर्तोंके साथ स्वीकार" कर लिया गया (पृष्ठ ५७)। २९ अप्रैलसे २० मई तक इस सम्बन्धमें पत्रों और तारोंके आदान-प्रदानके बाद अस्थायी समझौता सम्पन्न हो गया।

किन्तु गांधीजीने एक सतर्कता यह बरती कि टॉल्स्टॉय फार्म, जहाँ कि सत्याग्रहियोंके निवास और निर्वाहकी व्यवस्था की गई थी, कायम रखा गया क्योंकि अभी और कई अन्याय थे जिनका प्रतिकार करना बाकी था और भारतीयोंने उनके सम्बन्धमें आन्दोलन करनेका अपना अधिकार सुरक्षित रखा था। खैर, कुछ समयके लिए शान्ति तो हो गई और गांधीजीने राजनीतिक जीवनकी चिन्ताओंको यथासम्भव एक ओर रखकर अपना ध्यान ज्यादा महत्त्वकी वस्तुओंकी ओर लगाया। वे पहलेसे ज्यादा कठोर आत्मनियमनके प्रयत्नमें, चिन्तन और मननमें तथा शैक्षणिक प्रयोगोंमें जुट गये।

डॉ० प्राणजीवन मेहताके नाम उन्हीं दिनों लिखे गये अपने ८ मईके पत्रमें वे कहते हैं: "यदि इन आठ या छः महीने मुझे कुछ अवकाश रहा, तो मेरा विचार खादी-करघेपर ध्यान देनेका है। . . . मैं देखता हूँ कि यदि मैं शान्तिपूर्वक वकालत करता रहूँ तो प्रतिमास दो सौ पौंड मिलते रहेंगे। किन्तु मैंने उसमें न पड़नेका निश्चय किया है। इस कामका अधिकांश रिचके पास जायेगा। रिचको मैंने अपने ही दफ्तरमें बिठाया है और वह काम करने लगा है।" (पृष्ठ ६६)। इसी पत्रमें वे फीनिक्समें पाठशालाके लिए उपयुक्त इमारत बनवानेकी अपनी इच्छाका भी उल्लेख करते हैं। ए० ई० छोटाभाईके नाम अपने ४ मईके पत्रमें उन्होंने फीनिक्स संस्था ट्रस्टको सौंपनेका इरादा घोषित किया था। इस प्रकार जब वे अपनी साधनामें एक नया निर्णायक कदम उठानेकी तैयारी कर रहे थे तभी उन्हें अपने पारिवारिक जीवनमें एक दुःखद घटनाका मुकाबला करना पड़ा — एक ऐसी घटनाका जो उनके लिए वर्षोंतक मर्मान्तिक कष्टका कारण रही और जिसका उपशम सारी मनुष्य-सुलभ आसक्तियोंके क्रमिक त्याग द्वारा ही हो सकता था। उनके सबसे बड़े लड़के हरिलाल गांधीने, जो कुछ समय तक सत्याग्रही रह चुके थे और इस सिलसिलेमें जेल भी काट चुके थे, माँ-बापसे रूठ कर घर छोड़ दिया और वे भारत चले गये। हरिलाल गांधीकी शिकायत यह थी कि गांधीजीको अपने परिवारके आत्मीय जनोंके — अपने बच्चोंके सांसारिक हितकी कोई चिन्ता नहीं है। हरिलालको ऐसा ही लगता था। जाहिर है कि उनकी आध्यात्मिक प्रगतिके लिए गांधीजीके ज्वलन्त उत्साहको हरिलाल पहचान नहीं सके। इस विषयपर हरिलालके जानेसे पहले पिता-पुत्रकी काफी बातचीत हुई और उसके बाद वे "शान्त मनसे" भारत चल दिये। गांधीजी चाहते थे कि हरिलालका "विकास स्वतन्त्र रीतिसे हो" और चाहते थे कि वे उन्हें "जैसा अच्छा लगे" वैसा वे रहें। किन्तु पिता-पुत्रमें फिर पहले-जैसा सहज-सम्बन्ध कभी नहीं बना।

टॉल्स्टॉय फार्मपर रहते हुए गांधीजीका डॉ० प्राणजीवन मेहता, गोपाल कृष्ण गोखले, मगनलाल, छगनलाल, हरिलाल, मणिलाल और बादमें जमनादास गांधीके साथ नियमित पत्र-व्यवहार होता रहा। प्रतिदिन कुछ समय वे वहाँके स्कूलके बच्चोंको पढ़ानेमें भी लगाते थे। 'महाभारत' और 'इंडियन आइडिल्स' (एडविन आर्नाल्ड द्वारा लिखित कुछ प्राचीन भारतीय आख्यान) के अंश वे बच्चोंको कुछ वैसे ही उत्साहसे सुनाते थे जिसका अनुभव किसी नई मूल्यवान वस्तुकी खोज करनेवाले व्यक्तिको होता है। समय-समयपर वे सरकार द्वारा समझौतेके पालनमें पाई जानेवाली त्रुटियों और प्रवेश तथा अधिवाससे सम्बन्धित दूसरे विषयोंपर गृह-मन्त्रालयको पत्र भी लिख रहे थे। 'इंडियन ओपिनियन' में वे तीन-पौंडी कर, म्युनिसिपैल्टियों द्वारा भारतीयोंको उनकी जमी हुई बस्तियोंसे उखाड़कर अन्यत्र ले जानेके प्रयत्न और गोरों द्वारा चलाये जा रहे एशियाई-विरोधी आन्दोलन-जैसे भारतीयोंसे सम्बन्धित महत्वपूर्ण सवालोंपर इस समय भी लिखते रहे, यद्यपि पहलेसे कुछ कम।

सन् १९११ के अन्तिम दिनोंमें अस्थायी समझौतेकी अवधि समाप्त हो गई। नया प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक तैयार हुआ और गांधीजीको दिखाया गया। किन्तु उसके 'गज़ट' में प्रकाशित होनेपर गांधीजीने उसमें कुछ फर्क देखा: वह धारा, जिसके अनुसार

ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेश करनेवाले शिक्षित एशियाइयोंको हलफिया यह बयान देना पड़ता था कि वे उक्त प्रदेशमें खेती या व्यापार नहीं करेंगे कायम रखी गई थी। पत्रोंका आदान-प्रदान हुआ और सदाकी तरह जनरल स्मट्सने कुछ आपत्तियाँ तो हल कर दीं और कुछके बारेमें आश्वासन दे दिये। ता० २४ जूनको, जब कि विधेयकका केवल दूसरा वाचन ही समाप्त हुआ था, संसद्के सत्रका अवसान कर दिया गया और गांधीजीको यह बताया गया कि जबतक सम्बन्धित कानून पास नहीं हो जाता, पिछली सालका अस्थायी समझौता जारी रहेगा और शिक्षित भारतीयोंको, जिनके नाम गांधीजी देंगे, सन् १९१२ में भी प्रवेश दिया जायेगा।

गांधीजी श्री गोखलेको बार-बार अत्यन्त आग्रहपूर्वक दक्षिण आफ्रिका आनेका अनुरोध करते रहे थे; २२ अक्तूबरको वे वहाँ आ पहुँचे और केप टाउनमें उतरे। दक्षिण आफ्रिकाके गोरे और रंगदार, सब लोगोंने रास्तेमें वे जहाँ-जहाँ रुके वहाँ और शहरोंके नगर-भवनोंमें उनका शानदार राजकीय स्वागत किया। वे विविध वर्गोंके नेताओं और व्यक्तियोंसे मिले; जगह-जगह उनके भाषण हुए; संघके मन्त्रियों — बोथा, स्मट्स और फिशरसे उनकी चर्चाएँ हुईं और गवर्नर-जनरलके साथ उन्होंने भोजन किया।

गोखलेकी यह यात्रा भारतमें दक्षिण आफ्रिकी सवालोंके प्रति लोगोंका ध्यान केन्द्रित करनेमें बहुत सहायक सिद्ध हुई; इसी प्रकार दक्षिण आफ्रिकामें उसने भारतीयोंका हौसला बढ़ाया और साथ ही लॉर्ड एम्टहिलके शब्दोंमें उससे "सद्भावनाका वातावरण तैयार" हुआ (पृष्ठ ४९४)। गोखलेसे मिलनेके बाद लॉर्ड ग्लैड्स्टनने शाही सरकारको अपनी इस भेंटके बारेमें जो टिप्पणी (देखिए परिशिष्ट २२) लिखी थी उसमें श्री गोखलेकी यात्राके सुपरिणामोंका सारांश आ जाता है।

प्रवेश और अधिवास-सम्बन्धी विषम प्रश्न तो इसके बाद सुलझ गये मालूम हुए किन्तु भारतीयोंका उत्पीड़न और दमन दूसरे बहानोंसे जारी ही रहा। उस समय तक यह रिवाज चला आता था कि जायदाद होती तो थी ऐसे गोरोंके नामपर जो सम्बन्धित भारतीयोंके जाने-पहचाने मित्र होते थे किन्तु उसका उपयोग वे भारतीय करते थे और उसपर न्याय-मान्य (इक्वीटेबिल) स्वामित्व भी उन्हींका होता था। अब सुवर्ण-कानून और कस्बा-कानूनके द्वारा इस रिवाजको नष्ट करनेकी कोशिश की जाने लगी। क्लार्क्सडॉर्प, क्रूगर्सडॉर्प, रुडीपूर्ट और फ्रीडीडॉर्प कस्बोंमें क्रमशः बाड़ोंके गोरे मालिकोंको सुवर्ण-कानूनके तहत अपने रंगदार आभोगियोंको निष्कासित करनेके नोटिस दिये गये। व्यापारियोंको अपने व्यापारिक परवाने दूसरोंके नाम बदलवानेकी इजाजत नहीं दी गई। ट्रान्सवाल म्यूनिसिपल अध्यादेशके प्रारूपमें म्यूनिसिपैल्टियोंको फेरीवालोंके परवानोंके नियमनका पूरा अधिकार दे दिया गया था; उन्हें एशियाइयोंकी पृथक बस्तियोंसे खिलवाड़ करनेकी सत्ता भी मिल गई थी। इस प्रकार, व्यापारीके मरने या निवृत्त होनेपर उसके परवानेको रद करके अथवा जिस बस्तीमें वह व्यापार करता था वहाँसे उसे किसी दूसरी और घटिया जगह जानेके लिए बाध्य करके भारतीयोंके कारोबारको चौपट करनेका संगठित प्रयत्न किया गया। इसके सिवा भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंपर तीन-पौंडी कर भी लगता ही रहा।

शीघ्र ही यह भी स्पष्ट हो गया कि जहाँतक अमलका सवाल है, अस्थायी समझौतेके मात्र शब्दोंका ही पालन हो रहा है, उसकी भावनाकी तो हत्या ही हो रही है। बन्दरगाहोंपर प्रवासी कानूनके अमलमें, खासकर नेटालमें, अधिकाधिक सख्ती बरती गई। स्त्रियों और नाबालिग बच्चोंको उतरनेकी इजाजत नहीं दी गई। हकदार प्रवासियोंके साथ उनके रिश्तेके और उसके आधारपर प्रवेशके अधिकारके असम्भव प्रमाण माँगे गये। इस कठिनाईका एक ही उपाय था — सर्वोच्च न्यायालयसे निषेध.देश प्राप्त करना। सर्वोच्च न्यायालयमें बाई रसूलके मामलेमें न्यायमूर्ति वेसेलसके इस निर्णयसे कि भारतीय प्रवासी अपने साथ एक ही पत्नी ला सकता है और वह सचमुच उसकी पत्नी होनी चाहिए, सारा समाज हिल उठा। उसके कुछ ही समय बाद एक और मुसलमान अधिवासीकी पत्नी, फातिमा जसात, को प्रवेशकी इजाजत नहीं दी गई और स्मट्सने मामलेमें हस्तक्षेप करनेसे इनकार कर दिया।

लेकिन समझौतेके भंगकी सबसे गम्भीर घटना तो यह हुई कि एशियाइयोंके पंजीयकने सन् १९१२ के लिए गांधीजी द्वारा प्रस्तुत छः शिक्षित भारतीय प्रवेशार्थियोंके नामोंमें से दो अस्वीकार कर दिये। इस घटनाकी चर्चा करते हुए गांधीजीने गोखलेको लिखा कि "मन्त्रिगण निश्चय ही अपने वादोंको पूरा नहीं कर रहे हैं।" (पृष्ठ ४५९)। उन्होंने सरकारको चेतावनी दी कि यदि सरकारका रवैया यही रहा तो सत्याग्रह पुनः शुरू किया जायेगा। और अन्तमें सन् १९१३ के शुरुआतमें ही केपके सर्वोच्च न्यायालयके जस्टिस सर्लने अपना वह निर्णय दिया जिससे भारतीय समाजको सबसे ज्यादा क्षोभ और आश्चर्य हुआ। बाई मरियमके मुकदमेका फैसला देते हुए उन्होंने कहा कि मुसलमानी रिवाजके अनुसार सम्पन्न विवाह प्रवासी कानूनको मान्य नहीं है। एक दूसरे मामलेमें नेटालके सर्वोच्च न्यायालयने भी मुसलमानी विवाहकी वैधतापर शंका प्रकट की। जाहिर है कि स्मट्सके साथ अप्रैल, १९११ में गांधीजीकी भेंटमें सौहार्द्र और सद्भावनाकी जो मिठास लक्षित हुई थी वह काफूर हो चुकी थी। सरकारके रुखमें फर्क आ गया था और गांधीजीको लाचार होकर इसकी ओर ध्यान देना पड़ा और वे समाजको पहलेसे भी ज्यादा बड़ी लड़ाईके लिए तैयार करनेमें लग गये।

इस अप्रत्याशित निराशा और विफलतासे गांधीजी विचलित नहीं हुए। टॉल्स्टॉय फार्ममें रहते हुए उन्होंने आन्तरिक शक्तिकी जिस विपुल निधिका संचय किया था उसने उनके राजनीतिक जीवनके उलट-फेरोंमें उन्हें सदा आश्वस्त रखा। हमें इस "आश्रम" में उनके बाहरी जीवनका विवरण, उनकी सन् १९१२ की डायरीमें मिलता है। उनका मन बिलकुल ही भिन्न कोटिके सवालोंमें व्यस्त है; इस समय उनके ध्यान और चिन्तनके विषय हैं: शरीर-श्रमका सिद्धान्त, स्वास्थ्यप्रद और साथ ही सात्त्विक आहार, स्वभाषाके माध्यम से दिया गया शिक्षण आदि। आन्तरिक ताजगीके लिए वस्तु-गत सत्यका सान्निध्य एक महत्त्वपूर्ण साधन है। गांधीजीकी उक्त प्रवृत्तियाँ इसी मनो-वैज्ञानिक सिद्धान्तकी ओर संकेत करती मालूम होती हैं। वे इस समय एक पाठशालाके आचार्य थे — जिसमें लड़नेकी नहीं, किशोर बालक-बालिकाओंके विकासमें सहायता देनेकी बात थी। आय-व्ययका अत्यन्त बारीकीसे रखा गया हिसाब आहार-व्यवहारमें उनकी मितव्ययिताका — सादगीका, और थोरोके शब्दोंमें कहें तो, "स्वल्पीकृत ऐन्द्रिय

परिवेश" का सूचक है। इस हिसाबमें रोज-रोज जिन वस्तुओंका उल्लेख होता है, उन्हें देखिए: चमड़ा — यह कैलेनबैकके लिए खरीदा जाता था, कैलेनबैक अपने वर्गमें विद्यार्थियोंको चप्पलें बनाना सिखाते थे जिसे उन्होंने ट्रैपिस्ट साधुओंके मठमें सीखा था; शक्कर — यह नमककी जगह काममें आती थी; व्यक्तिगत चिट्ठियोंके लिए स्टैम्प — लेकिन ये चिट्ठियाँ प्राप्त नहीं हैं; लॉली स्टेशनसे प्रतिदिन आनेवाले दूधकी कीमत; उन यात्रियोंका रेलभाड़ा जो अपनी समस्याएँ सुलझानेके लिए टॉल्स्टॉय फार्म आते रहते थे।

दिसम्बरकी डायरीमें एक तारीखमें यह टीप मिलती है कि अगले साल 'इंडियन ओपिनियन' में और ज्यादा घाटा होगा। पैसेकी समस्या कठिन हो गई थी — टॉल्स्टॉय फार्म, फीनिक्स, शिक्षाके प्रयोग आदिके लिए पैसेकी जरूरत थी और टाटाके दानसे अथवा डॉ० मेहताकी अक्षय उदारतासे उसकी केवल आंशिक पूर्ति ही हो सकती थी। अपनी सत्योपासनाके प्रसंगमें अब गांधीजीने जीविकाके लिए वकालतका त्याग कर दिया था और कठिनाईका मुख्य कारण यही था। डॉ० प्राणजीवन मेहताके नाम अपनी सन् १९११की चिट्ठियोंमें गांधीजी एकाधिक बार अपनी भारत लौट आनेकी इच्छाका उल्लेख करते हैं। गोखलेकी दक्षिण आफ्रिकाकी यात्राके बाद उनकी यह इच्छा और तीव्र हो गई दिखती है। २६ नवम्बर १९१८के पत्रमें वे कहते हैं कि उन्होंने गोखलेको आश्वासन दिया है कि वे भारत तबतक नहीं लौटेंगे, जबतक उन्हें वहाँ उनकी जगह लेनेवाला कोई व्यक्ति नहीं मिल जाता और यह व्यक्ति सम्भवतः पोलक होंगे। १ दिसम्बरको अपनी डायरीमें वे कहते हैं कि मैंने भारतीय पोशाक पहनना शुरू कर दिया है। मातृभूमिकी पुकारको अब वे और नहीं टाल सकते; दक्षिण आफ्रिकासे विदाकी घड़ी निकट आ गई है और वे प्रस्थानकी तैयारी कर रहे हैं।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम आश्रम संरक्षक और स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिज़र्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट) तथा संग्रहालय; नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्ली; सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी, पूना; कलोनियल ऑफिस और इंडिया ऑफिस लाइब्रेरीज़, लन्दन; श्री छगनलाल गांधी, श्रीमती राधाबेन चौधरी, श्रीमती सुशीलाबेन गांधी, श्री सी० के० भट्ट, श्री रेवाशंकर सोढा, श्री नारणदास गांधी, श्री यूजेन जोसेफ पॉल, श्री ए० एच० वेस्ट, डॉ० कूप्पन; गांधीजीनी साधना और 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री' पुस्तकों और निम्नलिखित समाचारपत्रों तथा पत्रिकाओंके प्रकाशकोंके आभारी हैं : 'केप टाइम्स', 'डायमण्ड फील्ड एडवर्टाइज़र', 'इंडियन ओपिनियन', 'द ट्रान्सवाल लीडर', 'स्टार', 'टाइम्स आफ इंडिया' और ऑनरेबिल मिस्टर गोखलेज़ विज़िट टु साउथ आफ्रिका, १९१२।

अनुसन्धान और सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, गांधी स्मारक संग्रहालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्सके पुस्तकालय, सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्ली, के अनुसन्धान तथा सन्दर्भ विभाग, साबरमती संग्रहालय और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद और श्री प्यारेलाल नय्यर हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकलें तैयार कर देनेके लिए हम सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

विभिन्न अधिकारियोंके नाम लिखे गये पत्र तथा अभ्यावेदन, समाचारपत्रोंको लिखे गये पत्रादि और सभाओंमें पास हुए प्रस्ताव जो इस खण्डमें शामिल किये गये हैं, उनको गांधीजीका लिखा माननेका आधार बहुत-कुछ वही है, जिसका हवाला खण्ड १ की भूमिकामें दिया जा चुका है। यदि किन्हीं शीर्षकोंको किन्हीं विशेष कारणोंसे सम्मिलित किया गया है तो उनका खुलासा पाद-टिप्पणियोंमें कर दिया गया है। गांधीजीके जो लेख 'इंडियन ओपिनियन'में उनका नाम दिये बिना प्रकाशित हुए थे उनको गांधीजीके आत्मकथात्मक लेखोंमें सामान्यतः मिलनेवाले संदर्भों, उनके सहयोगियों —छगनलाल गांधी और एच० एस० एल० पोलककी सम्मति तथा अन्य उपलब्ध साक्ष्यके आधारपर पहिचाना गया है।

उपलब्ध हिन्दी सामग्रीको पुनः प्रस्तुत करते समय मूल रूपको ज्योंका-त्यों बनाये रखनेका पूरा-पूरा प्रयास किया गया है। मूलमें पाये जानेवाले एक ही नामके विभिन्न रूपोंको ज्योंका-त्यों रहने दिया गया है।

सम्पादकोंकी ओरसे जोड़े गये शब्द खड़े कोष्ठकोंमें दिये गये हैं। अंग्रेजीसे उद्धृत किये गये अंश गहरी स्याहीमें हाशिया छोड़कर छापे गये हैं। संवाददाताओं आदि द्वारा तैयार किये गये गांधीजीके भाषणोंके परोक्ष विवरण और ऐसे लेखांश भी, जो गांधीजीके नहीं हैं, गहरी स्याहीमें छापे गये हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे किये गये अनुवादको मूलके अधिक-से-अधिक निकट रखने और उसे सुपाठ्य बनानेका भरसक प्रयास किया गया है। स्वयं गांधीजी द्वारा किये गये गुजराती अनुवादोंका अनुवाद करनेमें भी यथासम्भव उनके मूल अंग्रेजी पाठको सामने रखा गया है।

प्रत्येक शीर्षककी तिथि दाहिनी ओर सबसे ऊपर दी गई है। यदि मूलमें तिथि-का उल्लेख नहीं मिला, तो खड़े कोष्ठकमें उसकी अनुमानित तिथि, जहाँ आवश्यक समझा गया है, दे दी गई है। अनुमानका कारण पाद टिप्पणियाँ देकर स्पष्ट किया गया है। कुछ निजी पत्रोंकी मूल प्रतियोंमें विक्रमी पंचांगके अनुसार तिथियाँ मिलती हैं। वहाँ उनके साथ ही खड़े कोष्ठकोंमें ग्रिगोरियन (अंग्रेजी) पंचांगके अनुसार तिथियाँ निकाली गई हैं और आवश्यकता पड़नेपर आन्तरिक तथा बाह्य साक्ष्यके आधारपर वर्ष निश्चित किया गया है। साधन-सूत्रके साथ अन्तमें दी गई तिथियाँ प्रकाशनकी हैं।

पाद टिप्पणीमें जहाँ भी कहीं इस मालाके खण्ड १ का हवाला दिया गया है वह अगस्त १९५८ के संस्करणसे सम्बन्धित है। "आत्मकथा" और 'दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास' का हवाला देते हुए उसके विभिन्न संस्करणोंका विचार रखते हुए, केवल खण्ड और परिच्छेदका उल्लेख किया गया है।

साधन-सूत्रोंमें एस० एन० संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका; जी० एन० गांधी स्मारक निधि तथा संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज पत्रोंका; और सी० डब्ल्यू०, कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी (सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

इस खण्डसे सम्बन्धित और इसे अधिक अच्छी तरह समझनेमें सहायक सामग्री परिशिष्टोंके रूपमें दी गई है। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालका तारीखवार जीवन-वृतान्त तथा इस खण्डकी पारिभाषिक शब्दावली भी दी गई है।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. तार: जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल १, १९११

गांधी
जोहानिसबर्ग

फ्री स्टेटवाले[1] इस समय विचार कर रहे हैं। अन्तिम निर्णय सम्भवत: मंगलवारको।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५३९७) की फोटो-नकलसे।

२. मगनलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश

चैत्र सुदी ३ [अप्रैल २, १९११][2]

चि० मगनलाल,

मैंने डॉ० मेहतासे[3] केवल उनका विचार जानना चाहा था। उत्तरमें मुझे उन्होंने तुम्हें तथा एक किसी और आदमीको शीघ्र ही इंग्लैंड भेजनेकी अनुमति दे दी है। इस अनुमतिका लाभ हम अभी तुरन्त तो नहीं उठा सकते; किन्तु तुम्हें यह इसलिए लिखे दे रहा हूँ कि यह बात तुम्हारे ध्यानमें रहे। यदि छगनलाल स्वदेश जायेगा तो देरी हो जायेगी, मेरा भी ऐसा ही . . .

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६२६) से।
सौजन्य: छगनलाल गांधी

१. ऑरेंज फ्री स्टेटके संघ संसद्-सदस्य; ये आफ्रिकावासी भारतीयोंकी इस माँगपर विचार कर रहे थे कि स्मट्स-गांधी समझौतेके अन्तर्गत हर साल जिन छः भारतीयोंको उपनिवेशमें आने दिया जायेगा, उन्हें फ्री स्टेटमें अधिवासका पूरा अधिकार भी दिया जाये। प्रस्तावित प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकमें उन्हें यह अधिकार नहीं दिया गया था; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ५०२-०३, ५१२-१४ और ५३२-३३।

२. मगनलाल गांधीके इंग्लैंड जानेकी बातपर सरगरमीसे विचार सन् १९११ में किया गया था। उस वर्ष चैत्र सुदी ३ को अप्रैलकी २ तारीख पड़ी थी; देखिए "पत्र: मगनलाल गांधीको", पृष्ठ ७६-७७।

३. डॉ० प्राणजीवन मेहता, एम० डी०, बैरिस्टर, जिन्होंने गांधीजीके सन् १८८८ में इंग्लैंड पहुँचते ही उनकी देख-रेखका भार अपने ऊपर ले लिया और उन्हें "अंग्रेजी शिष्टाचार सिखाया"। वे तबसे मृत्यु-पर्यन्त (सन् १९३३ तक) गांधीजीके मित्र रहे और टॉल्स्टॉय फार्मकी स्थापना और संचालनसे लेकर चम्पारन सत्याग्रह तक, गांधीजीके सभी कामोंमें बड़ी दिलचस्पी लेते रहे। कविवर राजचन्द्रसे गांधीजीको उन्होंने ही मिलाया था। देखिए खण्ड ९ और *आत्मकथा*, भाग १, अध्याय १३ और १४; भाग २, अध्याय १ और भाग ५, अध्याय १६।

३. तार: जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल ३, १९११

गांधी
जोहानिसबर्ग

कल खासी सभा[1] हुई। प्रजातिगत प्रतिबन्ध न हटवा सकनेकी सूरतमें सत्याग्रहका पूर्व संकेत देते हुए ट्रान्सवालका समर्थन और रिचके[2] प्रति सम्मान व्यक्त करते हुए सात प्रस्ताव[3] पास हुए। रिच आज ही पुत्र-सहित रवाना। उनके नाश्तेका प्रबन्ध करें।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४०६) की फोटो-नकल से।

१. और ३. केपके भारतीयोंकी इस सभाने संघ-सरकारके प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकमें, अन्य बातोंके अलावा, निम्नलिखित माँगें भी की थीं: (१) अधिवासी एशियाइयोंके बच्चों और गोरोंके अधिवासके सबूतकी बात न्यायालयोंपर छोड़ दी जाये; (२) प्रवासी अधिकारीके निर्णय न्यायालयोंके अधिकार-क्षेत्रमें रहें; (३) केपकी वर्तमान शैक्षणिक परीक्षा, जो अपेक्षाकृत आसान है, बरकरार रखी जाये; और (४) शिक्षित एशियाई प्रवासियोंको संघके किसी भी प्रान्तमें प्रवेश और निवासकी स्वतंत्रता हो। सभाने यह विकल्प भी प्रस्तुत किया था कि अगर यह सब नहीं हो सके तो केप और नेटालके कानूनोंको अपने वर्तमान रूपमें रहने दिया जाये और ट्रान्सवाल प्रवासी कानूनमें संशोधन कर दिया जाये। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, ८-४-१९११।

२. एल० डब्ल्यू० रिच, थिऑसफिस्ट और जोहानिसबर्गकी एक व्यापारी पेढ़ीके मैनेजर; बादमें गांधीजीके कानून-मुन्शी (आर्टिकल्ड क्लार्क) हो गये; लन्दनमें बैरिस्टरीकी परीक्षा पास की (देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ७१ और ९२); दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके मन्त्री (खण्ड ६, पृष्ठ २४३)। देखिए **आत्मकथा**, भाग ४, अध्याय ४ और १३ और **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, परिच्छेद १४ और २३। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके सम्बन्धमें लिखी उनकी पुस्तिकाके लिए देखिए खण्ड ७, परिशिष्ट ८।

६. तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल ५, १९१

गांधी
जोहानिसबर्ग

सचिवने वैकल्पिक प्रस्ताव माँगे जो लिख रहा हूँ। कल दे दूंगा विकल्प ट्रान्सवाल कानूनमें संशोधन।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४११) से।

७. कुमारी मॉड पोलकके नाम लिखे पत्रका अंश[1]

[केप टाउन]
अप्रैल ५, १९१

...एक और चीज है जिसके कारण ट्रान्सवालके सैकड़ों भारतीय पूरी तरह बरबा भले न हों उन्हें बहुत अधिक कष्ट होनेकी सम्भावना तो है ही; और वह यह है कि सन् १९०८ के स्वर्ण कानून (ट्रान्सवाल) के खण्ड १३० में एक यह व्यवस्था की गई है कि किसी एशियाई अथवा रंगदार व्यक्तिको उक्त कानून द्वारा प्रदत्त किसी भी अधिकारक स्वामित्व अथवा शिकमी पट्टा प्राप्त नहीं हो सकता। मालूम हुआ है कि इस कानूनक असर कई शहरों और कस्बोंपर पड़ा है। क्लार्क्सडॉर्पके भारतीयोंको उन जमीनोंक खाली करनेका नोटिस मिल चुका है, जिनपर वे रह रहे हैं।[2] ये नोटिस उन्हें उक्त जमीनोंके मालिकोंकी ओरसे मिले हैं; क्योंकि मालिकोंको सरकारने सूचित किया है कि वे अपने नामपर पंजीकृत बाड़ोंका उपयोग एशियाइयोंको करनेके लिए देकर कानूनक उल्लंघन कर रहे हैं। सर्वोच्च न्यायालयके एक फैसलेमें कहा गया है कि जिन एशिया इयोंके पास पट्टे हैं उन्हें, यदि उनका पट्टा इस कानूनके पास होनेके पहलेका है तो पट्टेकी अवधिके अन्दर उनके स्थानोंसे नहीं हटाया जा सकता। लेकिन इससे मौजूद

१. इसे एच० एस० एल० पोलककी बहिन मॉड पोलकने, जो लन्दनकी दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारत समितिकी अवैतनिक सहायक मन्त्री थीं, मई ५, १९११ को उपनिवेश कार्यालयको भेज दिया था।

२. सरकारी वकीलने १९०८ के स्वर्ण कानूनके खण्ड १३० के अन्तर्गत क्लार्क्सडॉर्पके यूरोपीय बाड़ मालिकोंको यह नोटिस दिया था कि वे रंगदार लोगोंको बाड़ेकी शिकमी मालिकी भी न दें। फलस्वरू यूरोपीय मालिकोंने अपनी भारतीय रैयतको बाड़े खाली कर देनेका नोटिस दिया था।

अधिकारोंकी रक्षा नहीं हो सकेगी। कारण, लम्बी अवधिके पट्टे बहुत कम लोगोंके पास हैं। फलस्वरूप मासिक किराया देकर रहनेवाले पट्टेदार तो बरबाद हो जायेंगे। वकीलोंकी राय तुम्हें भेजी जा चुकी हैं; उससे प्रकट होता है कि यदि कानून अमलमें लाया गया तो ट्रान्सवालके खनिज क्षेत्रोंमें रहनेवाली सारी भारतीय आबादी वहाँसे हटा दी जायेगी। इस योजनामें जोहानिसबर्ग भी शामिल है और सबसे अधिक भारतीय जोहानिसबर्गमें ही रहते हैं। मेरा विश्वास है कि जब साम्राज्य-सरकारने इस कानूनको अपनी मंजूरी दी थी तब उसने यह कभी न सोचा होगा कि उसके इतने अनिष्टकर और विनाशकारी परिणाम होंगे।

[अंग्रेजीसे]

सी० डी०, ६०८७ और 'इंडियन ओपिनियन' २७–४–१९११ से भी।

८. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
बुधवार [अप्रैल ५, १९११]

प्रिय रिच,

कल मैं विरोधी-दलके सचेतक [व्हिप] डॉ० हेवार्ट और विसेंट वेरीसे मिला। जे० डब्ल्यू० जैगरसे[1] आज तीसरे पहर मिलूँगा। मैं यथा सम्भव उन सबसे मिल लेना चाहता हूँ जिनसे मैं और जो मुझसे मिलना चाहते हैं। जिन सदस्योंसे मैं कल मिला उनसे अलेक्जैंडरने[2] मेरा परिचय कराया। उन्होंने अलेक्जैंडरका समर्थन करनेका वचन दिया है। उन्हें स्वयं बहुत अवकाश नहीं था; किन्तु उन्होंने माना कि मुद्दा बहुत सीधा सादा है। यह करिश्मा जनरल बोथा द्वारा लॉर्ड क्रू को भेजे गये खरीतेका[3] है। मुझे विश्वास है कि यदि विधेयक विचारके लिए आया भी तो हम जिस संशोधनकी[4] माँग कर रहे हैं उसके बिना जनरल स्मट्स उसे प्रस्तुत करनेका साहस न करेंगे। मेरा खयाल है, उन्होंने नया मुद्दा उठानेका अपना आरोप तो छोड़ ही दिया था।[5]

१. संघ विधान-सभाके सदस्य।

२. मॉरिस अलेक्ज़ैंडर; संसदके यहूदी सदस्य; आफ्रिकावासी भारतीयोंके पक्षसे उनकी बड़ी हमदर्दी थी और जहाँतक संघ-सरकारके प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकका असर भारतीयोंपर होता था, उन्होंने उसकी कई धाराओंका बड़ा विरोध किया था।

३. दिसम्बर २०, १९१० का खरीता; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ५२१।

४. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४८१-८२।

५. यहाँ स्पष्टतः गांधीजीके कहनेका तात्पर्य यह है कि "मेरा खयाल है, स्मट्सने भारतीयोंके विरुद्ध लगाये गये अपने इस आरोपको वापस ले लिया है कि वे नये मुद्दे उठा रहे हैं।" **ट्रान्सवाल लीडरके** नये सम्पादकने भी इस बातसे सहमति प्रकट करते हुए लिखा था कि तटवर्ती प्रान्तोंमें प्रवासी विधेयकमें संशोधन करनेकी माँग एक नई माँग है। पोलकने उक्त सम्पादकको यह बताते हुए पत्र लिखा कि "शिक्षित

सोरावजी[1] वार-वार लिख रहे हैं कि मुझे साम्राज्य-सम्मेलनके[2] लिए लन्दन जाना चाहिए। मैं तय नहीं कर पा रहा हूँ। यदि आन्दोलन समाप्त हो गया तो शायद यह ठीक रहे। इस स्वर्ण-कानूनकी बातको लेकर मैं परेशान हूँ। यह वहुत ही रद्दी मामला है। सम्भव है, इस सम्बन्धमें कुछ किया जा सके। यदि संघर्ष समाप्त नहीं होता तो मुझे अपना जाना विलकुल असम्भव लगता है। सोरावजी तुमसे इस सम्बन्धमें वातचीत कर लें। मैंने मॉडको स्वर्ण-कानूनके सम्बन्धमें हिदायतें दे दी हैं और यह सुझाव दिया है कि वह मेरी टिप्पणियोंकी प्रतिलिपि तैयार करके उपनिवेश कार्यालय तथा भारत-कार्यालयको भेज दे।[3]

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४१९) की फोटो-नकलसे।

भारतीय प्रवासियोंकी संख्याको सीमित करनेकी वात" को गांधीजीने केवल ट्रान्सवालके संदर्भमें स्वीकार किया है और गांधीजीकी इस स्वीकृतिके आधारपर — "नेटालके भारतीयोंसे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि उन्हें आज जो अधिकार प्राप्त हैं, उनसे वे अपने आपको वंचित कर लें।" — रिचने भी लिखा कि यह तो ठीक है कि प्रवासी-विधेयक "१९०७ के प्रवासी अधिनियम तथा पंजीयन कानूनको रद कर देता है, लेकिन यह फ्री स्टेटके कानूनको लगभग फिरसे लागू कर देता है. . . और फ्री स्टेटका कानून भारतीयोंके लिए वड़ा अपमानजनक है।" उन्होंने यह आश्वासन दिया कि "अगर विधेयकमें संशोधन करके. . . भारतीयों द्वारा उठाई गई आपत्तियोंका निराकरण कर दिया जाता है. . . तो वह आन्दोलन, जो आपको नागवार गुजरता है, समाप्त हो जायेगा. . .। संघके किसी भी हिस्सेमें प्रजातिगत प्रतिवन्ध किसी भी हालतमें नहीं होना चाहिए।" देखिए **इंडियन ओपिनियन**, १५-४-१९११।

१. सोरावजी शापुरजी अडाजानिया; दक्षिण आफ्रिकामें संघर्षका दूसरा दौर इन्हींसे प्रारम्भ हुआ था। शिक्षित भारतीयोंके अधिकारोंकी परीक्षा लेनेके खयालसे उन्होंने कई वार ट्रान्सवालमें प्रवेश किया और सबसे ज्यादा दिनों तक जेल तथा निर्वासन भोगा। सन् १९१२ में गांधीजीने उन्हें वकालत पढ़नेके लिए इंग्लैंड भेजा। उनके खर्चेका जिम्मा डॉ० मेहताने उठाया था। जिन दिनों वे इंग्लैंडमें थे, श्री गोखलेने उन्हें सर्वेंट्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटीमें शामिल होनेको आमन्त्रित किया था। इंग्लैंडसे लौटकर वे फिर ट्रान्सवालमें भारतीय समाजकी सेवामें लग गये। दुर्भाग्यसे असमय ही जोहानिसबर्गमें उनका देहावसान हो गया; देखिए खण्ड ८, ९ और **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास,** परिच्छेद २९।

२. यह सम्मेलन मई २२, १९११ को होनेवाला था; देखिए "पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ २७।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

९. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
बुधवार [अप्रैल ५, १९११]

प्रिय रिच,

तुम्हारा तार[1] मिला। मैं रवाना होनेमें उतावली न करूँगा। मैंने एक छोटा-सा नोट[2] लेनको[3] लिखा था; उसमें सूचित किया था कि मैं दूसरे सदस्योंसे मिलनेके लिए कुछ समय तक रुक रहा हूँ। उन्होंने उत्तरमें मुझे एक नोट लिख भेजा कि मैं उनसे तुरन्त मिल लूँ। मैं उनके पास गया तो उन्होंने मुझे जे० सी० एस० का यह सन्देश दिया कि मैं अपने दोनों प्रस्तावोंको लिख डालूँ। उन्होंने यह भी कहा कि स्मट्स मुझे खाली हाथ नहीं जाने देना चाहते और बताया कि मामला अवश्य ही इस अधिवेशनमें तय हो जाना चाहिए। हमारे मित्र इससे जो आशा बाँध सकें, सो बाँधें।

दोपहर बादका पूरा समय सदस्योंसे मिलने-जुलनेमें लगाया। ज्यादा कल। मुझे अपने प्रस्ताव कल सवेरे १०–३० बजेके बाद दे देने हैं।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४१७) की फोटो-नकलसे।

१०. तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल ६, १९११

गांधी
जोहानिसबर्ग

प्रस्तावका[4] मसविदा बनाना तय। किसी भी बातको एकदम पक्का न मानें।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४२१) की फोटो-नकलसे।

१. अप्रैल ५ का तार, जो इस प्रकार था : "यहाँ लोगोंकी यह तीव्र इच्छा कि अगर इस अधिवेशनमें विधेयकके पेश होनेकी तनिक भी सम्भावना हो तो आप वहीं रहें।" (एस० एन० ५४१२)

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. जनरल स्मट्सके निजी सचिव।

४. लेनने गांधीजीसे ये प्रस्ताव लिखित रूपमें तैयार कर लेनेको कहा था; देखिए पिछला शीर्षक।

११. पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
गुरुवार, [अप्रैल ६, १९११]

प्रिय रिच,

फेरार,[1] चैपलिन,[2] जैगर, सी० पी० रॉबिन्सन[3] आदिसे मिल चुका हूँ। फेरारने सबसे अधिक सहानुभूति दिखाई। सभी मानते हैं कि फ्री स्टेट-सम्बन्धी तर्क स्वीकार कर लिया जाना चाहिए।

लेनसे लगभग आधा घंटा बात की। उन्होंने मेरे मसविदेपर[4] एक निगाह डाली और कुछ परिवर्तन[5] सुझाये। आशा करता हूँ, आज रातको उसे टाइप कर लूंगा और उनको भेज दूंगा। प्रतिलिपि तुम्हारे पास भेजूंगा।

संघकी[6] समितिकी बैठकमें जा रहा हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल पत्र (एस० एन० ५४२३) की फोटो-नकल से।

१. सर जॉर्ज फेरार (१८५९-१९१५); ईस्ट रैंड प्रोप्रायटरी माइन्सके अध्यक्ष; उत्तरदायी शासन दिये जानेके पहले और बाद भी ट्रान्सवाल विधान-परिषद्के सदस्य; संघ-संसदके सदस्य और प्रगतिवादी दलके एक नेता।

२. ड्रमंड चैपलिन; संघ विधान-सभा और प्रगतिवादी दलके सदस्य। ये ट्रान्सवाल प्रवासी कानूनके विरुद्ध भारतीयोंकी कुछ शिकायतोंके कायल थे। भारतीय राहत विधेयक (इंडियन रिलीफ बिल) के पक्षमें विरोधी दलकी ओरसे बोलनेवाले ये प्रमुख व्यक्ति थे।

३. संघ-संसदकी सदस्यताके एक उम्मीदवार।

४. यह उपलब्ध नहीं है।

५. अगले शीर्षकके परिशिष्ट 'क' और 'ख' में लेन द्वारा सुझाये गये परिवर्तन दिये गये हैं। यहाँ तात्पर्य अवश्य ही उन्हीं परिवर्तनोंसे है। रिचके नाम लिखे अपने ७-४-१९११ के पत्र (पृष्ठ ११-१२) में गांधीजीने ऐसा बताया भी है।

६. केप ब्रिटिश भारतीय संघ; देखिये खण्ड १०, पृष्ठ ४६६, पा० टि० ३।

१२. पत्र : ई० एफ० सी० लेनको

अन्तिम प्रति[1]

विटेनसिगल [स्ट्रीट]
केप टाउन
अप्रैल ७, १९११

प्रिय श्री लेन,

बातचीतके[2] अनुसार, मैं ट्रान्सवालके एशियाई संघर्षको समाप्त करनेके उद्देश्यसे दिये गये अपने सुझाव लिखकर भेज रहा हूँ।

क

जनरल स्मट्सने वर्तमान विधेयकमें धारा २७ के बाद जोड़नेके लिए जो नई धारा रखी है उसमें इस प्रकार संशोधन कर दिया जाये :

> ट्रान्सवालके १९०८ के कानून ३६ और ऑरेंज फ्री स्टेटके संविधानके अध्याय ३३ में इसके विरुद्ध कोई विधान हों तो भी, जिस व्यक्तिको इस अधिनियमके खण्ड चारके अनुच्छेद (क) में बताई गई शर्तें पूराकर लेनेपर संघमें प्रवेशकी अनुमति दी गई है, उसपर ट्रान्सवालके उक्त कानूनकी धारा और उक्त अध्याय ३३ की १ से ६ तक की धाराएँ लागू नहीं मानी जायेगी।

(रेखांकित शब्द नये जोड़े गये हैं और मेरे सुझाये हुए हैं।)

यदि ऐसा संशोधन कर दिया जाये और यदि वर्तमान अधिकारों, विशेषतः वैध अधिवासियों और प्रवासियोंकी स्त्रियों और बच्चोंके अधिकारोंकी रक्षामें सन्देह न रहे तो विधेयक अनाक्रामक प्रतिरोधियोंको स्वीकार्य होगा। केप और नेटालके भारतीयोंने स्वभावतः जो विशिष्ट आपत्तियाँ की हैं और मेरा खयाल है, जिनपर बारीकीसे अनुकूल विचार किया जाना चाहिए, उनके सम्बन्धमें मुझे कुछ कहना नहीं है।

ख

वैकल्पिक समाधानके रूपमें मेरा सुझाव निम्नलिखित है :

(१) वर्तमान विधेयक समाप्त कर दिया जाये।

(२) ट्रान्सवालके १९०७ के कानून १५ में[3] संशोधनके लिए एक विधेयक प्रस्तुत किया जाये और उसके द्वारा :

(क) "जो हिस्सा ट्रान्सवालके अवयस्क वैध निवासियोंके पंजीयनपर लागू

१. ये दो शब्द गांधीजीके स्वाक्षरोंमें हैं।

२. देखिए "पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ ७।

३. ट्रान्सवाल प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम; यह कानून जनवरी, १९०८में, सन् १९०७के एशियाई पंजीयन अधिनियमको रद किये बिना, लागू किया गया था और १९०८ को सत्याग्रह संघर्ष इसीके विरुद्ध छेड़ा गया था। इस कानूनके विधेयक-रूपके लिए देखिए खण्ड ७, परिशिष्ट ३ और जिस रूपमें यह कानून पास किया गया उसके लिए देखिए खण्ड ८, परिशिष्ट १।

होता है, उसे छोड़कर" ट्रान्सवालका १९०७ का कानून २[1] रद कर दिया जाये। (उद्धृत शब्द वर्तमान विधेयककी प्रथम अनुसूचीसे लिए गये हैं। इस अपवादका अर्थ मैंने यह समझा है कि पंजीकृत एशियाइयोंके अवयस्क बच्चे, चाहे वे कहीं हों, ट्रान्सवालमें प्रवेशके लिए स्वतन्त्र होंगे और १६ वर्षकी आयु होनेपर पंजीकृत किये जायेंगे एवं इसका उन्हें अधिकार होगा।)

(ख) यदि आवश्यक हो तो परीक्षाको अधिक कड़ा बनानेके उद्देश्यसे १९०७ के कानून १५ की शिक्षा-सम्बन्धी धारा हटाई जा सकती है और उसके साथ वर्तमान विधेयककी धारा ४ की उपधारा (क) रखी जा सकती है।

(ग) १९०७ के कानून १५ के खण्ड २ की उपधारा ४ रद कर दी जाये।

(घ) जनरल स्मट्सकी नई धारा २६ उचित परिवर्तनके साथ १९०७ के कानून १५ में जोड़ दी जाये; अलबत्ता मेरे द्वारा सुझाये गये परिवर्धनके बिना यह परिवर्तन वर्तमान विधेयकके लिए आवश्यक है, वैकल्पिक समाधानके लिए नहीं।

मेरी सम्मतिमें वैकल्पिक समाधान सबसे सीधा [विधान] है; इसमें फ्री स्टेटका कोई प्रश्न नहीं उठता और जनरल स्मट्स द्वारा इसके मान लिए जानेसे केवल अनाक्रामक प्रतिरोध ही बन्द नहीं होगा, बल्कि मुझे निश्चय है कि उसे भारतीय समाज पूरी तरह अंगीकार कर लेगा।

किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि भारतीय समाजने अन्य अनेक मामलोंमें अपनी स्थिति सुधारनेकी कार्रवाई करनेका अपना अधिकार छोड़ दिया है।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४३४) की फोटो-नकल और १५-४-१९११ के 'इंडियन ओपिनियन' से।

१. ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन अधिनियम; यह कानून २२ मार्च, १९०७को ट्रान्सवालके स्वशासित उपनिवेश द्वारा पास किया गया और मई ७, १९०७ को इसपर शाही स्वीकृति प्राप्त हुई। यह कानून लगभग एशियाई कानून-संशोधन अध्यादेशके समान ही था, जिसे १९०६ के गांधी-अली शिष्टमण्डलकी आपत्तियोंके फलस्वरूप शाही सरकारने नामंजूर कर दिया था। इस अध्यादेश और कानून दोनोंमें, अन्य बातोंके अलावा, एशियाइयोंके अनिवार्य पंजीयन और उनके प्रमाणपत्रोंपर उनके अँगुलियोंके निशान लेनेकी व्यवस्था की गई थी। पाठकोंको यह स्मरण रखना चाहिए कि गांधीजीने बोलते अथवा लिखते समय आम तौरपर यह स्पष्ट नहीं किया है कि ट्रान्सवाल एशियाई कानून-संशोधन अध्यादेश, एशियाई पंजीयन कानून (१९०७ का कानून ४) और एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम (१९०८ का कानून ३६) — इन तीन कानूनोंमें से उनका तात्पर्य कब किस कानूनसे रहा है। हाँ, कोई अर्जी देते समय अथवा न्यायालयोंमें बहस करते वक्त उन्होंने इसको स्पष्ट करनेका ध्यान अवश्य रखा।

१३. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

७ विटेनसिंगल [स्ट्रीट
केप टाउन]
अप्रैल ७, १९११

प्रिय रिच,

कुमारी श्लेसिनसे[1] कहो कि मुझे पिछले दो दिनोंमें उसका कोई पत्र नहीं मिला है। मेरा खयाल है कि उसने सोमवार और मंगलवारके पत्र नहीं लिखे। कुछ ऐसा भी शक होता है कि पत्र कहींके-कहीं न पहुँच गये हों।

लेनके नाम लिखा अपना पत्र[2] संलग्न कर रहा हूँ। मैंने कल लेनसे लम्बी बातचीत की। जो मसविदा मैं ले गया था, उन्होंने उसमें परिवर्तन सुझाए। मैं तुमको परिवर्तनोंके बाद जो नकल बनी उसकी प्रतिलिपि भेज रहा हूँ। तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इसे खुद मैंने टाइप किया है। मैंने हिरानन्दका टाइपराइटर माँग रखा है। मैं इस पत्रको लेनके दफ्तरमें पूरा कर रहा हूँ। उन्होंने अन्तिम वाक्यको[3] छोड़ देनेका सुझाव दिया था, क्योंकि उनके खयालमें, इसका अर्थ धमकी देना है। मैंने उन्हें बताया कि इसे नहीं छोड़ा जा सकता; और मैंने यह भी साफ-साफ कहा कि जबतक स्त्रियोंपर कर लगाया जाता है, जबतक ट्रान्सवालमें भारतीय जमीन-जायदाद आदि नहीं रख सकते, तबतक मैं चैन नहीं ले सकता। मैंने यह भी काफी स्पष्ट कर दिया कि यदि क्लार्क्सडॉर्पमें स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत ज्यादतियाँ की गईं तो मैं सत्याग्रह छेड़नेकी सलाह देनेमें न झिझकूंगा। हम एक-दूसरेसे बिलकुल खुलकर बातें कर रहे थे। तुम्हें मेरे हस्ताक्षरयुक्त संशोधित पत्रमें कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं मिलेगा। इसकी दूसरी प्रतिलिपि मैंने लेनके दफ्तरमें टाइप की है। उन्होंने मुझे

१. सोंजा श्लेसिन; एक यहूदी लड़की जिसका "चरित्र स्फटिकके समान उज्ज्वल और साहस योद्धाको मात करनेवाला" था। सोलह वर्षकी अवस्थामें उसने स्टेनो-टाइपिस्टकी हैसियतसे गांधीजीके साथ काम करना शुरू किया और फिर कई वर्षों तक उनकी निजी सचिव रही। **इंडियन ओपिनियन**के काममें भी वह जब-तब हाथ बटाती थी और भारतीयोंके मामलेमें उसकी बड़ी दिलचस्पी थी। "सत्याग्रहके दिनोंमें जब लगभग सब लोग जेलमें थे, तब वह अकेले ही आन्दोलन चलाती रही थी। उसे हजारोंकी व्यवस्था करनी पड़ती थी, अनेक लोगोंसे पत्र-व्यवहार करना पड़ता था, **इंडियन ओपिनियन**की भी देख-भाल करनी पड़ती थी; फिर भी वह कभी थकती नहीं थी।" महिला मताधिकारकी भी वह प्रबल समर्थक थी, और ट्रान्सवाल भारतीय महिला संघकी तो जान ही थी। देखिए **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय २३ और **आत्मकथा**, भाग ४, अध्याय १२।

२. अप्रैल ७, १९११को लिखा पत्र, जिसकी एक प्रति गांधीजीने रिचको भेजनेका वादा किया था। देखिए "पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ ८।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

बिलकुल गोपनीय रूपसे बताया है कि वैकल्पिक समाधान स्वीकार कर लिया जायेगा। वैसे उन्होंने यह भी कहा कि अभीतक फ्री स्टेटवालोंसे जे० सी० एस० की साँठ-गाँठ कायम है। वे मेरे पत्रकी प्रतीक्षा अत्यन्त उत्सुकतासे कर रहे थे; इसे उनके पास ले जानेमें मुझे कुछ देर हो गई थी, क्योंकि मैं गत रातको स्मार्टसे बातचीत करनेमें लगा रहा। उन्होंने मेरी बात बहुत धैर्यसे सुनी। प्रातःकाल केम्ब्रे ऐंडर्सनके आनेसे काम रुक गया। यह पत्र लिखते समय तक मुझे ऐसी आशा बँध गई है कि कुछ दिनोंमें ही दूसरा प्रस्ताव[1] कानून बन जायेगा।

मैंने समस्त समाजकी स्वीकृतिके सम्बन्धमें जो उल्लेख किया, उसे प्राप्त करनेके लिए मैं तुम्हें तार[2] कर चुका हूँ; यों यह बात वहाँ, यहाँ और नेटालमें पहले ही स्वीकार की जा चुकी है। नेटालने तो परिपाटीको छोड़कर केपके प्रस्तावोंकी स्वीकृतिका तार दिया।

इन स्थितियोंमें, मैं इस समय हरगिज रवाना नहीं होऊँगा। सच कहो तो सदस्योंसे मिलना-जुलना समाप्त किये बिना मैं तुम्हारी अनुमति रहते हुए भी रवाना नहीं हो सकता था।

पत्रके साथ 'टाइम्स' की कतरन[3] भेज रहा हूँ। स्पष्ट है कि इसमें स्मट्सने एक नये समाधानका संकेत पहले ही से दे रखा है।

मुझे आशा है कि मुझे इंग्लिश मेल[4] कल दोपहरको मिल जायेगा।

मुझे स्मार्टसे अब्दुर्रहमानने[5] मिलाया। उन दोनोंमें घनिष्ठता-सी जान पड़ी। मैं लॉर्ड क्रू से भी मिला, यद्यपि अब्दुर्रहमान भेंट होने तक नहीं ठहरे।

तुम यह पत्र वहाँके नेताओंको तो समझा ही दोगे।

हृदयसे तुम्हारा,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४२८) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१०।

२. देखिए "तार: जोहानिसबर्ग कार्यालयको", पृष्ठ १३।

३. यह उपलब्ध नहीं है।

४. तात्पर्य शायद उन पत्रोंसे है, जो इंग्लैंडसे टॉल्स्टॉय फार्मके पतेपर आये थे और फिर गांधीजीको केप टाउनके पतेपर भेज दिये गये थे।

५. डॉ० अब्दुर्रहमान; जन्मसे मलायी; केप टाउनके एक प्रसिद्ध चिकित्सक; आफ्रिकी राजनीतिक संघके अध्यक्ष और केप टाउन नगरपालिका तथा संघ-पूर्वकी केप विधान-सभाके सदस्य; सन् १९०९में "रंगदार लोगों"के शिष्टमण्डलके साथ इंग्लैंड गये; देखिए खण्ड ९, पृष्ठ २७२। फरवरी १९१०में केप टाउन नगरपालिका परिषद्के इंग्लैंडके युवराजका स्वागत करनेके प्रस्तावका विरोध किया और कहा, "मैं उसे शोक-दिवस मानूँगा।" देखिए खण्ड १०, पृष्ठ १७७ और १७९ और **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय २।

१४ तार: जोहानिसबर्ग कार्यालयको

गांधी
जोहानिसबर्ग

केप टाउन
अप्रैल ७, १९११

मेरा पत्र[1] देखिए। मन्त्रिने ट्रान्सवाल कानूनमें १९०७ के एशियाई अधिनियमको रद करने तथा नाबालिगोंकी रक्षा और शिक्षित प्रवासियोंको १९०८ के कानून ३६[2] के अमलसे मुक्त करनेके संशोधनको सन्तोषजनक मान लिया है। काछलिया[3] और दूसरोंसे मिलें। स्वीकृतिका तार दें। अगले हफ्तेसे पहले रवाना नहीं हो रहा हूँ।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४३१) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१०।

२. ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम, जो १९०८ के गांधी-स्मट्स समझौतेके परिणाम-स्वरूप पास किया गया था। किन्तु भारतीयोंने अपना विरोध भी जारी रखा, क्योंकि समझौतेके अनुसार तय की गई शर्तोंका उनके लिए जो अर्थ था, उस रूपमें उन्हें कानूनमें शामिल नहीं किया गया था।

३. अहमद मुहम्मद काछलिया; "अंग्रेजीका कामचलाऊ ज्ञान" होनेके कारण आरम्भमें दुभाषियेका काम करते थे; तथा फेरीदारी और व्यापार भी करते थे; सन् १९०७ के जुलाई महीनेमें एशियाई पंजीयन अधिनियमके विरुद्ध भारतीयों द्वारा आयोजित सभामें इनका पहला सार्वजनिक भाषण हुआ; सितम्बर १९०८ में ईसप मियाँके अवकाश प्राप्त करनेपर ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष हुए; जेलका विकल्प लिये बिना सत्याग्रही व्यापारियोंके मालको नीलाम करने अथवा उनपर जुर्माना ठोंक देनेकी सरकारी नीतिको ध्यानमें रखते हुए अपना सारा माल अपने महाजनोंके सुपुर्द करके उन्होंने "समाजकी खातिर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया"; "अन्ततक समाजकी सेवा करते हुए" सन् १९०८ में शरीर त्याग किया। देखिए खण्ड ९, पृष्ठ १५, ४१ तथा १५९ और दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास, अध्याय १६।

१५. तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको

गांधी
जोहानिसबर्ग

केप टाउन
अप्रैल ७, १९११

क्रिश्चियन बोथाने इस आशयका संशोधन रखा है कि विधेयककी किसी धारासे ऑरेंजिया[1] कानूनके अध्याय ३३ का कोई खण्ड रद न होगा। इससे वैकल्पिक समाधानकी[2] स्वीकृति सम्भव दिखती है।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४३५) की फोटो-नकलसे।

१६. पत्र : ई० एफ० सी० लेनको

७, बिटेनसिंगल [स्ट्रीट]
केप टाउन
अप्रैल ८, १९११

प्रिय श्री लेन,

मुझे अब अपने डर्बन[3] और जोहानिसबर्गको[4] दिये गये तारोंके उत्तर मिल गये हैं। डर्बनसे कांग्रेस द्वारा भेजे गये तारमें कहा गया है:

यदि विधेयक वापस ले लिया गया है और कानून बदल दिया गया है तो धन्यवाद स्वीकार करें। समझौता कर लें। नेटालके भारतीय पूर्णतः सन्तुष्ट हैं।

केपके भारतीय पहले ही वैकल्पिक समझौतेका सुझाव दे चुके हैं। जोहानिसबर्गसे ब्रिटिश भारतीय संघके तारमें कहा गया है:

आपका तार मिला। विचार किया गया। हम मानते हैं कि कुछ शिक्षित एशियाइयोंके प्रवेशके अधिकारकी व्यवस्था भी की गई होगी; उस हालतमें समझौतेसे पूर्ण सहमति है। सब बातें तय होनेके पहले रवाना न हों।

काछलिया — अध्यक्ष।

१. ऑरेंज फ्री स्टेट
२. देखिए "पत्र : ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१०।
३. यह उपलब्ध नहीं है।
४. देखिए "तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको", पृष्ठ १३

मैंने अबतक स्वभावतः यही माना है कि जो प्रस्ताव स्वीकृत होगा उसमें कुछ एशियाइयोंको, जिनकी संख्या वर्षमें छः से अधिक न होगी, ट्रान्सवालका खयाल करके शिक्षा-परीक्षामें पास किया जायेगा, और उन्हें प्रसंगानुसार संघमें या ट्रान्सवालमें प्रवेश करने दिया जायेगा।

देखता हूँ, क्रिश्चियन बोथाने विधेयकमें एक कड़ा संशोधन[1] रखा है; इसे भारतीय दृष्टिकोणसे स्वीकार करना असम्भव है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४४०) की फोटो-नकल और १५-४-१९११ के 'इंडियन ओपिनियन' से भी।

१७. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

७, विटेनसिगल [स्ट्रीट
केप टाउन]
अप्रैल ८, १९११

प्रिय रिच,

तुम्हारा पत्र मिला। आशा है, माउंटेन व्यूमें[2] तुम्हारी ठीक व्यवस्था हो गई होगी। मेरा खयाल है, तुम और हेराल्ड[3] दोनों थोड़ी बागवानी किया करो, हेराल्ड विशेष रूपसे।

मैं वापसीमें एक दिन किम्बर्ले रहनेका प्रयत्न करूँगा। मैं कोंकणियोंके बारेमें नूरुद्दीनसे बातचीत करूँगा।

बोथाका संशोधन[4] यह है :

> इस अधिनियमके इस (२८) या किसी दूसरे खण्डमें समाविष्ट किसी धारासे ऑरेंज फ्री स्टेटकी कानूनी पुस्तकके अध्याय ३३ की कोई धारा रद न होगी।

सोचो कि मुझे सब प्रकारके आश्वासन देनेके बाद ऐसा हुआ। फिर भी मैं प्रसन्न हूँ। इस संशोधनसे विधेयक मर जाता है और यदि जनरल स्मट्स इस प्रश्नका निपटारा करना चाहते हैं तो उन्हें ट्रान्सवालके अधिनियममें संशोधन करना पड़ेगा।

मैं आज किसी सदस्यसे नहीं मिल सका हूँ। लाहौरके रेवरेंड ऑलमेटने प्रातः-कालका मेरा सारा समय ले लिया। वे बिशप लेफ्रॉयके आदमी हैं और जब पोलक भारतमें थे तब उन्होंने कुछ काम किया था।

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. जोहानिसबर्गमें कैलनबैकका मकान।
३. रिचका पुत्र।
४. देखिए "तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको", पृष्ठ १४ और पिछला शीर्षक।

संलग्न पत्रसे[1] देखोगे कि मैंने ब्रिटिश भारतीय संघ और नेटाल कांग्रेस, दोनोंके तारोंका उपयोग कर लिया है।

सोराबजीने लन्दन जानेकी बात फिर छेड़ी[2] है। मेरी निश्चित धारणा है कि यदि मैं जाऊँ भी तो मेरे साथ एक मुसलमान होना चाहिए। इसमें तीन उद्देश्य हैं। एक तो, इससे यहाँके समाजको संतोष मिलेगा; दूसरे, लन्दनमें प्रतिनिधियोंका महत्व बढ़ जायेगा; और तीसरे, इसका भारतमें अच्छा प्रभाव होगा। और चौथी एक बात भी है कि इससे श्री काछलियाको बहुत अच्छा प्रशिक्षण मिल जायेगा; उनकी जोड़के व्यक्ति मुसलमानोंमें निश्चय ही इन-गिने हैं। किन्तु यदि विधेयक अगले सप्ताह पेश नहीं किया जाता तो मेरी समझमें नहीं आता कि मैं जा ही कैसे सकता हूँ। मुझे लन्दन सम्मेलनकी तारीखसे एक सप्ताह पहले पहुँच जाना चाहिए। मैं फीनिक्स बिलकुल न जाऊँ और जोहानिसबर्ग भी न जाऊँ तो भी बहुत शीघ्रता न करूँ तो मेरे खयालसे मेरा लन्दन पहुँचना असम्भव है। इन सब व्यावहारिक कठिनाइयोंके सम्बन्धमें विचार कर लो।

अभीतक तुम्हें कोई कानूनी काम मिला या नहीं? क्या तुमने सॉलीसिटरकी शपथ ले ली है? कानूनी समितिको सूचना भेज दी या नहीं?

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४३७) की फोटो-नकलसे।

१८. तार: जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल ८, १९११

गांधी
जोहानिसबर्ग

मामलेके[3] अगले हफ्ते पेश होनेकी बहुत कम सम्भावना।

गांधी

मूल अंग्रेजी तार (एस० एन० ५४३९) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. साम्राज्य-सम्मेलनके लिए; देखिए "पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ ६।
३. प्रवासी विधेयक।

१९. पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
रविवार, अप्रैल ९, १९११

प्रिय रिच,

तुम्हें और पोलकको[1] पत्र[2] डाकमें डाल देनेके बाद एक मजेदार बात हुई। मैंने सोचा जरा सदन तक जाऊँ और देखूँ कि वहाँ हो क्या रहा है। विषयक्रम[3] (आर्डर पेपर) पढ़नेके बाद मैंने सोचा कि वापस चला जाऊँ। किन्तु फिर सोचनेपर मैंने डंकनको[4] अपना कार्ड भेजना तय किया। वे आये और बोले: "कदाचित् हमारा बात न करना अच्छा होगा; लोग ऐसा न सोचें कि आप मुझपर प्रभाव डाल रहे थे।" मैंने कहा: "हर्गिज नहीं। मैं अपनी गतिविधियोंकी सूचना लेनको देता रहा हूँ। वे जानते हैं कि मैं किनसे मिलता और बात करता हूँ।" उन्होंने कहा: "किन्तु आपको चिन्ता करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। मेरा खयाल है, आप जो-कुछ चाहते हैं वह आपको मिलेगा। अब यह मसला निबटा देनेका समय आ गया है।" मैंने कहा: "किन्तु क्या आपको नवीनतम स्थितिके सम्बन्धमें कुछ मालूम है?" उन्होंने कहा: "हाँ, जनरल स्मट्सने मुझे उनके नाम लिखा आपका पत्र[5] दिखाया था। मेरा खयाल है, हम

१. हेनरी सॉलोमन लिऑन पोलक; आरम्भमें **ट्रान्सवाल क्रिटिकके** सहायक सम्पादक, लेकिन बादमें जोहानिसबर्गके निरामिष उपाहारगृहमें गांधीजीसे परिचय होनेके बाद **इंडियन ओपिनियनमें** काम करना शुरू किया। "जो बात उनके दिमागमें उतर जाती थी उसे कार्यरूप देनेकी उनमें अद्भुत क्षमता थी।" गांधीजीके शब्दोंमें "जिस चावसे बतख जलमें रहता है" उसी चावसे उन्होंने फीनिक्सकी जिन्दगी अपनायी और "हम लोग सगे भाइयोंकी तरह रहने लगे।" उनकी शादीमें गांधीजीने शहबालाका भी काम किया। सन् १९०६ में, जब गांधीजी इंग्लैंडमें थे, वे **इंडियन ओपिनियनके** सम्पादक हुए और गांधीजीके साथ कुछ दिनों तक काम सीखनेके बाद सन् १९०८ में अटर्नी हो गये। सन् १९१३ के ट्रान्सवाल प्रवेशके महान् कूच ("ग्रेट मार्च") में गिरफ्तार हुए; आफ्रिकावासी भारतीयोंके मामलेमें सहायता देनेके लिए भारत और इंग्लैंडकी यात्रा की। देखिए **आत्मकथा**, भाग ४, अध्याय १८, और २२ तथा **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय २३ और ४५।

२. देखिए "पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ १५-१६। पोलकको लिखा पत्र उपलब्ध नहीं है।

३. इसमें क्रिश्चियन बोथाके संशोधनकी सूचना भी दी गई थी। बोथाके इस संशोधनका उद्देश्य प्रस्तावित प्रवासी कानूनमें ऑरेंज फ्री स्टेटके संविधानके ३३ वें अध्यायको बरकरार रखना था।

४. पैट्रिक डंकन; ट्रान्सवाल विधान सभाके सदस्य; ट्रान्सवालके उपनिवेश-सचिव १९०३-०६; सन् १९०६ में भारतीयोंके विरोधके बावजूद ट्रान्सवाल एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशको पास करवानेमें पहल की; किन्तु **इंडियन ओपिनियनके** स्वर्ण जयन्ती (१९१४) अंकमें उनकी प्रशंसा करते हुए लिखा गया कि अब वे इस बातको ज्यादा समझने लगे हैं कि भारतीय प्रश्नसे "साम्राज्यके हितोंका सम्बन्ध" है और इसीलिए उन्होंने भारतीयोंको "राहत देनेके उपाय करनेपर जोर दिया है।"

५. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१०।

वर्तमान विधेयकको छोड़कर आपके वैकल्पिक समाधानको स्वीकार कर लेंगे। किन्तु अब आप कोई नई बात न उठायें।" मैंने कहा: "श्री डंकन, आश्चर्य है कि आप भी ऐसा कह रहे हैं! आपने तो स्वयं हमारी स्थितिको बहुत उचित रूपमें प्रस्तुत किया है।" उन्होंने कहा: "हाँ, मैंने देखा है, आप मेरा हवाला देते रहे हैं। किन्तु आपने उस बातको सदा आगे नहीं रखा। मुझे कई बार लगा कि आप उसे गौण रखते हैं।" मैंने कहा: "मुझे कभी-कभी ऐसा करना ही पड़ता है। हमें अवसरके अनुसार इस या उस मुद्देको प्रमुखता देनी होती है; प्रत्येक भाषण या पत्रमें सारी तफसीलें नहीं रखी जा सकतीं। नये मुद्दे तो सदा जनरल स्मट्सने उठाये हैं और हर बार हमारी माँगोंसे कम दिया है।" उसके बाद उन्होंने यह जानना चाहा कि बच्चोंके सम्बन्धमें मेरी क्या माँग है; क्या मैं यह चाहता हूँ कि इनको प्रमाणके बिना ही आने दिया जाये, आदि। मैंने उनको इस मुद्देके सम्बन्धमें आश्वस्त किया। किन्तु मैं यह तो समझ ही गया कि जनरल स्मट्स बदकिस्मतीसे इसके पहले उनसे मिल चुके हैं। और यह भी अच्छा हुआ कि कल मुझसे बातें करते समय उनके दिमागमें जनरल स्मट्सकी बातोंकी याद ताजी थी। इस अनुभवके बाद मैंने यहाँ तबतक डटे रहनेका निर्णय किया है जबतक विधेयक पारित न हो जाये या मुझे यह निश्चय न हो जाये कि अब कुछ करना शेष नहीं रहा। यह बात लगभग तय मानी जा सकती है कि सर्व-सामान्य विधेयककी अन्त्येष्टि क्रिया हो गई है और अब मुझे वैकल्पिक प्रस्तावके स्वीकृत होनेकी पहलेसे अधिक आशा है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४४१) की फोटो-नकलसे।

२०. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
सोमवार [अप्रैल १०, १९११]

प्रिय रिच,

मैं आज अभीतक (दिनके दो बजे तक) बाहर नहीं निकला। केवल पत्र[1] लिखता रहा हूँ।

मुझे तुम्हारे तीन पत्र मिले।

तुम तय समझो कि यह भला जनरल जो-कुछ भी देगा, निश्चय ही वह एक झूठी रियायत होगी। उसे सच करना तो हमारा काम होगा। वे अपने वश-भर मेरे हाथोंमें कुछ भी न देंगे।

१. इस पत्रके अलावा सिर्फ इसके आगेका एक तार और एक पत्र ही उपलब्ध है।

आशा है, तुमने टायटससे मुल्कके सम्बन्धमें व्यवस्था कर ली होगी।

यदि क्लार्क्सडॉर्पके मित्र तुम्हारे पास न आये हों तो उन्हें पत्र लिखो और मिलनेके लिए आमन्त्रण दो।

यदि श्री फिलिप्स[1] चले जाते हैं और मैं उनसे जानेके पहले मिल नहीं सकता तो यह बड़े दुःखकी बात होगी। मुझे आशा है कि काछलिया और अन्य लोग उनको पहुँचानेके लिए जायेंगे।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४४२) की फोटो-नकलसे।

२१. तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल १०, १९११

गांधी
जोहानिसबर्ग

वर्तमान विधेयकको मृत समझें। ट्रान्सवाल विधेयक कब आयेगा अनिश्चित।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४४३) की फोटो नकलसे।

२२. पत्र : मगनलाल गांधीको

[केप टाउन]
चैत्र सुदी १२ [अप्रैल १०, १९११][2]

चि० मगनलाल,

आज दाहिने हाथसे कई पत्र[3] लिखे हैं, इसलिए कुछ थक गया हूँ और बायें हाथका उपयोग कर रहा हूँ।

आहारके विषयमें लिखा हुआ मेरा पत्र तुम्हें इतनी देरीसे क्यों मिला?

१. रेवरेंड चार्ल्स फिलिप्स; भारतीय पक्षसे इनकी बड़ी सहानुभूति थी। वे स्वास्थ्य लाभके लिए इंग्लैंड जा रहे थे।

२. आहार-विषयक पत्रके उल्लेखसे स्पष्ट है कि यह पत्र १९११ में लिखा गया था, उस वर्ष चैत्र सुदी १२ को अप्रैलकी १० तारीख पड़ी थी; देखिए "पत्र : मगनलाल गांधीको", पृष्ठ ७५ भी, जिसमें 'गुलीवर्स ट्रैवल्स' का उल्लेख है।

३. देखिए "पत्र : मगनलाल गांधीको", खण्ड १०, पृष्ठ ४७९-८१।

तुमने डर्बनकी हालतका जो चित्र खींचा है, उससे मैं निराश नहीं होता। क्या हिन्दू और क्या दूसरे, खासकर हिन्दू, विदेश यात्रा तो तभी करते हैं जब वे भ्रष्ट हो जाते हैं। परोपकारके लिए विदेश जानेवाले तो बहुत ही थोड़े मिलेंगे। हम लोग भी जब निकले थे तब मनमें कोई उच्च विचार नहीं थे। अतीतमें हमने कोई पुण्य-कर्म किया होगा, इसीलिए हमारी दृष्टि किंचित् निर्मल है। हिन्दुओंका आचार-विचार सब यहाँ भ्रष्ट हो जाता है, इसलिए वे अधिक अधम दशाको प्राप्त हुए दिखते हैं। दोनों पक्ष हिन्दू-मुसलमानका भेद रखते हैं, इसीलिए आंगलिया[1] सेठ-जैसे व्यक्ति वैसा सवाल उठाते हैं जिसका तुमने जिक्र किया है। लेकिन यह तो तुमने देख ही लिया होगा कि काम करनेवाले दो-चार [निष्ठावान] आदमी भी हों तो काम चल सकता है।

'गुलीवर्स ट्रैवल्स' अभी तक न पढ़ी हो तो किसी समय पढ़ लेना। तमिलके अभ्यासका क्या हाल है?

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६२७) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी।

२३. पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको

७ विटेनसिंगल [स्ट्रीट
केप टाउन]
अप्रैल ११, १९११

प्रिय रिच,

आज कोई खबर नहीं है। तुम्हारा मद्रास-सम्बन्धी तार मिला। मैं अभी लेनके पास जा रहा हूँ और तब तय करूँगा क्या उत्तर देना।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च:]

स्मट्सका जवाब[2] है कि अगले सप्ताहसे पहले कुछ मालूम नहीं होगा। अधिक कल।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४५०) की फोटो-नकलसे।

१. एम० सी० आंगलिया; डर्बनके एक प्रमुख मुस्लिम सज्जन और नेटाल भारतीय कांग्रेसके संयुक्त मन्त्री; ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन अधिनियमके विरुद्ध छेड़े गये सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग लेनेपर कैद और निर्वासन भोगा; सन् १९०९ नेटाल शिष्टमण्डलके सदस्यके रूपमें इंग्लैंड गये; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४७९ और खण्ड ९, पृष्ठ ३३७ और ३४३।

२. देखिए परिशिष्ट १।

२४. तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल ११, १९११

गांधी
जोहानिसबर्ग

मन्त्रीने लिखा है सप्ताहके अन्ततक कुछ ज्ञात न होगा। मद्रास तार करें। मामला मन्त्रालयके विचाराधीन। बादमें तार करूँगा। काम समाप्त होने तक ठहर रहा हूँ।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४५३) की फोटो-नकलसे।

२५. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
अप्रैल १२, १९११

प्रिय श्री रिच,

मैंने सोचा कि मैं लेनसे यह पूछ लूं कि वे तारसे मद्रास भेजनेके लिए कोई निश्चित जानकारी मुझे दे सकते हैं या नहीं। तब स्मट्स वहां नहीं थे। इसलिए लेन सदनमें गये और मुझे यह पत्र[1] भेजा, जिसकी नकल साथ है। मैं आशा करता हूँ तुमने बादमें भेजे हुए तारका[2] आशय समझ लिया है। तो अब हमें पूरे सप्ताह-भर प्रतीक्षा करनी होगी। शुक्रवारसे सोमवार तक कोई काम न होगा। सदनकी बैठक फिर मंगलवारको होगी। मेरा ख्याल है, हमें निश्चित जानकारी अगले सप्ताह अवश्य मिल जायेगी। स्मट्सको कोई जल्दी नहीं है। वे अपने बश-भर इस वेदनाकी अवधिको लम्बा करना पसन्द करेंगे। हम प्रतीक्षा करनेके सिवा कर भी क्या सकते हैं! अब मैं किसी सदस्यसे नहीं मिल रहा हूँ। मेरा खयाल है कि मैं खास-खास सदस्योंसे मिल चुका हूँ और अब यह मिलना-जुलना बन्द कर देना अच्छा होगा।

मैं यह जाननेके लिए उत्सुक हूँ कि वहां तुम्हारा काम-काज कैसा चल रहा है। जान पड़ता है कि तुम्हें अभीतक कोई काम नहीं मिला।

१. देखिए परिशिष्ट १।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

कुमारी श्लेसिनसे कहो कि वह मुझे डॉ० मेहताकी पाण्डुलिपि भेज दे। वे कहते हैं कि उन्होंने कोई भाषण आदि भेजा है। मैं चाहता हूँ कि वह यहाँ मिल जाये। मुझे फिनॉट की 'रेस प्रेज्यूडिस' नामक पुस्तककी भी आवश्यकता है। मेरा खयाल है कि वह पुस्तक पोलककी पुस्तकोंमें है। मुझे वह कैनन आलमेटके लिए अभी चाहिए। वे यहाँ हैं; किन्तु जल्दी ही इंग्लैंड जा रहे हैं।

हैरॉल्डका स्वास्थ्य कैसा है? यहाँ मौसम अत्यन्त कष्टप्रद है। तुम्हारे भोजन बनाने आदिकी क्या व्यवस्था है?

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च:]

कुमारी श्लेसिनसे साथका पत्र प्रिटोरियाके श्री वर्नेटको भेज देनेके लिए कह दो; उनका पता उसे मालूम है या वह मालूम कर लेगी। वह उनको लिख दे कि पत्र भूलसे इंग्लैंड चला गया था और वहाँसे अभी लौटा है। यह भी लिख दिया जाये कि मैं अवकाश मिलते ही उनको कुछ-न-कुछ भेजनेकी पूरी कोशिश करूँगा।

मो० क० गांधी

[पुनश्च:]

शुक्रवार और शनिवारको मैं तार नहीं दे रहा हूँ, क्योंकि इन दिनोंकी छुट्टी रहेगी।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४५८) की फोटो-नकलसे।

२६. तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल १२, १९११

गांधी
जोहानिसबर्ग

कोई प्रगति नहीं। बिना अवसर पड़े मंगल तक तार न दूंगा। फिलिप्स कब रवाना[1] हो रहे हैं?

गांधी

मूल अंग्रेजी प्रति तारकी (एस० एन० ५४५९) की फोटो-नकलसे।

२७. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
गुरुवार [अप्रैल १३, १९११][2]

प्रिय मित्र,

नया कुछ नहीं है। अधिक नहीं लिखूंगा, क्योंकि मैं इसी समय डॉ० गुलके[3] दवाखानेमें जा रहा हूँ, जिसके फर्शका रंग-रोगन करानेका जिम्मा मैंने लिया है। प्रस्तावित सभाके सम्बन्धमें तारसे[4] उत्तर दे चुका हूँ। सार्वजनिक सभा तभी की जानी चाहिए जब निश्चित प्रस्ताव स्वीकृत करने हों और शिष्टमण्डलके सदस्योंका चुनाव करना हो। केवल विचार-विमर्शके लिए कोई सार्वजनिक सभा न की जाये।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४२६) की फोटो-नकलसे।

१. फिलिप्स और कार्टराइट १०-४-१९११ को जोहानिसबर्गसे रवाना हुए और १२ तारीखको उन्होंने डेलागोआ-बेसे केनिलवर्थ जहाजमें अपनी यात्रा शुरू की; देखिए "पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ १९।

२. इस पत्रपर कोई तारीख नहीं दी गई है; लेकिन गांधीजीको लिखे अपने १७ अप्रैलके पत्रमें श्री रिचने गुरुवारको लिखे उनके दो पत्रोंकी प्राप्ति-सूचना देते हुए उनमें से एक पत्रमें डॉ० गुलके दवाखानेके फर्शका रंग-रोगन करानेका जिक्र किया है और दूसरा शिष्टमण्डल भेजने आदि बातोंके सम्बन्धमें है। इससे प्रकट होता है कि यह तथा इससे आगेका पत्र, दोनों गुरुवार, अप्रैल १३, १९११ को लिखे गये थे।

३. केप टाउनके एक भारतीय चिकित्सक।

४. यह उपलब्ध नहीं है।

२८. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
गुरुवार रात्रि,
[अप्रैल १३, १९११][1]

प्रिय रिच,

आशा है, तुमने मेरा तार[2] समझ लिया होगा।

मेरा खयाल है कि जबतक यह मामला अनौपचारिक रूपसे ही सही, किन्तु पूर्णतः तय न हो जाये तबतक सार्वजनिक सभा करना ठीक नहीं है। यदि शिष्टमण्डलके मामलेपर विचार करनेके लिए सार्वजनिक सभा की जाये और फिर उसमें उसके विरुद्ध निर्णय हो तो इसका अर्थ गलत लगाया जा सकता है।[3]

मेरा निश्चित मत है कि ऐसे किसी भी शिष्टमण्डलमें एक मुसलमान अवश्य होना चाहिए। स्मरण रखो, इस बार शिष्टमण्डल किसी स्पष्ट प्रश्नको लेकर नहीं जायेगा। व्यापारियोंके विशेष हितोंपर विचार किया जायेगा। और यदि उसको प्रभावशाली बनाना है तो शिष्टमण्डलमें एक व्यापारी, और वह भी मुसलमान, अवश्य होना चाहिए। मुझे इस बारेमें कोई सन्देह नहीं है कि वह व्यापारी श्री काछलिया ही हों। यदि समाज कमजोरीके कारण किसी शरारती व्यक्तिको चुन देगा तो अन्ततः उसको हानि पहुँचेगी। समाजको अब कमजोर लोगोंसे यह कहनेके लिए तैयार हो जाना चाहिए : "चूँकि आप कमजोर हैं, इसलिए आप समाजका प्रतिनिधित्व नहीं कर सकते।" मेरा यह पक्का विश्वास है कि समाजने क़मजोरी दिखाई है और उसके मनमें शरारती लोगोंका डर समाया हुआ है; संघर्षके लम्बे खिंचनेका यही कारण है। खर्चके बारेमें भी कोई खींचतान नहीं होनी चाहिए। यदि शिष्टमण्डलको जाना ही है तो समाजको उसे उदारतापूर्वक धन देना होगा और सो भी तुरन्त। मेरे वहाँ लौटनेके बाद मुझे बहुत ही थोड़ा समय मिल पायेगा; हर बार रुपया ऐन वक्तपर आया है। मेरा सुझाव है कि पूरी रकम अभी इकट्ठी हो जाये। मैं नहीं चाहता कि बादमें तुम्हें या किसी दूसरे व्यक्तिको धन-संग्रहके सम्बन्धमें चिन्ता करनी पड़े।

तुम यह पत्र हेनरीको[4] भेज दो, क्योंकि मैं यह बात उनके पत्रमें[5] नहीं दोहराऊँगा।

१. देखिए पिछले शीर्षककी दूसरी पाद-टिप्पणी।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. इसका उत्तर देते हुए श्री रिचने अपने १७-४-१९११ के पत्रमें इस प्रकार लिखा : "मैंने सभाके सम्बन्धमें आपका अभिप्राय ठीक-ठीक समझ लिया था; योजना छोड़ दी गई है। आपने जो कारण बताये हैं, उनसे बिलकुल सहमत हूँ।" (एस० एन० ५४६९)

४. एच० एस० एल० पोलक।

५. यह उपलब्ध नहीं है।

संसदकी बैठक शनिवारको होगी और सोमवारको भी।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४२७) की फोटो-नकलसे।

२९. जोहानिसबर्गमें रिच

श्री रिचने जोहानिसबर्गमें वकालत शुरू कर दी है।[1] हमें ऐसा एक भी भारतीय नहीं मिला जिसने श्री रिचकी मूल्यवान सेवाकी कद्र न की हो। उस सेवाके बदले उनका सम्मान तो करना ही चाहिए, उनकी सलाहपर अमल भी जरूरी है। अब चूंकि श्री रिचने वकालत शुरू कर दी है, कौमका कर्तव्य उसमें उन्हें मदद पहुँचाना भी है। हम आशा करते हैं कि जिन्हें जरूरत पड़े वे सभी श्री रिचको अपना वकील करेंगे और इस प्रकार उनको मदद पहुँचानेमें तत्परता दिखायेंगे।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, १५-४-१९११

३० तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल १५, १९११
११ बजे दिन

गांधी
जोहानिसबर्ग

सामान्य विधेयकके पास किये जानेकी बातचीत फिर आरम्भ। शायद फ्री स्टेटके सदस्य राजी हो जायें। बुधवारसे पहले कुछ ज्ञात न होगा।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४६५) की फोटो-नकलसे।

1. रिच अप्रैल ५, १९११को जोहानिसबर्ग आये और वहाँ उन्होंने २१-२४, कोर्ट चैम्बर्स, रिसिक स्ट्रीटमें स्थित गांधीजीके कार्यालयमें वकालत शुरू की।

३१. तार : एच० एस० एल० पोलकको

[अप्रैल १५, १९११][1]

सामान्य विधेयक सम्भवतः पास हो जायेगा। शायद बुधवारको निश्चित मालूम हो जायेगा।

रिचके नाम पोलकके पत्र (एस० एन० ५४६४) की फोटो-नकलसे उद्धृत।

३२. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
अप्रैल १५, १९११

असंशोधित

प्रिय रिच,

तुम्हारे पत्र मिले। आशा है, तुम मान-हानि और झूठी निन्दाके कुछ दक्षिण आफ्रिकी मुकदमे पढ़ जाओगे और तिथिपर पैरवीके खयालसे वैन जीलकी रचनाएँ देख लोगे।

हमारा प्रश्न बहुत-से उतार-चढ़ावोंमें होकर गुजर रहा है। मुझे आज लेनने कहा कि सरकारको अधिवेशनकी समाप्तिसे पहले दो बातें अवश्य निश्चित करनी हैं: नाबालिगोंके[2] . . . उन्होंने आगे कहा कि लॉर्ड ग्लैडस्टन[3] और फ्री स्टेटके सदस्योंसे जे० सी० एस०[4] सलाह कर रहे हैं। स्पष्ट है कि वे अपने प्रस्तावको पास कराना चाहते हैं। वे फ्री स्टेटके सदस्योंसे बहुत अधिक दूरदर्शी हैं। इसलिए अभीतक सामान्य विधेयकके आनेकी सम्भावना है। मेरी सबसे ताजी खबर यह है — दोनों प्रस्ताव अभी दौड़में बराबर-बराबर चल रहे हैं। यदि सामान्य विधेयक पास हो जाता है तो फ्री स्टेट-सम्बन्धी प्रतिबन्ध हटा दिया जायेगा। लेनने मुझे बताया कि शायद वे मुझे बुधवारको कोई निश्चित जानकारी दे सकेंगे।

१. पोलकने रिचके नाम डर्बनसे लिखे अपने १५-४-१९११के पत्रमें इस तारको उद्धृत करते हुए कहा है कि वह उन्हें गांधीजीसे अभी-अभी मिला है। (एस० एन० ५४६४)

२. यहाँ कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके।

३. हर्बर्ट जॉन ग्लैडस्टन (१८५४-१९३०); प्रथम वाइकाउंट; ब्रिटिश राजनयिक संसद-सदस्य, १८८०-१९१०; युद्ध मन्त्रालयमें क्रमशः आर्थिक कार्य-मन्त्री, गृह-उपमन्त्री और गृह-मन्त्री। सन् १९१०में दक्षिण आफ्रिकाके गवर्नर-जनरल और उच्चायुक्त नियुक्त; इन पदोंपर वे १९१४ तक रहे।

४. जनरल स्मट्स।

लन्दन जानेके सम्बन्धमें[1] मैं सुबह कुछ इस तरह सोच रहा था: शिष्टमण्डल लन्दनमें क्या करेगा? साम्राज्य-सम्मेलनमें तफसील नहीं, सामान्य सिद्धान्त तय किये जायेंगे। यदि सत्याग्रह बन्द कर दिया जाये तो हमारे प्रश्नमें ज्यादातर तफसीलकी ही बातें रह जायेंगी। उपनिवेश-मन्त्रीके साथ मिलकर कुछ काम किया जा सकता है। किन्तु क्या ऐसा समय आ चुका है? यहाँ क्या होता है, क्या इसकी प्रतीक्षा करना अधिक अच्छा न होगा? दूसरी ओर, क्या यह सम्भव नहीं है कि शिष्टमण्डल भेजनेसे स्वर्ण-कानून-सम्बन्धी कार्रवाई आदिका जो खतरा है, वह रुक जाये?

इस प्रकार पक्ष और विपक्ष, दोनोंके समर्थनमें तर्क है। मुझे ऐसा लगता है कि यदि शिष्टमण्डल भेजना है तो हमें निम्न तार[2] देना चाहिए:

> सत्याग्रह शायद बन्द हो जाये, फिर भी अन्य गम्भीर स्थानीय शिकायतें हैं, विशेषतः स्वर्ण कानूनके अन्तर्गत कार्रवाई करनेकी धमकी; साम्राज्य सम्मेलनके अवसरपर एक छोटा शिष्टमण्डल भेजनेके सम्बन्धमें लॉर्ड ऍम्टहिलकी सम्मति तारसे भेजिए।

मेरी सम्मति यह है कि ऐसा तार तभी भेजा जाये जब भारतीय समाज स्वीकारात्मक उत्तर आ जानेपर शिष्टमण्डल भेजनेके लिए तैयार हो।

अब रहीं तारीखें; सम्मेलन सोमवार, २२ मईको आरम्भ होगा। मैं अगले बुधवार, १९ अप्रैलको रवाना नहीं हो सकता; २६ अप्रैलको मुश्किल ही होगा। तब रह जाती है अन्तिम और एक-मात्र तारीख, तीन मई। उस रोज रवाना हों तो शिष्टमण्डल २० मईको लन्दन पहुँचेगा उसका सम्मेलनपर मुश्किलसे ही कोई प्रभाव पड़ेगा। २२ मई तो केवल औपचारिक काम-काजका दिन होगा।

केप टाउनसे एक पेनीकी भी आशा करना व्यर्थ है। यहाँके लोग समर्थन करेंगे। किन्तु उनके पास इस कार्यके लिए न आदमी हैं और न पैसा। डर्बनका मुझे कुछ पता नहीं है। यदि वहाँ पैसा मिल गया तो डर्बनके लोग अपना निजी प्रतिनिधि भेजना चाहेंगे। इसलिए अकेले ट्रान्सवालको पैसा जुटाना होगा, किन्तु काम सभीके लिए करना होगा।

मेरे मनका सहज निर्णय ऐसे शिष्टमण्डलके विरुद्ध है।

श्रीमती अर्नेस्ट कुमारी नडसेनके[3] पत्रके लिए चिन्तित हैं।

मैं श्री मैकिंटायरको[4] पत्र लिखूँगा।

---

१. देखिए "पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ ६।

२. स्पष्ट ही लन्दनकी दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको।

३. जोहानिसबर्गकी एक महिला, जो कुछ भारतीय स्त्रियोंको प्रशिक्षित करनेकी जिम्मेदारी लेनेको तैयार थी।

४. डब्ल्यू० जे० मैकिंटायर; स्कॉटलैंडके एक थिऑसफिस्ट और गांधीजीके मुंशी।

मैं जोज़ेफ[1] और क्विनको[2] पत्र[3] लिख रहा हूँ; वे १८ अप्रैलको रिहा किये जायेंगे।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४६६) की फोटो-नकलसे।

३३. पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
अप्रैल १७, १९११

प्रिय रिच,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तुम्हें कल पत्र नहीं लिखा। लिखनेको कुछ था नहीं। मैंने 'इं० ओ०' के गुजराती स्तम्भोंमें एक सम्पादकीय टिप्पणी[4] लिखी है। इसमें यह बताया है कि यदि जनता चाहे तो किस तरह तुम्हारे कार्यकी सराहना कर सकती है। इसे गत शनिवारको छप जाना था।

यदि लेनका कहना ठीक हो तो हमें इस सप्ताह निश्चित परिणामका पता चल जायेगा। स्मट्स तो इस मामलेको राज्यारोहणके समय तक खींचना चाहेंगे, किन्तु मेरा अनुमान है कि यह तबतक खींचा नहीं जा सकता। किन्तु अनुमान करना व्यर्थ है। यदि बुधवारको भी निराशा हाथ लगी तो हमें फिर थोड़े ही दिनोंमें और भी बुरी खबर सुननी पड़ेगी।

मैं तो आशा करता हूँ कि ग्रेगरोवस्की[5] ब्लूमफॉन्टीन जा सकेंगे।[6] यदि वे न जा सकें तो यह बहुत दुःखकी बात होगी। उस अवस्थामें लैपिनको अपनी पसन्दका

१. जोज़ेफ रायप्पन; आपका जन्म भारतीय गिरमिटिया माता-पितासे नेटालमें हुआ था; कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयसे ग्रेजुएट हुए, वहींसे बैरिस्टरी पास की; एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशके विरुद्ध लॉर्ड एलगिनको दिये गये प्रार्थनापत्रपर जिन पाँच विद्यार्थियोंने हस्ताक्षर किये थे उनमें एक श्री रायप्पन भी थे। जब ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंका शिष्टमण्डल इंग्लैंडमें था, उन्होंने बराबर उसकी मदद की। बादमें सन् १९१०में दक्षिण आफ्रिका लौटनेपर उन्होंने कई बार कैद और निर्वासन भोगा; देखिए खण्ड १० तथा **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास,** अध्याय ३०।

२. लिअंग क्विन; जोहानिसबर्गवासी चीनियोंके नेता और चीनी संघ तथा कैंटोनीज़ क्लबके अध्यक्ष; सन् १९०८में स्मट्सको लिखे "समझौता पत्र" पर हस्ताक्षर करनेवालोंमें वे भी एक थे। एशियाई पंजीयन अधिनियमके विरोधमें अपने पंजीयन प्रमाणपत्र जलाकर जेल जानेवालोंमें भी वे शामिल थे; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४५० और ९, पृष्ठ २३४।

३. ये पत्र उपलब्ध नहीं हैं।

४. देखिए "जोहानिसबर्गमें रिच", पृष्ठ २५।

५. ग्रेगरोवस्की; जोहानिसबर्गके एक वकील, जिनसे कानूनी और संवैधानिक मामलोंमें गांधीजी अक्सर राय लिया करते थे; बादमें उन्होंने न्यायालयोंमें सत्याग्रहियोंकी पैरवी की; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४४४-४६ और ४५७-५८।

६. रम्भाबाई सोढाके मामलेकी अपीलके सिलसिलेमें। ग्रेगरोवस्की वहाँ गये तो सही, लेकिन २२ अप्रैलको अपीलकी सुनवाई हुई और मय खर्चेके मुकदमा खारिज कर दिया गया।

व्यक्ति भेजनेके लिए कहना अधिक अच्छा होगा। यदि बुधवारके दिन कुछ निश्चित हो गया तो मैं श्रीमती सोढाके[1] लिए राहत माँगनेकी बात सोचता हूँ। गुरुवारको यह पत्र तुम्हें मिल जायेगा। इसलिए सम्भव है, मैं कल इस मामलेके सम्बन्धमें तुम्हें तार[2] दूँ।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४६८) की फोटो-नकलसे।

३४. पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
अप्रैल १८, १९११

प्रिय रिच,

मुझे दुःख है कि अभीतक कोई खास खबर नहीं मिली। कल साढ़े दस कब बजता है, इसकी मैं कुछ अधीर होकर प्रतीक्षा कर रहा हूँ। लगता है, फिर निराशा ही हाथ लगेगी। लेन कहेंगे कि अभीतक निश्चित रूपसे वे कुछ नहीं कह सकते। सम्भवतः होगा यह कि स्मट्स ऐन वक्तपर अपने विधेयकको, वह जैसा कुछ है, जल्दीसे पास करा डालेंगे। इसका अर्थ यह है कि वे हमें एक ढाँचा दे देंगे और उनसे उसमें प्राण डलवानेका प्रयत्न हमें करना पड़ेगा।

मैंने सोढाकी अपीलके सम्बन्धमें जानकारी माँगी है। यदि ग्रेगरोवस्की नहीं जा सकें तो मैं आशा करता हूँ कि तुम कोई अच्छा वकील कर लोगे।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

१. सत्याग्रही श्री रतनशी सोढाको, एशियाई पंजीयन अधिनियमको स्वीकार न करनेपर, जब जेल दे दी गई तब उन्होंने टोंगाटके पास स्थित अपनी घर-गृहस्थीको उजाड़कर अपने स्त्री-बच्चोंको टॉल्स्टॉय फार्म भेज देनेका निश्चय किया। लेकिन नवम्बर, १९१० में श्रीमती रम्भाबाई सोढाको, जब वे गांधीजीके साथ अपने बच्चोंको लेकर ट्रान्सवालकी सीमामें प्रवेश कर रही थीं, निषिद्ध प्रवासी होनेका अपराध लगाकर गिरफ्तार कर लिया गया; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ३७५ और ३७८-८८। जनवरी, १९११ में जोहानिसबर्गके एक मजिस्ट्रेटने उन्हें १० पौंड जुर्माने और एक महीनेकी सादी कैदकी सजा दी; लेकिन जब उनके वकीलने कहा कि वे इस निर्णयके विरुद्ध अपील करेंगी तो उन्हें जमानतपर छोड़ दिया गया। बादमें ट्रान्सवालके प्रान्तीय न्यायालयने मजिस्ट्रेटके निर्णयको बदलकर १० पौंड जुर्माने या एक महीनेकी सादी कैदकी सजा दी। ब्लूमफोन्टीनके न्यायालयमें इसीके बाद अपील दायर की गई थी; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४२०-२४ और ४५५-५६।

२. देखिए "तार: जोहानिसबर्ग कार्यालयको", पृष्ठ ३०। ऐसा लगता है कि १८ तारीखको गांधीजीने रिचके नाम पत्र भेजा था, तार नहीं।

[पुनश्चः]

कुमारी श्लेसिनसे कहना कि मुझे फिनॉट और डॉ० मेहताके भाषण[1] यथासमय मिल गये थे।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४७१)की फोटो-नकलसे।

३५. तार : जोहानिसबर्ग कार्यालयको

केप टाउन
अप्रैल १९, १९११

गांधी
जोहानिसबर्ग

[स्मट्स] फ्री स्टेटके प्रतिबन्धको हटाकर सामान्य विधेयक पास कराना चाहते हैं। किन्तु उनका खयाल है यह कदाचित् इस अधिवेशनमें न हो। वे इस बीच आन्दोलन नहीं चाहते। सोढाकी अपील असफल होनेपर वे नहीं चाहते कि उन्हें जेल दी जाये।[2] यदि विधेयक स्वीकृत न हुआ तो यहाँ रुकूँगा। इंग्लैंड-यात्रा[3] आवश्यक जान पड़ती है। स्थितिपर सावधानीसे विचारकी आवश्यकता।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारकी प्रति (एस० एन० ५४७५) की फोटो-नकलसे।

३६. पत्र : जनरल स्मट्सको

[केप टाउन]
अप्रैल १९, १९११

प्रिय जनरल स्मट्स,

आज सबेरे हमारे बीच जो बातचीत[4] हुई थी उसपर विचार करनेके बाद मुझे लगता है कि स्थिति आपके सम्मुख स्पष्ट रूपमें रख दी जानी चाहिए।

यदि यह प्रश्न वर्तमान अधिवेशनमें तय न हुआ तो परिस्थिति बहुत अजीब हो जायेगी। क्योंकि सत्याग्रहियोंके बिलकुल निष्क्रिय रहनेकी सम्भावनाकी भी कल्पना कठिन है। टॉल्स्टॉय फार्ममें परिवार-सहित कुछ ऐसे लोग रह रहे हैं, जो आर्थिक दृष्टिसे

१. देखिए "पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ २२।
२. देखिए "जनरल स्मट्ससे मुलाकातका सार", पृष्ठ ३५।
३. देखिए "पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ २७।
४. देखिए अगला शीर्षक।

आगे न आये या गिरफ्तारीसे बचे तो भी उनका कहीं आना-जाना तो रुका ही रहेगा। उदाहरणके लिए, यदि वे नेटाल जाते हैं या वहाँसे लौटकर आते हैं तो अवश्य सीमापर रोके-टोके जायेंगे। उनमें जो व्यापारी हैं, वे व्यापार नहीं कर सकते; क्योंकि जबतक संघर्ष जारी है तबतक वे अपने पंजीयन-प्रमाणपत्र प्रस्तुत नहीं करेंगे। यदि हम सक्रिय संघर्ष जारी रखते तो मैं इन सब अड़चनोंके सम्बन्धमें कुछ न कहता। किन्तु, अगर फिर सैनिक भाषाका उपयोग करूँ तो, हमारी वार्ता जारी रखनेका अर्थ है, एक साल या इससे अधिक अर्थात् जबतक संसदका अधिवेशन फिर न हो तबतकके लिए युद्ध-विराम। मैं नहीं जानता कि यह कैसे सधेगा। आपको ज्ञात है, संघर्षमें हमारा बड़ा खर्च हुआ है और परिवारोंके पालन-पोषण आदिका हमारा मासिक व्यय भी स्पष्ट ही बहुत अधिक है। यदि हम फिर चन्दा माँगना आरम्भ करें तो हमें यहाँ, भारतमें और इंग्लैंडमें आन्दोलन करना पड़ेगा। फिर, नेटालके लोगोंका भी सब-कुछ उजड़ गया है। क्या हम उन्हें महीनों तक दुविधाकी अवस्थामें रख सकते हैं?

मैं सचमुच आपकी सहायता करना चाहता हूँ; किन्तु समझमें नहीं आता, सत्याग्रहियोंकी ओरसे चुप बैठ रहनेका वचन मैं कैसे दे दूँ। आप, साम्राज्य-सरकार और मैं सभी आन्दोलनसे बचना चाहते हैं। किन्तु मुझे लगता है कि यदि यह मामला चालू सत्रमें समाप्त नहीं किया जाता तो वर्तमान स्थितियोंमें संघर्षसे बचना असम्भव ही हो जायेगा।

दूसरी ओर यदि मैं आपकी कठिनाईको न समझूँ, विशेषतः इतने लम्बे अधिवेशनके बिलकुल अन्तमें, तो यह ओछापन होगा; आपको अनेक कठिन प्रश्न तय करने हैं किन्तु भारतीय तो इस समय केवल एक ही प्रश्नकी बात सोचते हैं। फिर भी मेरे सुझाये गये वैकल्पिक समाधानके सम्बन्धमें आपके कानूनी सलाहकारोंको जितनी कठिनाई दिखाई देती है, मेरी समझमें उतनी है नहीं। यह देखते हुए कि आप किसी-न-किसी दिन सामान्य विधेयकको पास कराना चाहते हैं, कोई कारण नहीं है कि ट्रान्सवाल प्रान्त पहलेसे ही उस शिक्षा-परीक्षाके अनुसार न चलने लगे, जो उस विधेयकके अन्तर्गत निश्चित की जानी है। वह ऐसे एक भी गोरेको, जिसे आप ट्रान्सवालमें रखना चाहें, बाहर न रखेगा और प्रतिवर्ष छः उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंके अतिरिक्त किसी भारतीयको न आने देगा। जहाँतक मैं विरोधी-दलके नेताओंकी भावनाओंका अन्दाज लगा सका हूँ, वे कोई विरोध न करेंगे। सभी समझ जायेंगे कि समाधान अस्थायी है और उसका हेतु ट्रान्सवालमें झगड़ेको शान्त करना है। फ्री स्टेटके सदस्योंको आपके सामान्य विधेयकपर विचार करनेके लिए पर्याप्त अवकाश मिलेगा और अगले अधिवेशनमें सब नये सिरेसे बात आरम्भ करेंगे। यद्यपि आप बहुत-सी परेशानियोंमें बुरी तरह उलझे हुए हैं, तथापि मैं आग्रह करूँगा कि आप मेरे देशवासियोंके मार्गकी जबरदस्त कठिनाइयोंको हटाकर उन्हें राज्यारोहणके उस उत्सवमें भाग लेने योग्य बनायें, जो पास आ गया है।

चूँकि यह पत्र बहुत व्यक्तिगत है और उस बातचीतके आधारपर लिखा गया है जिसे आप गोपनीय रखना चाहते हैं; इसलिए आपकी अनुमतिके बिना मैं इसे प्रकाशित न करूँगा।

आपका विश्वस्त,

[पुनश्च:]

श्रीमती सोढाकी अपील ब्लूमफॉन्टीनमें शनिवारको सुनी जायेगी। इसलिए अच्छा हो यदि आप इसी समय (अटर्नी जनरल) को यह निर्देश दे दें कि अपील हार जाने-पर उन्हें गिरफ्तार न किया जाये।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५४७७) की फोटो-नकलसे।

३७. जनरल स्मट्ससे मुलाकातका सार[1]

[केप टाउन]
अप्रैल १९, १९११

असंशोधित
इसका कोई अंश प्रकाशित न किया जाये ।
देखनेके बाद तिजोरीमें रख दें ।

जे० सी० एस० और जी० के बीच १९–४–१९११ को ११–३०[2] बजे हुई भेंटका सार

जनरलने असाधारण सौहार्द्र प्रकट किया। स्मट्स और गांधी ऐसे मित्र हैं कि जिन्होंने आपसमें हाथ मिलाना भी छोड़ दिया है। किन्तु इस भेंटमें दोनोंने तपाकसे हाथ मिलाया।

"अच्छा, गांधी, मुझे बहुत दुःख है। आपको बहुत विलम्ब हुआ है, किन्तु मैं क्या कर सकता हूँ? आप तो खुद ही केप टाउनमें डटे रहना चाहते हैं", जी० एस० ने यह कहते हुए अपनी कुर्सीके पास एक दूसरी कुर्सी खींचकर जी० को बैठनेके लिए कहा।

"एक वकीलके नाते आप यह तो समझते होंगे कि आपके वैकल्पिक सुझावको[3] अमलमें लाना कठिन है।" जनरल स्मट्स गांधीजीकी ओरसे गर्दन घुमाते हैं और अपनी टोकरीमें कुछ ढूँढ़ते जान पड़ते हैं। वे कहना जारी रखते हैं: "गांधी, मेरे भाई! मुझे तुम्हारी परेशानीका दुःख है। तुम जानते हो, मैं शान्ति चाहता हूँ।" (मेरा खयाल है, वे यह सब कहते हुए मन-ही-मन हँस रहे थे।) अब गांधीकी ओर देखते हुए वे कहते हैं "किन्तु मेरे सलाहकारोंका खयाल है कि आपके सुझावपर अमल नहीं किया जा सकता। हम गोरोंका अन्य प्रान्तोंमें प्रवेश कैसे बन्द कर सकते हैं। संसद ऐसे विधेयकको पास न करेगी, इसलिए मैं अपने विधेयकको, जिसे मैं पसन्द करता हूँ और उचित समझता हूँ, पास कराना चाहता हूँ। मैं उसे इस अधिवेशनमें पास करवानेका प्रयत्न करूँगा; किन्तु मैं इसमें असफल भी हो सकता हूँ।[4] सभी सदस्य जल्दी जाना चाहते हैं।

१. मूल अंग्रेजी प्रतिके कटे-फटे होनेके कारण एक-आध शब्दका अनुमान लगाना पड़ा है।

२. यहाँ मूलमें रात्रिका समय लिखा है जो ठीक नहीं है; देखिए पिछला शीर्षक।

३. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१०।

४. स्मट्सकी कठिनाइयोंके बारेमें उपनिवेश-मन्त्रीको लिखे दक्षिण आफ्रिकाके गवर्नर-जनरलके पत्र तथा उसके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ४।

फ्री स्टेटके सदस्य अभीतक किसी भी एशियाईको प्रविष्ट होने देनेके विरुद्ध हैं। मेरा खयाल है, मैं उन्हें विधानसभामें हरा सकता हूँ; किन्तु सीनेट विधेयकको अस्वीकृत कर देगी। इसलिए मैं इस विधेयकको यदि इस अधिवेशनमें पास न करा सका, तो अगले अधिवेशनमें पास करवाना चाहता हूँ। किन्तु इस बीच मैं शान्ति चाहता हूँ। मैं आपके लोगोंको तंग नहीं करना चाहता। यह आप जानते हैं। और मैं नहीं चाहता कि आप लड़नेके लिए भारतसे और दूसरी जगहोंसे लोगोंको लायें। मैं साम्राज्य-सरकारकी सहायता करना चाहता हूँ, और साम्राज्य-सरकार मेरी सहायता करना चाहती है। मैं आपकी सहायता करना चाहता हूँ और आप मेरी सहायता करना चाहते हैं। क्या आप हमारे दृष्टिकोणको नहीं समझना चाहते?"

गांधीने बीचमें कहा: "मैं अवश्य समझना चाहता हूँ।" स्मट्सने आगे कहा: "मैं जानता हूँ कि आप लोगोंके कई नेता हैं। मैं जानता हूँ कि आप उदार और सच्चे हैं। यह मैंने साम्राज्य-सरकारसे कहा है। आपको अपने तरीकेसे लड़नेका अधिकार है। किन्तु यह देश काफिरोंका है। हम गोरे लोग मुट्ठी-भर हैं। हम नहीं चाहते कि यहाँ एशिया घुस आये। अब चूँकि नेटाल प्रवासियोंको नहीं आने देगा, इसलिए मुझे आशा है कि मैं इस प्रश्नको हल कर लूँगा। किन्तु हम आपके मुकाबले कैसे टिक सकते हैं? मैंने आपकी पुस्तिका[1] पढ़ी है। आपकी जातिका रहन-सहन सीधा-सादा है और वह मितव्ययी है। वह कई बातोंमें हमारी अपेक्षा अधिक चतुर है। आपकी सभ्यता हजारों साल पुरानी है। हमारी, जैसा कि आप कहते हैं, केवल एक प्रयोग है। कौन जानता है कि यह समस्त अभिशप्त व्यवस्था जल्दी ही समाप्त हो जाये। किन्तु आप जानते हैं, हम यहाँ एशियाको नहीं आने देना चाहते। किन्तु जैसा कि मैं कहता हूँ, नेटाल-जैसी कठिनाई हमारे सामने नहीं है, इसलिए मैं यहाँकी समस्या सुलझा लूँगा। पर मुझे समय चाहिए। मैं इस हालतमें भी फ्री स्टेटके सदस्योंको हरा दूँगा। मगर आप आक्रमण न करें। आप जानते हैं कि इस समस्त प्रश्नपर साम्राज्य-सम्मेलनमें विचार किया जायेगा। इसलिए आप थोड़ा रुकें। अब सोचकर बतायें कि इसपर आपका क्या कहना है। वे कुछ रुककर फिर बोले: "मैं समझ नहीं पाता कि आपके देशबन्धु किस तरह सब जगह पहुँच जाते हैं। इन दिनों मेरे पास व्यापारियोंके विरुद्ध और शिकायतें आई हैं। भविष्यमें कठिनाई इन्हींको लेकर होगी। मैं उनको परेशान करना नहीं चाहता। मैं स्थिति ज्योंकी-त्यों रहने देना चाहता हूँ। किन्तु मैं नहीं जानता कि क्या होगा। आप टससे-मस नहीं होते।" फिर विषय बदलते हुए स्मट्सने कहा: "गांधी, आप अपने निर्वाहके लिए क्या कर रहे हैं?"

गांधी: मैं फिलहाल वकालत नहीं कर रहा हूँ।

स्मट्स: किन्तु तब आपका निर्वाह कैसे होता है? क्या आपके पास बहुत धन है?

गांधी: नहीं। मैं टॉल्स्टॉय फार्ममें दूसरे सत्याग्रहियोंकी तरह ही गरीबीसे रह रहा हूँ।

१. **हिन्द स्वराज्य,** देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ६-६९।

स्मट्स : यह फार्म किसका है ?

गांधी : यह श्री कैलेनबैकका[१] है। वे जर्मन हैं।

स्मट्स : (हँसते हुए) अच्छा वे ही पुराने कैलेनबैक ! वे तो आपके प्रशंसक हैं, ठीक है न ? ।

गांधी : यह तो मैं नहीं जानता लेकिन; हम निश्चय ही घनिष्ठ मित्र हैं।

स्मट्स : मैं किसी दिन आकर आपका काम अवश्य देखूँगा; कहाँ है वह ?

गांधी : लॉलीके पास।

स्मट्स : मैं समझ गया; वेरीनिगिंग-लाइनपर ! स्टेशनसे कितनी दूर है ?

गांधी : लगभग २० मिनटका रास्ता है। जरूर आइए। हमें बड़ी प्रसन्नता होगी।

स्मट्स : हाँ, मैं किसी दिन अवश्य आऊँगा। यह कहकर वे उन्हें विदा करनेके लिए उठ खड़े हुए।

गांधी भी खड़े हो गये और बोले : "आप कहते हैं कि आप ट्रान्सवाल प्रवासी अधिनियममें संशोधन नहीं कर सकते। किन्तु मुझे इसमें कोई कठिनाई दिखाई नहीं देती।"

स्मट्स : कठिनाई है। जबतक आप मेरा सुझाव नहीं मानते, तबतक गोरे संशोधन नहीं करने देंगे।

गांधी : और सुझाव है ....

स्मट्स : गवर्नरको अलग-अलग लोगोंके लिए अलग-अलग परीक्षा रखनेके विनियम बनानेका अधिकार देना। विनियमोंमें उल्लेख केवल भारतीयोंका होना चाहिए। मैं जानता हूँ, इसे आप पसन्द न करेंगे। किन्तु आप सारे मामलेपर फिर विचार करें और मुझे बतायें कि आपका खयाल क्या है। आप जानते हैं, मैं आपकी सहायता करना चाहता हूँ। यदि किन्हीं इक्के-दुक्के लोगोंकी कठिनाई हो तो आप मेरे पास हमेशा आ सकते हैं।

गांधी : मैं सारे मामलेपर विचार करूँगा, किन्तु यदि आप शान्ति चाहते हैं तो फिर आप श्रीमती सोढाको कष्ट क्यों देना चाहते हैं ?

स्मट्स : नहीं; मैं उन्हें कष्ट नहीं देना चाहता।

गांधी : क्या आप उन्हें जेलमें रखना चाहते हैं ?

स्मट्स : नहीं। आपको मालूम है कि मैं इस मामलेमें कुछ भी नहीं जानता हूँ।

१. हरमान कैलेनबैक; जोहानिसबर्गके एक समृद्ध जर्मन वास्तुकार, जिनका अध्यात्मकी ओर काफी झुकाव था। वे खुद भी सत्याग्रही थे और उन्होंने जोहानिसबर्गके पासका अपना "टॉल्स्टॉय फार्म" सत्याग्रहियोंके परिवारोंके भरण-पोषणके लिए दे दिया था। फार्मके लोगोंको उन्होंने तरह-तरहके शिल्प सिखाये और बागवानीका प्रशिक्षण भी दिया। गांधीजी और श्री पोलककी अनुपस्थितिमें कुछ दिनों तक वे ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्री रहे और गांधीजीके आहार-सम्बन्धी प्रयोगोंमें भी भाग लिया। देखिए **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास** और **आत्मकथा** तथा "मानपत्र : एच० कैलेनबैकको", पृष्ठ १२६-१२७ एवं "श्री कैलेनबैकका स्वागत", पृष्ठ १२९-३१।

गांधी : शनिवारको इसकी अपील है। सम्भव है, हम इसमें हार जायें। तब उन्हें या तो जेल जाना होगा या १० पौंड देने होंगे। वे जुर्माना न देंगी और इसलिए अवश्य जेल जायेंगी।

स्मट्स : नहीं, मैं नहीं चाहता कि वे जेल जायें। किन्तु आप ट्रान्सवालमें बहुत-से लोगोंको गैर-कानूनी ढंगसे लाये हैं। और ऐसा न करें।

गांधी : *मैं किसीको गैरकानूनी ढंगसे लानेकी बात स्वीकार नहीं कर सकता।* श्रीमती सोढाको मैं गैरकानूनी ढंगसे हर्गिज़ नहीं लाया। मैंने पंजीयकको उचित नोटिस दिया। और मैं उनको इसलिए लाया कि अन्य बहुत-से सत्याग्रहियोंकी भाँति उनके पतिकी घर-गृहस्थी भी बरबाद हो गई थी।

स्मट्स : ठीक है, आप मुझे अपीलका परिणाम सूचित कर दें; मैं यह व्यवस्था कर दूँगा कि वे गिरफ्तार न की जायें। मुझे तुरन्त सूचित करें; करेंगे न?

गांधी : धन्यवाद! अवश्य करूँगा।

बातचीतमें उन्होंने कहा कि फ्री स्टेटका मामला गोपनीय है। भेंट लगभग ४० मिनट तक चली।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४७६) की फोटो-नकलसे।

३८. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
अप्रैल २०, १९११

प्रिय रिच,

संलग्न सामग्री छगनलालने मुझे तुम्हारे लिए भेजी है। यह अंश 'इंडियन ओपिनियन' में उद्धृत करनेके लिए अच्छा है; किन्तु क्या हम ले सकते हैं?

मुझे आशा है, तुम्हें अपने मुकदमेमें सफलता मिली होगी। मेरा खयाल है, आवश्यकता पड़नेपर तुम कुमारी श्लेसिनसे पैसे लेते रहे हो।

खैर; उक्त सामग्री हेनरीको पढ़नेके लिए भेज दी जाये।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४८७) की फोटो-नकलसे।

३९. तार : ब्रिटिश भारतीय संघको

केप टाउन
अप्रैल २०, १९११

ब्रि० भा० सं०
जोहानिसवर्ग

इच्छा निश्चित रूपसे परिणाम जाननेपर ही लौटनेकी है। अभीतक निराश नहीं हुआ हूँ। सभाके वजाय काछलिया सोरावजीको अन्य वाहरी स्थानोंमें जानेकी वात सुझायें। स्थिति समझायें और चन्दा करें। समय विलकुल न खोयें। दो दिन तक भारत और इंग्लैंडको तार न दें।

गांधी

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४८२) की फोटो-नकलसे।

४०. पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको

गुरुवार, अप्रैल २०, १९११

प्रिय रिच,

मुझे तुम्हारे दो तार मिले। प्रश्नोंकी पूर्व कल्पना करके उनका उत्तर[१] मैं कल ही दे चुका हूँ। तथापि मैंने आज तार[२] भी कर दिया है। मैं पूर्णतः निराश नहीं हुआ हूँ और यदि वे कोई निर्णयात्मक उत्तर देनेका इरादा करें तो मैं प्रतीक्षा करना चाहता हूँ।

यदि तुम्हारा खयाल यह हो कि मैंने स्मट्सको जो व्यक्तिगत पत्र[३] भेजा है, उसकी प्रतिलिपि मॉडको मिलनी चाहिए, और मेरा भी ऐसा ही खयाल है तो वहीं उसकी नकल करके उसे एक प्रति भेज दो। मैं आज किसीसे नहीं मिला। कल रात मैं ऐंडर्सनके मकानपर सर डेविडसे[४] मिला और उनसे लम्बी वातचीत हुई। मेरी समझमें वे इस मामलेमें तनिक भी प्रभाव नहीं डाल सकते। मैं कल अलेक्जैंडरसे

१. देखिए "तार: जोहानिसवर्ग कार्यालयको", पृष्ठ ३० ।

२. देखिए पिछला शीर्षक ।

३. देखिए "पत्र: जनरल स्मट्सको", पृष्ठ ३०-३२ ।

४. सर डेविड हंटर; संघ-संसदमें डर्वनके सदस्य और भारतीय समाजके हमदर्द; कुछ दिनोंतक नेटाल गवर्नमेंट रेल्वेके जनरल मैनेजर थे । देखिए खण्ड ५, पृष्ठ १९१ ।

मिलकर देखूंगा कि सदनमें कोई प्रश्न कराया जा सकता है या नहीं। किन्तु कोई सख्त कार्रवाई करनेसे पहले मैं स्मट्सके उत्तरकी प्रतीक्षा कर लेना चाहता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४४८) की फोटो-नकलसे।

४१. पत्र: ई० एफ० सी० लेनको

[केप टाउन
अप्रैल २०, १९११]

प्रिय श्री लेन,

मैंने जनरल स्मट्सके साथकी बातचीतका सार तारसे नेटाल कांग्रेस, डर्बन और संघके नाम जोहानिसबर्ग भेज दिया था।[1]

नेटाल भारतीय कांग्रेसकी ओरसे निम्नलिखित तार मिला है:

> कांग्रेस ट्रान्सवालके आन्दोलनको बन्द करनेपर राजी नहीं। इस सत्रमें निबटारा हो जाना चाहिए। सरकारके वादेके अनुसार मामला राज्याभिषेकसे पहले खत्म हो जाना चाहिए, भले ही सत्रको कुछ अधिक चलाना पड़े।

संघने निम्नलिखित तार दिया है:

> आपका १० तारीखका तार मिला। यदि इस सत्रमें कानूनमें संशोधन नहीं होता तो समितिने आन्दोलन चलाते रहने और भारत तथा इंग्लैंडको समुचित तार भेजनेका निर्णय किया है।

अधिवेशनमें अमल किया जायेगा। कुछ भी हो, मैं जनरल स्मट्ससे यथासम्भव शीघ्र कोई निश्चित उत्तर देनेकी प्रार्थना करता हूँ।

हृदयसे आपका,

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५४८९) की फोटो-नकलसे

४२. पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको

[केप टाउन]
शुक्रवार [अप्रैल २१, १९११]

प्रिय रिच,

स्म० द्वारा सरकारी तौरपर दिया गया उत्तर[1] तीसरे पहर २-३० बजे मिला। ३ बजे लेनके पास गया, ४-४५ पर वहाँसे उठा और, अलेक्ज़ैन्डरके पास गया; उनसे मिला और तब तार-घर गया; अब शामके ५-४५ बज रहे हैं। विस्तारसे लिखनेके लिए बहुत समय नहीं है। लेनने मुझे जनरलके साथ हुआ गोपनीय पत्र-व्यवहार दिखाया। इससे प्रकट होता था कि विधेयकके इस अधिवेशनमें रखे जानेकी सम्भावना नहीं है; चाहे हम सत्याग्रह बन्द करें या न करें। इसलिए मैंने सोचा कि यदि कुछ आश्वासन[2] दे दिये जायें तो हम सत्याग्रह बन्द कर सकते हैं। मैं क्या चाहता हूँ, मैंने बता दिया है। मैं कल ९ बजे सवेरे लिमिटेड एक्सप्रेससे रवाना होना चाहता था। इसलिए लेनने स्म० को टेलीफोन किया कि क्या वे आश्वासन दे सकते हैं और उन्होंने अन्तिम दो आश्वासनोंके सम्बन्धमें हाँ कहा; किन्तु पहले आश्वासनके सम्बन्धमें उनका उत्तर नकारात्मक था। फिर भी, मैं रुक गया हूँ। बहरहाल मैं प्रातःकाल लेनको देनेके लिए एक पत्र[3] लिख रहा हूँ। सत्याग्रहियोंको उनकी मुराद मिल जानेकी कुछ सम्भावना तो है; मैं प्रयत्न कर रहा हूँ। यदि लिखित आश्वासन दे दिया जाये तो मेरा यही खयाल है कि वह सर्वोत्तम होगा। हमारे लिए अगले अधिवेशनमें एक सामान्य विधेयक जरूर प्रस्तुत किया जायेगा। जनरल स्मट्सके पत्रकी[4] प्रतिलिपि भेजनेके लिए समय नहीं है। आज सायंकालके लिए मेरे पास बहुत काम है। एक दिन किम्बर्लेमें बिताऊँगा; इसलिए मुझे वहाँ बुधवारके सबेरे पहुँच जाना चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४९२) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए गांधीजीको लिखा लेनका पत्र, परिशिष्ट २।
२ और ३. देखिए अगला शीर्षक।
४. देखिए परिशिष्ट २।

४३. पत्र : ई० एफ० सी० लेनको

७, विटेनसिंगल [स्ट्रीट]
[केप टाउन]
अप्रैल २२, १९११

प्रिय श्री लेन,

आपका इसी २१ तारीखका कृपापत्र[1] मिला।

मुझे खेद है कि जनरल स्मट्सको ट्रान्सवालका एशियाई झगड़ा इस अधिवेशनमें तय करना असम्भव दिखाई देता है। किन्तु मैं आपके पत्रमें कही गई इस बातके लिए कृतज्ञ हूँ कि जनरल स्मट्स अवकाश-कालमें इस मामलेपर ध्यान देंगे जिससे अगले अधिवेशनमें समझौता हो सके।

मैं भी जनरल स्मट्सकी तरह इसके लिए चिन्तित हूँ कि अनाक्रामक प्रतिरोध अब बन्द कर दिया जाये।

तब क्या मैं उनके विचारार्थ निम्न सुझाव दे सकता हूँ ताकि समझौता मुल्तवी करनेसे मेरे देशवासियोंमें जो सन्देह उत्पन्न होना निश्चित है वह दूर हो सके?

यह आश्वासन दे दिया जाये कि:

(क) अगले अधिवेशनमें छोटाभाईके[2] फैसलेके अनुसार नाबालिग बच्चोंके अधिकारोंके संरक्षणके लिए अनावश्यक धाराओंको छोड़कर, १९०७ के अधि-

१. देखिए गांधीजीको लिखा लेनका पत्र, परिशिष्ट २।

२. ए० ई० छोटाभाई; सन् १८९९से ट्रान्सवालके अधिवासी; सन् १९०८के कानून ३६के अन्तर्गत विधिवत् पंजीकृत; अपने पन्द्रह वर्षीय नाबालिग लड़केको ट्रान्सवाल लाये। लड़केका नाम अपने पिताके जनवरी, १९१०के पंजीयन प्रमाणपत्रपर अंकित था। लेकिन जब उसके बालिग होनेपर १९०८के कानून ३६ के अन्तर्गत उसके पंजीयनके लिए अर्जी दी गई तो एशियाई पंजीयकने उसे नामंजूर कर दिया। छोटाभाईने मजिस्ट्रेट जॉर्डनकी अदालतमें अपील की, लेकिन जॉर्डनने अपील खारिज करके बालकको निर्वासित कर देनेका हुक्म दिया। फिर इस मामलेको प्रान्तीय अदालतमें पेश किया गया। वहाँ मजिस्ट्रेट वेसेल्सने उनकी अर्जी तो रद कर दी, लेकिन निर्वासनके आदेशको उच्चतर न्यायालय द्वारा विचार किये जाने तक रोक रखा। अन्तमें मामला ट्रान्सवालके उच्चतम न्यायालयके सामने पेश हुआ। पूर्ण पीठने उसपर विचार किया और न्यायमूर्ति मैसनके अलावा सभी न्यायाधीशोंने अपीलके विरुद्ध मत दिया। आखिर २५ जनवरीको दक्षिण आफ्रिकाके सर्वोच्च न्यायालयके अपील विभागने यह निर्णय दिया कि यद्यपि १९०८के कानून ३६में उन्हीं नाबालिगोंके पंजीयनकी व्यवस्था है जो इस कानूनके लागू होनेके दिनसे ट्रान्सवालमें रह रहे हों या इस उपनिवेशकी सीमामें जन्मे हों, किन्तु उसमें यह नहीं कहा गया है कि जो नाबालिग बच्चे उस तारीखके बादसे कानूनन उपनिवेशमें प्रवेश करेंगे उनका पंजीयन १९०७के कानून २की व्यवस्थाके अनुसार नहीं किया जायेगा। न्यायाधीशोंने यह भी कहा कि यह असम्भव दीखता है कि विधानमण्डल एशियाई नाबालिगोंको ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेकी तो पूरी स्वतन्त्रता दे दे, लेकिन पंजीयकको इस सम्बन्धमें कोई अधिकार नहीं दे कि उन नाबालिगोंके बालिग होनेपर वह उन्हें इस देशमें रहने दे। इस प्रकार अन्तमें अपील बहाल हो गई; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ३३२, ३४९, ३८६-८७ और ४३२।

नियम २ को रद करनेका कानून पास कर दिया जायेगा और ट्रान्सवालमें एशियाइयोंके प्रवासके सम्बन्धमें कानूनी समानता पुनः स्थापित कर दी जायगी एवं वर्तमान अधिकार कायम रखे जायेंगे। यदि ट्रान्सवालके वर्तमान प्रवासी अधिनियममें से प्रजातीय प्रतिबन्ध एक सामान्य विधेयक द्वारा दूर कर दिया जाता है, तो इस विधेयकको स्वभावतः संघ-भरमें प्रजातीय प्रतिबन्धसे मुक्त रखा जाना चाहिए।

(ख) वे अनाक्रामक प्रतिरोधी, जो प्रतिरोध न करते तो पंजीयनके अधिकारी होते, अब १९०८ के अधिनियम ३६ में किसी विरोधी विधानके बावजूद पंजीयनके अधिकारी माने जायें।

(ग) शिक्षित अनाक्रामक प्रतिरोधी, जो अब ट्रान्सवालमें हैं, किन्तु जो एशियाई अधिनियमके अन्तर्गत पंजीकृत नहीं हो सकते, आगामी कानूनके खयालसे शिक्षित प्रवासियोंके रूपमें ट्रान्सवालमें रहने दिये जायें; उनकी संख्या छः से अधिक न हो। उनको विशेष प्रमाणपत्र दे दिये जायें जिससे वे अबाध रूपसे इधर-उधर आ-जा सकें।

यदि उक्त आश्वासन दे दिये जायें[1] तो मैं अपने देशवासियोंको अनाक्रामक प्रतिरोध बन्द करनेके लिए राजी करनेमें किसी कठिनाईकी सम्भावना नहीं देखता।

मुझे विश्वास है, जनरल स्मट्स यह स्वीकार करेंगे कि उक्त आश्वासन माँगकर मैं केवल उन्हीं बातोंकी पुष्टिकी प्रार्थना कर रहा हूँ, जिन्हें उन्होंने प्रायः सार्वजनिक रूपसे कहा है।

मुझे निश्चय है कि भारतीय समाज जनरल स्मट्सके प्रति इस बातके लिए बहुत कृतज्ञ होगा कि वे अपील नामंजूर होनेपर भी श्रीमती सोढाको जेल न भेजनेपर राजी हो गये हैं।

मैं जनरल स्मट्स द्वारा यह मौखिक आश्वासन[2] दिये जानेके लिए भी कृतज्ञ हूँ कि वे व्यक्तिगत कठिनाइयोंका विचार करके उन मामलोंमें राहत देनेकी कृपा करेंगे।

मुझे यह बात दुहरानेकी आवश्यकता नहीं है कि वर्तमान अनाक्रामक प्रतिरोध आन्दोलनका कुछ भी क्यों न हो, भारतीय समाज विभिन्न प्रान्तोंके उन कई मामलोंके सम्बन्धमें उनको [जनरल स्मट्सको] परेशान करता रहेगा, जिनके सम्बन्धमें समय-समयपर आवेदन-पत्र आदि दिये जाते रहे हैं।

अन्तमें जिसे मैंने कई बार कहा है फिर वही कहनेका साहस करता हूँ कि जिन लोगोंको दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय समाजका मार्गदर्शन करनेका गौरव प्राप्त है वे सदा अधिकारियोंकी सहायता करनेके लिए उत्सुक रहे हैं और वे उनकी सहायता करते रहेंगे। साथ ही अबतक की भाँति आगे भी वे, भारतीय समाजके आत्मसम्मान

१. आश्वासन दिया भी गया; देखिए परिशिष्ट ४।
२. देखिए "जनरल स्मट्ससे मुलाकातका सार", पृष्ठ ३४-३५।

और हितोंका खयाल रखते हुए, यूरोपीय लोगोंके दृष्टिकोणका अध्ययन करते रहेंगे और उसको समझते रहेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

टाइपकी हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४९६) की फोटो-नकल, सी डी० ६२८३ और २९–४–१९११ के 'इंडियन ओपिनियन' से।

४४. भाषण : किम्बर्लेमें

[अप्रैल २४, १९११]

कल शामको टाउन हॉलके भोजन-कक्षमें श्री मो० क० गांधीका भाषण सुननेके लिए भारतीयोंकी एक बड़ी सभा हुई, जिसमें गोरे भी काफी संख्यामें आये हुए थे। श्री गांधी उसी समय केप टाउनसे आये थे और जोहानिसबर्ग जा रहे थे।

. . . महापौरने[1] श्री गांधीका संक्षिप्त परिचय दिया और उसके बाद श्री डॉसनने यह अभिनन्दनपत्र[2] पढ़ा।

श्री गांधी जब उत्तर देनेके लिए खड़े हुए तब लोगोंने बड़ा उल्लास प्रकट किया। उन्होंने अपने शानदार स्वागत और सुन्दर मानपत्रके लिए सभाको धन्यवाद दिया। माननीय महापौरको इस प्रसंगपर अध्यक्षता करनेके लिए धन्यवाद देते हुए उन्होंने कहा कि यह इस बातका द्योतक है कि किम्बर्लेके जन-समाजके बीच पारस्परिक सौहार्द है। यह सम्मान मेरा व्यक्तिगत सम्मान न होकर उस महान् कार्यकी सराहनाका प्रतीक है, जो ट्रान्सवालके अनाक्रामक प्रतिरोधियोंने किया है। उन्होंने कहा कि मुझे यह कहते हुए हर्ष होता है कि जिस जटिल प्रश्नको लेकर [भारतीय] समाजको अकथनीय कष्ट उठाने पड़े और ३५०० से भी अधिक लोगोंको जेल जाना पड़ा, उसका हल अब निकट है। उन्होंने बतलाया कि मेरे पास जनरल स्मट्सका एक पत्र[3] है, जिसमें कहा गया है कि संसदके आगामी अधिवेशनमें भारतीय समाजकी न्यायपूर्ण मांगें स्वीकार कर ली जायेंगी। उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कि उक्त पत्रमें इस बातकी सरकारी स्वीकृति निहित है कि अनाक्रामक प्रतिरोध कष्टोंके निराकरणके लिए आन्दोलन करनेका एक उचित मार्ग है। उन्होंने बताया कि लन्दनकी सभाओंमें भाषण देते हुए मैंने निःसंकोचभावसे कहा था कि ट्रान्सवालका अनाक्रामक प्रतिरोध आजके युगका सबसे बड़ा आन्दोलन है। आधुनिक इतिहासमें मुझे भी ऐसा उदाहरण

१. काउंसिलर (परिषद्) डब्ल्यू० गैसन, जिन्होंने सभाकी अध्यक्षता की थी।
२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।
३. देखिए परिशिष्ट ४।

नहीं मिलता जिसमें किसी जन-संगठनने अन्यायके प्रतिकारके लिए स्वयं कष्ट सहनेका मार्ग अपनाया हो, किन्तु ट्रान्सवालके इस आन्दोलनमें यही किया गया है।

श्री गांधीने ट्रान्सवालके अनाक्रामक प्रतिरोधकी तुलना हजरत डॅनियलके उस अन्तःकरण-प्रेरित प्रतिरोधसे की जो उन्होंने मीडियों और पारसियोंके न्यायके खिलाफ इसलिए किया था कि उनकी रायमें वह धर्म और विवेकके प्रतिकूल था। उन्होंने अपने देशवासियोंसे अपनी माँगें सदैव विवेकपूर्ण रखनेका आग्रह किया और कहा कि पूरे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजने आम तौरपर बराबर यूरोपीय दृष्टिकोणको समझनेकी कोशिश की है। यद्यपि उनका संघर्ष कानूनी समानताकी प्राप्तिके लिए है, फिर भी रूढ़ पूर्वग्रहको देखते हुए वे इस बातको मानते हैं कि उसमें व्यावहारिक अन्तर रहेगा ही और इसे भारतीय समाजको अपने उदात्त आचरणसे धीरे-धीरे कम करना पड़ेगा। उन्होंने अपने श्रोताओंसे कहा कि समझौतेकी इस विजयपर वे फूल न जायें, बल्कि ट्रान्सवालके असंख्य भारतीयोंने जो वीरतापूर्ण संघर्ष किया है, इसे वे उसीका सहज परिणाम समझें। श्री थम्बी नायडूका[1] बड़ा ही प्रशंसापूर्ण उल्लेख करते हुए वे बोले कि मेरी दृष्टिमें इस कठिन संग्रामके वे एक सबसे बड़े अनाक्रामक योद्धा हैं। (करतल ध्वनि)

भारतीय संघके अध्यक्ष श्री डॉसनने श्री गांधीके सम्मानमें धन्यवादका प्रस्ताव पेश किया, जिसका समर्थन आफ्रिकी राजनीतिक संघके भूतपूर्व मन्त्री श्री जोशुआने किया। श्री गांधीने संक्षेपमें धन्यवादका उत्तर दिया और महापौरके प्रति धन्यवादका प्रस्ताव रखा, जिसे सम्पूर्ण श्रोताओंने खड़े होकर स्वीकार किया।

[अंग्रेजीसे]

डायमंड फील्ड ऐडवर्टाइजर, २५-४-१९११

१. थम्बी नायडू; मॉरिशसमें उत्पन्न एक तमिल व्यापारी, जो गांधीजीके शब्दोंमें "शेरके समान" थे और अगर उनके स्वभावमें तनिक उद्धतता नहीं होती तो वे "ट्रान्सवालके भारतीय समाजके नेता हो सकते थे।" उन्होंने अनाक्रामक प्रतिरोधमें बड़े उत्साहसे भाग लिया और बादमें तमिल कल्याण समितिके अध्यक्ष हुए। देखिए **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय २०

४५. तार: एच० कैलेनबैकको

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल २६, १९११][1]

कैलेनबैक
लॉली

कल दो बजे हमीदिया हॉलमें शिष्टमण्डलकी बाबत सभा। नायडू, सोढा, मेढ, देसाईकी उपस्थिति नितान्त आवश्यक।

गांधी

'मो० क० गांधीके वास्ते' कुमारी सोंजा श्लेसिनके हस्ताक्षरयुक्त हस्तलिखित दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५०९) की फोटो-नकलसे।

४६. तार: एच० एस० एल० पोलकको

जोहानिसबर्ग
अप्रैल २६, १९११

पोलक
मार्फत रुस्तमजी
डर्बन

टेलीफोन बीचमें कट गया। आज या कल वापस। उत्तर दें। जनरल स्मट्सको प्रेषित २० तारीखका निजी पत्र[2] छोड़कर पूरा पत्र-व्यवहार[3] प्रकाशित करें।

गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें संशोधित हस्तलिखित अंग्रेजी मसविदेकी (एस० एन० ५५१३) की फोटो-नकलसे।

१. पाठमें उल्लिखित सभा २७ अप्रैलको हुई थी, जिससे स्पष्ट है कि यह तार २६ अप्रैलको भेजा गया था।

२. देखिए "पत्र: जनरल स्मट्सको", पृष्ठ ३०-३२। यहाँ २० तारीख सही तारीख नहीं है।

३. पत्र-व्यवहार तदनुसार २९-४-१९११ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित किया गया।

४७. पत्र : श्री अप्पासामी नायकरको[1]

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल २८, १९११][2]

प्रिय श्री अप्पासामी नायकर,

मुझे मालूम हुआ है कि कलकी संयुक्त सभामें श्री सॉलोमनने जो कुछ बातें कही थीं, उनसे आप और कुछ अन्य मित्र बहुत अधिक नाराज हो गये हैं। श्री नायडूको और मुझे दरअसल बहुत अफसोस है। हम स्वीकार करते हैं कि श्री सॉलोमनको ये बातें नहीं कहनी थीं; किन्तु हमें विश्वास है कि यह पत्र आपकी और उन लोगोंकी, जिन्हें ठेस पहुँची हो, भावनाओंको शान्त करनेके लिए पर्याप्त होगा। अतीतमें कुछ भी हुआ हो, प्रत्येक भारत-प्रेमीकी निस्सन्देह यह इच्छा होनी चाहिए कि वह उसे भूल जाये और हम अपनी अवस्थामें सुधार करनेके लिए मिलकर काम करें।

आपका सच्चा,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५१७) की फोटो-नकलसे।

४८. भेंट : 'स्टार' के प्रतिनिधिको[3]

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल २८, १९११]

कलके 'स्टार' में जो पत्र-व्यवहार प्रकाशित हुआ है, उसे देखकर पूरी तरह यह आशा बँधती है कि समझौता हो जायेगा, परन्तु उससे यह पता नहीं चलता कि समझौतेका ठीक-ठीक स्वरूप क्या होगा। कल शाम एक सभा हुई थी जो चार घंटे चली। उसमें श्री गांधीके देशवासियोंने उनको ऐसा अस्थायी समझौता करनेका अधिकार दे दिया है जिसके अन्तर्गत जनरल स्मट्स गवर्नर-जनरलको परामर्श देंगे कि इस समय जेलोंमें बन्द सत्याग्रहियोंको राज्यकी ओरसे क्षमा-दान दिया जाये। जिन लोगोंने

१. इस पत्रके अन्तमें एक वक्तव्य है, जो अनुमानतः सॉलोमनका लिखा हुआ है। वह इस प्रकार है: "मैंने उक्त पत्र पढ़ लिया है और उसमें व्यक्त की गई भावनाओंसे मैं अपनी पूर्ण सहमति प्रकट करता हूँ। मुझे सचमुच बहुत खेद है कि मेरी बातोंसे किसी भारतीयको तनिक भी दुःख पहुँचा।"

२. दफ्तरी नकल (एस० एन० ५५१७) में, जो इस पत्रका आधार है, अप्रैल २७, १९११ की तारीख पड़ी हुई है। परन्तु पत्रमें जिस सभाका उल्लेख है, वह २७-४-१९११ को हुई थी। इसलिए स्पष्ट ही यह पत्र २८ अप्रैलको लिखा गया था।

३. इसे ६-५-१९११ के **इंडियन ओपिनियन**में "एक तीव्र संघर्षका अन्त" शीर्षकसे उद्धृत किया गया था।

अपना व्यापार स्वाहा कर दिया था वे फिरसे अपना कारोवार शुरू करनेकी कोशिश कर सकते हैं और वे महिलाएँ और वच्चे, जो टॉल्स्टॉय फार्ममें रहते हैं और जिनका खर्च भारतीय समाज जुटाता है, क्रमशः अपने-अपने घरोंको वापस भेजे जा सकते हैं। अब, जबकि वात अपने अन्तिम दौरमें है, श्री गांधी सार्वजनिक जीवनसे छुट्टी लेनेकी तैयारी कर रहे हैं। उन्होंने ऐसा प्रबन्ध कर भी दिया है कि उनकी वकालतका काम श्री रिच सँभाल लें। श्री रिच अभीतक लन्दनमें भारतीयोंके पक्षका प्रतिनिधित्व करते रहे हैं। फिलहाल श्री गांधीका विचार है कि वे सहायताकी अपेक्षा रखनेवाले माता-पिताओंके वच्चोंकी देखभाल और शिक्षाके लिए कोई व्यवस्था कर दें और उसके पश्चात् अवकाश ग्रहण करके नेटालमें अपने फार्मपर जाकर रहें। जाहिर है कि वे वहाँ फुरसतके समय टॉल्स्टॉयके दार्शनिक विचारोंपर अधिक गहराईसे मनन और अपने प्रिय देश भारतके मनीषियोंसे प्रेरणा ग्रहण करना चाहते हैं।

आज 'स्टार'का एक प्रतिनिधि श्री गांधीसे भेंट करने गया। वह जानना चाहता था कि श्री गांधीके विचारसे एशियाइयोंकी समस्या अव किस दौरमें है। लगता है, मौजूदा प्रवासी विधेयककी वात तो खत्म हो गई और अव सरकारके सामने दो ही मार्ग रह गये हैं। पहला तो यह कि वह ऐसा नया प्रवासी विधेयक पेश करे जिसमें से रंगभेद-सम्बन्धी व्यवस्थाएँ विलकुल ही हटा दी जायें। उस विधेयकको पास करानेमें जनरल स्मट्सको फ्री स्टेटकी तरफसे होनेवाले विरोधसे निवटना पड़ेगा। दूसरा मार्ग है, स्थिति लगभग यथापूर्व वनाये रखी जाये और केवल ट्रान्सवालके प्रवास-सम्बन्धी कानूनोंको संशोधित कर दिया जाये। पहला मार्ग अपनानेसे ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा उठाई जानेवाली आपत्तियोंका निराकरण तो हो जाता है, परन्तु उसके साथ इससे समूचे संघमें शिक्षित प्रवासियोंके यात्रा कर सकनेके अधिकारकी वात भी उठती है और अन्य प्रान्तोंमें भारतीयोंको मिली हुई वर्तमान सुविधाएँ सीमित हो जाती हैं। इस प्रकारका विधान वना देनेसे मामलेका, जैसा अन्तिम रूपसे होना चाहिए वैसा, निवटारा नहीं हो पायेगा। इस सिलसिलेमें श्री गांधी कहते हैं कि अभी देश एक सामान्य प्रवासी विधान वनानेके लिए तैयार नहीं है; क्योंकि विभिन्न प्रान्तोंमें अभी प्रवास-सम्बन्धी स्वतन्त्र नीतियोंका पालन होता आया है। विभिन्न प्रान्तोंकी संविधियोंमें इतना स्पष्ट अन्तर रहते हुए नामके लिए एक सामान्य विधान वना देना केवल अस्थायी व्यवस्था होगी; क्योंकि प्रान्तोंके एशियाई विधानोंमें कोई परिवर्तन न होने देने और एशियाइयोंकी गतिविधियोंको उनके तत्सम्बन्धी प्रान्तों तक ही सीमित रखनेके प्रश्नपर सभी सहमत हैं।

[गांधीजी:] इस प्रकारकी स्थितिमें मुझे कहना पड़ता है कि विवेकपूर्ण राजनीतिज्ञता यही है कि परिस्थिति जैसी है उसे उसी रूपमें मान लिया जाय; और इसके वाद भी केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय कानूनोंको लागू कर सकेगी। सामान्यतया यूरोपीयोंके प्रवासके अधिकारपर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। कारण केवल यही है कि कानून

इस उद्देश्यको सामने रखकर ही बनाये गये हैं कि यूरोपीय प्रवास-सम्बन्धी प्रशासनमें व्यावहारिक समानता कायम रहे।

किसी भी बाधाकी आशंका नहीं

[भेंटकर्ता:] अब तो समस्याके हल हो जानेके बारेमें आपको कोई शक नहीं है?

[गांधीजी:] जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, उसमें कोई बाधा नहीं पड़नी चाहिए; क्योंकि दोनों पक्षोंमें गलतफहमी पैदा न होने देने या थोड़ी भी अस्पष्टता न रहने देनेका भरसक प्रयास किया गया है। अलबत्ता एक बड़ी हद तक सब-कुछ इस बातपर निर्भर करेगा कि जनरल स्मट्स अपनी घोषणाओंका निर्वाह किस प्रकार करते हैं। समाजके कार्यकर्ताओंके मनमें सरकारके इरादोंके बारेमें इतना गहरा सन्देह जम गया है कि उसका मिटना मुश्किल लगता है। और दरअसल कल रातकी सभामें भारतीय समाजके नेताओंको इस कठिनाईका सामना सबसे अधिक करना पड़ा था। संघ-सरकारकी ओरसे जो-कुछ लिखा या कहा जाता है, उसमें उनको अपने विरुद्ध कुछ-न-कुछ दीख ही जाता है। एक बार तो स्थितिमें काफी तनाव आ गया था और बड़ी गरमागरम बहस छिड़ गई थी; लेकिन अन्तमें लोग शान्त हो गये और सभाने अस्थायी समझौतेको स्वीकार करनेका निर्णय किया। तब भी कुछ लोगोंने विरोधमें मत दिया।[1]

[भेंटकर्ता:] केप टाउनमें आपका क्या अनुभव रहा?

[गांधीजी:] मुझे स्वीकार करना चाहिए कि जनरल स्मट्सका रुख अत्यन्त अनुग्रहपूर्ण तथा मैत्रीपूर्ण रहा और पूरी वार्ताके दौरान समझौता करनेकी उनकी हार्दिक इच्छा प्रकट होती रही। उन्होंने कई बार कहा कि मैं जानता हूँ कि सत्याग्रही बहुत कष्ट-सहन कर रहे हैं और मैं नहीं चाहता कि उनके कष्टोंकी अवधि और अधिक बढ़ जाये।

एक और प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी संख्या ८,००० से अधिक है और युद्धसे पहलेके भारतीय निवासियोंकी संख्यासे ७,००० कम है। अन्तमें, उन्होंने अनुरोध किया कि 'स्टार' के स्तम्भोंके जरिये जोहानिसबर्ग और लन्दनमें यूरोपीय समितियोंके सदस्यों, लॉर्ड ऍम्टहिल[2] और प्रोफेसर गोखलेके प्रति उनकी और उनके देशवासियोंकी कृतज्ञता व्यक्त की जाये, जिनके समर्थनके बिना "हम इस मंजिल तक नहीं पहुँच सकते थे"।

[अंग्रेजीसे]

स्टार, २८-४-१९११

१. इस मुलाकातका जो विवरण **इंडियन ओपिनियन**में छपा है, उसमें गांधीजीके वक्तव्यका यह अंश उद्धृत नहीं किया गया है और सिर्फ इतना कहा गया है कि "श्री गांधीजीने समूचे पत्र-व्यवहारपर प्रकाश डाला और उसमें आये हुए प्रस्तावोंको स्वीकार कर लेनेकी सलाह दी। आखिर काफी गरमागरम बहसके बाद सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित करनेका प्रस्ताव पास हुआ, लेकिन शर्त यह थी कि जनरल स्मट्स अपने वादोंको पूरा करें।"

२. आर्थर ऑलिवर विलियर्स रसॅल (१८६९-१९३६), ऍम्टहिलके द्वितीय बैरन; मद्रासके गवर्नर, १८९९-१९०६; सन् १९०४ में भारतके कार्यवाहक गवर्नर-जनरल और वाइसरॉय; दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके संघर्षसे सक्रिय सहानुभूति रखते थे और दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके अध्यक्ष भी थे।

४९. पत्र: ई० एफ० सी० लेनको

[जोहानिसबर्ग]
अप्रैल २९, १९११

प्रिय श्री लेन,

आज सवेरे हमारे बीच जो बातचीत हुई, उसके सन्दर्भमें मुझे यह कहना है कि पिछले गुरुवारको हमीदिया हॉलमें एक सभा[1] की गई थी। भवन ठसाठस भरा हुआ था। अध्यक्ष श्री काछलिया थे। सभा चार घंटे तक चली। कुछ गरमागरम बहस होनेके बाद एक प्रस्ताव स्वीकार किया गया। इस प्रस्तावके द्वारा, जैसा कि आगे समझाया जा रहा है, वह अस्थायी समझौता स्वीकार कर लिया गया, जिसका रूप हमारे बीच इसी २२ तारीखको[2] आदान-प्रदान किये गये पत्रोंमें[3] प्रस्तुत किया गया था।

इस सभामें कई प्रश्न किये गये और अब भी किये जा रहे हैं। मेरे खयालसे यह उचित होगा कि मैं जनरल स्मट्सका ध्यान उनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रश्नोंकी ओर आकर्षित करूँ। सभामें निम्न प्रश्नोंके आधारपर पत्रोंकी जो व्याख्या की गई, सभाकी स्वीकृति उसी व्याख्यापर आधारित है।

(१) क्या सत्याग्रहियों द्वारा उठाई गई आपत्तिको हल करनेके लिए प्रस्तावित और नियोजित इस विधानसे इस समय ट्रान्सवाल या दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंमें जो अधिकार प्राप्त हैं, वे छिन जायेंगे?

उत्तर: नहीं छिनेंगे, चाहे प्रस्तावित विधान केवल ट्रान्सवालको प्रभावित करे या समस्त संघको।

(२) क्या वे सत्याग्रही, जो युद्धसे पहलेके अधिवासी हैं, किन्तु जो इस समय ट्रान्सवालके बाहर हैं, जैसे, श्री दाउद मुहम्मद या श्री रुस्तमजी, कानूनमें निर्धारित अवधिमें पंजीयनका आवेदनपत्र न दे सकनेपर भी पंजीयनके अधिकारी होंगे?

उत्तर: हाँ।

(३) जो सत्याग्रही पंजीकृत होते हुए भी निर्वासित कर दिये गये हैं, क्या उनका ट्रान्सवालमें प्रवेश निषिद्ध होगा?

उत्तर: नहीं।

१. *इंडियन ओपिनियन*में ६-५-१९११के अंकमें छपा विवरण, जिसमें गांधीजीका भाषण नहीं दिया गया है, इस प्रकार है: "श्री गांधीने समूचे पत्र-व्यवहारपर प्रकाश डाला और उसमें आये हुए प्रस्तावोंको स्वीकार कर लेनेकी सलाह दी।"

२. मूल मसविदेमें निम्नलिखित वाक्य था, जो बादमें निकाल दिया गया: "अब इसपर सुचारु रूपसे अमल केवल तभी सम्भव है जब जनरल स्मट्स उदार नीति अपनायें।"

३. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ३९-४१ और परिशिष्ट ४ भी।

(४) जिनके पास शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत प्राप्त अनुमतिपत्र हैं, किन्तु जो निर्वासित कर दिये गये हैं, क्या उन सत्याग्रहियोंकी भी उसी प्रकार रक्षा की जायेगी?

उत्तर: हाँ।

(५) जिन शिक्षित सत्याग्रहियोंको अस्थायी प्रमाणपत्रोंके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें रहने दिया जायेगा, क्या वे इस वर्षके प्रवासी माने जायेंगे और १९०८ के अधिनियम ३६ के अन्तर्गत पंजीयनके दायित्वसे मुक्त होंगे?

उत्तर: हाँ।

(६) पाँचवें प्रश्नमें उल्लिखित व्यक्तियोंका जो शिक्षा-स्तर होगा, क्या भावी एशियाई प्रवासियोंका शिक्षा-स्तर भी वही रखा जायेगा?

उत्तर: नहीं। यह स्पष्ट किया गया कि केवल उच्च शिक्षा-प्राप्त लोगोंको ही शिक्षा-परीक्षामें उत्तीर्ण होनेका अवसर दिया जायेगा, और यदि योग्यताके आधारपर नये प्रवासीके रूपमें प्रवेश पानेका प्रयत्न किया जायेगा तो शायद उक्त छः लोगोंमें से श्री जोजेफ रायप्पनके अतिरिक्त अन्य सब अस्वीकृत कर दिये जायेंगे।

(७) क्या जो शिक्षित एशियाई पंजीकृत अधिवासी हैं, उन्हें अँगुलियोंकी या अँगूठोंकी छाप देनेके लिए बाध्य किया जायेगा?

उत्तर: नहीं।

(८) क्या विख्यात अथवा जिन्हें अन्तःकरणके आधारपर आपत्ति है ऐसे एशियाई इसी प्रकार मुक्त रहेंगे?

उत्तर: हाँ, वे अँगुलियोंकी छापसे मुक्त होंगे और यदि लिखकर ठीक-ठीक हस्ताक्षर कर सकेंगे तो अँगूठोंकी छापसे भी मुक्त होंगे।

अन्तके दो उत्तर १९०८ में किये गये पहले पत्र-व्यवहार और हालमें प्रकाशित खरीतोंके आधारपर दिये गये। इस मामलेकी चर्चा हमारे बीचकी बातचीतमें मैंने इसलिए नहीं उठाई थी कि मेरे मनमें इसे लेकर कोई सन्देह नहीं था।

मुझे विश्वास है कि मैं जो जनरल स्मट्सको बार-बार तंग करता हूँ, वे उसका बुरा न मानेंगे; क्योंकि मैं जानता हूँ कि हम दोनों ही गलतफहमीसे बचनेके लिए बहुत चिन्तित हैं।

मुझे पता चला है कि श्री सोढा ऐसे अधिवासी नहीं हैं जो यहाँ युद्धके पहले तीन वर्ष रह चुके हों। वे युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें लगातार दो वर्षसे अधिक रहे और शरणार्थीके रूपमें ही उन्होंने ट्रान्सवाल छोड़ा। इन दोनों तथ्योंके सम्बन्धमें सचमुच कोई सन्देह नहीं है। किन्तु १९०८ के अधिनियम ३६ को अक्षरशः देखें तो युद्धसे पूर्व ३ वर्षका निवास आवश्यक होता है। क्या कानूनके इस कठोर शब्दानुशीलनकी उपेक्षा करके श्री सोढाको पंजीयनकी अनुमति नहीं दी जा सकती? यदि उनको यह अनुमति नहीं दी जाती तो वे शिक्षित प्रवासियोंकी श्रेणीमें आ सकते हैं, क्योंकि उनमें शिक्षा-सम्बन्धी योग्यता है। तब वे सर्वश्री रायप्पन, सोराबजी, मेढ, देसाई और शेलतके साथ छठे शिक्षित व्यक्ति होंगे। किन्तु तब एक बहुत ही वांछनीय और उच्च शिक्षा-प्राप्त

व्यक्ति, श्री रायप्पनके भतीजे तथा अध्यापक श्री सैम्युअल जोज़ेफ, बाहर रह जायेंगे। उनका जन्म दक्षिण आफ्रिकामें हुआ था, और वे अब भी प्रोटेस्टेंट ईसाइयोंके गिरजेमें वादक हैं और निजी तौरपर कुछ लोगोंको पढ़ाते भी हैं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि श्री सोढाके बारेमें कानूनकी नरम व्याख्या करके इनका [जोज़ेफका] खयाल किया जाये। हम श्री सेम्युअल जोज़ेफके खयालसे पहले बताये गये छः लोगोंमें से शायद एकको छोड़ सकते थे; किन्तु कष्ट-सहनकी दृष्टिसे दूसरे लोगोंकी पात्रता श्री सैम्युअल जोज़ेफकी अपेक्षा कहीं अधिक है।

मुझे अतीव कष्टकारक एक और मामलेका उल्लेख करनेके लिए कहा गया है। यह श्री कामेका मामला है। वे जोहानिसबर्गमें भारतीय पोस्टमास्टर थे। वे खासे पढ़े-लिखे हैं। मेरा खयाल है कि उन्होंने इस हैसियतसे लगभग दस वर्ष तक सेवा की है। उसके बाद उनको नौकरी छोड़ देनी पड़ी, क्योंकि उन्होंने पंजीयनसे इनकार कर दिया था। श्री कामे पारसी हैं। उनका परिवार जोहानिसबर्गमें है। उन्होंने संघर्षमें बहुत हानि उठाई है। मेरा विश्वास है कि वे पोस्टमास्टरके रूपमें बहुत लोकप्रिय थे और उनके वरिष्ठ अधिकारियोंका उनपर पूरा विश्वास था। मेरी सम्मतिमें उनको बहाल कर दिया जाना चाहिए।

अभी मेरे सामने उन भारतीय सत्याग्रहियोंकी सूची नहीं है, जो युद्धसे पहलेके निवासी होनेके कारण पंजीयनके अधिकारी हैं; किन्तु मैं उनके नामोंको इकट्ठा कर रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि मैंने यहाँ जिन मुद्दोंका उल्लेख किया है, उनपर हमारे सहमत होते ही पंजीयन शुरू हो जायेगा।

जब मैंने चीनी सत्याग्रहियोंका उल्लेख किया था तो आपको कुछ आश्चर्य हुआ था। किन्तु वे अन्ततक कष्ट उठाते ही रहे हैं। और उनके अध्यक्ष श्री क्विन अभी-अभी जेलसे छूटे हैं। मेरा खयाल है कि अब जेलमें भारतीय सत्याग्रहियोंकी अपेक्षा चीनी सत्याग्रही अधिक हैं। मुझे पूरा भरोसा है कि जनरल स्मट्स भारतीय सत्याग्रहियोंसे यह अपेक्षा नहीं करेंगे कि वे अपने चीनी साथियोंका परित्याग कर दें। उनका चीनी सत्याग्रहियोंके लिए अपने ही जैसा संरक्षण माँगना स्वाभाविक है। मुझे ज्ञात हुआ है कि युद्धसे पहलेके केवल बीस चीनी सत्याग्रही ऐसे हैं जो १९०८ में संघर्षके आरम्भ होते समय पंजीकृत नहीं थे। किन्तु मैंने चीनियोंकी बात यहाँ उन चार चीनियोंके एक नाजुक-से मामलेका जिक्र करनेके लिए उठाई है, जो खुले आम आपसमें मारपीट करनेके जुर्ममें जेल भुगत रहे हैं। जब संघर्ष पुनः आरम्भ हुआ तब उनमें ही दो दल हो गये और इन दलोंमें फौजदारी हो गई। फलस्वरूप कुछको सजाएँ हुईं। अब दोनों दल मिल गये हैं। सम्राट्से क्षमा-दान पानेके लिए गवर्नर-जनरलके नाम एक आवेदनपत्र भी तैयार किया जा रहा है। आशा है, जनरल स्मट्स उनके सम्बन्धमें अनुकूल विचार करनेकी सिफारिश करेंगे।

मैंने काफी विस्तारसे लिखा है। किन्तु मुझे लगा कि इसे जितनी बारीकीसे और जितना खोलकर लिखा जाये, कम होगा।

आप कृपापूर्वक इस पत्रको जनरल स्मट्सके सम्मुख रख दें और यदि वे

आवश्यक समझें तो भेंटके लिए एक दिन नियत कर दें; मैं चला आऊँगा और यह मामला अन्तिम रूपसे निबटाया जा सकेगा।[1]

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५५२१) की फोटो-नकल, और २७-५-१९११ के 'इंडियन ओपिनियन' से।

५०. प्रार्थनापत्र : उपनिवेश-मन्त्रीको[2]

जोहानिसबर्ग
मई १, १९११

परममाननीय उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन

ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष अ० मु० काछलियाका प्रार्थनापत्र

सविनय निवेदन है कि :

पिछले चार वर्षोंसे एशियाइयोंकी कानूनी स्थितिको लेकर जो दुःखद संघर्ष चलता रहा है, अब उसके सुखद अन्तके आसार दिखाई देते हैं। किन्तु, साम्राज्य-सम्मेलनकी बैठकको निकट देखते हुए ब्रिटिश भारतीय संघ महामहिमकी सरकारका ध्यान ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीयोंकी वास्तविक मौजूदा स्थितिकी ओर आकर्षित करनेकी धृष्टता करता है।

एशियाई पंजीयन अधिनियम (१९०७ के कानून २) के पास होनेके कारण जो संघर्ष छिड़ा उसने ट्रान्सवालकी एशियाई कौमोंको इतने कष्टमें डाल दिया, और एशियाई तथा यूरोपीय, दोनों समुदायोंके लोग उसीमें इतने उलझे रहे कि संघके लिए उन निर्योग्यताओंको दूर करानेका प्रयत्न करना सम्भव नहीं हो पाया जो अनाक्रामक प्रतिरोधके दायरेमें नहीं आती थीं; इन निर्योग्यताओंमें से कुछ तो संघर्ष प्रारम्भ होनेके समय मौजूद थीं, और कुछ बादमें थोप दी गई थीं।

पंजीयन और प्रवासी कानूनोंके सम्बन्धमें वर्तमान स्थिति

अप्रैल २२ को जनरल स्मट्सके निजी सचिवने श्री गांधीके नाम एक पत्र[3] लिखा था। उसके अनुसार २७ अप्रैलको ब्रिटिश भारतीयोंकी एक सभामें[4] कुछ प्रस्ताव पेश

१. लेनने १-५-१९११को उत्तर भेजा, जिसमें उन्होंने पत्रोंकी प्राप्ति स्वीकार करते हुए लिखा: "आपने जिन-जिन बातोंका जिक्र किया है समिति उनपर विचार कर रही है। शेष बातें आपको यथासमय लिखी जायेंगी।" देखिए परिशिष्ट ५ और ६।

२. यह १३-५-१९११के **इंडियन ओपिनियन**में "वर्तमान स्थिति" शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था।

३. देखिए परिशिष्ट ४।

४. देखिए "ट्रान्सवालकी टिप्पणियाँ", पृष्ठ ५६-५८।

किये गये थे, जिन्हें छः के[1] अतिरिक्त अन्य सभी उपस्थित लोगोंकी सहमति प्राप्त हुई। प्रस्ताव इस प्रकार हैं :

(क) दक्षिण आफ्रिकाकी संसदके अगले अधिवेशनमें १९०७ का कानून २ रद कर दिया जायेगा, लेकिन छोटाभाईके फैसलेके नामसे ज्ञात अदालती निर्णयके अनुसार नाबालिग बच्चोंके अधिकार सुरक्षित रखे जायेंगे।[2]

(ख) प्रवासके सम्बन्धमें एशियाइयोंको कानूनी दृष्टिसे यूरोपीयोंके बराबरका दर्जा फिरसे दे दिया जायेगा; किन्तु यह बराबरी वैधानिक होगी, कानूनको लागू करनेके तरीकेमें भेद-भाव तो रहेगा ही।

(ग) भविष्यमें जो भी कानून बनाया जायेगा, उसमें ब्रिटिश भारतीयोंके मौजूदा अधिकारोंको बरकरार रखा जायेगा अर्थात् अगर कानून प्रान्तीय स्तरका हुआ तो ट्रान्सवालके एशियाइयोंके वर्तमान अधिकारोंको अछूता छोड़ दिया जायेगा, और अगर वह सभी प्रान्तोंपर लागू होनेवाला हुआ तो उसमें प्रान्तों तथा ट्रान्सवालमें आज एशियाइयोंको जो अधिकार प्राप्त हैं, वे सभी अधिकार सुरक्षित रखे जायेंगे।

(घ) यदि कानून प्रान्तीय स्तरका हुआ तो किसी भी एक वर्षमें छः से अधिक उच्च शिक्षा प्राप्त एशियाइयोंको शैक्षणिक परीक्षा पास करने और प्रवासियोंके रूपमें ट्रान्सवालमें प्रवेश करने नहीं दिया जायेगा।

(ङ) समयपर अर्जी देकर जो सत्याग्रही पंजीयनके अधिकारी हो गये होते किन्तु जो सिर्फ सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण उससे वंचित रह गये, उन्हें अब पंजीयन कराने दिया जायेगा।

(च) जो शिक्षित सत्याग्रही पंजीयन कानूनके अन्तर्गत पंजीकृत नहीं किये जा सकते, उन्हें आगामी कानूनका खयाल करके ट्रान्सवालमें रहने दिया जायेगा और वे चालू वर्षमें एशियाई प्रवासी माने जायेंगे।

(छ) समाज द्वारा फिलहाल सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित रखनेका आश्वासन देनेपर जो लोग सत्याग्रही होनेके नाते सजा भोग रहे हैं, उनकी रिहाईके लिए परम श्रेष्ठ गवर्नर-जनरल महोदयसे सिफारिश की जायेगी;

इस मामलेमें संघ-सरकारने स्पष्ट ही जिस सद्भावना और उदारताका परिचय दिया है, उसके लिए मेरा संघ अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता है, और साथ ही साम्राज्य-सरकारका भी आभार मानता है कि उसने इस दुर्भाग्यपूर्ण समस्याका सुखद समाधान ढूंढ़नेके लिए मैत्रीपूर्ण तथा प्रभावकारी ढंगसे हस्तक्षेप किया।

किन्तु सत्याग्रह आन्दोलनको स्थगित करनेकी सहमतिका — जो अब समाजकी ओरसे मिल गई है — यह अर्थ नहीं है कि ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीयोंके सभी घोर कष्ट दूर हो गये हैं। वे आज भी अनेक कष्टोंसे पीड़ित हैं। अतः ब्रिटिश भारतीय संघ उनमें से कुछ अत्यन्त प्रमुख कष्टोंका उल्लेख करनेकी नम्रतापूर्वक अनुमति चाहता है।

१. **इंडियन ओपिनियन**की रिपोर्टके अनुसार पाँचके अतिरिक्त।

२. देखिए पृष्ठ ३९ की पाद-टिप्पणी २।

१८८५ का कानून ३

महामहिम सम्राट्की सरकार तथा भूतपूर्व दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके बीच युद्ध शुरू होने तक इसी कानूनको लेकर लिखा-पढ़ी चल रही थी। किन्तु संघकी विधान-पुस्तकमें वह कानून आज भी मौजूद है। फर्क सिर्फ इतना हुआ है कि व्यापारिक उद्देश्योंसे ट्रान्सवालमें बस जानेवाले एशियाइयोंके पंजीयनके लिए आवश्यक तीन पौंडी शुल्क उठा दिया गया है। यह कानून ब्रिटिश भारतीयों तथा अन्य एशियाइयोंको:

(क) नागरिक अधिकारोंसे,

(ख) बाजारों और बस्तियोंके अलावा और कहीं भूसम्पत्तिके स्वामित्वसे, और

(ग) उनके निवासके लिए पृथक् किये गये बाजारों और बस्तियोंके अलावा किसी अन्य स्थानमें रहनेके अधिकारसे वंचित करता है।

दक्षिण आफ्रिकामें एशियाइयोंके विरुद्ध जो दुर्भाग्यपूर्ण पूर्वग्रह व्याप्त है, उसे देखते हुए मेरा संघ फिलहाल नागरिक अधिकार, अर्थात् राजनीतिक मताधिकारकी किसी माँगको व्यावहारिक राजनीतिकी दृष्टिसे सम्भव नहीं मानता।[1]

किन्तु बोअरों और बस्तियोंके अतिरिक्त अन्य सभी स्थानोंमें भूस्वामित्वके अधिकारसे वंचित कर दिया जाना एक बड़ी जबर्दस्त निर्योग्यता है। इससे समाजकी प्रगतिके मार्गमें सहज ही बाधा उपस्थित होती है। इस निर्योग्यताके परिणामस्वरूप मकान आदि बनानेकी दिशामें कोई व्यक्ति आगे नहीं बढ़ सकता; सम्भव है यह बात अटपटी लगे किन्तु है सच कि इसी तथ्यको उसके विरुद्ध दलीलके रूपमें पेश किया जाता है; और इस प्रकार पूर्वग्रहको और भी प्रश्रय मिलता है। इस कानूनके अन्तर्गत यद्यपि एशियाइयोंका निवास बस्तियोंमें या बाजारों तक ही सीमित कर दिया गया है, किन्तु यदि कोई वहाँ जाकर न रहे तो इसके लिए किसी दण्डकी व्यवस्था नहीं की गई है। इसलिए न्यायालयोंने यह निर्णय दिया है कि एशियाइयोंको अनिवार्य रूपसे अलग नहीं बसाया जा सकता। किन्तु, चूँकि उनसे प्रतिस्पर्धा रखनेवाले यूरोपीय व्यापारी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे मौजूद हैं, इसलिए अपेक्षाकृत गरीब वर्गके बहुत-से एशियाइयोंको भागकर ऐसी बस्तियोंकी शरण लेनी पड़ी है, जो इस कानूनके अन्तर्गत पहले ही बसाई जा चुकी हैं। सरकार, फिलहाल प्रान्तीय सरकार, जिस विरोधी भावनासे प्रेरित हो रही है उसके नमूनेके रूपमें यह बात ध्यान देने योग्य है कि ये बस्तियाँ [नगरोंसे] इतनी दूर बसाई गई हैं कि वहाँ सामान्य व्यापार कर सकना लगभग असम्भव हो गया है, और एशियाई फेरीवालोंको इससे बड़ी कठिनाई होती है; क्योंकि उन्हें हर रोज सामान खरीद लानेके लिए आम बाजारोंमें जाना पड़ता है। इसके अतिरिक्त यद्यपि इस कानूनके अन्तर्गत एशियाइयोंको इन बस्तियोंमें भूस्वामित्वका अधिकार तो प्राप्त है, किन्तु सरकार उन्हें बाड़ोंपर — जिनके रूपमें ये बस्तियाँ विभक्त हैं — २१ सालसे अधिक समयके पट्टे प्राप्त करनेकी इजाजत नहीं देती। जोहानिसबर्गमें तो उन्हें माहवारी पट्टे ही दिये जा रहे हैं। यहाँ यह बता देना शायद उचित होगा कि पिछली

१. इस सम्बन्धमें ट्रान्सवालके भारतीयोंका रवैया बराबर यही रहा था; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २२३ और खण्ड ८, पृष्ठ ५३ तथा पृष्ठ ४६२।

लड़ाईके शुरू होने तक जोहानिसबर्गमें एक ऐसी बस्ती थी, जिसमें लोगोंको ९० बाड़ोंपर ९९-९९ सालके पट्टे प्राप्त थे। किन्तु एक विशेष अध्यादेश पास करके, अन्य क्षेत्रोंके साथ-साथ इस बस्तीके बाड़ा मालिकोंको बेदखल कर दिया गया। और तबसे एशियाई अपने नामोंपर उपर्युक्त ढंगके अलावा और किसी तरह जमीन-जायदाद नहीं रख पाये हैं।

फिर भी, इस खयालसे कि व्यावहारिक दृष्टिसे ब्रिटिश भारतीयोंको भूसम्पत्तिका स्वामित्व प्राप्त हो सके, वकीलोंकी सलाह लेकर कुछ न्यास स्थापित किये गये। ये न्यास कानून-सम्मत तो नहीं, लेकिन न्यायोचित अवश्य थे। अबतक इन्हीं न्यासोंके माध्यमसे एशियाइयोंको जमीनपर [किसी हद तक] स्थायी अधिकार प्राप्त रहा है। इस व्यवस्थाके अन्तर्गत एशियाइयोंके यूरोपीय मित्र भूमि का स्वामित्व अपने नाम करवा लेते हैं और उसकी कीमत उससे लाभ उठानेवाले एशियाई चुकाते हैं। फिर उस जमीनका जाहिरा मालिक एक बॉंडके द्वारा उसे उसके न्यायोचित स्वामीके सुपुर्द कर देता है। न्यायालयोंने इन न्यासोंको मान्यता दे दी है, और यह प्रणाली लगभग उसी समयसे प्रचलित है, जबसे इस कानूनकी घोषणा की गई थी।[1]

स्वर्ण अधिनियम और कस्बा-कानून (१९०८)

जैसा कि स्पष्ट है, इन न्यासोंको विफल तथा अनिवार्य पृथक्करणको प्रभावकारी बनानेके उद्देश्यसे विधानमण्डल द्वारा स्वर्ण अधिनियम तथा १९०८ के कस्बा [कानून] संशोधन अधिनियममें ऐसी गूढ़ धाराएँ[2] शामिल की गई हैं जो ऊपरसे तो अपेक्षाकृत निर्दोष लगती हैं (हालाँकि इस रूपमें भी वे बहुत क्षोभजनक हैं), किन्तु इनका मंशा वही है जो हम ऊपर कह आये हैं। संघको यह रहस्य, प्रसंगवश, अभी हालमें ही मालूम हुआ है। सरकारने क्लार्क्सडॉर्प नगरके उन यूरोपीय बाड़ा-मालिकोंके नाम एक नोटिस जारी किया है, जिनके बाड़ोंपर या तो ब्रिटिश भारतीयोंकी रहाइश है या जिनमें से कुछपर उन्होंने न्यायोचित तरीके से स्वामित्व प्राप्त कर रखा है। नोटिसमें उक्त

१. अबूबकर आमदकी प्रिटोरिया नगरकी चर्च स्ट्रीट-स्थित जायदादको लेकर बड़ा विवाद खड़ा हो गया था। सन् १८८५ के बोअर कानूनके अनुसार एशियाई लोगोंको धार्मिक उद्देश्योंके अलावा और किसी भी उद्देश्यसे बस्तियोंके बाहर भूस्वामित्वका अधिकार प्राप्त नहीं था। सन् १८८६ में इस कानूनको संशोधित करके अबूबकर आमदको इससे बरी कर दिया गया (देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १००-१०१)। सन् १९०६में सर्वोच्च न्यायालयने बहुत आगा-पीछा करनेके बाद उस जमीनपर श्री आमदका अधिकार तो स्वीकार कर लिया, किन्तु साथ ही यह व्यवस्था भी दे दी कि वे उक्त जायदादका उत्तराधिकार किसीको नहीं दे सकते; (देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १२५-२६)। किन्तु सन् १९०६ के एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेशके अनुसार उन्हें यह अधिकार भी मिल गया; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १०४; और गांधीजीके सुझावपर सन् १८८५के कानूनके कुछ हिस्सोंको रद करनेके लिए जिस कानूनका मसविदा तैयार किया गया, उसमें भी उनका यह अधिकार सुरक्षित रहा; (देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १००-१०१)। ट्रान्सवालमें किसी भारतीय द्वारा भूस्वामित्व प्राप्त करनेका यह एकमात्र उदाहरण है।

२. यहाँ गांधीजीके मनमें निश्चय ही इस अधिनियमके खण्ड १०४, ११३, ११४, १२२, १२७ और १२८ रहे होंगे; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १९३-९४, २८४-८६ और परिशिष्ट २।

बाड़ा मालिकोंपर स्वर्ण अधिनियमके खण्ड १३० का[1] उल्लंघन करनेका आरोप लगाते हुए कहा गया है कि अगर उन्होंने (पिछले) ३० अप्रैल तक ब्रिटिश भारतीयोंको अपने-अपने बाड़ोंसे नहीं हटाया तो उनके विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जायेगी।[2] इस आदेशकी अवहेलना करनेपर ५० पौंड जुर्माना होगा, और आगे जबतक कानूनका उल्लंघन जारी रहेगा तबतक प्रति दिन ५ पौंडके हिसाबसे जुर्माना देना पड़ेगा। इन नोटिसोंसे ब्रिटिश भारतीयोंके बीच खलबली मच गई है। कानूनी सलाह लेनेपर समाजको ज्ञात हुआ है कि उपर्युक्त दोनों कानूनोंको मिलाकर पढ़नेसे मतलब यह निकलता है कि इस प्रान्तके खनिज क्षेत्रोंमें रहनेवाले सभी भारतीयोंके अपने-अपने बाड़ोंसे बेदखल हो जानेका और उन बाड़ोंपर उनके न्यायोचित अधिकारके पूर्णरूपसे छिन जानेका खतरा है। उपर्युक्त कस्बा-कानूनके एक खण्डसे उनका यह दूसरा मतलब हल हो जाता है। इस खण्डमें, बिना कोई मुआवजा दिये, ब्रिटिश भारतीयों तथा अन्य एशियाइयोंकी जमीन छीनकर राज्यके हवाले कर देनेकी व्यवस्था है — भले ही ये ब्रिटिश भारतीय तथा एशियाई ऊपर बताये गये अनुसार इन बाड़ोंके व्यावहारिक मालिक ही क्यों न हों। इन सख्त कानूनोंके अन्तर्गत एशियाइयोंके जिस एकमात्र मौजूदा अधिकारको सुरक्षित रखा गया है उसका सम्बन्ध उन पट्टोंसे है जो प्रत्यक्ष रूपसे एशियाइयोंके नाम हैं **और जो स्वर्ण अधिनियमकी घोषणासे पहले ही लिखे जा चुके थे**। इन कानूनोंका असर अनेक प्रमुख नगरोंपर पड़ता है, जिनमें एक जोहानिसबर्ग (जहाँ ट्रान्सवालकी सम्पूर्ण भारतीय आबादीका लगभग आधा हिस्सा रह रहा है) भी है। अतः यदि इन कानूनों-पर सख्तीसे अमल किया गया तो यह प्रायः निश्चित है कि ट्रान्सवालकी भारतीय आबादी बरबाद ही हो जायेगी और वर्तमान मन्त्रिमण्डलके कुछ प्रमुख सदस्योंकी, ब्रिटिश भारतीयोंको भूखों मारकर कलम हिलाते ही इस प्रान्तसे बाहर निकाल देनेकी, बहु-घोषित नीति कार्यान्वित हो जायेगी।

यदि कानूनकी उन धाराओंमें, जो ज़ाहिरा तौरपर किन्हीं भिन्न बातोंसे सम्बद्ध जान पड़ती हैं, दबे-छुपे ढंगसे अन्य चीजें डालनेके बजाय प्रकट रूपसे सन् १८८५ के कानून ३ में साफ-साफ संशोधन करनेकी कोशिश की जाती तो हमारे संघको विश्वास है कि उस कार्रवाईको सम्राट्की स्वीकृति कभी नहीं मिल पाती। संघ स्वभावतः आवेदनपत्रके इस अंशपर ज्यादासे-ज्यादा जोर देता है और आशा करता है कि सम्राट्की सरकार अवश्य ही राहत देनेकी कृपा करेगी।

पैदल-पटरी उपनियम, आदि

ऊपरके विवरणसे स्पष्ट होगा कि यह संघ जिस समाजका प्रतिनिधित्व करता है उसके वास्तविक हितोंकी अवगणना की जाती है। इस हालतमें संघ नहीं चाहता कि वह महामहिमकी सरकारके सामने उन उपनियमों और विनियमोंकी बात उठाये, जो इस

१. खण्ड १३० में यह व्यवस्था की गई थी कि कोई भी यूरोपीय बाड़ा-मालिक "घोषित क्षेत्रमें" आनेवाले अपने बाड़ेपर किसी रंगदार व्यक्तिको किसी तरहका शिकमी-पट्टा नहीं दे सकता और न कोई रंगदार व्यक्ति इस तरहका कोई पट्टा ले ही सकता है।

२. देखिए पृष्ठ ४ की पाद-टिप्पणी २।

समाजके लोगोंकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रतामें अकारण विघ्न उपस्थित करते हैं, किन्तु, ट्रान्सवालके भारतीय तबतक चैनसे नहीं बैठ सकते जबतक प्रान्तकी विधि-पुस्तकसे उस कानूनका दाग नहीं धो दिया जाता जो उन्हें ट्रामगाड़ियों और पैदल पटरियोंके उपयोगसे वंचित करता है।[1] जबतक सामान्यतया भारतीयोंको दक्षिण आफ्रिकाके वतनियोंकी श्रेणीमें रखा जाता रहेगा तबतक उन्हें परेशान करनेवाली हरकतोंका भी अन्त नहीं होगा।

कानून — जिसके बननेकी आशंका है

यह संघ नम्रतापूर्वक महामहिमकी सरकारका ध्यान संघ-सरकारके इस वादेकी ओर भी आकर्षित करता है कि वह भारतीयोंको दिये गये अनुमतिपत्रोंके प्रश्नका निपटारा करेगी। संघको ज्ञात है कि इस प्रान्तके विभिन्न व्यापारिक संघोंने, जिनके अधिकांश सदस्य प्रतिस्पर्धी यूरोपीय व्यापारी हैं, कुछ प्रार्थनापत्र तैयार करवाये हैं और वे संघ-संसदके नाम भेजे गये हैं। इन प्रार्थनापत्रोंमें अतिरंजित और भड़कानेवाली बातें लिखी गई हैं, जो ब्रिटिश भारतीयोंके हितोंके लिए हानिप्रद हैं। उनमें सरकारसे ब्रिटिश भारतीयोंके व्यापारिक अनुमतिपत्रोंकी संख्या कम करने, और यहाँ तक कि उन्हें सर्वथा समाप्त कर देनेकी प्रार्थना की गई है।[2] चूँकि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी आबादी अपेक्षाकृत बहुत कम है और भविष्यमें इसमें विशेष वृद्धि होनेकी सम्भावना भी नहीं है इसलिए संघकी उत्कट अभिलाषा है कि महामहिमकी सरकार भारतीयोंके व्यापारपर किसी प्रकारका प्रतिबन्ध स्वीकार न करे। संघका नम्र निवेदन है कि उपर्युक्त प्रार्थनापत्रोंमें गन्दगी आदिकी आदतोंको लेकर भारतीय समाजके विरुद्ध जो आपत्तियाँ उठाई गई हैं उनमें से अधिकांश अतिरंजित हैं। किन्तु तथ्योंकी हद तक तो उनका निराकरण नगरपालिकाके सामान्य स्वास्थ्य विनियमोंके अन्तर्गत आसानीसे किया जा सकता है — और किया भी जा रहा है।

अन्तमें, संघको भरोसा है कि महामहिमकी सरकार उपर्युक्त मामलोंमें ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीय प्रजाजनोंकी स्थिति सुधारनेके लिए और उनके वर्तमान अधिकारोंकी रक्षाकी दृष्टिसे उचित और आवश्यक कार्रवाई करेगी। न्याय और दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी कर्त्तव्य मानकर आपकी मंगल-कामना करेगा।

अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल आफिस रेकर्ड्स : ५५१/२२

१. ब्रिटिश भारतीय संघने स्थानीय अधिकारियों तथा औपनिवेशिक और साम्राज्य-सरकारोंसे बार-बार इन निर्योग्यताओंके सम्बन्धमें शिकायतें की थीं; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ १५७-५८ और खण्ड ५, पृष्ठ ३४५-५४।

२. उदाहरणार्थ देखिए खण्ड ८ पृष्ठ २०२-०३।

५१. भाषण: जोहानिसबर्गकी विदाई सभामें

[मई १, १९११][1]

श्री जोज़ेफ रायप्पनको विदाई देनेके लिए फ्रीडडॉर्पके हमीदिया इस्लामिया हॉलमें स्थानीय भारतीय खिलाड़ियोंका एक बड़ा मजमा इकट्ठा हुआ था। श्री रायप्पन ट्रान्सवालके सत्याग्रह आन्दोलनमें अपनी भूमिका निभानेके बाद अब अपने घर डर्बन जा रहे हैं। अध्यक्षता श्री गांधीने की। . . .अध्यक्षने सभाकी कार्यवाही आरम्भ करते हुए, जैसा कि इस प्रसंगमें स्वाभाविक था, अपने प्रिय खेल सत्याग्रहकी चर्चा की। उन्होंने कहा, खेल तो बहुत हैं; किसीमें हम जीतते हैं और किसीमें हारते हैं। लेकिन एक ऐसा खेल है जिसमें सदैव जीत ही होती है और वह है सत्याग्रहका खेल। उन्होंने उस दीर्घकालीन परिश्रमसे भरे हुए खेलकी चर्चा करते हुए कहा कि यह खेल हम पिछले साढ़े चार वर्षोंसे खेल रहे हैं और अब विजयकी घड़ी आ पहुँची है। जो कौम सत्याग्रहका खेल इतनी खूबीके साथ खेल सकती है वह उतनी ही खूबीसे अन्य कोई भी खेल खेल सकती है।

[अंग्रेजीसे]

स्टार, ४–५–१९११

५२. ट्रान्सवालकी टिप्पणियाँ

मंगलवार [मई २, १९११]

वृहस्पतिवार, गत २६ तारीखको हमीदिया हॉलमें एक भारी सभा हुई। श्री काछलिया अध्यक्ष थे। लगभग २०० व्यक्तियोंको हॉलके बाहर खड़े रहना पड़ा। सभाकी कार्यवाही चार घंटेसे अधिक समय तक चली। इसमें सर्वश्री कैलेनबैक और रिच भी उपस्थित थे। बहसमें चाहे तूफानकी तेजी न रही हो किन्तु यदा-कदा गर्मी अवश्य आ जाती थी। सभामें सारे समय सरकारके उद्देश्योंके प्रति तीव्र अविश्वासकी भावना व्याप्त रही। श्री गांधीने [सरकारके साथ हुए] सारे पत्र-व्यवहारको अच्छी तरह समझाया और उसमें सुझाये गये प्रस्तावोंको माननेकी सलाह दी। प्रस्तावके समर्थनमें श्री कुवाडिया तथा सर्वश्री रायप्पन, सोलोमन अर्नेस्ट, थम्बी नायडू, इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, सोराबजी, सोढा आदि सज्जन बोले। इसके बाद पाँचेफस्ट्रूमके श्री अब्दुल रहमानने सुझाव पेश किया कि अनाक्रामक प्रतिरोध बन्द करनेके प्रस्तावको

१. मई १३, १९११ के **इंडियन ओपिनियन**के गुजराती विभागकी एक रिपोर्टसे ज्ञात होता है कि यह समारोह मई १, १९११को 'वन्देमातरम् लीग' के तत्वावधानमें हुआ था। देखिए अगला शीर्षक भी।

जनरल स्मट्स द्वारा दिये गये वादोंके पूरा होनेकी शर्तोंके साथ स्वीकार किया जाये। सुझावकी भाषा कुछ अनगढ़-सी थी, लेकिन उससे सभामें उपस्थित लोगोंकी भावना समुचित रूपसे प्रकट होती थी। श्री शेलतने उसका अनुमोदन किया। इसके विरोधमें एक अन्य सुझाव और पेश किया गया, जिसमें कहा गया था कि प्रस्ताव तबतक स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए जबतक सरकार अपने उद्देश्योंको व्यावहारिक रूप नहीं दे देती। मूल प्रस्तावके विरोधमें सिर्फ पाँच मत आये, और इस प्रकार वह पास हो गया।

* * *

इस सभामें यह निर्णय भी किया गया कि सर्वश्री काछलिया और गांधीको एक सार्वजनिक शिष्टमण्डलके रूपमें इंग्लैंड भेजनेका प्रस्ताव वापस ले लिया जाय और तदर्थ एकत्रित चन्देका उपयोग श्री पोलकको इंग्लैंड भेजनेके लिए किया जाये। इस तरह वे श्रीमती पोलकसे भी मिल लेंगे और सम्मेलनके दौरान तथा उसके बाद जो-कुछ सार्वजनिक कार्य करना आवश्यक होगा उसे भी करते रहेंगे। अभी जो कार्यक्रम निश्चित हुआ है, उसके अनुसार श्री पोलक अक्तूबर माहके मध्यमें श्रीमती पोलकके साथ भारतके लिए प्रस्थान करेंगे। वहाँ वे दिसम्बरमें राष्ट्रीय कांग्रेसकी सभामें शामिल होंगे और फिर उस विधेयकके पास होने तक वहीं रहेंगे, जो जनरल स्मट्सके पिछली २२ तारीखके पत्रके अनुसार संघ-संसदके आगामी अधिवेशनमें पेश किया जानेवाला है। सभाके समर्थनमें क्लार्क्सडॉर्प तथा पीटर्सबर्गसे तार प्राप्त हुए। सभामें जर्मिस्टन, बॉक्सबर्ग, हाइडेलबर्ग आदि स्थानोंके प्रतिनिधि भी शामिल हुए थे।

* * *

चीनियोंने भी सभाएँ की हैं, और श्री गांधीसे अपने समाजकी कुछ कठिनाइयोंकी ओर ध्यान देनेका अनुरोध करते हुए प्रस्ताव पास करके प्रस्तावित समझौतेको स्वीकार किया है। चीनियोंकी हद तक एक बहुत ही सन्तोषजनक परिणाम निकला है। सन् १९०८के मध्यमें संघर्षके पुनः आरम्भ होनेपर वे दुर्भाग्यवश दो दलोंमें विभक्त हो गये थे। अब ये दल समाप्त हो गये हैं।

* * *

इस समय श्री गांधीकी जनरल स्मट्ससे और भी लिखा-पढ़ी चल रही है और सम्भव है, वह इस सप्ताहमें पूरी हो जाये।

* * *

श्री पोलक पिछले शनिवारकी शामको पहुँचे। श्री काछलिया तथा समाजके अन्य सदस्योंने उनकी अगवानी की; पिछले सोमवारको वे 'इम्पीरियल मेल' से लन्दन रवाना हो गये। उन्हें कोई सौ भारतीय तथा चीनियोंने विदाई दी। इनमें सर्वश्री कैलेनबैक, रिच, आइज़क, वॉन वीनेन तथा कुमारी श्लेसिन भी शामिल थे। श्री काछलियाने उन्हें माला पहनाई और अन्य अनेक लोगोंने गुलदस्ते भेंट किये। उनपर पुष्पवृष्टि भी की गई और जब गाड़ी छूटनेको थी तब श्री कैमेने चन्द चुने हुए शब्दोंमें श्री पोलककी महान् सेवाओंके लिए उन्हें धन्यवाद दिया और यह शुभ-कामना की कि अपनी पत्नी और परिवारके साथ उनका समय सुखसे बीते। उन्होंने यह आशा

भी व्यक्त की कि श्री पोलक वहाँ जो भी सार्वजनिक कार्य करेंगे वह भी भारतमें किये गये उनके प्रयासोंकी तरह ही सफलतासे विभूषित होगा।

सोमवारकी रातमें श्री जोज़ेफ रायप्पनके सम्मानमें वन्देमातरम् लीगकी ओरसे एक स्वागत-समारोहका आयोजन किया गया। उसमें नाश्तेका प्रबन्ध किया गया था और कोई ५० अतिथियोंके लिए मेजें लगाई गई थीं। इन अतिथियोंमें अन्य लोगोंके अलावा सर्वश्री काछलिया, क्विन, फैंसी, थम्बी नायडू, डेविड अर्नेस्ट, बावजीर, सोराबजी तथा मेढ भी शामिल थे। सर्वश्री कैलेनबैक और आइज़क भी उपस्थित थे। अध्यक्षता श्री गांधीने की। कई लोगोंने भाषण दिये। न्यूनाधिक सभी भाषण सत्याग्रह आन्दोलनसे सम्बद्ध थे।

* * *

सन् १८८५ के कानून ३, स्वर्ण कानून और कस्बा-कानून संशोधन अधिनियमके अमलसे उत्पन्न कठिनाइयों तथा अन्य अनेक बातोंके सम्बन्धमें भी उपनिवेश-मन्त्रीकी सेवामें ब्रिटिश भारतीय संघ एक प्रार्थनापत्र भेज रहा है।

श्री रिच अबतक अदालतोंमें कई मामलोंकी सफल पैरवी कर चुके हैं।

* * *

श्री सी० रामास्वामीने फार्मके लिए एक बक्सा सब्जी भेजी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-५-१९११

५३. पत्र : ई० एफ० सी० लेनको[1]

मई ४, १९११

प्रिय श्री लेन,

जनरल स्मट्सके साथ हुई भेंटके[2] सम्बन्धमें मैंने श्री काछलिया और अन्य नेताओंसे सलाह की है। सत्याग्रहियोंके रूपमें प्रार्थनापत्र देनेके अधिकारी लोगोंके नामोंकी पूरी सूची आपको देना कोई आसान बात नहीं है। बहरहाल सूची बनानेमें कुछ समय लगेगा ही। किन्तु मेरा खयाल है कि मैं सुगमतासे आपको यह बता सकता हूँ कि किस

१. श्री लेनने ५ मई, १९११को इस पत्रकी प्राप्ति-सूचना देते हुए लिखा था कि इसे मन्त्रीके पास विचारार्थ भेजा जा रहा है (एस० एन० ५५२९) और गृह-मन्त्रालयके कार्यवाहक सचिवने १९ मईको गांधीजीको सूचित किया था कि सरकारने सत्याग्रहियोंकी माँगें अन्तिम रूपसे मान ली हैं। मन्त्रीने यह विश्वास प्रकट किया था कि एशियाई समाज इस स्वीकृतिको "प्रस्तुत प्रश्नोंके अन्तिम निबटारेके रूपमें ग्रहण करेगा।" देखिए परिशिष्ट ५।

२. यह भेंट १९ अप्रैल, १९११ (पृष्ठ ३२-३५) वाली भेंट नहीं मालूम पड़ती, क्योंकि इस पत्रमें जिन-जिन मसलोंकी चर्चा की गई है उनमें से एक भी उस मुलाकातके समय नहीं उठाया गया था। जो भी हो, गांधीजीने पोलकके नाम अपने ८ मई, १९११के पत्रमें उल्लेख किया था कि गुरुवार या शुक्रवारको उन्होंने स्मट्ससे मुलाकात की थी। यह मान लेना स्वाभाविक ही होगा कि मुलाकात ४ या ५ मईको हुई होगी। पोलकके नाम पत्रसे लगता है कि मुलाकात हुई थी किन्तु उसका कोई विवरण उपलब्ध नहीं हुआ।

तरहके लोगोंको प्रार्थनापत्र देनेकी अनुमति दी जा सकती है। मैं उनकी बात नहीं करता जो दक्षिण आफ्रिकामें हैं, क्योंकि मुझे मालूम हुआ है कि जनरल स्मट्सको उनके सम्बन्धमें कोई दिक्कत पेश होनेका अंदेशा नहीं है।

कोई चीनी सत्याग्रही दक्षिण आफ्रिकाके बाहर नहीं है।

जिन भारतीयोंके भारतमें होनेकी सम्भावना है, वे इनमें से किसी-न-किसी श्रेणीमें आ जायेंगे :

(क) वे लोग जो १९०७ के पंजीयन अधिनियम २ या १९०८ के अधिनियम ३६के अन्तर्गत १ जनवरी १९०८ के बाद निर्वासित किये गये थे और जिन्होंने अभी तक दोनोंमें से किसी भी अधिनियमके अन्तर्गत प्रार्थनापत्र नहीं दिया है।[1]

(ख) वे लोग जो यद्यपि निर्वासित नहीं किये गये हैं, किन्तु १ मार्च, १९०७ के कुछ समय बाद संघर्षके कारण दक्षिण आफ्रिकासे चले गये थे।[2]

वर्ग (क) के अन्तर्गत आनेवाले प्रार्थीपर अपने निर्वासनका प्रमाण देनेकी जिम्मेदारी तथा वर्ग (ख) के अन्तर्गत आनेवाले प्रार्थीपर अपने यहाँसे चले जानेका प्रमाण देनेकी जिम्मेदारी होगी।

उक्त पद्धति अपना लेनेपर जनरल स्मट्सके इस भयका निवारण हो जाता है कि कहीं उन प्रार्थियोंके आनेका द्वार न खुल जाये जो दक्षिण आफ्रिकासे वर्षों पूर्व भारत चले गये थे और अब जिनके झूठा दावा पेश करनेकी सम्भावना है।

मैं समझता हूँ कि (क) या (ख) दोनोंमें से किसीके भी अन्तर्गत ३० से अधिक भारतीयोंके आनेकी सम्भावना नहीं है; और दक्षिण आफ्रिकासे सम्भवतः १५० से अधिक लोग प्रार्थनापत्र नहीं देंगे।

हमारे बीच हुए पत्र-व्यवहारसे यह निष्कर्ष निकलता है कि जिन लोगोंने पंजीयक को १९०७ या १९०८ के अधिनियमके अन्तर्गत पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र दिये हैं और जिनके प्रार्थनापत्र अस्वीकृत कर दिये गये हैं, वे अब फिर प्रार्थनापत्र नहीं दे सकते। किन्तु दक्षिण आफ्रिकामें कुछ लोग[3] ऐसे हैं जिन्होंने १९०८ का अधिनियम पारित होनेसे पहले स्वेच्छया प्रमाणपत्र लेनेके लिए प्रार्थनापत्र दिये थे; किन्तु उन्होंने पंजीयक द्वारा प्रार्थना अस्वीकृत कर दिये जानेपर १९०८ के अधिनियमके बाद प्रार्थनापत्र नहीं दिये।[3] ये लोग अब अधिनियमके अन्तर्गत प्रार्थनापत्र देंगे; जिससे आवश्यक होनेपर वे १९०८ के अधि-नियमसे प्राप्त अपीलके अधिकारका लाभ उठा सकें।

रहे दक्षिण आफ्रिकाके चीनी; सो उनकी संख्या ३० से अधिक नहीं है। उनमें केवल दोको छोड़कर सब ट्रान्सवालमें हैं और ये दो डेलागोआ-बे शहरमें हैं।

१. अप्रैल १४, १९०९को पहली बार १६ भारतीयोंकी एक टोलीको और ५ जून, १९०९ तक लगभग २९ भारतीयोंको निर्वासित किया जा चुका था।

२. चूँकि एच० ओ० अली न तो सत्याग्रहमें शामिल होना चाहते थे और न १९०७ के अधिनियम २ के अन्तर्गत अपना पंजीयन ही करवाना चाहते थे, इसलिए वे १९०७ के अगस्तमें ट्रान्सवाल छोड़कर चले गये थे। कई अन्य लोग भी इन्हीं कारणोंसे इन्हीं दिनों ट्रान्सवाल छोड़कर चले गये थे।

३. मई १९, १९११को दिये गये अपने उत्तरमें गृह-मन्त्रीके कार्यवाहक सचिवने (परिशिष्ट ५) यह संख्या १८० मानी है। इसमें भारतीय और चीनी दोनों आ जाते हैं।

मैं यह मानकर चलता हूँ कि पंजीयन तुरन्त आरम्भ कर दिया जायेगा। मेरा सुझाव है कि एक निश्चित तिथि, कहिए आगामी ३१ दिसम्बर, के बाद प्रार्थनापत्र न लिये जायें।

मैं कहना चाहता हूँ कि अब इस मामलेको अन्तिम रूपसे तय कर देना इष्ट है; क्योंकि अभीतक कुछ ऐसे सत्याग्रही जेलमें पड़े हैं जिनकी रिहाईकी सिफारिश की जानी है; और फिर मेरी यह उत्कट इच्छा है कि यदि मुझसे बने तो मैं उन मुद्दोंपर और अधिक चर्चा न होने दूँ जो अन्तिम घोषणामें देर होनेके कारण एक-एक करके उठते ही चले जा रहे हैं।

आपका आदि
[मो० क० गांधी]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५५२९ 'क') की फोटो-नकल तथा २७-५-१९११ के 'इंडियन ओपिनियन' से। मसविदेमें अन्तिम अनुच्छेद नहीं है।

५४. पत्र: ए० ई० छोटाभाईको

मई ४, १९११

प्रिय श्री छोटाभाई,

अपने पुत्रके मुकदमेके[1] सिलसिलेमें आपका इसी माहकी ३ तारीखका पत्र और ३०० पौंडका चेक मिला। बहुत आभारी हूँ। जैसा कि मैं आपको पहले ही सूचित कर चुका हूँ, मेरी इच्छा आपकी इस उदार भेंटका निजी उपयोग करनेकी नहीं है। मेरा इरादा है कि शीघ्र ही प्रेस-भवन तथा मशीनोंके साथ, जिनका मूल्य ५,००० पौंड आँका गया है, फीनिक्स आश्रमका एक ट्रस्ट बनाकर सार्वजनिक कार्यके हितार्थ धरोहरके रूपमें इन्हें ट्रस्टियोंको सौंप दिया जाये। और यदि मैं धनवानोंको आपका अनुकरण करनेके लिए राजी कर सका[2], तो मेरा इरादा प्राप्त होनेवाली रकमसे फीनिक्समें एक अच्छा-सा स्कूल बनानेका है। किन्तु यदि यह सहायता न मिली तो मेरा इरादा इस रकमको सत्याग्रह-कार्यके लिए जमा रखनेका है; ताकि यदि दुर्भाग्यवश अगले वर्ष सत्याग्रह फिरसे शुरू करनेकी जरूरत आ पड़ी तो आवश्यकता होनेपर इसका उपयोग उस कार्यमें किया जाये।

सार्वजनिक कार्योंमें सहयोग करनेके आपके वचनके लिए धन्यवाद सहित,

आपका हृदयसे
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, १३-५-१९११

१. छोटाभाईके मामलेके विशद विवरणके लिए देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ३९ पाद-टिप्पणी २।
२. देखिए "श्री छोटाभाईकी भेंट", पृष्ठ ६८।

५५. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

मई ८, १९११

प्रिय पोलक,

तुम्हारी प्लेट और श्री काछलियाका अधिकारपत्र,[1] ११६ पौंड ९ शि० का ड्राफ्ट तथा हरिलालके पत्रके अनुवादकी प्रतिलिपि भेज रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि वेस्ट तुम्हें पीटरका पत्र भेज देंगे। यह तो तुमने देख ही लिया होगा कि वे तुम्हारे तारका आशय नहीं समझे। कॉर्डिज़का[2] पता यह है : जॉन एच० कॉर्डिज़ जूनियर, ६८ जी० आर० व्लीखेन, हैम्बर्ग। मैं समझता हूँ कि तुम्हारा लन्दनका मार्ग-व्यय ४५ पौंडसे अधिक आयेगा; जिसमें पार्क स्टेशनपर दिया गया सामानका भाड़ा भी शामिल है। इसमें यात्राके दौरान होनेवाला व्यय और बख्शीस वगैरह शामिल नहीं है। इसलिए मैं वाटरलू तक तुम्हारा मार्ग-व्यय ५५ पौंड लगाता हूँ। व्ययका मेरा तखमीना इस तरह है :

लन्दन तक मार्ग-व्यय	५५ पौंड
२० मई से १५ अक्तूबर तक ५० पौंड प्रति मासकी दरपर	२५० पौंड
तुम्हारा, मिली, सेली और लड़कोंका बम्बई तक का मार्ग-व्यय	१०० पौंड
भारतमें नवम्बरसे मार्च तक रहनेका खर्च २५ पौंड प्रति मासके हिसाबसे	१२५ पौंड
तार आदिका खर्च	१०० पौंड
भारतसे दक्षिण आफ्रिका तक का मार्ग-व्यय	६० पौंड
	६९० पौंड

इसलिए मेरा अन्दाज है कि खर्च ७०० पौंड तक आयेगा। यदि तुम जल्द लौट आओ, तो कुछ बचत हो सकती है। ऊपरकी रकममें से मोटे तौरपर ४४ पौंड यहाँ तुम्हारे मार्ग-व्ययपर खर्च हो चुके हैं और २०० पौंड अब शिष्टमण्डलके निमित्त भेजे गये हैं। मैंने वहाँके खर्चका तखमीना जानबूझकर ५० पौंड लगाया है, क्योंकि [इंग्लैंडमें] तुम्हारे रुकनेके दौरान समितिकी गतिविधियाँ बढ़ जायेंगी। इसीलिए मैंने प्रति माह १८ पौंडके बजाय २५ पौंड रखे हैं; और सम्भवतः इससे मॉड कुछ निश्चिन्त हो सकेगी;

१. तात्पर्य पोलकके नाम काछलियाके उस पत्रसे है जिसके द्वारा उन्होंने ब्रिटिश भारतीय संघकी २७ अप्रैलकी बैठकमें हुए निर्णयके अनुसार गांधीजी और काछलियाके स्थानपर पोलकको इंग्लैंडमें आफ्रिकाके भारतीयोंका प्रतिनिधित्व करनेका अधिकार दिया था।

२. एक जर्मन थियॉसफिस्ट, जिन्होंने फीनिक्स आश्रमका सदस्य बननेके लिए एक अच्छी खासी नौकरी छोड़ दी थी। वे फीनिक्समें स्कूल चलाते थे और बस्तीमें परिचर्याके कामकी भी देखभाल करते थे। इस समय वे श्रीमती एनी बेसेन्ट, जिनके वे बड़े प्रशंसक थे, की देखरेखमें अडयार (मद्रास) की थियॉसॉफिकल सोसाइटीमें एक वर्षका पाठ्यक्रम पूरा कर रहे थे। बादमें वे भारतमें गांधीजीके पास सेवाग्राम जाकर रहने लगे थे, जहाँ १९६० में उनकी मृत्यु हुई।

और मैंने तुम्हारे निजी खर्चके लिए भी थोड़ा अधिक लगा लिया है, क्योंकि घरसे बाहर रहनेपर खर्च कुछ ज्यादा हो जाता है। इसे २५ पौंड रख लेना ठीक होगा। मेरा खयाल है इतनेमें तुम अनावश्यक तंगदस्तीके बिना काम चला लोगे। साथ ही यदि ये रकमें काफी न लगें तो तुम तारों आदिके लिए निश्चित १०० पौंडकी रकममें से खर्च कर सकते हो। मैंने तखमीना मोटे तौरपर ही लगाया है और तुम इससे बंधे हुए नहीं हो। अभी तक तुम्हारा हिसाब तैयार नहीं हुआ है। वह अगले सप्ताह भेजा जायेगा। ड्राफ्टमें चन्देकी बची हुई १६ पौंड ९ शि० की रकम शामिल है, और उसमें से मिलीको भेजे हुए २० पौंड, तुम्हारा थियॉसॉफिकल सोसाइटी और लॉ सोसाइटीको दिया गया ५ पौंड १० शि० चन्दा और डर्बनमें लिये गये २ पौंड काट लिये गये हैं। किन्तु यदि मैंने तुम्हारी हिदायतोंको गलत समझा हो तो सूचित कर देना। मेरा खयाल है तुमने मुझसे चन्देकी रकममें से मिलीको भेजे गये ड्राफ्टकी रकम और उसके बाद किया गया खर्च काट लेनेको कहा था।

स्वर्ण-कानून-सम्बन्धी मामलेमें आपको अपनी सारी योग्यता और शक्ति लगानी पड़ेगी। अलग लिफाफेमें १९०८ का कानून और १९०९ के कस्बा अधिनियमका संशोधन भेज रहा हूँ। क्लार्क्सडॉर्पके सिर्फ तीन ही व्यक्तियोंने मिलकर आपके खर्चके लिए १५० पौंडकी रकम देना तय किया है। इससे उनकी आतुरता और तत्काल कार्रवाईकी आवश्यकता समझी जा सकती है। स्वर्ण-कानूनके सम्बन्धमें जो-कुछ करो, उस सबका विवरण प्रकाशनके लिए मुझे भेजना। मैंने अभीतक नेटालका प्रार्थनापत्र[1] तैयार नहीं किया है, तुम इसपर मुझसे खिन्न होओगे। मैं इसे कर नहीं पाया। मुझे जनरल स्मट्ससे मिलने अकस्मात प्रिटोरिया जाना पड़ा और जैसा कि तुम समझ ही सकते हो, गुरुवार और शुक्रवार यहाँ लोगोंसे भेंट करनेमें निकल गये। स्मट्सने मुझसे कहा कि वे प्रश्न २ के अन्तर्गत आनेवाले सत्याग्रहियों अर्थात् युद्धसे पहलेके निवासियोंकी संख्याके सम्बन्धमें अपनी दिल-जमई करते ही सभी मुद्दोंपर अनुकूल उत्तर देंगे। उनका खयाल था कि मेरे उत्तरमें इसकी गुंजाइश है कि भारतके ३०,००,००,००० लोग प्रार्थनापत्र दे सकें और उनका यह भय निराधार नहीं था। इसलिए मैंने उन लोगोंकी और सटीक व्याख्या कर दी है जिन्हें मैं दक्षिण आफ्रिकाके बाहरका सत्याग्रही समझता हूँ। संलग्न प्रतिलिपिमें मेरी यह व्याख्या देख लेना। भेंट लम्बी और प्रकटतः सौजन्य-पूर्ण रही। वे हर मुद्देपर हमसे समझौता करनेके लिए उत्सुक थे। उन्होंने इस बातका उल्लेख जरूर किया है कि अबतक केप जिन अधिकारोंका उपयोग करता आया है उनमें अप्रत्यक्ष रूपसे कमी आ जायेगी और केप तथा नेटालके लिए भी कड़ी शैक्षणिक परीक्षा रखी जायेगी। वे एक सर्व-सामान्य विधेयक पारित करनेके लिए अत्यन्त उत्सुक हैं और उन्होंने मुझसे फ्री स्टेट-सम्बन्धी कठिनाईको हल करनेमें मदद करनेको कहा। प्रान्तीय कानून बनाये बिना मुझे उसमें से निकलनेका कोई मार्ग दिखाई नहीं देता। आशा है कि आज नेटाल-सम्बन्धी प्रार्थनापत्रके सिलसिलेमें कुछ काम कर सकूँगा। मेरा खयाल है कि तुमने स्वर्ण-कानूनके सम्बन्धमें ग्रेगरोवस्कीकी सम्मति ले ली होगी।

१. देखिए "अभ्यावेदन: उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ ६८-७२।

'इंडियन ओपिनियन' की १९०९ की जिल्दके पृष्ठ १४८ पर खोटाका[1] मामला मिल जायेगा। हम चाहते यह हैं कि स्वर्ण-कानूनमें संशोधन हो जाये और तबतक उसके खण्ड १३० पर अमल करना स्थगित रखा जाये।

हृदयसे तुम्हारा,
[मो० क० गांधी]

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५३१) की फोटो-नकल से।

५६. पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको

टॉल्स्टॉय फार्म
वैशाख सुदी १० [मई, ८ १९११][2]

भाई श्री प्राणजीवन,

आपके दो पत्र मुझे इस सप्ताहमें मिले।

थियॉसफीके विषयमें आपके जो विचार हैं, वैसे मेरे १८९९ से रहे हैं। उस वर्ष मुझसे सोसाइटीमें शामिल होनेका बहुत आग्रह किया गया था, किन्तु मैंने साफ इनकार कर दिया था और कहा था कि सोसाइटीका भाईचारेवाला सिद्धान्त मुझे पसन्द है, किन्तु मैं सूक्ष्म शक्तियोंकी खोज करने तथा उन्हें प्राप्त करनेके प्रयत्नके विरुद्ध हूँ। मुझे श्रीमती बेसेंट[3] ढोंगी नहीं जान पड़तीं। वे तो भोली-भाली हैं और लेडबीटरके छलावेमें आ गई हैं। लेडबीटरने 'मृत्यु और उसके उपरान्त' नामकी एक पुस्तक लिखी है। एक अंग्रेज मित्रने मुझे उसको पढ़नेका सुझाव दिया था; किन्तु मैंने उसको पढ़नेसे साफ इनकार कर दिया, क्योंकि मुझे उनके कुछ लेख पढ़नेके बाद उनके सम्बन्धमें सन्देह हो गया था। उनके ढोंगका पता तो मुझे पीछे चला। इसके बावजूद थियॉसफीमें से जो सार मुझे लेने योग्य लगा वह मैंने लिया है। ब्लैवेटस्कीकी[4]

१. 'मेसर्स खोटा ऐंड कम्पनी' १८९८ से नाइजेल नामक एक खनन क्षेत्रमें एक गोरे द्वारा किरायेपर उठाई गई गुमटीमें व्यापार करती आ रही थी। १९०९ में राजस्व-आदाताने स्वर्ण-कानूनके खण्ड ९२ और १३० के आधारपर उनके व्यापार-परवानेका अभिनवीकरण करनेसे इनकार कर दिया। उन खण्डोंके अनुसार एशियाई लोग घोषित क्षेत्रोंमें निवास या व्यापार नहीं कर सकते थे। अपील करनेपर, ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयमें सरकारी व्याख्याको नहीं माना और राजस्व अधिकारीको परवाने जारी करनेका आदेश दे दिया।

२. इस खण्डमें आये हुए अनेक गुजराती पत्रोंपर भारतीय पंचांगके अनुसार मास और तिथि तो पड़ी है तथापि संवत्सर नहीं दिया गया है। इस पत्रमें उल्लिखित ३०० पौंडकी भेंट गांधीजीको मई ४, १९११ को प्राप्त हुई थी और उस वर्ष वैशाख सुदी १०, मई ८ को पड़ी थी।

३. देखिए खण्ड सात, पृष्ठ २३४, पाद-टिप्पणी १।

४. श्रीमती ब्लैवेटस्की (१८३१-९१); रूसी अभिजात कुलमें जन्म; १८७५ में थिऑसॉफिकल सोसायटीकी स्थापना की; १८७९ में अडयारमें इसका केन्द्रीय कार्यालय खोला गया। सोसायटीने सार्वभौम भाईचारेका प्रसार और सभी धर्मोंका तुलनात्मक अध्ययन प्रारम्भ किया। श्रीमती ब्लैवेटस्कीके विषयमें विभिन्न मतामत थे और उनके आध्यात्मिक चमत्कारोंको अनेक लोग सन्देहकी दृष्टिसे देखते थे।

'की' नामकी पुस्तकका मेरे मनपर बहुत अच्छा प्रभाव हुआ। थियॉसफीके कारण अनेक हिन्दू अपने धर्मकी खोज करनेके लिए प्रेरित हुए हैं। जो प्रयोजन ईसाई धर्मने पूरा किया है, वही थियॉसफीने भी पूरा किया है। इसके सिवा हम जिन मूल सिद्धान्तोंको मानते हैं, उन्हें थियॉसफी भी मानती है, इसलिए थियॉसफीके अनुयायियोंमें भले आदमी आसानीसे मिल जाते हैं। वैष्णवों आदिके सम्प्रदायोंमें ऊपरसे नीचे तक धूर्तोंकी कमी नहीं है, फिर भी उनमें नरसी मेहता[1], भोजा भगत[2] आदि हीरे भी मिलते हैं। रिच भी थियॉसफिस्ट थे। उन्होंने मुझसे सोसाइटीका सदस्य होनेका आग्रह किया। मैं तो उसका सदस्य नहीं हुआ, साथ ही उनको उसके ढोंगसे मुक्त होनेमें मैंने सहायता दी। पोलक थियॉसफिस्ट हैं, किन्तु थियॉसफिस्टोंके कर्मकाण्डसे तथा उनकी पुस्तकोंसे वे बहुत दूर रहते हैं। ऐसा ही कैलेनबैकके विषयमें कहा जा सकता है। मैं जिस समय भारतमें था, उस समय गोकुलदासको मैंने बनारसके कॉलेजमें[3] भेजा था। उस समय भी मैं निराश हुआ था। उसके बाद भी जबतक मुझमें आज जो समझ है वह नहीं थी, यानी आधुनिक शिक्षा-पद्धतिके विषयमें जो वीतरागता है, वह नहीं थी तबतक "मामाके बिलकुल ही न होनेसे काना मामा अच्छा", ऐसा सोचकर बनारस कॉलेज-जैसे विद्यालयोंकी खोजमें मैं रहता था और बालकोंको ऐसी जगह भेजनेकी इच्छा भी रखता था। अब वैसा कुछ नहीं है। कॉर्डिज़ फीनिक्समें हैं। वे पक्के थियॉसफिस्ट हैं। उन्हें अभी थियॉसफीके व्यसनसे मैं मुक्त नहीं कर सका हूँ। उनका मन निर्मल प्रतीत होता है। इस समय वे आग्रहपूर्वक अडयार गये हुए हैं। वे ईमानदार हैं, इसलिए यदि चक्करमें न आये तो वहाँका ढोंग वे समझ लेंगे और उसे छोड़ देंगे। अडयारमें यह ढोंग किस हद तक है या ऐसा कहिए कि श्रीमती बेसेंटकी सज्जनताके कारण वह किस हद तक ढँका रहता है, यह सब जानने लायक है। श्रीमती बेसेंट मास्टर (गुरु) के रूपमें प्रसिद्ध होना चाहती हैं, यह बात समझमें आती है। जो व्यक्ति [गूढ़] शक्तियोंकी खोजमें भटकता है उसे इस प्रकारका नशा चढ़े बिना नहीं रहता। मैं समझता हूँ कि यही कारण है कि हमारे सभी शास्त्रोंमें शक्तियों और सिद्धियोंको वर्ज्य कहा गया है और इसीलिए हठयोगकी तुलनामें भक्तियोगको ज्यादा अच्छा माना गया है।

हरिलालका साथका पत्र[4] पढ़ना। उसने जोजेफ रायप्पनको सब समाचार दिये हैं और सूचित किया है कि आवश्यकता हो तो वे समाचार मुझे भी पहुँचा दिये जायें। उनसे मैं उसकी वर्तमान गतिविधिके विषयमें कुछ ज्यादा जान सका हूँ। वह इस समय डेलागोआ-बेमें है और वहाँसे उसने मेरे तारका जवाब दिया है। तुम्हारे पैसेसे तथा [तुम्हारी शर्तोंसे] बँधकर विलायत जाना उसे रुचा नहीं। जोजेफ कहता है कि उसका विचार पंजाबमें जाकर कहीं किसी एकान्त स्थानमें पढ़नेका है। उसका पत्र नासमझीसे भरा हुआ है। उसका पंजाब जानेका विचार भी, जबतक विस्तृत समाचार नहीं मिलते, ऐसा ही मालूम होता है। किन्तु दो-चार दिनमें ज्यादा खबर मिलेगी। वह

१. गुजराती सन्त कवि।
२. मध्ययुगीन गुजराती भक्त कवि।
३. एनी बेसेंट द्वारा स्थापित सेन्ट्रल हिन्दू कालेज, बनारस।
४. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

जेलमें बहुत सोचता-विचारता रहा। फिर उसने इस अवधिमें मेरे जीवनमें जो अनेक बड़े परिवर्तन हुए हैं, उन्हें देखा, मेरा वसीयतनामा भी देखा। मालूम होता है कि उसके मनपर इन सब घटनाओंका अनजाने प्रभाव पड़ता रहा है। मेरा विश्वास है कि उसकी नैतिक निष्ठा दृढ़ है; इसलिए उसके विषयमें मैं निर्भय हूँ। मैंने उसे लिखा है कि उसे मुझसे छिपकर कोई कदम नहीं उठाना चाहिए था।[1] अगले हफ्ते मैं इस विषयकी ज्यादा जानकारी दूँगा।

नेटालसे छः शिक्षित सत्याग्रहियोंको यहाँ बसनेकी अनुमति मिली है। यदि वे अपने जीवनका बाकी भाग अथवा कमसे-कम १० वर्ष हमारे बताये हुए सार्वजनिक कार्यमें व्यतीत करनेके लिए तैयार हों, तो मुझे लगता है कि उन्हें आपके खर्चसे एक वर्षके लिए विलायत भेज दूँ। ऐसे दो या तीन व्यक्ति हैं। शायद ज्यादा भी हों। भेजनेमें आपकी सम्मति चाहता हूँ। यदि आपकी सम्मति हो, तो "गांधी जोहानिसवर्ग यस"[2] ऐसा तार कर दीजिए और मैं समझ लूंगा। ऐसा नहीं है कि वे अविलम्ब चले जायेंगे। उनके साथ बातचीत कर रहा हूँ। भेजनेका इरादा तभी है जब वे "हाँ" कहें और मुझे सन्तोष हो जाये। मेरी इच्छा तो यह है कि फिलहाल उन लोगोंको फीनिक्समें खेती तथा करघेका काम सिखाया जाये और इसके साथ ही वे प्रेसका काम भी सीखते रहें। इस प्रकार वे ठीक तैयार हो जायें तो उन्हें भारत भी भेजा जा सकता है। मेरी इच्छा ऐसा ही काम भारतमें भी शुरू करनेकी है। हो सकता है, यहाँ वह कुछ अधिक महँगा सिद्ध हो, किन्तु मेरा खयाल है कि यह काम यहीं ज्यादा आसान रहेगा।

भारतीय युवक यहाँ चरित्र-बलका ज्यादा अच्छा परिचय दे सकते हैं। पुरुषोत्तमदास[3] अपनी इन्द्रियोंपर जैसा अंकुश यहाँ रखता है और रख सकता है वैसा वहाँ नहीं रख सकेगा। उसकी पत्नीको भी यहाँ जो स्वतन्त्रता प्राप्त है और जैसी सरलतासे वह यहाँ रहती है, वैसा हमारे वर्गके लोगोंके बीच फिलहाल भारतमें सम्भव नहीं है, ऐसा मैं देखता हूँ। मैं बराबर यह सोचता रहता हूँ कि यहाँ कुछ लोग अच्छी तरह तैयार हो जायें, तो एक बड़ा काम हो जाये। जो व्यक्ति दस वर्ष तक काम करनेका वचन दें, उनका भरण-पोषण तो हमें करना ही होगा। इसके साथ पुरुषोत्तमदासका पत्र[4] है, उसे देख लीजिएगा। पत्रमें व्यक्त विचारोंके अमलमें मेरा कोई हाथ नहीं है। वेस्ट इत्यादिने ऐसे विचारोंका अमल अपनी ही समझके अनुसार किया है। छोटाभाईके मुकदमेमें मैंने बहुत परिश्रम किया है। इसके लिए छोटाभाईने मुझे कुछ देनेकी इच्छा प्रकट की। मैंने अपने लिए कुछ लेनेसे इनकार कर दिया। अब उन्होंने मुझे ३०० पौंड यह कहकर दिये हैं कि मैं अपनी इच्छाके अनुसार उनका उपयोग करूँ।[5] यह पैसा

१. अर्थात् गांधीजीको सूचित किये बिना घरसे चला जाना।

२. "गांधी जोहानिसबर्ग हाँ।"

३. पुरुषोत्तमदास देसाई; कुछ दिनों तक फीनिक्सकी पाठशाला इन्हींकी देख-रेखमें थी।

४. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

५. देखिए "पत्र: ए० ई० छोटाभाईको", पृष्ठ ६० और "श्री छोटाभाईकी भेंट", पृष्ठ ६८।

हाथमें आ गया है, इसलिए मैं यहाँ दान माँगकर और भी पैसा इकट्ठा करना चाहता हूँ और यह सारा पैसा मिल जाये, तो फीनिक्समें पाठशालाकी इमारत बनानेकी इच्छा रखता हूँ। यदि वैसा न हो सका, तो सोचता हूँ कि इसका उपयोग सत्याग्रहको उत्तेजन देनेमें करूँगा।

पोलक विलायत गये हैं। उनके लिए कुछ स्थानिक चन्दा किया जा रहा है। ७०० पौंड इकट्ठा करनेका विचार है। इतने पैसोंसे वे विलायतमें अक्तूबर मास तक रह सकेंगे और अक्तूबरके लगभग मध्यमें श्रीमती पोलकको लेकर हिन्दुस्तान जायेंगे; वहाँ कांग्रेसमें शामिल होंगे और अगले वर्ष यहाँ जिस विधेयककी बात चल रही है, उसके पास हो जाने तक हिन्दुस्तानमें रहेंगे। उसके बाद वे शीघ्र ही यहाँ आ जायेंगे। इस प्रकार अगले वर्षका मार्च महीना आ पहुँचेगा। इतने दिनोंका कुल खर्च, जिसमें यात्रा खर्च भी शामिल है, करीब ७२५ पौंड होगा। यदि वे हिन्दुस्तानमें हमारे परिचित लोगोंके साथ रह सकेंगे, तो कुछ बचत हो जायेगी। मैं समझता हूँ, उन्हें कुछ समयके लिए आप रंगून बुलायेंगे। श्रीमती पोलकमें उतनी सादगी नहीं है जितनी उनके स्वामीमें है, यह तो आपने देखा ही होगा।

यदि इन आठ या छः महीनोंमें मुझे कुछ अवकाश रहा, तो मेरा विचार खादी और करघेपर ध्यान देनेका है। पुरुषोत्तमदास एक कारखानेमें हाथकरघा देख आया है। मैंने उसे वैसा हाथकरघा लेनेकी अनुमति दे दी है। यदि उसने लिया, तो यह खर्च मैं आपसे लूँगा। इन सब नई प्रवृत्तियोंमें फिलहाल तो पैसा खर्च करनेकी आवश्यकता पड़ेगी ही। आपकी ओरसे मैं इस सम्बन्धमें पूरी छूट चाहता हूँ।

मैं देखता हूँ कि यदि मैं शान्तिपूर्वक वकालत करता रहूँ, तो प्रतिमास २०० पौंड मिलते रहेंगे। किन्तु मैंने उसमें न पड़नेका निश्चय किया है। इस कामका अधिकांश रिचके पास जायेगा। रिचको मैंने अपने ही दफ्तरमें बैठाया है और वह काम करने लगा है। उसे अपने कुटुम्बके लिए पैसा कमानेका लोभ है। उसकी यह इच्छा ऊपर बताई हुई रीतिसे पूरी हो जायेगी और उसके कुटुम्बके लिए इस समय समाजकी ओरसे जो २५ पौंड हर मास दिये जाते हैं, वे बचेंगे।

स्मट्सकी ओरसे अन्तिम पत्र अभीतक नहीं आया, किन्तु मेरा खयाल है कि वह आयेगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५०८४) से।
सौजन्य : सी० के० भट्ट।

५७. मगनलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश[1]

[मई ८, १९११ के आसपास][2]

किन्तु देखता हूँ कि . . . थी। इसलिए मैं . . . बीचमें कम ही आता हूँ। मेरा इरादा फीनिक्स अगले मासमें आनेका है। उस समय ज्यादा बातचीत हो सकेगी। गायकी बात अभी स्थगित रखना। सैम ऐसा ही चाहते हैं। प्रेसके काममें से एक घंटा रोज बचा लेनेका विचार उत्तम है और होना भी यही चाहिए। प्रेसमें लगे सभी लोगोंके कामके घंटोंमें कुछ कमी कर दी जाये। इस प्रकार बचाया हुआ समय सब लोग खेतीके काममें लगायें यानी सार्वजनिक कार्यमें सब लोगोंको प्रतिदिन ९ घंटे देने हों तो हम लोगोंको उनमें से ८ घंटे या कमसे-कम . . .। . . . शेष . . . इसी प्रकार दूसरेमें . . . बसाया है तो . . . मोची, लुहार आदि बनेंगे और उसे ग्रामीण जीवनके अनुसार चलायेंगे।

पुरुषोत्तमदाससे कहना कि रंग-रोगनके खर्चकी रकम ले लें और वह पैसा मकान-खाते डाल दें। शेष बादमें लिखूंगा।

हरिलालने जो किया वह बहुत विचित्र और दुःखदायी है। दोष मेरा है या कहूँ, परिस्थितिका है उसका तो नहीं ही है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५०८६)
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

५८. तार : मद्रास प्रान्तीय परिषदको[3]

मई ९, १९११

धन्यवाद। आप देखेंगे कि अगर मातृभूमिसे सहायता मिलती रही तो किसी भी कीमतपर संघर्ष चालू रखेंगे।

[मो० क० गांधी]

[गुजरातीसे]
गुजराती, १४–५–१९११

१. पत्रके प्रारम्भिक पृष्ठ गायब हैं और यह पृष्ठ भी जहाँ-तहाँ फटा हुआ है। लेकिन पत्रकी विषय-वस्तुसे मालूम होता है कि यह मगनलाल गांधीके नाम लिखा गया था।

२. पिछले शीर्षकमें यानी मई ८, १९११को प्राणजीवन मेहताको लिखे अपने पत्रमें गांधीजीने पहले-पहल इस बातकी चर्चा की है कि हरिलाल उन्हें सूचित किये बिना घर छोड़कर चला गया है। इससे लगता है कि यह पत्र उसी दिनके आसपास लिखा गया होगा।

३. मद्रास प्रान्तीय परिषद (तात्पर्य शायद महाजन सभासे है) ने गांधीजीको बधाइयाँ भेजी थीं। यह तार शायद उसीके उत्तरमें किया गया था। तारकी मूल अंग्रेजी प्रति उपलब्ध नहीं है, इसलिए यह अनुवाद *गुजराती* नामक पत्रमें प्रकाशित उस तारके गुजराती अनुवादपर आधारित है।

५९. श्री छोटाभाईकी भेंट

अपने लड़केके मामलेमें सरकारके खिलाफ बहादुरीसे डटे रहनेके कारण क्रूगर्सडॉर्प-के श्री छोटाभाईका नाम समस्त दक्षिण आफ्रिकामें प्रसिद्ध हो गया है। संघ-सरकार उनके पुत्रको ट्रान्सवालसे निकालना चाहती थी लेकिन श्री छोटाभाईकी दृढ़ताके कारण अपने इस प्रयत्नमें वह असफल रही। इस मामलेमें श्री गांधीने जो कार्य किया है,[1] उसके लिए श्री छोटाभाईने उदारतापूर्वक ३०० पौंडका एक चेक भेंट किया है। श्री गांधीने, जैसी आजकल उनकी प्रवृत्ति है, उस चेकका व्यक्तिगत उपयोग न करनेका निश्चय किया है। यों तो श्री गांधी फीनिक्सकी अपनी सारी सम्पत्तिका एक ट्रस्ट बना देना चाहते हैं, लेकिन इस सम्बन्धमें हम फिलहाल कुछ नहीं कहेंगे। किन्तु वे फीनिक्सकी जमीनपर एक स्कूल बनाना चाहते हैं और श्री छोटाभाईकी भेंट उसके लिए पर्याप्त नहीं है। अतः, उसे पूरा करनेके लिए श्री गांधीने लोगोंसे अनुदान देनेका जो अनुरोध किया है, हम उस ओर पाठकोंका ध्यान खींचना चाहते हैं। यह तो सर्वविदित है कि दक्षिण आफ्रिकामें हमारी कोई अच्छी शिक्षण-संस्था नहीं है। इसलिए हमारा विश्वास है कि हमारे धनिक और उदारमना देशवासी श्री गांधीके आह्वानकी ओर ध्यान देंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-५-१९११

६०. अभ्यावेदन : उपनिवेश-मन्त्रीको[2]

[डर्बन]
मई १५, १९११

नेटाल भारतीय कांग्रेसके अध्यक्ष दाउद मुहम्मद और संयुक्त अवैतनिक सचिव दादा उस्मान[3] और मुहम्मद कासिम आंगलियाका अभ्यावेदन

विनम्र निवेदन है कि :

१. दक्षिण आफ्रिकी संघके नेटाल प्रान्तकी भारतीय जनताकी प्रतिनिधि-संस्था, नेटाल भारतीय कांग्रेसकी समितिकी २८ अप्रैल, १९२२ की बैठकमें हमें इस प्रान्तमें

१. देखिए "पत्र : ए० ई० छोटाभाईको", पृष्ठ ६० तथा "पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ ६५।

२. पोलकके नाम गांधीजीके मई ८ के पत्रको देखनेसे लगता है कि इसका मसविदा उन्हींने तैयार किया था; देखिए पृष्ठ ६२।

३. फ्राइहीडके एक भारतीय दूकानदार और नेटाल भारतीय कांग्रेसके मन्त्री।

बसनेवाले भारतीयोंके कष्टोंके बारेमें निम्नलिखित अभ्यावेदन सेवामें प्रस्तुत करनेका अधिकार तथा आदेश दिया गया था।

प्रवास-सम्बन्धी प्रतिबन्ध

२. ट्रान्सवालमें अभी हालमें प्रकाशित उस पत्र-व्यवहारको[1] पढ़कर आपके प्रार्थियोंको सन्तोष हुआ, जिसमें ट्रान्सवाल-निवासी भारतीयों और संघ-सरकारके बीच हुए अस्थायी समझौतेकी घोषणा की गई है। हम निवेदनकर्ता — आपको सादर स्मरण दिलाना चाहते हैं कि इस प्रान्तके भारतीय गत चार वर्षोंके दौरान ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा चलाये जानेवाले दुःखद संघर्षमें बड़ी ही गहरी रुचि लेते रहे हैं, उसके साथ उनकी अत्यधिक सहानुभूति रही है और उन्होंने उसे नैतिक तथा आर्थिक सहयोग दिया है।[2] जातीय आधारपर भारतीयोंके साथ भेदभाव बरतनेवाले कानूनका अपनी समूची शक्तिके साथ विरोध करनेमें नेटालके भारतीय भी अपने ट्रान्सवालके भाइयोंके समान दृढ़संकल्प रहे हैं और वे इस बातकी प्रतीक्षा करेंगे कि संघ-सरकार संघ-संसदके अगले सत्रमें ट्रान्सवालके वर्तमान जाति-भेदपर आधारित प्रवासी कानूनके स्थानपर सभी जातियोंपर समान रूपसे लागू होनेवाला विधान लाने और नाबालिगोंके अधिकारोंकी सुरक्षाके अतिरिक्त अन्य सभी प्रयोजनोंके लिए १९०७ के ट्रान्सवाल अधिनियम संख्या २ को रद करनेका अपना, सरकारी तौरपर दिया गया, वचन पूरा करे।

३. पर साथ ही, हम — निवेदनकर्ता — उस सामान्य प्रवासी विधेयकके सम्बन्धमें अपनी गहरी आशंका भी व्यक्त कर देना चाहते हैं, जो हमारी जानकारीके अनुसार संघ-संसदके आगामी सत्रमें पेश किया जानेवाला है। क्योंकि हमारे पास यह माननेका कारण है कि उसमें नेटालके भारतीय समाजके वर्तमान अधिकारोंमें कमी करनेकी कोशिश की जायेगी।[3] हम सादर अनुरोध करते हैं कि सम्राट्की सरकार भारतीयोंके वर्तमान अधिकारोंकी रक्षाकी दृष्टिसे, विशेषकर अधिवासियोंकी पत्नियों और उनके नाबालिग बच्चोंके इस प्रान्तमें प्रवेशके अधिकारोंकी ओरसे जो लोग अपने संविहित अधिवासके विषयमें मन्त्रीको सन्तुष्ट कर सकें उनके अधिकारतः अधिवासके प्रमाणपत्र पानेके अधिकारकी रक्षा करनेकी दृष्टिसे दक्षिण आफ्रिकामें प्रवासी कानूनकी प्रगतिपर बड़ी सतर्कतासे नजर रखें। हम आपको आदरपूर्वक स्मरण दिलाते हैं कि वर्तमान नेटाल प्रवासी कानूनोंमें इस बातको स्पष्ट कर दिया गया है कि प्रान्तमें कितनी अवधि तक निवास करनेवालोंको अधिवासका अधिकार प्राप्त हो जायेगा, परन्तु अभी जिसे वापस लिया गया है उस संघ-प्रवासी विधेयकमें ऐसी कोई स्पष्ट व्यवस्था नहीं है। इसलिए हमारा सादर निवेदन है कि प्रशासनकी ओरसे मनमानी न होने देनेके लिए

१. देखिए ई० एफ० सी० लेनके नाम पत्र, पृष्ठ ९-१०, १४-१५, ३९-४१, ४७-५० तथा परिशिष्ट १, २ और ४ भी।

२. सन् १९०८ में नेटालके प्रमुख भारतीयोंने सत्याग्रह किया था और नेटालके अन्य भारतीयोंने ट्रान्सवाल आन्दोलनके सहायतार्थ चन्दा दिया था; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २०९, ४४६, ४७६ और ४८१।

३. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४७५-७६।

यह आवश्यक है कि नये संघ-प्रवासी विधेयकमें अधिवासकी स्पष्ट व्याख्या की जानी चाहिए। [सुझावके तौरपर हम कहेंगे कि] नेटाल और केप कालोनी प्रान्तोंमें निवासकी वह अवधि, जिसके बाद संविहित रूपसे अधिवासका अधिकार मिल जायेगा, तीन वर्षकी हो — जैसा कि आजकल इस प्रान्तमें है। ऐसा न हुआ तो प्रशासकीय मनमानीके फलस्वरूप प्रशासन और भारतीय समाजके बीच अनावश्यक कटुता बढ़ेगी।

४. सादर निवेदन है कि प्रस्तावित नई शैक्षणिक परीक्षाका स्वरूप मनमाना है इसलिए उसका नतीजा यह निकलेगा कि इस प्रान्तमें भारतीय प्रवास एक तरहसे बन्द ही हो जायेगा। हमारी नम्र राय में इसके फलस्वरूप निवासी-भारतीय समाजको काफी परेशानी हो जायेगी। उनमें से कई लोगोंका भारतकी व्यावसायिक संस्थाओंके साथ महत्वपूर्ण कारोबार चलता है और उसमें बहुधा विशेष ज्ञानकी जरूरत पड़ा करती है। परन्तु नई शैक्षणिक परीक्षाके कारण डॉक्टरी और वकालत आदि पेशोंके काफी उच्च शिक्षा प्राप्त इने-गिने भारतीयोंको छोड़कर अन्य लोगोंको प्रवेशकी अनुमति नहीं मिल सकेगी और फलस्वरूप निवासी-भारतीय समाजको वे सुविधाएँ नहीं मिल पायेंगी जो उन्हें आजतक मिलती रही हैं। इसीलिए हमारा सादर अनुरोध है कि सम्राट्की सरकार संघ-संसदमें नया संघ-प्रवासी-विधेयक पेश होनेसे पहले संघ-सरकारसे यह गारंटी माँगे कि विश्वस्त मुनीमों और प्रबन्धकोंके नाम ऐसे अस्थायी अनुमतिपत्र जारी किये जायेंगे जिनकी अवधि समय-समयपर बढ़ाई जा सके, ताकि भारतीय व्यावसायिक हितोंको उस बड़ी क्षतिसे बचाया जा सके जो अन्यथा अवश्यम्भावी है।[१] हर वर्ष जारी किये जानेवाले इन अनुमतिपत्रोंकी संख्या गत वर्ष नेटालके वर्तमान अधिनियमों द्वारा विहित शैक्षणिक परीक्षामें उत्तीर्ण होनेवाले भारतीय प्रवासियोंकी संख्यासे अधिक नहीं होगी। हम यहाँ आपको यह भी स्मरण दिला दें कि इस प्रकारकी सुविधाएँ मिलनेसे नेटालके भारतीय समाजको बड़ी प्रसन्नता होगी हालाँकि इससे निवासी-भारतीय लोगोंकी संख्यामें स्थायी तौरपर कोई वृद्धि नहीं होगी। साथ ही हमने देखा है कि पिछले विधेयक द्वारा — जो अब नाबूद हो गया है — प्रस्तावित शैक्षणिक परीक्षाके अन्तर्गत, जैसा कि संघ-संसदके गत सत्रके दौरान जारी किये गये संसदीय पत्रमें कहा गया था, परीक्षामें उत्तीर्ण होनेवाले भारतीयोंकी संख्या लगभग बारह[२] रखी जानेवाली थी। और अकेले ट्रान्सवालके लिए यह संख्या छः रखी गई थी, जिसकी भारतीय जनसंख्या १५,०००के लगभग है और निवासी भारतीयोंकी संख्या ८,००० से अधिक नहीं है। इस दृष्टिसे समूचे संघके लिए यह संख्या बारह रखना बहुत ही कम होगा। इस बातका ध्यान रखा चाहिए कि केपकी भारतीय जनसंख्या १५,००० और नेटालकी १,५०,०००से कम नहीं है, जिनमें गिरमिटिया भारतीय भी शामिल हैं। जनसंख्याका अनुपात देखते हुए वैसे तो समूचे संघमें नया प्रवेश पानेवाले सुसंस्कृत भारतीय प्रवासियोंकी संख्या ७२ रखी जानी चाहिए, किन्तु

१. भारतीय लोग एक अर्सेसे इसकी शिकायत करते आ रहे थे, देखिए खण्ड ५ पृष्ठ १०४, ११६, १५३ और खण्ड ६, पृष्ठ ११४-१५ तथा २६९-७०

२. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ५०६।

यदि यह बात साफ हो जाये कि शैक्षणिक परीक्षा चाहे जैसी रखी जाये उसमें हर वर्ष ५० सुसंस्कृत ब्रिटिश भारतीयोंको प्रवेश करनेकी अनुमति दी जाये तो हम सन्तोष मान लेंगे।

विक्रेता परवाना अधिनियम

५. यह अधिनियम अपने अमलमें ब्रिटिश भारतीयों और नेटालके[1] व्यापारियोंके लिए बहुत शरारतपूर्ण सिद्ध हुआ है और परवाना अधिकारियों या बोर्डोंके निर्णयके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालयमें अपील कर सकनेके अन्तर्निहित अधिकारको आंशिक रूपमें बहाल करनेके थोड़े-बहुत संशोधनके बावजूद इस अधिनियममें बुनियादी रद्दो-बदल किये बिना उन लोगोंमें सुरक्षाकी भावना पैदा नहीं की जा सकती। किसी एक स्थानके लिए दिये गये व्यापारिक परवानोंको दूसरे स्थानके लिए करानेमें हर बार कठिनाई पड़ती रहती है। परवाना अधिकारी अक्सर ही अपनी बातपर अड़ जाते हैं और कुछ भी नहीं सुनते। अभी कुछ दिन पहले ही नेटाल प्रान्तीय परिषदके एक सदस्यने ब्रिटिश भारतीय दूकानदारोंको मौजूदा परवानों तकसे वंचित करनेके आशयका एक प्रस्ताव पेश किया था।[2]

नेटालकी बस्तियाँ

६. हम आपका ध्यान माननीय सपरिषद-गवर्नरके सामने पेश किये गये इस विषयसे सम्बन्धित प्रार्थनापत्रकी ओर आकर्षित करते हैं। हमको अभीतक मालूम नहीं कि माननीय गवर्नरने उसके बारेमें क्या निर्णय किया है; लेकिन हमें भरोसा है कि नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंको ऐसे अधिकारसे वंचित नहीं किया जायेगा, जो अभी तक उनको प्राप्त था।

गिरमिटिया मज़दूर

७. हम इस अवसरपर नेटालके ब्रिटिश भारतीय समाजकी ओरसे आपको नेटालमें भारतसे गिरमिटिया मज़दूरोंका भेजा जाना बन्द करनेके निर्णयके लिए सादर धन्यवाद देते हैं।[3] हम इस निर्णयका न केवल इसलिए स्वागत करते हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी उचित आकांक्षाओंके प्रति भी आम तौरपर यूरोपीयोंका रुख शत्रुतापूर्ण है बल्कि इसलिए भी स्वागत करते हैं कि हमारी विनम्र रायमें

१. विक्रेता परवाना अधिनियमके विरुद्ध भारतीयोंकी शिकायतोंके लिए देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १३०-३५; खण्ड ४, पृष्ठ १०४-०५, १६९; खण्ड ५, पृष्ठ २८५ और खण्ड ६, पृष्ठ १०९, ३६९-७० तथा ३९९-४००।

२. ह्यूलेटने नेटाल प्रान्तीय परिषद्में ४ अप्रैलको एक प्रस्ताव पेश किया था जिसमें संघ-संसदसे अनुरोध किया गया था कि वह परिषद्को "प्रान्त-भरमें व्यापारिक परवाने मंजूर करने या सभीको वापस लेनेका अधिकार" दे दे। उनके अपने शब्दोंमें नेटालको "यह निश्चित करनेका अधिकार होना चाहिए कि कौन व्यापार करे और कौन न करे" और उनका उद्देश्य नेटाल सरकारको वे अधिकार पुनः दिलाना था जो उसे नये नेटाल परवाना विधेयक द्वारा प्रदान किये जानेवाले थे (खण्ड ८, पृष्ठ २१३-१४ और २२९-३१) और साम्राज्य-सरकारने जिसकी अनुमति नहीं दी थी (खण्ड ९, पृष्ठ ४२०)।

३. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ १८२-८३ और ४२५-२६।

गिरमिटिया प्रथा अपने आपमें बुरी है और गुलामी प्रथासे बहुत-कुछ मिलती-जुलती है। हमें पूर्ण विश्वास है कि ब्रिटिश भारतीयोंको दक्षिण आफ्रिका-भरमें जो कष्ट झेलने पड़े हैं, उनमें से अधिकांश, एक बड़ी सीमा तक, भारतसे गिरमिटिया मजदूरोंको लाकर दक्षिण आफ्रिकाकी भारतीय जनसंख्यामें कृत्रिम रूपसे वृद्धि कर देनेके कारण हैं। हमारा सादर निवेदन है कि गिरमिटकी अवधि पूरी हो जानेपर भारतीय स्त्री और पुरुष मजदूरोंसे ही नहीं उनके बच्चोंसे भी जो तीन पौंड प्रति वर्ष कर वसूल किया जाता है वह बड़ा क्रूर और अत्याचारपूर्ण है। और जब भारतसे गिरमिटिया मजदूरोंका कतई भेजा जाना बन्द किया जानेवाला है तब तो इस प्रकारके करका कोई औचित्य ही नहीं रह जाता। इस करारोपणके कारण पुरुषोंपर अत्याचार ढाये गये हैं, स्त्रियोंकी लाजपर आँच आई है और कई भारतीय युवकोंकी जिन्दगियाँ बरबाद हो चुकी हैं। हमारा विनम्र मत है कि मानवता और ब्रिटिश साम्राज्य दोनों ही के हितकी दृष्टिसे इस करको बिलकुल हटा दिया जाना चाहिए। यहीं हम यह भी कह देना चाहते हैं कि कर थोपनेवाले अधिनियममें थोड़ा संशोधन करके स्त्रियोंके बारेमें जो थोड़ी-बहुत राहत देनेका मंशा था वह भी लगभग सर्वथा विफल हो गया है।

उपसंहार

८. अन्तमें, हमारी प्रार्थना है कि सम्राट्की सरकार इस अभ्यावेदनमें उल्लिखित विषयोंपर यथायोग्य विचार करे और जाति, रंग और धर्मके भेदभावसे परे समानतापूर्ण व्यवहारके बारेमें समय-समयपर मन्त्रियों द्वारा की गई घोषणाओंके अनुसार, संघमें ब्रिटिश भारतीयोंको न्याय और समानताके सन्तोषजनक आधारपर, प्रतिष्ठा दे।

दाउद मुहम्मद
दादा उस्मान
मुहम्मद कासिम आँगलिया

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-५-१९११

६१. पत्र: मगनलाल गांधीको

वैशाख वदी २ [मई १५, १९११][1]

चि० मगनलाल,

इसके साथ छगनलालके पत्र भेज रहा हूँ। हरिलालके मामलेने बहुतोंको विकल कर दिया है।[2] तुम्हारे मनमें भी अनेक प्रकारकी भावनाएँ उठती होंगी, यह मैं समझ सकता हूँ। लेकिन इतना विचार करना: यदि हरिलाल या मणिलाल या बा को तुम्हारे प्रति असन्तोष हो, अथवा वे तुमपर ताने कसें और इस कारण तुम यहाँसे चले जाना चाहो, तो ऐसा कहा जायेगा कि तुमने अपनेको हमसे अलग माना; और तुम्हारे वैसा करनेपर उनके प्रति और तुम्हारे प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेमें मुझे दिक्कत हो सकती है। यदि तुम्हारी यह धारणा हो कि खुशालभाई छगनलालके प्रति ज्यादा स्नेह रखते हैं, अथवा यह सच भी हो कि वे उसके प्रति ज्यादा स्नेह रखते हैं, तो क्या इस कारण तुम्हें यहाँसे चले जाना चाहिए? और यदि ऐसा लगे कि वे तुम्हारे प्रति ज्यादा स्नेह रखते हैं, तो भी क्या यह उचित होगा कि तुम चले जाओ और इस प्रकार छगनलालका अपकार करो?

तुम्हारे चले जानेसे हरिलाल और मणिलालका अकल्याण ही हो सकता है। हम लोग एक महान प्रयत्नमें लगे हुए हैं। तत्वज्ञानका अनुसंधान कर रहे हैं। यह नहीं कि किसी नई वस्तुकी खोज की जा रही है। हम प्रयोग इस बातका कर रहे हैं कि जो मनुष्य ज्ञानको आत्मसात् करना चाहता है, उसका आचार-व्यवहार कैसा होना चाहिए। बरसोंकी लगी दीमक साफ करनी है। इसमें विघ्न तो आने ही हैं। इन सब विघ्नोंको ईश्वर दूर करेगा ही, क्योंकि हमारी वृत्ति शुद्ध है। इस समय तुम्हारा कर्तव्य मनमें किसी भी प्रकारका उद्वेग पैदा न होने देना और जो-कुछ रहा हो, उसे तटस्थ वृत्तिसे देखते रहनेका है। जिम्मेदारी सिर्फ मेरी है। गलत कदम उठानेका दोष मेरा ही माना जायेगा। यह सम्भव है कि उसके कारण कुछ कालके लिए तुम भी संकटके भागी बनो। किन्तु दोषके फलका भोक्ता तो मैं ही होऊँगा। तुम मेरे ऊपर विश्वास रखकर काम करते रहोगे, तो उसमें तुम्हारा अकल्याण कदापि न होगा।

१. हरिलाल गांधीके आश्रम छोड़कर चले जानेका वाकया सन् १९११ में हुआ था। उस वर्ष वैशाख बदी २ को मई महीनेकी १५ तारीख थी।

२. देखिए "पत्र: डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ ६४-६५ और "पत्र मगनलाल गांधीको", पृष्ठ ७५-७६।

हरिलाल सुबह वापस आया। वह जान-बूझकर कोई उलटा कदम नहीं उठायेगा, ऐसा मैं मानता रहा हूँ और अब इस बातको और ज्यादा मानता हूँ। देखें, अब वह आगे क्या करता है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५०८५) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

६२. पत्र : गृह-मन्त्रीके कार्यवाहक निजी सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
मई १८, १९११

कार्यवाहक निजी सचिव,
गृहमन्त्री

प्रिय महोदय,

एशियाई समस्याके अस्थायी समाधानके सम्बन्धमें जनरल स्मट्सके सम्मुख निम्नलिखित बातें प्रस्तुत करनेकी कृपा करें।

जबतक जनरल स्मट्ससे मेरे पिछले मासकी २९ तारीखके पत्रका[1] उत्तर प्राप्त नहीं हो जाता, तबतक सत्याग्रहियोंको दुविधामें रहना होगा। उन्होंने अपने-अपने धंधे फिरसे शुरू किये हैं। जोज़ेफ रायप्पन अभी जोहानिसबर्गमें जनरल स्मट्सके उत्तरकी राह देख रहे हैं और इसी प्रकार अन्य सत्याग्रही भी निठल्ले बैठे हैं। जिन्होंने जानबूझकर अपना काम बन्द कर दिया था, वे अभीतक उसी अवस्थामें हैं। जैसा कि जनरल स्मट्सको विदित है, यद्यपि समझौता एक प्रकारसे बिलकुल सम्पन्न हो चुका है, किन्तु सत्याग्रही कैदी अभीतक जेलमें हैं।

और अभीतक हम लन्दन तथा भारतमें मित्रोंको यह सूचना नहीं दे पाये हैं कि समझौता वास्तवमें सम्पन्न हो चुका है। साम्राज्य-सम्मेलन[2] निकट आ रहा है, इसलिए हम इंग्लैंडके मित्रोंको निश्चित सूचना देनेके लिए व्यग्र हैं। अतः प्रार्थना है कि इस पत्रका उत्तर जल्दी ही देनेकी कृपा की जाये। क्या आप कल टेलीफोनसे कोई निश्चित जानकारी दे सकेंगे?

आपका विश्वस्त
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखे गये अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५५३२) की फोटो-नकल तथा २७-५-१९११ के 'इंडियन ओपिनियन' से।

१. देखिए "पत्र : ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ४७-५०। गृहमन्त्रीके कार्यवाहक सचिवने गांधीजीके इस पत्र और बादके मई ४ के एक पत्र (पृष्ठ ५८-६०) के दो उत्तर भेजे थे : पहले मई १९ को एक लम्बा पत्र (परिशिष्ट ५) भेजा और उसके बाद मई २० को एक तार (परिशिष्ट ६) भेजा।

२. सम्मेलन मई २२ को होनेवाला था; देखिए "पत्र : एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ २७।

६३. पत्र : मगनलाल गांधीको

वैशाख वदी ५ [मई १८, १९११][1]

चि० मगनलाल,

ठक्करके विषयमें तुम्हारा पत्र मैंने उसे भेज दिया है। तुम्हारे मन मिलते नहीं हैं, इसलिए ऐसा होता रहता है। ठक्करका स्वभाव वहमी है, यह तो हम जानते ही हैं।

"गुलीवर्स ट्रैवल्स" में आधुनिक सभ्यताका, व्यंग्यात्मक शैलीमें, बहुत ही सुन्दर खण्डन किया गया है; यह पुस्तक बार-बार पढ़ने लायक है। यह पुस्तक अंग्रेजीमें बहुत प्रसिद्ध है। यह इतनी सरल है कि बालक भी आनन्दपूर्वक पढ़ सकते हैं और ज्ञानी भी उसके गूढ़ार्थका मनन करते हुए उसमें गोता लगा सकते हैं। लिलीपुटमें गुलीवर जितना ऊपर चढ़ा था, बॉबडिंगनेगमें उसे उतना ही नीचा देखना पड़ा। और लिलीपुटमें भी बौने लोगोंका वर्णन करते हुए उसने कहा है कि उनकी कुछ शक्तियाँ उसकी अपनी, यानी साधारण मनुष्योंकी, शक्तियोंकी अपेक्षा ज्यादा बढ़ी-चढ़ी हैं।

अब तुम कारपेन्टरकी 'सभ्यता, उसका निदान और चिकित्सा' ('सिविलिज़ेशन : इट्स कॉज़ेज ऐंड क्योर') पुस्तक पढ़ना। उसे मैं कल भेजूँगा। अंग्रेजीके अधूरे ज्ञानके कारण छगनलालको कठिनाई हुई, यह ठीक है। किन्तु जिस विषयपर हम लिखना या बोलना चाहते हैं उसका ज्ञान हो जाये, तो भाषा बादमें सुलभ हो जाती है। अंग्रेजीकी तुम्हारी कमी तुम्हारे इंग्लैंड गये बिना पूरी हो ही नहीं सकती। मैं देखता हूँ कि छगनलालको वहाँ उसके स्वल्पकालिक प्रवाससे भी काफी लाभ हुआ है और फिर, उसे तो बीमारीने भी परेशान कर रखा था, इसलिए कुछ अधिक बाधा रही। छगनलालने जो अनुभव प्राप्त किया है, वह हमारे बड़े कामका होगा। आशा है कि मैं अब कुछ ही दिनोंमें वहाँ पहुँच जाऊँगा, आना तो जूनके आरम्भमें है। स्मट्सका उत्तर आनेपर अधिक निश्चित रूपसे लिख सकूँगा। उत्तर आजकलमें ही आनेवाला है।

हरिलाल चला गया, यह ठीक ही हुआ है। उसका मन बहुत अव्यवस्थित था। उसने मुझे आश्वस्त किया है कि फीनिक्सके विषयमें मैंने जो-कुछ किया है,[2] उसके प्रति उसे तनिक भी रोष नहीं है। इसी प्रकार तुम सब लोगोंके प्रति भी उसके मनमें कोई मैल नहीं है। उसका क्रोध तो असलमें मेरे ऊपर था। अपने मनका यह सारा गुबार उसने सोमवारकी शामको निकाला। उसका खयाल है कि मैंने चारों लड़कोंको बहुत दबाया है। उनकी इच्छा किसी भी दिन पूरी नहीं की।

१. पत्रमें श्री हरिलाल गांधीके घर छोड़कर भारत चले जानेका उल्लेख है। यह बात सन् १९११की है। उस वर्ष वैशाख वदी ५ को मई महीनेकी १८ तारीख पड़ी थी।

२. देखिए "पत्र ५० ई० छोटाभाईको", पृष्ठ ६०।

उनको नगण्य माना और अनेक बार उनके प्रति निष्ठुर हो गया हूँ। ये सारे आरोप उसने मेरे ऊपर बहुत विनयपूर्वक लगाये और उन्हें लगाते हुए वह बहुत सकुचाया भी। उसके मनमें पैसेका कोई खयाल नहीं है। उसके सारे आरोप मेरे व्यवहारके ही खिलाफ थे। दूसरे पिताओंकी तरह मैंने उनकी सराहना नहीं की, उनको प्रोत्साहन नहीं दिया और उनके लिए खास कुछ भी नहीं किया। बल्कि मैंने उन्हें और बा को हमेशा पीछे रखा। यह सारा गुबार निकालनेके बाद उसका मन बहुत शान्त हो गया है, ऐसा मुझे लगा। मैंने उसे समझाया कि उसका इस प्रकार सोचना सही नहीं है। अपनी कुछ गलतियाँ तो वह देख भी सका। बाकी गलतियाँ अधिक विचार करने-पर ही दूर कर सकेगा। फिलहाल तो वह शान्त मनसे गया है और जिस विषयमें मुझे [उससे] असन्तोष है, उस विषयमें ज्ञान प्राप्त करनेका उसने संकल्प किया है। संस्कृतका अध्ययन करनेकी उसकी बड़ी इच्छा है। हमारी भाषा गुजराती है, इसलिए उसकी शिक्षा मुख्यत: गुजरातमें ही होनी चाहिए, इस विचारसे मैंने हरिलालको अहमदाबादमें रहनेकी सलाह दी है। मेरा खयाल है कि वह वैसा ही करेगा। फिर भी मैंने उसे स्वतन्त्रता दी है। मुझे लगता है कि इसका परिणाम ठीक ही होगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५०८७) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

६४. पत्र: मगनलाल गांधीको

सोमवार [मई १८, १९११के बाद][१]

चि० मगनलाल,

छगनलालका पत्र तथा अन्य कागज भेज रहा हूँ। मुझे उसके पत्रकी एक नकल डॉ० मेहताने भी भेजी थी। तुम व्यर्थ ही अंग्रेजी भाषाके ज्ञानकी कमीको लेकर उदास रहा करते हो। यह भाषा कुछ अपनी नहीं है। यथासम्भव अच्छी तरह उसमें अपने विचार प्रकट कर देना काफी है। यह तुम्हारा हौसला बढ़ानेके विचारसे लिख रहा हूँ, न कि इसलिए कि तुम उसमें जितनी निपुणता प्राप्त कर सकते हो, उतनी प्राप्त न करो। वैसी निपुणता प्राप्त करनेके लिए और विलायतके वातावरणका अनुभव

१. श्रीमती वॉगल्ने एक बाजार सन् १९१०में लगाया था और दूसरा सन् १९११में। किन्तु, हरिलाल गांधीके उल्लेखसे जान पड़ता है कि यह पत्र सन् १९११में ही लिखा गया था; क्योंकि वे उसी वर्ष मई महीनेकी १५ और १८ तारीखके बीच पितृ–गृह छोड़कर भारत चले गये थे (देखिए मई १५ और मई १८ को मगनलाल गांधीके नाम लिखे पत्र, पृष्ठ ७३-७४ और पिछला शीर्षक)। फिर, इसमें मगनलाल गांधीके अंग्रेजी-विषयक ज्ञानका भी उल्लेख है और इस बातका जिक्र उनके नाम लिखे पिछले शीर्षकमें भी है। इन सबसे जान पड़ता है कि यह पत्र उक्त पत्र, यानी १८ मईको लिखे पत्रके आसपास ही लिखा गया था।

प्राप्त करनेके लिए ही तुम्हें वहाँ जाना है। इसके सिवा कोई और बात नहीं है। तुम्हारी तैयारी पूरी होते ही तुम्हें भेज देंगे।

मणिलालके नाम लिखा हुआ मेरा पत्र[1] तुम पढ़ोगे ही, इसलिए हरिलालके बारेमें ज्यादा नहीं लिखता। हरिलाल छगन साथके पत्रमें क्या कहता है?

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

सन्तोक तथा अनीको श्रीमती बॉंगलकी बाजारके[2] लिए कुछ-न-कुछ सीकर भेजना है, यह बात याद रखना।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५०९०) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

६५. पत्र : गृह-मन्त्रीको[3]

जोहानिसबर्ग
मई १९, १९११

गृहमन्त्री,
प्रिटोरिया

महोदय,

मुझे आपका आजकी तारीखका पत्र[4] प्राप्त हुआ।

यदि आप मेरे इसी चौथी तारीखके[5] पत्रको पुन: पढ़ेंगे तो आप देखेंगे कि उसमें उल्लिखित १८० सत्याग्रहियोंकी पात्रता वैसी सीमित नहीं है, जैसी आपने अपने पत्रके अनुच्छेद 'ग' में बताई है। आपने जिस वर्गका उल्लेख किया है, उसके अतिरिक्त इस संख्या (१८०) में वे लोग[6] भी सम्मिलित हैं जो स्वेच्छया प्रणाली या किसी भी एशियाई कानूनके अन्तर्गत कभी प्रार्थनापत्र नहीं दे सके थे। समाज तीन शिक्षित मुसलमानोंके सम्बन्धमें दी गई रियायतके लिए आभारी है।

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. इसका उद्घाटन १५ नवम्बर, १९११को विलियम हॉस्केनने किया था।
३. पत्रका उत्तर (एस० एन० ५५३६) तार द्वारा प्राप्त हुआ था; देखिए परिशिष्ट ६।
४. देखिए परिशिष्ट ५।
५. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ५८-६०।
६. परिशिष्ट ६ में दिये गये उत्तरसे स्पष्ट है कि ये वे व्यक्ति हैं जिन्हें बोअर युद्धके पहले ३ वर्षके निवासके आधारपर अधिवास-सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हो चुके थे। अधिवास-सम्बन्धी यह अधिकार ही १९०८ के संघर्षका एक मुख्य प्रश्न था और स्मट्सने आगे चल कर इसे मान भी लिया था। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २८१-८३, २९७-९९, ३३४-३७, ३५५-५७ और ३९७-९८।

मेरे गत मासकी २९ तारीखके पत्रमें[१] अस्थायी समझौतेकी जो व्याख्या की गई थी, उसका आपके पत्रमें कोई खण्डन नहीं है; इससे मैं यह समझ रहा हूँ कि मन्त्रीने उसे पुष्टि दे दी है।

जिन लोगोंको जाली प्रमाणपत्र रखने या काममें लानेके अपराधमें सजाएँ दी गई हैं उनकी रिहाईकी कोई प्रार्थना कभी नहीं की गई। ऐसे लोगोंके सत्याग्रही होनेका दावा भी कभी नहीं किया गया।

चूंकि संघ द्वारा इंग्लैंड और भारतके मित्रोंको स्थितिके सम्बन्धमें तारसे सूचना दी जानी है, इसलिए मैं इस पत्रका उत्तर तारसे दिये जानेकी प्रार्थना करता हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें संशोधित रिचकी लिखावटमें प्राप्त अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५५३४) की फोटो नकल तथा २७-५-१९११ के 'इंडियन ओपिनियन'से।

६६. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

जोहानिसबर्ग
मई १९, १९११

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

अब जो निष्क्रिय हो गया है, उस प्रवासी अधिनियमके सम्बन्धमें पूछताछ करते हुए आपका तार मिला था। मैं निश्चयपूर्वक नहीं जानता कि अब उसके बाद आप मुझसे यह अपेक्षा करते हैं अथवा नहीं कि मैं आपको नियमित रूपसे पत्र लिखता रहूँ। मैं अपनी आँखों देख चुका हूँ कि आप अन्य बहुत-से कामोंमें व्यस्त रहते हैं, इसीलिए मेरी सदा कोशिश रही है कि पत्र लिखकर आपको परेशान न करूँ। कलकत्तेमें जब मुझे आपके साथ ठहरनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था,[२] उस समय भी आप अत्यधिक व्यस्त रहा करते थे। श्री पोलकने मुझे यह अद्यतन जानकारी दी है कि पिछली बार जब वे आपसे मिले थे उस समय आप उससे भी कहीं ज्यादा व्यस्त थे। तथापि मुझे लगता है कि समय-समयपर यहाँकी स्थितिसे आपको अवगत कराना जरूरी है। यद्यपि मैं स्वाभाविक रूपसे यह मानता हूँ कि पिछले चार वर्षोंके सत्याग्रहके बिना कदापि कुछ नहीं हो सकता था, फिर भी मेरा निश्चित मत है कि

१. इस पत्रका दूसरा साधन-सूत्र गांधीजीकी फाइलमें प्राप्त मसविदा (एस० एन० ५५३४) है। उसमें '४ तारीख' का उल्लेख है। यह तारीख बादमें फोनपर ठीक करा दी गई थी। देखिए परिशिष्ट ६।

२. सन् १९०१ में, जब श्री गोखले कलकत्तेमें रह रहे थे।

आपके नेतृत्वमें भारतकी जनता द्वारा किये गये प्रयासों और श्री पोलक द्वारा वहाँ तथा श्री रिच द्वारा इंग्लैंडमें किये गये अद्भुत कार्यके परिणामस्वरूप हमारे कष्टोंका अन्त ज्यादा शीघ्रतासे हुआ है। लेकिन हमें एक ऐसे हठीले शत्रुसे लड़ना पड़ रहा है कि निरन्तर जागरूकता नितान्त आवश्यक है। मैं इस तथ्यसे अनभिज्ञ नहीं हूँ कि प्रवासी कानूनमें सैद्धांतिक समानता प्राप्त कर लेनेसे हमारी वास्तविक दशामें कोई प्रकट अन्तर नहीं पड़ता। किन्तु संघर्षने हमें आश्चर्यजनक रूपसे एकताके सूत्रमें बांध दिया है, और निःसन्देह उसके कारण ही हमारी आवाज सम्मानपूर्वक सुनी जाने लगी है। समाजमें आत्मविश्वासकी भावना उत्पन्न हुई है। इसलिए हमें अब जाकर ही यह फुरसत मिली है कि हम अपना ध्यान उन वर्तमान कानूनी निर्योग्यताओं-पर केन्द्रित करें, जिनसे हमारे राष्ट्रीय सम्मानपर उतना असर नहीं पड़ता जितना प्रवासियोंकी भौतिक स्थितिपर। उदाहरणार्थ, ट्रान्सवालमें अचल सम्पत्ति रखनेपर जो निषेध है उसे हटाया जाना चाहिए। ट्रामगाड़ियोंके उपयोगकी निर्योग्यता तो इतनी क्षोभकारी है कि उसे बिलकुल सहन नहीं किया जा सकता। यदि हम चाहते हैं कि भारतीय व्यापारी निर्बाध रूपसे अपनी दूकानों और व्यापारके स्वामी बने रहें तो हाल ही में पास किये गये ट्रान्सवालके स्वर्ण कानूनके एक अस्पष्ट खण्डका[1] प्रयोग करके जो दुष्टतापूर्ण प्रयत्न किये जा रहे हैं, उन्हें हर मूल्यपर विफल करना जरूरी है। यह तो रहा ट्रान्सवालके बारेमें। नेटालमें स्वतंत्र गिरमिटिया भारतीयों, उनकी पत्नियों और उनके नन्हें बच्चोंसे, वह लड़की हो या लड़का, अमानुषिक वार्षिक कर वसूल किया जाता है। यह एक ऐसा भार है जो उक्त करकी जरा भी जानकारी रखने-वाले प्रत्येक भारतीयकी आत्माको कष्ट देगा। नेटालके विक्रेता परवाना अधिनियममें अभी हालमें थोड़ा-बहुत संशोधन किया गया है। लेकिन इसके बावजूद यह कानून उस उमड़ी घटाकी तरह है जो समाजके सरपर किसी भी समय फट पड़ सकती है। केपमें भी इसी प्रकारका कानून भारतीय व्यापारियोंके अस्तित्वके लिए खतरा बना हुआ है। केपके प्रवासी कानूनकी एक धाराके अनुसार ही बसे हुए भारतीय अधिवासियोंके लिए अनिवार्य है कि वे केपसे अपनी अनुपस्थितिकी दशामें एक अनु-मतिपत्र साथ रखें। इस नियमका उल्लंघन करनेपर अधिवासका अधिकार रद होनेकी व्यवस्था है। यह अनुमतिपत्र वास्तवमें अनुपस्थितिकी अनुमति देनेवाला एक दस्तावेज है। वस्तुतः इस धाराके कारण उनके अधिवासके अधिकार मजाक बनकर रह जाते हैं। आपसे यह आशा करना तो ज्यादती होगी कि आप इन सब प्रश्नोंपर उपनिवेश-मन्त्रीको दिये गये अथवा दिये जानेवाले प्रार्थनापत्रोंको[2] पढ़ेंगे। पर आप अपने किसी

१. खण्ड १३०, जिसके अन्तर्गत यूरोपीयोंको हिदायत की गई थी कि वे घोषित क्षेत्रोंमें रंगदार लोगोंको बाड़ोंके शिकमी-पट्टे न दें। सन् १९०८ में, जब यह कानून विधेयक रूपमें ही था, गांधीजीने इसके विरुद्ध ट्रान्सवाल सरकारको प्रार्थनापत्र (देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १९३-९४, २८६-८८) भेजा था। किन्तु, तब उन्हें इसी खण्डसे किसी प्रकारके अनिष्टकी आशंका नहीं थी और उन्होंने उक्त विधेयककी उन्हीं धाराओंका विरोध किया था जिनका एशियाइयोंपर प्रत्यक्ष असर पड़ता था।

२. देखिए "प्रार्थनापत्र: उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ ५०-५५ और "अभ्यावेदन: उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ ६८-७२।

कार्यकर्तासे उन्हें पढ़नेको कहनेकी कृपा करें और फिर जो कदम उठाना उचित समझें, उठायें। ये प्रार्थनापत्र 'इंडियन ओपिनियन'में मिलेंगे।

लगभग नवम्बरके आरम्भमें श्री और श्रीमती पोलक भारत पहुँच जायेंगे, और उस समय श्री पोलक आपको आवश्यक सहायता दे सकेंगे। इसमें तो अब सन्देह नहीं कि अस्थायी समझौता हो जायेगा, फिर भी हम जनरल स्मट्सके अन्तिम उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। जनरल स्मट्सका वचन अगले वर्ष पूरा न किये जानेकी सम्भावनाको ध्यानमें रखते हुए सभी सत्याग्रहियोंसे तैयार रहनेके लिए कह दिया गया है। टॉल्स्टॉय फार्म इसीलिए कायम रखा जा रहा है, लेकिन सत्याग्रह कोषसे यथासम्भव कमसे-कम खर्च किया जाये, ऐसी कोशिश है। मैं अप्रैलके अन्ततक किये गये खर्चका लेखा तैयार कर रहा हूँ, जिसे मैं स्थितिका सिंहावलोकन करते हुए श्री रतन टाटाके नाम अपने खुले पत्रमें दूँगा।[1] श्री पोलकके दौरेका व्यय स्थानीय तौरपर जमा किये जा रहे चन्देसे पूरा किया जा रहा है।

आशा है आप स्वस्थ होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीकी लिखावटमें संशोधित तथा उनके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ३८०२) की फोटो-नकलसे।

६७. पत्र : नॉक्सको

[जोहानिसबर्ग]
मई १९, १९११

प्रिय श्री नॉक्स[2],

आपने 'इंडियन ओपिनियन'में प्रकाशित जो लेख भेजनेको कहा था, उसे न भेज पानेके लिए मैं आपसे क्षमा माँगता हूँ। जिन दिनों आपने टेलीफोन किया था उन्हीं दिनों मैंने 'इंडियन ओपिनियन'की फाइलमें उसे तलाश करवाया; किन्तु वह लेख नहीं मिला। चूँकि मेरे पास अद्यावधि कोई विषय-सूची नहीं है, इसलिए उसको ढूँढ़ना कुछ कठिन है। मैंने आपसे टेलीफोनपर सम्पर्क करनेका प्रयत्न किया था, किन्तु वह नहीं हो सका। उसके बाद मुझे इसका ध्यान नहीं रहा। अब आपने फिर याद दिलाई है। जब श्री पोलक लन्दन जाते हुए यहाँ दो दिन ठहरे थे तब मैंने उनसे पूछा था कि क्या उन्हें उक्त समीक्षाके प्रकाशनकी तारीख याद है। उन्होंने

१. देखिए "सार्वजनिक पत्र : रतन जे० टाटाको", पृष्ठ २४५–४९।

२. दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके आन्दोलनके प्रति सहानुभूति रखनेवाले एक यूरोपीय।

मुझे अन्दाजसे एक तारीख बताई; जो सही नहीं निकली। किन्तु उन्होंने यह भी कहा था कि कदाचित् संलग्न सामग्रीसे[1] आपका काम निकल सके; यह श्री कैलेन-बैककी है। काम हो जानेपर कृपा करके इसे मेरे पास वापस भेज दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी प्रति (एस० एन० ५५३५) की फोटो-नकलसे।

६८. एक अच्छा उद्देश्य

पाठकोंका ध्यान हम अपने ट्रान्सवाल-सम्बन्धी टिप्पणियोंके साथ छपे एक संक्षिप्त विवरणकी ओर दिलाना चाहते हैं। इसमें हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी उस बैठकका[2] जिक्र था जो लन्दनमें एक मस्जिद बनाने तथा अलीगढ़में एक मुस्लिम विश्व-विद्यालयकी स्थापनाके लिए चन्दा करनेके सिलसिलेमें बुलाई गई थी। कहनेकी जरूरत नहीं कि दोनों कार्य स्तुत्य हैं। लन्दनमें एक मस्जिदका निर्माण करना एक पुनीत कर्त्तव्य है, जिसके पालनमें विलम्ब हो गया है। और अलीगढ़में विश्वविद्यालयकी स्थापना, यदि उसका संचालन उचित रीतिसे किया गया तो, भारतकी जनताके दो बड़े भागोंकी एकतामें मददगार ही हो सकती है।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २०–५–१९११

६९. परवानोंकी कलंक-कथा

गत ६ तारीखके अंकमें हमने व्यापारिक परवानोंसे सम्बन्धित एक अपीलका विवरण उद्धृत किया था। यह अपील "नेटाल इंडियन ट्रेडर्स लिमिटेड" की[3] ओरसे डर्बनकी टाउन कौंसिलमें दायर की गई थी। पाठकोंको विदित होगा कि यह संस्था

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. मई १४, १९११ को आयोजित।

३. परवाना अधिकारीने डी० के० पटेलके व्यापारिक परवानेको उक्त पेढ़ीके नाम चढ़ानेसे इनकार कर दिया था। उस पेढ़ीने परवाना-अधिकारीकी इस इनकारीके खिलाफ डर्बन नगर-परिषद्में अपील की। परवाना अधिकारीने अपने निर्णयका बचाव करते हुए कहा कि यह नीतियुक्त और एशियाई व्यापारियोंकी स्पर्धासे यूरोपीयोंको बचानेके लिए आवश्यक था। उसका तर्क यह था कि व्यक्ति-विशेषको दिये गये परवानेकी अवधि तो उसकी मृत्युके साथ समाप्त हो जायेगी, लेकिन किसी साझेकी पेढ़ीके परवानेके साथ ऐसी बात नहीं हो सकती, क्योंकि उसमें उत्तराधिकार बराबर कायम रहता है। परिषद्ने अधिकारीके निर्णयको जायज ठहराया। **इंडियन ओपिनियन, ६–५–१९११**

एक ज्वायंट स्टॉक कम्पनी है और इसके लगभग सभी सदस्य उपनिवेशमें जन्मे हुए भारतीय हैं। इनकी जन्मभूमि नेटाल है और भारत तो इनके लिए केवल कल्पनामें रहनेवाली वह भूमि है, जहाँसे उनके माता-पिता यहाँ आये थे। यह कारोबार इस तरहके विशिष्ट अधिकारी व्यक्तियोंके समूहका पहला ही प्रयास है। कम्पनीकी पूँजी नाम-मात्रकी, ६,००० पौंड है और उसके ४८० पंजीकृत साझेदार हैं। इस नई संस्थाका भविष्य क्या है, यह हम नहीं जानते। परन्तु मोटे तौरपर कहा जा सकता है कि उसका भविष्य मुख्यतः उसके सदस्योंकी सम्मिलित योग्यता, उत्साह और सबसे अधिक उनकी दिलचस्पीपर निर्भर करेगा। जो भी हो, आज तो डर्बन नगरकी हद तक परवाना-अधिकारीने, जहाँतक उससे हो सकता था, कम्पनी द्वारा अपनी सफलताके लिए किये गये प्रयत्नोंपर रोक लगा दी है। उसने एक [अन्य नामपर] चालू परवानेको इस कम्पनीके नाम जारी करनेसे इनकार कर दिया है। यहाँ ब्रिटिश भारतीयोंके नामोंपर पहलेसे जारी परवानोंकी संख्यामें वृद्धि होनेका तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। इस अधिकारीने अपनी इनकारी प्रकट करते हुए जो कारण दिये हैं वे इतने असंगत, अन्यायपूर्ण और हृदयहीन हैं कि यदि उपर्युक्त विवरणमें छप जानेपर भी हम उन्हें फिर यहाँ दुहरायें तो अनुचित न होगा। परवाना-अधिकारी लिखता है:

> "मेरी रायमें किसी चालू परवानेको एक ऐसी व्यावसायिक संस्थाके नामपर बदल लेना मूर्खता होगी जिसके बहुत-से सदस्य हैं। कारण, व्यक्तिगत मालिकीकी पेढ़ी तो मालिककी मृत्यु होनेपर या उसके अवकाश-ग्रहण करनेपर बन्द हो सकती है, परन्तु इन व्यापारियोंकी कम्पनीके वारिस तो सर्वदा ही बने रहेंगे; क्योंकि वे तो आते-जाते रह सकते हैं। और उनमें से ज्यादातर सदस्योंके हिस्से भी बहुत छोटे हैं।"

हमारी समझमें नहीं आता कि किसी पेढ़ीके वारिसके हमेशा बने रहनेमें किसी परवाना अधिकारीको आपत्तिकी क्या बात है? परन्तु बेशक यहाँपर उक्त अधिकारी श्री मोलीनोका आशय केवल भारतीय व्यापारसे है, जिसे अपनी शक्ति-भर जब भी मौका लगे काटना-छाँटना, उन्होंने अपना कर्त्तव्य मान लिया है। उन्होंने एक यह सिद्धान्त भी प्रतिपादित किया है कि किसी वर्तमान मालिकके मरने या विरत होनेपर उस कारोबारको ही समाप्त कर देना चाहिए। इस तरह वे कारोबारको जबरदस्ती बेच देने और ऐसी पेढ़ियोंको भारी नुकसान उठानेपर मजबूर करनेकी बात सोच रहे हैं। इस अधिकारीने परिषदमें भाषण भी दिया। किसी परवाना-अधिकारीका इस प्रकार पक्ष लेकर बोलना और उसे इस तरह बोलने देना एक अजीब बात है। इस भाषणमें श्री मोलीनोने आत्मरक्षा — अर्थात् डर्बनमें रहनेवाले यूरोपीयोंकी आत्मरक्षा — की दलील देकर अपने इस निरंकुश कृत्यका औचित्य सिद्ध करनेकी कोशिश की। इस अति भ्रामक सिद्धांतका कुछ भी अर्थ क्यों न हो, परवाना अधिकारीने यहाँ इस तथ्यकी सर्वथा उपेक्षा कर दी कि उक्त कम्पनीके अधिकांश ग्राहक आखिरकार भारतीय ही हैं। मैं तो यही आशा कर सकता हूँ कि इस कम्पनीके ४८० सदस्य इस संस्थाके जीवनके प्रारम्भमें ही इसका गला घोंटे जानेके यत्नको चुपचाप सहन नहीं करेंगे; और कम्पनीका हर

सदस्य इसे न केवल अपने व्यक्तिगत अधिकारोंपर एक बुजदिल तरीकेसे हाथ डालना समझेगा, बल्कि संघमें बसे ब्रिटिश नागरिककी हैसियतसे अपने सम्मानपर एक कायरतापूर्ण आक्रमण मानकर उचित प्रतिकार करेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–५–१९११

७०. पत्र : गृह-मन्त्रीको[1]

मई २०, १९११

गृह-मन्त्री
प्रिटोरिया

महोदय,

अपने इसी महीनेकी १९ तारीखके पत्रके[2] उत्तरमें आपका उसी दिनका तार मिला। तार द्वारा जवाब दिये जानेकी मेरी प्रार्थनापर ध्यान देकर आपने जिस तत्परताके साथ बिलकुल स्पष्ट उत्तर दिया उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ।

मुझे संघने अस्थायी समझौतेकी स्वीकृति सूचित करने और उसके साथ ही यह कहनेका अधिकार भी दिया है कि गत २२ अप्रैलको श्री लेन और मेरे बीच पत्रोंका जो आदान-प्रदान हुआ था उसके बादके पत्र-व्यवहारसे यह नहीं समझना चाहिए कि मेरे उक्त [१९ तारीखके] पत्रमें पेश किये गये प्रस्तावोंसे हम किसी प्रकार भी पीछे हटे हैं।[3]

समझौतेके अन्तर्गत जो लोग राहतके अधिकारी होंगे उनकी सूची तैयार की जा रही है और जल्द ही भेज दी जायेगी।

जो सत्याग्रही अभीतक जेलमें हैं उनके नाम नीचे दिये जा रहे हैं: सी० एफ० जे० फ्रैंक, ली-कांग, लुक नन डिक्सन, हो लोव, साम यूँ, चांग-आह्-की, वो-किम, आह्-वी, इस्माइल इसाक और लुई बेंजामिन। ये फोर्ट और डीपक्लूफके जेलोंमें हैं। कृपया उनके छूटनेकी तारीखें सूचित करें, ताकि उनके लिए सवारीका प्रबन्ध किया जा सके।

मैं शिक्षित सत्याग्रहियोंको दिये जानेवाले अधिकार-पत्रका[4] प्रारूप भेजनेकी धृष्टता कर रहा हूँ। आप देखेंगे कि यहाँ हर प्रार्थीने अपना प्रार्थनापत्र स्वयं भरा है। इसीके

१. गृह-मन्त्रालयके कार्यवाहक सचिवने २६ मईके अपने उत्तरमें (एस० एन० ५५३९) कहा था कि मन्त्री महोदय "आपके पत्रमें दी गई सूची, और वो-किम तथा आह-वी के सम्बन्धमें टेलीफोनपर दुरुस्त की गई सूचनाके अनुसार, उल्लिखित एशियाइयोंको तुरन्त रिहा कर देनेके उद्देश्यसे न्याय मन्त्रीके साथ लिखा-पढ़ी कर रहे हैं।" उसमें यह भी कहा गया था कि "सचमुच हम यह मानकर ही चल रहे हैं कि अपने पंजीयन प्रमाणपत्र नष्ट कर देनेवाले भारतीयोंमें से कोई भी उनकी अपेक्षित प्रतिलिपियोंके लिए प्रार्थनापत्र नहीं देगा।"

२ और ३. देखिए "पत्र : गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ ७७-७८।

४. यह उपलब्ध नहीं है।

नीचे यदि सरकार तसदीक कर दे तो सम्बन्धित प्रार्थीको पर्याप्त संरक्षण मिल जायेगा। आवश्यक हो तो प्रार्थीकी हस्तलिपिमें प्रार्थनापत्रकी एक प्रतिलिपि विभाग-द्वारा अपने पास रख ली जाये।

अन्तमें, सवालको हल करनेमें मन्त्री महोदयने जो सुलहकुल रवैया अपनाया है मैं उसके लिए उन्हें संघकी ओरसे धन्यवाद देता हूँ; और आशा करता हूँ कि एशियाई समाजको जिस संघर्षकी इतनी कीमत चुकानी पड़ी है उसे फिर शुरू करनेका कभी कोई कारण उपस्थित नहीं होगा।

आपका,
मो० क० गांधी

हस्तलिखित अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५५३८) की फोटो-नकल तथा २७-५-१९११ के 'इंडियन ओपिनियन' से।

७१. वक्तव्य : प्रस्तावित शिष्टमण्डलके लिए

[मई २०, १९११ के बाद][१]

ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा जनरल स्मट्सके सामने
पेश किया जानेवाला वक्तव्य

शिष्टमण्डल उलझी हुई ब्रिटिश भारतीय समस्याके सम्बन्धमें जनरल स्मट्स और श्री गांधीके पत्र-व्यवहारमें[२] प्रस्तुत अस्थायी समझौतेका स्वागत करता है और जनरल स्मट्सको उनके उदार और मैत्रीपूर्ण रुखके लिए धन्यवाद देता है।

किन्तु शिष्टमण्डल जनरल स्मट्सका ध्यान निम्न लिखित बातोंकी ओर सादर आकर्षित करना चाहता है :

(१) यद्यपि शिष्टमण्डलको प्रसन्नता है कि इस समय ट्रान्सवालमें मौजूद उन छः या सात शिक्षित सत्याग्रहियोंको, जो अधिनियमके अन्तर्गत पंजीकृत नहीं किये जा सकते,

१. इस वक्तव्यमें उन भारतीयोंका प्रश्न उठाया गया है, जो युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें तीन वर्षसे कम रहे थे। अप्रैल १९११ की वार्ताके दौरान उनका मामला नहीं लिया गया था और गृह-मन्त्री द्वारा मई १९, १९११ और मई २०, १९११ को गांधीजीके नाम लिखे गये पत्रोंमें जो माँगें मान ली गई हैं, उनमें भी इसका हवाला नहीं है; देखिए परिशिष्ट ५ और ६। शायद उनके मामलेमें खास तौरपर पैरवीकी जरूरत थी और इसके लिए शिष्टमण्डल भेजनेका प्रस्ताव २० मईके बाद ही किया गया होगा। जो भी हो, हमारे पास ऐसा कोई प्रमाण नहीं कि गांधीजी या ब्रिटिश भारतीय संघके अन्य किसी पदाधिकारीने स्मट्ससे भेंट की या कोई भारतीय शिष्टमण्डल उनसे मिला। पर चूँकि गांधीजीके कागजातमें यह मसविदा मिला है और चूँकि भारतीयोंकी ओरसे स्वयं उन्होंने वार्ता चलाई थी इसलिए यह मान लेना अनुचित न होगा कि यह मसविदा उन्हींका तैयार किया हुआ है।

२. गृह-मन्त्रीके नाम गांधीजीके पत्रोंके लिए देखिए पृष्ठ ९-१०, १४-१५, ३०-३२, ३७-३८, ३९-४१, ४७-५०, ५८-६०, ७७-७८ और पिछला शीर्षक तथा गृह-मन्त्रीके पत्रोंके लिए देखिए परिशिष्ट १, २, ४, ५ और ६।

इस प्रान्तमें स्थायी निवासीके रूपमें रहने दिया जायेगा[1]; फिर भी उसका खयाल है कि ऐसी ही सुविधाएँ उन शिक्षित भारतीयोंको दी जानी चाहिए जो विश्वस्त मुनीमों या सहायकोंके रूपमें अपेक्षित हों। शिष्टमण्डलकी रायमें इसकी सख्त जरूरत है। अभी कुछ दिन पूर्व एक प्रतिष्ठित व्यापारी, श्री अमीर साहबको बीमारीके कारण अपनी अनुपस्थितिकी अवधिमें व्यवसायकी देख-रेख करनेके लिए एक सहायक बुलवा लेना आवश्यक हो गया था; किन्तु उन्हें इसकी अनुमति नहीं दी गई।

(२) सन् १९०८ के एशियाई अधिनियमके अनुसार ट्रान्सवालमें केवल वे ही लोग पुनः प्रवेश कर सकते हैं जो वहाँ युद्धसे पूर्व तीन वर्षका निवास सिद्ध कर दें। अब चूँकि सरकारने कृपापूर्वक यह सुविधा दे दी है कि जो सत्याग्रही युद्धसे पूर्व तीन वर्षका अपना निवास सिद्ध कर देंगे वे अधिनियम ३६ के अन्तर्गत अपने अधिकारोंका उपयोग कर सकते हैं, भले ही वे कानून द्वारा निर्धारित अवधिमें[2] प्रार्थनापत्र न दे सके हों, इसलिए शिष्टमण्डल अनुरोध करता है कि उन लोगोंके दावे भी मान लिये जायें जिन्हें युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें रहते हुए पूरे तीन वर्ष तो नहीं हो पाये थे किन्तु जिनके वहाँसे चले जानेका कारण लड़ाईका छिड़ जाना ही था। यह एक न्यायसंगत और अत्यन्त सराहनीय काम होगा।

टाइप किये हुए अंग्रजी मसविदे (एस० एन० ५५५७) की फोटो नकलसे।

७२. सत्याग्रहियोंको सूचना[3]

जोहानिसबर्ग
मई २२, १९११

निम्नलिखित श्रेणियोंके सत्याग्रहियोंसे साग्रह निवेदन है कि वे अवैतनिक मन्त्री, बॉक्स नं० ६५२२, जोहानिसबर्गके पतेपर अपने नाम तुरन्त भेज दें:

(क) जो युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें तीन वर्ष रह चुके हैं, परन्तु जो सत्याग्रहके कारण अपने पंजीयन प्रमाणपत्र प्राप्त नहीं कर सके हैं।

(ख) जो अन्य प्रकारसे पंजीयनकी पात्रता तो रखते हैं, परन्तु सत्याग्रहके कारण जिनका पंजीयन नहीं किया गया है।

सरकारके साथ जो अस्थायी समझौता हुआ है उसके अनुसार सरकार इन लोगोंको पंजीयनके लिए एशियाई-पंजीयकके नाम अर्जी भेजनेकी अनुमति दे देगी; बशर्ते कि

१. देखिए ई० एफ० सी० लेनके नाम गांधीजीके पत्र, पृष्ठ ३९-४० और ४८ तथा "पत्र: गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ ७७-७८ और परिशिष्ट ३ एवं ५।

२. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ४७-४८ और "पत्र: गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ ७७-७८ तथा परिशिष्ट ६।

३. अनुमान है, इसका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था।

अर्जी आगामी ३१ दिसम्बरसे पहले भेज दी जाये।[1] कानून द्वारा निर्धारित उनके निर्वासनकी अवधिकी समाप्ति इसमें किसी तरह बाधक नहीं होगी।

जिन्होंने सन् १९०८ के कानून ३६ या १९०७ के कानून २ के मातहत संघर्षके दौरान पंजीयनके लिए किसी भी प्रकारकी अर्जियाँ दी हैं और जिनकी अर्जियाँ नामंजूर हो चुकी हैं, उनसे आग्रह है कि वे अपने नाम न भेजें।

जिन लोगोंको उपयुक्त वर्गोंके ऐसे सत्याग्रहियोंकी जानकारी हो जो इस समय भारतमें हैं वे अपने मित्रोंको आगामी ३१ दिसम्बरसे पहले अपने पंजीयनके लिए आवश्यक कार्रवाई करनेके लिए अविलम्ब लिख भेजें।

नाम भेजनेवाले निम्नलिखित बातें दें:

(क) अपना पूरा नाम;

(ख) युद्ध-पूर्वके निवासकी अवधि या ऐसे ही दूसरे दावे;

(ग) जेलसे छूटनेका प्रमाणपत्र या अन्य कोई ऐसा प्रमाण जिससे उनका सत्याग्रही होना साबित हो।

(घ) अपने दावेका समर्थन करनेवाले कागजातपर आधारित या अन्य प्रकारके सभी सबूत;

(ङ) जिन्होंने सन् १९०८ में अपनी इच्छासे अर्जियाँ दी हों वे इसकी तफसीलें भेजें।

सुविधानुसार संघ ये प्रार्थनापत्र निःशुल्क तैयार करके पंजीयकके पास भेज देगा और इसके लिए कोई शुल्क नहीं लेगा। अगर जरूरी हुआ तो इसके बाद हरएक प्रार्थीको प्रार्थनापत्रका निर्णय होने तक की बाकी कार्रवाई अपने खर्चेसे और खुद ही करनी होगी। प्रार्थीको पंजीयकके फैसलेके विरुद्ध अपील करनेका सामान्य अधिकार होगा।

अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–५–१९११

१. समझौतेको जिस रूपमें सरकारने स्वीकार किया था, वह रूप परिशिष्ट ५ और ६ में दिया गया है। गांधीजीने भारतीय समाजकी ओरसे जो माँगें पेश की थीं उसके लिए देखिए लेनको लिखे गये पत्र, पृष्ठ ३९-४१, ४७-५० और ५८-६०।

७३. भेंट : रायटरके प्रतिनिधिको

जोहानिसबर्ग
मई २३, १९११

श्री गांधीने रायटरके प्रतिनिधिको भेंट देते हुए बताया कि समझौतेके[1] अनुसार अगले अधिवेशनमें १९०७ के एशियाई कानूनको रद कर दिया जायेगा और प्रवासके सम्बन्धमें कानूनी समानता फिरसे दे दी जायेगी। अनाक्रामक प्रतिरोध बन्द करनेके प्रतिदानके रूपमें सरकार दस सत्याग्रहियोंके, शिक्षाके आधारपर, ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके अधिकारको मान्यता दे रही है[2] और उन सत्याग्रहियोंके[3] निवासके अधिकारको वापस कर रही है, जिन्हें पहले यह अधिकार प्राप्त था। सरकार शीघ्र ही कैदमें पड़े सत्याग्रहियोंको भी छोड़ने जा रही है, और श्रीमती सोढाको वह क्षमादान दे देगी।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, २५–५–१९११

७४. पत्र : एशियाई-पंजीयकको[4]

मई २६, १९११

एशियाई-पंजीयक
प्रिटोरिया

महोदय,

मैं इसके साथ सेवामें उन ३८ चीनीयोंके नामोंकी सूची[5] भेज रहा हूँ जो समझौतेकी शर्तोंके अनुसार या और किसी विधि-सम्मत रूपसे पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र

१. देखिए "पत्र : गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ ७७-७८ और "आखिरकार", पृष्ठ ८९-९२ तथा परिशिष्ट ५ और ६ में वर्णित अस्थायी समझौता।

२. देखिए परिशिष्ट ४, ५ तथा ६।

३. सन् १९०८के सत्याग्रह संघर्षके दौरान ३० भारतीय तो निष्कासित करके भारत भेज दिये गये थे या स्वयं ही भारत चले गये थे। यहाँ तात्पर्य उन्हीं ३० लोगोंसे तथा कुछ ऐसे भारतीयोंसे है, जिन्होंने स्वेच्छया पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र दिये थे, लेकिन जिनके प्रार्थनापत्र नामंजूर हो गये थे। इस दूसरी श्रेणीके लोगोंको न्यायालयोंमें अपील करनेका अधिकार दिया गया था।

४. इस पत्रका मसविदा सम्भवतः गांधीजी द्वारा तैयार किया गया था, क्योंकि यह अगस्त २१, १९११ के जिस एक अन्य पत्र (देखिए पृष्ठ १४२-४३) के साथ उनके कागजोंमें मिला है; उसका विषय भी यही है और वह गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें है। उक्त पत्र एशियाई-पंजीयकके नाम है, किन्तु ये दोनों पत्र न तो **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित हुए और न इस बातका कोई प्रमाण मिलता है कि ये एशियाई-पंजीयकको भेजे गये थे। साधारणतया अधिकारियोंको भेजे गये पत्र **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित किये जाते थे।

५. यह उपलब्ध नहीं है।

देनेके अधिकारी हैं। आप देखेंगे कि इनमें केवल २६ नाम ऐसे हैं जो गृह-विभागके इसी १९ तारीखके पत्रकी[1] श्रेणी "ग" के अन्तर्गत आते हैं।

ग्यारह व्यक्ति ऐसे हैं जिनके पास शान्ति-रक्षा अनुमतिपत्र हैं और एक लड़का है जो अभी १६ वर्षका हुआ ही है और यहाँ अपने पिताके साथ है।

सूचीमें जिन २६ व्यक्तियोंका उल्लेख है उनमें से दो डेलागोआ-बेमें हैं।

तीन मुसलमानोंको[2] प्रमाणपत्र दिये जाने हैं; उसके लिए मुझे इन नामोंको पेश करनेका अधिकार दिया गया है: श्री काजी कालूमियाँ दादामियाँ, श्री इस्माइल ईसप और श्री रसूल सरफुद्दीन। अन्तिम व्यक्तिको छोड़कर शेष दोको अंग्रेजी शिक्षा नहीं मिली है। इनमें पहले व्यक्ति उर्दूके विद्वान हैं और पहले तथा दूसरे दोनों व्यक्ति सत्याग्रही हैं, किन्तु कदाचित् युद्धसे पहलेके तीन वर्ष ट्रान्सवालमें निवास-सम्वन्धी कानूनकी शर्तपर पूरे नहीं उतरते, यद्यपि ये दोनों ट्रान्सवालमें युद्धसे पूर्व निवास करते थे। श्री सरफुद्दीनको श्री रायप्पन और अन्य लोगोंके समान प्रमाणपत्र मिलेगा।

यदि आप मुझे यह वता दें कि इस पत्रमें वताये गये व्यक्ति अपने प्रार्थनापत्र कव दे सकेंगे तो मैं आपका आभारी होऊँगा। मैं समझता हूँ कि आप इन्हें जोहानिसवर्गमें प्रार्थनापत्र पेश करनेकी सुविधा देनेकी कृपा करेंगे। कृपया मुझे दो दिन पहले सूचना दे दें जिससे ये लोग समयपर तैयार किये जा सकें।

सत्याग्रही कैदियोंकी रिहाईको सुगम वनानेमें मददकी प्रार्थना है। इनमें से दो मीयाद पूरी होनेपर आज रिहा कर दिये गये। मुझे आपको यह आश्वासन देनेकी आवश्यकता नहीं है कि उनकी रिहाईपर हम किसी प्रकारका प्रदर्शन करना नहीं चाहते।

आपका,

टाइप किये हुए अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५५४१) की फोटो-नकलसे।

७५. सत्याग्रहियोंके लिए

हम अपने पाठकोंका ध्यान श्री काछलियाकी उन सत्याग्रहियोंसे सम्वन्धित सूचनाकी[3] तरफ खींचना चाहते हैं, जिनका ट्रान्सवालमें स्थायी निवासका अधिकार केवल उनके सत्याग्रही होनेके कारण रद हो गया हो। इस मामलेमें मुख्य वात है समय। इसलिए हम आशा करते हैं कि इस सूचनाका जिनसे सम्वन्ध है वे उसके अनुसार कार्यवाही करनेमें देर नहीं करेंगे। हम यह भी आशा करते हैं जिन्होंने एशियाई कानूनोंके अनुसार अर्जियाँ दी थीं पर वे नामंजूर कर दी गई थीं, वे अपने नाम नहीं भेजेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-५-१९११

१ और २. देखिए परिशिष्ट ५।

३. देखिए "सत्याग्रहियोंको सूचना", पृष्ठ ८५-८६।

७६. आखिरकार !

आखिरकार ट्रान्सवालके एशियाई प्रश्नपर एक अस्थायी समझौता हो गया है; और ट्रान्सवालके भारतीय और चीनी, कमसे-कम आठ महीनेके लिए, बिना किसी झंझटके अपने रोजमर्राके धंधोंमें फिर लग सकते हैं। इस सम्बन्धमें गृह-मन्त्री (मिनिस्टर आफ द इंटीरियर) और श्री गांधीके बीच जो पत्र-व्यवहार[1] हुआ है, उससे प्रकट होता है कि इस बातकी पूरी-पूरी सावधानी बरती गई है जिससे दोनों पक्ष एक-दूसरेको अच्छी तरह समझें और किसी भी प्रकारकी गलतफहमीकी गुंजाइश न रहे। फिर भी कोई मामूली पाठक उससे समझौतेके बारेमें बहुत नहीं समझ पायेगा। इस पत्र-व्यवहारमें जिन मुद्दोंकी चर्चा की गई है, उन्हें ठीकसे समझनेके लिए एशियाई कानूनोंकी तफसीलोंकी जानकारी होना अनिवार्य है। परन्तु यह खुशीकी बात है कि वास्तवमें समझौता जिन बातोंके बारेमें हुआ है, उन्हें समझनेके लिए इन तफसीलोंकी जानकारीकी जरूरत नहीं है। पाठकोंको याद होगा कि सन् १९०९ में भारतीयोंका जो शिष्टमण्डल लन्दन गया था उसने वहां एक बयान दिया था जिसमें बताया गया था कि दो बातें करनेसे सत्याग्रही सन्तुष्ट हो सकते हैं; अर्थात्, (१) सन् १९०७ का एशियाई कानून २ रद कर दिया जाये; और (२) ट्रान्सवालमें प्रवेशके सम्बन्धमें सबको समान सुविधाएँ दी जायें। हां, इस दूसरी बातके सम्बन्धमें यह भी कहा गया था कि इतना मान लिया जाये कि प्रवासी कानूनके अमलमें भेदभाव किया जा सकता है, किन्तु साथ ही इस बातका भी भरोसा दिलाया जाना चाहिए कि कानूनमें शिक्षा-सम्बन्धी जो भी शर्त रखी जायगी उसके आधारपर कमसे-कम छः शिक्षित एशियाइयोंको ट्रान्सवालमें प्रति-वर्ष प्रवेश दिया जायेगा।[2]

कौमकी तरफसे यह भी कहा गया था कि यदि ये माँगें मंजूर कर ली गईं तो जो लोग प्रत्यक्ष रूपसे लड़ रहे हैं वे आवश्यकता पड़नेपर अपने व्यक्तिगत अधिकारोंको छोड़ देंगे और सत्याग्रह बन्द कर देंगे। यदि यह बात मान ली जाती तो श्री सोराबजी और उनके दूसरे साथी — जो शिक्षित भारतीयोंकी हैसियतसे ट्रान्स-वालमें आये थे[3] — अपने लिए किसी भी अधिकारकी माँग नहीं करते और ट्रान्स-वालसे चले जाते। लड़ाई पुनः शुरू होनेके कारण जिनके नाम पंजीकृत नहीं हो सके थे वे भी चुपचाप अपने अधिकारको छोड़ देते और इस तरह अपनी रोजीसे वंचित

१. देखिए पृष्ठ ३९-४१, ४७-५०, ५८-६०, ७७-७८ और ८३-८४ तथा परिशिष्ट १, २, ४, ५ एवं ६।

२. देखिए खण्ड ९, पृष्ठ २९५-९६।

३. सोराबजी शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशाधिकारकी परीक्षा करनेके खयालसे ट्रान्सवाल आये थे; उनपर चलाये गये तीन मुकदमोंके लिए देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३३७-४०, ३४७-५१ और ३७०-७१।

होना भी मंजूर कर लेते।[1] यह घोषणा संसारको यह बतानेके लिए की गई थी कि यह लड़ाई निःस्वार्थ भावसे, केवल एक आदर्श —— अर्थात् अपने राष्ट्रके सम्मानकी रक्षा — के लिए लड़ी जा रही है। ईसाका एक वचन है : "पहले ईश्वरकी सत्ता और उसकी पुण्य-सम्पदाके पात्र बनो। शेष सब तो उसके पीछे अपने-आप आ जायेगा।" इस वचनकी सत्यता जितनी अच्छी तरह इस समझौतेमें चरितार्थ हुई है उतनी शायद पहले कभी नहीं हुई होगी। किसी समय जनरल स्मट्सके बारेमें लोगोंका खयाल था कि उनकी एकमात्र इच्छा कौमकी माँगोंको तिरस्कारपूर्वक ठुकरा देना है। उस हालतमें जिस त्यागका उल्लेख ऊपर किया गया है, शायद उसकी जरूरत हो जाती। परन्तु ईश्वरकी इच्छा कुछ और ही थी। जनरल स्मट्सने अपनी स्थितिपर पुनः विचार किया और आखिर सत्याग्रहियोंका सहयोग स्वीकार कर लिया। संसदके पिछले अधिवेशनमें वे अपना कानून पास नहीं करा सके।[2] फिर भी, स्पष्ट ही, साम्राज्य परिषदके अधिवेशन तथा राजतिलकको निकट देखते हुए वे चाहते थे कि सत्याग्रह बन्द हो जाये। सत्याग्रहियोंने भी इस शर्तपर अपनी लड़ाई स्थगित करनेका प्रस्ताव सामने रखा कि जनरल स्मट्स उनकी मुख्य माँगें स्वीकार करके उन्हें संसदके अगले सत्रमें कानूनी रूप दिला दें और सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण सत्याग्रहियोंको दण्डित न करनेका वचन दें।[3] हम जो पत्र-व्यवहार[4] प्रकाशित कर रहे हैं, पाठक देखेंगे कि वह समझौतेका एक अनावश्यक और तात्कालिक अंग-मात्र होगा। समझौतेके इस भागके बारेमें भले ही कुछ अस्पष्टता और उलझन रह गई हो, किन्तु उसके मुख्य भाग, अर्थात् सन् १९०७ के कानून २ के रद किये जाने और ट्रान्सवालके वर्तमान-प्रवासी कानूनमें संशोधन करनेके बारेमें कोई भ्रम या अनिश्चितता नहीं है।

परन्तु कई हल्कोंसे यह प्रश्न पूछा गया है कि क्या इस वचनका पालन होगा? साधारणतया इसमें कोई सन्देह नहीं होना चाहिए। जनरल स्मट्स एक जिम्मेवार मन्त्री हैं। उनके पीछे संसदका बहुमत है। उनकी सरकार उनके वचनके कारण सदनमें आवश्यक विधेयक[5] पेश करनेके लिए बँधी हुई है। यदि संसद इसको मंजूर

१. स्मट्स और भारतीय समाजके बीच हुए समझौतेके फलस्वरूप फरवरी १०, १९०८ को भारतीयोंका स्वेच्छया पंजीयन प्रारम्भ हुआ था; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३९-४१, ४३-४४। लेकिन बादमें भारतीयोंने स्मट्सपर समझौतेका अपना हिस्सा पूरा नहीं करनेका आरोप लगाया और ३० मईको फिरसे सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ करनेका निर्णय किया; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २६३-६४। मई ९, १९०८ तक ट्रान्सवालकी पूरी भारतीय आबादीमेंसे — जो विभिन्न सूत्रोंके अनुसार ८,००० से लेकर १३,००० थी — ८,७०० लोगोंने पंजीयनके लिए अर्जियाँ दी थीं। तात्पर्य उन भारतीयोंसे है जो किसी-न-किसी कारणसे मई ९ तक, जो पंजीयनकी अन्तिम तिथि थी, यहाँ अपना पंजीयन नहीं करा पाये थे।

२. देखिए "पत्र: एल० डब्ल्यू० रिचको", पृष्ठ ३८ तथा परिशिष्ट २।

३. देखिए लेनके नाम लिखे गांधीजीके पत्र पृष्ठ ३९-४१, ४७-५० और परिशिष्ट ४।

४. यह २७-५-१९११ के **इंडियन ओपिनियन**में "समझौता सम्पन्न: मन्त्री और श्री गांधीके बीचका अन्तिम पत्र-व्यवहार" शीर्षकसे छपा था।

५. देखिए परिशिष्ट ४।

नहीं करेगी तो उसका अर्थ होगा मन्त्रिमण्डलमें अविश्वास। फलस्वरूप मन्त्रिमण्डलको, जिसके वे कदाचित् सबसे अधिक महत्वपूर्ण सदस्य हैं, त्यागपत्र देना होगा, परन्तु हम स्वीकार कर सकते हैं कि, सम्भव है, एशियाइयोंके किसी सवालपर जनरल स्मट्स ऐसा बहादुराना कदम नहीं उठायें। फिर भी इस सुदूर आशंकाके भय-मात्रसे कि शायद संसद इस कानूनको अपनी मंजूरी न दे, हमें सुलहके लिए बढ़ाये गये हाथका तिरस्कार नहीं कर देना चाहिए। अबतक हमारा झगड़ा जनरल स्मट्ससे था। हमारी लक्ष्य-सिद्धिमें वे सबसे बड़े विघ्न थे। अब वे कुछ नरम पड़ गये हैं, और कुछ ही महीने पहले जो चीज किसी भी सूरतमें देनेसे उन्होंने इनकार कर दिया था उसीको देनेका वचन दे दिया है। इस स्थितिमें सत्याग्रहियोंका अपनी लड़ाईको स्थगित करनेका निर्णय ठीक ही हुआ है।[1] इससे जनरल स्मट्सके सम्मानकी कसौटी हो जायेगी। अबतक हमने जिस दृढ़ता, शान्ति और शानके साथ जनरल स्मट्सका मुकाबला किया है, उसी दृढ़ता, शान्ति, शान और निश्चित सफलताके विश्वासके साथ हम जरूरत पड़नेपर अगले वर्ष शक्तिशाली संघ-संसदका मुकाबला भी कर सकते हैं। सत्याग्रह एक महान् शक्ति है। और जिस प्रकार प्रकाश गहरेसे-गहरे अन्धकारका मुकाबला कर सकता है उसी प्रकार सत्याग्रह भी बड़ीसे-बड़ी विरोधी ताकतका मुकाबला कर सकता है। इसलिए जिनको भविष्यके बारेमें आशंकाएँ हो रही हैं, उन्होंने या तो सत्याग्रहको नहीं समझा है या ट्रान्सवालके सत्याग्रहियोंकी सचाई और सामर्थ्यमें उनका विश्वास नहीं है।

परन्तु यदि विधानमण्डलने जनरल स्मट्सके वचनको पूरा कर दिया तो क्या सत्याग्रह हमेशाके लिए समाप्त हो जायेगा? इसका जवाब तो आम तौरपर संघ-सरकार और खास तौरपर जनरल स्मट्स, जिनके मातहत एशियाई विभाग हैं, ही दे सकते हैं। यदि जनरल स्मट्सके वचनका पालन किया गया तो जिस प्रश्नको लेकर सत्याग्रह शुरू किया गया था उस प्रश्नकी हद तक तो वह निःसन्देह बन्द हो जायेगा। परन्तु यदि इसी प्रकार एशियाइयोंके विरोधमें फिर कोई नया कानून बनाया गया और उससे उनके सम्मान अथवा कौमकी हस्तीपर आँच आई तो निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि दक्षिण आफ्रिका एक बार फिर सत्याग्रहका नजारा देखेगा। जनरल स्मट्सने आखिर जिस सद्भावनाके साथ इस प्रश्नको सुलझानेका यत्न किया, उसे स्वीकार करके और उसकी कद्र करके ब्रिटिश भारतीय संघने उचित ही किया है। तो, अगर जनरल स्मट्सने अपनी स्थिति तथा अपनी इस कथित उक्तिपर पुनः विचार कर लिया है कि वे तबतक चैन नहीं लेंगे जबतक कि दक्षिण आफ्रिकामें एक भी एशियाई मौजूद है, और यदि भविष्यमें वे अपने व्यवहारमें उसी सद्भावनाका परिचय देना चाहते हैं जो उन्होंने (देरसे ही सही) सत्याग्रहियोंकी माँगोंके सम्बन्धमें

१. यह निर्णय अप्रैल २७, १९११ को ब्रिटिश भारतीय संघके तत्वावधानमें आयोजित एक सभामें किया गया था; देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ४७ तथा "ट्रान्सवालकी टिप्पणियाँ", पृष्ठ ५६-५८ ।

दिखाई है, तो ऐसी कोई आशंका नहीं होनी चाहिए कि एशियाई दक्षिण आफ्रिकामें फिर सत्याग्रह आन्दोलन शुरू करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-५-१९११

७७. सत्याग्रहियोंसे

हम प्रत्येक सत्याग्रहीका ध्यान श्री काछलियाके हस्ताक्षरोंसे युक्त विज्ञप्ति[1] की ओर आकर्षित करते हैं। जिन सत्याग्रहियोंके हक पहले छीन लिये गये थे और जो समझौतेके फलस्वरूप उबर गये हैं, उन्हें शीघ्र ही संघ द्वारा माँगे गये विवरण भेज देने चाहिए। यदि उनमें से कोई व्यक्ति भारतमें हो तो उसके पास भी खबर भेज देनी चाहिए। जिन्होंने लड़ाईके समय प्रार्थना-पत्र देकर काले कानून[2] अथवा कानून ३६[3] को मान लिया है, हम उनको अपने नाम सूचित न करनेकी सलाह देते हैं। यदि कोई व्यक्ति अर्जी भेज चुकनेकी बात छिपाकर अपना नाम भेजेगा तो उससे कौमकी तथा स्वयं उसकी भी हँसी होगी। यदि ऐसे किसी आदमीका प्रार्थनापत्र पंजीयकके पास पहले ही पहुँच चुका होगा तो तुरन्त पता चल जायेगा और प्रेषक पंजीकृत न हो सकेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-५-१९११

७८. पत्र : हरिलाल गांधीको

टॉल्स्टॉय फार्म,
वैशाख वदी १४ [मई २७, १९११][4]

चि० हरिलाल,

तुम्हारा डेलागोआ-बेसे चलनेके पहलेका पत्र मिला। रामीको हम एकदम स्वदेशी संस्कार दें, यही अभीष्ट है। इसलिए तुमने चाकलेट न भेजनेका जो निर्णय किया, वह ठीक ही किया। फिर भी मैं तुम्हें यह चेतावनी देना चाहता हूँ कि ऐसे किसी विषयमें इस तरह विचार मत करना कि "बापू ऐसा सोचते हैं इसलिए ऐसा करना

१. देखिए "सत्याग्रहियोंको सूचना", पृष्ठ ८५-८६।

२. सन् १९०७ का कानून २ (एशियाई पंजीयन कानून)।

३. सन् १९०८ का (एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम)।

४. पत्रकी विषय-वस्तुसे स्पष्ट है कि यह १९११ की मईके मध्यमें हरिलालके आफ्रिका छोड़कर चले जानेके बाद लिखा गया। उस वर्ष वैशाख बदी १४ मई, २७ को पड़ी थी।

चाहिए।" मैं जो कुछ कहता हूँ, उनमें से तुम्हें जो विचार पसन्द आयें, तुम उन्हीं-पर आचरण करना। मैं तो यह चाहता हूँ कि तुम्हारा विकास स्वतंत्र रीतिसे हो। तुम्हारा उद्देश्य अच्छा है, यह मैं जानता हूँ। इसलिए जहाँ तुम्हारे विचार गलत हों, वहाँ वे अपने-आप सुधर जायेंगे।

कैदी अभी तक छूटे नहीं हैं, किन्तु शीघ्र ही छूट जायेंगे।[1]

पंजीयनकी अर्जी देनेके विषयमें मैंने तुम्हें जो तार[2] किया था, मालूम होता है कि वह तुम तक नहीं पहुँचा। यह तार मैंने नानजी दुलभदासके पतेपर किया था।

वहाँ 'इंडियन ओपिनियन' ध्यानपूर्वक पढ़ते रहना।

ये गुजराती पुस्तकें बहुत पढ़ने लायक हैं: 'काव्य-दोहन', 'पंचीकरण', 'मणि-रत्नमाला', 'दासबोध', 'श्री योगवाशिष्ठ' का छठवाँ प्रकरण — इसका हिन्दी अनुवाद उपलब्ध है, कवि नर्मदाशंकरके धर्म-विषयक विचार, रायचन्दभाईके लेखोंके दो खण्ड।

'करण घेलो' आदि पुस्तकें तो हैं ही। यह पुस्तक गुजराती भाषाकी प्रौढ़ताकी परिचायक है। टेलरकी व्याकरणकी पुस्तक और उसमें उसके द्वारा लिखी हुई प्रस्तावना बहुत अच्छी है। यह प्रस्तावना है या उसी पुस्तकमें गुजराती भाषापर लिखा हुआ कोई विशेष निबन्ध है, यह मैं भूल गया हूँ।

तुलसीदासजीकी रामायणका भी अच्छी तरह अभ्यास करते रहो ऐसी मेरी सलाह है। 'इंडियन होमरूल' के अन्तमें मैंने जिन अंग्रेजी पुस्तकोंकी सूची दी है, उन पुस्तकोंमें से कई पठनीय हैं। संस्कृतका बढ़िया अध्ययन करनेके विषयमें मेरी यह राय है कि हमेशा सबसे पहले उसे बाँचो; बाँचोगे तो बहुत-कुछ याद हो जायेगा और दिमागमें बैठ जायेगा। पहली पुस्तक अच्छी तरह पढ़नेके बाद फिर यह विषय कठिन नहीं लगेगा। पहली पुस्तक पक्की किये बिना दूसरी हाथमें न लेना। जो भी संस्कृत श्लोक पढ़नेमें आये, उसका गुजराती अर्थ समझनेकी कोशिश तुरन्त होनी चाहिए।

मुझे पत्र सविस्तार और नियमपूर्वक लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल गुजराती पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५३२) से।

१. देखिए "पत्र : एशियाई पंजीयकको", पृष्ठ ८८।
२. उपलब्ध नहीं है।

७९. पत्र: जी० ए० नटेसनको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
मई ३१, १९११

प्रिय श्री नटेसन,

अस्थायी समझौतेके बारेमें सूचना देते हुए प्रोफेसर गोखलेको जो तार[1] मैंने भेजा था, उसमें उनसे अनुरोध किया था कि वे तारका मजमून आपको सूचित कर दें। आशा है, उन्होंने वैसा ही तार आपको भेज दिया होगा। समझौता हमारी आशासे ज्यादा अच्छा हुआ। हमें ऐसी आशा नहीं थी कि हम वैयक्तिक अधिकारोंकी रक्षा करनेमें समर्थ होंगे। ये अधिकार अब पूरी तरह सुरक्षित कर दिये गये हैं। लेकिन ऐसा कदापि नहीं माना जा सकता कि हमारी परेशानियाँ समाप्त हो गईं। जनरल स्मट्सके द्वारा अपने वादोंको कानूनी जामा पहनाना बाकी है। ऐसा किया जायेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। अलबत्ता, अपनी कीर्तिकी उन्हें कोई परवाह ही न हो तो बात दूसरी है। अन्देशा वचन तोड़नेका नहीं है, बल्कि यह है कि वे कहीं ऐसे दूसरे कानून भी न पास करवा लें जिनका अधिवासी भारतीयोंकी स्थितिपर हानिकर प्रभाव पड़े। इसलिए उनके कामोंपर बारीकीसे नजर रखनी पड़ेगी। जो-कुछ पाया है उसमें आपके वहाँ किये गये भव्य कार्यके हम कितने ऋणी हैं, यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है। मुझे आशा है कि आप दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवालोंकी स्थिति सुधारनेकी दिशामें अपना आन्दोलन जारी ही रखेंगे। मुझे विश्वास है कि आप "इंडियन ओपिनियन" के उन स्तम्भोंको बराबर देखते रहते हैं, जिनमें साम्राज्य-सरकारको हालमें भेजे गये सभी प्रार्थनापत्र प्रकाशित हुए हैं।

आपने गिरमिटके प्रश्नपर जो काम किया है, उसके लिए भी दक्षिण आफ्रिकाका प्रत्येक भारतीय आपका कृतज्ञ है।[3] इस प्रथाका करीब १८ वर्ष अवलोकन करनेके

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. देखिए "प्रार्थनापत्र: उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ ५०-५५ और अभ्यावेदन: उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ ६८-७२।

३. सन् १९११की पहली जुलाईको भारत सरकारने यह निषेधाज्ञा लागू की कि गिरमिटमें बँधकर भारतीय मजदूर बाहर न जायें; देखिए खण्ड १० "महत्त्वपूर्ण निर्णय", पृष्ठ ४२५-२६। किन्तु इसके लागू किये-जानेके पूर्व ही नेटालके बागान-मालिकोंके लिए गिरमिटिया मजदूर भर्ती करनेके लिए कुछ सरदार भारतके लिए प्रस्थान कर चुके थे। मार्च १, १९११ को मद्रासकी भारतीय दक्षिण आफ्रिकी लीग (इंडियन साउथ आफ्रिकन लीग) के तत्वावधानमें एक सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें सर्व सम्मतिसे भारत सरकारसे यह अनुरोध करते हुए एक प्रस्ताव पास किया गया कि वह उन सरदारोंको इस तरहके मजदूर भर्ती करनेसे रोके। जी० ए० नटेसनने इस प्रस्तावका समर्थन किया था और उन्होंने एक गश्ती-पत्र लिखकर मद्रासके सभी गाँवोंको इन सरदारोंके विरुद्ध आगाह कर दिया था। यह गश्ती-पत्र ५-८-१९११ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित भी किया गया था।

बाद, भारतसे गिरमिटिया मजदूरोंके भेजे जानेके मसलेपर मेरी कुछ बहुत पुख्ता रायें बन गई हैं। यदि मजदूरोंको मालिकोंसे उचित व्यवहार दिलवा सकना सम्भव होता तो भी (हम जानते हैं कि वह सम्भव नहीं है) यह प्रथा मूलतः बुरी है। गिरमिटियोंकी नैतिकताका बड़ा ह्रास हो जाता है। कीड़े-मकोड़ोंकी तरह उनमें से कुछकी हालत तो सुधर जाती है, किन्तु मनुष्यके रूपमें सभीका पतन ही होता है। इस प्रवाससे गरीबीकी समस्याके समाधानमें किसी भी तरहकी सहायता नहीं मिल पाई है। अपने दारिद्र्य पीड़ित भाइयोंको लगभग गुलामोंके रूपमें बाहर भेजनेके फलस्वरूप हमारे राष्ट्रीय गौरवको ठेस पहुँचती है। स्वतन्त्र मनुष्योंका कोई राष्ट्र ऐसी किसी प्रथाको एक क्षण भी सहन नहीं करेगा। इसलिए मुझे आशा है कि आप पहले भारतसे बाहर और फिर देशमें इस प्रथाको समाप्त करानेके लिए अपनी पूरी शक्तिसे आन्दोलन करेंगे। यदि मेरा वश होता तो निश्चय ही गिरमिट-प्रथाके अधीन एक भी भारतीयको और कहीं तो क्या मैं आसाम भी नहीं भेजता।

भले ही काफी परिवर्तित रूपमें, किन्तु चूँकि संघर्ष केवल स्थगित ही किया गया है, टॉल्स्टॉय फ़ार्म चलता रहेगा।

श्री और श्रीमती पोलक नवम्बर माहके आसपास भारतमें होंगे और अगले वर्ष जनरल स्मट्स द्वारा विधेयक पेश किये जाने तक भारत ही में रहेंगे।

हमारे लिए आपने जो-कुछ किया है, उसके लिए एक बार फिर धन्यवाद सहित,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० २२२४) की फोटो-नकलसे।

८०. पत्र : जी० ए० नटेसनको

जोहानिसबर्ग
जून २, १९११[1]

प्रिय श्री नटेसन,

यह पत्र श्री० आर० एम० सोढाका परिचय करानेके लिए लिख रहा हूँ। आप जानते ही हैं, श्री सोढा हमारे सर्वाधिक पक्के सत्याग्रहियोंमें से एक हैं। यदि अपनी यात्राके दौरान श्री सोढा आपकी ओर आ निकलें तो आप उन्हें हमारे नेतागणोंसे मिला देनेकी कृपा करें। श्री सोढा उन स्वनाम धन्य श्रीमती सोढाके पति हैं जिन-पर ट्रान्सवाल सरकारने अत्याचार किये थे।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें (सी० डब्ल्यू० ३४२२) से।
सौजन्य : रेवाशंकर सोढा।

१. रतनसी सोढा जून २, १९११ को भारत रवाना हुए। तबतक २० अप्रैलका अस्थायी समझौता हो चुका था। इंडियन ओपिनियन, १०-६-१९११

८१. क्रूगर्संडॉर्पके आन्दोलनकारी

क्रूगर्संडॉर्पमें हाल ही में एक सभा हुई थी, जिसमें प्रान्तीय विधान-परिषदके सदस्य श्री वॉन वेयरेनने भाषण दिया था। उसका विवरण[1] क्रूगर्संडॉर्पके किसी पत्रमें छपा था, जो हम इसी अंकमें अन्यत्र दे रहे हैं। दूसरे प्रश्नोंके साथ-साथ इस सभामें "कुलियों" के प्रश्नपर भी चर्चा हुई और सर्वानुमतिसे एक ऐसी संस्था बनानेका निश्चय किया गया जिसके सदस्य "कुली" व्यापारियोंकी मदद न करनेके लिए प्रतिज्ञा-बद्ध होंगे। हमें ज्ञात हुआ है कि इस संस्थाकी समितिने एक प्रार्थनापत्र तैयार किया है, जिसमें सरकारसे निवेदन किया गया है कि वह ठेलेवालों और फेरीवालोंको देहाती क्षेत्रोंमें न जाने दे, क्योंकि ये गश्ती सौदागर देशको लाभके बजाय हानि ही अधिक पहुँचाते हैं। क्रूगर्संडॉर्पका यह रूप कुछ पहले-पहल ही सामने नहीं आया है। उस प्रसिद्ध गोरा-संघ (व्हाइट लीग)[2] का जन्म, जो अब निष्क्रिय हो गया है, इसी नगरमें हुआ था। लेकिन सब देख सकते हैं कि उसे अपने प्रयासोंमें कोई सफलता नहीं मिल सकी। इन एशियाई-विरोधी लीगों और संघोंको सफलता क्यों नहीं मिलती? इसलिए कि इनकी बुनियादमें ही सड़ांध है; इनका जन्म स्वार्थ तथा लालचसे होता है; और इनके प्रत्येक सदस्यको अपना ही उल्लू सीधा करनेसे मतलब होता है। इनके सदस्योंमें एक भी ऐसा नहीं मिलेगा जो दूसरेको नुकसान पहुँचाकर अपना मतलब गाँठनेकी इच्छा न रखता हो। परन्तु किसी एशियाईसे होड़ होनेपर उसे बर्बाद करनेके लिए ये सब एक हो जाते हैं। तब ये प्रतिस्पर्धी व्यापारी यहाँतक कह जाते हैं कि फेरी-वालों तथा ठेलेवालोंको देहाती क्षेत्रोंमें नहीं जाने देना चाहिए। इतना तो सब मानेंगे कि दूरके इलाकोंमें रहनेवाले लोग अपनी जरूरतोंके लिए इन उपयोगी दूकानदारों-पर ही निर्भर करते हैं, और वे तो कभी नहीं कहते कि इनसे लाभके बजाय हानि होती है। सच तो यह है कि इन लीगों और संघोंकी सारी कोशिशें साफ तौरपर स्वार्थसे भरी हुई हैं। उन्हें अपने अलावा और किसीके हितकी चिन्ता नहीं है। उन्हें तो केवल इसी बातकी लगी रहती है कि कोई उनकी होड़में खड़ा न होने पाये ताकि वे अधिकसे-अधिक मुनाफा कमा सकें।

यों इन आन्दोलनकारियोंसे बहुत अधिक डरनेका कोई कारण नहीं है। फिर भी ब्रिटिश भारतीय संघ उनकी हलचलोंपर पूरी-पूरी नजर रखेगा ताकि इन छोटे-छोटे इज्जतदार व्यापारियोंके अधिकारों और रोजीको हानि न पहुँचे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-६-१९११

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १५८।

८२. सत्याग्रहसे क्या मिला ?

अनेक भारतीयोंने कई वार सवाल किया है कि सत्याग्रहसे क्या लाभ हुआ है ? उनके हिसाबसे तो लोग जेलमें ठूँसे गये, दुःख सिरपर आया और अन्तमें अधिकसे-अधिक यह हुआ कि नये आनेवालोंको समानताका ऐसा कानूनी अधिकार मिला, जो न किसीकी समझमें आ सकता है और न किसी मसरफ़का है। सबसे बड़ा परिणाम यही निकला कि बहुत पढ़े-लिखे कुछ ऐसे व्यक्ति, जिनकी हमें शायद जरूरत ही नहीं पड़ेगी, प्रतिवर्ष ट्रान्सवालमें[1] आते रहेंगे। इस ख्यालसे कि बात इस तरह सोचनेवालोंकी समझमें आ जाये, हम संघर्षके नतीजे दे रहे हैं। वे क्रमशः निम्नलिखित हैं :

१. भारतीय समाजकी शपथ[2] पूरी हुई। कहावत है, जिसकी नाक बची उसका सब-कुछ बच गया।
२. खूनी कायदा[3] रद किया जायेगा।[4]
३. सारे भारतमें हमारी तकलीफोंके प्रति लोगोंकी दृष्टि गई।[5]
४. सारे संसारको हमारे संघर्षके बारेमें मालूम हो गया और सबने भारतीयोंके साहसकी प्रशंसा की।
५. नेटालमें गिरमिटिया मजदूरोंके प्रवासपर प्रतिबन्ध लगानेवाला कानून बना।[6]
६. नेटालके परवाना कानूनमें उपयोगी संशोधन हुआ — इस संशोधनका एक कारण सत्याग्रहका संघर्ष था।[7]

१. और ४. देखिए परिशिष्ट ४ और ५ ।

२. सितम्बर ११, १९०६की जोहानिसबर्गके एम्पायर थियेटरमें हुई भारतीयोंकी एक विशाल सभामें यह शपथ ली गई थी कि वे एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशको स्वीकार नहीं करेंगे ।

३. एशियाई पंजीयन अधिनियम (१९०७का अधिनियम २) ।

५. ट्रान्सवालके संघर्षकी भारतमें व्यापक प्रतिक्रिया हुई थी । सन् १९०८ और १९०९में भारतमें हुई रोषपूर्ण प्रदर्शन सभाओंके विवरणके लिए देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ५११ और खण्ड ९, पृष्ठ ७९-८०, ४३६, ४५४, ५०४-०५ ।

६. दिसम्बर २९, १९०९ को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसने गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्तीके विरुद्ध प्रस्ताव पास किया और २५ फरवरी, १९१०को श्री गोखलेने भारतीय विधान परिषद्में इसी आशयका एक प्रस्ताव पेश किया जो सर्वसम्मतिसे स्वीकृत हुआ । १९०८ का भारतीय प्रवासी अधिनियम श्री गोखलेके प्रस्तावको ध्यानमें रखते हुए संशोधित किया गया । १ अप्रैल, १९११ को भारत सरकारने एक विज्ञप्ति द्वारा १ जुलाई, १९११ से भारतीय मजदूरोंको नेटाल भेजना निषिद्ध कर दिया । देखिए खण्ड १०, पृष्ठ १८२-८३, १८५-८६, २१६, २३७ और ४२५-२६ भी ।

७. नेटाल व्यापारी परवाना अधिनियम (१८९७का अधिनियम १८) के अधीन पुराने व्यापारी-परवानोंके परवाना-अधिकारी द्वारा रद कर दिये जानेपर अदालतमें अपील नहीं की जा सकती थी । बोअर युद्धके बाद नेटालके भारतीयों द्वारा साम्राज्य-सरकारसे बार-बार यह कहनेपर कि उक्त धाराका उनके हितोंके विरुद्ध उपयोग किया जा रहा है, उपनिवेशकी सरकारने टाउन कौंसिलोंके नाम एक परिपत्र जारी किया कि वे कानूनका न्यायोचित और बुद्धिसम्मत प्रयोग करें अन्यथा उस कानूनपर पुनर्विचार करना

७. रोडेशियामें ट्रान्सवाल-जैसा ही कानून बन गया था, वह अस्वीकृत कर दिया गया।[1]

८. नेटालमें एक बहुत खराब परवाना कानून बन चुका था, वह भी अस्वीकृत किया गया।[2] इस अस्वीकृतिका कारण भी हमारा संघर्ष था। इसके सम्बन्धमें जिसे सन्देह हो, उसे चाहिए कि वह सम्राट्की सरकारने अस्वीकृति देते हुए जो कारण बताये हैं, उन्हें देख जाये।

९. सारे दक्षिण आफ्रिकामें ट्रान्सवाल जैसे कानूनका बनाया जाना रुक गया।

१०. ट्रान्सवालमें अन्य बेहूदे कानून नहीं बन पाये।

११. ट्रान्सवालमें जो रेलवे विनियम खास तौरपर काले और गोरेका भेद रखकर बनाये गये थे, वे रद किये गये और उनकी जगह सबपर लागू हो सकनेवाला कानून बना।

१२. सभी जानते हैं कि १९०७ में जो खूनी कानून बना था, वह भारतीय विरोधी कानूनके निर्माणकी दिशामें प्रथम चरण था। उसीके खिलाफ भारतीयोंने डटकर लोहा लिया और स्थानीय सरकारके मनकी-मनमें ही रह गई।[3]

१३. श्री हॉस्केनकी अध्यक्षतामें जो यूरोपीय समिति बनी, वह भी अन्यथा सम्भव नहीं थी।[4] मुमकिन है, इस समितिसे हम लोगोंको दूसरी बातोंमें भी मदद मिले।

१४. इसके सिवा, अनक गोरोंकी सहानुभूति, और प्रीति प्राप्त हुई है।

१५. भारतीय समाजकी प्रतिष्ठा बढ़ी है और जो पहले हमारा तिरस्कार करते थे, वे अब हमें सम्मान देने लगे हैं।

पड़ेगा। (देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २८६-९०)। वस्तुतः दिसम्बर, १९०२ में गांधीजी दक्षिण आफ्रिका विशेष-रूपसे परवानेकी समस्यापर तत्कालीन उपनिवेश मन्त्री श्री चैम्बरलेनसे बात करनेके लिए ही लौटे थे। श्री चैम्बरलेन उस समय नेटालके दौरेपर आये हुए थे। (देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ४७५) नेटाल कांग्रेस द्वारा अनवरत आन्दोलनके फलस्वरूप सरकारने २४ नवम्बर, १९०९ को एक कानून बनाकर अपीलका अधिकार दे दिया। साथ ही १८९७ के परवाना कानूनमें एक संशोधन (१९०९ का अधिनियम २२) द्वारा परवानोंके मामलेमें टाउन कौंसिलोंके फैसलेके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालयमें अपीलका अधिकार प्रदान किया। देखिए खण्ड १०, पृष्ठ १०४।

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २५७-५८, ३१५-१६ तथा ३२८ और खण्ड ९, पृष्ठ २४५।

२. सन् १९०८ में दो विधेयकोंकी घोषणा की गई थी, जिनका उद्देश्य एशियाई व्यापारियोंको नये परवाने जारी करना बन्द करना, और जिनके पास पुराने परवाने थे उनसे १० वर्षकी अवधिमें परवाने वापस ले लेना था। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २१३-१४, २२९ और २३०-३१। इस कानूनको साम्राज्य-सरकारने स्वीकृति नहीं दी। देखिए खण्ड ९, पृष्ठ ४२०।

३. सबसे पहला पंजीयन कानून, जिसके विरुद्ध भारतीयोंने पहली बार संगठित रूपसे आन्दोलन किया था, १९०६ का एशियाई कानून संशोधन अध्यादेश था (खण्ड ५, पृष्ठ ४११-१३ और ४३०-३४)। यह अध्यादेश २२ अगस्त १९०६ को गज़टमें प्रकाशित हुआ था। उस समय तक ट्रान्सवालमें उत्तरदायी सरकारकी स्थापना नहीं हुई थी। गांधीजीने स्वयं १९०६ में लन्दन जानेवाले गांधी-अली शिष्टमण्डलको सत्याग्रहकी पहली लड़ाई बताया है। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३१५।

४. भारतीयोंके आन्दोलनसे सहानुभूति रखनेवाले यूरोपीयोंकी समिति १९०८ में अल्बर्ट कार्टराइट द्वारा स्थापित की गई थी जो उस समय "ट्रान्सवाल लीडर" के सम्पादक थे। श्री विलियम हॉस्केन इसके अध्यक्ष थे।

१६. सरकार समझ गई है कि हम लोगोंको अजेय वल प्राप्त हुआ है।
१७. भारतीय समाज कायरता छोड़कर वहादुर हो गया है और जो वकरीकी तरह मिमियानेमें भी डरते थे, अव दहाड़ने लगे हैं।
१८. श्रीमती वॉगलने जोहानिसवर्गमें भारतीय स्त्रियोंके वर्ग शुरू किये हैं और वे अवैतनिक रूपसे काम कर रही हैं।
१९. भारतीय समाज जेलसे वहुत डरता था। वह भय अव वहुत हद तक चला गया है।
२०. यद्यपि श्री काछलिया आदि सज्जनोंको पैसेकी क्षति हुई है, तथापि वे यह जानते हैं कि उनमें एक प्रकारका जोश और वल आ गया है। यह संघर्षके अनुभवके वगैर लाखों रुपया खर्च करके भी सम्भव नहीं था।
२१. इस संघर्षके परिणाम-स्वरूप ही भारतीय समाज जान पाया है कि तमिल समाजमें अनेक वीर-पुरुष और स्त्रियाँ मौजूद हैं।
२२. लड़ाईके पहले ट्रान्सवालमें रहनेवाले सैकड़ों भारतीयोंके अधिकार संघर्षकी वदौलत वननेवाले कानून नं० ३६के[1] कारण ही सुरक्षित हुए।
२३. भारतीय समाजपर धोखाधड़ी करनेका जो आरोप था, वह धुल गया।[2]
२४. यदि एकदम ताजे मामलेको देखें, तो पता चलेगा कि नेटालके व्यक्ति-करसे सम्वन्धित जो भेद-भावपूर्ण विधेयक प्रस्तुत किया जानेवाला था, वह सत्याग्रहके भयसे वापस ले लिया गया है।
२५. जनरल स्मट्सको तीन वार[3] और साम्राज्य-सरकारको दो वार अपने निर्णय वापस लेने पड़े।
२६. पहले हमारे खिलाफ कानून वनाते समय सरकार आगा-पीछा नहीं किया करती थी। अव वह विचारपूर्वक कानून वनाती है। इतना ही नहीं, वल्कि उसे अभी यह भी सोचना पड़ता है कि हम लोगोंकी प्रतिक्रिया उस विषयमें क्या होगी।
२७. भारतीयोंकी साख वढ़ी है। साख लाखसे भी अधिक है।
२८. समाजने सिद्ध कर दिखाया है कि सत्यमें कितनी शक्ति है।
२९. समाजने ईश्वरपर विश्वास रखकर, धर्मका महत्व संसारपर प्रकट कर दिया है।

जहाँ सत्य और धर्म है, वहीं विजय है। यदि हम और भी (गहराईसे) विचार करें, तो सम्भव है कि हमें अनेक सुपरिणाम दिखाई पड़ें, किन्तु हमने जो अन्तिम

१. ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम।

२. गांधीजी तथा ट्रान्सवालके अन्य भारतीयोंपर यह आरोप लगाया गया था कि वे नाजायज़ तरीक़ोंसे भारतीयोंको ट्रान्सवालमें प्रवेश कराते हैं। देखिये खण्ड ८, पृष्ठ ७-८, ११-१२, १४-१५, ५२-५३, २९८ और ३३१-३२।

३. गांधीजीके मनमें निम्न तीन अवसर रहे होंगे जव जनरल स्मट्सको अपने निश्चयसे हटना पड़ा था: (क) जव १९०६ में गांधी-अली शिष्टमण्डलके प्रयासोंके फलस्वरूप साम्राज्य-सरकारने एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशको स्वीकृति देनेसे इनकार किया; (ख) जव अल्वर्ट कार्टराइटके हाथों जनरल स्मट्सने समझौतेका वह प्रस्ताव गांधीजीके पास जेलमें भेजा जिसमें १९०७के अधिनियम २ को रद करनेका वचन था; (ग) जव स्मट्सने अन्ततः स्वीकार किया कि शिक्षित एशियाइयोंकी एक निश्चित संख्या प्रति वर्ष ट्रान्सवालमें प्रवेश कर सकेगी।

परिणाम सूचित किया है, वह सर्वोपरि है। ईश्वरपर भरोसा रखे बिना इतना महान संघर्ष लड़ सकना कदापि सम्भव नहीं था। हमारा सच्चा आधार तो केवल वही था। यदि हमने इस संघर्षके द्वारा उसीपर अधिक निर्भर रहना सीख लिया हो, तो इतना काफी है, क्योंकि और सब बातें तो इसके पीछे-पीछे चली आयेंगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-६-१९११

८३. संक्षिप्त रूप[1]

[जून ६, १९११के बाद][2]

एन० एन० नॉट नोटेड (नोट नहीं किया)
एन० नोटेड (नोट किया)
आर० रिजेक्टेड (नामंजूर)
पी० पेंडिंग (मुल्तवी)

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५२६ 'क') से।

८४. पत्र: मगनलाल गांधीको

[जून ९, १९११के पूर्व][3]

चि० मगनलाल,

इसके साथ आनन्दलालका पत्र है; उसे देखना। पुरुषोत्तमदासको भी पढ़ाना। आनन्दलालको भाड़ेका पैसा देनेके सम्बन्धमें मैंने रेवाशंकरभाईको[4] लिखा है।

मैं तारीख ९ जून तक तो नहीं आ सकता। उस दिन श्री हॉस्केनकी समितिको भोज दिया जाना है। तारीख १०को निकलूँ तो निकलूँ। साथका पत्र[5] नायकको भेज देना। मुझे उसका पता मालूम नहीं है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५०८९) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

१. सरकारके साथ समझौता हो जानेके बाद ट्रान्सवाल तथा संघके अन्य प्रान्तोंमें प्रवेश चाहनेवाले लोगोंके प्रार्थनापत्र आने शुरू हो गये। गांधीजीने अंग्रेजीके उपर्युक्त संक्षिप्त रूप इन्हीं प्रार्थनापत्रोंके वर्गीकरणके लिए तैयार किये थे।

२. पहला प्रार्थनापत्र डर्बनके श्री भगू भाखाके यहाँसे आया था, जिसपर जून, ५, १९११की तारीख थी।

३. तिथिका अनुमान पत्रके दूसरे अनुच्छेदकी प्रथम पंक्तिसे स्पष्ट है।

४. रेवाशंकर जगजीवन झवेरी; डॉ० प्राणजीवन मेहताके भाई।

५. यह उपलब्ध नहीं है।

८५. अभिनन्दनपत्र : डब्ल्यू० हॉस्केनको[1]

जोहानिसबर्ग
जून ९, १९११

श्री विलियम हॉस्केन

प्रिय महोदय,

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले व्यक्ति ब्रिटिश भारतीय स्वागत समितिकी ओरसे इस अभिनन्दनपत्र द्वारा आपके और आपकी उस समितिके सदस्योंके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहते हैं जो स्थापित होनेके बाद पिछले तीन वर्षोंसे आपकी अध्यक्षतामें ही काम करती आई है।

हमें पता है कि जिस एशियाई प्रश्नको लेकर इस देशमें पिछले चार वर्षोंसे अशान्ति छाई रही है उसका अस्थायी हल ढूँढ़ निकालनेमें जो शीघ्रता हो पाई वह आपकी समितिके प्रयासोंकी बदौलत ही। यद्यपि जिस प्रश्नको लेकर सत्याग्रह छेड़ना पड़ा था वह अभी अन्तिम रूपसे नहीं सुलझा है, तथापि यह सन्तोषकी बात है कि एशियाई कौमोंकी माँगोंके मुख्य विरोधीकी तरफसे यह घोषणा कर दी गई है कि ये माँगें पूरी कर दी जानी चाहिए। आपके लिए और आपकी समितिके लिए यह कोई मामूली बात नहीं थी कि आपने एक ऐसे कामकी पैरवी की जो लोकप्रिय नहीं था।

आपने जो कष्ट किया उसका बदला देना हमारी शक्तिके बाहरकी बात है। हम तो केवल परमात्मासे प्रार्थना कर सकते हैं कि वह आपको और आपकी समितिके अन्य सदस्योंको उस पक्षकी वकालत करनेका पुरस्कार दें जिसे आपने न्याययुक्त समझा। परमात्मासे हमारी प्रार्थना है कि वह आपको सुन्दर स्वास्थ्य और सुदीर्घ जीवन प्रदान करें ताकि आप उच्च आदर्शोंकी प्राप्तिके लिए पूर्ववत् काम करते रहें।

[अ० मु० काछलिया
व्ही० ए० चेट्टियार
अब्दुल कादिर बावजीर
सोराबजी शापुरजी अडाजानिया
मो० क० गांधी][2]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–६–१९११

१. ब्रिटिश भारतीय संघने भारतीयोंके मामलोंसे सहानुभूति रखनेवाली यूरोपीय समितिके सदस्योंके सम्मानमें एक प्रीतिभोजका आयोजन किया था। यह मानपत्र उसी अवसरपर श्री हॉस्केनको भेंट किया गया था; देखिए "प्रीति-भोज", पृष्ठ १०५-०६।

२. हस्ताक्षरकर्ताओंके नाम इस मानपत्रके गुजराती रूपसे लिये गये हैं।

८६. घेरा

नगरपालिका परिषद अध्यादेशका जो मसविदा ट्रान्सवालकी प्रान्तीय विधान परिषदमें पेश किया जानेवाला है वह एक अत्यन्त सख्त कानून है। ब्रिटिश भारतीयों-पर इसके जिस भागका असर पड़नेवाला है उसके बारेमें ब्रिटिश भारतीय संघने अपना विरोध समयपर भेज दिया है।[1] निःसन्देह इसका सबसे अधिक नुकसानदेह खण्ड वह है जिसके द्वारा नगरपालिका-परिषदोंको फेरीवालों और अन्य व्यापारियोंके परवानोंपर सम्पूर्ण सत्ता दे दी गई है।

स्वर्ण अधिनियम (गोल्ड लॉ) को कस्बा-कानून (टाउनशिप्स ऐक्ट) के साथ पढ़ा जाये तो उसका सीधा अर्थ होता है एशियाई दूकानदारोंका सर्वनाश; और यह अध्या-देश जिस रूपमें तैयार किया गया है, यदि उसी रूपमें यह मंजूर कर लिया गया तो इसका भी अर्थ एशियाई फेरीवालोंका सर्वनाश होगा। सभी जानते हैं कि ट्रान्सवालके भारतीयोंमें से अधिकतर लोग फेरी लगाकर ही अपनी आजीविका कमाते हैं। और यह तो प्रत्यक्ष ही है कि यह कानून इन्हींको ध्यानमें रखकर बनाया गया है। इस प्रकार जब कि एक ओर जनरल स्मट्स सत्याग्रहियोंको दिये गये अपने वचनका पालन करनेके लिए अगले वर्ष एक कानून पास कराना चाहते हैं और कहते हैं कि उनका इरादा स्थायी निवासी भारतीयोंके साथ न्याय और समानताका व्यवहार करनेका है; दूसरी ओर ट्रान्सवालके भारतीयोंके चारों ओर एक घेरा खड़ा किया जा रहा है। यहाँ यह बात महत्वहीन है कि जनरल स्मट्सको इस सबकी जानकारी है या नहीं। यदि अध्यादेशका यह मसविदा ही जनरल स्मट्सके न्याय और समानताका सही नमूना है तो हमारी समझमें इन शब्दोंका भारतीय समाज जो अर्थ लगाता है वह उनके अर्थसे एकदम भिन्न है। फिर भी हम आशा करते हैं कि प्रान्तीय विधान परिषदके

१. इस अध्यादेशके परिणामस्वरूप नगरपालिकाके उन विनियमों और समादेशोंका एकीकरण होता था जिनमें से अधिकांशके विरुद्ध ट्रान्सवालके भारतीयोंने किसी-न-किसी समय आपत्ति प्रकट की थी। इससे नगर-परिषदोंको प्रान्तीय कानूनके आधारपर इन विनियमों और समादेशोंपर अमल करनेका भी अधिकार प्राप्त होता था। उदाहरणार्थ, यह सरकारको मुख्य रूपसे निम्नलिखित अधिकार देता था:

(क) वह किसी भी एशियाई बस्तीको उखाड़कर नई जगहमें बसा सकती थी। (ख) वह कई प्रकारके परवानोंको जारी करनेसे इनकार कर सकती थी और उसके निर्णयपर न्यायालयोंका कोई बस नहीं चलता। (ग) वह नगरपालिकाकी मतदाता सूचीसे एशियाइयोंके नाम हटा सकती थी।

पहले इन सारे उद्देश्योंकी पूर्ति अलग-अलग कानूनों और समादेशोंके द्वारा की जाती। इस अध्यादेशका एशियाइयों और ब्रिटिश भारतीयोंपर जो असर पड़ता था और उसके विरुद्ध ब्रिटिश भारतीयोंने जो प्रार्थनापत्र दिया था उनके लिए देखिए परिशिष्ट-७ क- और ख

सदस्योंके हृदयोंमें सुबुद्धिका उदय होगा और श्री काछलिया द्वारा बताई दिशामें अध्यादेशमें उचित संशोधन कर दिये जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–६–१९११

८७. भाषण : डर्बनमें आयोजित सोराबजीकी विदाई-सभामें[1]

[जून १६, १९११]

श्री सोराबजीने सत्याग्रहीके रूपमें अनेक गुण प्रदर्शित किये हैं। श्री सोराबजीको जो सबसे बड़ा सत्याग्रही कहा गया है, सो बिलकुल सही है। एक दृष्टिसे मैं श्री थम्बी नायडू (करतल-ध्वनि) को उनके समकक्ष मानता हूँ। सच कहें तो श्री थम्बी नायडूने जैसा त्याग और बलिदान किया है वैसा त्याग और बलिदान करनेवाला कोई दूसरा व्यक्ति भारतमें भी नहीं मिलेगा। किन्तु श्री सोराबजीको सारे सत्याग्रहियोंसे बड़ा कहा जा सकता है, क्योंकि उन्होंने दुःखको स्वयं आगे बढ़कर झेला। वे नेटालके थे और नेटालकी तरफसे संघर्षमें शामिल होनेवाले पहले व्यक्ति बने।[2] सत्याग्रहियोंके सम्बन्धमें, जब वे लोग जेलमें थे, कुछ शिकायतें आती रहती थीं; किन्तु श्री सोराबजीकी कभी कोई शिकायत नहीं सुनी गई। उनका स्वभाव अत्यन्त शान्त और मिलनसार है। यह तो श्री थम्बी नायडूके विषयमें भी नहीं कहा जा सकता। उनके [श्री सोराबजीके] मुखसे कभी कोई अपशब्द नहीं निकला। उनमें पारसियोंका एक भी दुर्गुण नहीं है, किन्तु मैंने पारसियोंके सभी ऊँचे गुण उनमें पाये हैं। इतने सद्‌गुणोंसे विभूषित होनेपर भी उनमें कभी अभिमानकी झलक तक दिखाई नहीं दी। और फिर वे पारसी तो हैं, परन्तु पहले भारतीय हैं तब पारसी। हिन्दू, मुसलमान और ईसाई सभी उनकी प्रशंसा करते हैं। उनका चौथा गुण यह है कि किसी मार्गको ग्रहण कर लेनेके बाद वे उसपर दृढ़ रहते हैं और सभी प्रश्नोंको समझनेकी कोशिश करते हैं। श्री सोराबजीके जोड़का व्यक्ति मिलना असम्भव है। ऐसे व्यक्तिका अनुसरण करना ही उसका वास्तविक सम्मान करना है। जब सोराबजी-जैसे अनेक व्यक्ति हमारे देशमें उत्पन्न होंगे तभी उसकी उन्नति हो सकेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–६–१९११

१. श्री सोराबजी शापुरजी अडाजानियाके सम्मानमें नेटाल भारतीय कांग्रेसने जून १६, १९११ को विदाई समारोह किया था। वे सत्याग्रह आन्दोलनकी समाप्तिके बाद भारत लौट रहे थे।

२. सोराबजीने शिक्षित भारतीयोंके अधिकारोंकी परीक्षा करनेके खयालसे सर्वप्रथम जून २४, १९०८ में ट्रान्सवालमें प्रवेश किया था; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३१०।

८८. राज्याभिषेक

जून २२ को दक्षिण आफ्रिका पाँचवें जॉर्जके राजतिलकका उत्सव मनाने जा रहा है। इन उत्सवोंमें हम किस प्रकारका भाग लेने जा रहे हैं? अस्थायी समझौतेने शोकके कारणको तो दूर कर दिया है, परन्तु श्री दाउद मुहम्मद और दूसरे नेताओंने टाउन क्लार्कको जो पत्र[1] भेजा है, हमें ज्ञात हुआ है कि अभीतक उसका जवाव उन्हें नहीं मिला है। हमारे सम्राट्के राजतिलक-जैसे असाधारण प्रसंगपर नगर-परिषद यदि उनके समस्त प्रजाजनोंके साथ एक-सा व्यवहार नहीं कर सकती, यदि यूरोपीय लोग भी ऐसे समयपर अपने पूर्वग्रहोंको नहीं भुला सकते तो हम समझते हैं कि भारतीय कौमका भी यह कर्त्तव्य है कि वह स्थानीय सरकारी उत्सवोंमें शामिल न हो और यदि उसे यह उत्सव अलगसे मनानेके लिए कोई अनुदान दिया जाये तो उसे लेनेसे भी इनकार कर दे। कौम एक समुचित सन्देश भेजकर सम्राट्के प्रति अपनी वफादारी प्रकट कर देगी।

हमें वताया गया है कि नगर-परिषद-अधिकारी श्री दाउद मुहम्मदको कोई निश्चित उत्तर देनेके वजाय भोले-भाले, गरीव और अज्ञानी भारतीयोंको धोखा देकर उन्हें इस वातके लिए राजी करनेके यत्नमें हैं कि वे छोटा-सा अनुदान प्रदान स्वीकार कर लें और अलगसे कहीं कोनेमें उत्सव मना लें और इस तरह अपमानके सामने सिर झुका दें। हमें यह भी वताया गया है कि भारतीय दूकानदारोंके पास मार्केट मास्टर जा-जा कर उनसे पूछ रहा है कि अगर उनके लिए किसी तमाशेका आयोजन किया जाये तो क्या वे उसमें भाग लेंगे? हम आशा करते हैं कि ये सब चालें विफल कर दी जायेंगी और नेतागण इस वातका ध्यान रखेंगे कि डर्वनमें रहनेवाला एक भी भारतीय सरकार द्वारा आयोजित उत्सवोंसे कोई सरोकार नहीं रखेगा।

नगर-परिषदसे हमारी अपील है कि वह जरा तो इस प्रसंगके अनुरूप ऊपर उठकर सोचे। यदि वह साहसपूर्वक निश्चय कर ले कि कमसे-कम इस प्रसंगपर वह कौमी भेदभावोंको नहीं मानेगी तो यह इस आदर्श नगरकी, दक्षिण आफ्रिकाकी और साम्राज्यकी भी एक वड़ी सेवा होगी। यह एक दिनका छोटा-सा सुखद व्यतिक्रम दूसरे दिन पुनः अपने दुर्भावोंको धारण करने और लड़ने-झगड़नेसे हमें निश्चय ही

१. अप्रैल १८, १९११को प्रेषित इस पत्रमें दाउद मुहम्मद तथा नेटालके अन्य नेताओंने लिखा था कि जवतक सत्याग्रह आन्दोलन समाप्त नहीं होता तवतक नेटालके भारतीय डर्वन नगर-निगम द्वारा प्रस्तावित राज्यारोहण समारोहमें भाग नहीं ले सकेंगे। किन्तु, अगर समझौता हो गया और भारतीय समाजने उत्सवमें शामिल होनेका फैसला कर लिया तो वे भी सर्वसामान्य समारोहमें भाग लेंगे; वशर्ते कि ऐसी व्यवस्था की जाये जिससे वे समारोहमें इस उपनिवेशकी आवादीके हर हिस्सेके साथ समानताके स्तरपर भाग ले सकें। किन्तु अगर नगर-निगमने किसी प्रकारका प्रजाति-भेद वरता तो वे इस अवसरपर अलगसे समारोह करेंगे। इंडियन ओपिनियन, २२-४-१९११

"केला खाकर तो वह विलकुल शेर हो जाता है।"

(भारतीय सत्याग्रहियोंके सम्मानमें आयोजित एक शाकाहारी भोजमें श्री विलियम हॉस्केनने कानून भंग करनेवालोंके पक्षमें एक बहुत जोशीला भाषण दिया।)

—रैंड डेली मेल

BILJEE OSKENDHI,

OR THE LAST OF HIS RACE.

The Bill stood on the burning deck,

CARTOON FROM "SUNDAY TIMES," JOHANNESBURG.—"DRIVING IN THE WEDGE."
The persons represented are Hon. Mr. Gokhale, the Editor of the *Transvaal Leader*, Mr. Gandhi, Mr. Wm. Hosken, and Rev. J. J. Doke.

"पच्चर ठोकी जा रही है"

नहीं रोक सकेगा। परन्तु कमसे-कम यह २२ जूनका एक दिन तो ऐसा हो, जब हम साम्राज्यके आदर्शोंपर अमल कर सकें — आगे फिर चाहे जो भी होता रहे। हमें निश्चय है कि नगर-परिषदका यह व्यवहार सम्राट्के प्रति वफादारीका एक ठोस प्रमाण होगा और जबानी वफादारीकी अपेक्षा सम्राट् जॉर्ज इससे कहीं अधिक खुश होंगे।

पिछले युद्धके समय, मानो किसीने कोई जादू कर दिया हो, इस तरह लड़ाईके मैदानमें सारे भेदभाव अदृश्य हो गये थे। भारतीय डोलीवाहक[1] जिस प्यालेसे पानी पीते, उसी प्याले या डिब्बेसे टॉमी सिपाही भी पानी पीते थे। वे भारतीयोंके साथ-साथ एक ही तम्बूमें रहते और जो खाना उनके हिन्दुस्तानी भाई खाते वही आनन्दके साथ वे भी खाते। उनके बीच पूरा सख्य-भाव था। हमें मालूम है कि ऐसे अवसरोंपर युद्धके मैदानमें डटे हजारों भारतीयोंके हृदय किस तरह प्रफुल्लित हो जाते थे। 'पंच' के सम्पादक इन घटनाओंसे इतने प्रसन्न हुए थे कि उन्होंने अपने पत्रमें लिखा: "आखिर हम साम्राज्य-मातके सब हैं पुत्र सुजान।"[2] हम यह भी जानते हैं कि लड़ाई समाप्त होते ही हमारे बीच फिर वही ईर्ष्या-द्वेष फैल गया। परन्तु युद्धके सबक एकदम भूल नहीं गये थे। जूलू विद्रोहके समय उन्हें फिर दोहराया गया। भारतीय आहत-सहायक दलके थोड़ेसे सैनिक उपनिवेशके नागरिक सिपाहियोंके साथ समानताके स्तरपर मिलने लगे। कैप्टन स्पार्क्स और दूसरे अधिकारियोंने दलकी सेवाओंकी सराहना की और भारतीय पुनः एक बार अनुभव करने लगे कि "आखिर हम साम्राज्य-मातके सब हैं पुत्र सुजान।" क्या पिछले दो अवसरोंपर हुए इन अनुभवोंको राजतिलकके दिन दोहराना एकदम असम्भव है? हम दक्षिण आफ्रिकासे इसका जवाब देनेका अनुरोध करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–६–१९११

८९. प्रीतिभोज

हॉस्केन समितिके सदस्योंको प्रीतिभोज देनेवालोंको उनकी शानदार सफलतापर हम बधाई देते हैं। हमें इसके सम्बन्धमें प्राप्त सभी समाचारोंसे ज्ञात होता है कि पिछले समारोहोंकी भाँति यह समारोह भी बड़ा सफल रहा। स्वागत समिति द्वारा निमन्त्रित यूरोपीय मित्र भी अच्छी संख्यामें आये थे। अपने यूरोपीय मित्रों तथा समर्थकोंके सम्मानमें आयोजित यह भोज तो समाजकी ओरसे दी गई एक बहुत ही छोटी वस्तु थी। शुरू-शुरूमें, जब कि हर व्यक्ति सत्याग्रहियोंका मजाक उड़ा रहा था, हमदर्द यूरोपीयोंके लिए हमारा साथ देना बहुत हिम्मत, साहस और त्यागका काम था। हम जानते हैं कि किस तरह व्यंग-चित्रकारोंने श्री हॉस्केनको अपने चित्रोंका निशाना बना लिया था।[3] और अपने क्लबों तथा गिरजाघरोंमें हमारे इन मित्रोंको

१. देखिए खण्ड ५ पृष्ठ ३७८-८३।
२. देखिए **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास,** परिच्छेद ९।
३. देखिए सामनेका व्यंग्य-चित्र।

क्या-क्या सहना पड़ा होगा, उसकी तो हम कल्पना भी नहीं कर सकते। सच तो यह है कि कभी-कभी इन्हें भी जेल जानेवाले हमारे भाइयोंसे अधिक नहीं, तो कमसे-कम उतना ही कष्ट उठाना पड़ा होगा। फिर भी पिछले चार वर्षोंमें, जबतक कि हमारी लड़ाई जारी रही, उन्होंने कभी अपना कदम पीछे नहीं हटाया। श्री डोकने एक बार कहा था कि सच्चे साम्राज्यवादी तो यूरोपीय समितिके वे सदस्य और सत्याग्रही हैं जो जबरदस्त विरोधके मुकाबलेमें भी साम्राज्यके आदर्शोंकी रक्षाके लिए लड़े हैं। हम श्री डोकके कथनसे बिल्कुल सहमत हैं। हमें आशा है कि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयों और यूरोपीयोंके बीच जो सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध कायम हो गये हैं वे दोनों कौमोंको इसी प्रकार बाँधे रखेंगे, और इसके फलस्वरूप दोनोंमें एक-दूसरेके प्रति आदर और सहिष्णुताकी भावना बढ़ेगी। यदि ऐसा हुआ तो साम्राज्यके दूसरे भागोंके लिए दक्षिण आफ्रिका एक अनुकरणीय उदाहरण बन जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–६–१९११

९०. हॉस्केनका चित्र

इस अंकमें हम श्री हॉस्केनका चित्र दे रहे हैं। हमें विश्वास है कि हमारे पाठक उसको पसन्द करेंगे। यह चित्र पहले 'स्टार'में छपा था। हम उस पत्रके मालिकोंके सौजन्यसे इस चित्रको प्राप्त कर सके हैं। हम चाहते हैं कि हमारे पाठक इस चित्रको मढ़वाकर अपने कमरोंमें लगायें। हमने बहुत बार देखा है कि भारतीय अपने कमरोंमें शराब या तम्बाकूके चित्रमय विज्ञापन मढ़वाकर टाँगते हैं। कभी-कभी बिलकुल अर्थ-शून्य चित्र महज झूठी सजावटके लिए चिपके या टँगे होते हैं। बहुत बार लोग हमारी परीक्षा हमारे आसपासकी वस्तुओंसे करते हैं। हम आशा करते हैं कि प्रत्येक भारतीय अपने निवासस्थानमें केवल उन्हीं लोगोंके चित्र रखेंगे जिन्होंने हमपर उपकार किया है अथवा जिनके नाम हम स्मरण रखना चाहते हैं, और जिन दूसरी चीजोंको हम अपने आसपास रखना चाहें उन्हें भी विचारपूर्वक रखेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–६–१९११

९१. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

जून १७, १९११

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

यह पत्र आपको एक बहुत बड़े सत्याग्रही श्री सोराबजी शापुरजी अडाजानियाके हाथों मिलेगा। इस स्मरणीय संघर्षके दौरान मुझे जो बहुमूल्य अनुभव प्राप्त हुए हैं, उनमें श्री सोराबजी-जैसे लोगोंका प्राप्त हो जाना सबसे बड़ी चीज है। मुझे विश्वास है कि आप श्री सोराबजीसे मिलकर प्रसन्न होंगे। उनका विचार अगले वर्ष उस समयसे पहले ही लौट आनेका है जब जनरल स्मट्स उस विधेयकको पेश करेंगे जिसके बारेमें उन्होंने वचन दे रखा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० २२४७) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी, पूना

९२. राज्याभिषेक

राज्याभिषेक-दिवसपर समस्त दक्षिण आफ्रिकासे हमारे देशभाइयोंने राज-दम्पति-को भक्तिपूर्ण शुभकामनाएँ भेजी हैं। किसी अनजान आदमीको शायद यह अटपटा मालूम हो कि दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीय उस सिंहासनके प्रति क्यों और कैसे अपनी भक्ति प्रकट करते हैं अथवा उस राज-दम्पतिके राज्याभिषेकपर किस प्रकार खुशियाँ मना सकते हैं जिसके राज्यमें उन्हें एक आम आदमीको मिलनेवाले साधारण नागरिक अधिकार भी प्राप्त नहीं हैं। परन्तु यदि वह अजनबी ब्रिटिश संविधानको समझनेका यत्न करें तो फिर इसमें उसे कुछ भी अटपटा नहीं लगेगा। सिद्धान्ततः ब्रिटिश सम्राट् न्यायके क्षेत्रमें समानता और पवित्रताके प्रतीक माने जाते हैं। अपनी तमाम प्रजाके साथ समान व्यवहार सम्राट् जॉर्जका आदर्श है। प्रजाजनों-की प्रसन्नता ही उनकी प्रसन्नताका आधार है। ब्रिटिश राजनयिक ईमानदारीसे इन आदर्शोंको प्राप्त करनेका यत्न करते रहते हैं। यह बिलकुल सही है कि इसमें वे प्रायः बुरी तरह असफल होते हैं। परन्तु प्रस्तुत प्रश्नसे इसका कोई सरोकार नहीं है। ब्रिटिश राजतन्त्रमें राजाके अधिकार सीमित हैं और वर्तमान परिस्थितिको देखते हुए यह अच्छा भी है। इसलिए जिन्हें ब्रिटिश झण्डेके नीचे रहनेमें सन्तोष है, वे अपनी अन्तरात्माके साथ बगैर किसी प्रकारकी ज्यादती किये इन शक्तिशाली अधि-राज्योंके (डोमिनियन्स) स्वामी ब्रिटिश सम्राट्के प्रति इस समय अपनी वफादारी प्रकट कर सकते हैं — बल्कि उन्हें करना चाहिए — भले ही हमारी तरह वे भी कठोर

निर्योग्यताओंमें पिसे जा रहे हों। बादशाहके प्रति अपनी वफादारी प्रकट करके तो हम केवल उपर्युक्त आदर्शोंके प्रति अपनी भक्ति प्रकट करते हैं। हमारी वफादारी यही सूचित करती है कि हम हृदयसे इन आदर्शोंको प्राप्त करना चाहते हैं।

ब्रिटिश संविधानकी खूबीका यही तकाजा है कि सम्राट्का प्रत्येक प्रजाजन किसी भी दूसरे प्रजाजनके समान स्वतन्त्र हो और यदि वह ऐसा नहीं है तो उसका कर्त्तव्य है कि वह इस स्वतन्त्रताकी माँग करे और इस बातका खयाल रखते हुए कि दूसरेको कोई हानि न पहुँचे, उसके लिए लड़े। इस संविधानमें भू-दासत्व और गुलामीके लिए कोई स्थान नहीं है, यद्यपि ये दोनों जोरोंसे प्रचलित हैं। परन्तु इसमें अधिकतर दोष स्वयं उन भूदासों और गुलामोंका है। ब्रिटिश संविधानके अन्दर ही आजादी प्राप्त करनेका एक बहुत अच्छा उपाय सुझाया गया है। परन्तु मानना पड़ता है कि उसका अमल आसान नहीं है। स्वाधीनताकी राह फूलोंसे भरी नहीं होती। ब्रिटिश कौम स्वयं इस स्थिति तक — जिसे वह भूलसे स्वतन्त्रता कहती है — बहुत कष्टों और मुसीबतोंका सामना करनेके बाद ही पहुँच सकी है। फिर भी वास्तविक स्वतन्त्रता — आत्माकी स्वतन्त्रता — से तो वे अभी तक अनजान हैं। परन्तु इससे वंचित रहनेके लिए वे अपने संविधानको दोषी नहीं बताते — और न बता सकते हैं। इसी प्रकार हम भी अपनी निर्योग्यताओंके लिए उसे दोष नहीं दे सकते। और हमने तो क्या सच्ची क्या तथाकथित, किसी भी प्रकारकी स्वतन्त्रताके लिए कभी अपना खून बहाया ही नहीं। परन्तु यदि हम ब्रिटिश संविधानकी भावनाको समझ लें तो — यद्यपि हम इस उपमहाद्वीपमें निर्योग्यताओंसे पीड़ित हैं और यद्यपि अपनी जन्मभूमिमें भी हम सुखसे कोसों दूर हैं — हमें हृदयसे उद्घोष करना चाहिए —

सम्राट् चिरजीवी हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-६-१९११

९३. राज्याभिषेक

बादशाह जॉर्ज पंचमके राज्याभिषेकके अवसरपर उनके पूरे साम्राज्यमें उत्सव मनाया गया। उस समय इस देशके भारतीयोंने बधाईके तार भेजकर अपनी राजभक्ति प्रकट की। अब देखते हैं कि कुछ भारतीय सवाल उठाते हैं कि हम राजभक्ति किसके प्रति और किसलिए करें? हम उत्सवोंमें किस मुँहसे शामिल हों? इस देशमें हमारे ऊपर तो दुःखका पहाड़ टूट पड़ा है। हमारे अपने प्यारे देशमें भी हमारी दशा कुछ खुशियाँ मनाने योग्य नहीं है। बादशाह राज्याभिषेक-उत्सवके लिए भारत जायेंगे, इसमें भी हर्षित होनेकी कोई बात नहीं है। उत्सवमें केवल पानीकी तरह पैसा बहाया जायेगा। इससे भारतकी तो और भी बरबादी होगी। ऐसे विचार उत्पन्न होना स्वाभाविक है। उनको छिपाकर रखना हानिकर है। इसलिए हमारा इन विचारोंको न्यायकी कसौटीपर कस लेना ठीक होगा।

हमारी मान्यता यह है कि जो लोग उपर्युक्त विचार प्रकट करते हैं और वफादार नहीं रह सकते उनको चाहिए कि वे अपनी बेवफादारी प्रकट करें और मैदानमें आयें। यदि वे ऐसा नहीं करते हैं तो उनपर खोटेपन और नामर्दीका आरोप लगेगा।

किन्तु हमारा ख़याल है कि अपने ऊपर असीम कष्टोंके बावजूद हम बादशाहके प्रति राजभक्त रह सकते हैं। हमें यहाँ जो कष्ट होते हैं उनके लिए यहाँके अधिकारी और विशेष रूपसे हम स्वयं उत्तरदायी हैं। यदि हम सच्चे बनकर, सच्चे रहकर, अपने आसुरी अंशके प्रति तिरस्कार प्रकट करें और इस प्रकार उसे अपने भीतरसे भगाकर अपने आचरणोंके स्वामी आप ही बन जायें तो हमें किसी भी कष्टका अनुभव नहीं हो। तब हम इस स्थितिमें होंगे कि कह सकेंगे, "अहा, बादशाह जॉर्ज पंचमके शासनमें हम कितने सुखी हैं!" अपने भीतर स्थित असुरको बिलकुल निकाल फेंकनेमें हम जितने अशक्त होंगे उतना ही हमें स्थानीय अधिकारियोंके सम्मुख गिड़-गिड़ाना होगा और ऐसा करके शायद दु:खके देवताको थोड़ी देरके लिए हम शान्त कर सकेंगे। हम इन दोनों बातोंमें से एक भी न करें तो फिर बादशाह जॉर्जका क्या दोष है? कोई उत्तरमें कह सकता है कि यह सब बादशाह जॉर्जके नामपर चलता है, इसलिए अच्छे और बुरेका यह यश-अपयश उन्हींको मिलेगा। हम ऊपर जो-कुछ लिख चुके हैं, उससे यह भी रद हो जाता है। ब्रिटिश राजतन्त्र निरंकुश नहीं है। वह मर्यादाओंसे बँधा हुआ है और ब्रिटिश राजतन्त्रके सिद्धान्तके अनुसार मर्यादाकी आवश्यकता भी है। यदि बादशाह इस मर्यादाको त्याग दे तो वह तख्तसे उतार दिया जायेगा।

फिर, ब्रिटिश संविधानका उद्देश्य यह है कि उसके अन्तर्गत प्रत्येक मनुष्यको समान अधिकार और समान न्याय प्राप्त होना चाहिए। जिसे तदनुसार ये प्राप्त न हों उसे उनकी प्राप्तिके लिए लड़नेकी स्वतन्त्रता है; शर्त केवल यही है कि वह अपने संघर्षसे दूसरोंको हानि न पहुँचाये। इतना ही नहीं कि प्रत्येक ब्रिटिश प्रजाजन-को इस प्रकार लड़नेकी स्वतन्त्रता है, बल्कि इस प्रकार लड़ना उसका कर्त्तव्य है। ऐसे संविधानके प्रति और उसके मुख्य अधिकारी बादशाहके प्रति भक्ति प्रकट करना कर्त्तव्य हो जाता है, क्योंकि इस भक्तिका आधार हमारी अपनी मर्दानगी है। गुलामकी भक्ति, भक्ति नहीं कही जायेगी। गुलाम तो चाकरी करता है। उसकी भक्ति लाचारीकी भक्ति हुई। स्वतन्त्र व्यक्तिकी भक्ति उसकी अपनी इच्छासे उद्भूत होती है।

यदि कोई ऐसी शंका करे कि इस दृष्टिसे तो दुष्ट राजा और दुष्ट संविधानके प्रति भी भक्ति रखी जा सकती है, तो यह उचित नहीं होगा। उदाहरणके रूपमें, लड़ाईसे पहलेके बोअर-संविधान या उसके प्रधान क्रूगरके प्रति हमारे लिए स्वतन्त्र व्यक्तिकी हैसियतसे भक्ति रखनेकी गुंजाइश ही नहीं थी। क्योंकि उनके संविधानमें ही यह कहा गया था, "काले और गोरेके बीच शासन और धर्म-सम्बन्धी मामलोंमें समानता नहीं हो सकती।" हम ऐसे संविधानके प्रति भक्त नहीं रह सकते या हो सकते। इस स्थितिमें तो हमें अधिकारी और उसके अधिकारके आधार, दोनोंके विरुद्ध

लड़ना चाहिए। यदि हम न लड़ें तो हमारी गिनती मनुष्योंमें न होकर पशुओंम होगी। यदि ब्रिटिश संविधान बदल जाये और उसमें यह सम्मिलित कर लिया जाये कि गोरों और कालोंमें समानता नहीं हो सकती तो हम उस संविधानके प्रति भक्त नहीं रह सकेंगे, अर्थात् तब हमें उसका विरोध करना चाहिए। उस समय भी हम एक निश्चित सीमा तक बादशाहके प्रति राजभक्त रह सकते हैं। ब्रिटिश संविधान-पद्धतिकी यही खूबी है। वह निश्चित सीमा कौन-सी है, यह विचार करनेकी आवश्यकता अभी नहीं है; क्योंकि यह प्रश्न फिलहाल उपस्थित नहीं होता।

यह स्मरण रखना चाहिए कि ब्रिटेनके लोग स्वयं रक्तकी नदियाँ बहानेके बाद उस वस्तुको प्राप्त कर सके हैं जिसे वे स्वतन्त्रता कहते हैं। सच्ची स्वतन्त्रता तो उन्हें भी लेनी शेष है। पर हमने तो सच्ची या झूठी किसी भी प्रकारकी स्वतन्त्रताके लिए अपना रक्त नहीं बहाया और कष्ट नहीं सहे। कष्ट सहनेका कुछ आभास ट्रान्सवालके सत्याग्रहियोंको अपनी महान् लड़ाईमें मिला है। किन्तु वह तो केवल सिन्धुमें बिन्दुके समान था। जब हम वैसा कष्ट और उससे भी करोड़ों गुना अधिक कष्ट सहनेके लिए तैयार हो जायेंगे, तभी हमें सच्ची स्वतन्त्रता मिल सकेगी। ब्रिटिश संविधानमें उसको प्राप्त करनेकी छूट है। ब्रिटिश सिद्धान्त है कि ब्रिटिश बादशाहको ऐसी इच्छा करनी चाहिए कि सबको सच्ची स्वतन्त्रता मिले। और इस सिद्धान्तके अनुसार व्यवहार करनेका — भले-बुरे तरीकेसे, किन्तु शुद्ध हृदयसे — प्रयत्न करनेवाले अंग्रेज मौजूद हैं। इसलिए कष्टके होते हुए भी हम ब्रिटिश बादशाहके प्रति राजभक्त रह सकते हैं और हमारा रहना उचित है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–६–१९११

९४. एक सत्याग्रहीका सम्मान[1]

जब श्री हरिलाल गांधी भारत जाते हुए जंजीबारसे गुजरे तो वहाँ लोगोंने उन्हें पहचान लिया और फिर जंजीबारके भारतीयोंने उनका स्वागत किया। श्री हरिलालने आनाकानी की, परन्तु उनकी एक न चली। उनको श्री वली मुहम्मद नाजर अलीके मकानपर ले जाया गया और वहाँ उनकी बड़ी आवभगत की गई। सम्मानमें जो-कुछ कहा गया, उसके उत्तरमें श्री हरिलाल गांधीने कहा कि ट्रान्सवाल संघर्षने दिखा दिया है कि सत्याग्रह कैसा अचूक उपाय है। यदि अब फिर दगा किया गया तो सत्याग्रही, चाहे वे संसारके किसी भी भागमें क्यों न हों, लौट पड़ेंगे और संघर्षमें शरीक हो जायेंगे, इत्यादि।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–६–१९११

९५. पोलकका कार्य

श्री पोलकको लन्दन पहुँचे अभी बहुत अरसा नहीं हुआ है,[1] परन्तु इस बीच उन्होंने भारी काम उठा लिया है। वे कई सज्जनोंसे मिल चुके हैं और उन्होंने "लीग ऑफ ऑनर"[2] की सभामें तथा अखिल भारतीय मुस्लिम लीग द्वारा आयोजित एक सम्मेलनमें भाषण दिये हैं। विलायतकी (द० आ० ब्रि० भा०) समितिकी ओरसे जो निवेदन उपनिवेश-सचिवको भेजा गया था, उसका मसविदा श्री पोलकने ही तैयार किया था। इस निवेदनमें कामकी सभी बातोंका जिक्र है।[3] फ्रीडडॉर्पके बाड़ोंके प्रश्नका यथोचित निरूपण किया है और स्वर्ण अधिनियमके परिणामकी ओर भी [सरकारका] पर्याप्त रूपसे ध्यान आकृष्ट किया है। इससे स्पष्ट है कि श्री पोलक जहाँ-कहीं भी बैठे हों, एक ही कार्यमें तल्लीन हो जाते हैं। उन्हें दक्षिण आफ्रिकाके प्रश्नके अतिरिक्त और कोई प्रश्न सूझता ही नहीं। यह कोई ऐसी-वैसी बात नहीं है। मनुष्य अपने कर्त्तव्यमें लीन हो जानेपर ही उसकी साधना कर सकता है। इस नियमको उन्होंने हृदयंगम कर लिया है और वे उसीके पालनमें तन्मय रहते हैं। अगर भारतमें ऐसे अनेक व्यक्ति पैदा हो जायें तो भारत शीघ्र ही मुक्त हो जाये। श्री पोलक अपने कर्त्तव्यका पालन करके मानो हम सबको हमारे कर्त्तव्यकी याद दिला रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१९११

९६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[4]

श्री पोलकका पत्र

श्री पोलकके विलायत पहुँचनेके पश्चात् हमें उनके दो पत्र मिले हैं। वे लिखते हैं कि उन्होंने न्यायमूर्ति अमीर अलीसे[5] मुलाकात की है; इंडिया आफिसके श्री गुप्तेसे

१. श्री पोलक १ मई, १९११को जोहानिसबर्गसे रवाना हुए थे और उसी महीनेके तीसरे सप्ताहमें लन्दन पहुँचे थे।

२. दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंकी स्थितिके सम्बन्धमें।

३. देखिए परिशिष्ट ८।

४. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ११४, पा० टि० १।

५. न्यायमूर्ति सैयद अमीर अली (१८४९–१९२८); सी० आई० ई०, बैरिस्टर, कलकत्ता उच्च न्यायालयके न्यायाधीश, १८९०–१९०४; सन् १९०९में प्रीवी कौंसिलकी न्याय-समितिके प्रथम भारतीय सदस्य हुए; दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके भी सदस्य रहे और अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी लन्दन शाखाके अध्यक्ष थे; स्पिरिट ऑफ इस्लाम तथा मुस्लिम कानूनपर अनेक पुस्तकोंके रचयिता।

मिले हैं; लॉर्ड लैमिंग्टनसे[1] वातचीत हो चुकी है और अन्य सज्जनों तथा महिलाओंसे भी मिल चुके हैं।

"लीग ऑफ ऑनर" में जितने भी व्याख्यान हुए उनमें श्री पोलकका व्याख्यान सबसे अच्छा माना गया। अखिल भारतीय मुस्लिम लीग द्वारा आयोजित दो सभाओंमें भी वे उपस्थित थे और उनमें उनका भाषण भी हुआ था।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१९११

९७. प्राणजीवन मेहताको लिखे पत्रका अंश[2]

[जुलाई १, १९११के बाद][3]

. . .यदि आपका यह ख्याल हो कि मेरे देशमें पहुँचते ही, हमें अपने मनके युवक मिल जायेंगे, तो मुझे लगता है यह भ्रमपूर्ण है। मैं तो ऐसा समझता हूँ कि जैसी कठिनाइयाँ यहाँ हैं, वैसी ही वहाँ भी हैं। यहाँ हमने जो कार्य आरम्भ किया है, उसे व्यवस्थित करनेके बाद ही देशमें जाना ठीक मालूम पड़ता है। फीनिक्समें अभी-तक चैनसे बैठनेका मुझे अवकाश ही नहीं मिला। ऐसा लगता है कि मैं वकालतके जंजालसे मुक्त रह कर अभी एकाध वर्ष शिक्षाके कार्यमें ही लगा रह सकूँ तो ठीक होगा। यहाँ मैं अब कोई नई जिम्मेदारी नहीं ले रहा हूँ। जो हैं, उन्हींको सुव्यवस्थित करनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

आजकल यहाँ ऐसी योजना बनाई जा रही है जिससे लोगोंको आधा दिन प्रेसके काममें और आधा दिन खेती आदिके काममें लगाया जा सके। उसमें अधिक संख्यामें योग्य व्यक्तियोंको रखनेका विचार है। लोगोंको प्रेसके कामसे छुट्टी देनेका यही तरीका है। खेतोंके काममें जुटनेसे जमीन तो सुधरेगी; किन्तु उससे आमदनी तुरन्त होने लगेगी, सो नहीं है। उस सूरतमें मासिक खर्चका निकल सकना मुझे

१. ये किसी समय बम्बईके गवर्नर थे। इन्हें भारतीय पक्षसे बड़ी सहानुभूति थी। आप १९०९में द० आ० ब्रि० भा० समितिके सदस्य बन गये। उसी वर्ष नवम्बर महीनेमें उन्होंने लॉर्ड सभामें रमजानके दिनों ट्रान्सवालकी जेलोंमें बन्द मुस्लिम सत्याग्रहियोंकी कठिनाइयोंके सम्बन्धमें एक प्रश्न भी पूछा था। (इंडियन ओपिनियन, २७-२-१९०९ और इंडिया, १९-११-१९०९)

२. पत्रके पहले दो पृष्ठ नहीं मिले हैं, किन्तु इसमें कही गई बातोंसे स्पष्ट है कि पत्र डॉ० प्राणजीवन मेहताको लिखा गया था। इसका समर्थन इस बातसे और भी अधिक होता है कि सत्याग्रहियोंकी जिस शिक्षा-योजनाकी आर्थिक जिम्मेदारी उठाना डॉ० प्राणजीवन मेहताने स्वीकार किया था उसका जिक्र इस प्राप्त पृष्ठके पहले ही वाक्यमें किया गया है। देखिए "पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ ६५।

३. इस पत्रमें मगनलाल गांधीके भारतसे रवाना होनेका उल्लेख है। वे १९११के जुलाई महीनेके पहले हफ्तेमें बम्बईसे रवाना हुए थे और २० जुलाईको दक्षिण आफ्रिका पहुँचे थे।

मुश्किल मालूम होता है। अतिरिक्त व्यक्तियोंको रखनेसे जो खर्च आयेगा, वह आपसे माँगनेका मन होता है। ऐसी सम्भावना है कि काम बढ़नेपर सब मिलाकर खर्च एक हजार पौंडका बैठेगा। यदि उतना खर्च करनेकी अनुमति दे सकें, तो दीजिएगा। जो खर्च होगा, उससे जमीन इत्यादिकी कीमत बढ़ जानेकी सम्भावना है।

मैंने जो दूसरी मदद माँगी है, यह मदद उसके अलावा है। फीनिक्समें सुदृढ़ आधारपर विद्यालय शुरू किये बिना चारा नहीं है। उसके लिए चन्दा करनेके उद्देश्यसे यहाँसे निकलनेकी बात सोच रहा हूँ।

मुझे कई बार यह ख्याल आया है कि आप भारत वापस जाते हुए एक बार यहाँ आकर फीनिक्स देख जायें, तो बहुत अच्छा हो। छगनलाल इस सप्ताह देशसे रवाना हो चुका होगा।

मोहनदासका वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५०८८) से।
सौजन्य : सी० के० भट्ट

९८. पत्र : हरिलाल गांधीको

जुलाई ३, १९११
७॥ बजे सायं

चि० हरिलाल,

तुम्हारा जंजीबारसे भेजा हुआ पत्र मुझे फीनिक्समें मिला था। उसके बाद दूसरा तो आ भी नहीं सकता था। आशा है, अब थोड़े ही दिनमें आयेगा। तुम्हें जंजीबारमें लोगोंकी ओरसे सम्मान प्राप्त हुआ, उसमें मुझे इस बातसे सन्तोष हुआ है कि समारोहमें भाग लेनेवालोंमें अधिकांश खोजे[1] थे; और दूसरी बात यह कि वे सत्याग्रहके नामसे डरे नहीं। तुमने ठीक जवाब दिया। तुम्हारे जवाबका एक छोटा अंश 'इंडियन ओपिनियन'में देना मुझे ठीक लगा, इसलिए मैंने वह दे दिया है।[2] उसे तुमने देखा होगा। 'स्टार'में हर हफ्ते किसी जाने-माने व्यक्तिका परिचय प्रकाशित होता है। इसी सिलसिलेमें मेरा भी प्रकाशित हुआ है। वह मैं तुम्हें भेज रहा हूँ। देखकर और पढ़कर भाई सोराबजीको भेज देना। वे अब वहाँ पहुँच गये होंगे।

डर्बनमें तो हमारे लोगोंने कमाल कर दिया।[3] राज्याभिषेकके दिन मैं तो फीनिक्स चला गया था, इसलिए उस दिन जो धूम-धाम हुई, उसके लिए सारी शाबाशी स्थानिक योद्धाओंको ही दी जानी चाहिए।

१. मुसलमानोंका एक सम्प्रदाय।

२. देखिए "एक सत्याग्रहीका सम्मान", पृष्ठ ११०।

३. डर्बनके भारतीय समाजने राज्याभिषेकके समारोहका बहिष्कार किया था। देखिए "राज्याभिषेक", पृष्ठ १०८-११०।

पंजीयनका काम यहाँ अभी शुरू नहीं हुआ। श्री चैमनेको पहली सूची कल भेज दी जायेगी, ऐसी आशा है।

मणिलालके साथ काफी बातचीत हुई। उसका विचार, यदि लड़ाई फिरसे न छिड़ी तो, अगले वर्ष विलायत जानेका है। वह प्रेसमें अच्छा काम कर रहा है।

भाई मेढने जो व्रत लिया है,[1] उसकी सूचना तो मैं शायद तुम्हें दे चुका हूँ।

मैंने अब फार्मपर विद्यालयका काम हाथमें लिया है। देखना है कि उसे कब-तक निभा पाता हूँ। पिल्लेके सब लड़के चले गये। पिल्ले भी अब यहाँ नहीं है।

थम्बी नायडू अब जोहानिसबर्गमें ही रहते हैं। पी० के० नायडू[2] यहाँ हैं।

बा मेरे साथ फीनिक्स आई हैं। ले आनेकी आवश्यकता हो गई थी।

चंचीका पत्र मुझे अरसेसे नहीं मिला।

सब भाई मजेमें हैं। ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ, तब वे मेरे पास बैठे-बैठे पढ़ रहे हैं। रातके साढ़े सात बजे हैं।

श्री रिच तथा भाई प्रागजी आज (रविवारको) फार्मपर आये। मेरा विचार (हफ्तेमें) पाँच दिन फार्मपर और बाकीके दो दिन जोहानिसबर्गमें बितानेका है।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ९५३१) की फोटो-नकलसे।

९९. कूगर्सडॉर्पका बाजार

कूगर्सडॉर्पकी नगरपालिका लगातार वहाँके एशियाई "बाजार" या बस्तीको उठा देनेका यत्न कर रही है। इस नगरके यूरोपीय निवासियोंने एशियाइयोंके विरुद्ध जिहादमें[3] सदासे जो उत्साह प्रकट किया है, नगरपालिकाका यह कार्य उसके अनुरूप ही है। वहाँकी स्कूल-समिति खुशी-खुशी इन स्वार्थी आन्दोलनकारियोंके हाथोंमें खेलती रही है। परन्तु हमें आशा है कि कूगर्सडॉर्पके भारतीय इस प्रश्नका दूसरा पहलू भी अधिकारियोंके सामने रखनेमें कोई गफलत नहीं करेंगे। मुआवजेके बारेमें हमें कुछ नहीं कहना है। क्योंकि, भारतीयोंके कब्जेमें जो बाड़े हैं, उन्हें जबतक वे खाली करना स्वीकार नहीं करते अथवा कानून द्वारा उन्हें उसके लिए मजबूर नहीं कर दिया जाता तबतक यह प्रश्न ही नहीं उठता। हम तो केवल इस ओर इंगित करना चाहते हैं कि जिस दुरवस्थाकी शिकायत स्कूल समितिको है, उसे जान-बूझकर पैदा करनेके लिए वे लोग जिम्मेदार हैं जिनके हाथोंमें बस्तीका नियन्त्रण है।[4] इस बस्तीको उठा

1. मैंने इस वर्ष तक ब्रह्मचर्यका पालन करनेका व्रत लिया था।
2. दक्षिण आफ्रिकामें जन्मे तमिल सत्याग्रही, जो तमिल कल्याण समितिके एक पदाधिकारी भी थे।
3. देखिए "[illegible]", पृष्ठ ९८।
4. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ११८।

दिये जानेकी धमकीकी तलवार यहाँके भारतीय निवासियोंके सिरपर कई बरसोंसे लटक रही है। यदि स्कूलके बच्चोंकी नज़र उस बस्तीके पाखानोंपर पड़ती है तो इसके लिए हमें दुःख है। यहाँके निवासियोंको पट्टेका स्थायित्व दीजिए तो हम वचन देते हैं कि वे एक महीनेके अन्दर सारे वांछित सुधार कर देंगे। हम जानते हैं कि हमारे इन सताये हुए देशवासियोंने अनगिनत बार प्रार्थना की है कि उन्हें ऐसी स्थिति प्रदान की जाये कि वे अपने बाड़ोंपर पक्की और आधुनिकतम इमारतें बनवा सकें। परन्तु इस दिशामें उन्हें कोई प्रोत्साहन नहीं दिया गया। यही नहीं, बल्कि जब-कभी उन्होंने कोई प्रयत्न किया तो उनके रास्तेमें रोड़े अटकाये गये। जिस परिस्थितिके लिए दोष देनेवाले खुद, पूरी तरहसे नहीं तो अधिकांशमें, जिम्मेदार हैं उसके लिए उन्हें एशियाइयोंको दोषी बताना — और कुछ नहीं तो बेईमानी अवश्य है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-७-१९११

१००. भारतीय पत्नियाँ

ट्रान्सवालके एक पंजीकृत भारतीयकी पत्नी होनेके नाते किसी भारतीय स्त्रीने ट्रान्सवालमें प्रवेशकी इजाज़त माँगी थी।[1] इसपर न्यायाधीश वेसेल्सने जो निर्णय दिया है, उसके कारण समस्त दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके लिए एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित हो गया है। यह वही महिला हैं जिन्हें कुछ समय पहले डर्बनके प्रवासी अधिकारीने लौटा दिया था और जिनके मामलेका जिक्र हम पहले कर चुके हैं। न्यायाधीशके शब्दोंसे प्रकट होता है कि बाई रसूल (आवेदनकर्त्रीका नाम यही है) के अपना दावा सिद्ध करनेके यत्नमें अनुचित बाधाएँ डाली गईं। न्यायाधीशने कहा कि यदि अदालतको अधिकार होता तो वे आवेदनकर्त्रीको अस्थायी अनुमति दे देते, ताकि उन्हें अपने विवाहके बारेमें आवश्यक सबूत प्रस्तुत करनेमें सहूलियत हो। यदि प्रवासी अधिकारी ऐसा अनुमतिपत्र दे देता तो यह मामला अदालतमें पहुँचता ही नहीं। हम अब भी आशा करते हैं कि बाई रसूलको अपना दावा सिद्ध करनेके लिए हर तरहकी सहूलियत दी जायेगी। क्योंकि, यहाँ तो निश्चय ही व्यापारमें भारतीय होड़का कोई प्रश्न नहीं है।

परन्तु अधिक महत्वकी बात तो न्यायाधीशकी यह प्रासंगिक उक्ति है कि किसी भारतीयको एकसे अधिक पत्नियाँ यहाँ नहीं लानी चाहिए। जिनकी एकसे अधिक

१. ट्रान्सवालके एक पुराने पंजीकृत निवासी श्री आदमजी भारतसे अपनी पत्नी बाई रसूलको ले आये थे। डर्बनमें प्रवासी अधिकारीने बाई रसूलको जहाजसे उतरनेसे रोक दिया, यद्यपि प्रचलित रीति यह थी कि ऐसे प्रवासियोंको १० पौंडकी जमानत लेकर उतरने दिया जाता था। तब उन्होंने डेलागोआ-बेके रास्ते ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेकी कोशिश की, और अन्तमें उनका मामला ट्रान्सवाल सर्वोच्च न्यायालयमें पेश हुआ। सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयके विवरणके लिए देखिए अगला शीर्षक।

पत्नियाँ रही हैं वे अवतक तो विना किसी रोक-टोकके उन्हें लाते रहे हैं। यदि न्यायाधीशके शब्द सचमुच कानून सम्मत हैं तो हम इतना ही कह सकते हैं कि इस कानूनको वदलना होगा। ब्रिटिश साम्राज्यमें सभी धर्मोंका आदर किया जाता है। वहाँ ऐसा कोई कानून नहीं रह सकता जो किसी माने हुए बड़े धर्मका अपमान करता हो। इससे भिन्न कोई कानून दक्षिण आफ्रिकामें वसे बहुत-से भारतीय परिवारोंमें बड़ा दुःख पैदा कर देगा। इसलिए हमें यह जानकर हर्ष हुआ कि ब्रिटिश भारतीय संघ और हमीदिया इस्लामिया अंजुमन इस विषयमें कार्यवाही शुरू कर चुके हैं। इस प्रश्नका निपटारा वगैर किसी आन्दोलनके हो जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–७–१९११

१०१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

क्रूगर्सडॉर्पकी कहानी[1]

क्रूगर्सडॉर्पकी वस्ती (लोकेशन) में वसे हुए भारतीयोंको निश्चिन्त होकर नहीं वैठ जाना है। क्रूगर्सडॉर्पके समाचारपत्रसे जाहिर होता है कि वस्तीके वारेमें नगरपालिका और सरकारके वीच झगड़ा अव भी चल रहा है। इस झगड़ेकी सार्वजनिक जानकारीका कारण यहाँकी स्कूल-समिति है। उसने यह शिकायत की है कि वस्तीके सामने स्थित स्कूलके विद्यार्थियोंको वस्तीमें रहनेवाले भारतीयोंके शौचालयोंका दृश्य सहन करना पड़ता है। नगरपालिकाने स्कूल-समितिको उत्तरमें सूचित किया है कि वस्तीका स्थानान्तरण करनेमें भारतीयोंको हर्जानेके वतौर ग्यारह सौ पौंड देने पड़ेंगे। सरकारका कहना है कि यह रकम नगरपालिकाको देनी चाहिए; परन्तु नगरपालिका कहती है कि वह रकम उसे नहीं देनी चाहिए, क्योंकि उसकी [लोकेशनसे होनेवाली] आमदनी सरकार लेती रही है। चूँकि वस्तीकी स्थापना सरकारने की थी, इसलिए यह रकम सरकार ही भरे। इस समाचारपत्रके सम्पादकने सुझाव दिया है कि गोरे लोग सार्वजनिक सभाएँ करें और उनमें प्रस्ताव पास करें, इस रकमकी अदायगी सरकारसे करायें तथा वस्तीको और कहीं भिजवायें। ऐसा लगता है कि हर्जानेके १,१०० पौंड देने पड़ेंगे। यह वात समितिकी किसी पिछली वैठकमें तय हो चुकी है।

वस्तीमें रहनेवाले भारतीयोंको मेरी सलाह तो यह है कि वे फौरन सरकारको तथा नगरपालिकाको पत्र लिखें कि परवानगी मिलनेपर वे अपने उन घरोंमें जो भी परिवर्तन आवश्यक हो, करनेको तैयार हैं। उन्हें यह सूचित कर देना चाहिए कि वस्तीको अन्यत्र ले जानेकी वात उन्होंने कभी मंजूर नहीं की थी और चूँकि वस्तीमें मस्जिद है, इसलिए वहाँसे हटकर अन्यत्र जाना सम्भव भी नहीं है। मुझे आशा है कि वस्तीमें रहनेवाले भारतीय इस विषयमें तत्परतासे काम लेंगे।

१. देखिए "क्रूगर्सडॉर्पका बाजार", पृष्ठ ११४-१५।

निर्वासनका आदेश रद्द हुआ

एन० दला नामक एक भारतीय युवक हैं। वे वारवर्टनमें गिरफ्तार हुए थे; और वहाँ उन्हें निर्वासनका हुक्म हुआ था। उन्हें यह हुक्म मुख्यतः इसलिए दिया गया था कि उनकी उम्र १८ वर्षकी मानी गई थी। इस युवकके मित्रोंने श्री रिचकी [कानूनी] सलाह ली और उन्हें सूचित किया कि वास्तवमें दलाकी उम्र १६ वर्षसे अधिक नहीं है। तदनुसार निर्वासनके हुक्मको रद करानेके अभिप्रायसे मामला सर्वोच्च न्यायालयमें लाया गया। उस न्यायालयमें एक डॉक्टरने यह गवाही दी कि दलाकी अवस्था सोलह वर्षके आसपास होगी। इस गवाहीको ठीक मानते हुए न्यायालयने निर्वासनके आदेशको रद कर दिया है। इसमें तर्क यही था कि १६ वर्षसे नीची उम्रवाले युवकोंको निर्वासित करनेकी व्यवस्था कानूनमें नहीं है। परन्तु इस फैसलेकी विनापर दलाको ट्रान्सवालमें रहनेका हक हासिल न हुआ। हक हासिल करनेके लिए उसे प्रार्थनापत्र देना होगा और कानूनके अनुसार यदि वह पंजीयनका अधिकारी माना जायेगा तो ही उसे पंजीयन प्रमाणपत्र मिलेगा। इस फैसलेमें वस इतना ही जानने योग्य है कि इससे दलाको निजी लाभ पहुँचा है।

रसूलबाईका मुकदमा[1]

परन्तु सर्वोच्च न्यायालयने वाई रसूलके मुकदमेके सम्बन्धमें गत सप्ताह जो निर्णय दिया है, वह महत्वपूर्ण है। वाई रसूल श्री आदमजीकी पत्नी हैं। इनके वारेमें बहुत-कुछ जानकारी 'इंडियन ओपिनियन'के पिछले अंकोंमें दी जा चुकी है। वे नेटाल-में जहाजसे न उतर सकीं, इसलिए अपने पतिके साथ डेलागोआ-बे चली गईं। वहाँसे उन्होंने ट्रान्सवालमें प्रविष्ट होनेका यत्न किया। उसके वाद मामला सर्वोच्च न्यायालयमें पहुँचा। माँग यह की गई थी कि प्रवासी अधिकारी श्री चैमने वाई रसूलको ट्रान्सवाल-में प्रविष्ट होनेसे न रोकें। मामला कुछ उलझा हुआ-सा था। जिस समय श्री आदमजी-ने पंजीयन प्रमाणपत्र प्राप्त किया था, उस समय वाई रसूलके साथ उनका विवाह हो चुका था, परन्तु फिर भी अपनी धर्म-पत्नीके रूपमें उन्होंने उस स्त्रीका नाम दिया था जिसे वे तलाक दे चुके थे। इसलिए श्री आदमजीके लिए यह सावित करना कठिन हो गया कि वाई रसूल उनकी मौजूदा पत्नी हैं। न्यायालयने अपना निर्णय देते हुए कहा कि कोई भी व्यक्ति रखैल स्त्रीको ट्रान्सवालमें नहीं ला सकता। पहली स्त्रीको तलाक दे दिया जा चुका था, यह वात सन्तोषप्रद रीतिसे प्रमाणित नहीं की जा सकी और न यही कि वाई रसूलके साथ उनका निकाह हुआ था। इस कारण न्यायालयने प्रार्थना नामंजूर कर दी और मुकदमेको खर्चके साथ खारिज कर दिया। न्यायालयने अपने फैसलेमें कहा कि यदि उसे अधिकार होता तो वह वाई रसूलको अपना प्रवेशाधिकार प्रमाणित करनेके लिए अस्थायी प्रमाणपत्र दे देता। परन्तु उसके हाथमें वह अधिकार नहीं है।

यदि न्यायालय इतना ही कहकर सन्तोष कर लेता तो कोई वड़ी कठिनाई दरपेश न होती। परन्तु उसने अपने फैसलेमें यह भी कहा कि किसी व्यक्तिकी अगर

१. देखिए पिछला शीर्षक।

एकसे अधिक पत्नियां हों तो प्रवेशाधिकार केवल एकको ही — पहली पत्नीको — दिया जायेगा। शेष स्त्रियाँ वैध प्रकारसे पत्नियां नहीं मानी जा सकतीं। यदि न्यायाधीश-का यह निर्णय कायम रहता है और यदि प्रवासी-अधिकारी उसपर अमल करने लगता है तो मुसलमान भाइयोंको बहुत असुविधाका सामना करना होगा। अभीतक तो जितनी भी पत्नियां हों उन सबके प्रवेशके सम्बन्धमें बाधा उपस्थित नहीं हुई, परन्तु अब बाधा उपस्थित होना सम्भव है।

इस सम्बन्धमें हमीदिया इस्लामिया अंजुमन तथा ब्रिटिश भारतीय संघ शीघ्र ही आन्दोलन छेड़नेवाला है।

हमें आशा है कि श्री आदमजीके सलाहकार अब बाई रसूलको डर्बन ले आकर मामलेमें पूरी सावधानीसे काम लेंगे। निकाह और तलाकके सम्बन्धमें प्रतिष्ठित मौल-वियों तथा दूसरे लोगोंके हलफनामे दाखिल करानेकी जरूरत है। और उसके साथ बाई रसूलका हलफनामा भी दाखिल करना होगा। यदि ऐसा किया गया तो मेरा विश्वास है कि न्यायालयको [बाई रसूलके पक्षमें] अपना निर्णय देना ही पड़ेगा। डर्बनके मामलेमें एक बार हुक्म हासिल हो जाये तो स्पष्ट है कि फिर इस महिलाके ट्रान्सवालमें प्रविष्ट होनेमें अड़चन पैदा हो ही नहीं सकती।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ८-७-१९११

१०२. पत्र : मगनलाल गांधीको

आषाढ़ बदी १ [जुलाई १२, १९११][1]

चि० मगनलाल,

चि० छगनलालका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। जान पड़ता है कि उसे खूब पश्चात्ताप हुआ है। कभी-कभी थोरोका कोई वाक्य 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित करनेके लिए श्री वेस्टको उतार कर दे दिया करो। अब हमें छगनलालके तारका इन्तजार करना है। अभीतक उसका तार नहीं मिला; इससे मालूम होता है कि उसकी रवानगीके बारेमें फिर कोई खलल पैदा हो गया है। तुमने फीनिक्समें टॉल्स्टॉय-के बारेमें स्वप्न देखा था, उसके बारेमें लिखा गया तुम्हारा पत्र आज हाथ पड़ा। ऐसा लगता है कि उत्तरमें कुछ तुम्हें लिख भेजनेके इरादेसे मैंने उसे उठा रखा होगा। स्वप्नोंको कोई भी महत्व नहीं देना चाहिए। स्वप्न हमारे मनकी तरंगोंकी प्रतिक्रिया भी हुआ करते हैं। इतना काफी है कि हम साधुताका ध्यान निरन्तर बनाये रखें।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६३६) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. इस पत्रमें श्री छगनलालके दक्षिण आफ्रिका आनेका उल्लेख है। वे वहाँ जुलाई २०, १९११ को पहुँचे थे। सन् १९११में आषाढ़ बदी १, जुलाईकी १२ तारीखको पड़ी थी।

१०३. उपनिवेशमें जन्मे भारतीयोंसे

पिछले सप्ताह इस पत्रमें डर्वनकी वतनी औद्योगिक प्रदर्शनीपर हमने एक लेख छापा था।[1] इस उपनिवेशमें जन्मे जिन मित्रोंने उस विशेष लेखको नहीं पढ़ा हो वे कृपा करके उसे जरूर पढ़ लें और उसपर विचार करें। उसे एक ऐसे व्यक्तिने लिखा है जो स्वयं आदर्शवादी हैं और जानते हैं कि वे क्या लिख रहे हैं। इसके अतिरिक्त वे भारतीय पक्षके समर्थक हैं, और उसके लिए हमारे साथ काम भी कर रहे हैं। इसलिए जिन भारतीयोंने अपने जीवनके ढाँचेका अभी निर्माण नहीं किया है अथवा यदि कर लिया है तो जिन्हें उससे पूरा सन्तोष नहीं है उन्हें हमारे इस लेखकके विचारोंपर अवश्य ही मनन करना चाहिए। दक्षिण आफ्रिकामें हमारा भविष्य बहुत अधिक अंशोंमें उनके आचरणपर निर्भर करता है, जिनका जन्म इसी देशमें हुआ है और जिनके लिए भारत केवल एक भौगोलिक नाम है।

हम अपने लेखकके इन शब्दोंसे सहमत हैं कि वकीलोंके दफ्तरोंमें मोढ़ोंपर बैठे-बैठे ऊँघते रहना कोई उपयोगी आकांक्षा नहीं है। हमारे मित्र यदि एक क्षण भी सोचें तो उनकी समझमें आ जायेगा कि क्लार्कों या व्यापारियोंसे ही किसी राष्ट्रका निर्माण नहीं होता। यूरोपीय तो बहुतेरे उपयोगी धन्धे करते हैं; परन्तु जनरल बोथा उन्हें भी "खेती-बाड़ीकी ओर लौटने"की सलाह देते हैं। संसार तो किसानों और उनके लिए अनिवार्य दूसरे धन्धेवालों — उदाहरणार्थ बढ़ई, मोची, लुहार, राज, ईंटें पाथनेवाले, दर्जी, नाई आदि — के परिश्रमपर जीता है। परन्तु दुःखकी बात है कि उपनिवेशमें पैदा हुए बहुत कम भारतीय इन वस्तुतः इज्जत देनेवाले (क्योंकि वे उपयोगी हैं) धन्धोंको सीखना और उन्हें अपनाना पसन्द करते हैं। हम सब इस देशमें उपयोगी कामोंमें लगे हुए वतनियों तथा भारतीयोंके महान परिश्रमपर ही जी रहे हैं। इस अर्थमें वे इस भूखण्डमें बसे हुए हम सब लोगोंकी अपेक्षा और उन यूरोपीयोंकी अपेक्षा भी, जो किसी प्रकारके उत्पादक धन्धेमें नहीं लगे हुए हैं, अधिक सभ्य हैं। भले ही इस देशका एक-एक सटोरिया यहाँसे चला जाये, हर वकील अपना दफ्तर बन्द कर दे और हर व्यापारी अपना कारोबार समेटकर चला जाये, फिर भी इस देशमें, जिसे प्रकृतिकी कृपासे ऐसी सुन्दर आबोहवा मिली है, हम आरामसे रह सकते हैं। परन्तु यदि महान् वतनी जातियाँ एक हफ्तेके लिए भी अपने कामोंको छोड़ दें तो शायद हम भूखों मरने लग जायें। इसलिए उनके उत्पादक उद्योगोंको

१. लेखकने प्रदर्शनीमें दिखाई गई चीजोंके आधारपर वतनियोंके उद्यम, हस्त-कौशल और कुशाग्र बुद्धिकी प्रशंसा की थी। उसके विचारमें उपनिवेशमें जन्मे भारतीय इन उपयोगी उद्योगोंको सीखना नहीं चाहते थे। उसने यह भी कहा था कि वर्तमान शिक्षासे उनके बीच केवल क्लार्क पैदा होंगे, जबकि उन्हें समाजोपयोगी बनानेके लिए तथा जीवनमें सफल होनेके लिए कृषि और अन्य उपयोगी उद्योगोंका व्यावहारिक प्रशिक्षण देना आवश्यक है।

सीख लेना और समाजोपयोगी दस्तकारियोंमें उनकी जैसी प्रवीणता प्राप्त कर लेना हमारे लिए एक सम्मानकी चीज होनी चाहिए। हम अपने मित्रोंको विश्वास दिलाना चाहते हैं कि हमारी समस्त दुःखदायी निर्योग्यताएँ यदि कलमके एक ही झटकेसे दूर हो जायें तो भी उपनिवेशमें पैदा हुए मित्रोंकी अवस्था तबतक किसी प्रकार सन्तोषजनक नहीं हो सकेगी जबतक कि वे इस लेखमें बताये उद्योगोंकी ओर अपनी बुद्धि और शक्ति नहीं लगायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १५-७-१९११

१०४. भारतकी दुर्दशा

"समझौता सम्पूर्ण रूपसे हो जानेका समाचार मिला है। यह समाचार सन्तोषप्रद है। जिस संघर्षमें इतनी कुर्बानी दी गई हो, उस संघर्षका परिणाम एक ही हो सकता है। फिर भी, परिणामके सिलसिलेमें विचार करें तो यहाँकी [भारतकी] दुर्दशापूर्ण स्थितिपर बहुत ही दुःख होता है। हालत तो इतनी बुरी हो गई है, मानो सारीकी-सारी इमारत जर्जर होकर ढह रही हो। जो थोड़ा-बहुत ढाँचा खड़ा भी है सो ठोस बुनियादके कारण। तन, मन और धनसे लोग क्षीण हो गये हैं। चारों ओर दारिद्र्य फैला हुआ है। जैसे यह एक कहावत है कि "बैठा बनिया बाँट ही तौले।"[1] उसी प्रकार आपने यह कहावत भी सुनी होगी कि "धोबीसे जीते नहीं, गधीके कान मरोड़े।"[2] दरिद्रता-रूपी वृक्षमें पापके ही फल आते हैं। आर्थिक परिस्थिति तो बेहद बिगड़ चुकी है। लोग झल्लाकर पूछ रहे हैं कि कौन-सा धन्धा किया जाये। आप कहेंगे कि खेती सबसे अच्छी है। परन्तु यह तो धीरज, लगन और दृढ़ताके साथ काम करनेवालोंके लिए है। लोगोंकी इस दुर्दशाके कारण हैं जात-बिरादरीके झगड़े, व्यवहार और जाति-भोज आदिके मामलोंमें अशोभनीय होड़, चार, छः, आठ या दस घंटे नौकरी करके जो मिल जाये उसीमें खुश रहना और शेष समय आलस्यमें बिताना, इसीमें झूठा सन्तोष मानना, प्लेग आदिसे डरना इत्यादि। शिक्षा जो सुख-समृद्धिका साधन मानी जाती है [हमारे लिए] घोरतम दुर्दशाका कारण सिद्ध हुई है। पढ़ते-पढ़ते शरीर तो चौपट हो ही जाता है। पढ़ाई-लिखाईके तरीके ऐसे हैं कि पढ़नेवाला तनसे, मनसे और धनसे बिलकुल खोखला हो जाता है। इस सबके अलावा समाजमें अपनी स्थिति बनाये रखनेका बोझ। मनुष्य ज्यों ही कुछ समझने-बूझने योग्य हुआ और उसने सिर उठाकर जीवन-यापन करनेकी इच्छा की कि वह कुटुम्ब-परिवारके बोझसे दब जाता है।"

१. मूलमें, "नवरो हज्जाम पाटला मूडे"
२. मूलमें, "दुबलो धणी रांडपर सूरो"।

उपर्युक्त विचार हमने दक्षिण आफ्रिकाके एक सुशिक्षित अनुभवी भारतीय द्वारा दूसरे भारतीयके नाम लिखे एक पत्रमें देखे हैं। लेखकने देशकी स्थितिकी हूवहू तस्वीर खींचकर रख दी है। इन विचारोंको पाठकोंके समक्ष रखना और उनपर अपनी सम्मति प्रस्तुत करना हमें ठीक जँचा है। देशभक्तका प्रथम कर्त्तव्य यह है कि वह देशकी दशाका ज्ञान प्राप्त करे; इस दशाको सुधारनेके उपाय खोज निकालना उसका दूसरा कर्त्तव्य है। फिर देशभक्तको चाहिए कि वह इन उपायोंको कार्यान्वित करे; यह उसका तीसरा कर्त्तव्य हुआ। देशकी स्थिति ऊपर लिखे अनुसार ही है। इसके विषयमें शंका करनेकी गुंजाइश नहीं है। उपाय जान लेनेके पश्चात् उनपर अमल करना पाठकोंके हाथमें है। हम तो उपायकी खोज करनेमें हाथ वटा सकते हैं।

देशकी स्थिति खराव क्यों है, इसपर प्रकाश डालते हुए उपर्युक्त पत्रके लेखकने सहज ही कुछ कारणोंका उल्लेख किया है। आइए, उनपर कुछ और विचार करें। दुर्दशा भुखमरीके कारण नहीं हुई है। भुखमरी ही दुर्दशा है। लोगोंका नौकरीमें सन्तोष मान लेना दुर्दशाका कारण नहीं, वल्कि यही दुर्दशा है। जात-पाँतके मामलोंमें झगड़ना, दम्भ, गलत होड़, प्लेगका डर — ये सव वातें दुर्दशाका कारण नहीं वल्कि दुर्दशा ही हैं। इन सबका कारण एक ही है, और वह यह कि हम कर्त्तव्यका पालन नहीं करते, हम ईश्वरको भूल गये हैं और शैतानको पूज रहे हैं। प्रत्येक व्यक्तिका कर्त्तव्य तो ईश्वरको भजना है। माला फेरना ईश्वरको भजनेका चिह्न नहीं है; मस्जिदमें या मन्दिरमें जाना, नमाज पढ़ना या गायत्री जपना — यह भी नहीं। माला फेरना, मसजिद या मन्दिरमें जाना, नमाज पढ़ना या गायत्री जपना अपनी-अपनी जगह ठीक है। लोगोंके लिए अपने-अपने धर्मके अनुसार इनमें से एक या दूसरी चीज आवश्यक है। परन्तु इनमें से किसीको भी ईश्वरोपासनाका लक्षण नहीं माना जा सकता। ईश्वरको तो वह भजता है जो दूसरोंके सुखको अपना सुख मानता है; जो किसीकी निंदा नहीं करता, जो धन-संचय करनेमें अपना समय नहीं गँवाता, अनीतिके मार्गपर नहीं चलता, जो सवको मित्र मानता हुआ अपना लोक-व्यवहार चलाता है; जो केवल ईश्वरसे ही डरता है, इसलिए प्लेगसे या मनुष्यसे नहीं डरता। ऐसा व्यक्ति जातिके डरसे जाति-भोज नहीं करेगा। यदि वह युवा होगा तो उचित अवस्थाको प्राप्त हुए विना अथवा विना आवश्यकताके, महज जातिवालोंके डरसे अपना विवाह नहीं करेगा। यदि वह पिता है तो जातिवालोंके डरसे अपने पुत्रों और पुत्रियोंको गड्ढेमें नहीं ढकेलेगा। ऐसा मनुष्य कोई काम करते समय इस प्रकार नहीं सोचेगा कि अमुक व्यक्ति या हमारी विरादरी इसके वारेमें क्या ख्याल करेगी? वह तो यह सोचेगा कि मेरे इस कार्यके विषयमें परमेश्वर क्या कहेगा? इस सवका मतलव यह निकला कि हम चाहे हिंदू हों या मुसलमान, पारसी हों या ईसाई — अपने-अपने असली धर्मको भुला वैठे हैं। यदि यह विचार ठीक हो तो हमें प्लेगसे बचनेके उपाय सोचनेकी जरूरत नहीं रह जाती, अंग्रेजी-शासनके विरुद्ध विद्रोह करनेकी जरूरत नहीं रह जाती, न वड़े-वड़े संघों और उनकी आडम्वरपूर्ण कार्यप्रणालीकी, और न समितियों और सभाओंकी। तव हम इस खयालसे एक दूसरेका मुँह न ताकेंगे कि जव सभी अमुक कामको प्रारम्भ करेंगे तव हम भी करेंगे। केवल एक वातकी जरूरत है — अपने कर्त्तव्यका भान होनेके वाद हमें

उसका पालन निरन्तर मृत्युपर्यंत करना चाहिए; दृढ़ रहना चाहिए। यदि यह बात ठीक है तो हमें ईश्वरकी मददके अलावा और किसीकी मददकी जरूरत नहीं है। फिर हम आगकी लपटोंसे घिरे रहकर भी कर्त्तव्यका पालन कर सकते हैं। कोई तलवारकी धार-पर खड़ा कर दे तो वहाँ भी रह सकते हैं। ऐसा करनेमें अधिकसे-अधिक यही हो हो सकता है कि हमारी देह चली जाये। इसमें डरनेकी क्या बात है? डरनेसे देह रहनेवाली नहीं है; जानेकी घड़ी आ जायेगी तब वह जायेगी ही।

यदि हम इस प्रकार अपने कर्त्तव्यका पालन करते जायें, और विचार करनेसे मालूम होता है कि ऐसा करना कठिन नहीं है — तो दूसरी बातें अपने-आप सूझ जायेंगी। घने जंगलमें रातके समय भटकनेवाले मनुष्यके लिए सबसे ज्यादा जरूरी चीज दीपक है। वह फिर निर्भय होकर रास्ता मिलने तक बाट देखता रह सकता है। रास्ता मिलते ही वह उस रास्ते चलना शुरू कर देगा। अगर रास्तेमें उसे संस्थाओं-रूपी कोई पुल मिल जायें, तो वह नदी-नालोंको पार कर लेगा। यदि ये पुल मरम्मत-तलब हो गये हैं, तो वह दीपककी मददसे उस पुलकी दरार आदिको देखकर लोगोंको बतायेगा। कर्त्तव्य-रूपी यह दीपक प्रत्येक व्यक्तिको सुलभ है। और यह तो एक बच्चा भी स्वीकार करेगा कि दीपक मिलनेपर रास्ता मिल ही जाता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-७-१९११

१०५. पत्र: मगनलाल गांधीको

सोमवारकी रात, [जुलाई १७, १९११][1]

चि० मगनलाल,

ट्रस्ट आदिके विषयमें लिखा तुम्हारा पत्र मेरे हाथमें आज ही आया है। अब इसके बाद तुम फार्मके पतेपर पत्र लिखोगे, तो ठीक रहेगा। मेरा विचार जोहानिसबर्ग [सप्ताहमें] केवल एक दिन अर्थात् सोमवारको ही जानेका है।

लाइब्रेरीकी व्यवस्था ठीक है। फिलहाल किताबें न मँगाकर पैसा जमा करते जाना ही ठीक है।

१. जुलाई १५, १९११ को प्रकाशित एक विज्ञापनके अनुसार **सोमाली** नामक जहाज, जिससे छगनलाल गांधी आनेवाले थे, १५ जुलाईको डर्बन पहुँचनेवाला था। उसी सप्ताहके गुजराती **इंडियन ओपिनियन**में छपा कि **सोमाली** जहाज १५ की जगह १८ जुलाईको डर्बन पहुँचेगा। वस्तुतः वह २० जुलाईको पहुँचा (**इंडियन ओपिनियन**, २२-७-१९११)। गांधीजी द्वारा मगनलालको लिखे गये १२ जुलाईके पत्रसे पता चलता है कि वे छगनलालके डर्बन पहुँचनेपर पहुँचका तार पानेकी आशा करते हैं। इससे पता चलता है कि यह पत्र १२ जुलाईके बाद पड़नेवाले सोमवारको लिखा गया होगा, और उस सोमवारको जुलाईकी १७ तारीख थी। उस समय तक **सोमाली**के १८ जुलाईको डर्बन पहुँचनेकी आशा थी। इसीलिए पत्रके अन्तमें लिखा गया है कि "छगनलाल. . . इस पत्रके पहुँचते-पहुँचते आ भी गये होंगे।"

मुझे भी ऐसा लगता है कि अब स्टोरसे होनेवाले नफेको अलग गिननेकी जरूरत नहीं है। इसका फैसला यदि अभी न हो सका, तो हम उसे, मैं जब वहाँ आऊँगा, तब कर डालेंगे। तुम इसे याद रखना।

अब अपने पत्रके मुख्य भागके विषयमें। यदि तुम थोड़ासा विचार करो, तो यह देख सकोगे कि कौन किसे निकाले, यह सवाल उठता ही नहीं। जिस समय फीनिक्सकी हालत नितान्त कमजोर हो जायेगी, उस समय निकालने या रखनेकी बात उठेगी ही नहीं। तब तो जिसपर सच्चा रंग चढ़ा होगा वही वहाँ रहेगा। उस समय सवाल तो यह उठेगा कि वहाँ कौन रहे। आज हम वेतन नहीं देते, लेकिन लोगोंका भरण-पोषण करते हैं। असली सवाल तो यह है कि उसमें भी कमी करके, कष्ट सहकर, रूखा-सूखा खाकर कौन रह सकता है — कौन रहेगा? मतलब यह कि यह सवाल उठता ही नहीं। सच्ची माँ कौन है और बनावटी माँ कौन, इसकी परीक्षा उस समय हो जायगी। इसलिए तुम्हारे मनमें जो शंका उठी है, वह निरर्थक है।

तुम्हारी सन्तान सम्बन्धी शंका भी ऐसी ही है। भारत धर्म-क्षेत्र है, यह बात सही है। किन्तु वहाँ पाप-क्षेत्र भी है। इस प्रकार दूसरे स्थानोंमें पाप-क्षेत्र होते हुए भी कहीं-कहीं धर्म-क्षेत्र रूपी हरियाली भी देखनेमें आती है। किन्तु हम तो अपना मुख भारतकी ओर रखकर अपना काम कर रहे हैं। इसलिए सन्तानसे सम्बन्धित सवाल कहाँ रहा? फीनिक्सका विधान ऐसा होगा और है कि वे सब लड़के जिनकी भारत जानेकी इच्छा होगी, वहाँ हो ही आयेंगे। फीनिक्स केवल फीनिक्समें ही रहेगा, ऐसी बात नहीं है। जहाँ भी फीनिक्सका उद्देश्य पूरा हो रहा हो, वहाँ फीनिक्स है। क्या तुम यह भूल जाओगे कि हम जो भी तैयारी कर रहे हैं, वह सब भारतके लिए ही है? किन्तु यदि भारतके लिए तुम्हारी और तुम्हारी संतानकी देह फीनिक्समें ही काम आये, तो इसमें क्या बुराई है?

यदि भारतका-सा आचरण हम फीनिक्समें ही करते हों, तो फिर भारत और फीनिक्समें अन्तर इतना ही रहा कि भारतमें इस समय जो अनाचार दिखाई पड़ता है उसे छोड़कर हमने फीनिक्समें केवल सदाचार ही ग्रहण किया है। इसमें दुःखकी क्या बात है? तुम्हारे लिखनेपर मैं इस सम्बंधमें और अधिक लिखूँगा।

यदि तुम मेरी आत्माको समर्थ मानते हो तो तुम्हारी आत्मा भी वैसी ही है। मेरी आत्मा और तुम्हारी आत्मामें कोई भेद नहीं है। किंतु तुम्हारे भीतर अनात्माका जो अंश है यानी भीरुता, संशय, अनिश्चय इत्यादि, उसे तुम दूर कर दो, तो हम दोनों समान ही हैं। अंतर इतना ही है कि दीर्घ प्रयत्नके बाद मैंने अपना अधिकांश मल धो डाला है। यदि तुम दृढ़तापूर्वक प्रयत्न करोगे, तो तुम भी उतना ही, बल्कि उससे ज्यादा धो सकोगे।

छगनलाल, आनन्दलाल,[1] जमनादास[2] इत्यादि शायद इस पत्रके वहाँ पहुँचते-पहुँचते आ भी गये होंगे। सब आ रहे हैं, इसलिए मुझे तो बड़ी खुशी हो रही है। तुम

१. और २. छगनलालके भाई।

कसौटी चाहते हो, तो वह तुम्हें मेरे देनेसे नहीं मिलेगी। अनुकूल समय आयेगा, तो आप मिल जायेगी। हम अपने कर्तव्यमें तत्पर रहें, इतना ही काफी है।

उतरनेमें किसीको कोई अड़चन होगी, ऐसा लगता तो नहीं है, फिर भी मैंने दफ्तरको[1] आवश्यक सूचनाएँ दे रखी हैं।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

आशा है अगले सप्ताह तुम्हारे हाथमें ट्रस्टडीडकी नकल पहुँच जायेगी, वह केवल मसविदा है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५०९१) से।
सौजन्य : श्रीमती राधाबेन चौधरी।

१०६. पत्र : हरिलाल गांधीको

[लॉली]
आषाढ़ वदी ० [जुलाई २५, १९११][2]

चि० हरिलाल,

देशसे तुम्हारा पत्र आना चाहिए था। चि० छगनलालसे तुम मिले थे और वे यहाँ आ भी गये। ऐसा मान लेता हूँ कि तुम्हारा पत्र अगली डाकसे आयेगा।

छगनलाल समाचार लाये हैं कि पूज्य रेवाशंकरभाईने[3] तुम्हें बंबईमें किसी कमर्शियल क्लासमें जाने अर्थात् व्यापारकी सलाह दी और अहमदाबादमें रहनेकी बातको नापसंद किया। उसने यह भी बताया है कि वह वहाँसे चला तबतक तो तुम अहमदाबादमें रहनेके ही पक्षमें थे। मेरे विचारमें अभी अहमदाबाद ही ठीक है। हमारा लक्ष्य वहाँ ज्यादा अच्छी तरह पूरा होता है। अहमदाबादमें शायद अंग्रेजी सीखनेकी सुविधा कुछ कम मिले, किंतु गुजराती, संस्कृत आदिका अभ्यास अहमदाबादमें ठीक हो सकेगा। मुझे तो बम्बई बिलकुल नहीं भाता। फिर भी तुम्हें जो ठीक जान पड़े, सो करना।

चंचीके पत्रसे मालूम होता है कि मणिलाल[4] सख्त बीमार है। यदि उसका विचार यहाँ आनेका हो, तो उससे कहना कि आ जाये। बली और वह दोनों ही आ सकते हैं। क्षय रोगके लिए खुली हवा अच्छी होती है। किंतु सादी खुराक ही मुख्य है। चंचीको लिखना कि वह मेरे पत्रोंकी नियमित प्रतीक्षा न करे। इस समय मेरे ऊपर बहुत बोझ है। मैं जोहानिसबर्ग केवल सोमवारको जाता हूँ। सुबह १० बजे तक फार्मपर शारीरिक मजदूरी, १ से ४-३० तक पाठशाला, ५-३० पर भोजन और रातको दफ्तरके

१. एशियाई पंजीयकको लिखा गया यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

२. पत्रके पहले अनुच्छेदमें छगनलाल गांधीके पहुँच चुकनेका उल्लेख है। वे दक्षिण आफ्रिका १९११ में पहुँचे थे। उस वर्ष आषाढ़की अमावस्याको जुलाईकी २५ तारीख पड़ी थी।

३. बम्बईके श्री रेवाशंकर जगजीवन झवेरी, जो डॉ० प्राणजीवन मेहताके भाई थे।

४. मणिलाल लक्ष्मीचन्द अडालजा; हरिलालके साढू; बलीबेनके पति।

तथा दूसरे पत्र आदि लिखना। ऐसी मेरी दिनचर्या है। यह सारा कार्य मैं अकेला ही करता हूँ इसलिए समय बिलकुल ही नहीं बचता। रातको भी देर तक लिखता रहता हूँ। यह पत्र लिख रहा हूँ तब रातके ९-४५ हुए हैं और अभी दूसरे पत्र भी लिखनेको हैं।

फार्मपर श्री और श्रीमती जोन, रम्भाबाई,[1] श्रीमती फिलिप, श्री के० नायडू और उनकी पत्नी — इतने व्यक्ति हैं। मेरी पाठशालामें ५ लड़के और दो लड़कियाँ हैं। किन्तु सबकी कक्षा अलग-अलग है। इसलिए इतने लड़के-लड़कियाँ भी ज्यादा मालूम होते हैं।

अलोने आहारका मेरा नियम अभी चल रहा है। उससे मुझे लाभ हुआ है और जान पड़ता है कि बाका तो जीवन ही उसके कारण बचा है।[2] मेरी समझमें तो बाका रंग ही बदल गया है। लड़के भी एक सप्ताह तक अलोना और दूसरे सप्ताह सलोना, इस क्रमसे यह नियम चला रहे हैं। ऐसा करते-करते सम्भव है कि वे पूरी तरह अलोने आहारपर आ जायें। श्री कैलेनबैकने भी अलोने आहारका प्रयोग शुरू किया है। उससे रक्तकी शुद्धि बहुत अच्छी होती है, ऐसा अनुभव आ रहा है।

मणिलाल फीनिक्समें ही है। वहाँ मेरा खयाल है कि उसका मन स्वस्थ और प्रसन्न रहता है।

मैं श्री स्मट्ससे फिर मिला था। श्री क्विनके आदमी रिहा नहीं हुए, इसलिए अभी उनके रिहा होनेकी आशा करता हूँ। अब केवल दो ही व्यक्ति रह गये हैं। स्मट्सने नये विधेयकके विषयमें भी बातचीत की थी। बातचीतमें तो वह ठीक मालूम हुआ। शायद नेटालमें स्त्रियोंपर लगनेवाला कर भी उठा लें। प्रसंगतः मैंने यह बात भी छेड़ी थी।

चंची और रामीकी तबीयत कैसी रहती है सो लिखना। उन दोनोंको तुम यहाँ जब भी भेजना चाहो, भेज देना। इसके लिए पैसा रेवाशंकरभाईसे लेना। बा तो उसके लिए तरस रही है। मैंने उससे कहा कि चूँकि तुम हिन्दुस्तानमें ही हो, इसलिए उनके आनेका निर्णय तुम्हारे ऊपर छोड़ना ठीक होगा।

तुम स्टीमरमें कुछ पढ़ पाये थे? बम्बईमें उतरनेपर तुम्हारे सामानकी किसीने जाँच की थी या नहीं, इत्यादि समाचार देना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ९५३५) की फोटो-नकलसे।

१. श्रीमती रम्भाबाई सोढा।

२. देखिए **आत्मकथा**, भाग ४, परिच्छेद २९।

१०७. मणिलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश

[जुलाई २५, १९११ के आसपास][1]

. . .[2] इस समय तो मैं पाठशालामें फँसा हुआ हूँ। पाठशाला १ से ४।। बजे तक बराबर चलती रहती है। सोमवारको जोहानिसबर्ग जाता हूँ इसलिए केवल उस दिन छुट्टी दे देता हूँ। पाठशाला रविवारको भी चलती है। सुबहके तीन घंटे भी पाठशालामें ही जाते हैं। किन्तु उस समय केवल मजदूरीका — खेतीका और घरका काम होता है। मैं देखता हूँ कि इससे लड़कोंका शरीर और मन दिन-प्रतिदिन सुधर रहा है।

जबतक तुम्हारे मनमें भरपूर उत्साह उत्पन्न नहीं होता, तबतक विद्याभ्यास सम्भव नहीं है। ऐसा न समझना कि यहाँ नहीं हो पाता, तो विलायतमें हो जायेगा। जमनादास तो तुम्हारा सहपाठी रहा है, ऐसा मुझे याद आता है। यदि ऐसा हो, तो मैं मानता हूँ कि तुम्हारी और उसकी आपसमें खूब पटेगी। उसकी फिक्र रखना और देखना कि वहाँ उसका जी लगता रहे।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० १०२) से।
सौजन्य : सुशीलाबेन गांधी।

१०८. मानपत्र : एच० कैलेनबैकको[3]

जोहानिसबर्ग
जुलाई ३१, १९११

हरमान कैलेनबैक महोदयकी सेवामें

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको अपना भ्रातृत्वपूर्ण हार्दिक सहयोग देकर आपने उनका जो स्नेह और आदर अर्जित किया है, यह मानपत्र उसीका एक तुच्छ प्रतीक है। ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष और अवैतनिक मन्त्रीकी हैसियतसे हम इस संस्थाकी ओरसे आपसे इसे स्वीकार करनेका अनुरोध करते हैं।

१. हरिलाल गांधीको लिखे २५ जुलाईके पत्रके अनुच्छेद ४ और इस पत्रके अनुच्छेद १ से जान पड़ता है कि ये दोनों पत्र एक ही समय लिखे गये होंगे। यह तो निश्चित ही है कि पत्र जुलाई २०, १९११ के बाद लिखा गया है — जमनादास अपने भाई छगनलाल गांधीके साथ उसी दिन नेटाल पहुँचे थे।

२. पत्रके प्रथम कुछ पन्ने उपलब्ध नहीं हैं।

३. यह मानपत्र कैलनबैकको ३१ जुलाई, १९११ को उनके यूरोप जाते समय विदाईके अवसरपर दिया गया था। देखिए "कैलनबैकका स्वागत", पृष्ठ १२९-३१।

प्रवासी और पंजीयन कानूनोंके कारण हमपर थोपे गये दीर्घकालीन संघर्षके दौरान आपने हमारी जो सहायता की, वह स्वयंस्फूर्त थी, इसलिए उसका मूल्य और बढ़ गया है।

आपने ऐन मौकेपर सत्याग्रहियोंको इस्तेमालके लिए टॉल्स्टॉय फार्म देनेकी जो उदारता दिखाई थी, वह हमारे लिए अनमोल सहायता सिद्ध हुई। और हमारे गाढ़े समयमें आपने व्यक्तिगत रूपसे हमारी जो मदद की है, उसका मूल्य तो चुकाया ही नहीं जा सकता।

आपने ट्रान्सवाल यूरोपीय समितिके अवैतनिक मन्त्रीकी हैसियतसे जो कार्य किया है, उसके लिए भी हम आपके आभारी हैं।

आपने इन और ऐसी ही अन्य कई कृपाओंसे भारतीय समाजको सदाके लिए अपना ऋणी बना लिया है। हम दुआ करते हैं कि इस सबके लिए भगवान् आपपर अनुकम्पा करें।

अ० मु० काछलिया,
अध्यक्ष
मो० क० गांधी
अवैतनिक मन्त्री
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ५–८–१९११

१०९. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
श्रावण सुदी ७ [अगस्त १, १९११][1]

चि० छगनलाल,

तुम्हारे पत्रसे लगता है कि तुम फिर घबड़ाये हुए हो। इसका कोई कारण मैं नहीं देखता।

चि० जमनादासको केप अथवा लन्दनकी मैट्रिककी परीक्षा देनी हो, तो दे सकता है। लेकिन परीक्षा देकर क्या करेगा, यह मेरी समझमें नहीं आता। परीक्षाकी तैयारी करते हुए उसके लिए जो-कुछ पढ़ना पड़ेगा, उसमें समय लगाना व्यर्थ होगा; क्योंकि उसे तो बादमें भूलना ही है। इस बातका विचार करना चाहिए कि जमनादासको

१. छगनलाल गांधी जुलाई महीनेमें अपने साथ जमनादासको दक्षिण आफ्रिका लाये थे; देखिए "पत्र : मगनलाल गांधीको", पृष्ठ १२३। इससे प्रकट होता है कि यह पत्र सन् १९११ में लिखा गया। उस वर्ष श्रावण सुदी ७को अगस्तकी पहली तारीख पड़ती थी। श्री छगनलाल गांधी भी — जिनके सौजन्यसे यह पत्र प्राप्त हुआ है — इस तारीखकी पुष्टि करते हैं।

अन्तमें क्या करना है। उसे तुम फीनिक्सके काममें लगाना चाहते हो या सिर्फ उसके स्वास्थ्यके खयालसे यहाँ लाये हो? तुम्हारा उद्देश्य जो भी रहा हो, उसे लाकर तुमने बुद्धिमानी ही की है। . . .[1] समझ लेते थे कि शिष्योंकी सामान्य शक्ति कितनी है और उसका विकास करते थे। आजकी सारी शिक्षा तो मुझे शुद्ध पाखण्ड मालूम होती है। दावरकी संस्थाकी[2] परिचय-पुस्तिका पढ़कर दुःख हुआ। ऐसी है आजकल मेरे मनकी दशा।

रेवाशंकर भाईका कर्ज बढ़ता जाता है। यह बात मेरे ध्यानमें है और मैं उसका उपाय सोचता रहता हूँ। तुमने जो कर्ज किया है, उसका विचार तो मुझे ही करना है। तुम अपने सिरपर व्यर्थका बोझ न लो, तो इससे तुम्हारा और मेरा, दोनोंका कल्याण होगा। अब इसके बाद कर्ज न लेनेका संकल्प कर लेना। तुम्हें खुशालभाईको कितना भेजना चाहिए, इस बातका खयाल रखते हुए लिखना कि तुम्हें हर मास कितना रुपया उठाना होगा। इस हिसाबमें कर्जका खयाल नहीं करना है। फीनिक्सके विधानमें परिवर्तन करनेकी जरूरत महसूस होती है। इस बातपर विचार करना और उसके विषयमें मुझे निस्संकोच भावसे लिखना। मैं अपने विचार सख्त शब्दोंमें व्यक्त करूँ, तो उसका खयाल न करना। मेरे मनकी दशा इस समय ऐसी है कि मैं अपने विचार कोमल या सांकेतिक शब्दोंमें नहीं रख सकता। किसी दीन-हीन मनुष्यके हाथ पारस-मणि लग जाये तो वह आनन्दसे कैसा नाचने लगेगा, इसकी कल्पना करना। ऐसी . . .[3] अभी निकट भविष्यमें ऐसा शायद न हो सके।

लड़कोंको मैंने (एडविन आर्नोल्डकी) 'इंडियन आइडिल्स' ('भारतीय आख्यान') नामकी पुस्तक पढ़कर सुनाई। उसमें 'महाभारत' के उपाख्यानोंका सुन्दर अनुवाद है। इन कहानियोंमें 'एन्चैन्टेड लेक'[4] नामकी कहानी भी पढ़ी। वह अद्भुत लगी। इसका संस्कृत नाम क्या है, इस बातका तुम्हें या किसी औरको पता हो तो मुझे बताना। इसका भावार्थ कविताके रूपमें अम्बारामसे[5] करवाने और छापनेकी बात मेरे मनमें है। पानीकी आशासे सब पाण्डव एक सरोवरपर जाते हैं। किन्तु उतावलीके कारण वे उस सरोवरके अधिपति यक्षको उसके प्रश्नोंका उत्तर नहीं देते। इसलिए वहाँ मूर्छित होकर गिर पड़ते हैं। सबके अन्तमें युधिष्ठिर जाते हैं; वे उत्तर देनेके बाद पानी पीते हैं। ये सब उत्तर कर्त्तव्यसे सम्बन्धित हैं और उनमें बड़ी विशेषता है। [यक्ष और युधिष्ठरके] इस सम्वादकी जानकारी शायद तुम्हें हो।

तुम धीरे-धीरे अंग्रेजीमें लिखनेका अभ्यास करते रहो, तो ठीक हो। यदि (डिकिन्सनकी) 'लेटर्स ऑफ़ जॉन चाइनामैन' तुम्हारी समझमें आती हो, तो तुम

१. आगेके दो पृष्ठ उपलब्ध नहीं हैं।

२. बम्बईका दावर कॉलेज ऑफ़ कॉमर्स।

३. यहाँ चार पृष्ठ गायब हैं।

४. देखिए **महाभारत** वनपर्व। यहाँ कोई वास्तविक सरोवर नहीं था। युधिष्ठिरकी परीक्षा लेनेके लिए धर्मराज द्वारा रचा हुआ एक माया सरोवर था।

५. अम्बाराम भट्ट; उस समय सत्याग्रह आदि विषयोंको लेकर कविताएँ लिखते थे।

उसका अनुवाद करो। मुझे अनुवाद करनेका समय नहीं है। इस पुस्तकको मैं अभी-अभी फिर पढ़ गया। पुस्तक अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

मोहनदासके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्रकी श्री छगनलाल गांधी द्वारा तैयार की गई प्रतिलिपि (सी० डब्ल्यू० ५०९२) से।

सौजन्य : छगनलाल गांधी

११०. श्री कैलेनबैकका स्वागत

श्री कैलेनबैकका इरादा था कि वे जोहानिसबर्गसे चुपचाप खिसक जायें और भारतीय समाज सम्मानमें कोई प्रदर्शन न कर पाये। परन्तु ईश्वरकी इच्छा कुछ और ही थी। ज्योंही लोगोंको ज्ञात हुआ कि श्री कैलेनबैक यूरोप जानेवाले हैं, प्रमुख सत्याग्रही आपसमें मशविरा करने लगे कि "कुछ-न-कुछ किया जाना चाहिए।" उन्हें लगा कि टॉल्स्टॉय फार्मके मालिकको — जिन्होंने अपने अप्रतिम ढंगसे हमारे लिए इतना अधिक किया है — समाज द्वारा बगैर सम्मानित किये नहीं जाने देना चाहिए। संयोगसे लोगोंको खबर लग गई कि कैलेनबैक किस दिन जा रहे हैं। समय बहुत कम रह गया था, फिर भी चन्दा तुरन्त एकत्र हो गया। यह निश्चित हुआ कि उन्हें एक कलापूर्ण मान-पत्र ठोस रजत-मंजूषामें रखकर भेंट किया जाये। यह विचार बहुत असंगत था; क्योंकि श्री कैलेनबैकने शान-शौकतसे रहना लगभग छोड़ रखा था और टॉल्स्टॉय फार्मपर वे सादा जीवन बिताने लगे थे। यहाँ उन्होंने अपनी चर्या पूरी तरह गरीब सत्याग्रहियोंके समान बना ली थी। अक्सर वे उन्हींके साथ खाते-पीते थे। बरामदेका फर्श ही उनकी कुर्सी और गोद ही भोजनकी मेज थी। ऐसे व्यक्तिको ठोस रजत-मंजूषा भेंट की जाने-वाली थी। वे उसे रखेंगे कहाँ? पर उत्साही प्रशंसकोंको इससे क्या सरोकार? सो मानपत्र सजाया गया और मंजूषा फरमाइश भेजकर तैयार करवा ली गई। श्री कैलेनबैकको तो बिल्कुल आखिरी मिनटपर बताया गया कि उन्हें एक मानपत्र भेंट किया जानेवाला है। वे हँसे और बोले, "मैंने आपके लिए किया ही क्या है? आपपर मेरा कोई ऋण नहीं है; और यदि हो भी तो अभी उसकी वसूलीका मौका नहीं आया है।" यह बात शनिवारकी है, जब वे टॉल्स्टॉय फार्म जा रहे थे। सोमवारको उन्हें यूरोपके लिए रवाना होना था। परन्तु धुनके पक्के लोग, जो धरनेदारीका कर्त्तव्य निभा चुके थे, "ना" सुननेवाले नहीं थे। श्री कैलेनबैकने कहा "मैं कोई सार्वजनिक सम्मान स्वीकार नहीं कर सकता।" इसपर मुलाकातियोंने कहा — "करना ही पड़ेगा।" फिर वे चले गये। श्री कैलेनबैकने समझा कि बात टल गई। परन्तु सोमवारकी[1] सुबह श्री कैलेनबैक जब लॉलीसे जा रहे थे, श्री थम्बी नायडूके नेतृत्वमें धरनेदारोंका एक जोशीला दस्ता रास्तेमें

१. जुलाई ३१, १९११।

ही आ पहुँचा और उसने उन्हें रोक लिया। ये लोग फ्रीडडॉर्पसे कैनेडा तक पाँच मील इस इरादेसे दौड़ते आये थे कि उन्हें डिब्बेमें जा घेरेंगे। दूसरे लोग उन्हें फोर्ड्सवर्ग स्टेशनपर मिले। ऐसे निश्चयके सामने श्री कैलेनबैक क्या कर सकते थे? वे लाचार हो गये। सत्याग्रह (प्रेम) और घरनेकी एकबार फिर जीत हुई। श्री कैलेनबैक शीघ्रतासे पादरी फिलिप्सके भवन जा पहुँचे। इमाम अब्दुल कादिर बावजीरने सभापतिका आसन ग्रहण किया। थोड़ेसे चुने हुए शब्दोंमें उन्होंने श्री कैलेनबैककी सेवाओंका वर्णन किया, जिसके बाद श्री थम्बी नायडूने यह अभिनन्दन पत्र[1] पढ़ा:

कैंटोनीज़ क्लबकी तरफसे श्री ईस्टनने[2] उनको कार्लाइलके सभी ग्रन्थ चाँदीसे अलंकृत एक सुन्दर मंजूषामें रखकर भेंट किये और हिन्दू संघकी तरफसे श्री मुरारजीने इसी तरहकी एक मंजूषामें उन्हें रस्किनके ग्रन्थ भेंट किये। इसके बाद श्री कैलेनबैकने अपने जवाबमें कहा कि जिन मित्रोंने मेरा इतना बड़ा सम्मान किया, मेरे खयालसे वे किसी भी प्रकार मेरे ऋणी नहीं हैं। ऋणी तो मैं खुद हूँ। पाँच वर्ष तक चलते रहनेवाले इस संघर्षमें मैं जो-कुछ कर पाया वह मेरा सौभाग्य था। और मैंने जो कुछ किया सो अपने ही लिए। मैं वास्तवमें यही मानता हूँ कि इस संघर्षसे मेरा बड़ा हित हुआ है। इसकी समाप्तिपर मैं अपने-आपको बेहतर और पहलेसे ज्यादा ताकतवर महसूस करता हूँ। श्री कैलेनबैकने अपने श्रोताओंको बताया कि इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस लड़ाईके कारण ही वे अपने कितने ही पूर्वग्रहों और कमजोरियोंको जीत पाये हैं। और यदि लड़ाई फिर कभी शुरू हुई तो उनसे जो-कुछ भी बन पड़ेगा वे फिर करेंगे; क्योंकि उनका विश्वास था कि इसमें वे जो-कुछ करेंगे उससे वे फायदेमें ही रहेंगे। इन उपहारोंके लिए एक बार पुनः धन्यवाद देकर उन्होंने करतल-ध्वनिके बीच अपना आसन ग्रहण किया। श्री काछलिया उपस्थित नहीं हो सके। उनके एक मित्र बीमार थे। उन्हें देखनके लिए वे वार्मबाट्र्स गये थे। श्री रिच, श्रीमती वॉगल, कुमारी श्लेसिन और श्री आइजकने[3] मंचपर आकर अध्यक्षकी बातोंका समर्थन किया। स्टेशनपर श्री कैलेनबैकको विदाई देनेके लिए यूरोपीय मित्रोंके अलावा भारतीयोंकी भी एक खासी प्रातिनिधिक भीड़ थी। अनुभव पाने, अपने जीवनको और भी सादा बनाने और अपनेको कसनेके विचारसे इस बार श्री कैलेनबैक, रेल द्वारा तीसरे दर्जेमें

१. देखिए "मानपत्र: श्री कैलेनबैकको", पृष्ठ १२६-१२७।

२. मार्टिन ईस्टन; विननके बाद चीनी संघके अध्यक्ष हुए। वे इसके पहले भी कार्यवाहक अध्यक्ष रह चुके थे। जब गांधीजीने संघीय प्रवासी विधेयककी प्रजाति-भेद सम्बन्धी धाराओंके विरुद्ध आपत्ति की तो उसमें ये भी शामिल हो गये; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ५१०।

३. गैब्रिएल आई० आइजक; इंग्लैंडवासी यहूदी जो जौहरीका धन्धा करते थे। ये जोहानिसबर्ग निरामिष उपाहारगृहसे सम्बन्धित थे और शाकाहारका प्रयोग भी कर रहे थे। कुछ दिनों तक फीनिक्स आश्रमके सदस्य भी रहे थे, और **इंडियन ओपिनियन**के ग्राहक बनाने और उसके लिए विज्ञापन जुटानेके निमित्त अक्सर दौरा किया करते थे। वे गांधीजी तथा इस पत्रका काम करनेको बराबर तैयार रहते थे। जून सन् १९०९ में गांधीजीने इन्हें डेलागोआ-बेके सत्याग्रहियोंकी सहायता करनेके लिए भेजा था। देखिए खण्ड ९, पृष्ठ २ और २४७। सन् १९१३ की "महान् कूच" में वे जेल भी गये थे।

गये। यह देखकर उनके पुराने मित्रोंको बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि उन्होंने श्री कैलेन-बैकको सदा "जीवनके सुखोंका" उपभोग करते हुए ही देखा था। श्री कैलेनबैक जहाजी यात्रा भी तीसरे दर्जेमें ही करेंगे।

लॉली स्टेशनपर टॉल्स्टॉय फार्मके सभी निवासी श्री कैलेनबैकको विदा करने आये थे।

हमें ज्ञात हुआ है कि श्री कैलेनबैकका इरादा इस अभिनन्दनपत्र और पात्रको अपने पास न रखकर जर्मनीमें अपनी बहिनको दे देनेका है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-८-१९११

१११. श्री कैलेनबैक

हमारे पाठकोंको श्री कैलेनबैकका चित्र पाकर हर्ष होगा। यह चित्र हम इस सप्ताह क्रोड़-पत्रके रूपमें प्रकाशित कर रहे हैं। टॉल्स्टॉय फार्मके मालिकके रूपमें पाठक उन्हें अच्छी तरह जानते हैं। यह फार्म उन्होंने सत्याग्रहियोंके परिवारोंके निःशुल्क उपयोगके लिए दिया है। आज भी वह फार्म इसी काममें आ रहा है। श्री कैलेनबैक खास तौरपर जर्मनीमें अपने परिवारके लोगोंसे मिलनेके लिए यूरोप जा रहे हैं और आशा करते हैं कि वे छः महीनेके अन्दर ही लौट आयेंगे। पाठकोंको याद होगा कि जब श्री गांधी और श्री पोलक दोनों गैरहाजिर थे तब ब्रिटिश भारतीय संघके अवै-तनिक मन्त्रीका काम श्री कैलेनबैकने ही सँभाला था। यह समय सत्याग्रहके इतिहासमें बहुत नाजुक समय था।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-८-१९११

११२. क्षयरोग

डॉ० म्यूरिसन,[1] विशेषज्ञ डॉ० एडेम्सके साथ, डर्बन नगरमें क्षय-रोगके विरुद्ध एक मुहिम चला रहे हैं। इस विषयमें उन्होंने श्री गांधीको एक पत्र लिखा है। हम खास तौरपर नेटालके भारतीय पाठकोंका ध्यान इस पत्रकी तरफ दिलाते हैं। यह भयंकर रोग किसीका लिहाज नहीं करता। वह डर्बनमें रहनेवाले सभी समुदायोंमें फैला हुआ

१. डर्बन नगरके स्वास्थ्य विभागके अधिकारी; सन् १९०४ की महामारीमें गांधीजीने उन्हें बड़ा "सहानुभूतिपूर्ण और सहायता करनेको तत्पर" पाया था; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ २४२-४३ और ३५७। उन्होंने जुलाई १०, १९११ को गांधीजीके एक पत्र (जो उपलब्ध नहीं है) के जवाबमें लिखा था कि एक भारतीय समिति तथा बीस स्वयंसेवकोंको महामारी निवारणके लिए डर्बनके स्वास्थ्य विभागको सहायता देनी चाहिए ताकि छूआछूतकी बीमारियोंको दूर रखनेसे सम्बन्धित नगर-उपनियमोंको लागू करनेका अवसर न आये।

है। यदि इसका प्रतिकार समय रहते समुचित रीतिसे नहीं किया जाता तो कहना कठिन है कि यहाँ कितनोंके प्राणोंपर आ बनेगी। इसलिए यह सर्वथा उचित है कि इस रोगका उन्मूलन करनेके लिए डॉ० जेम्सन और उनकी समिति सभी समुदायोंसे सहयोग माँगें और वह उन्हें दिया जाये। डॉ० जेम्सनकी इच्छाके अनुसार भारतीयोंकी भी एक समिति बनाई जा चुकी है। यह उक्त समितिको हमारे समाजकी सेवा करनेकी दिशामें आवश्यक सहायता देती रहेगी। परन्तु केवल समिति बन जाना ही काफी नहीं है। हमें इसमें कोई शक नहीं है कि डॉ० म्यूरिसनके पास ऐसे भारतीय स्वयंसेवकोंका ताँता लग जायेगा जो उनके निर्देशानुसार निरीक्षण तथा लोगोंसे मिलने-जुलनेके लिए अपने-आपको उनके सुपुर्द कर देंगे। यदि उन्होंने ऐसा किया तो वे सही अर्थोंमें करुणाके देवदूत बन जायेंगे। हमारी यह निश्चित राय है कि डॉ० म्यूरिसन जिस तरहके कामकी अपेक्षा रखते हैं — और उनका वैसी अपेक्षा रखना ठीक ही है — वह वैतनिक कार्यकर्ताओंसे नहीं, स्वयंसेवकोंसे ही हो सकेगा। रोगियोंको हमारे नेताओंके सिवा और कौन समझा सकता है? डॉ० एडेम्स कहते हैं कि इस रोगकी चिकित्सामें शुद्ध और खुली हवा ही महत्वकी वस्तु है, वही उसका पहला और अन्तिम उपाय है। यह उपचार अत्यन्त सीधा-सादा है, किन्तु यदि लोग इसे समझ नहीं पायें तो इसे अपनाना उतना ही कठिन भी है। इसलिए लोग तभी इसे अपनायेंगे जब वे लोग जिनपर जनताकी श्रद्धा है अपनी सारी योग्यता और समझानेकी शक्ति लगाकर यह बात उनके गले उतारेंगे। बन्द कमरोंकी हवा गर्म परन्तु दूषित और कार्बनसे भरी हुई होती है। इसके विपरीत बाहर खेतोंकी हवा ठण्डी किन्तु ताजी होती है। परन्तु जिन लोगोंको खुली हवामें सांस लेनेसे जुकाम हो जानेका डर है, उन्हें यह समझा पाना कठिन है कि जिस प्रकार दूसरोंके द्वारा उगले हुए विषाक्त जलके बजाय स्वच्छ और स्वास्थ्यप्रद पानी पीना लाभदायक है, उसी प्रकार उनका कल्याण — अर्थात् क्षय रोगसे मुक्ति — शुद्ध और शक्तिदायिनी ताजी हवाके सेवनमें निहित है। हमें यकीन है कि क्षयके विरुद्ध घोषित डर्बन नगरपालिकाके इस संगरमें प्रत्येक प्रभावशाली भारतीय अपना नाम स्वयंसेवकके रूपमें दर्ज करा देगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-८-१९११

११३. पत्र : एच० एल० पॉलको

अगस्त ७, १९११

प्रिय श्री पॉल,[1]

मैं आपकी संस्थाकी[2] प्रगतिकी ओर उत्सुकता व दिलचस्पीसे देखता रहूँगा। कृपया ऐंजीको[3] मेरी तरफसे बधाई दे दीजिए।

आशा है, आप सब सानन्द होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४९०१) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : डॉक्टर कूप्पन।

११४. पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको

श्रावण सुदी १३ [अगस्त ७, १९११][4]

पू० भाई प्राणजीवन,

आपका पत्र मिला है। आपने सोराबजीके विषयमें जो लिखा है, उससे मैंने ऐसी कोई धारणा नहीं बनाई कि आपकी राय उनके विलायत भेजे जानेके विरुद्ध है।

हरिलालसे रंगून रहनेका आग्रह न कीजिएगा। उसे स्वतन्त्रतापूर्वक रहने देनेमें ही उसका भला है। वह हारकर स्वयं रंगून जाये अथवा यहाँ चला जाये, तो बात दूसरी है। इसके सिवा रंगूनमें उसकी गुजराती सुधरनेकी सम्भावना मुझे कम मालूम होती है। यदि वह अहमदाबादमें अकेला रह सके और परिश्रमपूर्वक अभ्यास करे, तो उसकी

१. डर्बनकी मजिस्ट्रेट अदालतमें भारतीय दुभाषिया और क्लर्क।

२. भारतीय शिक्षण संस्था, डर्बन।

३. श्री पॉलकी पुत्री; गांधीजीको इन्होंने अपना धर्म-पिता बना लिया था और फीनिक्स आश्रममें शिक्षा लेकर भारतीय समाजकी सेवा करनेका निश्चय किया था; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २७७ और ३२०।

४. पत्रमें भारतीय तिथि तो दी गई है, लेकिन संवत् नहीं। फिर भी दो बातोंके उल्लेखसे ईसवी-सन्‌का पता चल जाता है। छठे अनुच्छेदमें **इंडियन नेशनल बिल्डर्स**के गुजराती अनुवादकी चर्चा है। यह अनुवाद **इंडियन ओपिनियन**के १९११ के अंकोंमें क्रमिक रूपसे प्रकाशित हुआ था। और फिर इन्हीं दिनोंकी बात है कि गांधीजी **महाभारत**में वर्णित **माया सरोवर**के आख्यान (जिसे आर्नोल्डने अपनी पुस्तक **इंडियन आइडिल्स**में 'द एनचैंटेड लेक' शीर्षकसे प्रस्तुत किया है) से बहुत अभिभूत हो उठे थे; देखिए "पत्र : छगनलाल गांधीको", पृष्ठ १२७-२८। इससे ज्ञात होता है कि यह पत्र सन् १९११ में ही लिखा गया था। उस वर्ष श्रावण सुदी १३ को अगस्तकी ७ तारीख पड़ी थी।

पढ़नेकी उमंग कुछ हद तक पूरी हो सकेगी। फिर भी मैं आपके विचार उसे बता दूंगा। रेवाशंकरभाईकी इच्छा उसे शॉर्टहैंड आदि सिखानेकी है। यह बात मुझे बिलकुल पसन्द नहीं आई। यह तो मेरी समूची विचार-धाराके खिलाफ पड़ती है।

एम्स्टर्डमके विषयमें आपके विचारोंसे मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। आधुनिक सभ्यताके जालमें फँसे हुए सभी लोग मुझे तो अपाहिज ही मालूम होते हैं।

आजकल मैं अपनी पाठशालाके विद्यार्थियोंको रातके समय एक घंटा महाभारतकी कहानियाँ पढ़कर सुनाता हूँ। आधे लड़के तमिल हैं, इसलिए मुझे ये कहानियाँ अंग्रेजी पुस्तकसे पढ़नी पड़ती हैं। इसके लिए आजकल मैं आर्नोल्डकी 'इंडियन आइडिल्स' का उपयोग कर रहा हूँ। कल रातको उसमें से 'एनचैंटेड लेक' ('माया-सरोवर') नामकी कहानी पढ़ी। उसका आशय इतना सुन्दर लगा कि उसे बार-बार पढ़नेका मन होता है। वह पुस्तक आपने न देखी हो, तो लेकर यह कहानी पढ़ लीजिए। जिस समाजमें ऐसे उदात्त विचार प्रस्तुत करनेवाले व्यक्ति हो गये हैं, वह समाज आजकलकी इस नपुंसक सभ्यतासे क्या सीखेगा?

मैं मॉरिशसकी रिपोर्टमें अभी हाथ नहीं लगा पाया हूँ।

नटेसनने [कुछ अंश] छोड़ दिये हैं, फिर भी रचना[1] अभी जिस रूपमें प्रकाशित हुई है, उसीके अनुसार मैं उसका अनुवाद 'इंडियन ओपिनियन' में शुरू करना चाहता हूँ।

मैं अपने सिरपर बेशुमार बोझ उठाये हुए हूँ, ऐसा तो नहीं है। फिर भी आपकी चेतावनी ठीक है। बहुत करनेकी इच्छा रखना भी एक प्रकारका मोह है और मोह एक बड़ा दोष है। यह बात मैं समझता हूँ, तो भी लिया हुआ काम छोड़ा नहीं जा सकता। और हमारा धर्म भी यही कहता है कि उसे नहीं छोड़ना चाहिए। इतना हमें अवश्य देखना चाहिए कि हाथमें लिया हुआ काम अनुचित नहीं है। ऐसी आशंका मत कीजिए कि अत्यधिक बोझ उठाकर मैं अपना स्वास्थ्य बिगाड़ रहा हूँ। मेरी खुराक बैलकी जितनी है। दो बार खानेमें बराबर डेढ़ घंटे लग जाते हैं, जब कि मेरे आसपासके लोगोंको तीन बारमें भी इतना समय नहीं लगता। मेरी तबीयत खराब रहती है, सो बिलकुल नहीं है; फिर भी मैं इस बातका सदा प्रयत्न करता हूँ कि मोहवश कभी कुछ न किया जाय। लालच तो तनिक भी नहीं है और उद्यम तो करना ही चाहिए। क्या करना चाहिए, इस बातका विचार करते हुए जो कार्य उत्तम लगता है, उसे करता रहता हूँ।

मोहनदासका वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५०९३) से।
सौजन्य : सी० के० भट्ट

१. तात्पर्य अगस्त १२ और सितम्बर २, १९११के बीच **इंडियन ओपिनियन**के गुजराती विभागमें प्रकाशित एक लेख-मालासे है। यह माला मद्रासकी गणेश ऐंड कम्पनी द्वारा प्रकाशित मूल अंग्रेजी पुस्तिकाका अनुवाद थी। इसमें अन्य लोगोंके अलावा श्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जी तथा श्री गोखलेकी जीवनियाँ दी गई थीं।

११५. तूफान उमड़ रहा है

थोरो उन लोगोंके लिए जेल गये, जो उनकी जातिके नहीं थे। इसी प्रकार श्री रिचको भी शायद इन लोगोंके लिए, जिनकी चमड़ी उनके समान नहीं है, जेल जाना पड़े। उन्हें इस आशयका नोटिस मिला है कि क्रूगर्सडॉर्पमें जो बाड़ा उनके नामपर पंजीकृत है, उन्होंने उसमें भारतीयोंको बसने देकर अपराध किया है।[1] हमें मालूम है कि इस नोटिसके कारण श्री रिच द्वारा बाड़ोंके छोड़ दिये जानेकी सम्भावना नहीं है। अधिकारी अच्छी तरह जानते हैं कि श्री रिच तो केवल ट्रस्टी हैं और वे उक्त बाड़ोंको केवल अपने भारतीय मुवक्किलोंकी ओरसे अपने नामपर रखे हुए हैं। श्री रिचने उनको अपने बाड़ेमें रहनेकी इजाजत नहीं दी है। बल्कि वे (भारतीय) खुद ही वहाँ रह रहे हैं। असली स्थिति यही है; यद्यपि कानूनकी निगाहमें श्री रिच ही इसके मालिक हैं, कोई दूसरा नहीं।

क्लार्क्सडॉर्पके भारतीयोंको धमकियाँ दी गई हैं। रूडीपूर्टमें तो एक मामला दायर भी कर दिया गया है, जिसकी अपील विचाराधीन है। अब यह सम्मान क्रूगर्सडॉर्पको मिला है। स्पष्ट ही अधिकारियोंका अनुमान है कि ज्यों ही वे कोई कदम उठायेंगे भारतीय व्यापारी अपनी दूकानें और माल छोड़कर चले जायेंगे। श्री नेसरने[2] दक्षिण आफ्रिकाको सूचित किया है (और वे निश्चित रूपसे जानते होंगे) कि सरकार अगला कदम उठानेसे इसलिए रुक गई है कि यह राज्याभिषेकका वर्ष है; और यह भी कहा है कि कानूनी कार्रवाई अगले वर्ष की जायेगी। इसलिए हमारा खयाल है कि तबतक सरकार अपने हथियारोंपर सान चढ़ाती रहेगी। श्री रिचको दिया गया नोटिस भारतीयोंके लिए इस बातकी चुनौती है कि वे अपना पानी दिखायें। हमें तो निश्चय है कि इस मुकदमेसे सम्बन्धित भारतीय यदि और किसी कारणसे नहीं तो केवल इसलिए कि खुद श्री रिचको शायद जेल जाना पड़े, दृढ़ रहेंगे और सरकारको एक बार फिर दिखा देंगे कि यदि वह एशियाई जातियोंको अपने साथ लेकर नहीं चलती, तो ऐसे किसी भी कानूनपर अमल नहीं हो पायेगा, जो उनके हितोंके खिलाफ जाते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–८–१९११

१. श्री रिच क्रूगर्सडॉर्पके खनिज क्षेत्रोंके कुछ ऐसे बाड़ोंके कानूनन मालिक थे, जो भारतीयोंके कब्जेमें थे। इस इलाकेको सन् १९०८के कानून ३५के अन्तर्गत "घोषित क्षेत्र" करार दे दिया गया था। अगस्त ३, १९११को क्रूगर्सडॉर्पके सरकारी वकीलने उनपर यह नोटिस जारी किया कि वे १९०८के कानून ३५के खण्ड १३०का उल्लंघन कर रहे हैं, और इसपर उनके विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जा सकती है। उन्हें निर्देश दिया गया था कि वे अपनी भारतीय प्रजाको बाड़े खाली कर देनेको कहें। इंडियन ओपिनियन, १२–८–१९११।

२. संघ-संसदके सदस्य।

११६. पत्र : गृह-मन्त्रीको[1]

अगस्त १२, १९११

गृह-मन्त्री
प्रिटोरिया

महोदय,

आपका . . . तारीखका[2] कृपापत्र प्राप्त हुआ। जो लोग समझौतेके अन्तर्गत आ जाते हैं उनकी सूची मैं २१ तारीख तक पूरी कर लेनेकी कोशिश करूँगा। किन्तु जो इस समय भारतमें हैं, उनकी पूरी सूची तैयार करना सम्भव नहीं जान पड़ता। मुझे आशा थी कि मैं इसके बहुत पहले ही पूरी सूची बना लूंगा, किन्तु एशियाई पंजीयकके नाम अपने पत्रमें[3] सूचित कारणोंसे यह सम्भव नहीं हुआ।

आपका

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५८६) से।

११७. पत्र : छगनलाल गांधीको

श्रावण वदी ३ [अगस्त १३,१९११][4]

चि० छगनलाल,

किताबें[5] तुम अच्छी लाये हो। 'भर्तृहरि-शतक' की [मूल] संस्कृत-प्रति यदि गुजराती अथवा अंग्रेजी अनुवादके साथ हो तो पढ़नेके लिए मुझे भेजना।

१. यह पत्र गांधीजीके कागजातमें मिला था और सम्भवतः इसका मसविदा उन्हींका तैयार किया हुआ है। पत्र भेजा गया था या नहीं, यह ज्ञात नहीं है। यदि भेजा गया हो तो गृह-मन्त्रीके उल्लिखित पत्रकी तारीख, पत्र छोड़ते समय, भर दी गई होगी।

२. सम्भव है, यह वही पत्र हो जिसका उल्लेख गांधीजीने मगनलाल गांधीके नाम लिखे गये अपने १७-७-१९११के पत्रमें किया था।

३. यह उपलब्ध नहीं है।

४. पत्रकी पहली पंक्तिसे ज्ञात होता है कि यह श्री छगनलाल गांधीके सन् १९११ में दक्षिण आफ्रिका लौटनेके कुछ ही दिन बाद लिखा गया था। इसकी पुष्टि इस बातसे भी होती है कि अगस्त, १, १९११ को छगनलाल गांधीको लिखे पत्र (पृष्ठ १२७-२८) में वर्णित विषयको — अर्थात् श्री छगनलालका यह अनुरोध कि उनपर जो कर्ज है उसे उस रकमके बदलेमें मुजरा कर दिया जाये जो उन्होंने फीनिक्समें अपने हिस्सेकी जमीनका सुधार करानेमें खर्च किया है — हम इस पत्रमें भी जारी पाते हैं। सन् १९११ में श्रावण वदी ३, अगस्तकी १३ तारीखको पड़ी थी।

५. इंग्लैंड और भारतकी यात्रा करके लौटते हुए श्री छगनलाल ये पुस्तकें ले आये थे।

तुमने जो रकम जमीन [सुधारने] में लगाई है, उसे वापस लौटानेका मेरा विचार नहीं होता। वैसा करनेमें बाधाएँ हैं। यदि तुमने कोई रकम जमीन खरीदनेके लिए दी हो तो वह लौटाई जानी ठीक है। और जमीनकी बाबत मेरा यह कथन सुझाव-मात्र है, क्योंकि सब लोगोंको यदि भरण-पोषण-भर ही मिलता है तो फिर जमीन या मकानकी रकम कैसे भरी जाये? यही सोचकर मैंने सुझाव दिया है कि जमीन-सम्बन्धी कर्जका खाता ड्योढ़ा कर दिया जाये। परन्तु यदि कोई जमीन रख लेनेका ही विचार करे तो मैं आड़े नहीं आऊँगा। जो प्रश्न तुम उठा रहे हो वही तुम्हारी और आनन्दलालकी[1] जमीनकी बाबत उठा था। जो रकम तुमने जमीनपर लगाई है वह मैं लौटाने लगूँ, इससे अधिक सन्तोषजनक तो मेरे लिए यह होगा कि मैं तुम्हारा कर्ज चुका दूँ। जमीनपर खर्च किया गया पैसा वापस लौटानेमें अनेक धर्म-संकट हैं। इसे तुम समझ सकोगे। तुम दोनों भाइयोंके बीच कितना रुपया दिया जाये, इस सम्बन्धमें तुम्हारे दूसरे पत्रकी राह देखूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ४७८२) की फोटो-नकलसे।

११८. भारतीयों द्वारा श्री रिचका समर्थन

पिछले रविवारकी शामको हमीदिया अंजुमनके भवनमें ब्रिटिश भारतीय संघकी एक महत्वपूर्ण बैठक[2] हुई थी। श्री काछलिया सभापति थे। सारे प्रान्तमें निमन्त्रण गये थे। क्लार्क्सडॉर्पसे एक तार आया था, जिसमें अनुपस्थितिपर खेद और बैठकके निर्णयोंसे सहमति प्रकट की गई थी। क्रूगर्सडॉर्प, रूडीपूर्ट, आदि स्थानोंसे प्रतिनिधि आये थे। सर्वश्री रिच, क्विन और आइजक भी उपस्थित थे। श्री काछलिया द्वारा बोलनेके लिए कहे जानेपर श्री गांधीने बताया कि सरकार जो कदम उठाने जा रही है उसके क्या-क्या परिणाम होंगे। सभामें उत्कटताका वातावरण था और लोग आसन्न संकटका दृढ़ताके साथ मुकाबला करनेके लिए कृत-संकल्प जान पड़ते थे।

श्री गांधीने कहा कि श्री रिचने उन्हें यह सूचित करनेकी इजाजत दी है कि वे (श्री रिच) भारतीयोंके साथ हैं, और जिन भारतीयोंकी जायदादें उनके नाम-पर दर्ज हैं, उनके विश्वासको निबाहनेके लिए अगर जरूरत हुई तो वे जेल जानेका खतरा उठानेको भी तैयार हैं। विस्तृत चर्चाके बाद नीचे लिखे प्रस्ताव सर्वानुमतिसे स्वीकृत किये गये।

ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सभा श्री रिचको उनकी उपस्थितिके लिए धन्यवाद देती है और स्वर्ण-कानूनके मातहत अधिकारियोंने जो नोटिस (हिदायतें) जारी

१. गांधीजीके चचेरे भाई; अमृतलाल तुलसीदास गांधीके पुत्र।

२. यह सभा क्रूगर्सडॉर्पके सरकारी वकील द्वारा श्री रिचको दिये गये नोटिसपर विचार करनेके लिए आयोजित की गई थी; देखिए "तूफान उमड़ रहा है", पृष्ठ १३५।

किये हैं उनके सम्बन्धमें तथा जो जायदादें सरकारी कागजोंमें उनके नामपर दर्ज हैं, परन्तु वास्तवमें जिन्हें वे इस समाजके सदस्योंके लिए धरोहरके रूपमें रखे हुए हैं, उनके सम्बन्धमें अगर जरूरत हुई तो कारावास भोगनेपर भी समाजकी सहायता करनेका जो उदारतापूर्ण वचन दिया है उसके लिए आभार प्रकट करती है।

प्रस्तावक — श्री दादू (क्रूगर्सडॉर्प); समर्थक — अहमद खाँ (रूडीपूर्ट)।

"स्वर्ण-कानून और सन् १९०८ कस्बा-कानून संशोधन अधिनियम (टाउनशिप्स अमेंडमेंट ऐक्ट)को लेकर भारतीय व्यापारियोंको उनकी जायदादों और कारोबारसे वंचित करनेका जो यत्न किया जा रहा है यह सभा अपनी पूरी शक्तिके साथ उसका प्रतिकार करने और आनेवाली मुहिममें कारावास तथा अन्य संकटोंको झेलने और उन्हें सहनेका निश्चय करती है।"

प्रस्तावक — श्री इस्माइल आमद मुल्ला; समर्थक — श्री आमद मूसाजी; और अनुमोदक — श्री इ० एस० कुवाडिया।[1]

यह सभा अध्यक्षको अधिकार देती है कि वे इन प्रस्तावोंकी नकलें भेजते हुए एक विनम्र आवेदनपत्र द्वारा सरकारसे अनुरोध करें कि वह इन उपर्युक्त कानूनोंमें इस तरह के परिवर्तन कर दे, जिससे भारतीय समाज अपने आपको आश्वस्त अनुभव कर सके और यह कि वह उनके वैध व्यवसायोंकी रक्षा करे।

प्रस्तावक — श्री ए० एम० वाजा; समर्थक — श्री ए० ए० करोडिया; और अनुमोदक — श्री एच० माल तथा श्री एम० एस० नाना।

इस लड़ाईके लिए चन्दा एकत्र करनेका काम शुरू करनेका भी निश्चय किया गया।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–८–१९११

१. इब्राहीम सालेजी कुवाडिया; जोहानिसबर्गके प्रसिद्ध व्यापारी और किसी समय हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके कोषाध्यक्ष; सन् १९०९ और १९१०में ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्ष (खण्ड ९, पृष्ठ २५२ पा० टि० १; खण्ड १०, पृष्ठ २८६ पा० टि० २); सन् १९०८ और १९०९में सत्याग्रहीके रूपमें कई बार जेल गये; जून १९०९में भारतको जानेवाले प्रस्तावित भारतीय शिष्टमण्डलके सदस्य चुने गये; लेकिन बादमें शीघ्र ही गिरफ्तार कर लिये गये; देखिए खण्ड ९, पृष्ठ २५३ और २८८ तथा खण्ड ६ और ८ भी।

११९. एक महत्वपूर्ण निर्णय

श्री रिच और ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघ दोनों ही अपने उन निर्णयोंके लिए बधाईके पात्र हैं जो संघकी बैठकके[1] अन्यत्र प्रकाशित विवरणमें दिये गये हैं। श्री रिचने अबतक निःस्वार्थ भावसे समाजकी जो अनेक सेवाएँ की हैं, उनके इस उदार कार्यने उन सबपर कलश चढ़ा दिया है। उनके कार्यने ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी जिम्मेदारीको दस गुना बढ़ा दिया है। श्री रिचको जेल जाने देकर यदि हम निरर्थक कानूनोंके सारे जंजालको टालनेका यत्न करें तो हम हर विचारवान् मनुष्य द्वारा धिक्कारे जानेके योग्य ही कहलायेंगे। इसलिए संघने यह बहुत उचित किया कि उसने एक दूसरा प्रस्ताव भी पास किया और समाजकी ओरसे दृढ़ निश्चय प्रकट किया कि भले ही लोगोंको जेल जाना पड़े या उससे भी अधिक बड़ा कोई कष्ट, जो उनके भाग्यमें बदा हो, झेलना पड़े किन्तु खतरेमें पड़े हुए हितोंकी रक्षा अवश्य की जायेगी। तीसरा प्रस्ताव श्री काछलियाको अधिकार देता है कि वे उपर्युक्त अत्यन्त महत्वपूर्ण दोनों प्रस्तावोंकी तरफ सरकारका ध्यान दिलायें। इसमें श्री काछलियाने जरा भी विलम्ब नहीं किया है। अब हमें सरकारके निर्णयकी प्रतीक्षा करनी है। हमें आशा है कि संघके मन्त्रिमण्डलके सदस्योंमें सुबुद्धि उत्पन्न होगी और जो चीज एक राष्ट्रीय संकटका रूप धारण कर सकती है उसे वे टाल देंगे। भारतीयोंसे यह आशा न की जाये कि वे अपने हितोंके साथ खिलवाड़ होने देंगे। अब यदि सरकारकी तरफसे ऐसी कोई ज्यादती की गई, तो संसार फिरसे वैसी अरुचिकर घटनाओंका साक्षी बनेगा जब एक शक्तिशाली सरकारने अपनी सारी शक्ति, अपनी बातपर अड़े हुए किन्तु कानूनके पाबन्द, मुट्ठी-भर लोगोंको कुचलनेके लिए लगा दी थी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–८–१९११

१२०. शिक्षाका कलंक

पहले डर्बनमें भारतीय कन्याएँ साधारण सरकारी कन्या-शालाओंमें पढ़ती थीं। कुछ वर्ष हुए, भारतीय लड़कियोंको इन शालाओंमें जानेसे रोक दिया गया और उनकी पढ़ाईकी व्यवस्था उच्चस्तरीय भारतीय शाला (हायर ग्रेड इंडियन स्कूल) में कर दी गई। वादा यह किया गया था कि लड़कियाँ लड़कोंसे अलग शिक्षा प्राप्त करेंगी। इस वचनके बावजूद सरकारने लड़कियोंको लड़कोंके साथ एक ही शालामें पढ़ानेका प्रयोग करके देखा और वह उसमें असफल रही। सिद्धान्ततः तो हम लड़कों और लड़कियोंके सह-शिक्षणके पक्षमें हैं। परन्तु जिन आदतों या पूर्वग्रहोंकी जड़ें गहरी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

होती हैं उनकी अवगणना करना असम्भव है। अनुभव यह है कि आम तौरपर भारतीय माता-पिता अपनी लड़कियोंको शालाओंमें या अन्यत्र लड़कोंके साथ मिलने-जुलनेकी आज्ञा नहीं देते। और यदि उन्हें जबरदस्ती एक-साथ रखनेका कोई प्रयत्न किया जाता है तो उसका नतीजा बहुत ही अजीब निकलता है। लड़कियों और लड़कों, दोनोंको ही बड़ा अटपटा मालूम होता है। जल्दबाज सुधारक झल्लाकर कहता है "होने दो। अगर दखल न दिया जाये तो उनकी पटरी आपसमें जल्दी ही बैठ जायेगी।" परन्तु माता-पितामें इस प्रक्रियाके योग्य धैर्य नहीं होता। वे सुधारक नहीं हैं, और अपने बच्चोंकी बरबादीका खतरा उठाकर ऐसा प्रयोग नहीं होने देंगे। और फिर आग्रहपूर्वक ऐसा सुधार करनेकी ऐसी जल्दी भी क्या है! गतिरोध तो पैदा हो चुका है। जहाँ पहले तीस लड़कियोंकी उपस्थिति थी वहाँ अब शिक्षा-विभागके एक सुधारकके मूर्खता-भरे जोशके कारण यह दससे भी कम रह गई है। हमें ज्ञात हुआ है कि जो थोड़े-से माता-पिता इस आशासे कि शीघ्र ही अलग प्रबन्ध हो जायेगा, अभीतक अपनी लड़कियोंको पढ़नेके लिए भेजते रहे थे, अब उन्होंने भी अपनी लड़कियों-को हटा लिया है। कांग्रेस और अभिभावकोंकी प्रार्थना है कि भारतीय लड़कियोंको अलग-से शिक्षा प्राप्त करनेकी सुविधा मिले। यदि सरकार इसे नहीं माने और तब उसपर यह सन्देह किया जाये कि उसके मनमें भारतीय विरोधी पूर्वग्रह है तो सरकारको इसपर आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-८-१९११

१२१. भारतीय माता-पिताओंके लिए

हम स्वीकार करते हैं कि जनरल हेटसॉगकी बहुत सारी घोषणाओंके लिए हमारे दिलमें बहुत थोड़ा आदर है। [किन्तु] शिक्षा और राष्ट्रीयताके संरक्षणके बारेमें जोहानिसबर्गके पत्रोंमें छपे उनके जो विचार[1] हम अन्यत्र इसी अंकमें दे रहे हैं वे भारतीय माता-पिता और युवकोंके पढ़ने और मनन करने योग्य हैं। हम लोगोंमें बच्चोंको अंग्रेज बनानेकी प्रवृत्ति पाई जाती है, मानो उन्हें शिक्षित करनेका और साम्राज्यकी सच्ची सेवाके योग्य बनानेका वही सबसे उत्तम तरीका हो। हमारा ख्याल है कि समझ-दारसे-समझदार अंग्रेज भी यह नहीं चाहेगा कि हम अपनी राष्ट्रीय विशेषता — अर्थात् परम्परागत प्राप्त शिक्षा और संस्कृतिको छोड़ दें अथवा यह कि हम उनकी नकल किया करें। हमारे ख्यालसे जनरल हेटसॉगने बहुत स्पष्ट रूपसे कहा है कि यदि डच बच्चोंको

१. अगस्त १२, १९११ को न्यूलैंड्स गवर्नमेंट स्कूलमें मौजूदा शिक्षा-पद्धतिकी आलोचना करते हुए जनरल हेटसॉगने कहा था कि उसका आधार रटना और परीक्षाएँ पास करना है, जिससे सिर्फ वकील और डॉक्टर बननेके इच्छुक लोगोंको ही लाभ हो सकता है, और शेष ९७ प्रतिशत लोगोंको नुकसान उठाना पड़ता है। उन्होंने शिक्षामें चरित्र-निर्माण, तकनीकी प्रशिक्षण तथा मातृभाषाके महत्वपर बहुत जोर दिया था।

उनकी अपनी मातृभाषाको छोड़कर दूसरी किसी भाषाके माध्यमसे शिक्षा दी जायेगी तो भय है कि वे अपनी राष्ट्रीयता गँवा बैठेंगे। उनका यह कथन कि जो बच्चे अपने देशकी भाषाको भूल जाते हैं, अपने माता-पिताके प्रति उनका आदर कम हो जाता है, कितना ठीक है। "अपने पिता और माताका मान करो" — यह ईसा, मुहम्मद, जरथुस्त्र और वेद — सभीका आदेश है। इसलिए जो अपनी मातृभाषाके प्रति — चाहे वह कितनी ही साधारण क्यों न हो — इतने लापरवाह हैं, वे एक विश्वव्यापी धार्मिक सिद्धान्तको भूल जानेका खतरा मोल ले रहे हैं। यदि डच भाषाके बारेमें जनरल हेटसॉगका यह कथन डच बच्चोंके लिए सत्य है तो भारतीय भाषाओंके सम्बन्धमें भारतीय बच्चोंके लिए तो वह और भी अधिक सत्य सिद्ध होगा। भारतमें यद्यपि लाखों मनुष्य अपना नाम लिखना भी नहीं जानते, तथापि वे अपने महाकाव्यों, 'रामायण' और 'महाभारत' के मर्मको जानते हैं। हमारे राष्ट्रीय जीवनपर इनका जैसा प्रभाव है वैसा अन्य इने-गिने ही धार्मिक ग्रन्थोंका होगा। हम यह बात नहीं मानते कि अंग्रेजी अनुवादोंके जरिये, वे चाहे कितने ही शुद्ध हों, हम ये ग्रन्थ अपने बच्चोंको पढ़ा सकते हैं। यदि हम अपने जातीय काव्यको भुला देंगे तो हमारा ख्याल है कि हम स्वतन्त्र और स्वाभिमानी मनुष्यकी हैसियतसे जिन्दा नहीं रह सकेंगे। वह विदेशी भाषाके माध्यमसे कदापि नहीं सीखा जा सकता।

परन्तु कुछ लोगोंको यह भ्रम है कि अपनी मातृभाषा तो आगे चलकर भी सीखी जा सकती है। इन लोगोंके बारेमें तो हम यही कह सकते हैं कि वे नहीं जानते कि वे क्या कह रहे हैं। जनरल हेटसॉगने ठीक ही कहा है कि शिक्षाका वास्तविक उद्देश्य परीक्षाएँ उत्तीर्ण कराना नहीं, बल्कि बच्चोंका चरित्र गढ़ना है। और बच्चे अपने अतीतको भूल जायें या उसकी उपेक्षा करें तथा एक विदेशी भाषाको सीखनेमें बरसों लगा दें तो इससे चरित्रका निर्माण नहीं हो सकता। यदि कोई तनिक भी विचार करे तो वह इसी निश्चयपर पहुँचेगा कि यह बड़ा महँगा सौदा है। अपने पूर्वजोंसे हमने जो महान पूँजी पाई है उसकी ऐसी बरबादी जबरदस्त अपराध है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–८–१९११

१२२. पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको[1]

श्रावण बदी ११ [अगस्त २०, १९११][2]

भाई श्री प्राणजीवन,

आपका पत्र इस सप्ताह नहीं मिला। मैं यह पत्र भी यूरोपके पतेपर ही भेज रहा हूँ। आप यदि वहाँ रहे तो यह सप्ताह खाली नहीं जायेगा। और यदि आप

१. यह पत्र यत्र-तत्र फट गया है। छूटे हुए शब्दोंको संदर्भसे कोष्ठकोंमें रखा गया है।

२. पत्रमें हरिलाल गांधीके उल्लेखसे स्पष्ट है कि यह उनके (मई १९११ में) दक्षिण आफ्रिकासे भारत रवाना होनेके बाद लिखा गया था।

यूरोप छोड़ चुके हैं तो यह आपको उतने ही समयमें मिल जायगा, लगभग जितने समयमें यहाँसे सीधा भारत भेजनेपर मिलता।

हरिलालका पत्र मुझे अभी नहीं मिला। परन्तु [अहमदाबादसे] समाचार मिला है कि [चि०] हरिलाल वहाँ पहुँच गया है [और] स्कूलमें भर्ती [भी] हो चुका है। उसने मुझे [लिखा है] कि उसका विचार मैट्रिककी परीक्षा पास ही कर लेना [है और] जबतक वह इसे पास नहीं कर लेता, उसका मोह नहीं टूटेगा और उसे अपनी लियाकतका विश्वास भी नहीं होगा। जो ऐसे विचारसे प्रेरित हो कर गया है, उसे मैं मना नहीं करना चाहता। यदि वह अपने चरित्रपर दृढ़ रहा तो अहमदाबादमें उसे बहुत अनुभव प्राप्त होगा। यह अनुभव कौन-सा हो और उसे किस प्रकार प्राप्त करना चाहिए, इस सम्बन्धमें हम बहुत बातें कर चुके हैं। हमें तो अब उसकी स्थिति दूर बैठे देखते रहना है। आप उसके साथ पत्र-व्यवहार बनाये रखेंगे, ऐसी उम्मीद है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५५६७) से।
सौजन्य: श्री सी० के० भट्ट।

१२३. पत्र: एशियाई पंजीयकको[1]

अगस्त २१, १९११

एशियाई पंजीयक,
प्रिटोरिया

महोदय,

मैं समझौतेके अन्तर्गत आनेवाले भारतीयोंकी एक संशोधित सूची[2] संलग्न कर रहा हूँ। चूँकि संघको अभीतक भारतमें मौजूद[3] ऐसे सभी व्यक्तियोंके नाम नहीं मिल पाये हैं, इसलिए मैं उनकी पूरी सूची भेजनेमें असमर्थ हूँ।

मैं आपको जो सूची भेज रहा हूँ, उसमें वे सभी नाम नहीं हैं जो सम्मिलित किये जा सकते थे। मैं ऐसे कुछ लोगोंके साथ लिखा-पढ़ी कर रहा हूँ जो समझौतेके

१. यह गांधीजीके कागजातमें मिला है और यह मसविदा शायद उन्होंने ही तैयार किया था। चूँकि अन्तिम अनुच्छेदमें किया हुआ अनुरोध मान लिया गया था, इसलिए अनुमान लगाया जा सकता है कि छूटे हुए स्थानोंमें संख्याएँ भरनेके बाद इसे भेज दिया गया होगा; यद्यपि, जैसा ऐसे पत्रोंके सम्बन्धमें किया जाता था, उसके विपरीत इसे **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित नहीं किया गया। देखिए "पत्र: एशियाई पंजीयकको", पृष्ठ ८७-८८।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ५८-५९।

अन्तर्गत आनेका दावा करते हैं। इसलिए मुझे भरोसा है कि आगे चलकर मेरे द्वारा कुछ और नाम भेजे जानेपर आप कोई आपत्ति नहीं करेंगे।

आप देखेंगे कि कुछ लोग ऐसे हैं जिनके पास शान्ति-रक्षा अध्यादेश[1] (पीस प्रिज़र्वेशन ऑर्डिनेन्स) के अन्तर्गत जारी किये गये अनुमतिपत्र मौजूद हैं। चूँकि ये व्यक्ति अभी ट्रान्सवालमें हैं, इसलिए इनके नाम सूचीमें सम्मिलित कर लिये गये हैं, परन्तु ये उन नामोंकी श्रेणीमें नहीं आते जिन्हें १८० नामोंकी सूचीमें रखनेका विचार किया जा रहा है।

युद्ध-पूर्वके निवासियोंकी सूची तैयार करनेमें उन लोगोंके नाम सम्मिलित करनेकी सावधानी बरती गई है जो ट्रान्सवालमें युद्धसे तीन वर्ष पहले तक के अपने निवासका कोई बिलकुल साफ सबूत जुटा सके हैं। परन्तु उनके दावे ठोस हैं या नहीं, इसे जिम्मेदारीके साथ न तो संघ कह सकता है और न मैं। अधिनियमोंके अन्तर्गत इससे पहले प्रार्थनापत्र देनेवाले व्यक्तियोंके नाम शामिल न करनेकी सावधानी तो हमने बरती है, परन्तु हम यह दावा नहीं करते कि इस मामलेमें यह सूची सोलह आने विश्वसनीय है। बहुत सम्भव है कि उनमें से कुछ लोग पहले प्रार्थनापत्र दे चुके हों और जानबूझकर या अनजाने ही संघको भ्रममें डाले हुए हों।

सूचीमें समझौतेके अन्तर्गत आनेवाले १५० भारतीयोंमें से. . .और समझौतेके अन्तर्गत आनेवाले, इस समय भारतमें मौजूद ३० भारतीयोंमें से. . .और शान्ति-रक्षा अध्यादेश द्वारा जारी किये गये अनुमतिपत्र रखनेवाले भारतीय सम्मिलित हैं।

यदि आप अब यह सूचित करनेकी कृपा करें कि जोहानिसबर्गमें कार्यालय[2] कब खुलेगा तो मैं आपका आभार मानूँगा।

आपका, आदि,

टाइप किये हुए अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५५८७) तथा गांधीजीके स्वाक्षरोंमें प्राप्त अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५५५८) की फोटो-नकल से।

१. ये वे लोग थे जिन्होंने १८८५ के डच कानून ३ के अन्तर्गत जारी किये गये अपने पंजीयन प्रमाण-पत्रोंके बदले ब्रिटिश शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत जारी किये गये अनुमतिपत्र ले लिये थे; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २८२। वे "किसी भी एशियाई कानूनके अन्तर्गत" पुनः पंजीयनके लिए प्रार्थना-पत्र नहीं दे सकते थे; देखिए "पत्र : गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ ७७-७८।

२. यह कार्यालय ९-९-१९११को खुला था।

१२४. पत्र : छगनलाल और मगनलाल गांधीको

श्रावण वदी १४, [अगस्त २३, १९११][1]
रातके ११ बजे

चि० छगनलाल और चि० मगनलाल,

मुझे तुम दोनोंके पत्र मिल गये। तुम प्रति माह नौ पौंड ले लिया करो।

तुम लोगोंको जो लिखना चाहिए उसे लिख डालनेमें मैं संकोच नहीं करूँगा। जमीनपर जो रुपया खर्च किया गया है — चाहे वह मकानके लिए हो या दूसरे मदमें — उसे लौटानेका इरादा नहीं होता।[2] हाँ, जमीनकी कीमत दी गई हो तो वह लौटाई जानी चाहिए, ऐसा लगता है। वह भी यदि हम नया रिवाज दाखिल करें तो।

मुझे यदि फिर कानून-सम्बन्धी मगजपच्ची करनी पड़ी तो वह तुम्हारी खातिर नहीं होगी। सम्भव है, कभी ऐसे दूसरे निमित्त भी आ खड़े हों। यह तो अन्तिम उपाय है। मुझे उसका उल्लेख करना पड़ रहा है, यह भी मेरी अश्रद्धा, मोह और कमजोरीको ही व्यक्त करता है। मेरे उपयुक्त विचारोंमें कुछ-कुछ वैसा ही आभास टपकता है जैसे कोई झूठा सत्याग्रही अपना अन्तिम विश्वास शरीर-बलपर रखे। फिर भी इन दोनों बातोंमें भेद है, यह मैं जानता हूँ। तो भी मुझे वकालत पुनः न करनी पड़े, इसीमें मेरा हित है, मैं प्रायः ऐसा सोचा करता हूँ। मेरे जीते-जी हम फीनिक्समें सम्पूर्ण गरीबीका जीवन बिता सकें, यही मेरी अभिलाषा है। याचना करता हूँ कि ईश्वर वह दिन दिखाये, पर सारे आसार उलटे ही नजर आते हैं। हम खरी गरीबीको अपना सकें, ऐसा समय आना मुश्किल ही है। डॉक्टर मेहताकी मदद इसमें विघ्न-रूप है। मुझे लगता रहता है, जबतक यह हुक्मका पत्ता चलता है तबतक हमें यह अलभ्य लाभ नसीब नहीं होना है कि कलके लिए पाई भी नहीं बची और अब कल क्या होगा! मैं इस लाभको अलभ्य मानता हूँ, क्योंकि दुनियाके बड़े भागकी यह स्थिति है; और बुद्ध आदिकी भी यही स्थिति रही है और भविष्यमें भी रहेगी। मुझे इसकी प्रतीति होती ही रहती है कि इस स्थितिके बिना आत्मारामको नहीं जाना जा सकता।

१. गांधीजीने छगनलाल गांधीको लिखे अपने १३–८–१९११ के पत्र (देखिए पृष्ठ १३७) में ऐसा आभास-मात्र दिया था कि फीनिक्समें अपने हिस्सेकी भूमिमें श्री छगनलालने सुधार करानेपर जो व्यय किया था उसके लिए मुआवजा देनेको वे तैयार नहीं थे। किन्तु, इस पत्रमें वे इस सम्बन्धमें कृत-निश्चय जान पड़ते हैं। अतः निश्चय ही यह पत्र १३–८–१९११ के बाद लिखा गया होगा। १९११ में श्रावण वदी १४, २३ अगस्तको पड़ी थी।

२. देखिए "पत्र: छगनलाल गांधीको", पृष्ठ १२७-२८ और पृष्ठ १३६-३७।

जयकृष्ण व्यास[1] आदिने हमें ज्ञानकी सीख दी है, परन्तु वह निरा शुष्क ज्ञान-मात्र है, ऐसा जान पड़ता है। सच्चा ज्ञान तो नरसिंह मेहता और सुदामाजीने सिखाया है, यही बात मनमें जमती है। इन्द्रियोंके भोगोंका उपभोग करके यह कहना कि मैं कुछ नहीं करता, इन्द्रियाँ ही अपना कार्य कर रही हैं, मैं तो दृष्टा-मात्र हूँ, आदि उक्तियाँ तो बिलकुल मिथ्यावाद-जैसी हैं। ऐसे वचन तो केवल वही कह सकता है जिसने सम्पूर्ण रूपसे इन्द्रिय-दमन कर लिया है और जिसकी इन्द्रियाँ केवल शरीर-यात्राके निमित्त व्यापार करती हैं। इस हिसाबसे हममें एक भी मनुष्य ऐसी बात कहनेका अधिकारी नहीं है; और जबतक हमारे जीवनमें खरी गरीबी नहीं आती तबतक हममें वह योग्यता आ भी नहीं सकती। राजा आदि अपने पुण्यके प्रतापसे राजा बनते हैं, ऐसा मान लेना निराधार है। कहा यही जाना चाहिए कि कर्मोंके बलपर ही राज्य-पद मिलता है। परन्तु वे कर्म पुण्य कर्म ही होते हैं, आत्माके स्वरूपका विचार करते हुए यह कहना भी एकदम असत्य लगता है।

मेरे ये विचार तुम सबको उचित लगते हों और मैं जिस उदात्त स्थितिका चित्र उपस्थित कर रहा हूँ उसका हम सब उपभोग करें -- तुम सब ऐसी अभिलाषा रखो तो कदाचित् ईश्वर हमें वह दिन भी दिखा दे।

नारणदासने[2] मेरे पत्रका जवाब भी नहीं दिया।

फार्मपर तो इस समय अलोनी खुराककी हवा चल पड़ी है;[3] देखना है यह कबतक चलती है। पारसी जीवणजीके दो बालक आज यहाँ स्कूलमें दाखिल होने आये हैं। वे भी अलोना खायेंगे इसी शर्तपर लिये गये हैं।

शेष फिर।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५५६८) से।
सौजन्य : श्रीमती राधाबेन चौधरी।

१. जयकृष्ण व्यासको भूलसे श्री कृष्ण व्यास पढ़ लिया गया था। बादमें गांधीजीने इसे स्पष्ट किया है। देखिए "पत्र : मगनलाल गांधीको", पृष्ठ १५१।

२. छगनलालके छोटे भाई।

३. देखिए "पत्र : हरिलाल गांधीको", पृष्ठ १२५।

१२५. पत्र: डॉ० प्राणजीवन मेहताको

भाद्रपद सुदी १ [अगस्त २५, १९११][1]

भाई श्री प्राणजीवन,

पोलकके सम्बन्धमें आपका पत्र मिला।

मैंने फीनिक्ससे जो पत्र लिखा था, उसपर भूलसे पूरा पता नहीं लिखा था, इसलिए वह मुझे वापस मिल गया है। वह पढ़नेके योग्य है और मैंने उसमें जो माँग की है उसे अब भी करता हूँ। इसलिए उसे ज्योंका-त्यों भेजता हूँ।

मुझे ऐसा नहीं लगता कि श्री पोलक बिल्कुल ऐंग्लो-इंडियन हो जायेंगे। उनके स्वभावके सम्बन्धमें आपने जो-कुछ लिखा है, वह ठीक है। उनका स्वभाव तेज है। किन्तु वे दुधारू गाय हैं। उनका हृदय बिलकुल शुद्ध है और वे कर्त्तव्य-परायण हैं। प्रशंसा तो सभीकी शत्रु है; फिर वह उनकी शत्रु क्यों न होगी? किन्तु मुझे यह सन्देह नहीं है कि वे प्रशंसासे भ्रष्ट हो जायेंगे। वे जितने शुद्ध-हृदय हैं, उतने ही खरे भी हैं। शुद्ध-हृदय और खरे--ये दोनों शब्द कदाचित् एक ही अर्थके बोधक हैं। यह कैसे मान लें कि ऐसा व्यक्ति भटक जायेगा? यह मान भी लें कि ऐसा होगा, तो भी मैं तो निर्भय ही हूँ। उन्होंने सेवा की है। वे सेवा करनेके बाद चले जायेंगे तो यह सम्बन्ध टूट जायगा। उसमें हमें तो कुछ खोना नहीं पड़ेगा, क्योंकि हमारा सिद्धान्त सीमित है। जबतक कोई मनुष्य सत्यवादी और सत्याचारी जान पड़ता है तबतक उससे हमारा सम्बन्ध रहता है। और यह हमारे लिए सुखद ही होता है। यदि वह पीछे बदल जाता है तो उसमें हानि उसीकी होती है, हमारी कोई हानि नहीं होती। हमारा समस्त संघर्षका अनुभव यही है। अली[2] और अन्य लोगोंके उदाहरण लीजिए। कदाचित् आप यह कहेंगे कि मैंने अलीपर जो पैसा खर्च किया और उनको जो प्रेम दिया वह व्यर्थ गया। किन्तु यह कहना ठीक नहीं होगा। वह पैसा तो केवल उसी उद्देश्यके निमित्त इकट्ठा किया जा सकता था। और वे गये पर अपना काम उन्होंने सच्चे हृदयसे किया था। अलीके आनेसे उस समय तो लाभ ही हुआ था।

आपने अपने पत्रमें पीछे यह भी लिखा है कि आपका पोलकसे मेल हो गया है। फिर भी ऊपर की गई टीका तो ठीक ही है और आपने जो विचार प्रकट किये हैं वे जानने योग्य थे।

१. जान पड़ता है कि डॉक्टर मेहता पोलकसे इंग्लैंडमें मिले थे। श्री पोलक मई, १९११में इंग्लैंडके लिए रवाना हुए थे। उस वर्ष भाद्रपद सुदी १ को अगस्तकी २५ तारीख पड़ी थी।

२. अलीसे सम्बन्धित घटनाके लिए देखिए खण्ड ७, पृष्ठ १२४-२५ और खण्ड ८, पृष्ठ ९६-९७।

मैं भी मानता हूँ कि प्रजातीय कांग्रेससे[1] भारतको प्रत्यक्ष लाभ तो कुछ न होगा, और उससे जो अप्रत्यक्ष लाभ होना है वह एकमात्र यह है कि . . .[2]।

. . . दृष्टि [अपने स्वार्थपर] रखकर करता है तबतक उसके साथ भाईचारा नहीं होता। स्वार्थ और भाईचारेमें सदाका वैर है। मुझे अंग्रेजोंमें भी भाईचारा दिखाई नहीं देता। उन्होंने भी स्वार्थ-नीति सीखी है। "ऑनेस्टी इज दी बेस्ट पालिसी" (ईमानदारी सर्वोत्तम नीति है) — उनका यह नीति-वचन मुझे तो दूषित वचन लगता है। उनकी नीतिकी कल्पना इस वचनमें साकार हो उठी है। यह आलोचना लोक-व्यवहारपर लागू होती है। (मेरे विचारके अनुसार तो) अंग्रेजोंमें पोलक — जैसे निःस्वार्थ लोग भी मौजूद हैं जिनका व्यवहार स्वार्थसे प्रभावित नहीं रहता।

जैसे आपने पोलकके सम्बन्धमें यह लिखा है, वैसे ही पोलकने भी इस घटनाके सम्बन्धमें लिखा है। मैं उस पत्रमें भी देखता हूँ कि पोलकने आपसे जो बात की वह शुद्ध भावसे ही की थी।

मेरा खयाल है कि आपके भाषण [की रिपोर्ट] मैंने फाड़ दी है। आशा यह थी कि वह पूराका-पूरा हमें नटेसनसे मिल जायगा। अब यदि आपके पास उसकी नकल हो और उसे आप भेजें, तभी काम चल सकता है। मैं फिलहाल तो यह लिखे देता हूँ कि नटेसनकी रिपोर्टका अनुवाद न किया जाये। आपके सभी पत्रोंको तो मैं पढ़कर फाड़ देता हूँ। श्री पोलक और कैलेनबैकको आपके विचारोंसे साधारणतः अवगत करा दिया था। मेरा खयाल है कि मैंने इसमें अनुचित कुछ नहीं किया है।

आप यह खयाल करके पत्र लिखनेमें संकोच न करें कि मैं दिन-रात कार्य-व्यस्त रहता हूँ।

श्रीमती बेसेंटके भाषण मैंने नहीं पढ़े हैं।

मैंने आपके लेखपर की गई 'गुजराती' पत्रकी आलोचना नहीं पढ़ी है। यदि किसी अन्य पत्रमें आलोचना हुई हो तो वह मुझे मिली नहीं है। यदि अब कहीं होगी तो मेरे पास आयेगी और 'गुजराती' की भी आ जायेगी। उनका समय अब आयेगा।

मैं बच्चोंको रातके समय 'काव्यदोहन' में से कुछ पढ़कर सुनाता हूँ। प्रह्लाद आख्यान कल पूरा हो गया। साधारणतः हमारे जैसे विचार होते हैं उनका चित्रण जैसा इनमें आता है वैसा अंग्रेजीकी अच्छी कही जानेवाली पुस्तकोंमें कम ही देखनेमें आता है।

मैं यह माने लेता हूँ कि आप भाई छगनसे[3] भी ऐसी पुस्तकें पढ़वायेंगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६२८) की फोटो-नकलसे।

सौजन्य : सी० के० भट्ट

१. विश्व प्रजाति-सम्मेलन (यूनीवर्सल रेसेज कांग्रेस), जिसे इंडियन ओपिनियनने "पार्लियामेन्ट ऑफ मैन" लिखा था, जुलाई, १९११ में प्रजातीय प्रश्नके विभिन्न पक्षोंपर विचार करनेके लिए लन्दनमें किया गया था। इसमें विश्वके सब धर्मों और दर्शनोंके प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे और निबन्ध पढ़े गये थे। इसमें श्रीमती बेसेंट और प्रो० गोखले भी गये थे। इंडियन ओपिनियन, २६-८-१९११।

२. यहाँ एक पृष्ठ गायब है।

३. डॉ० मेहताके पुत्र।

१२६. पत्र : जमनादास गांधीको

भाद्रपद सुदी ५ [अगस्त २८, १९११][1]

चि० जमनादास,

तुम्हारा पत्र आज ही मिला है। वहाँ तुम्हारी तबीयत धीरज रखनेसे अच्छी हो जायेगी। यदि तुम स्वास्थ्य-सुधारके लिए कुछ समय मेरे पास रहना चाहते हो तो तुम्हारे लिए अनुमतिपत्र ले सकता हूँ। मुझे लगता है कि यहाँ तुम्हारी तबीयत अच्छी रहेगी। किन्तु इसका फैसला तुम्हींपर छोड़ता हूँ।

तुमने मुझसे ठीक सवाल पूछा है। तुमने जो अर्थ किया है वह बिलकुल सही है। यदि "is" [है] शब्दका प्रयोग करें तो वह अर्थ गायब हो जायेगा।[2] equivalent [पर्याय] में "is" आ जाता है। पुरुषोत्तमदास यह नहीं समझ सका, यह आश्चर्यकी बात है। इन मामलोंमें मैं उसकी बुद्धिको बहुत प्रखर मानता हूँ। "Civilization" [सभ्यता] के लिए जो गुजराती शब्द व्यवहृत होता है उसका अर्थ "अच्छा रहन-सहन" है। मेरे कहनेका अभिप्राय यही है। Gujarati equivalent for civilization is sudharo [सभ्यताका गुजराती पर्याय 'सुधारो' है] यह वाक्य ठीक है। किन्तु मेरे कहनेका आशय यह नहीं था। यदि यह कहें कि Gujarati equivalent for civilization is good conduct [सभ्यताका गुजराती पर्याय सदाचार है] — तो व्याकरणके नियमसे ऐसा लगेगा मानो good conduct [सदाचार] गुजराती शब्द हो। यह तुम पुरुषोत्तमदासको बता दोगे तो मुझे लगता है कि वह समझ जायेगा। यह लिखना कि तुमने "means" शब्दको ऊपर दिये तर्कसे ही सही माना था या किन्हीं अन्य कारणों से।

अयोध्याको Virgin City क्यों कहा गया है, यह मैं तुरन्त नहीं बता सकता। मुझे दत्तकी पुस्तक पढ़नी होगी। फिर कभी पूछना। तुम जो अर्थ निकालते हो वह मुझे ठीक नहीं जान पड़ता। परन्तु मेरी भूल हो सकती है। "युज्" धातुसे "योध्या" शब्द बना है, ऐसा नहीं जान पड़ता। सामान्यतः यहाँ Virgin का अर्थ पवित्र करना ठीक लगता है।

मगनलालने जो प्रश्न पूछा है उसका स्पष्टीकरण यह है: "Community of interest" का अर्थ है समान-हित। हम सब एक दिशामें जाते हों तो कहा जायेगा कि हममें Community of interest है। यदि गोरे केवल भौतिक स्वार्थकी सिद्धिका

१. जुलाई १९११ में दक्षिण आफ्रिका आनेके बाद जमनादास गांधी टॉल्स्टॉय फार्म जानेसे पहले कुछ समय तक फीनिक्समें रहे थे। अतः यह पत्र सन् १९११ में ही लिखा गया होगा। उस वर्ष भाद्रपद सुदी ५, अगस्तकी २८ तारीखको पड़ी थी।

२. यहाँ **हिन्द स्वराज्यके** एक अंशका उल्लेख है; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ३५।

प्रयत्न करते हैं और हम अपने आत्मिक हित-साधनका प्रयत्न करते हैं तो हमारा परस्पर Community of interest नहीं है।

इस्लामी पुस्तकें गुजरातीमें कौन-कौन-सी हैं, यह मैं नहीं जानता। इतना ही जानता हूँ कि पैगम्बर मुहम्मद साहबका जीवन-चरित्र नारायण हेमचन्द्रने लिखा है[1] और उसकी प्रतियाँ पहले 'गुजराती' प्रेसवाले बेचते थे। मगनलालसे कहना कि फिलहाल पुस्तकों या अखबारोंकी सूची न छापना अच्छा होगा। वह इस पत्रको पढ़ ले, इतना काफी है।

हमारी पाठशालामें अनायास ही इन दिनों तीन लड़के बढ़े हैं। वे सभी सोमवारसे शनिवार तक अलोनी शाक-सब्जी खाते हैं और दाल न खानेका व्रत पालते हैं।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६४०) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी।

१२७. पत्र : छगनलाल गांधीको

भाद्रपद सुदी ६ [अगस्त २९, १९११][2]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा क्षय-सम्बन्धी लेख ठीक है। क्षयकी रोक-थामके लिए क्या उपाय करने चाहिए, इस विषयमें तुमने नहीं लिखा। उसमें सुधार और परिवर्तन करनेकी अभी फुरसत नहीं है। लेख जैसा है वैसा ही छपनेमें कोई हर्ज नहीं। मैं स्वास्थ्य-सम्बन्धी अध्याय लिखनेकी योजना बनाता हूँ; किन्तु कोई-न-कोई विघ्न आ जाता है। लिखनेका सब काम केवल रातमें ही हो सकता है; इसलिए बहुत ही कम वक्त बचता है। फिर भी मैं अपनी सामग्री तैयार करता रहता हूँ। यदि लिखनेकी फुरसत मिली तो क्षय आदि रोगोंके सम्बन्धमें भी लिखूँगा।[3] यह भी विचारणीय है कि सब अध्याय लिख जाऊँ तब छापे जायें या उन्हें जैसे-जैसे लिखता जाऊँ वैसे-वैसे छापा जाये।

तुम्हें हर महीने रुपया देनेके सम्बन्धमें लिख चुका हूँ।[4]

१. देखिए **आत्मकथा,** भाग १, अध्याय २२।

२. अनुच्छेद १ में किये गये श्री छगनलालके क्षय-सम्बन्धी लेखके उल्लेखसे ऐसा लगता है कि यह वही लेख होगा जो २-९-१९११ के **इंडियन ओपिनियन**के गुजराती विभागमें "क्षयनो रोग" शीर्षकसे छापा गया था। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद ३ में उल्लिखित कविता और उसके परिचय भी **इंडियन ओपिनियन**के २६-८-१९११ के अंकमें प्रकाशित हुए थे। इस प्रकार जान पड़ता है कि यह पत्र १९११ में ही लिखा गया था और भाद्रपद सुदी ६, अगस्तकी २९ तारीखको पड़ी थी।

३. गांधीजी द्वारा लिखे गये ये लेख १९१३ से पहले तक प्रकाशनके लिए तैयार नहीं हो सके थे, यह स्पष्ट है।

४. देखिए "पत्र : छगनलाल और मगनलाल गांधीको", पृष्ठ १४४।

तुमने जो कविता भेजी उसकी भूमिका ठीक लिखी थी। उसमें कुछ फेरफार करनेकी इच्छा हुई थी, किन्तु मैंने किया नहीं। मुझे फिलहाल पाठशालाकी धुन सवार है। इसलिए मैं दूसरे मामलोंमें मन नहीं लगा पाता और इसी कारण उन्हें छोड़ना पड़ता है। दूसरे मामलोंमें भी ऐसा ही हो रहा है। ऐसा करना उचित है या नहीं, यह कई बार अवश्य सोचता हूँ। किन्तु हर बार ऐसा ही लगा है कि मेरा पाठशालामें तन्मय हो जाना ठीक ही है। मैं अभी इतना तन्मय तो नहीं हुआ हूँ कि उससे मुझे सन्तोष हो जाये; किन्तु दूसरे मामले गौण हो गये हैं, यह मैं अनुभव करता हूँ। लड़के बड़ी तेजीसे बढ़ते दिखाई देते हैं। कृष्णसामी दस दिन गैर-हाजिर रहनेसे पिछड़ गया है। कई बार यह भी लगता है कि यह वेग कहीं बहुत अधिक तो नहीं हो जायेगा।

मेरा यह शिक्षा-कार्य प्रयोगके रूपमें है। अब इसका जो भी परिणाम निकले।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ५७१०) की फोटो-नकलसे।

१२८. पत्र : मगनलाल गांधीको

भाद्रपद वदी १ [९ सितम्बर, १९११][1]

चि० मगनलाल,

सुदी १३का[2] तुम्हारा पत्र मिला। यदि घर बनानेमें जो खर्च हुआ है उसके लिए तुम्हें और आनन्दलालको रुपया दिया जाये तो श्री कॉर्डिज़को भी दिया जाना चाहिए। इस सम्बन्धमें फिर दूसरे इतने प्रश्न खड़े होते हैं कि उनका पार ही नहीं है। हमें जो करना है उसे इस दृष्टिसे देखनेकी जरूरत महसूस करता हूँ। घरोंके सम्बन्धमें मुझे जो रकम तुम लोगोंसे पानी है उसे मैं छोड़ देना चाहता हूँ। इसमें अब किसीपर कर्ज ज्यादा है और किसीपर कम इसका खेद नहीं किया जाना चाहिए। और मैं सोचता हूँ तुम्हारे कर्जके बारेमें अलगसे विचार करना ही ठीक होगा।[3] अब तो ट्रस्ट-डीडपर हस्ताक्षर हों और जब हम किसी अन्तिम निर्णयपर पहुँचें तभी विशेष विचार किया जाये। मेरा विचार डीडपर हस्ताक्षर होनेसे पहले वहाँ पहुँच जानेका है। परन्तु यह काम दो-तीन महीनेमें होता नहीं दीखता। सम्भवत: अगले वर्ष ही होगा। इस बीच इस सम्बन्धमें जो कुछ पूछना हो, पूछ लेना।

१. इस पत्रमें गांधीजी उन बातोंको विस्तारसे समझा रहे हैं जो उन्होंने अपने २३ अगस्त, १९११के पत्रमें जयकृष्ण व्यासके सम्बन्धमें संक्षेपमें कही थीं। इससे जान पड़ता है कि यह पत्र २३-अगस्तवाले पत्रके शीघ्र बाद ही लिखा गया होगा।

२. सितम्बर ६।

३. लगता है, छगनलालकी ही भाँति मगनलालने भी फीनिक्समें अपने हिस्सेकी भूमि सुधारनेमें लगाई गई रकम वापस माँगी थी। देखिए पृष्ठ १३७ और १४४।

मेरा खयाल है मैं गरीबीके तत्वको दिन-ब-दिन अधिकाधिक समझता जा रहा हूँ। जान पड़ता है कि वास्तविक लाचारी उपस्थित होनेपर और अधिक समझ पाऊँगा। श्रीकृष्ण और व्यासका ज्ञान शुष्क है, यह लिखना तो मेरा उद्देश्य नहीं था।[1] मैंने जो उदाहरण दिया है वह तो प्रभुराम वैद्यके भाई जयकृष्ण व्यासका दिया है। यदि मेरा पत्र तुमने रख छोड़ा हो तो फिर पढ़ लेना; उससे बात अधिक साफ हो जायेगी। कह नहीं सकता, कोई अक्षर छूट गया हो; और अर्थका अनर्थ हो गया। जयकृष्ण व्यासने वेदान्तके विषयपर बहुत अच्छा लिखा है। उसका कुछ भाग मैंने पढ़ा है। मैं समय-समयपर उनके पास जाया करता था। गरीबीके सम्बन्धमें लिखने लगा तो जयकृष्ण व्यासका ख़याल मनमें आया। सुदामा-चरित्रमें मैं पढ़ चुका था। सुदामा और नरसिंह मेहताकी गरीबीसे होड़ करनेकी मुझे प्रेरणा हुई और आज भी है। उसीके आधारपर मैंने लिखा है कि जयकृष्ण व्यासका ज्ञान शुष्क ज्ञान है और सुदामाजीका ज्ञान खरा ज्ञान है और इसलिए अनुकरणीय है। जयकृष्ण व्यास अपनी पेटीकी चाबी अपनी कमरमें बाँधे घूमते थे। यह मैंने देखा है। उन्होंने धन-संग्रह भी खूब किया था यह मैं जानता हूँ; अतः उन्होंने जो कुछ 'पंचीकरण' में लिखा है, यह सब मुझे उसके विरुद्ध जान पड़ा।

श्रीकृष्णको तो मैं परमात्माके रूपमें देखता हूँ। वे अर्जुनके सारथी और सुदामाके मित्र थे तथा नरसिंह मेहताके रणछोड़जी। उनके सम्बन्धमें टीका करनेका स्वप्नमें भी विचार नहीं था। तुम्हारे मनमें यह भाव मेरे पत्रके कारण आया उस हद तक मैं पापका भागी हूँ। मुझसे इस विषयमें एक अक्षर भी कैसे छूट गया यह सोचकर मैं थर्रा जाता हूँ। तुम्हारा पत्र आज (शनिवारको) आया तभीसे घबराया हुआ हूँ। पाठ पूरा करके लिखने बैठा हूँ और पहला पत्र तुम्हारा ही लिया है। इसे मैं अपने जीवनकी बड़ी अधम स्थिति मानता हूँ कि पत्रोंको लिखनेके बाद उन्हें पुनः पढ़ लेने तक की गुंजाइश नहीं रखता — न वह मिलती है और न रहती ही है। इसे चाहे जिस तरह कहो मेरा दोष तो ज्यों-का-त्यों बना हुआ है, ऐसा मानता हूँ। जबतक मनकी ऐसी अति चंचल गति है तबतक ऐसा ही होता रहेगा।

सुदामाजीको स्त्रीने जो उपालम्भ दिये हैं उन्हें मैं अलंकारिक मानता हूँ, तथापि शब्दशः वह ऐसा ही बोली हो तो भी इसमें कोई अनोखापन या प्रतिकूलता नहीं जान पड़ती। स्त्री इसी प्रकार बोलती है। सुदामाजीकी इच्छा सब कुछ सहन करते रहने की थी; तो स्त्री कहेगी ही कि ऐसे काम नहीं चलेगा। जब श्रीकृष्ण-जैसे मित्र हैं तो उनसे मदद क्यों न माँगी जाये। कुछ भी हो, इतना तो सत्य है कि सुदामाजी बहुत गरीब थे और उसी स्थितिमें सन्तुष्ट थे। इसी प्रकार वे एक महान भक्त भी थे। नरसिंह मेहताको श्रीकृष्णके दर्शन हुए किन्तु उन्होंने अपनी गरीबीसे मुक्त होनेकी इच्छा तक नहीं की।

यहाँ तो आजकल अलोनेका प्रयोग बड़े जोरोंसे चल रहा है। केले जब जोहानिसबर्ग जाता हूँ तब लेता आता हूँ। इसी तरह सेब भी। जैतूनके तेलका एक छोटा डिब्बा लिया

१. देखिए "पत्र: छगनलाल और मगनलाल गांधीको", पृष्ठ १४४।

है। सुबहके समय बालक डिब्बेका दूध, रोटी (बाटी) और घी लेते हैं। दोपहरमें यदि मेवा हो तो केले, फार्मकी खट्टी नारंगियोंका रस और जैतूनका तेल मिले हुए सेवके टुकड़े तथा साथमें रोटी दी जाती है। चांवलकी कनकीको साफ करके रख लिया है। उसकी खीर बनाई जाती है। इस तरह कभी साबूदानेकी और कभी चावलकी खीर बनती है। कभी-कभी केवल भात और घी और पिछले वर्षकी सुखाकर रखी गई खुमानियाँ हैं, उन्हें बफा कर दूधके साथ लिया जाता है। शामको कॉफी (गेहूँकी) अथवा दूध और घी-रोटी। नारंगीका मुरब्बा बना कर रखा है, उसे भी लेते हैं। सप्ताहमें एकबार बालकगण दाल-भात खाते हैं। मेढ और प्रागजी तो एक अरसा हुआ अलोने [भोजन] पर हैं। बा तो है ही; यद्यपि पिछले रविवारको बालकोंके लिए सेमकी फली बनाई गई थी उसमें से थोड़ी उसने भी खाई और दो दिन बुरी तरह बीमार रही। सेम नमकके लिए ही खाई थी या और किसी कारणसे, यह तो प्रभु जाने। मैं तो सेम और नमकको ही दोष देता हूँ। जो रतनशीकी पत्नी भी अलोनी बन जाये तो काफिरोंको छोड़कर हम सभी [सप्ताहमें] छः दिन तो अलोने ही माने जायेंगे। पर मैं देखता हूँ, रम्भाबाईके तो नमकमें ही प्राण हैं।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६५९) से।
सौजन्य: श्रीमती राधाबेन चौधरी।

१२९. जर्मिस्टनके भारतीय

जर्मिस्टन एशियाइयोंके विरोधका गढ़ है। उसकी नगर-परिषदने जर्मिस्टन बस्तीमें रहनेवाले बाड़ेदार भारतीयोंके नाम एक गैर-कानूनी नोटिस जारी किया है। भारतीयोंने उसका विरोध करनेका निश्चय किया है।[1] यह उचित ही है। सन् १८८५ के कानून ३ के अनुसार समस्त एशियाइयोंको बाजारों या बस्तियोंमें रहना चाहिए। यह सच है कि इस कानूनका अमल नहीं हो रहा है; क्योंकि बस्तियोंसे बाहर बसनेपर सजाकी कोई कानूनी व्यवस्था नहीं है। परन्तु इस निन्दनीय वस्तुस्थितिको सभी जानते हैं कि ट्रान्सवालके ज्यादातर नगरोंमें एशियाइयोंके लिए अलग बस्तियाँ हैं और अधिकांश बस्तियोंमें वे लोग रहते भी हैं। जर्मिस्टनकी बस्ती इन्हींमें से एक है। ऐसी बस्तियोंमें भारतीयोंको व्यापार करनेसे रोकनेके लिए कोई कानून नहीं है। फलतः प्रस्तुत बस्तीमें कई

१. जर्मिस्टन-स्थित जॉर्ज टाउन बस्तीके भारतीयोंको अपने-अपने परवाने प्रमाणित करानेका नोटिस दिया गया था, जिसका मतलब यह था कि उन्हें या तो बस्तीमें अपना व्यापार बन्द करना पड़ता या बस्ती छोड़कर चले जाना पड़ता। उन्होंने इस नोटिसका विरोध करते हुए टाउन क्लार्कको लिखा कि नगर-परिषदको ऐसा नोटिस जारी करनेका कोई अधिकार नहीं है और सन् १८८५के कानून ३के संशोधित रूपके अनुसार उनके पट्टेको पूरी सुरक्षा प्राप्त है।

भारतीयोंके पास व्यापार करनेके परवाने भी हैं। नगर-परिषद्को यह बरदाश्त नहीं है। उसे इस बातसे कोई सरोकार नहीं कि यदि ये भारतीय व्यापार नहीं करें तो अपना गुजर कैसे करें। और न उसे इस बातसे ही कोई वास्ता है कि इस बस्तीके रहनेवाले भारतीयोंकी जर्मिस्टनके यूरोपीय व्यापारियोंसे किसी प्रकार होड़ नहीं है। नगर-परिषद्के विचारमें तो किसी भारतीयके लिए व्यापार करना ही गुनाह है।

परन्तु इन बस्तीके भारतीयोंको व्यापार करनेसे, सीधे और वैध तरीकेसे, रोकनेके लिए नगर-परिषद्के पास कोई सत्ता नहीं है; इसलिए उसने उपर्युक्त नोटिसोंका सहारा लिया है। परिषद्का खयाल है कि चूंकि इन बाड़ोंके पट्टे भारतीयोंके नामपर नहीं हैं, इसलिए वह उन्हें वहांसे बिना जांच-पड़तालके तुरन्त निकाल बाहर कर सकती है। याद रहे कि इन बाड़ोंपर अपनी रकम लगाकर भारतीयोंने खासी इमारतें बनवा ली हैं अर्थात् यदि उन्हें वहांसे हटाया गया तो उसका अर्थ उनके लिए बरबादी ही होगी। और इन बाड़ोंमें बसे हुए भारतीयोंने भी नगर-परिषद्को यही लिखा है। हर्षका विषय है कि भारतीयोंने निश्चय किया है कि वे नगर-परिषद्के इस नोटिसपर कोई ध्यान नहीं देंगे। हमें इसमें कोई सन्देह नहीं है कि परिषद्का विचार इस नोटिसपर अमल करके अपनेको अधिक हास्यास्पद बना लेनेका नहीं है, तो यह नोटिस जैसाका-तैसा पड़ा रह जायेगा।

इस नोटिससे प्रकट हो जाता है कि दक्षिण आफ्रिकामें हमारे देशवासियोंका जीवन कैसा विपन्न है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–९–१९११

१३०. एक क्षोभकारी मामला

किन्हीं दो भारतीयोंकी ओरसे, जिनका दावा था कि उन्हें इस प्रान्तमें निवासका अधिकार है, जमा की गयी सौ-सौ पौंडकी जमानतोंको जब्त कर लिये जानेके सम्बन्धमें नेटाल भारतीय कांग्रेसने गृह-मन्त्रीके नाम एक आवेदनपत्र भेजा था। उसे हम पहले ही प्रकाशित कर चुके हैं। नेटालके प्रवासी कानूनोंमें व्यवस्था है कि कोई व्यक्ति १०० पौंड जमानतके तौरपर जमा करके अपना दावा सिद्ध करनेके लिए इस प्रान्तमें आता है; परन्तु यदि वह अपने दावेके बारेमें मजिस्ट्रेटको सन्तुष्ट न कर सके तो यह जमानत जब्त की जा सकती है। किन्तु ऐसी असफलताका कानूनी परिणाम जमानतकी जब्ती नहीं है। जमानतको जब्त करने या न करनेका आदेश देना मन्त्रीकी मर्जीकी बात है। हमारे सामने जो दो मामले हैं उनमें जमानत इन लड़कोंने[1] स्वयं जमा नहीं की थी। इसके

१. मई १५को दो नाबालिग लड़के डर्बन पहुँचे। इनमें से एकके पिता डर्बनवासी सैयद अहमद थे और दूसरेके वेरुलमके श्री एम० एम० नायलिया। मुख्य प्रवासी अधिकारीने बच्चोंको जहाजपर से उतरनेसे रोक दिया। कारण उसने यह बताया कि उसकी रायमें एककी उम्र १६ वर्षसे अधिक थी और दूसरा इस बातको संतोषप्रद ढंगसे सिद्ध नहीं कर पाया कि वास्तवमें वही व्यक्ति उसका पिता था, जिसे उसने

अलावा यह पूर्णतया सिद्ध भी नहीं किया जा सका कि इन लड़कोंको नेटालका निवासी होनेका अधिकार ही नहीं है। इसके विपरीत एकके बारेमें तो मजिस्ट्रेटने बहुत सहानुभूति भी प्रकट की। जहाँ प्रत्यक्ष ही धोखा दिया गया हो वहाँ जमानतका जब्त कर लिया जाना तो समझमें आ सकता है, पर इन मामलोंमें तो धोखेका किसीको सन्देह तक न हुआ। अतः इस कार्यका एक ही अर्थ हो सकता है कि जमानतें जब्त करनेकी नीति अख्तियार करके सरकार भारतीय निवासियोंके अधिकारोंको विफल बना देना चाहती है। यदि सरकारकी सोची-समझी नीतिका यही रूप है तो हमारी समझमें जनरल बोथाके इस कथनको मक्कारी ही कहना पड़ेगा कि जो भारतीय कानूनके अनुसार दक्षिण आफ्रिकाके निवासी बन गये हैं, सरकार उनके हितोंको हानि नहीं पहुँचाना चाहती। हम तो यही आशा करते हैं कि कांग्रेसके आवेदन-पत्रपर जनरल स्मट्स अनुकूल विचार करेंगे और जमानतकी रकमें लौटा देनेका आदेश देंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-९-१९११

१३१. पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको

आश्विन सुदी २ [सितम्बर २४, १९११][1]

भाई श्री प्राणजीवन,

आपके तीन पत्रोंका जवाब मैंने अभीतक नहीं दिया। आप हिन्दुस्तान जानेवाले थे इसलिए विलायतके पतेपर लिखकर क्या करता? हिन्दुस्तान जानेवाली डाकका मामला तो ढीला-ढाला ही रहता है इसलिए वहाँके लिए नियमसे लिखना सम्भव नहीं होता। आज भी डाक कब निकलेगी यह बिना जाने ही पत्र लिख रहा हूँ।

बताया था। किन्तु, उक्त दोनों सज्जनों द्वारा जमानतके तौरपर सौ-सौ पौंडकी रकमें जमा करनेपर उनके लड़कोंको तबतक के लिए उतरनेकी अनुमति दे दी गई जबतक कि मुख्य मजिस्ट्रेटकी अदालतमें उनकी अपीलकी सुनवाई नहीं हो जाती। मजिस्ट्रेटने २३ मईको सैयद अहमदके लड़केके सम्बन्धमें निर्णय देते हुए कहा कि उम्रके बारेमें किसी भी अधिकारीके निर्णयके खिलाफ अपील नहीं की जा सकती। दूसरे लड़केके सम्बन्धमें उसने कहा कि श्री नाथल्या द्वारा प्रस्तुत प्रमाण अपर्याप्त हैं, और यदि बादमें लड़केकी वल्दियतके बारेमें प्रमाणपत्र पेश किया गया तो उसे उतरनेकी इजाजत दे दी जायेगी। उसने यह भी कहा कि नाथल्याके प्रति कानून थोड़ा कठोर जाता है और फिर जमानतकी रकम लौटा देनेकी सिफारिश की। दोनों लड़के पहले जहाजसे भारत चले गये। (इं० ओ०, ९-९-१९११)

१. इस पत्रके अन्तमें गांधीजीने अकालका जिक्र किया है। रायटरके संवाददाता द्वारा शिमलासे भेजे गये सितम्बर ५, १९११ के एक समाचारमें पंजाब और राजस्थानमें अकालका उल्लेख मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि यह पत्र १९११ में लिखा गया था। उस वर्ष आश्विन सुदी २, सितम्बर २४ को पड़ी थी।

भाई मणिलालको[1] मैं अभी कुछ नहीं लिखता। उनका पिछला पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। मैंने उन्हें लिख दिया है कि वे जब आना चाहें आ जायें। फीनिक्सको भी उनके सम्बन्धमें लिख रखा है। मैं खुद फीनिक्स जा सकूँगा यह सम्भव नहीं लगता। अतः यहीं बुला लूँगा। मुझे यह भी लगता है कि यहाँ वे अनुभव हासिल कर सकेंगे। फिजी जानेके सम्बन्धमें तो मैंने साफ इनकार लिख भेजा है। वहाँ जायेंगे तो पछतायेंगे, मेरा ऐसा खयाल है। उनको एकदम रकम थमा देनेके लिए वहाँ कोई फालतू नहीं बैठा है।

अपने पत्रको दैनिक बनाकर तो उन्होंने बड़ी भूल की है। स्वयं पत्र खुदमें तो कुछ है ही नहीं। टाइप खराब, कागज रद्दी और सामग्री भी वैसी ही। मॉरिशसमें उसके अच्छे मददगार ही नहीं हैं तो पत्र कैसे ठीक प्रकाशित हो। और फिर पाठक भी इतने कहाँ हैं। इस सबके सम्बन्धमें उनके यहाँ आनेपर सलाह-मशविरा करूँगा।

आपने रिच आदिके सम्बन्धमें लिखा कि इस सम्बन्धमें आप जो-कुछ लिखें उसका मैं बुरा न मानूँ। आपके मनमें ऐसी शंका उठनी भी नहीं चाहिए। जहाँ विशुद्ध भावसे विचार व्यक्त किये जाते हैं, वहाँ बुरा किसलिए माना जाये। अतः जिसके सम्बन्धमें आपको लिखना उचित जान पड़े और ठीक जँचे, आप अवश्य लिखते रहें।

गोरोंके प्रति हम जितना द्वेषभाव रखते हैं सम्भव है कि वे हमारे प्रति उससे भी अधिक रखते हों। किन्तु अगर वे थोड़ी भी प्रीति दिखाते हैं और हम बहुत तो इसका कारण ही जुदा है। कारण यह है कि हम उनसे डरते हैं। बाकी मेरा अनुभव तो यह है कि बहुतेरे भारतीय भले-बुरेका भेद करना नहीं जानते और गोरा-मात्र खराब होता है यह मान लेते हैं। सो एक ओर व्यर्थका भय दूर करना आवश्यक है और दूसरी ओर भले-बुरेकी पहचान जरूरी है। ये दोनों बातें समय आनेपर हो सकेंगी, ऐसा मेरा ख्याल है।

रिच या पोलक — किसीको भी मैं शिष्य नहीं मानता। उन्हें जबतक ठीक जान पड़ता है तबतक हमारे साथ काम कर रहे हैं। मेरी मृत्युके बाद वे जो-कुछ करें वह भी मेरी पसन्दका ही होगा, अगर लोग ऐसा मानें तो वह निराधार होगा। जो मेरे सम्पर्कमें आये हैं वे भलीभाँति जानते हैं कि उनके और मेरे बीच एक सत्याग्रह-को छोड़, दूसरी बातोंमें मतभेद रहा करता है। तो भी जो सुझाव आपने दिये हैं उन्हें मैं नजर-अन्दाज तो नहीं करूँगा।

वहाँ[2] आनेके सम्बन्धमें मैं काफी लिख चुका हूँ। अकालके दिनोंमें यदि मैं वहाँ रहूँ तो भरपूर चाकरी बजा सकूँ — यह ख्याल तो मुझे भी बना रहता है। जब वक्त आएगा तब मैं वहाँ पहुँचे बिना नहीं रहूँगा। अधिक और क्या लिखूँ? वहाँ कुशलताके साथ काम किया जा सके, मेरी सारी तैयारी इसीको सामने रखकर है।

मोहनदासका वन्देमातरम्

१. मणिलाल डॉक्टर, जिनकी सगाई डॉ० प्राणजीवन मेहताकी पुत्रीके साथ हुई थी। ये उस समय टॉल्स्टॉय फार्ममें रह रही थीं।

२. भारत।

[पुनश्च]

टॉल्स्टॉयका 'ईवान द फूल' यदि न पढ़ा हो, तो अवश्य पढ़ जाइए।

मेरे सम्बन्धमें लिखे आपके लेखको लेकर 'इंडियन ऊवलैंड' में लगभग तीन पृष्ठकी टीका है, उसे देखिएगा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६२९) से।
सौजन्य : सी० के० भट्ट

१३२. छगनलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश

[सितम्बर २८, १९११ से पूर्व][1]

. . . और जब संरक्षकने बातको सही नहीं बताया तब जो कुछ छापा गया है उसे छापना ठीक ही था। अय्यरने[2] अब जो-कुछ लिखा है, उसके सम्बन्धमें वह निर्दोष है। उसके पीछे कुछ विघ्न-सन्तोषी लोग हैं। इसलिए हमें निर्भय रहना है। हम अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

तुम दादा सेठ[3] आदिसे कहना कि हम जिस बातको सिद्ध नहीं कर सकते उसे अखबारमें छापते हैं तो अपराध करते हैं। किन्तु यदि कांग्रेस उसके सम्बन्धमें कुछ छानबीन करके लिखे तो ठीक है। फिर भी अभी इस सम्बन्धमें छानबीन. . .

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ६०७८) से।

१. डर्बनसे प्रकाशित **आफ्रिकन क्रॉनिकल**में, जिसके स्वामी और सम्पादक श्री अय्यर थे, सितम्बर, १९११ को जनुविया नामक एक गिरमिटिया स्त्रीके मामलेकी खबर छपी थी। इस स्त्रीके साथ, गर्भिणी होनेकी अवस्थामें, उसकी मालकिनने दो बार दुर्व्यवहार किया और उसे मारा-पीटा भी, जिसके फलस्वरूप पहली बार उसका गर्भपात हो गया और दूसरी बार बच्चा पैदा होनेसे कुछ ही देर बाद मर गया। खबरमें बताया गया था कि वह स्त्री अपने पतिके साथ दो बार प्रवासी संरक्षकके पास शिकायत करने गई, किन्तु दोनों बार उस अधिकारीने उन्हें वापस लौटा दिया। जब वह तीसरी बार गर्भवती हुई तो वह जंगलमें भाग गई। **इंडियन ओपिनियन**में यह खबर १६ सितम्बर, १९११ के अंकमें उद्धृत की गई थी; किन्तु दो सप्ताह बाद उसने छापा कि संरक्षकने वैसी किसी स्त्रीके आनेकी बातका खण्डन किया है। सितम्बर २८, १९११ को नेटाल इंडियन कांग्रेसने इस घटनाके सम्बन्धमें एक पत्र लिखकर संरक्षकसे पूछताछ की। खयाल है कि यह पूछताछ गांधीजीके सुझावपर ही की गई होगी, जिसका उल्लेख इस पत्रमें है। इसलिए यह पत्र स्पष्टतः उस तारीखसे पहले ही लिखा गया होगा।

२. पी० एस० अय्यर; डर्बनसे प्रकाशित होनेवाले पत्र **आफ्रिकन क्रॉनिकल**के स्वामी और सम्पादक। उन्होंने अपने पत्रमें गिरमिटियोंपर से ३ पौंडी कर हटवानेके लिए जोरदार आन्दोलन किया था और इसमें वे **नेटाल मर्क्युरी** और **प्रिटोरिया न्यूज़** आदि यूरोपीय पत्रोंका समर्थन प्राप्त करनेमें भी सफल हुए थे। उन्होंने सितम्बर १९११ में एक ३ पौंडी कर-विरोधी लीग भी बनाई थी, जिसके वे स्वयं अवैतनिक मन्त्री थे। जब इस करको न देनेपर फिर गिरमिटमें बँधनेवाले मजदूरोंपर मुकदमे चलाये जाने लगे तो उन्होंने **नेटाल मर्क्युरी**का ध्यान इस तथ्यकी ओर खींचा कि अप्रैल १९१० में जारी किये गये सरकारी गश्ती पत्रका, जो फिर गिरमिटमें बँधने और करके बारेमें था, अर्थ १९१० के अधिनियम १९ के अर्थसे भिन्न है।

३. दादा उस्मान।

१३३. श्री गांधी और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस

नेटाल भारतीय कांग्रेसको इस सप्ताह कलकत्तासे एक समुद्री तार मिला है, जिसमें पूछा गया है कि क्या गांधी आगामी दिसम्बरमें कलकत्तामें होनेवाले भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अधिवेशनका सभापतित्व कर सकेंगे। इसपर नेटाल भारतीय कांग्रेसके नेताओंने तार और टेलीफोन द्वारा श्री गांधीसे विचार-विनिमय किया और इस बात-पर जोर दिया कि वे इसे मंजूर कर लें। इसके जवाबमें श्री गांधीने पहले तो कहा कि इस समय उनके लिए ट्रान्सवाल छोड़कर कहीं जाना सम्भव नहीं होगा। परन्तु अन्तमें उन्होंने सूचित किया कि यदि इससे मातृभूमिकी कुछ सेवा हो सकती है तो वे मंजूर कर लेंगे; परन्तु केवल एक शर्त होगी :[1] वह यह कि अधिवेशन समाप्त होते ही उन्हें दक्षिण आफ्रिका वापस लौटने दिया जायेगा। तदनुसार इस आशयका जवाब समुद्री तार द्वारा भेज दिया गया। इस अंककी छपाईके दरम्यान अभीतक कोई आगेका समाचार नहीं मिला है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–९–१९११

१३४. एक पत्रका अंश[2]

[अक्तूबर २, १९११ के लगभग][3]

तुम उतनी ही जगहमें धीरे-धीरे चहलकदमी या ऐसे ही दूसरे हलके व्यायाम करना। दस्त न आता हो तो रातको पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी बाँधना। ऐसे उपचारोंसे लुटावन नामका एक व्यक्ति, जो बहुत बीमार था, स्वस्थ होकर अपने घर लौट गया है।[4] वह जब आया था तब इतना खाँसता था कि मैं मुश्किलसे सो पाता था। वह खाँसते-खाँसते दुहरा हो जाता था। उसके शरीरमें हड्डियाँ ही हड्डियाँ रह गई थीं। वह यहाँ आधा घंटा कूनेकी विधिसे टबमें बैठकर. . .[5] विशेष सलाह तो देखकर ही दी जा सकेगी।

१. गांधीजीने यहाँ उस दूसरी शर्तका उल्लेख नहीं किया है जो उन्होंने एक व्यक्तिगत तारमें सूचित की थी; देखिए "पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६१ ।

२. इस पत्रके पहले दो पृष्ठ खो गये हैं ।

३. इस पत्रमें मणिलाल डॉक्टरके आनेका उल्लेख है । वे अक्तूबर २, १९११ को डर्बन पहुँच गये थे; देखिए "पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६१ ।

४. देखिए **दक्षिण आफ्रिकाका सत्याग्रह**, अध्याय ३५ ।

५. यहाँ एक शब्द गायब है ।

मैं यहाँसे जितनी सम्भव होगी उतनी सामग्री लिख कर भेजूँगा। किन्तु फिलहाल मुझसे आशा रखना व्यर्थ है। भाई, मेरा मन फार्ममें अर्थात् शालाके बच्चोंमें रमा हुआ रहता है। इसके सिवा, न तो मेरे पास समय है और न दूसरा कोई काम अच्छा लगता है।

जबतक यह पत्र पहुँचेगा तबतक मणिलाल डॉक्टर भी पहुँच चुकेंगे। साथके पत्र भेज देना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ६०७६) की फोटो-नकलसे।

१३५. सूखकर काँटा हो गये

जनरल बोथाने उस दिन रीटफॉटीनमें भाषण देते हुए अप्रत्यक्ष रूपसे सत्याग्रहकी प्रशंसा ही की; उन्होंने कहा कि "[एशियाई] प्रश्नको सुलझानेके अनवरत प्रयत्नोंका परिणाम यह निकला कि कैदखाने सत्याग्रहियोंसे भर गये तो जनरल स्मट्स सूख कर काँटा हो गये।"[1] इसमें कोई सन्देह नहीं कि सत्याग्रहियोंका हौसला तोड़ डालनेके लिए जनरल स्मट्सने हर सम्भव उपाय करके देख लिया, और पूरी तरह असफल होनेपर ही उन्होंने तथ्योंको अनिच्छापूर्वक स्वीकार किया और प्रश्नका निपटारा किया। चार वर्ष पहले सत्याग्रह "टॅबू"[2] था। कुछ लोग उसे गैरकानूनी मानते थे। और कुछ कहते थे कि सत्याग्रहके सामने झुकनेका अर्थ होगा वतनियोंसे झगड़ा मोल लेना। परन्तु दोनों दल भूल गये कि सत्याग्रहका आधार सत्य है। वह एक ऐसा अस्त्र है जिसका प्रभावकारी उपयोग केवल वे ही कर सकते हैं जो कभी रक्तपातपर विश्वास नहीं रखते। आज संघके प्रधानमन्त्री स्पष्ट रूपसे स्वीकार कर रहे हैं कि एशियाई समझौता सत्याग्रहके कारण ही हुआ। हमें निश्चय है कि ज्यों-ज्यों समय बीतता जायेगा त्यों-त्यों लोग इसका मूल्य अधिक समझते जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१०–१९११

१. गोरोंने इस आशयका एक प्रार्थनापत्र दिया था कि सभी एशियाइयोंको निर्वासित कर दिया जाये। इसके उत्तरमें जनरल बोथाने २६ सितम्बर, १९११ के अपने इस भाषणमें कहा था कि मैं भी यही चाहता हूँ, परन्तु एक कठिनाई मुआवज़ेकी है जो बहुत "बड़ी रकम" होगी और दूसरी यह कि हमें ब्रिटिश झंडेके नीचे ब्रिटिश सिद्धान्तोंके अनुसार चलना पड़ता है।

२. मूलतः पॉलीनेशिया, न्यूज़ीलैंड आदिकी आदिम जातियोंमें प्रयुक्त शब्द। कोई ऐसे आचार जो देवता आदिके तो योग्य हों, किन्तु अन्य लोगोंके लिए निषिद्ध माने जायें।

१३६. मूर्खराज और उसके भाई

भूमिका

हमने यह कहानी स्वर्गीय महापुरुष टॉल्स्टॉयकी लिखी हुई एक अत्यन्त भक्ति-पूर्ण रचनासे ली है। हम उसका शाब्दिक अनुवाद तो नहीं दे रहे हैं[1]; फिर भी हमने उसे अपनी भाषामें इस प्रकार रखनेका प्रयत्न किया है जिससे उसका महत्व पूरी तौरपर समझा जा सके।

जो कहानी हम पहले प्रकाशित कर चुके हैं[2] उससे यह कहीं बढ़कर है। यूरोपके अनेक लेखकोंने भी इसकी बहुत सराहना की है। उसमें जो-कुछ लिखा है वह सब घटित हो सकता है। इतना ही नहीं बल्कि कोने-आंतरे ऐसी बातें आज भी हुआ करती हैं। यह नहीं मान लेना चाहिए कि चूंकि ऐसी घटनाओंको इतिहासमें स्थान नहीं मिला है, इसलिए उनके होनेकी संभावना नहीं है।

इस कहानी द्वारा टॉल्स्टॉय क्या सिखाना चाहते हैं, सो पाठक ज्यों-ज्यों इसके प्रकरणोंको क्रमशः पढ़ता जायेगा त्यों-त्यों स्पष्ट होता जायेगा।

इस कहानीकी शैली इसकी उदात्त शिक्षाके अनुरूप रोचक है। अंग्रेजी अनुवादकी रोचकताको जिस हद तक हम उतार पाये हैं वह यदि पाठकोंको पूरी तरह आकर्षित न कर पाये तो दोष हमारा होगा, न कि कहानीका।

इस खयालसे कि कहीं रूसी नामों और जगहोंके कारण पाठकका मन कहानीसे उचटने न लगे, हमने रूसी नामोंकी जगह अपनी पद्धतिके अनुसार भारतीय नाम रख दिये हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-१०-१९११

१. मूल कहानी यहाँ नहीं दी जा रही है।

२. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ १७५-७६।

१३७. हरिलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश[1]

[अक्तूबर ७, १९११के आसपास][2]

. . . मणिलाल अडालजा[3] गुजर गये। यह गजब ही हो गया। तुम्हें इससे सबक लेना है। मैं चाहता हूँ कि तुम आधुनिक पद्धतिकी शिक्षाके मोहमें अपना स्वास्थ्य न खो बैठो। इस सम्बन्धमें मैं अपने विचार तुमपर प्रकट कर चुका हूँ, अतः अधिक नहीं लिखता।

मुझे कांग्रेसके अध्यक्ष होनेका निमन्त्रण मिल चुका है, ऐसा कहा जा सकता है। अपने [विचार व्यक्त करनेके] लिए मुझे पूरी स्वतन्त्रता रहे इसी शर्तपर मैंने उसे स्वीकार किया है। मुझे इस पदकी ख्वाहिश नहीं है। पर यदि आना ही पड़ा तो हम उस वक्त मिलेंगे।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ६७५) से।

१३८. पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको

आश्विन वदी २ [अक्तूबर १०, १९११][4]

भाई श्री प्राणजीवन,

मैंने आपके दो पत्रोंका जवाब नहीं दिया, कारण यह था कि यूरोपके पतेपर लिखनेकी तो बात ही नहीं थी।

हरिलालका इरादा मैट्रिककी परीक्षा देनेका है। मैंने उसे बहुत समझाया कि उसमें कुछ नहीं है, किन्तु यह बात उसके गले ही नहीं उतरती। डिग्रियोंके लिए मुझे भी पहले मोह था; वह भी उसी दशामें पड़ा हुआ है। अतः उसे क्या दोष दिया जाये। मैं तो यही मानता हूँ कि उसे एक दिन समझ आ जायेगी। जान पड़ता है कि उसका हेतु अच्छा है।

१. पत्रका पहला पृष्ठ उपलब्ध नहीं है; यह दूसरा पृष्ठ है।

२. सितम्बर ३०, १९११ तक यह बात सर्वविदित हो गई थी कि गांधीजीसे कांग्रेसका सभापति बननेके लिए उनकी मंजूरी माँगी गई है; देखिए "श्री गांधी और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस", पृष्ठ १५७। अक्तूबर ७, १९११ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित एक समाचारसे पता चलता है कि गांधीजीने स्वयं तार द्वारा अपना उत्तर भेज दिया था। अतः यह पत्र लगभग उसी समय लिखा गया होगा।

३. हरिलालके साढ़ू; बली बहनके पति।

४. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका अध्यक्ष-पद स्वीकार करनेके सम्बन्धमें गांधीजीसे सन् १९११ में पूछा गया था। उस वर्ष आश्विन बदी २, अक्तूबरकी १० तारीखको पड़ी थी।

भाई मणिलाल[1] गत सोमवारको डर्बन पहुँचे। कल (सोमवार) उन्होंने डर्बन छोड़ा है। और कल [बुधवार] वे यहाँ (फार्मपर) आ पहुँचेंगे। फीनिक्ससे उनका पत्र आया था जिसमें उन्होंने सूचित किया है कि उन्हें फीनिक्स पसन्द है। छगनलालने भी ऐसा ही लिखा है। अब देखें, यहां क्या होता है।

कांग्रेसका अध्यक्ष बननेके लिए मुझे निमन्त्रण आया है। यह किसकी तरफसे आया है यह ठीकसे समझमें नहीं आया। तार नेटाल कांग्रेसके नाम था। उसने तो तार कर भी दिया कि मैं जा सकूँगा। मैंने व्यक्तिगत तार[2] किया है कि [अध्यक्ष बननेमें] यदि मेरी स्वतन्त्रताका निर्वाह हो और मेरी जरूरत खास तौरसे मानी जा रही हो तभी मुझे बुलाया जाये, अन्यथा मुक्त ही रखा जाये। इस तारको आज लगभग १२ दिन हो गये, अभीतक कोई जवाब नहीं आया। इससे मैं अनुमान करता हूँ कि कलकत्तेसे आया हुआ तार निमन्त्रण नहीं था, केवल पृच्छा-मात्र थी; अथवा मेरी शर्त ठीक न लगी हो।

स्थायी रूपसे मेरे जल्दी ही वहाँ [भारत] आ जानेके सम्बन्धमें आपका बड़ा आग्रह है, यह मैं जानता हूँ। मुझे भी यह बात जँचती है और मैं यहाँसे मुक्त होते ही वहाँ आ जाऊँगा। किन्तु यहाँकी व्यवस्था कर लेनेकी जरूरत भी तो दिखाई दे रही है। अतः अकालके अवसरपर काम करने पहुँच सकूँ यह सम्भव नहीं जान पड़ता। मैं जानता हूँ कि अकाल अत्यन्त भयंकर पड़ा है और समझता हूँ कि यह देरसे आनेवाली बरसात कई लोगोंके लिए किसी कामकी नहीं है।

आप ऐसा न मानें कि मैं दुनिया-भरकी सेवा करनेके मोह-पापमें पड़ गया हूँ। मैं भली-भाँति समझता हूँ कि मेरा कार्य तो हिन्दुस्तानमें ही है, सो भी गुजरातमें और सच कहें तो काठियावाड़में।

'इंडियन ओपिनियन'में अनेक अच्छे लेखादि निकलते रहते हैं और मुझे तो कई बार ऐसा लगता है कि इसमें जो-कुछ प्रकाशित होता है उसका पूरा सदुपयोग नहीं हो पाता। कुमारी स्मिथके पत्र नीरस हुआ करते हैं यह भी सच है पर उन्हें बन्द कर देनेकी इच्छा नहीं होती। उसकी भावना निर्मल है। उसे मैं पैसा भी नहीं देता। पैसा देना तो मैं जब विलायतमें था तभी बन्द कर दिया गया था।[3] परन्तु कुमारी स्मिथने स्वयं ही बिना पारिश्रमिक लिखते रहनेकी इच्छा प्रकट की थी; मैंने यह स्वीकार कर लिया। उसके भेजे हुए अनेक पत्र तो मैं छपनेके लिए देता ही नहीं हूँ। पिछले महीनेमें ही मैंने एक पत्र रद किया था। इससे उसे कुछ बुरा

१. मणिलाल डॉक्टर।

२. उपलब्ध नहीं है।

३. सन् १९०९ में जब गांधीजी लन्दन गये थे तब वहाँ उन्होंने कुमारी ए० ए० स्मिथसे **इंडियन ओपिनियन**के लिए नियमपूर्वक लिखनेको कहा था। वह **ऑब्जर्वर**के नामसे "लन्दनकी चिट्ठी" लिखा करती थीं। बादमें आर्थिक कारणोंसे जब उनका यह स्तम्भ बन्द करनेकी बात सोची गई तब पोलकने यह कह कर विरोध प्रकट किया कि यही एक ऐसा स्तम्भ है जो सत्याग्रहसे अलग विषय-वस्तु देता है, और साथ ही बाहरी दुनियाकी कुछ जानकारी भी। (देखिए खण्ड ९, पृष्ठ ४३०)। गांधीजीने पोलकके सुझावके अनुसार कुमारी स्मिथसे बात की होगी।

लगता हो, ऐसा भी नहीं है। उसकी भावनाका खयाल करते हुए उसके लेखादि एकदम वन्द कर देना उचित नहीं लगता।

कैलेनवैकसे आपकी भेंट होनेके वाद आपका कोई पत्र नहीं मिला। गत सप्ताह तो आपका पत्र मिला ही नहीं, आपकी ओरसे केवल एक पैम्फलेट आया था। जसमा[1] सम्बन्धी गरवी[2] आपने 'इं० ओ०' में देखी होगी ही। लोगोंको वह पसन्द आयी इसलिए उसे अलगसे भी छाप दिया है। मैंने उसकी एक प्रति आपको भेजनेके लिए फीनिक्स लिखा है। यह गरवी अनायास ही छगनलालके हाथ लगी। मुझे तो लगा कि कविने इसमें अत्यन्त मीठी और सरल भाषामें प्रौढ़ ज्ञानका समावेश किया है। यह किसकी रचना है यह तो पता नहीं चल सका। इसे पढ़कर आपके मनपर कैसी छाप पड़ती है, सूचित कीजिएगा।

मोहनदासका वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६३०) से।
सौजन्य : सी० के० भट्ट।

१३९. आव्रजनका मामला

केप टाउनमें सर जॉन वुकाननने श्री जर्वरके[3] मामलेमें जो फैसला सुनाया है वह वहुत महत्वपूर्ण है। यद्यपि इसका सम्वन्ध एक रूस निवासी यहूदीसे है, तथापि यह ब्रिटिश भारतीय प्रवासियोंसे भी ताल्लुक रखता है। मुकदमेसे मालूम होता है कि इस प्रवासीके पास वीस पौंड थे, इसने अपना मार्ग-व्यय स्वयं चुकाया था, इसकी तन्दुरुस्ती अच्छी है, उसने किसी अपराधमें सजा नहीं पाई और वह कुशल कारीगर है। यहूदी पादरीने यह भी प्रमाणित किया कि वह प्राचीन यहूदी भाषाका अच्छा विद्वान है। फिर भी प्रवासी अधिकारीने उसे निषिद्ध प्रवासी ठहराया; क्योंकि उसके हिसावसे उसमें आवश्यक शैक्षणिक योग्यता नहीं थी। हम जानते हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें यहूदी किन्हीं खास निर्योग्यताओंके शिकार नहीं हैं। परन्तु उनके प्रति मन-ही-मन

१. गुजराती लोकगीतकी नायिका; एक झीलके निर्माणमें लगे मजदूरोंमें जसमा भी थी। यह झील गुजरातके राजा सिद्धराज बनवा रहे थे। राजाने जसमाकी ओर कुदृष्टि डाली किन्तु जसमाने उनका मनोरथ विफल करनेमें सफलता प्राप्त की।

२. गुजरातीका एक लोकगीत। इसे छगनलाल गांधीने **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशनके लिए चुना था और उसकी भूमिका भी लिखी थी। इस भूमिकाकी प्रशंसा गांधीजीने की थी; देखिए "पत्र: छगनलाल गांधीको", पृष्ठ १५०।

३. जैक जर्वर, रूस-निवासी यहूदी, अपने भाईके साथ रहनेके लिए दक्षिण आफ्रिका आया; किन्तु अनुमतिपत्र साथ नहीं लाया था। उसने प्रवेशके लिए आवश्यक शर्तें पूरी करा ली थीं, किन्तु अपर्याप्त शिक्षाके आधारपर जहाजसे उसे उतरने नहीं दिया गया। केपकी प्रान्तीय अदालतने निर्णय दिया कि जर्वरको उतरनेका अधिकार है और प्रवासी अधिकारियोंका निर्णय ऐसा है जिसे विचारार्थ न्यायालयके सुपुर्द करनेकी जरूरत है। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, १४-१०-१९११।

और परोक्ष रूपसे भेदभाव अवश्य है, जो कभी-कभी, जैसा कि वर्तमान मामलेमें लक्षित हैं, सतहपर आ जाता है। यदि श्री जर्वर यूरोपके किसी दूसरे भागसे आये हुए प्रवासी होते और उनका सम्बन्ध किसी अन्य जातिसे होता तो बहुत सम्भव है उनके प्रति प्रवासी अधिकारीका बर्ताव ऐसा कठोर न होता। परन्तु जैसा व्यवहार उनके साथ हुआ है वैसा माह-दर-माह बीसों भारतीयोंके साथ होता रहता है और उसकी कोई चर्चा नहीं होती। हम जानते हैं कि संघ-सरकारकी निश्चित नीति एशियाई प्रवासको नियन्त्रित करनेकी है। परन्तु संघके प्रवासी कानूनके अनुसार प्रवासके पूर्ण हकदार व्यक्तियोंको वापस भेज देना नियन्त्रणकी नीतिका अंग कदापि नहीं हो सकता और न होना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें, हम माँग करते हैं कि जो इस देशमें आना चाहते हैं, वे किसी भी कौम या रंगके क्यों न हों, उन सबके पक्षमें कानूनकी व्याख्या उदारतापूर्वक की जानी चाहिए और उसके अमलमें भी उतनी ही उदारता बरतनी चाहिए। हम सर जॉन बुकाननके फैसलेका स्वागत करते हैं; क्योंकि उससे प्रकट है कि कुछ भी हो, न्यायालय तो साधारणतः प्रचलित पूर्वग्रहोंसे अपनेको प्रभावित नहीं होने देंगे और कानूनका अर्थ मानवीय स्वतन्त्रताके पक्षमें लगाते हुए नहीं हिचकेंगे। अदालतने सरकारसे अर्जदारको खर्च भी दिलाया है और हम आशा करते हैं कि यह सजा सरकारके भविष्यके कामोंपर अंकुशका काम करेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-१०-१९११

१४०. पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
आश्विन वदी ० [२२ अगस्त, १९११][1]

भाई श्री ५ प्राणजीवन,

आपका यूरोपसे लिखा हुआ अन्तिम पत्र मिला था।

हरिलालको मैं तो प्रसंग आनेपर लिखा ही करता हूँ कि उसे जो परीक्षाका मोह है सो ठीक नहीं है। यदि वह आपको पत्र लिखे तो आप भी उसे ऐसा ही लिखें। इतनेपर भी यदि वह अपनी ज़िद नहीं छोड़ता तो मुझे अपने पापकी यह सजा भोगनी ही होगी।

लोग चाहे जो सोचें, अकालके इस अवसरपर आपका भारत पहुँचना जरूरी है। मेरा निकलना तो कैसे हो सकता है? अगला बरस खत्म होने तक मेरा निकलना सम्भव नहीं जान पड़ता।

१. यह पत्र १९११ ही में लिखा गया था, इसकी पुष्टि कांग्रेसके अध्यक्ष बननेके निमन्त्रण और अकाल, इन दोनोंके उल्लेखसे होती है।

मालूम होता है मेरे कांग्रेसमें जानेका प्रसंग नहीं आयेगा।[1] लगता है, कलकत्तेसे जो तार आया था वह निमन्त्रण न होकर, केवल पूछताछ थी। गोखलेजीका तार है कि अध्यक्षका चुनाव तो २८ तारीखको होगा।

उसे पाकर मैंने तार कर दिया कि मेरे नामकी चर्चा न हो तो ठीक।[2] मैंने यह भी सुझाया है कि मेरे विचार कुछ विचित्रसे लगेंगे और प्रतिकूल भी। अतः मैंने मान लिया है कि मेरा जाना नहीं होगा। और जाना न हो यह अनेक कारणोंसे वांछनीय प्रतीत होता है।

मैं भोजनमें अलोनी चीजें और ज्यादातर फल लेता हूँ। इसमें दृष्टि तितिक्षाकी नहीं है; बल्कि इसका हेतु शरीर, मन और आत्माको अधिक स्वस्थ और स्वच्छ रखनेका है। लड़के-बच्चोंको भी ऐसा ही करनेके लिए कहता रहता हूँ। मेरे मतमें नमक उत्तेजक (इरीटेन्ट) है और इसलिए हानिकारक है। इससे झूठी भूख लगती है और आदमी अधिक खा जाता है जिससे विषयेन्द्रियाँ व्यर्थ ही उद्दीप्त हो जाती हैं। ऐसा हो या न हो, अपने शास्त्रोंमें नमक न खानेकी महिमा बखानी गई है; अतः इससे लाभ होनेकी सम्भावना है। मैंने इससे कोई हानि होते नहीं देखी। जिन बीमारोंको मैंने नमक छोड़ देनेको कहा है उन्हें तो लाभ ही पहुँचते देखा है। आपके वैद्यकके ज्ञानके अनुसार इसमें कोई भूल नजर आती हो तो आप सुधार लीजिएगा।

भाई मणिलाल[3] यहाँ है। उसे यहाँ आये अब एक सप्ताहसे अधिक हो चुका है। वे बड़े मीठे आदमी हैं और उनका स्वभाव सरल है। लगता है अक्षर-ज्ञानका मोह उन्हें अबतक बना है। मेरे विचारोंके अनुसार मुझे उनका शरीर स्वस्थ नहीं लगता। चरबी बहुत है; जिसका कारण उनका रहन-सहन है। बहुत-से लोगोंका कहना है कि मुझसे मिलनेपर फार्मपर काम किये बिना कोई रह ही नहीं सकता। इस मान्यताको झूठा साबित करनेके लिए उन्होंने फीनिक्समें हँसी-हँसीमें शपथ ली है, और उसे निबाहनेके लिए फार्मपर किसी भी कामको छुआ तक नहीं है। फार्मके हितमें उन्हें काम करना बिलकुल जरूरी नहीं था, अलबत्ता उनके अपने शरीरकी दृष्टिसे बहुत जरूरी था; पर उन्होंने नहीं किया। यह एक दृष्टिसे ठीक ही हुआ, ऐसा मानता हूँ। केवल मेरे कारण ही कोई काम करे यह तो गलत है। यह गलती कुछ हद तक मणिलालके व्यवहारसे दूर हो सकेगी। मैंने तो यह अनुभव किया कि जो लोग काम करते हैं, अच्छा समझ कर ही करते हैं। वैसे यह भी सच है कि कुछ लोग मेरे लिहाजमें आकर काम करते हैं; पर यह बात बिलकुल जुदा है।

दूसरी ओर यह भी सोचता हूँ कि फार्म एक संस्था है; और उसकी अपनी एक कार्य-पद्धति है। उस प्रणालीको भाई मणिलाल जैसे सुशील लोग तोड़ें तो उसका परिणाम नये लोगों और कच्ची उम्रके युवकोंपर अनपेक्षित रूपसे खराब पड़ेगा। ऐसी संस्थाओंमें विचारशील मनुष्य संस्थाकी प्रणालीका अनुसरण करें इसीमें उनकी शोभा

१. देखिए "पत्र: डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६१

२. यह तार उपलब्ध नहीं है।

३. मणिलाल डॉक्टर; देखिए "पत्र: डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६१।

है और कुछ हद तक उसे कर्त्तव्य भी माना जाना चाहिए। मेहमानके लिए यद्यपि काम करनेका नियम लागू नहीं होता तथापि ऐसे मेहमानोंकी श्रेणीमें मणिलालका नाम नहीं गिना जा सकता। उन्होंने अपना यह दुराग्रह बहुत सहज ही, हँसते-हँसाते, ऐसे निर्दोष ढंगसे निबाहा है कि उपर्युक्त टीका करते हुए मुझे थोड़ी हिचक ही हो रही है।

मणिलालने मॉरिशसमें सार्वजनिक काम ठीक किया है और जान पड़ता है कि वे हिन्दुओंके बड़े प्रीति-भाजन हो गये हैं। अपनी बेसब्रीके कारण ही वे मुसलमानोंका स्नेह प्राप्त नहीं कर सके हैं और न उसे पानेका साग्रह कोई प्रयत्न ही किया है।

स्वयं उनका विचार तो मॉरिशस छोड़नेका लगता है। वहाँ वे कुछ कमाई कर सकेंगे ऐसा उन्हें नहीं दीखता; और वे साफ-साफ ऐसा कहते भी हैं कि एक लम्बे अर्से तक कमाईके लिए रुके रहनेका धीरज उनमें नहीं है।

वे यहाँ आये हैं इसका एकमात्र कारण आपका बहुत ज्यादा आग्रह ही है; फिर यह भी नहीं दीखता कि यहाँ आकर वे पछताये हों।

उनका विचार यहाँ अथवा नेटालमें बस जानेका है; और यदि बस जाना चाहें तो अपने खर्चके लायक तो पैदा कर ही लेंगे। यदि इतना न कर पायें तो मैं तो दोष उन्हींका मानूंगा।

मेरी राय तो यह है कि जब वे मॉरिशस जा चुके हैं, वहाँ काफी सार्वजनिक काम भी किया है और लोगोंकी प्रीति सम्पादित की है तो फिर जो भी कष्ट उठाने पड़ें, जबतक मॉरिशसमें आजीविका चलने नहीं लगती तबतक वहीं रहना उत्तम मार्ग है।

पर इस सम्बन्धमें विचार करना व्यर्थ है। दूसरा मार्ग यह है कि वे यहाँ आकर फीनिक्समें शिक्षा अथवा अन्य किसी बड़े कार्यमें लग जायें — ऐसी स्थितिमें उनका खर्च हमींको देना होगा।

लेकिन उन्हें यह विचार भी पसन्द नहीं है, अतः अब यहाँके खयालसे तो वकालत ही रही; और कुछ समय तक वकालत करना ही उन्हें ठीक जँचता भी है।

और विवाह तो अब कर दिया जाना ही ठीक मालूम होता है। उनका कहना है कि जेकी[1] भी उकता रही है। जेकीकी तबीयत खराब रहती हो तो भी, मेरे खयालसे, इसमें विलम्ब करना अब उचित नहीं होगा। यदि वह माता बननेके योग्य न हो तो दोनों विचारपूर्वक रहेंगे, ऐसी आशा हम करें और ऐसा ही मानें; यदि वैसे न रहें या रह सकें तो जैसा जेकीका नसीब।

अतः मणिलालका खयाल है कि यदि उन्हें यहाँ आना है[2] तो जेकीको साथ लेकर ही आना चाहिए। जेकी यदि आये तो उसे फीनिक्समें और मेरे सम्पर्कमें रहना है, इसके लिए मणिलाल भी राजी हैं। मणिलाल स्वयं मेरे रहन-सहनको अपना नहीं सकते किन्तु उसे पसन्द करते हैं। इसलिए अगर जेकीको यह अनुकूल लगे तो वे इसे ठीक मानते हैं।

१. जयकुँवर; डॉ० मेहताकी पुत्री।
२. दक्षिण आफ्रिकामें बसनेके खयालसे।

मेरा तो विश्वास है कि मेरे रहन-सहनमें ऐसा कुछ नहीं है जो अपनाया न जा सके। यह हो सकता है कि जो विलायत हो आया है, अथवा जिसे विलायतकी हवा लग चुकी है उसे वह पसन्द न आये या वह उसे न अपना सके।

और आपपर तो मणिलालको जरा भी श्रद्धा नहीं है। उनका आरोप है कि आप बार-बार अपने विचार बदलते रहे हैं और एक छोरसे कूदकर दूसरे छोरपर आ गये हैं। यद्यपि उतने जोरका नहीं, फिर भी कुछ इसी प्रकारका आरोप वे मुझपर भी लगाते हैं। इसलिए उनका विचार है कि मध्यम मार्ग ग्रहण करके वे पश्चिम और पूर्व दोनोंसे लाभ उठायेंगे। मैंने तो उनसे कह दिया है कि यह केवल उनकी लाचारी, निर्बलता और काहिली है। परन्तु स्थिति अभी ऐसी नहीं है कि यह बात उनकी समझमें आ जाये। हाँ, उनका दिल साफ है अतः आज नहीं तो कल, अनुभव पाकर वे ठीक मार्गपर आ जायेंगे यह विश्वास है।

उन्हें आवश्यक खर्च मैं यहाँसे देता रहता हूँ। इसे आपके नाम लिख दूँगा। इस सम्बन्धमें अब कुछ रह गया हो, ऐसा नहीं लगता। स्वयं मणिलाल और यह पत्र दोनों ही आपको साथ-साथ मिलेंगे। उनका इरादा कांग्रेसमें जानेका भी है। मैं प्रो० गोखले आदिके नाम पत्र देनेवाला हूँ। जो यहीं कार्यमें लग जानेका निर्णय हो जाये तो समयपर वापस भेज दीजिए। यदि यहीं विवाह करना चाहेंगे तो भी कर दिया जायेगा। जब वह वापस आयें तब थोड़े समयके लिए ही सही मेरा दक्षिण आफ्रिकामें उपस्थित रहना ही ठीक होगा। उनके जम जानेपर ही मेरा निकलना उचित रहेगा। आगे-पीछे रिचके साथ शिरकतकी व्यवस्था कर दी जा सकती है। रिचकी वकालत अच्छी चल निकली है।

मोहनदासका वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६३१) से।
सौजन्य: सी० के० भट्ट

१४१, भाषण: नव-वर्ष समारोहमें

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर २३, १९११

. . .रेवरेंड श्री फिलिपकी पाठशालामें हिन्दू मण्डलके कार्यकर्ताओंकी ओरसे दीवाली-महोत्सव [गुजराती नव-वर्ष] मनाया गया। इसकी अध्यक्षता श्री गांधीने की।. . श्री गांधी ठीक १० बजे अपनी धर्म-पत्नीके साथ वहाँ पहुँचे।. . .उन्होंने दीवालीके मंगल दिवसका महत्व समझाया और उस सम्बन्धमें कुछ सुझाव देते हुए कामना की कि नव-वर्ष सबके लिए सुखदायी हो।. . .

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ४-११-१९११

१४२. पत्र : गो० कृ० गोखलेको[1]

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
अक्तूबर २४, १९११

प्रिय श्री गोखले,

मैं आपको कांग्रेसकी अध्यक्षताके झमेलेके[2] वारेमें एक लम्वा-सा पत्र लिखना चाहता हूँ। सचमुच यहाँ तो वह एक झमेला ही वन गया था। परन्तु उसके वारेमें फिर कभी।

आप जानते ही हैं कि श्री मणिलाल डॉक्टरने मॉरिशसमें वड़ा अच्छा सार्वजनिक कार्य किया है और वे वहाँके गरीव भारतीयोंके स्नेह-भाजन वन गये हैं। वे उनके गाढ़े समयके मित्र सिद्ध हुए हैं। वे दक्षिण आफ्रिकाकी यात्रा करने आये हुए हैं और सम्भव है कि निकट भविष्यमें वे यहीं किसी प्रान्तमें रहने लगें। इसी वीच वे कांग्रेसके अधिवेशनमें शामिल होने भारत जा रहे हैं। उनका मंशा वहाँ गिरमिट प्रथाकी पूरी-पूरी निन्दाका प्रस्ताव पास करानेका है। मैं उनसे पूर्णतः सहमत हूँ और मेरा विचार है कि इस प्रथासे किसीका भी कोई हित नहीं हुआ। अठारह वर्षोंमें मैंने जो-कुछ देखा है उससे मैं समझ गया हूँ कि भारतमें हमारी जो समस्याएँ हैं इस प्रथासे उनका कोई हल निकलनेवाला नहीं है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप श्री मणिलालके प्रयत्नोंको सफल वनानेकी दिशामें कुछ-न-कुछ करनेका रास्ता ढूंढ़ निकालेंगे।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ३८०९) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजीने मणिलाल डॉक्टरको कुछ परिचय-पत्र देनेका वादा किया है। यह उन्हीं पत्रोंमें से एक है; देखिए "पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६६।

२. "झमेले" के लिए देखिए "श्री गांधी और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस", पृष्ठ १५७ और "पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६१ और १६४ तथा पत्र : गो० कृ० गोखलेको", पृष्ठ १७१-७३।

१४३. श्री और श्रीमती पोलक[1]

अबतक श्री और श्रीमती पोलक कदाचित् भारतके लिए रवाना हो चुके होंगे। श्री पोलकका मुकाम थोड़े ही दिनों यूनाइटेड किंगडममें रहा किन्तु वे इसी अवधिमें वहाँ अपना एक असर छोड़ गये। असलमें कठिन परिश्रमके बाद जिन दिनों उन्हें विश्राम करना था उन्होंने तब भी एक सच्चे सिपाहीकी निष्ठा और उत्साहसे लॉर्ड ऍम्टहिलकी समितिमें काम किया।[2] श्री पोलकने अपनी इस लन्दन यात्राके दरमियान जो एक अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रम बना लिया था, उसका भव्य समारोप श्री तथा श्रीमती पोलकको विदाई देनेके लिए सर मंचरजीके सभापतित्वमें की गई सभाके द्वारा हुआ।

श्री पोलकने संघ-सरकारको याद दिलाया है कि यदि वह नेटालके गिरमिटिया भारतीयोंपर लगाया गया कर रद नहीं करती और ट्रान्सवालके भारतीयोंको बस्तियोंमें खदेड़नेका यत्न करती है तो उसे सख्त विरोधका मुकाबला करना पड़ेगा।[3] हम आशा करते हैं कि सरकार इस याददिहानीपर गौर करेगी। एशियाई विरोधी इस मुहिमका अन्त होना ही चाहिए। और इसका सबसे उत्तम तरीका यही है कि स्थानीय सरकार अधिवासी भारतीयोंपर हो रहे अत्याचारोंमें भागी न बने।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–१०–१९११

१४४. सत्याग्रहका एक नतीजा

ट्रान्सवाल भारतीय महिला संघ (ट्रान्सवाल इंडियन वीमेन्स एसोसिएशन) अपनी बनाई हुई चीजोंकी प्रदर्शिनी और बिक्रीके लिए बाजार लगानेका जो प्रयत्न कर रहा है उसमें मदद पहुँचानेके लिए बम्बईमें निर्मित समितिकी अवैतनिक संयुक्त मन्त्रिणियों, श्रीमती जमनाबाई नगीनदास सकाई[4] और श्रीमती जाईजी जहाँगीर पेटिट[5] (पिछले अंकमें प्रकाशित) के असाधारण पत्रको हम अपने पाठकोंसे पढ़नेकी सिफारिश करते हैं।

१. देखिए "पोलकका कार्य", पृष्ठ १११ भी।

२. इंग्लैंडमें रहते हुए द० आ० ब्रि० भा० समितिकी ओरसे किये गये पोलकके कामकी जानकारीके लिए देखिए परिशिष्ट ८।

३. अपने विदाई समारोहके अवसरपर पोलकने बोलते हुए भविष्यवाणी की कि इन दोनों मुद्दोंपर "संघर्ष" अवश्यम्भावी है। उन्होंने यह विश्वास भी व्यक्त किया कि १९१२में अस्थायी समझौतेको "कानूनी रूप दिया जायेगा"। **इंडियन ओपिनियन**, २१–१०–१९११।

४. ये गुजराती हिन्दी स्त्री-मण्डलकी अध्यक्षा भी थीं।

५. इनके पति श्री जहाँगीर पेटिट दक्षिण बम्बईकी आफ्रिका समितिके सदस्य थे। इस समितिने ट्रान्सवाल सत्याग्रह संघर्षकी मददके लिए बड़ी आर्थिक सहायता दी थी। ये उन लोगोंमें से एक थे जिन्होंने कांग्रेसकी अध्यक्षताके लिए गांधीजीके नामका सुझाव दिया था।

इस समितिके सदस्योंकी नामावलीसे ज्ञात होता है कि इसमें बम्बईके सर्वोत्तम मुसलमान, पारसी और हिन्दु परिवारोंकी महिलाएँ हैं। इन्होंने जो उपहार भेजे हैं उनपर कीमतकी दृष्टिसे विचार नहीं किया जाना चाहिए। वे तो इस बातका प्रमाण हैं कि हमारे देशकी संभ्रान्त महिलाओंको अपने अपेक्षाकृत उन दीन और गरीब भाइयोंका कितना खयाल है जो स्वदेश छोड़कर, इस देशको अपना मानकर यहाँ आ बसे हैं; और बम्बईकी महिलाओंने ही हमारी चिन्ता की हो, सो नहीं है, बल्कि कलकत्ताकी महिलाओंने भी संघ द्वारा भेजी गई अपीलके उत्तरमें हमें दिल खोलकर मदद पहुँचाई है।

यह ट्रान्सवाल महिला संघ स्वयं सत्याग्रहकी लड़ाईके अनेक महत्वपूर्ण फलोंमें से एक है। यह सच है कि इसमें जोहानिसबर्गकी केवल थोड़ी-सी भारतीय महिलाएँ ही हैं। उनमें से सब नहीं तो अधिकांश सत्याग्रही परिवारोंकी हैं। संघकी वर्तमान गतिविधियोंका श्रेय श्रीमती वॉगलकी सूझबूझको है, जिनका हाथ कुमारी श्लेसिन बँटाती आ रही हैं। कह सकते हैं, श्रीमती वॉगल इस बाजारके संगठनमें गत बारह महीनोंसे जुटी हुई हैं। अपनी फुरसतका सारा समय उन्होंने इसीमें लगाया है। उनके प्रशिक्षण और मार्गदर्शनमें हमारी बहनें काम सीख रही हैं और जोहानिसबर्गकी जनताको उसकी सराहना या आलोचना करनेका अवसर प्राप्त होगा।[1] ट्रान्सवाल महिला संघमें एक ऐसी महान् भावी संस्थाके तत्व पड़े हैं जो दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके लिए बड़े महत्वकी चीज साबित हो सकते हैं। यदि हमारी भारत-स्थित बहिनोंने विचारपूर्वक मदद पहुँचाई तो इस महान् आयोजनमें उनका योगदान बहुत प्रशंसनीय होगा। यह इन महिलाओं और उस सत्याग्रह संग्रामके लिए गौरवकी बात है जिसने ट्रान्सवाल महिला संघ तथा भारतीय महिला समितिके निर्माण और कार्योंमें दिखाई देनेवाले ऐसे भव्य सामंजस्यको सम्भव बनाया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९११

१४५. सत्याग्रहकी जीत

दीवालीके त्यौहारपर कुछ हिन्दुओंने पटाखे छोड़े। इसपर डर्बनकी पुलिसने झल्लाकर एक प्रमुख हिन्दू सज्जनको गिरफ्तार कर लिया। सबने इसको यों ही न जाने देनेका निश्चय किया। बात श्री दाउद मुहम्मद और पारसी रुस्तमजीके पास पहुँचाई गई। वे तुरन्त मेयरके पास गये और उन्होंने उनसे कहा कि जब बड़े दिनपर गोरे पटाखे छोड़ते हैं तब फिर हिन्दू अपने त्यौहारपर क्यों न छुड़ाएँ? और इसके लिए मंजूरी लेनेकी क्या बात है? बड़े दिनपर कोई अनुमति नहीं माँगता। फिर भी यदि आप पटाखे छोड़नेवाले हिन्दुओंपर जुल्म करनेका इरादा करेंगे तो उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करनेके लिए हम पटाखे छुड़ायेंगे। इसपर आप जिन्हें पकड़ना चाहें पकड़ ले जाइएगा।

१. देखिए "पत्र: मगनलाल गांधीको", पृष्ठ ७७।

यह मामला बहुत बड़ा नहीं है। जीत[1] भी बड़ी नहीं है, किन्तु उसका रहस्य बड़ा है। हमें जो करना उचित था उसको निर्भयतापूर्वक करने और उसमें जो मुसीबतें आयें उनको झेलनेके लिए हम तैयार हो गये, इस कारण हम संकटसे बचे और हमारी मान-रक्षा हुई। यह है सत्याग्रह।

इस मिसालमें एक और अधिक महत्वपूर्ण बात यह हुई कि हिन्दुओंके निजी काममें मुसलमान और पारसी पूरे सद्भावसे दौड़े गये। उसका परिणाम अच्छा ही निकला। एक मामलेमें हम सत्य-पथका अनुसरण करें तो दूसरे मामलेमें भी अपने-आप वैसा ही होगा। जैसे उलझी हुई डोरकी एक गाँठ सुलझ जाये तो दूसरी गाँठें भी उसी तरह सुलझानेसे आसानीके साथ सुलझती जाती हैं; लौकिक व्यवहारमें भी ऐसा ही है।

हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई सब कैसे एक हों, इसका उत्तर श्री दाउद मुहम्मद और रुस्तमजीने दिया है।

यदि मुसलमान हिन्दुओंके कामोंमें आगे आकर सद्भावना प्रकट करें, और वैसा ही मुसलमानोंके कामोंमें हिन्दू करें और ये दोनों पारसियोंके कामोंमें करें और फिर ये तीनों स्नेहके बन्धनमें बँध जायें तो ऐसा कौन मूर्ख होगा कि उनके मार्गमें बाधक बने।

धर्म भले ही अलग-अलग हों, किन्तु एक ही परमपुरुषको — एक ही वस्तुको — आप अल्लाके नामसे, दूसरा खुदाके नामसे और मैं ईश्वरके नामसे पूजूँ तो इसमें क्या बुराई हुई? आप एक दिशामें मुँह करके पूजते हैं और मैं दूसरी दिशामें मुँह करके, तो इसके कारण मैं आपसे क्यों बैर बाँधूं? हम सब एक ही — मनुष्य-जातिके हैं, हमारी चमड़ी एक ही है और हमारा देश भी एक ही है। ऐसी स्थितिमें यदि हम दुश्मनी करें तो यह हमारी नादानी और अदूरदर्शिता ही मानी जायेगी।

सुधारवादी लोग बहुत प्रकारके ताले खोलनेके लिए एक ही कुंजी बना लेते हैं। उसे वे गुरु-किल्ली — 'मास्टर की' के नामसे पुकारते हैं। उसी प्रकार हमारे अगणित असुविधा-रूपी तालोंको खोलनेके लिए सत्याग्रह-रूपी एक ही मुख्य ताली है। इसको सब भारतीय ग्रहण कर लें तो क्या ही अच्छा हो। सत्याग्रह कोई बड़ा शब्द नहीं है। सत्यपर आरूढ़ रहना ही सत्याग्रह है। धर्ममें अन्य बहुत-सी बातें भले ही हों, किन्तु सत्यके बिना धर्म होता ही नहीं। यदि हम उस सत्यको समझ लें तो उसका पालन सुगमतासे किया जा सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९११

१. मेयरने दीवालीके अवसरपर हिन्दुओंको पटाखे छोड़नेकी जो अनुमति दी उसकी सूचना छपी हुई पर्चियाँ बँटवा कर दी गई थी। **इंडियन ओपिनियन, २१-१०-१९११।**

१४६. पत्र: गो० कृ० गोखलेको

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ३०, १९११

प्रिय श्री गोखले,

कांग्रेसकी अध्यक्षतासे सम्बन्धित प्रश्नके[1] बारेमें आपके लम्बे तारके लिए धन्यवाद। आपकी बीमारीका समाचार पाकर दुःख हुआ। क्या आप कभी भारत और इंग्लैंडके सिवा अन्य कहींकी यात्रापर नहीं जा सकेंगे? ब्रिटिश राजनीतिज्ञ तो [दूर-दूरकी यात्राएं] करते हैं; फिर भारतीय राजनीतिज्ञ क्यों नहीं कर सकते? यदि आप कुछ समयके लिए दक्षिण आफ्रिका आ सकते! अब आपके जेल जानेका प्रश्न तो नहीं उठता, लेकिन फिर भी उससे दो काम बनेंगे। एक तो इससे यहांकी जनता भारतके अधिक निकट आ जायेगी और दूसरे मुझे आपके आरोग्यकी दृष्टिसे शुश्रूषा करनेका सौभाग्य प्राप्त हो जायेगा। आप जैसे बीमार हैं वैसे बीमारोंके लिए मेरा ख्याल है कि टॉल्स्टॉय फार्म और फीनिक्समें भी पर्याप्त सुविधाएं मौजूद हैं। मैं इस बातका अनुमान भली-भांति कर सकता हूं कि श्री कैलेनबैक टॉल्स्टॉय फार्ममें आपका स्नेहपूर्ण स्वागत करेंगे और फीनिक्सको तो आप अपना घर ही समझिये।

इस बातकी सूचना कि भारतीय कांग्रेसकी अध्यक्षताके सिलसिलेमें मेरा नाम लिया गया है और गम्भीरतासे इसके बारेमें सोचा जा रहा है, मुझे सबसे पहले नेटाल भारतीय कांग्रेसके एक तारसे मिली थी। तारका आशय यह था कि कांग्रेसके आगामी अधिवेशनकी अध्यक्षता ग्रहण करनेके बारेमें उसके पास मेरे नाम निमन्त्रण आया है और जिसमें उस पदको स्वीकार करनेका बड़ा आग्रह किया गया है। मेरा उत्तर[2] नकारात्मक था। साथ ही मैंने निमन्त्रण भेजनेवालेका नाम भी पूछा। निमन्त्रणकर्ताओंके जो नाम मेरे पास भेजे गये उनमें आपका, अखिल भारतीय मुस्लिम लीग, श्री पेटिट, श्री नटराजन्, श्री नटेसन, श्री एस० बोस और श्री मालवीयके नाम थे; तब मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। आपका और अखिल भारतीय मुस्लिम लीगका नाम सूचीमें था, इसके कारण उस तारका महत्व इतना बढ़ गया है कि मैं असमंजसमें पड़ गया हूं। मैंने सोचा कि यदि आपकी भी, जो मेरे विचारोंसे भली-भांति परिचित हैं, यह इच्छा है कि मैं अध्यक्षता ग्रहण करूं, तो निमन्त्रणका कोई विशेष कारण अवश्य रहा होगा। सूचना मुझे फार्मपर मिली थी। मैं जोहानिसबर्ग गया। वहां डर्बनके लोगोंसे उन तारोंकी पुष्टि टेलीफोन द्वारा प्राप्त हुई और उन्होंने बड़ा ही आग्रह किया कि मैं निमन्त्रण स्वीकार कर लूं। उनके हिसाबसे वह निमन्त्रण दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंका अपूर्व सम्मान और साथ ही भारतकी जनताके सामने दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी समस्याको

१. देखिए "पत्र: गो० कृ० गोखलेको", पृष्ठ १६७
२. यह उपलब्ध नहीं है।

और भी सुस्पष्ट रूपसे रखनेका अपूर्व अवसर था। यदि मेरे मनमें अत्यन्त मूर्खता-पूर्ण आत्मश्लाघा काम न कर रही होती तो मैं डर्बनसे आए हुए समाचारकी सत्यता-पर सन्देह किये बिना न रहता। जो भी हो, उस सूचनाके सही होनेके बारेमें सन्देहके पक्षमें कोई तर्क देख सकनेके पहले ही मैंने डर्बन कांग्रेसको वह निमन्त्रण स्वीकार कर लेनेकी अपनी अनुमति भेज दी थी,[1] लेकिन मुझे ऐसा लगा कि मुझे स्वयं, अलगसे, आपको एक तार[2] भेजना चाहिए; जो मैंने भेजा भी था। उसके तीन-चार दिन बाद मेरे पास डर्बनसे एक पत्र आया जिसमें तार द्वारा मिली सूचनाओंकी पुष्टि की गई थी। लेकिन उसके साथ रायटरके एक पत्रकी प्रतिलिपि भी नत्थी थी। इस पत्रमें उस तारका दूसरा ही अर्थ लगाया गया था। मुझे लगता है कि मैं जिन दिनों केप-टाउनमें था, उन दिनों श्री पोलकने, जो डर्बनमें थे, वहाँसे उक्त नामोंका एक सांकेतिक पता डाकखानेमें दर्ज करा लिया था। स्पष्ट ही उन सभीको सूचित कर दिया गया कि उस सांकेतिक पतेपर भेजे जानेवाले तार उन सभीके पास पहुँचा करेंगे। कलकत्तेके श्री बसु उस सांकेतिक पतेको काममें ले आये। इसीलिए यहाँ, डर्बनमें लोगोंने उस तारको बाँचनेपर यही अर्थ लगाया कि उसे छहों व्यक्तियोंने भेजा है। लेकिन रायटरके उस पत्रसे, जो सांकेतिक पता दर्ज करनेके अवसरपर उसने कांग्रेसको भेजा था, प्रकट होता है कि सांकेतिक शब्दका अर्थ, परिस्थितिके अनुसार वे छहों व्यक्ति या उनमें से कोई एक ही, हो सकता है। यदि मैंने ठीक अर्थ लगाया है तो इस मामलेमें सांकेतिक शब्दका अर्थ केवल 'श्री बसु' लगाया जाना चाहिए, क्योंकि तार कलकत्तासे भेजा गया था। इसीलिए मैंने उस तारको पढ़कर यही निष्कर्ष निकाला कि वह तथा-कथित निमन्त्रण, निमन्त्रण था ही नहीं, उसकी मन्शा नेटाल इंडियन कांग्रेससे फक्त यह मालूम करनेकी थी कि क्या वह मुझे अवकाश देगी। यदि श्री बसुको मेरा पता ठीक-ठीक मालूम होता और उनको यह भी ज्ञात होता कि सिर्फ 'गांधी' लिख देनेसे भी तार मुझे मिल जाता है, तो शायद वह सीधे मुझको ही तार करते और तब, निःसन्देह इतना बखेड़ा पैदा न होता। मैं उत्तरमें केवल इतना ही लिख भेजता कि मैं यह सम्मान स्वीकार नहीं कर सकूँगा। लेकिन गड़बड़ी तो हो ही चुकी थी और डर्बनके लोग, [कुछ] विशेष उत्साही व्यक्ति रायटरको समाचार प्रकाशित करनेकी अनुमति तक दे चुके थे। मेरे दूसरे तारके[3] उत्तरमें भेजे गये आपके तारने मुझे यह सूचित करके कि अभी निर्णय होना बाकी है मेरी अपनी व्याख्याकी ही पुष्टि की है। बादकी सारी बातें तो आपपर विदित हैं ही। मैं तो यही आशा किये बैठा हूँ कि इलाहाबादमें मेरे नामांकनपत्र (नॉमिनेशन) के विरुद्ध ही निर्णय किया जायगा।[4] हो सकता है कि इसकी सूचना कल मिल जाय। यह पत्र मैं रविवार, २९ तारीखको बोलकर लिखा रहा हूँ। राष्ट्रीय परिषद्में प्रति वर्ष ऐसे अनेक प्रश्नों-

१. देखिए "श्री गांधी और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस", पृष्ठ १५७।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. यह उपलब्ध नहीं।

४. **इंडियन ओपिनियनमें** ४-११-१९११को प्रकाशित रायटरके एक समाचारमें कहा गया था कि पण्डित बिशन नारायण दर इंडियन नेशनल कांग्रेसके अध्यक्ष चुने जायेंगे।

पर बहस होती रहती है जिनके वारेमें मेरे अपने अलग विचार हैं और मैं उनपर काफी दृढ़ हूँ। मैं यह बखूबी जानता हूँ कि अपनी उन रायोंको छिपाकर मैं अध्यक्ष पदको सुशोभित नहीं कर सकता था। मैं यह भी ठीक तौरसे जानता हूँ कि यदि मैं कांग्रेसके मंचसे अपने इन विचारोंको व्यक्त करने बैठूं तो इतना ही नहीं कि मेरे विचार कांग्रेसके नेताओंको स्वीकार नहीं होंगे, बल्कि वे उनको एक गलत स्थितिमें डाल दे सकते हैं। और यह मुझसे होनेका नहीं। मैं यह भी जानता हूँ कि सम्भवतः लोग मेरे विचारोंको अपरिपक्व और अपर्याप्त तथ्योंपर आधारित मानेंगे और यह कि शायद मैं ही [वादमें] उनको बदल डालूं। इन तीन बातोंमें से किसीके भी वारेमें मेरे अपने विचार चाहे कितने ही भिन्न क्यों न हों, पर मेरा मत है कि मुझसे मतभेद रखनेवालोंको अपने विचारोंके प्रतिपादनका पूरा-पूरा और वाजिब हक है। वैसे यह कार्य मुझको भी उतना ही प्यारा है जितना कि कांग्रेसको, लेकिन मुझे लगता है कि फिलहाल मैं भारतीयोंके हितमें प्रयत्नशील रहकर ही उस कार्यमें अधिकसे-अधिक योग दे सकता हूँ, और यदि मुझे भारत जानेका सुयोग प्राप्त हो तो स्वतन्त्र रूपसे ही अपने देशवासियोंकी सेवा करना सबसे अच्छा रहेगा। और यदि संगठनसे अलग रहना सम्भव न हुआ तो उसमें कोई पद ग्रहण किये बिना आप-जैसे नेताओंके, जिनसे मुझे इस कार्यकी प्रेरणा मिली है, पथ-प्रदर्शनमें ही देशका काम करूँगा। मैं जानता हूँ कि कई बातोंमें हमारे बीच मतभेद है, फिर भी आपके और आपके चरित्रके प्रति, जैसा मैंने उसे निश्चित कर रखा है, मेरा आदर-भाव पूर्ववत् है और वना रहेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीकी लिखावटमें की गई शुद्धियों तथा उनके हस्ताक्षरोंसे युक्त टाइप की हुई अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ३८०४) की फोटो-नकलसे।

१४७. तीन पौंडी कर[1]

हालकी घटनाओंसे पता चलता है कि १८९५ के अधिनियम संख्या १७ के[2] अन्तर्गत किस व्यक्तिको तीन पौंडी कर देना पड़ेगा, इस प्रश्नपर बहुत भ्रम फैला हुआ है।

१. यह लेख तथा "विश्वासघात", (पृष्ठ १८१-८२), सम्भवतः देवराबुलु नामक एक भारतीयपर ३ पौंडी करकी बकाया रकम न चुकानेके आरोपमें समन्स जारी किये जानेकी घटनासे प्रेरित होकर लिखे गये थे। जब मजिस्ट्रेटका ध्यान १९१० के अधिनियम १९ की धारा ३ की ओर दिलाया गया तब उसने रकम-अदायगीका हुक्म स्थगित कर दिया और मुकदमेकी सुनवाई अनिश्चित कालके लिए रोक दी। गिरमिटिया-करार करनेवाले अन्य लगभग २१ भारतीयोंपर भी ऐसे ही समन्स जारी किये गये थे। १६ सितम्बर, १९११ को पारसी रुस्तमजीके घरपर भारतीयोंकी एक सभामें "३ पौंडी कर-विरोधी संघ" की स्थापना हुई, जिसका उद्देश्य इस करको रद कराने के लिए संघर्ष करना था। देखिए **इंडियन ओपिनियन,** ९-९-१९११ और २३-९-१९११ तथा परिशिष्ट ९ भी।

२. सन् १८९३ में नेटाल जब स्वशासित उपनिवेश बना, उसके शीघ्र बाद ही यह अधिनियम बनाया गया था; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३५३। बोअर युद्धके बाद इस करके प्रति भारतीयोंकी प्रतिक्रियाके लिए देखिए खण्ड १, पृष्ठ १७९-८१, २१५-१७ और २१७-३२ खण्ड २, पृष्ठ ६६, खण्ड ५, पृष्ठ ३२७-२८।

विधि-विभाग (लॉ डिपार्टमेंट) ने, लगता है, निर्णय किया है कि जिस भारतीयने फिरसे गिरमिटिया-करार किया हो अथवा स्वामी और सेवक अधिनियम (मास्टर्स ऐंड सर्वेंट्स ऐक्ट) के अधीन कोई दीवानी करारनामा किया हो — वह १९१० के अधिनियम १९ की धारा ३ के अन्तर्गत ऐसा करनेका अधिकारी है — उसे दुबारा किये गये गिरमिटिया करारनामेकी अथवा नौकरीके करारनामेकी अवधि तक तीन पौंडी कर देना होगा। अधिनियमकी यह धारा इस प्रकार है:

> **१८९५ के अधिनियम १७ के अन्तर्गत किसी भारतीयके ऊपर परवाना शुल्ककी जो रकम बकाया होगी उसका भुगतान, कमसे-कम दो सालके लिए दुबारा किये गिरमिटिया करार या नौकरीकी अवधिमें, स्थगित रहेगा, और ऐसे करार या गिरमिटकी अवधि समाप्त होनेपर यदि वह भारत वापस लौट जायेगा तो बकाया रकमका भुगतान माफ कर दिया जायेगा।**

इस धाराका सही अर्थ समझनेके लिए कुछ वर्ष पहलेकी बातोंको देखना जरूरी है। सन् १९०५ में यह देखा गया कि बहुत-से भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीय तीन पौंडी कर नहीं दे रहे हैं और इसका सीधा-सादा कारण यह था कि वे इतने गरीब थे कि दे ही नहीं सकते थे।[1] फलस्वरूप एक अधिनियम बनाया गया जिसके अन्तर्गत कोई व्यक्ति किसी ऐसे भूतपूर्व गिरमिटियाको, जो अपना चालू वर्षका तीन पौंडी परवाना न दिखा सके, न तो नौकर रख सकता था, और न उसे भूमिका उपयोग करने दे सकता था। इस अधिनियमका उल्लंघन करनेका मतलब नौकरी देनेवाले व्यक्तिके लिए ५ पौंड जुर्माना था। अधिनियममें इस बातकी व्यवस्था थी कि मालिक ३ पौंड चुका दे और यह रकम भारतीयकी मजदूरीमें से काट ले। इसमें इरादा यह था कि भारतीयोंको तीन-पौंडी कर देने या देश छोड़ देनेके लिए विवश कर दिया जाये। उसी साल कुछ समय बाद एक अन्य अधिनियम बनाया गया जिसके अन्तर्गत कर देनेके लिए बाध्य भारतीयोंको यह अधिकार मिला कि वे दुबारा गिरमिटिया बन सकते हैं, पर गिरमिटकी अवधि कमसे-कम दो वर्ष होगी। ऐसा कर सकना पहले सम्भव नहीं था। भारत भिजवाये जानेकी जो सुविधा उसने ३ पौंडी कर देनेके बाद

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४४६। इस करको अदा करनेवाले भारतीयोंकी कठिनाइयाँ अक्सर लोगोंके सामने आती रहती थीं; उदाहरणार्थ देखिए खण्ड ५, पृष्ठ २४२। सन् १९११ में स्टैंगरमें एक फेरीवालीको, अपनी गरीबीकी वजहसे यह कर देनेमें असमर्थ होनेके कारण, दो हफ्तेकी सजा दे दी गई थी। (**इंडियन ओपिनियन**, ८–७–१९११)। सन् १८९१ के भारतीय प्रवासी अधिनियमके अनुसार गिरमिटिया भारतीयोंकी मजदूरी प्रथम वर्ष प्रतिमास १६ शिलिंग तय की गई थी, जो पाँचवें वर्षमें बढ़कर २० शिलिंग प्रतिमास तक पहुँचती (देखिए खण्ड १, पृष्ठ २१७-१९); जबकि सन् १९०१ के आसपास ट्रान्सवालकी खानोंमें काम करनेवाले वतनी मजदूरोंको ४५ शिलिंग प्रतिमास दिया जाता था और मजदूरीकी इस दरपर भी वतनी मजदूर मिलना मुश्किल था; देखिए एरिक वॉकर-कृत **हिस्ट्री ऑफ साउथ आफ्रिका**, पृष्ठ ५१०। इन तथ्योंको देखते हुए गांधीजीने बराबर इस बातपर जोर दिया था कि भारतीय मजदूर इतना कम बचा सकते हैं कि कर देना उनके लिए बहुत ही भारी पड़ता है।

सो दी थी, उसे वह अब फिरसे प्राप्त कर सकता था। इस विधेयकको द्वितीय वाचनके लिए पेश करते हुए नेटालके प्रधानमन्त्रीने कहा था :

> यह विधेयक इसलिए लाया गया है कि जो भारतीय गिरमिटसे स्वतन्त्र होनेके बाद तीन पौंडी कर दे सकनेकी स्थितिमें न हो, वह दुबारा गिरमिटिया हो सके। ऐसे अवसर आ सकते हैं जब कोई भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीय तीन पौंडी कर न चुका सके, और यह उचित ही होगा कि उसे दोबारा गिरमिटिया बननेकी छूट दी जाये। न केवल उसे दोबारा गिरमिटिया बननेका अधिकार दिया जा रहा है, बल्कि उसे वापस भारत जानेकी सुविधा भी प्राप्त हो जायेगी जिसे वह अपना पहला करार समाप्त होनेपर इस्तेमाल न करनेके कारण खो चुका था।

अतः यहाँ यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि कानूनका मंशा यह था कि जो भारतीय दोबारा गिरमिटिया करार करे उसे कर नहीं देना पड़ेगा। किन्तु यह प्रलोभन पर्याप्त नहीं था। १९०९ के अन्तमें बागानोंके मालिक और ज्यादा भारतीय मजदूरोंकी माँग कर रहे थे, और भारत सरकारने गिरमिटियोंको नेटाल भेजना बन्द करनेकी धमकी दी थी। ऐसी हालतमें क्या किया जाये? विधान-परिषद्में माननीय श्री बेन्सने कहा कि :

> तीन पौंडका अधिवास-शुल्क और साथ ही व्यक्ति-कर भारतीयोंके लिए बहुत कड़ी शर्तें हैं। यह सत्य है कि उपनिवेश छोड़कर जानेवाले भारतीयोंकी संख्या बाहरसे आनेवाले भारतीयोंकी अपेक्षा अधिक है। मेरी रायमें हमें श्रमिकोंका यह निष्क्रमण रोकना चाहिए।

उपनिवेश सचिवने संशोधन विधेयक (अमेंडमेंट बिल) को द्वितीय वाचनके लिए प्रस्तुत करते हुए कहा कि :

> स्वयं भारतीयोंकी ओरसे और मजिस्ट्रेटोंकी तरफसे भी, इस आशयके प्रार्थनापत्र प्राप्त हुए हैं कि ३ पौंडके परवानेका भुगतान कर सकना सम्भव नहीं है। सरकार अनुभव करती है कि यदि भारतीय स्त्रियाँ इस परवानेसे मुक्त कर दी जायें तो करका भुगतान सम्भव हो जायेगा, और इस कानूनका लक्ष्य वही करना है। भारतीय प्रवासी आयोग (इंडियन इमिग्रेशन कमीशन)ने मामलेकी जांच की थी, और जो प्रस्ताव अब विचाराधीन है उसकी सिफारिश की थी।

सर लिएस हूल्टनने विधेयकका समर्थन किया और कहा कि यह मंशा कभी नहीं था कि तीन पौंडी कर स्त्रियों और लड़कियोंपर लागू हो। लेकिन श्री कर्कमानके प्रस्तावपर एक संशोधन पास हो गया जिसके जरिए मजिस्ट्रेटोंको अपनी विवेक-बुद्धिसे निर्णय करके किसी भारतीय स्त्रीको परवाना-शुल्कसे छूट दे सकनेका अधिकार दे दिया गया। उसी विधेयकमें श्री क्लेटनने बकाया रकमके भुगतानसे सम्बन्धित एक और धारा जोड़नेका प्रस्ताव किया जिसे इस लेखके आरम्भमें उद्धृत किया गया है, और वह कानूनके रूपमें पास कर दिया गया। यह कानून जनवरी १९१० में पास हुआ

था, और उसी वर्ष अप्रैलमें मैरित्सबर्ग-स्थित उपनिवेश-सचिवके कार्यालयसे अंग्रेजी, हिन्दी और तमिल भाषाओंमें छपा हुआ एक परिपत्र[1] जारी किया गया जिसमें कहा गया था कि जिन भारतीय पुरुषों और स्त्रियोंको ३ पौंडी परवाना ले लेना चाहिए था, लेकिन जिन्होंने अभीतक लिया न हो, वे कमसे-कम दो सालकी अवधिके लिए पुनः गिरमिटिया-करार कर सकते हैं, या कमसे-कम दो सालकी अवधिके लिए दीवानी करार कर सकते हैं, और इस करार या गिरमिटकी हालतमें उनसे परवाना-शुल्क नहीं माँगा जायेगा, और यदि वे भारत लौट जायें, तो उन्हें बकाया परवाना-शुल्ककी रकम देनेको बाध्य नहीं किया जायगा।[2]

उपर्युक्त तथ्योंपर विचार करनेपर इसके अलावा कोई दूसरा निष्कर्ष निकालना असम्भव है कि कानूनका यह मंशा कभी नहीं था कि भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंको दोबारा गिरमिटियाके रूपमें काम करनेकी या नौकरीके करारके अनुसार नौकरके रूपमें काम करनेकी अवधिमें तीन-पौंडी कर देना पड़ेगा। इस समीक्षाका विशेष उद्देश्य यह है कि दोबारा गिरमिटियाके रूपमें काम करनेकी अवधिमें कर चुकानेके विषयमें विधान-मण्डलकी मंशाके बारेमें जो संदेह हो उसे दूर कर दे। इस करके विरुद्ध तो हम सदैव पूरे बलसे लड़ते ही रहे हैं,[3] और तबतक लड़ते रहेंगे जबतक यह घातक और अन्यायपूर्ण कानून विधि-पुस्तिकासे निकाल नहीं दिया जाता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-११-१९११

१. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ २५४।

२. संघका निर्माण होनेसे पूर्व, अप्रैल १९१० में यह परिपत्र नेटालके भारतीयोंकी सूचनाके लिए निकाला गया था और इससे बहुत भ्रम फैला। उपनिवेश-सचिवके कार्यालयसे मूल परिपत्र निकला, लेकिन उसका हिन्दी और तमिल अनुवाद एशियाई संरक्षकके विभागसे जारी किया गया। अधिनियमकी धारा ३ ने फिरसे गिरमिट अपनानेवाले भारतीयोंको तीन पौंडी करकी बकाया रकम चुकानेसे माफी दे दी थी, लेकिन अंग्रेजी परिपत्रमें "बकाया परवाना-शुल्क" लिखा था। हिन्दी और तमिल अनुवादमें तो शायद चालू भुगतानसे भी छूट दी गई थी। परिपत्रमें अधिनियमकी उक्त धाराकी जो व्याख्या की गई थी, वह संघके न्यायाधिकारियोंकी व्याख्यासे भिन्न थी। वे कहते थे, कानूनकी शब्द-रचना ऐसी है जिसके अनुसार फिरसे गिरमिट स्वीकार करनेवाले व्यक्ति चालू कर देनेको बाध्य हैं। इन परस्पर-विरोधी व्याख्याओंकी ओर ध्यान दिलाते हुए **नेटाल मर्क्युरीने** ८ नवम्बर, १९११ के अंकमें एक लेख लिखा था। **इंडियन ओपिनियन**, ११-११-१९११।

३. नेटालके भारतीयोंने गिरमिटसे स्वतन्त्र होनेवाले भारतीयोंपर ३ पौंडी कर लगानेका सदा ही विरोध किया था। उनके अनुसार, यह कर राजस्वके एक साधनके रूपमें नहीं लगाया गया था बल्कि इसका मंशा गिरमिटकी अवधि समाप्त करनेवाले भारतीयोंको उपनिवेशसे भगा देनेका था; और यह मंशा ब्रिटिश संविधानकी परम्पराओंके अनुकूल नहीं था। देखिए खण्ड १, पृष्ठ १२७, १७९-८१, २१५-१७, २१७-३२ और २३२-३५; खण्ड २, पृष्ठ ६५-६६ तथा खण्ड ९, पृष्ठ ३४७-४८।

१४८. देशमें अकाल

यह अकाल यद्यपि गुजरात काठियावाड़में पड़ा है, फिर भी हमने इसे "देशमें अकाल" कहा है। शरीरके एक भागमें कष्टका होना समस्त शरीरको कष्ट होनेके समान है, वैसे ही गुजरातका अकाल समस्त देशका अकाल कहा जा सकता है।

देशसे प्राप्त पत्रों और अखबारोंसे ज्ञात होता है कि यह अकाल पिछले सब अकालोंसे बाजी मार ले जायगा। मनुष्यों और पशुओं — दोनोंका नाश हो रहा है। जान पड़ता है कि वर्षा ऋतुके अन्तिम दिनोंमें वहाँ पानी नहीं बरसा है। इसके कारण लोगोंकी जो दुर्दशा हुई है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता — वह देखकर ही समझी जा सकती है। हमें यदि एक दिन भोजन नहीं मिलता तो हम अपना मिजाज खो बैठते हैं। हमें भोजनमें जिस वस्तुके खानेकी आदत है वह नहीं मिलती तो हम घरवालीपर या रसोइयेपर इतना क्रोध करते हैं कि जिसकी सीमा नहीं। इसके बजाय अब यह कल्पना कीजिए कि हमें आठ महीने तक शायद ही भोजन मिलनेवाला है। शरीर अस्थिपंजर मात्र रह गया है, पेट पीठसे जा लगा है और शरीरको कोई सहारा दे तो ही वह खड़ा हो सकता है। इसकी कल्पना कर लें और फिर यह कल्पना करें कि ऐसी स्थिति लाखों लोगोंकी है। उसके बाद ही आप इस बातकी कुछ-कुछ कल्पना कर सकेंगे कि देशमें इस समय कैसी स्थिति है।

हम इसमें किस प्रकार सहायता दे सकते हैं? पहली सहायता तो यही है कि हम अपने ऐश-आराममें कुछ कमी करें, अपना आडम्बर भी घटा दें, गर्व कम किया करें और चोरीमें भी कमी कर दें एवं अपने किये पापोंके लिए ईश्वरसे क्षमा माँगें। उसके बाद यदि हमारा मन शुद्ध हुआ दिखता हो तो हम ईश्वरसे प्रार्थना करें कि वह हमारे देशपर जो संकट आया है उसका निवारण करे।

यदि हम इस प्रकारका आचरण करें तो हमारे पास धन बचेगा। हम इस धनका उपयोग अकाल-पीड़ितोंके लिए सहायता भेजनेमें कर सकते हैं। जो लोग धन भेजनेकी व्यवस्था स्वयं न कर सकें उनसे रकम लेने और उनकी ओरसे उसे [यथा-स्थान] भेजनेके लिए हम तैयार हैं। इस समय भी हम एक दानी सज्जनसे, जिसने अपना पैसा इसी काममें लगानेके लिए निकाल रखा है, पत्र-व्यवहार कर रहे हैं। हमें इस प्रकार जो रुपया भेजा जायेगा, उसे हम उक्त सज्जनको या जानी-मानी किसी संस्थाको भेज देंगे और उसकी प्राप्ति पत्रमें छापेंगे।

मुख्य बात यह नहीं है कि धन कैसे भेजें, बल्कि यह है कि उसे इकट्ठा कैसे करें। हमारा अभिप्राय यह है कि ऊपर सुझाये गये ढंगसे अपना मन सरल और शुद्ध करके जो व्यक्ति धन भेजेंगे उनका धन निःसन्देह अच्छे बीजोंकी तरह सुफलदायी होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-११-१९११

१४९. पत्र: डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
कार्तिक वदी ५, [नवम्बर ११, १९११][1]

पू० भाई प्राणजीवन,

आपके पत्र नहीं आये, इसलिए मैंने भी नियमपूर्वक नहीं लिखे। डाक आजकल अनियमित हो गई है, अतः जब और कुछ जरूरी लिखनेका कार्य होता है तब आपको पत्र लिखना स्थगित कर देता हूँ।

अपने कुछ पत्रोंके जवावकी मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

कांग्रेसकी अध्यक्षताकी वात समाप्त हो गई, यह अच्छा ही हुआ। शायद मैं आपको लिख ही चुका हूँ कि मैंने प्रो० गोखलेको एक लम्बा तार[2] भेजा था। यदि मुझे इतना मालूम हो जाता कि मात्र कलकत्तेकी समितिकी ओरसे पूछताछ-भर की जा रही है, तो चाहे कितना दवाव डाला जाता, मैं प्रारम्भमें ही साफ इनकार कर देता। जहाँ मैं अपनेको अपने विचार व्यक्त न कर सकनेकी स्थितिमें पाता हूँ, वहाँ मैं विलकुल ही अनुपयोगी हो जाता हूँ।

काठियावाड़का अकाल भयंकर मालूम होता है। आपने वहाँ जानेका विचार कायम रखा होगा। आप धनसे मदद तो करेंगे ही, साथ ही अविचारी राजाओंमें किसीसे यदि आपकी भेंट हो और उसे या दूसरे लोगोंको आप यह समझा सकें कि रेलवे आदिके उपद्रवसे गरीव जनताकी तो मौत ही है तो यह और अच्छा होगा। मुझे तो बराबर लगता ही रहता है कि ये चीजें आज अन्य देशोंमें भले ही पुसाती हों, भारतमें नहीं पुसातीं। जनताकी उन्नति न तो निर्यात करनेमें है और न आयात करनेमें। अपनी जरूरतकी चीजें हम [खुद] पैदा करें और उसी क्षेत्रमें उनका उपयोग करें तो अकालसे हमें इतना अधिक कष्ट नहीं होगा।

मेरी छोटी-सी पाठशालामें धीरे-धीरे वृद्धि हो रही है। भोजनादिके नियम यदि सख्त न हों तो अधिक वालक आने लगें। लेकिन मुझे तो ऐसा ही लगता रहता है कि इन नियमोंको ढीला न किया जाय। और मैं यह चाहता भी नहीं कि वहुत

१. इस पत्रमें भी कांग्रेसकी अध्यक्षताके झमेलेका उल्लेख है, अतः स्पष्ट है, यह भी १९११में लिखा गया था।

२. देखिए "पत्र: डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६४।

ज्यादा बालक आयें। उससे मेरा काम बहुत अधिक बढ़ जायेगा और बालकोंके चरित्र-की ओर जो ध्यान देना चाहिए वह मैं नहीं दे पाऊँगा।

मोहनदासका वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६३२) से।
सौजन्य : श्री सी० के० भट्ट।

१५०. अभिनन्दनपत्र : श्रीमती वॉगलको[1]

जोहानिसबर्ग
[नवम्बर १५, १९११]

प्रिय श्रीमती वॉगल,

आपने ट्रान्सवाल भारतीय महिला संघकी जो बड़ी-बड़ी सेवाएँ की हैं उनके लिए अपनी कृतज्ञताकी भावनाओंको यदि हम सार्वजनिक रूपसे प्रकट न करें तो यह हमारी कृतघ्नता होगी। इस शानदार बाजारका आयोजन तो आपकी उन सभी सेवाओंका मुकुट है।

संकटकी उस काली घड़ीमें, जब हमारे आत्मीय बन्धुगण कारावासमें थे — आपने और कुमारी श्लेसिनने अपने अथक उत्साहके द्वारा हमें अपने दुःख भुलानेमें बहुत मदद दी।

आप वास्तवमें हमारी बहन सिद्ध हुई हैं। और जबतक यूरोपीय समाजमें आप-जैसी महिलाएँ विद्यमान हैं, हम साम्राज्यके इन दो भागोंके परस्पर शान्तिपूर्वक और मित्रतासे रह सकनेकी आशा नहीं छोड़ सकते।

हम अनुरोध करते हैं कि इसके साथ हम आपकी .न जो भेंट[2] अर्पण कर रहे हैं आप कृपया उसे अपने प्रति हमारी आदर-भावनाका एक तुच्छ प्रतीक मानकर स्वीकार करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-११-१९११

१. जोहानिसबर्गकी चौदह महिलाओं द्वारा हस्ताक्षरित इस अभिनन्दनपत्रका मसविदा अनुमानतः गांधीजीने तैयार किया था। आयोजनमें भारतीय महिला संघकी ओरसे अतिथियोंका स्वागत भी उन्होंने ही किया था और फिर "श्रीमती वॉगल्के नेक कार्योंके लिए उनकी समुचित सराहना करनेके बाद" उपर्युक्त "अभिनन्दनपत्र पढ़ा और श्रीमती वॉगलको भेंट करनेके लिए उसे श्रीमती हॉस्केनको दे दिया. . .।" अभिनन्दनपत्रके लिए कृतज्ञता प्रकट करते हुए श्रीमती वॉगलने अन्य बातोंके अतिरिक्त यह भी कहा कि आयोजनसे प्राप्त रकमका (देखिए "पत्र: मणिलाल गांधीको", पृष्ठ १८४) उपयोग शिक्षणकी उन्नतिमें किया जायेगा और इससे "अनाक्रामक प्रतिरोध संघर्षके वीरगति-प्राप्त दो सेनानी" नागप्पन और नारायण सामीकी स्मृतिको स्थायी बनाया जायेगा। **इंडियन ओपिनियन**, २५-११-१९११।

२. यह 'लेखनकार्यके लिए एक सुन्दर-सी डॅस्क' थी।

१५१. पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन, ट्रान्सवाल
ट्रान्सवाल
कार्तिक वदी १२ [नवम्बर १७, १९११][1]

भाई श्री प्राणजीवन,

आपका पत्र मिला। यह जानकर बहुत हर्ष हुआ कि आपने और छगनने स्टीमरपर मांसाहार नहीं किया। मुझे तो ऐसा लगता है कि आप छगनको [इंग्लैंडसे] देश वापस ले गये, इससे उसके जीवनकी रक्षा हो गई। ज्यादा समय बीतनेपर उससे उसकी विलायतकी आदतें छुड़ाना मुश्किल हो जाता।

मेरे भाषणके[2] विषयमें आपने जो आशा व्यक्त की है, उस सम्बन्धमें अब कुछ कहनेके लिए है नहीं। किन्तु आजकल मेरे मनकी दशा ऐसी तीव्र है कि इससे भिन्न कोई भाषण मैं दे ही नहीं सकता था। इसीलिए यदि वे मुझे [अध्यक्ष-पद ग्रहण करनेके लिए] बुलायें तो मैंने भाषणकी पूरी स्वतंत्रताकी माँग की थी। ऐसी स्वतंत्रता वे नहीं दे सकते, यह बात समझमें आती है। अध्यक्षके रूपमें मेरा वहाँ आना नहीं हो सका, यह ठीक ही हुआ।

"गुजराती" पत्रने अब उसे छापना स्वीकार किया है। किन्तु अब उसमें मेरी कोई दिलचस्पी नहीं। इस काममें किसी भी प्रकारका डर नहीं है, इस बातका पूरा निश्चय होनेके बाद ही [उसे प्रकाशित करनेका] यह काम हाथमें लिया गया मालूम होता है। मणिलालके विषयमें मैं आपको सविस्तार लिख चुका हूँ।[3]

मिस स्मिथके विषयमें भी मैं अपनी बात समझा चुका हूँ।[4] यह स्त्री मलीन मनकी नहीं है, ऐसा मुझे लगा। वह किसी एक ही रास्ते चलनेवाली है। 'इंडियन ओपिनियन'के लिए वह जो-कुछ भी भेजती है, सो केवल प्रेम भावसे। उसे पैसेका लालच तो है ही नहीं।

१. पत्रमें कांग्रेसकी अध्यक्षताकी बातके उल्लेखसे ज्ञात होता है कि अबतक गांधीजी इस सम्बन्धमें एक विशेष निष्कर्षपर पहुँच गये थे। इससे स्पष्ट है कि यह पत्र डॉ० मेहताके नाम (देखिए पृष्ठ १६०-६२, १६३-६६ और १७८-७९) लिखे पत्रोंके क्रममें है और १९११ में लिखा गया था। उस वर्ष कार्तिक वदी १२ को नवम्बरकी १७ तारीख पड़ी थी।

२. गांधीजीने इसका उल्लेख डॉ० मेहताको लिखे पहलेके एक पत्र (देखिए पृष्ठ १६०-६२, १६३-६६ और १७८-७९) में भी किया है, किन्तु न यह स्पष्ट है कि यह कौन-सा भाषण है और न यही ज्ञात है कि यह उपलब्ध है या नहीं।

३. देखिए "पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६४-६६।

४. देखिए "पत्र : डॉक्टर प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १६१-६२।

इसके साथ हमें जिन टाइपोंकी जरूरत है, उनकी सूची है। इनके पैसे मैं नहीं चुका सकता। और फिलहाल तो ऐसी सुविधा भी नहीं है कि किसी और जगहसे ले सकूँ। टाइपोंके विषयमें मैं रेवाशंकरभाईको अलगसे नहीं लिख रहा हूँ। यदि आपको ठीक मालूम हो, तो आप इस सूचीको उन्हें भेज दें और 'टाइप' भिजवानेके लिए कह दें।

मोहनदासका वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६३३) से।

सौजन्य: सी० के० भट्ट।

१५२. विश्वासघात

तीन-पौंडी कर अधिनियमका जो परिणाम कानूनी पहलूसे होगा सो तो है ही; उसके अतिरिक्त पिछले हफ्ते हमने इसी स्तम्भमें जिस परिपत्रका[1] जिक्र किया था उसके आशयको वारीकीसे समझना भी आवश्यक है। कुछ ऐसे मामले भी होते हैं जिनमें कानूनी वाक्छलको जानबूझकर दरकिनार कर देना पड़ता है। ३ पौंडी करका मामला हमारी रायमें साफ तौरपर एक ऐसा ही मामला है। नेटालकी भूतपूर्व सरकार अपने परिपत्र द्वारा इस बातके लिए वचनबद्ध हो गई थी कि दोबारा गिरमिटिया करार करनेवाले भारतीय उक्त करसे सर्वथा मुक्त रहेंगे। हमारे मतसे परिपत्रके अंग्रेजी पाठका इसके अतिरिक्त कोई दूसरा अर्थ नहीं निकलता। किन्तु उसके [विभिन्न भाषाओंमें] अनूदित पाठोंसे तो सरकार और ज्यादा बँधी हुई है; क्योंकि लोगोंने उन्हींके अनुसार काम किया। सरकारको व्याख्याका यह सीधा-सादा नियम अपनाना चाहिए कि परिपत्रका अर्थ वही है जो सम्बन्धित व्यक्तियोंकी बुद्धिको जँचा और जो उन्होंने लगाया। लोगोंने क्या अर्थ लगाया, उसके बारेमें सन्देहके लिए अब कोई भी गुंजाइश नहीं रह गई है। यह तो हुआ परिपत्र और उसके परिणामके बारेमें।

संघ-सरकार परिपत्रके आदेशोंकी अवज्ञा करके अधिनियमकी व्याख्या करने और उसे लागू करनेके प्रयासमें अत्याचारीके पशु-बलका सहारा ले रही है। हमारा कहना है कि यदि संघ-सरकार दक्षिण आफ्रिकाके रहनेवालोंके, चाहे वे गरीब भारतीय हों या उच्च पदासीन यूरोपीय हों, आदरका पात्र बनी रहना चाहती है तो उसे पिछली सरकारके[2] कार्योंसे अपनेको बद्ध मानना ही होगा। परिपत्रकी अवहेलना करना और अब दोबारा गिरमिटिया करार करनेवाले गरीब और प्रवंचित लोगोंसे तीन पौंड प्रतिवर्ष वसूल करनेका इरादा रखना स्पष्ट रूपसे विश्वासघात करना है। मन्त्रिमण्डलके

१. देखिए "तीन पौंडी कर", पृष्ठ १७३-७६।

२. लड़ाईसे पहलेवाली बोअर सरकार।

वर्तमान सदस्योंके प्रति हमारी यह अपील शायद विशेष रूपसे उपयुक्त है। कारण, ये वे ही लोग हैं जिन्होंने वेरीनिगिंग सन्धिकी अपनी व्याख्याके[1] स्वीकार किये जानेका आग्रह किया था और उसमें सफल भी हुए थे, यद्यपि वे निर्बल पक्षके थे। जनरल बोथाको हम सावधान करते हैं कि अपनी विजयकी[2] वेलामें कहीं वे भूतकालके सबकको न भूल जायें और गरीब तथा भोले-भाले लोगोंपर जुल्म ढाकर उन्हें अपनी मनमानी स्वीकार करनेके लिए मजबूर न करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-११-१९११

१५३. पत्र : ए० एच० वेस्टको

शुक्रवारकी रात्रि
[नवम्बर २४, १९११][3]

प्रिय वेस्ट,

मुझे तुम्हारी अपनी किसी बड़ी हानिका समाचार पाकर भी उतनी परेशानी न होती, जितनी तुम्हारे पत्रसे हुई है। मैं यही सोचकर धीरज बाँधे हूँ कि वह खबर बिलकुल निराधार निकलेगी। मैं उसे इतना नेक और रोजमर्राके मामलोंमें इतना पाक-साफ मानता हूँ कि जबतक मैं तुम्हारे निश्चित निर्णयसे अवगत नहीं हो जाता तबतक मैं इन आरोपोंपर विश्वास नहीं करूँगा। पहले मैंने सोचा कि उसे

१. तात्पर्य युद्धके बाद बोअरोंके इस आग्रहसे है कि उन्हें वेरीनिगिंग संधिकी धारा ८ के "वतनी" शब्दकी व्याख्या अपने मनके मुताबिक करने दी जाये। असलमें वे इस प्रकार भारतीयोंको मताधिकारसे वंचित करना चाहते थे। उस समय लॉर्ड मिलनरने बोअरोंको ऐसा करनेकी छूट दे दी थी, किन्तु उसका परिणाम सिर्फ इतना ही हुआ कि "वतनियोंको मताधिकार देनेका सवाल . . . जबतक स्वशासन लागू न हो जाये तबतकके लिए" स्थगित कर दिया गया किन्तु, भारतीय गांधीजीके नेतृत्वमें राजनीतिक मताधिकारको छोड़नेको तैयार थे; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३५६-५७, खण्ड ५, पृष्ठ ३४८, खण्ड ६, पृष्ठ २९३ और खण्ड ९, पृष्ठ ३७०-७१।

२. तात्पर्य विजयकी उस घड़ीसे है जब बोअर युद्धमें पराजित होनेके पाँच सालके भीतर डच लोग हेटफोकके अधीन सम्मानपूर्ण संधि करनेमें सफल हुए। उस समय गांधीजीने लिखा था (देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ३६३ और पृष्ठ ३७५-३७६), "वह पराजय वस्तुतः डच लोगोंकी विजय थी"। इतना ही नहीं, उन्होंने अपने अध्यवसाय और बलसे १९०९ की संघ-व्यवस्थाको भी ऐसा रूप देनेमें सफलता प्राप्त की जो उनके हितोंके लिए बड़ा लाभदायक था।

३. यह पत्र लगभग उन्हीं दिनों लिखा गया होगा, जिस समय कि श्री वेस्टको लिखा गया तारीख २८-११-१९११ का पत्र (पृष्ठ १८६)। दोनों पत्रोंकी विषय-वस्तुसे लगता है कि यह पत्र पहले लिखा गया होगा।

१५४. खेदजनक उत्तर[1]

तीन पौंडी करके सम्बन्धमें श्री हरकोर्टका उत्तर अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। यदि यह उत्तर संघ-सरकारकी निश्चित नीतिका द्योतक है तो वह एक बड़े संघर्षको न्योता दे रहा है। यह संघर्ष शाब्दिक नहीं, क्रियात्मक होगा। स्वतन्त्र भारतीयोंका अपने और अपने गरीब भाइयोंके प्रति यह कर्तव्य है कि वे इस घृणित करको रद करानेके लिए कदम उठायें। भारतसे गिरमिटिया लोगोंका आना बन्द हो जानेके साथ ही इस करका रहा-सहा औचित्य भी समाप्त हो जाता है। साम्राज्य-सरकारको अपने गलत कार्योंसे इतनी आसानीसे साफ विमुक्त होने नहीं दिया जा सकता। यदि इस करका लगाया जाना अनुचित है तो फिर न शाही स्वीकृति और न संघ-सरकारका दृढ़ निश्चय ही उसे उचित बनानेमें समर्थ है। भारतीय समाजको क्या-क्या कदम उठाने हैं, इसे नेटाल कांग्रेस जितनी जल्दी स्पष्ट कर दे, सभी सम्बन्धित पक्षोंके लिए उतना ही अच्छा होगा। यह अन्यायपूर्ण कर किसी भी कीमतपर समाप्त किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-११-१९११

१. ब्रिटिश संसदमें सर डब्ल्यू० जे० बुलके प्रश्नके उत्तरमें श्री हरकोर्टने कहा था कि "उक्त कानून भारतीय और साम्राज्य, दोनों सरकारोंकी जानकारीमें बनाया गया था।" उन्होंने यह भी कहा कि यद्यपि गिरमिटिया भारतीयोंका नेटाल जाना रुक गया है, फिर भी दक्षिण आफ्रिकी सरकार ३ पौंडी परवाना कानून रद करनेको तैयार नहीं है। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, १८-११-१९११

१५५. पत्र : मणिलाल गांधीको

मार्गशीर्ष सुदी ६ [नवम्बर २७, १९११][1]

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला है। मैंने तुमसे पूछा था कि सैमने[2] [टॉल्स्टॉय] फार्मके कौन-कौन दोष बताये, इस प्रश्नका उत्तर देना तुम भूल गये हो।

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं है। मेरे बाल बहुत छोटे-छोटे हैं, इससे तुम्हें लगा कि मेरी तबीयत खराब है। मैं १२ बजे सोता हूँ और ३ बजे उठ जाता हूँ, ऐसा नहीं होता। ज्यादातर मैं ११ बजे सोता हूँ और साढ़े पाँच या छः बजते-बजते उठ बैठता हूँ। इसमें कोई खास बात नहीं है। इसलिए मेरे विषयमें तुम्हें बिलकुल निश्चिन्त रहना चाहिए। मेरा आज भी यह खयाल है कि मैं तुम सब लोगोंकी अपेक्षा अधिक समय तक काम कर सकता हूँ। यह हो सकता है कि मुझसे ज्यादा देर तक जागा न जाये। फोटोमें मेरे समीप जो महिला खड़ी है, वह मेयरकी पत्नी[3] है।

तुमने सोचा, उससे पहले ही मेरे मनमें यह विचार आया था कि यदि तुम वहाँसे मुक्त हो सको, तो तुम्हें दिसम्बर . . .[4]

. . .बाजारसे लगभग १५० पौंड इकट्ठे हुए होंगे। खर्च घटाकर १०० पौंड जरूर बच रहेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

मि० चैमनेके पत्रका जवाब[5] मैं भेज दूँगा।

सौजन्य : श्रीमती सुशीलाबेन गांधी।
गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ९८) से।

१. पत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें श्रीमती वॉगल द्वारा आयोजित 'बाजार' का उल्लेख हुआ है; श्री हॉस्केनने उसका उद्घाटन नवम्बर ८, १९११ को किया था।

२. गोविन्दस्वामी; फीनिक्स आश्रममें प्रेसके फोरमैन।

३. इस फोटोसे सम्भवतः उसी फोटोकी ओर संकेत है जो श्रीमती वॉगलके भारतीय बाजारमें उतारी गई थी। **इंडियन ओपिनियन** (२५-११-१९११) में इस बातका उल्लेख है कि मेयर वहाँ उपस्थित थे।

४. इसके बादके दो पृष्ठ गायब हैं।

५. यह उपलब्ध नहीं है।

१५६. एक पत्रका अंश[1]

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
[नवम्बर २७, १९११के बाद][2]

. . .स्वार्थी हो गई है। हमारे शिक्षकोंने निकृष्ट शिक्षा देकर हमें नीचे गिराया है। किन्तु यह कहना भी गलत है। जैसे हम वैसे हमारे शिक्षक!

हमारे पुरोहित भी बेचारे नामके ही महेश्वर या हरजीवन होते हैं। ब्रह्म क्या चीज है, सो तो वे जरा भी नहीं जानते। हमने उनसे विशेष अपेक्षा भी नहीं की। फिर मिले कहाँसे? ईश्वर परम-आत्मा है। आत्माका भी अस्तित्व है और उसका मोक्ष भी सम्भव है। पाप और पुण्य होते हैं। मोक्ष इहलोकमें भी सम्भव है। इस सवकी प्रतीति हो जानेपर हमें खोज करते ही जाना चाहिए। यह माननेका रत्ती-भर भी कारण नहीं है कि जो-कुछ चला आता है वह परम्परागत होनेसे ही ठीक है या कोई काम मात्र इसलिए उचित है कि हमारे पूर्वज उसे करते रहे हैं। यह दृष्टिकोण आत्माकी स्वतन्त्रताकी कल्पनाके विरुद्ध है। हमारी पुरानी बातोंमें बहुत-सी बातें अच्छी हैं; किन्तु जैसे अग्निके साथ धुआँ मिला होता है वैसे ही पुरानी अच्छाईके साथ कुछ बुराई भी रहती है। उसका पृथक्करण करके हमें तत्व निकाल लेना चाहिए। ज्ञानका मर्म इसीमें निहित है।

भाई कॉर्डिज़ने जो स्वयं ही पत्र[3] लिखा है वह तो . . .

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६६५) से।
सौजन्य: श्रीमती राधाबेन चौधरी।

१. पत्रके विषयसे प्रतीत होता है कि यह १९११ या १९१२ में लिखा गया होगा, जब गांधीजी शिक्षा-सम्बन्धी प्रयोगोंमें रत थे।

२. इस पत्रांशकी अन्तिम अधूरी पंक्तिसे जान पड़ता है कि इसके पीछे मद्राससे कॉर्डिज द्वारा लिखे पत्र (देखिए परिशिष्ट १०) की प्रेरणा रही होगी, गांधीजीने इससे पहले उन्हें थिऑसफीसे विमुख करनेका प्रयास किया था (देखिए "पत्र: डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ ६४), किन्तु जैसा कि कॉर्डिजके पत्रसे ज्ञात होता है, इसमें वे असफल रहे थे। कॉर्डिजने अपने पत्रके साथ जो न्यासपत्र (ट्रस्ट डीड) भेजा था, उसपर उन्होंने १२ नवम्बरको अपने हस्ताक्षर किये थे और गवाही दी थी। अगर हम यह मान लें कि उस पत्रको डाक द्वारा मद्राससे दक्षिण आफ्रिका पहुँचनेमें १५ दिन लगे होंगे तो यह पत्र, जो शायद फीनिक्स आश्रमके किसी व्यक्तिके नाम है, अवश्य ही २७ नवम्बर, १९११ के बाद लिखा गया होगा।

३. देखिए परिशिष्ट १०।

१५७. पत्र: ए० एच० वेस्टको

मंगलवार [नवम्बर २८, १९११][1]

प्रिय वेस्ट,

तुम्हारे पत्रका उत्तर विस्तारसे देना पड़ेगा। लेकिन इस समय मैं उन सभी मुद्दोंपर चर्चा नहीं कर सकता। कल मैं शहरमें न था। तुम्हारा पत्र कल रात ही मिला।

अभी मैं अपनी कोई राय नहीं बना पाया हूँ। ऊपरसे देखनेपर तो सभी बातें. . .[2] के विरुद्ध मालूम पड़ रही हैं और मुझे भेजे गये उनके पत्रसे भी ऐसा ही लगता है। लेकिन तब भी बात विश्वासके योग्य नहीं लगती। मुझे विश्वास नहीं कि. . .[3] सर्वथा निर्दोष है। यदि. . .[4]ने ऐसा किया है तो उन लोगोंको यह भी मालूम था कि चीज गलत है।. . .[5] से पता चलता है कि उसका मन विकृत है, चाहे वह अनजानेमें ही हो। यदि. . .[6]ने यह किया है तो उनका मन्शा किसी प्रकारकी शरारतका नहीं था। मेरी नजरमें यह अपराध अपने-आपमें अधिक गम्भीर नहीं है, लेकिन उसका अपराधको छिपाये रखना वास्तवमें गम्भीर है। यह अपराध मामूली-सा अपराध है सो मैं नहीं कहता। मेरा कहना यह है कि उसे छिपाना अधिक गम्भीर अपराध है। मैंने उन्हें पत्र इसी बातको ध्यानमें रखकर लिखा है।

मणिलाल अभी बालक है। आज्ञा-पालन करना उसका फर्ज है; इसलिए इच्छाके न होते हुए भी उसे वहाँ रहना चाहिए।

१. लगता है कि यह पत्र टॉल्स्टॉय फार्मसे लिखा गया था। इसलिए यह दक्षिण आफ्रिकामें आनन्दलाल गांधीके पहुँचनेकी तिथि, २० जुलाई, १९११ (देखिए "पत्र: मगनलाल गांधीको", पृष्ठ १२४) और गांधीजीके फीनिक्समें जाकर रहनेके समय, "जनवरी, १९१२ के मध्यके आसपास", के बीचमें ही कभी लिखा गया होगा। इस कालमें आनन्दलाल गांधी द्वारा चन्दा इकट्ठा करनेके लिए किये गये दौरेका उल्लेख केवल दो ही जगह — **इंडियन ओपिनियन**के नवम्बर २५ और दिसम्बर ९, १९११के अंकोंके गुजराती भागमें — मिलता है। पहलेमें उल्लेख है कि आनन्दलाल गांधी चन्दा इकट्ठा करनेके लिए दौरेपर निकले हैं, और दूसरे स्थानपर — दिसम्बर ३ को लिखे गये एक लम्बे लेखसे लिये गये एक उद्धरणमें — कहा गया है कि भारतीय दुर्भिक्ष कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके सिलसिलेमें आनन्दलाल गांधी भी फोक्सबर्ग पहुँचकर अन्य लोगोंमें शामिल हुए। अकालका उल्लेख (प्राणजीवन मेहताके पत्रोंमें पहले उल्लिखित पृष्ठ १५५, १६१ और १७८) इस बातकी पुष्टि करता है कि यह पत्र १९११में लिखा गया होगा। मंगलवारके इस पत्रमें गांधीजी लिखते हैं कि "आनन्दलाल गांधी अधिकसे-अधिक शनिवारको यहाँसे चल देंगे" और "बुधवारको" 'इंडियन ओपिनियन'के लिए कुछ गुजराती लेख भेजनेका वचन दिया है। इसलिए प्रकाशित समाचार-लेखोंके आधारपर, यह अनुमान ठीक मालूम पड़ता है कि यह पत्र २५ नवम्बर और ३ दिसम्बरके बीच लिखा गया था, और दोनों तिथियोंके बीचका मंगलवार २८ नवम्बरको पड़ा था। दूसरे समाचार-लेखसे पता चलता है कि आनन्दलाल गांधी वास्तवमें ३ तारीखकी सुबह, अर्थात् रविवारको, रवाना हुए थे।

२ से ६. इन स्थानोंपर शब्द या वाक्यांश नहीं दिये जा रहे हैं।

आनन्दलाल अधिकसे-अधिक शनिवारको यहाँसे चल देंगे। वे एच० वर्ग और स्टैंडर्टन होते हुए जायेंगे। मैंने उन्हें सलाह दी है कि उनको अधिकसे-अधिक पहली जनवरी तक वहाँ पहुँच ही जाना चाहिए। लगता है कि यहाँ उन्होंने अच्छा काम किया है। फार्ममें वे एक दिनसे ज्यादा नहीं रुके। चन्दा जमा करनेका काम उनको निःसन्देह पसन्द है।

आपका हृदयसे
मो० क० गांधी

तुमने शाक्सका बहुत ही सुन्दर विश्लेषण किया है। तुम्हारा उदाहरण मुझे हमेशा सुझाता रहता है कि सच्ची परख किताबी ज्ञानसे नहीं, बल्कि स्वाभाविक सूझबूझ और सामान्य सज्जनतासे आती है।

कृपया ठक्करसे कहना कि मैं गुजराती खण्डके लिए दो छोटे-छोटे अग्रलेख या इसी तरहकी कुछ चीज भेजना चाहता हूँ और बुधवारको डाकसे रवाना करनेकी आशा रखता हूँ।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४४१५) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट।

१५८. पत्र : रावजीभाई पटेलको

मार्गशीर्ष सुदी ८ (नवम्बर २९, १९११)[1]

भाई श्री ५ रावजीभाई,

आपका पत्र मिला। उससे मैं यह समझा हूँ कि आप फीनिक्समें काम करना चाहते हैं। यह विचार अच्छा है। मैं आपको प्रोत्साहित करता रहूँगा। परन्तु आप निभा सकेंगे, इस सम्बन्धमें मुझे शक है। वहाँ रहकर :

१. ब्रह्मचर्यका पालन करना होगा।
२. सूक्ष्म सत्यका पालन करना होगा।
३. काम मुख्यतः शारीरिक अर्थात् कुदाली और फावड़ेका समझें।
४. यदि अक्षर-ज्ञानमें वृद्धि करना हेतु हो तो उसे भूल जायें; उसमें अनायास या आवश्यकतावश वृद्धि हो, तो भले हो।
५. अक्षर-ज्ञान बढ़ानेकी अपेक्षा चरित्र-गठन करना हमारा कर्तव्य है यह बात मनमें पक्के तौरपर जमा लेनी होगी।
६. जाति-बिरादरी और कुटुम्ब-परिवारके अन्यायका विरोध निर्भय होकर करते रहनेका निश्चय कर लेना होगा।
७. गरीबी सच्चे अर्थमें अपनानी होगी।

१. गांधीजीनी साधनाके लेखक रावजीभाई पटेलके अनुसार गांधीजीने यह पत्र १९११में लिखा था। इसकी ठीक तारीख स्वयं पत्रसे मालूम न हो सकी।

यदि यह सब आपसे हो सके या ऐसा करनेकी आपकी इच्छा हो, तभी फीनिक्स आनेका विचार करें। यह समझ रखना चाहिए कि वहाँ जीवन दिन-प्रति-दिन कठिन होता जायेगा। यह धारणा बनानी चाहिए कि ऐसा होना सुखका विषय है।

यदि आपका इरादा मार्च महीनेमें आ जानेका हो तो उक्त बातोंपर मनन करें। पत्र लिखते रहें।

मोहनदासका यथायोग्य

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, से १९३९ में प्रकाशित गुजराती पुस्तक 'गांधीजीनी साधना' से।

१५९. एशियाई आचार-विचारपर हमला

पिछले सप्ताह हमने 'ट्रान्सवाल लीडर' में प्रकाशित एक अग्रलेखका पूरा पाठ उद्धृत किया था। इस लेखमें श्री भायात द्वारा बॉक्सबर्गमें एक दूकान खोली जानेकी घटनाको उस नगरपर किया गया एशियाई हमला बताया गया था। आजका 'लीडर' श्री कार्टराइटके जमानेका 'लीडर' नहीं है। जिस लेखका हम जिक्र कर रहे हैं, एशियाइयोंके प्रति उसके जैसी कटुतापूर्ण और अपमानकारी चीज मिलना मुश्किल है। इसके लेखककी रायमें—

> **एशियाई व्यापारी अपनी मनहूस छाया डाल रहा है, और अपने रहन-सहनके आदिम तरीकों, जीवनकी साधारणतम सुविधाओंके प्रति पूर्ण उदासीनता, पूर्वदेशीय काइयाँपन और अपनी निम्नकोटिकी सभ्यताके कारण यूरोपीय दूकानदारोंका भविष्य खतरेमें डाल रहा है।**

एक दूसरी जगह लेखक प्राच्य सभ्यताको "बहुत ही निम्न स्तरकी" सभ्यता बताता है। आगे चलकर वह कहता है,

> **जिनकी किसी बातका कोई ठिकाना ही नहीं ऐसे इन कुलियोंकी व्यापारी धूर्तता और सामाजिक अन्यायोंके खिलाफ यूरोपीय व्यापारी अपनी लड़ाई लम्बे अर्से तक जारी नहीं रख सकता।**

उक्त लेखकके अन्तिम शब्द ये हैं:

> **हम चाहते है कि इन कुलियोंकी, जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकी संघके कितने ही नगरोंमें सड़कोंके हर नुक्कड़पर अपना कारोबार जमा रखा है और जो अपने साथ ही एशियाके अजीब किस्मके रीति-रिवाज और वेश-भूषा ले आये हैं, अन्यायपूर्ण प्रतियोगितासे यूरोपीयोंकी रक्षा की जाये।**

लेखके जो उद्धरण हमने यहाँ दिये हैं उनसे पाठक यह जरूर समझ जायेंगे कि एशियाई आचार-विचारपर किस प्रकार आक्रमण किया गया है, किस प्रकार उनकी आदतों और रहन-सहनके तरीकोंकी निन्दा की गई है, और किस प्रकार यूरोपीय सभ्यताकी तुलनामें एशियाई सभ्यताको निकृष्ट बताया गया है। नादान

लेखकने एशियाई व्यापारियोंके बारेमें लिखते समय उनके लिए 'कुली' शब्दका प्रयोग करनेमें भी संकोच नहीं किया है। तथापि हमारा इरादा लेखकसे उसके अज्ञानको या उसकी भावनाओंको लेकर झगड़नेका नहीं है। जिस सभ्यताका वह प्रतिनिधि है, अज्ञान उसका स्वाभाविक परिणाम है। कारण, यह सभ्यता मनुष्यकी दुर्बल देहसे ऐसी कठोर अपेक्षाएँ करती है कि उस देहधारीके लिए दुनियाके बारेमें बहुत ही छिछली-सी जानकारीके सिवा कोई अधिक गहरा ज्ञान पाना असम्भव है। और चूंकि जिन लोगोंका लालन-पालन इस सभ्यतामें होता है उन्हें बराबर यही मानते रहनेकी तालीम दी जाती है कि वही सभ्यता सर्वश्रेष्ठ है, अतः यह स्वाभाविक ही है कि जो भी वस्तु उस सभ्यता द्वारा मनमाने ढंगसे निर्धारित कसौटीपर खरी न उतरे उसे वे हिकारतकी नजरोंसे देखें। और इस प्रकार हम देखते हैं कि लेखक एशियाई व्यापारीको इस कारण घृणाकी दृष्टिसे देखता है कि वह "जीवनकी साधारणतम सुख-सुविधाओंकी ओरसे उदासीन है।" ईसाई धर्मके प्रवर्तकने इन सुख-सुविधाओंकी ओर कहीं अधिक उपेक्षा-भाव दिखाया था, और उसके रहन-सहनका तरीका एशियाई व्यापारीकी तुलनामें बहुत ही ज्यादा आदिम था। तिसपर भी हम बखूबी जानते हैं कि लेखकका मंशा ईसा मसीहकी निन्दा करनेका हरगिज न था।

अतः अब हमें जिस प्रश्नकी ओर ध्यान देना है वह यह नहीं है कि हम उक्त लेखक-सरीखे लोगोंको (और इसमें तो सन्देहकी बात ही नहीं है कि दक्षिण आफ्रिकाके यूरोपीयोंमें अधिकांश ऐसे ही हैं) संतुष्ट करें अथवा नहीं; बल्कि यह है कि क्या हमें उनके देशमें पैर जमाए रखनेके लिए अपने जीवनका सीधा-सादा तरीका छोड़कर वे चीजें अपना लेनी चाहिए जिन्हें हम आधुनिक जीवनके दुर्गुण समझते हैं। जिन्होंने ऐसा किया है वे हानि उठाकर यह जान चुके हैं कि वे उसकी बदौलत अपनेको यहाँ तनिक भी अधिक ग्राह्य नहीं बना पाये। उनका जन्मतः एशियाई होना तब भी पर्याप्त अपराध माना जाता है। दोनों प्रकारकी जीवन-पद्धतियाँ दक्षिण आफ्रिकामें साथ-साथ रहनेके लिए प्रयत्नशील हैं। प्रयोग दिलचस्प है। हम तो यही आशा कर सकते हैं कि यदि एशियाईको अपने-आपमें और अपनी सभ्यतामें विश्वास है तो वह अपनी सभ्यताको गिरायेगा नहीं। और हमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि जो सभ्यता युगोंकी कसौटीपर खरी उतर चुकी है वह उस कसौटीपर भी खरी उतरेगी जिसपर उसे इस उप-महाद्वीपमें कसा जा रहा है। परन्तु दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए मुट्ठीभर एशियाइयोंको यह याद रखना है कि यदि वे अपनी जन्मभूमिको या अपनी जीवन-पद्धतिको कलंकित नहीं करना चाहते तो उन्हें उसके अनुरूप ही आचरण करना है, उसकी विडम्बना नहीं रचनी है। प्राचीन कालसे आचरणके जो नियम पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आ रहे हैं, उनका पूरा पालन करना है। उनके लिए ईमानदारी एक सर्वोत्तम नीति-मात्र नहीं है, जिसका उपयोग केवल तब किया जाये जब वैसा करना लाभदायक हो; बल्कि एक ऐसी चीज है जिसका पालन हर कीमतपर और हर परिस्थितिमें किया जाये। वे "जिसकी लाठी उसकी भैंस" में विश्वास नहीं करते, उनकी लाठी तो उनके अधिकारकी न्याय्यता ही है। "समर्थ ही जीवित रहनेका अधिकारी है",

इस सिद्धान्तसे उनका कोई सरोकार नहीं। उन्हें "जियो और जीने दो" के सिद्धान्त-पर चलना है। यदि उनपर आधुनिक प्रतिस्पर्द्धाका भूत सवार हुआ और वे उस लोभकी वृत्तिके रंगमें रंग गये, जो इस डींग हाँकनेवाली सभ्यताका प्रधान लक्षण है, तो उनका पतन अवश्यम्भावी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९११

१६०. पत्र: ई० एफ० सी० लेनको

दिसम्बर ७, १९११

प्रिय श्री लेन,

पिछली बार जब मैं जनरल स्मट्ससे मिला था तब मैंने वचन दिया था कि समझौतेकी शर्तोंको किस प्रकार पूरा किया जा सकता है, इसपर मैं अपने विचार पेश करूँगा। जनरल स्मट्सको जब ऐसा जान पड़ा कि साम्राज्य-परिषद्[1] (इम्पीरियल कान्फ्रेन्स) के प्रस्तावके कारण दक्षिण आफ्रिकापर लागू होनेवाला कोई कानून पास करनेमें कठिनाई आ सकती है, तब उन्होंने मुझसे अपने विचार प्रस्तुत करनेको कहा था. . .। मैंने परिषद्की कार्यवाही पढ़ ली है और मेरी समझमें उक्त प्रस्ताव इस प्रश्नको प्रभावित नहीं करता। वह केवल विदेशी प्रवासियोंसे ही ताल्लुक रखता मालूम होता है।

कुछ भी हो, मैं सोचता हूँ कि यदि सर्वसामान्य कानून न बनाया जा सके तो मैंने केपमें जो सुझाव दिये हैं उन्हींके मुताबिक ट्रान्सवाल प्रवासी अधिनियममें संशोधन कर लिया जाये। मेरे मसविदेका[2] पाठ आपके पास है। मेरे लिए उससे अच्छा मसविदा बनाना कठिन है और मैं कबूल करता हूँ, मुझे इस सुझावको कार्यान्वित करनेमें कोई वैधानिक कठिनाई नजर नहीं आती।

हृदयसे आपका

श्री ई० एफ० सी० लेन
प्रिटोरिया

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५९५) की फोटो-नकलसे।

१. साम्राज्य-परिषद्ने, जिसकी बैठक लन्दनमें १९ जूनको दोपहर बाद हुई थी, दो प्रस्ताव पास किये थे। प्रथम प्रस्तावमें "प्रवासियों और विदेशियोंको देशमें प्रवेश न करने देनेसे सम्बन्धित साम्राज्यीय अधिनियमोंमें और अधिक एकरूपता" बरतनेकी जरूरत बताई गई थी। **इंडियन ओपिनियन**, २२–७–१९११ और देखिए परिशिष्ट ९ भी।

२. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१०।

१६१. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
दिसम्बर ८, १९११

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

आप अस्वस्थ थे फिर भी आपको गत ३ नवम्बरका वह लम्बा पत्र [बोलकर] लिखवानेका कष्ट करना पड़ा, यह सोचकर मुझे संताप हो रहा है। मैं भली-भाँति समझ सकता हूँ कि रायटरके उस अभागे तारके कारण आपको कितनी व्यथा हुई होगी।[1] क्षमा-प्रार्थी हूँ। उस तारके छपनेके बाद यदि मेरे प्रति किसी मिथ्या स्नेहके कारण मुझे नामजद कर दिया गया होता तो बहुत ही दुःखपूर्ण बात होती। आपको इसके बारेमें आश्वस्त करनेकी आवश्यकता नहीं कि समाचारपत्रोंमें की गई चर्चासे मुझे जरा भी परेशानी नहीं हुई और न उसका कोई असर ही मुझपर पड़ा है।

श्री रिचके नाम लिखे गये आपके पत्रसे आपकी पुत्रीकी अस्वस्थताके बारेमें मुझे मालूम हुआ था। आशा है अब वह पूर्णतः स्वस्थ हो गई होगी।

श्री पोलक आपके पास हैं। इसलिए मुझे यहाँकी स्थितिके बारेमें कुछ भी लिखनेकी आवश्यकता नहीं। यही आशा लगाये बैठा हूँ कि इस आशयका प्रस्ताव पास होकर ही रहेगा कि संसारके सभी भागोंमें गिरमिटिया मजदूरोंका भेजा जाना कतई बन्द कर दिया जाये।[2]

मैं आपको दक्षिण आफ्रिका आनेके लिए आमंत्रित कर ही चुका हूँ। वही प्रार्थना अब फिर कर रहा हूँ। यह प्रार्थना मैं आपके स्वास्थ्य और उन लोगोंके विचारसे कर रहा हूँ जो आपके प्रति स्नेह रखते हैं और जो चाहते हैं कि आप वर्षों तक शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकारसे पूर्णतः स्वस्थ बने रहकर अभी वर्षों जियें। कितना अच्छा हो यदि आप पोलक दम्पतिके साथ ही यहाँ आ जायें; यदि उससे भी पहले हो सके, तो अवश्य ही। कृपया आना ही निश्चित कीजिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ३८०५) की एक फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र: गो० कृ० गोखलेको", पृष्ठ १७२।

२. देखिए "पत्र: गो० कृ० गोखलेको", पृष्ठ १६७। यह प्रस्ताव इंडियन नेशनल कांग्रेसके उस अधिवेशनमें पास हुआ था, जो दिसम्बर २८, १९११ को समाप्त हुआ था। **इंडियन ओपिनियन**, ६-१-१९१२।

१६२. मिश्रित स्कूल और नैतिकता

मिश्रित स्कूलोंके प्रश्नपर 'वर्कर'में श्रीमती वाइबर्गने जो जोरदार लेख[1] लिखा है, उसे हम बड़ी खुशीके साथ प्रकाशित कर रहे हैं। इस मामलेको 'ट्रान्सवाल लीडर' ने उठाया था; और शिक्षा-बोर्डने श्रीमती वाइबर्गको अपने आरोप प्रमाणित करनेको कहा है। श्रीमती वाइबर्गने ऐसा करना स्वीकार कर लिया है, बशर्ते कि उन्हें, उन तक तथ्य और जानकारी लानेवालोंको — जो कि शिक्षक हैं — किसी भी प्रकारकी हानि न होने देनेका आश्वासन दिया जाये। उन शिक्षकोंकी पूरी-पूरी रक्षाका जो आश्वासन श्रीमती वाइबर्ग कुदरतन माँग रही हैं उसे देनेमें बोर्ड कुछ झिझक रहा है। फिलहाल हमें इससे कोई सरोकार नहीं है कि श्रीमती वाइबर्गके पास जो प्रमाण हैं उन्हें वे बोर्डके सामने प्रस्तुत करती हैं अथवा नहीं। जिस तथ्यको हम सबके सामने रखना चाहते हैं वह यह है कि 'ट्रान्सवाल लीडर' ही नहीं, जोहानिसबर्गके लगभग सभी समाचार-पत्र यह कह रहे हैं कि मिश्रित स्कूलोंकी, खासकर सयाने बालक-बालिकाओंके लिए मिश्रित स्कूलोंकी, प्रणाली समाप्त होनी चाहिए। लगता है कि वे यह मानकर चल रहे हैं कि सार रूपमें श्रीमती वाइबर्गका अभियोग सच है।

"चैनसे बैठो, और आभार मानो", यह लॉर्ड जॉन रसेलका नीतिवाक्य था। नेटालका शिक्षा-विभाग हमारे मध्य लड़के और लड़कियोंकी सहशिक्षाका जो मूर्खता-पूर्ण प्रयोग करना चाहता था उसके प्रति, सहज प्रेरणावश, अरुचि प्रकट करनेवाले भारतीय माता-पिताओंकी बुद्धिमत्ताकी हम प्रशंसा करते हैं। यह युग मूलतः नई-नई बातें चलाने और अंधाधुंध प्रयोग करते जानेका युग है। गतिशीलताको प्रगति समझा जाता है। आपको बस चलते रहना है — इसकी परवाह नहीं कि आप आगेकी ओर बढ़ रहे हैं या पीछे जा रहे हैं। उत्साही सुधारकका कहना है कि वर्तमान व्यवस्थामें अवश्य खराबी होगी, और इसीलिए उसमें सुधारोंका होना जरूरी है। सच्चे सुधारकका नीतिवाक्य होना चाहिए "जल्दी करो सही लेकिन धीरजसे"। श्रीमती वाइबर्ग जिन बातोंको प्रकाशमें लाई हैं, उनसे साफ देखा जा सकता है कि पीढ़ियोंसे चली

१. श्रीमती वाइबर्गने अपने लेखमें कहा था कि लन्दनमें लड़के और लड़कियोंके बीच परस्पर समानता स्थापित करनेके आदर्शको लेकर सह-शिक्षाका जो प्रयोग चालू किया था, वह बन्दकर दिया गया, क्योंकि भ्रामक आदर्शोंके कारण समानता न आ सकी — उलटे अन्तर बढ़ गया। किन्तु जोहानिसबर्गमें सह-शिक्षाके पीछे ऐसी कोई भावना नहीं है; वहाँ इस पद्धतिको अपनानेका एकमात्र ख्याल यह है कि दोनोंके लिए अलग स्कूल खोलनेके निमित्त अधिक इमारतें बनवानेका खर्च न करना पड़े। उन्होंने शिकायतके तौरपर कहा कि सह-शिक्षासे पैदा होनेवाले स्पष्ट और गम्भीर नतीजोंके खिलाफ कोई सावधानी "नहीं बरती गई है" और परिणामतः ऐसी कई घटनाएँ हुई हैं जिनका जिक्र करनेके फलस्वरूप जिक्र करनेवालेपर मुकदमा चल सकता है। बच्चोंके माता-पिता, प्रतीत होता है, उनसे अवगत नहीं हैं, लेकिन स्कूलके ईमानदार अध्यापक-गण इसके कारण बड़ी उलझनमें पड़ गये हैं। **इंडियन ओपिनियन**, ९-१२-१९११।

आनेवाली प्रणालियों और रिवाजोंको उखाड़ फेंकनेके पूर्व हमें उचित है कि अत्यधिक सावधानी बरतें। हां, यदि हम यह बात पक्की तौरपर जानते हों कि वे रिवाज और प्रणालियां अनैतिक हैं तो बात दूसरी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१२-१९११

१६३. स्वदेशमें अकाल

हमने अकाल सहायता-कोष[1] खोला है। श्री गज्जरने इसमें पहली रकम दी है। हमें जो पत्र मिले हैं उनसे हमें मालूम हुआ है कि अनेक भारतीयोंने लोगोंके पास जा-जाकर धन-संग्रह करनेका जिम्मा लिया है। जिन्होंने अकालकी भीषणता समझी है उनसे हमारा यह छोटा-सा निवेदन है:

हम बहुत-से कोषोंमें चन्दा दे चुके हैं यह कहकर वे संग्रहकर्ताओंको टाल न दें। वे चन्दा सीधा भेजनेमें भी न हिचकें। जिनके पास धन है उन्हें अनेक प्रकारके कोषोंमें रुपया देना पड़ता है। किन्तु अकाल-सहायता कोषकी तुलना दूसरे कोषोंसे नहीं की जा सकती। अकाल-सहायता कोषमें तो गरीबसे-गरीब भारतीय भी चन्दा दे सकता है। जिसे रोटी और घी मिलता है वह एक निश्चित अवधि तक घी खाना छोड़ सकता है और इस प्रकार बचाया गया धन इस कोषमें दे सकता है। उसे याद रखना चाहिए कि उसे रोटी और घी मिलता है, जब कि अकाल-पीड़ितोंको तो रोटी भी मयस्सर नहीं होती। पशुओंके लिए चारा तक नहीं है। उनके तथा पशुओंके शरीर अस्थिपंजर-मात्र रह गये हैं। अगर यह बात लोगोंके दिलोंमें पैठ जाये तो ऐसा एक भी भारतीय न होगा जो थोड़ा-बहुत रुपया इस कोषमें न दे सके।

हम स्वीकार करते हैं कि जिस दानको हम अपने हाथों करते हैं और जिसका उपयोग अपनी आंखोंसे होता देखते हैं उसके बराबर कोई दूसरा दान नहीं। हमारे देशमें जहां-जहां पश्चिमका प्रभाव नहीं पहुँच पाया है, वहाँ तो ऐसा ही है। गाँवोंके लोग गाँवके तरीकेसे दान करते हैं। घर आये हुए गरीबको वे अपने भोजनका भी एक भाग दे दिया करते हैं। उन्हें स्वप्नमें भी यह नहीं सूझता कि वे जिन्हें देख नहीं सकते उन्हें सहायता देनेकी इच्छा करें। वे जानते हैं कि ऐसा करनेका विचार करना केवल दम्भ है और खुदाईका दावा करनेके समान है।

किन्तु हम तो पश्चिमकी हवामें बह रहे हैं। यही हवा हमें इस देशमें लाई है। लोग अकालके दिनोंमें बहुत कष्ट पाते हैं इसका कारण पश्चिमका वातावरण ही है। ऐसे समयमें हमारा क्या कर्त्तव्य है? हमारा सर्वोपरि कर्त्तव्य तो यह है कि हम इस राक्षसी वातावरणसे मुक्त होकर तुरन्त वहाँ पहुँचें जहाँ अकाल-पीड़ित लोग कष्ट भोग रहे हैं और उन्हींके जैसे बनकर उन्हें सीधे रास्तेपर ले जायें। हाँ, यह

१. देखिए "देशमें अकाल", पृष्ठ १७७।

हो सकता है कि हमारी वृत्ति तो ऐसा करनेकी हो, किन्तु हमारी शक्ति उतनी न हो। विभीषण-जैसेको दीर्घकाल तक राक्षसी वातावरणमें रहना पड़ा था। फिर भला हमारी क्या विसात? इसके अलावा कुछ लोग ऐसे भी होंगे जिनके सम्बन्धमें यह नहीं कहा जा सकता [यानी उनमें शक्ति तो है] परन्तु वे अपने वातावरणमें से निकलनेकी इच्छा तक नहीं करते। इन दोनों प्रकारके लोगोंको चाहिए कि अकाल-पीड़ितोंकी जितनी सहायता वन पड़े उतनी करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१२-१९११

१६४. पत्र: छगनलाल गांधीको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
मार्गशीर्ष वदी ४ [दिसम्बर ९, १९११][1]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने उस सम्बन्धमें कुछ भी चिन्ता नहीं की। मैं इसमें तुम्हारा या किसी दूसरेका कोई दोष नहीं मानता। ऐसी भूल सभीसे हो जाती है। मजिस्ट्रेट और वकील दोनों मिल गये और सो भी धूर्त! फिर क्या पूछना है? मजिस्ट्रेट और वकील दोनों फौरन पैसा पैदा कर लेना चाहते हैं। मुझे तो लगता है कि कानूनकी दृष्टिसे इसमें अपलेख (लाइवल)का मामला नहीं बनता।[2] शायद नाम-मात्रका दोष हो गया है। यदि इसे अपराध माना जाये तो उसका जुर्माना एक पौंड ले सकते हैं। किन्तु वह भी जरूरी नहीं जान पड़ता।

यदि मजिस्ट्रेट और वकीलका इरादा हमें हैरान करनेका हो तो यह मामला अदालतमें भी जा सकता है। परन्तु उसके अदालतमें जानेसे कोई हानि नहीं है।

गरीबोंकी सहायता करनेवाले लोग ऐसे कारणोंसे नहीं डरा करते; वे अपने धनके कारण डरते हैं। यदि हम पैसेका उपयोग अपने निजी स्वार्थके लिए न करते हों तो ऐसी परिस्थितिमें वह कभी नष्ट हो जाये तो उसकी क्या चिन्ता? हम कैसे हैं इसकी परीक्षा ऐसे अवसरोंपर ही होती है। अपना धन सुरक्षित रहे और हम यह भी मानें कि हमने दूसरोंपर उपकार किया है तो यह शैतानी कही जायेगी।

१. मालूम होता है कि यह पत्र छगनलाल गांधीके २८ सितम्बर, १९११ के पत्रके बाद और अनुमानतः १९११ में लिखा गया था। उस साल मार्गशीर्ष वदी ४, दिसम्बर ९ को पड़ी थी।

२. यह जनुवियाका मामला होगा, जिसका विवरण **इंडियन ओपिनियन**में **आफ्रिकन क्रॉनिकल**से लेकर छापा गया था; देखिए पृष्ठ १५६ की पाद-टिप्पणी १।

यदि कांग्रेसवाले या दूसरे लोग कुछ कहें तो इसमें अप्रतिष्ठाकी क्या बात है? हमारा मन जिसे प्रतिष्ठा कहे वह प्रतिष्ठा है और जिसे अप्रतिष्ठा कहे वही अप्रतिष्ठा है। तुम अपना काम निश्चिन्त और निडर होकर करते रहना।

यदि हमने अपना सर्वस्व कृष्णार्पण कर दिया हो तो जिसका यह सब कुछ है वही उसको सँभालेगा। यदि न सँभाले तो इसमें तुम्हारी या मेरी क्या हानि है? देखना तो यह चाहिए कि हमने सब कृष्णार्पण कर दिया है या उसका कुछ अंश अपने लिए बचा लिया है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ६०७७) की फोटो-नकलसे।

१६५. अन्यायपूर्ण कर

हम नेटालके भूतपूर्व गिरमिटिया स्त्री-पुरुषों और बच्चोंसे वसूल किये जानेवाले तीन पौंडी करके बारेमें लॉर्ड ऍम्टहिलकी समितिके नाम उपनिवेश मन्त्रीका उपयोगी जानकारीसे पूर्ण एक पत्र[1] तथा गवर्नर जनरलके नाम संघके प्रधान मन्त्रीका खरीता अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। माना कि यह कर भारत-सरकार और सम्राट्की सरकारकी जानकारी और उनकी सहमतिसे ही थोपा गया था और यह सहमति ठीक-ठीक तथ्य पेश करके ही प्राप्त की गई थी, किन्तु इससे यह कानून कुछ कम अन्यायपूर्ण तो नहीं हो जाता। संघ-सरकारका यह रुख देखनेमें बड़ा सहानुभूतिपूर्ण

१. उपनिवेश-मन्त्री हरकोर्टने नवम्बर १४, १९११ को यह पत्र दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति द्वारा जून १७, १९११ (परिशिष्ट ८) को प्रस्तुत किये गये अभ्यावेदनके छठे अनुच्छेदके उत्तरमें भेजा था। अभ्यावेदनके छठे अनुच्छेदमें भारतीय स्त्रियों और बच्चोंको तीन पौंडी करसे विमुक्त करनेकी माँग करते हुए कहा गया था कि १९१० के संशोधन अधिनियम (१९१० के नेटाल अधिनियम १९) के फलस्वरूप "स्थितिमें बहुत ही थोड़ा सुधार" हुआ है। उसमें अलग-अलग मजिस्ट्रेटोंके विभिन्न निर्णयोंकी असमानताओंकी ओर भी ध्यान आकर्षित किया गया था। हरकोर्टने अपने पत्रके साथ दक्षिण आफ्रिकाके गवर्नर जनरलकी एक विज्ञप्तिकी प्रति भी संलग्न की थी, जिसमें इस विषयके सम्बन्धमें संघके मन्त्रियोंके विचारोंका एक मसविदा दिनांक अगस्त २२, १९११ को दिया गया था। मसविदेपर स्मट्सके हस्ताक्षर थे और उसमें कहा गया था कि तीन पौंडी कर "स्वतन्त्र भारतीयोंकी संख्याको यथासम्भव सीमित करनेकी दृष्टिसे, नीतिके आधारपर" लगाया गया है और मन्त्रिगण उसे रद करना ठीक नहीं समझते। मसविदेमें यह भी कहा गया था कि कुछ मामलोंमें कानूनकी कार्यान्वितिपर बड़ी "सावधानीके साथ नजर रखी गई" है और सभी शिका[illegible] गई है और मन्त्रियोंको पूरा-पूरा यकीन है कि "इस कानूनके प्रशासनमें कोई[illegible] अनुचित सख्ती नहीं" हुई है। हरकोर्टने इसी सिलसिलेमें कहा था कि मसविदेमें तथ्योंको "[illegible]क ढंगसे पेश किया गया" है और कानून भारत सरकार और सम्राट्की सरकारकी पूरी जान[illegible] और उनकी सहमतिसे पारित किया गया है, और मैं मन्त्रियोंके निर्णयको स्वीकार ही कर सक[illegible]। इंडियन ओपिनियन, १६-१२-१९११।

लग सकता है कि यदि लोगोंको कष्ट होनेके कुछ निश्चित उदाहरण सामने रखे जायें तो वह उनपर विचार करनेके लिए तैयार है। लेकिन हमारा खयाल है कि जिन-जिनपर यह कर लगाया गया है निश्चित रूपसे उन सभीको परेशानी हो रही है। परन्तु इसके अतिरिक्त भी, जैसा कि श्री सावरने[1] कहा है, यदि सरकार कानूनके अमलपर सावधानीके साथ नजर रखती आई है और उसने सभी शिकायतोंकी जाँच की है, तो यह दिखानेके लिए कि किन मामलों और किन हालतोंमें करकी माफी दी गई है, आँकड़े क्यों पेश नहीं किये गये? लोगोंके, विशेषकर स्त्रियोंके, कष्टोंके अनेक उदाहरण 'इंडियन ओपिनियन'-में छापे जाते रहे हैं। सरकार स्त्रियोंको तो सर्वथा कर-मुक्त करनेके लिए वचनबद्ध थी ही। नेटालकी भूतपूर्व संसदमें संशोधन विधेयकके पारित होते समय कई जिम्मेदार सदस्योंने जो भाषण दिये थे,[2] उनमें से उद्धरण पेश करके हमने इस बातको सिद्ध किया था। हमें विवश होकर कहना पड़ रहा है कि मन्त्री महोदयके खरीतेका मंशा साम्राज्य-सरकारसे यह छुपाना है कि कर-दाताओंको कितना गम्भीर कष्ट है। इन भूतपूर्व गिरमिटिया लोगोंने वर्षों जिनकी गुलामी की है उनके हाथों वे ज्यादा अच्छे सुलूकके अधिकारी थे। इन लोगोंके साथ जो गन्दा बरताव किया गया है. हमें आशा है कि उसकी दक्षिण आफ्रिकाके समाचार-पत्रों द्वारा लगभग एक स्वरसे की गई भर्त्सनाकी[3] ओर साम्राज्य-सरकारका ध्यान अवश्य जायेगा। हमारा खयाल है कि श्री हरकोर्टके हाथमें कमसे-कम इतना तो था ही कि संघ-सरकारसे, नेटालके लिए गिरमिटिया भारतीय मजदूरोंकी भर्ती बन्द हो जानेके फलस्वरूप उत्पन्न, नई परिस्थितिपर विचार करनेके लिए कहते। स्वतन्त्र भारतीय लोगोंकी संख्या यथासम्भव सीमित करनेका प्रश्न अब पैदा ही नहीं होता; जैसा कि प्रिटोरियाके निर्वाचकोंके सामने ७ तारीखको दिये गये जनरल स्मट्सके अपने भाषणसे प्रकट है:

> **यदि अब कभी यहाँ एशियाइयोंको गिरमिटिया मजदूरोंके रूपमें लाया गया तो क्रान्ति हो जायगी। वह दरवाजा तो सदाके लिए बन्द हो गया।**

हमें यह देखकर बड़ा सन्तोष हुआ कि लॉर्ड ऐम्टहिलकी अनुपस्थितिमें लॉर्ड लैमिंग्टन आगामी विधेयकके बारेमें लॉर्ड सभाके समक्ष प्रश्न रखते आ रहे हैं।[4]

१. जे० डब्ल्यू० सावर; केप विधानसभा और बादमें संघ-मन्त्रिमण्डलके सदस्य; १९०९ के ट्रान्सवाल भारतीय शिष्टमण्डलके साथ 'केनिलवर्थ कैसिल' जहाजपर यात्रा; देखिए खण्ड ९, पृष्ठ २७२; उसी यात्राके दौरान गांधीजीसे मुलाकात; गांधीजीको उनका रुख बड़ा "सहानुभूतिपूर्ण" लगा; उसी समय उन्होंने गांधीजीको यथासम्भव सहायता करनेका वचन दिया था।

२. देखिए "तीन पौंडी कर", पृष्ठ १७५।

३. यूरोपीय मालिकों द्वारा प्रकाशित **नेटाल मर्क्युरी, नेटाल ऐडवर्टाइज़र,** और **रैंड डेली मेल** जैसे कई पत्रोंने अपनी लेख-मालाओं और सम्पादकीय टिप्पणियोंमें तीन पौंडी करकी निन्दा की थी।

४. लॉर्ड लैमिंग्टनने दिसम्बर ६ को लार्ड सभामें माँग की थी कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें उपनिवेश-कार्यालय और संघ-सरकारके बीच हुआ पत्र-व्यवहार पेश किया जाये। उन्होंने नगरपालिका अध्यादेशके मसविदे, स्वर्ण-अधिनियम और कस्बा-कानूनके प्रवर्तनके सम्बन्धमें भी सूचना माँगी। **इंडियन ओपिनियन**, ९-१२-१९११।

आशा है कि संघ-सरकारने अस्थायी समझौतेमें जो वादा किया था वह संघ-संसदके अगले सत्रमें, शाब्दिक रूपमें ही सही, पूरा हो जायेगा। हमारी कामना है कि लॉर्ड महोदय इस अन्यायपूर्ण करका मामला हाथमें लें और उसे रद करानेके लिए सम्राट्की सरकारपर लोकमतका दबाव डालें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१२-१९११

१६६. तार: गृह-मन्त्रीके निजी सचिवको

दिसम्बर २१, १९११

गृहमन्त्रीके निजी सचिव
[प्रिटोरिया]

आपके तारके[1] लिए धन्यवाद। कल सबेरे मुलाकातके लिए आऊँगा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५९८) की फोटो-नकलसे।

१६७. साम्राज्य-सरकारसे क्या अपेक्षा करें?

ट्रान्सवालकी स्थानीय सरकारके अध्यादेशके मसविदेके विषयमें ब्रिटिश भारतीय संघके प्रार्थनापत्रपर उपनिवेश कार्यालयसे लॉर्ड ऍम्टहिलकी समितिको जो पत्र[2] (डाउनिंग स्ट्रीटके लिहाजसे काफी लम्बा पत्र) लिखा गया है, उसे पढ़कर दुःख होता है। यदि पुष्टिकी आवश्यकता ही थी, तो यह पत्र अनेक सत्याग्रहियोंकी इस धारणाकी पुष्टि करता है कि जनरल स्मट्सके साथ जो अस्थायी समझौता हुआ — और अब जिसे अगले दो-तीन महीनेमें कानूनकी शक्ल दे दी जायेगी — वह सत्याग्रहकी शक्तिके कारण ही हुआ था। हमारे कहनेका मतलब यह नहीं है कि साम्राज्य-सरकार हाथपर-हाथ धरे बैठी रही अथवा साम्राज्य-सरकारने जो विचार या सुझाव दिये उनका संघ-सरकारपर कतई कोई असर नहीं हुआ। लेकिन हम यह जरूर कहना चाहते हैं कि यदि सत्याग्रह न हुआ होता तो साम्राज्य-सरकार हमारे पक्षमें बिलकुल कुछ न करती। श्री हरकोर्टके गत २३ नवम्बरके पत्रमें काफी स्पष्ट शब्दोंमें कहा गया है कि प्रकट शिकायतोंको दूर करवानेके लिए भी साम्राज्य-सरकार हमारी ओरसे हस्तक्षेप नहीं करेगी। उनके लिए तो किसी जानी-मानी भूलको सुधारनेकी ब्रिटिश भारतीयोंकी प्रार्थनाको

१. यह तार गृह-मन्त्रीके निजी-सचिवके उस तारका जवाब है, जिसमें उन्होंने गांधीजीको प्रवासी विधेयकका मसविदा दिखानेके उद्देश्यसे प्रिटोरियामें आकर मिलनेका निमन्त्रण भेजा था। (एस० एन० ५५९८)

२. इस पत्र तथा ब्रिटिश भारतीय संघके प्रार्थनापत्र और एशियाइयोंको प्रभावित करनेवाले अध्यादेशके खण्डोंके लिए देखिए परिशिष्ट ७।

अमान्य कर देनेके लिए यही बात पर्याप्त है कि [ऐसी ही] कोई चीज पहले हो चुकी है — इससे उन्हें कोई सरोकार नहीं कि जो-कुछ किया गया वह उचित है या अनुचित। हमसे यह कहनेकी क्या जरूरत थी कि नगरपालिकाका मताधिकार तो पहलेके एक अध्यादेश द्वारा हमसे छीना जा चुका है, और प्रस्तावित अध्यादेशके मसविदेकी अधिकांश धाराएँ करीब-करीब पुरानी धाराओंके समान ही हैं? श्री हरकोर्टको यह क्यों नहीं सूझा कि ब्रिटिश भारतीय संघके लिए यही उचित था कि वह उनका ध्यान — विशेष रूपसे उस समय जब कानून दक्षिण आफ्रिका संघकी स्थापनाके परिणामस्वरूप उत्पन्न होनेवाली नई परिस्थितियोंमें बनाया जा रहा है — इस बातकी ओर खींचे कि नये कानूनमें वही पुरानी धाराएँ शामिल की जा रही हैं। श्री हरकोर्ट ऐसे उपयुक्त अवसरपर, जबकि अध्यादेशका यह मसविदा पास किया जानेवाला है, उस अन्यायपूर्ण नीतिमें परिवर्तन करानेका आग्रह क्यों नहीं कर सकते, यह समझमें नहीं आता।

हमें यह देखकर दुःख होता है कि श्री हरकोर्ट साम्राज्य-सरकारको कुछ इस रूपमें पेश करते हैं, मानो वह भी [दक्षिण आफ्रिका]संघके मन्त्रियोंकी छलपूर्ण नीतिसे सहमत हो। श्री हरकोर्ट और संघके मन्त्री यह कहकर हमारी बुद्धिका अपमान करते हैं कि चूँकि परवाने दिये जानेसे सम्बन्धित धाराएँ सबके लिए समान रूपसे लागू होती हैं, अतः हमारे पास शिकायत करनेका कोई आधार नहीं है। उन्हें भी हमारी तरह भली-भाँति मालूम है कि अधिकांश मामलोंमें इस प्रकारकी सर्वसामान्य धाराएँ अमलके वक्त केवल एशियाइयोंपर ही लागू की गई हैं। श्री हरकोर्टके तद्विषयक पत्रके एक अंशमें अदालतमें अपील करनेके अधिकारसे वंचित किये जानेको कष्टप्रद कहा गया है, इससे हमें यह आशा ज़रूर बँधती है कि इस दिशामें कुछ किया जायेगा।

यह आश्चर्यकी बात है कि वजनी मसलोंकी चर्चा करनेवाले एक महत्वपूर्ण पत्रमें हमारी शिकायतोंके जवाबमें एकदम तुच्छ और नगण्य दलीलोंका प्रयोग इतनी दृढ़तासे किया गया है। उदाहरणार्थ, स्वच्छताकी दलील गलत सिद्ध हो चुकी है, लेकिन उसी आधारपर भारतीयों, अन्य एशियाइयों, यहाँतक कि अन्य रंगदार लोगोंको भठियारखानों (बेकरियों) आदिमें नौकरीके अधिकारसे वंचित करनेको श्री हरकोर्ट उचित ठहराते हैं। उन्हें इस समय तक यह जान जाना चाहिए कि उक्त धारा और कुछ नहीं, ईमानदार लोगोंके जीवन-यापनके साधन और नौकरीका एक रास्ता बन्द करनेका प्रयास-मात्र है। निश्चय ही यह देखनेका काम स्वास्थ्य और सफाई अधिकारियोंपर छोड़ा जा सकता है कि भठियारखानेवाले और उनके कर्मचारी सफाईके नियमोंका पालन करते हैं या नहीं। हमें यह भी बिलकुल पक्के तौरपर बताया गया है कि एक बिलकुल ही दूसरे मामलेमें महिला श्रमिकोंके विरुद्ध भी ऐसी ही पाबन्दी लगाई गई है। ट्रामगाड़ियों-विषयक हमारी बहुत बड़ी शिकायतको भी इसी प्रकार यह कहकर अस्वीकृत कर दिया गया है कि यह "चीज बहुत लम्बे अर्सेसे चली आ रही है।" गोया, कोई अपराध बार-बार दोहराये जानेपर सचमुच गुण बन जाता हो। हमें दुःख है कि साम्राज्य-सरकार, श्री हरकोर्टके पत्रमें व्यक्त दलीलको अपनाकर, साम्राज्यके विभिन्न भागोंमें परस्पर-विरोधी स्थानीय हितोंके बीच सन्तुलन

बनाये रखनेके अपने उत्तरदायित्वका त्याग कर रही है। यह पत्र परम्परासे विमुख होनेका एकमात्र उदाहरण नहीं है, बल्कि यह तो उससे दूर हटनेकी उस प्रक्रियामें एक और कदम है जिसे साम्राज्यके शुभ-चिन्तक बहुत दुःखके साथ काफी समयसे देख रहे हैं। हम कामना तो कर ही सकते हैं कि पूर्ण निष्पक्षताकी वह पुरानी और निर्भीक नीति फिरसे अपनाई जायेगी जो साम्राज्यके केन्द्र-स्थलमें उस समय प्रचलित थी जब उसके स्वार्थोंको किसी प्रकारका खतरा नहीं था।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१२-१९११

१६८. एक लज्जाजनक कृत्य

गत सप्ताह हमने नाथलियाके मुकदमेकी[1] जो संक्षिप्त रिपोर्ट प्रकाशित की थी, उससे भारतीय समाजके हर सदस्यका मन उसी प्रकार खिन्न हो उठा है जिस प्रकार इस मामलेपर निर्णय सुनानेवाले जजोंका। जज किसी अन्यायको अन्याय मान कर भी न्याय नहीं कर सकें तो यह बात अदालतोंकी उपयोगिताके बारेमें निराश हो बैठनेके लिए पर्याप्त है। स्वर्गीय श्री लियोनार्ड कहा करते थे, और इसमें उनका विश्वास भी था, कि ऐसा कोई अन्याय नहीं है जिसका कानूनी प्रतिकार न किया जा सके। यही वह मोहक भ्रान्ति है जिसके बलपर कुछ उत्तम बुद्धिवाले लोग उस पेशेको चलाते रहना चाहते हैं जिसका उज्ज्वल पक्ष शायद ही कोई हो।

नवयुवक नाथलियाके इस मामलेकी इतिश्री वहीं नहीं मानी जा सकती जहाँ नेटालके जजोंने उसे छोड़ा है। यह एक राष्ट्रीय कलंककी बात है कि प्रमाण प्रस्तुत करनेके बाद भी इस तरुणको प्रान्तमें प्रवेश नहीं दिया गया। इन प्रमाणोंसे उस स्वेच्छाचारी प्रवासी अधिकारीको छोड़कर, जिसके पास किसी मामलेपर पूर्वग्रहसे दूर रहकर, न्यायकी दृष्टिसे, विचार करनेका अवकाश ही नहीं है, अन्य कोई भी व्यक्ति सन्तुष्ट हो गया होता। उसका धन्धा ही ऐसा है जिसमें न्याय-दृष्टिसे विचार करना वर्जित है। इसलिए दोष उस व्यक्तिका नहीं, बल्कि विधानमण्डलका है, जिसने धृष्टतापूर्वक उसके ऊपर एक ऐसी जिम्मेदारी लाद दी है जिसका निर्वाह कोई साधारण मनुष्य कर ही नहीं सकता। कानूनमें उसे "प्रवासी प्रतिबन्धक अधिकारी" कहा जाता है। उसकी नियुक्ति एक प्रतिबन्धक कानूनको अमल देनेके लिए की गई

१. ई० एम० नाथल्याको दो बार भारत वापस भेजा गया। दूसरी बार जब वह लौटा तब वह अपने साथ इस बातके प्रमाणसे सम्बन्धित दस्तावेज आदि ले आया था कि वह जिस व्यक्तिको अपना पिता बता रहा था और जिसके साथ रहनेको वह नेटाल आया था सचमुच वही उसका पिता था। किन्तु प्रवासी अधिकारीको इनसे सन्तोष नहीं हुआ, और उसने नाथल्याको जहाजसे उतरनेकी अनुमति नहीं दी। इसपर जजने कहा कि अधिकारी तो, लगता है, यह माननेको तैयार ही नहीं है कि कोई लड़का अपने बापका बेटा हो सकता है। फिर भी उसने इस मामलेमें हस्तक्षेप करनेमें अपनी असमर्थता प्रकट की, क्योंकि प्रवासी अधिकारीको इस सम्बन्धमें पूरी सत्ता प्राप्त थी। **इंडियन ओपिनियन, २३-१२-१९११।**

है। जिन लोगोंपर प्रतिबन्ध लगानेकी उससे अपेक्षा की जाती है वह साधारणतया उन्हीं लोगोंके पक्षमें निर्णय कैसे कर सकता है? उसके निर्णयोंके विरुद्ध अदालतमें अपील न करने देना न्याय करनेसे इनकार करना है। नेटालके भूतपूर्व विधानमण्डलने यही किया है। हमें आशा है कि मामलेको और ऊँची अदालतमें पेश कराया जायेगा, और वहाँ उसपर पूरी तरह गौर किया जायेगा। नाथलिया भारतीय समाजका सदस्य है, और यदि हम उसका वापस भेज दिया जाना बरदाश्त कर लेते हैं तो यह लज्जाकी बात होगी। समाजको इसे अपने सम्मानका प्रश्न मानकर हमें इस तरुणकी रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि हम जानते हैं कि नाथलिया सचमुच उसी व्यक्तिका पुत्र है जो उसे अपना बेटा बताता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१२-१९११

१६९. नया वर्ष

किसी वर्षकी समाप्तिपर स्वाभाविक ही है कि जिस पथसे हम गुजरे हैं घूमकर उसपर नजर डालें। और अगर हमें कोई ऐसी चीज मिल जाये जिसके ऊपर हम हर्षित हो सकें तो यह बहुत अच्छी बात है। इस वर्ष ऐसी कौन-सी घटना घटी है जिसके बारेमें कहा जा सके कि उसने भारतीय समाजको प्रभावित किया है? जनवरीके प्रथम सप्ताहमें कलकत्तेसे यह शुभ समाचार मिला कि भारत सरकारने अप्रैलमें एक नोटिस निकालनेका निश्चय किया है जिसके अनुसार जुलाई १ से गिरमिटिया भारतीयोंका नेटाल भेजा जाना निषिद्ध हो जायेगा। सरकारने इस निर्णयपर अमल किया है और अब हम गिरमिटिया भारतीयोंको इस देशमें आते हुए नहीं देखेंगे।[1] इस समय यह कहना तो मुमकिन नहीं कि अन्ततोगत्वा इसका परिणाम क्या होगा, किन्तु हमारे पास यह माननेका पर्याप्त कारण है कि भारतीय मजदूरोंसे काम लेनेवाले बहुत-से मालिक अपने कर्मचारियोंके साथ कुछ सद्भावनापूर्ण व्यवहार करने और उनके लिए समुचित आवास-व्यवस्था करनेकी आवश्यकता अनुभव करने लगे हैं। समय बीतनेके साथ-साथ हम और अधिक सुधारोंकी आशा रखते हैं जिनमें बागानोंमें रहनेवाले भारतीय बालकोंके लिए स्कूलोंकी स्थापना भी शामिल है। तथापि इसके कारण हम गिरमिटिया प्रणालीकी बहुतेरी बुराइयोंकी तरफसे आँख नहीं मूँद सकते, और "सबके लिए स्वतन्त्रता"के अपने आदर्शको भी हमने छोड़ नहीं दिया है। जब लोग इस स्वतन्त्रताके लिए तैयार हो जायेंगे उस समय वह अपने आप आ जायेगी। फिरसे गिरमिटिया करार मंजूर करानेके लिए इस समय प्रलोभनके रूपमें जो पहलेसे अच्छा बरताव करने और ज्यादा स्वास्थ्यकर सुविधाएँ देनेकी बात चलाई जा रही है, वही आगे चलकर मजदूर और मालिकके बीच करार करनेकी स्वतन्त्रताका रूप ले लेगी।

१. देखिए पृष्ठ ९४, पाद-टिप्पणी ३।

जब इस वर्षका आरम्भ हुआ था तब सत्याग्रहकी लड़ाई अपने विकटतम रूपमें थी। मार्चमें प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक[1] (इमीग्रेंट्स रिस्ट्रिक्शन बिल) प्रकाशित किया गया। इसका क्या हश्र हुआ था सो हमारे पाठकोंको याद होगा।[2] इसके बाद जनरल स्मट्स और गांधीके बीच लम्बा पत्र-व्यवहार चला, और परिणामस्वरूप अप्रैलके अन्तमें गृह-मन्त्री और भारतीय नेताओंके बीच निम्न समझौता[3] हुआ: १९०७का कानून ३[4] रद कर दिया जाये; आव्रजनके मामलेमें एशियाई और यूरोपीय प्रवासियोंके बीच कानूनी समानता हो; वर्तमान प्रान्तीय अधिकार बरकरार रखे जायें; छः उच्च शिक्षाप्राप्त एशियाइयोंको ट्रान्सवालमें प्रवेश मिले; सत्याग्रहियोंका पँजीयन किया जाये; और बन्दियोंको रिहा किया जाये। अब यह संसदपर निर्भर है कि वह सरकारके एक जिम्मेदार मन्त्री द्वारा दिये गये वचनोंकी पुष्टि करती है या नहीं। इन मामलोंमें पूरे न्यायपूर्ण व्यवहारकी आशा की जाती है; और ऐसा ही होना चाहिए। अन्यथा कोई स्थायी समझौता सम्भव नहीं है।

सरकारके साथ गत अप्रैलमें किये उसके समझौतेके बाद स्वर्ण-कानून[5] और कस्बा अधिनियम[6] (टाउनशिप्स ऐक्ट)को अमलमें लाये जानेसे एक गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गई है। उनका असर यह हो रहा है कि एशियाई दूकानदार बरबाद हो रहे हैं और ट्रान्सवालमें रहनेवाले अधिकांश भारतीयोंकी, जो फेरीवाले हैं, जीविकाका साधन खतरेमें पड़ गया है।

आगामी वर्षके सम्बन्धमें दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजको आशा भी है और आशंका भी। इसका कारण है। प्रवासी विधेयकसे, जो वर्षके आरम्भमें संसदमें लाया जायेगा,[7] दक्षिण आफ्रिका संघके प्रत्येक भारतीयका सम्बन्ध है। अधिवासी भारतीयोंके अधिकारोंका संरक्षण होना ही चाहिए, मूल्य जो भी चुकाना पड़े। और एक मुनासिब संख्यामें शिक्षित लोगोंको संघमें प्रवेश मिलना चाहिए। यह बात बहुत हद तक भारतीयोंके ऊपर निर्भर करेगी कि वे उस भूमिमें, जिसमें वे जन्मे हैं अथवा जिसे उन्होंने अपना मान लिया है, अपने अधिकार और सम्मानको सुरक्षित किये रहें। लोगोंको उनके स्थापित अधिकारों और रीति-रिवाजोंसे वंचित करनेके लिए किये गये किसी भी प्रयत्नका सामना दृढ़तापूर्वक करना होगा। जिन बातोंका सम्बन्ध स्वयं समाजके अस्तित्वसे है, उनपर किसी प्रकारका समझौता बरदाश्त नहीं किया जा सकता। जिस प्रकार ट्रान्सवालके भारतीयोंने पाँच साल तक कठोर संघर्ष किया है, उसी प्रकार यदि दूसरे प्रान्तोंको भी वैसी ही लड़ाई लड़नी पड़े तो

१. देखिए खण्ड १०, परिशिष्ट ८।
२. यह विधेयक पेश नहीं किया गया। देखिए परिशिष्ट २।
३. देखिए ई० एफ० सी० लेनको लिखे गये पत्र (पृष्ठ ३९-४१ और ४७-५०) तथा परिशिष्ट ४।
४. यह १९०७का कानून २ होना चाहिए।
५ और ६. देखिए परिशिष्ट २१।
७. इस विधेयकका मसविदा संसदके आगामी अधिवेशनके लिए फिरसे तैयार किया जा रहा था; देखिए पृष्ठ १९७, पाद-टिप्पणी १।

472

पीछे नहीं हटना चाहिए। अन्यथा भविष्यमें उनके तथा उनके बच्चोंके लिए दक्षिण आफ्रिका संघमें नागरिकता प्राप्त करनेका द्वार सदैवके लिए बन्द हो जायेगा।

कुछ और भी महत्वपूर्ण बड़े प्रश्न हैं जिन्हें हाथमें लेना जरूरी है, जैसे नेटालमें भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंके ऊपर लगाया गया तीन पौंडी वार्षिक परवाना शुल्क। भारतीय व्यापारियों और दूकानदारोंपर कभी-कभी यह आरोप लगाया जाता है कि जिन बातोंका उनपर सीधा असर पड़ता है उन्हींमें वे इतने व्यस्त रहा करते हैं कि उनके पास अपने निर्धन भाइयोंकी मुसीबतोंकी तरफ ध्यान देनेका समय ही नहीं होता। यदि इस आरोपमें रत्ती-भर भी सचाई हो तो उनके लिए यह दिखा देनेका कि वे किस धातुके बने हैं यही अवसर है। जो लोग उससे प्रत्यक्ष रूपसे प्रभावित नहीं हैं उनके लिए इस अन्यायपूर्ण और क्रूर करको रद करवानेके रूपमें यह बात सिद्ध कर देनेका एक नायाब मौका भी है कि वे किसी ऐसे प्रयत्नमें अपनी शक्ति लगानेमें सक्षम हैं जिसमें उनका जरा भी स्वार्थ नहीं है। ऐसा करके वे उन लोगोंकी कृतज्ञताके पात्र होंगे जो अपनी सहायता स्वयं करनेमें असमर्थ हैं; और ईश्वरकी अनुकम्पा उनका पुरस्कार होगी।

हम अपने सभी पाठकोंके लिए मंगलमय नव-वर्षकी कामना करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१२-१९११

१७०. अकाल

पश्चिमी भारत आजकल अकाल-ग्रस्त है। इस सप्ताह हम उसीसे सम्बन्धित समाचारोंको प्रमुखता दे रहे हैं।[1] दक्षिण आफ्रिकामें हमारी अपनी कठिनाइयाँ हैं, परन्तु भगवानको धन्यवाद है कि हमें क्रूर अकालका सामना नहीं करना पड़ा। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंने अतीतमें यह दिखा दिया है कि वे भूकम्प या अकालसे पीड़ित स्वदेशवासी भाइयोंको सहायता देकर[2] अपनेको अवसरके अनुकूल सिद्ध कर सकते हैं। हमारे स्तम्भोंमें एक कोष आरम्भ किया गया है, जिसमें अबतक १०० पौंड-से ऊपर जमा हो चुका है। परन्तु हम समझते हैं, यह रकम उस विपुल धनराशिका एक अंश-मात्र है जो दक्षिण आफ्रिकामें एकत्रित की जा सकती है। मुस्लिम समाज

१. समाचारमें कहा गया था कि बम्बई सूबेमें खाद्यान्न तथा चारेकी बहुत कमी हो गई है, और ऊपरसे काठियावाड़में प्लेगका प्रकोप हुआ है। लगभग एक-तिहाई पशुओंको खिलाने-पिलानेके लिए सार्वजनिक चन्देकी आवश्यकता बताई गई थी और यह भी कहा गया था कि केवल अहमदाबाद जिलेके लिए ही १ लाख रुपयेकी राशि चाहिए। गांधीजीने अन्यत्र भी इस अकालका उल्लेख किया है, जिसके लिए देखिए "पत्र: डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ १५५, १६१ और १७८।

२. सन् १९०५ के उत्तर भारतके भूकम्पके बाद **इंडियन ओपिनियन**में, एक भूकम्प-पीड़ित सहायता-कोष प्रारंभ किया गया था; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४५८ और ४६७।

इटली-तुर्की युद्धसे पीड़ित लोगोंके सहायतार्थ हजारों पौंडका अनुदान देकर बड़ा त्याग दिखा रहा है। हमें विश्वास है कि वह भारतके अकाल-पीड़ित लोगोंके सहायतार्थ दान देनेमें भी उतनी ही उदारता दिखायेगा। समाजके हिन्दू पारसी तथा ईसाई सदस्योंने इधर हालमें खर्चेका ऐसा कोई बोझ नहीं उठाया जैसा अभी मुसलमान सदस्योंने उठाया है; अतः वे इस महत्वपूर्ण उद्देश्यसे एकत्रित चन्देकी राशिमें वृद्धि करना अपना विशेष कर्त्तव्य बना सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१–१९१२

१७१. श्री पोलक भारतीय राष्ट्रीय महासभामें

श्री पोलक भारतमें अपना कठिन कार्य शुरू कर चुके हैं। कर्तव्यकी पुकार सुनकर फिर उन्हें चैन कहाँ! गिरमिटिया प्रथा-सम्बन्धी जिस प्रस्तावपर[1] उनके, श्री चिन्तामणि[2], डॉक्टर मणिलाल और अन्य कई सज्जनोंके भाषण हुए, वह अत्यन्त महत्वका है। वह ठीक दिशामें उठाया गया कदम है। यह उनकी पिछली सेवाओंपर मुकुटरूप है। नेटालमें गिरमिटिया मजदूरोंकी भरती बन्द करवानेका श्रेय श्री गोखलेके साथ-साथ उन्हें भी जाता है। भारतीय राष्ट्रीय महासभा (इंडियन नेशनल कांग्रेस) ने निस्सन्देह उनसे प्रेरणा पाकर भारत सरकारसे गिरमिटिया प्रथाको सर्वथा बन्द कर देनेकी माँग की और इस प्रकार उसने अपनी नीतिके तर्कसंगत परिणामका अनुगमन किया है। अब यह काम भारत-सरकारका है कि वह इस प्रथाको बन्द कर दे, क्योंकि यह प्रच्छन्न रूपमें एक प्रकारकी दासता ही है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१–१९१२

१. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसने अपने दिसम्बर १९११ के कलकत्ता अधिवेशनमें एक प्रस्ताव पास कर गिरमिटिया प्रथाकी भर्त्सना की थी और सरकारसे इस प्रथाको सर्वथा समाप्त कर देनेका अनुरोध किया था। **इंडियन ओपिनियन**, ६–१–१९१२; देखिए पाद-टिप्पणी २, पृष्ठ १९१ भी।

२. श्री चिरावुरी यज्ञेश्वर चिन्तामणि (१८८०-१९४१); समाज-सेवी पत्रकार; सम्पादक — **लीडर**, इलाहाबाद; कुछ कालके लिए उत्तर-प्रदेशके मन्त्री।

१७२. खुशखबरी

माननीय श्री गोखलेने अगली गर्मियोंमें दक्षिण आफ्रिका आनेका इरादा जाहिर किया है।[1] इसे जानकर प्रत्येक भारतीयका दिल खुशीसे भर जायेगा। श्री गोखले दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके लिए अपरिचित नहीं हैं। उन्होंने हमारे पक्षमें जो जबरदस्त काम किया है उसके कारण वे हम सबके प्रिय हो गये हैं। इसलिए यह निश्चित है कि यहाँ उनका राजसी स्वागत होगा। हमें इसमें भी सन्देह नहीं कि यूरोपीय समाजके नेता भी उनका स्वागत प्रेमपूर्वक करेंगे। श्री गोखलेका यह आगमन हर प्रकार लाभकारी ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१–१९१२

१७३. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
जनवरी, १२, १९१२

प्रिय श्री गोखले,

आपको इस बातका अन्दाज दे सकना भी कठिन है कि आपके शीघ्र ही यहाँ आनेका समाचार पढ़कर हमें कितनी खुशी हुई है।

आशा है, आप अपने आगमनकी तिथिकी सूचना[2] काफी समय रहते भेज देंगे।

लन्दन जाते हुए यदि आप पहले इधर आ सकें तो कैसा हो? मेरी समझमें यह अधिक अच्छा रहेगा, क्योंकि तब आप हमारे मसलेकी छानबीन घटनास्थलपर ही कर सकेंगे और लन्दन पहुँचनेपर ठोस सहायता पहुँचा सकेंगे। मेरा खयाल है कि यदि आप यहाँ कुछ दिनोंके लिए रुक जायें तो लन्दन जानेके पहले तक आपका स्वास्थ्य[3] भी काफी सुधर जायेगा।

१. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके दिसम्बर, १९११ के कलकत्ता अधिवेशनमें उसके दक्षिण आफ्रिका सम्बन्धी प्रस्तावपर बोलते हुए श्री पोलकने बताया था कि श्री गोखले परिस्थितियोंका प्रत्यक्ष अध्ययन करनेके उद्देश्यसे अगले वर्ष दक्षिण आफ्रिका जाना चाहते हैं। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, २४–२–१९१२।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. देखिए "पत्र : गो० कृ० गोखलेको", पृष्ठ १७१ और १९१।

निकट भविष्यमें संघ-संसदका अधिवेशन होने जा रहा है और अब किसी भी दिन जिस मसविदेकी बात थी सो मसविदा और विधेयक दोनों प्रकाशित कर दिये जा सकते हैं।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ३७७१)की फोटो-नकलसे।

१७४. जोहानिसबर्गमें चेचक

जोहानिसबर्गके अखबार चेचकके आतंकपूर्ण समाचारोंसे भरे पड़े हैं। हमें खेदपूर्वक स्वीकार करना पड़ रहा है कि इसमें अपराध हमारा है। कुछ भारतीय बालकोंको चेचक निकल आई, यह तो कोई चिन्ताकी बात नहीं। किसी समाजमें आकस्मिक रूपसे रोगोंका फूट पड़ना सर्वथा सम्भव माना जा सकता है। परन्तु इन भारतीयोंने रोग फूटनेकी बातको दबा रखा, यह हमारा अपराध है। अब कुछ व्यक्तियोंके अपराधका फल सारे समाजको भुगतना पड़ेगा।

प्रसन्नताकी बात यह है कि नेतागण रोगको उखाड़ फेंकनेमें डॉ० पोर्टरको[2] हार्दिक सहयोग दे रहे हैं। परन्तु यदि लोग नेताओंकी सुननेके लिए तैयार नहीं हुए और उन्होंने अपनी सहायता करनेका उन्हें अवसर ही नहीं दिया तो नेतागण भी कुछ नहीं कर सकेंगे।

हमारा खयाल है कि समाजको उन्नति करनी हो तो उसे इस अपराधके लिए जिम्मेदार अपने व्यक्तियोंका ऐसा तीव्र विरोध करना चाहिए कि एशियाई पंजीयन अधिनियमका डटकर किया गया विरोध भी उसके सामने फीका पड़ जाये। सत्याग्रहका प्रयोग घरमें भी उतना ही प्रभावशाली हो सकता है जितना बाहर। इतना अवश्य है कि घरमें उसका प्रयोग कहीं कठिन होता है। परन्तु सच्चा सत्याग्रही, कठिनाइयाँ कितनी ही भयंकर क्यों न हों, उन्हें देखकर विचलित नहीं होगा, न हो सकता है।

हमपर बहुधा आरोप लगाया जाता है कि हमारा रहन-सहन गन्दा है और रोगको छिपाने या अधिकारियोंको गुमराह करके धोखा देनेमें हम झूठ-सच अथवा उचित-अनुचितकी परवाह नहीं करते। इस बार बीमारीको छिपानेके कारण जोहानिसबर्गमें हमारे शत्रुओंको मौका मिल गया है। समाजको सावधान हो जाना चाहिए कि कहीं ऐसा न हो कि अपने आदमियोंकी बुराईकी ओरसे आँखे मींचकर[3] हम अपने-

१. संघ-संसदका दूसरा सत्र जनवरी २६, १९१२को प्रारम्भ होनेवाला था; विधेयकका पहला वाचन जनवरी ३०को हुआ था; देखिए **इंडियन ओपिनियन,** १३-१-१९१२ तथा ३-२-१९१२।

२. डॉ० सी० पोर्टर, स्वास्थ्य चिकित्साधिकारी, जोहानिसबर्ग।

३. यहाँ मूल अंग्रेजीमें छपाईकी एक भूल थी, जिसे सुधार कर अनुवाद किया गया है।

आपको अपराधी सिद्ध करा बैठें। हमपर जितनी नजर दक्षिण आफ्रिकामें रखी जा रही है उतनी शायद और कहीं नहीं। यदि हम अपना बरताव ऐसा रखेंगे कि हमारे विरुद्ध किसीको कुछ कहनेका मौका न मिले तो इस तीखी नजरका परिणाम अच्छा भी हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-१-१९१२

१७५. भेंट : 'इवनिंग क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

[जोहानिसबर्ग
जनवरी, १५, १९१२]

व्यापारिक परवानों, चेचकका प्रकोप आदि प्रश्नोंके सम्बन्धमें 'इवनिंग क्रॉनिकल' के एक प्रतिनिधिने श्री गांधीसे मुलाकात की।

नगरपालिका अध्यादेशके[1] सम्बन्धमें विशेष आपत्तियोंके बारेमें पूछे जानेपर श्री गांधीने जवाब दिया :

जिन बातोंको लेकर हमें इस अध्यादेशके मसविदेके प्रति आपत्तियाँ हैं, उनमें कुछ ये हैं : कुछ विशेष प्रकारके परवानोंपर नगरपालिकाओंको सत्ता दे दी गई है और उनके निर्णयके विरुद्ध अपीलका अधिकार भी नहीं दिया गया है;[2] नगरपालिका मताधिकारके सम्बन्धमें पुरानी निर्योग्यता फिरसे लागू कर दी गई है;[3] नानबाईकी दूकानोंमें नौकरी करनेवाले भारतीयों तथा अन्य एशियाइयोंके लिए योग्यता निर्धारित कर दी गई है।[4]

इनमें से पहली और तीसरी बातें बिलकुल नई हैं; दूसरी शिकायत पुरानी है;[5] फिर भी मैं समझता हूँ, जब-कभी कानूनी रूपमें इसे दुहराया जायेगा या इसपर फिरसे आग्रह किया जायेगा, ब्रिटिश भारतीय निश्चय ही इसके विरुद्ध आवाज उठायेंगे। स्वभावत: भारतीय आशा करते हैं कि किसी-न-किसी दिन यह पूर्वग्रह, जिसका कोई औचित्य नहीं है, समाप्त होगा। और चूँकि ऐसे पूर्वग्रहोंकी समाप्ति ही उनका लक्ष्य

१. एशियाइयोंको प्रभावित करनेवाले खण्डोंके लिए देखिए परिशिष्ट ७ (क)।

२. तात्पर्य अध्यादेशके खण्ड ९१ से है, जो नगर-परिषदोंको व्यापार तथा फेरी-सम्बन्धी परवाने देनेसे इनकार करनेकी सत्ता देता था, और सम्बन्धित लोगोंको उनके निर्णयोंके विरुद्ध अपीलका अधिकार भी नहीं देता था।

३. देखिए अध्यादेशका खण्ड ११४।

४. देखिए अध्यादेशका खण्ड ९२; और "साम्राज्य-सरकारसे क्या अपेक्षा करें?", पृष्ठ १९८।

५. ट्रान्सवालमें भारतीयोंको नगरपालिका मताधिकारसे वंचित करनेका प्रयत्न सन् १९०३ में ही प्रारम्भ हो गया था, और फिर सन् १९०४ में भी। देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३९७-९८ तथा खण्ड ४, पृष्ठ २०५-०६।

है, इसलिए उन्हें ऐसा लगता है कि वे भेदभावपूर्ण कानूनोंको स्थायित्व प्रदान करनेके किसी भी प्रयत्नको निर्विरोध नहीं जाने दे सकते।

[प्रश्नकर्ता]: और श्री गांधी, एशियाई बाजारोंकी व्यवस्थाके[1] बारेमें आपका क्या खयाल है? क्या ये उन बातोंमें से नहीं हैं जिनपर आपके लोगोंको आपत्ति है?

[गांधीजी:] अवश्य हैं! बल्कि इनके खिलाफ तो एक विरोधपत्र भी भेजा जा चुका है। यह सच है कि बाजारोंसे सम्बन्धित खण्ड मात्र क्षमतादायी (एनैब्लिंग) खण्ड हैं, और ब्रिटिश भारतीयोंको इन बाजारोंमें रहनेपर बाध्य नहीं किया जा सकता; परन्तु इसमें जो भावना निहित है, वह स्पष्ट है। मंशा यह है कि एशियाइयोंको जबरदस्ती बाजारोंमें भेज दिया जाये। किन्तु मुझे विश्वास है कि जब-कभी कोई ऐसा प्रयास किया जायेगा, भारतीय उसका विरोध करेंगे।

चेचक

[प्रश्नकर्ता:] परन्तु, श्री गांधी, चेचक फैलने तथा एशियाइयों द्वारा उसके मरीजोंके छिपाये जानेके बारेमें आपका क्या कहना है? क्या इससे यह नहीं व्यंजित होता कि यूरोपीयोंकी सुरक्षाके लिए ऐसी कोई कार्रवाई आवश्यक है?[2]

आपका यह प्रश्न बहुत उचित है। निस्सन्देह, हमारे बीच समाजको कलंकित करनेवाले ऐसे कुछ लोग हैं और हमें उनके गलत कामोंके लिए दण्ड भी भोगना पड़ता है; परन्तु डॉक्टर पोर्टरके सौजन्यसे इस बातका पर्याप्त प्रमाण जनताके सामने प्रस्तुत हो गया है कि समाजके नेताओंने छिपाये गये मरीजोंका पता लगानेमें उनके साथ हार्दिक सहयोग किया था। डॉक्टर पोर्टरने यह भी स्वीकार किया है कि उनके सहयोगके बिना वे इन मरीजोंका पता नहीं लगा सकते थे। आपको शायद याद होगा कि जब अस्वच्छ क्षेत्र स्वामित्वहरण आयोग (इनसैनिटरी एरिया एक्सप्रोप्रिएशन कमीशन) के सामने गवाही दी जा रही थी, उस समय इस आशयका डॉक्टरी प्रमाण पेश किया गया था कि ब्रिटिश भारतीयों या अन्य लोगोंके बीच जो सफाईके प्रति लापरवाही दिखाई जाती है, उसे दूर करनेका सफल तरीका यह नहीं है कि उन्हें आम लोगोंसे कोई सम्बन्ध नहीं रखनेवाले बाजारों या ऐसे स्थानोंमें भेज दिया जाये जिनकी ठीक तरहसे सरकारी देखभाल न की जा सकती हो। इस समस्याको हल करनेका सही उपाय यह है कि उनकी गतिविधिको मुक्त छोड़ दिया जाये, किन्तु सफाई-सम्बन्धी उपनियमोंको कारगर ढंगसे लागू किया जाये, और यदि ये उपनियम अपर्याप्त हों तो उनके क्षेत्रको इतना व्यापक कर दिया जाये कि उनमें सभी प्रकारके मामले आ जायें।

१. अध्यादेशके खण्ड ६६ में नगर-परिषदोंको नये बाजार बसाने या पुरानोंको बन्द करनेका अधिकार दिया गया था; देखिए परिशिष्ट ७ (क)। इस प्रकारका पहला कानून मिल्नरका बाजार-नोटिस था; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३१४-१५।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

मैं १८ वर्षसे अधिक समयके निजी अनुभवके आधारपर कह सकता हूँ कि चेचकके भयके निवारणका यह सर्वोत्तम और एकमात्र उपाय है।[1] नगरोंसे दूर किसी कोनेमें बसी आबादीकी निगरानी ठीक तरह नहीं हो पाती। तब, जरा सोचिए कि यदि भारतीय [मुख्य आबादीसे] चार-पाँच मील दूर ऐसी ही कच्ची देखरेखमें रहते होते, तो क्या हालत होती? चेचकके हर मरीजको लोग सफलतापूर्वक — समाजके नेताओंसे भी — छिपा लेते और फिर डॉ० पोर्टरके लिए महामारीके संक्रमणको रोकना अत्यन्त कठिन कार्य हो जाता। मुझे पूरा विश्वास है कि पृथक्करणकी नीति कभी सफल नहीं होगी।

मेरी समझसे तो होगा यह कि एक समय ऐसा आयेगा, जब सर्वसाधारण यूरोपीय जनसमुदाय अपने भारतीय सह-नागरिकोंकी समृद्धिमें भी उतनी ही दिलचस्पी लेगा जितनी कि अपनी समृद्धिमें लेता है और यदि उनमें कुछ कमजोरियाँ हों तो वह उनके प्रति समुचित सहिष्णुता दिखाते हुए उन्हें उत्तरोत्तर अच्छे नागरिक बनानेका भी आग्रह रखेगा।

शाही हस्तक्षेप

इसके बाद प्रतिनिधिने श्री गांधीसे पूछा कि हाल ही में लॉर्ड सभामें एक प्रश्नके उत्तरमें लॉर्ड एमॉटने ऐसा संकेत दिया है कि साम्राज्य-सरकारने नगरपालिका अध्यादेशके मसविदेमें संशोधन करानेके लिए हस्तक्षेप किया है[2], सो उसके ऐसा करनेके अधिकारके सम्बन्धमें आपका क्या विचार है। श्री गांधीने कहा कि मेरे विचारसे तो उसे हर तरह से ऐसा करनेका अधिकार प्राप्त है।

वास्तवमें हमारा विचार यह है कि शाही सरकारका रुख अत्यधिक सावधानीका रहा है और उसने गलती संघ-सरकारके पक्षमें की है। यह ध्यान रखना चाहिए कि संघ अब भी अपनी शैशवावस्थामें है; और शाही सरकारकी भारतीयोंके प्रति बड़ी जिम्मेदारी है। मैं अभी-अभी अंग्रेजी समाचारपत्रका एक उद्धरण पढ़ रहा था। आप भी उसे पसन्द करेंगे। उसमें लिखा है कि सम्राट् जॉर्जकी भारत-यात्राका एक मुख्य कारण यह था कि वे स्वशासित उपनिवेशोंके लोगोंकी कल्पनाको एक बार झकझोर देना चाहते थे ताकि वे भारतकी महत्ताको समझ सकें और उन्हें ज्ञात हो जाय कि वह भी उतनी ही प्रतिष्ठाका अधिकारी है जितनी प्रतिष्ठाके अधिकारी साम्राज्यके अन्य हिस्से हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–१–१९१२

१. मूलमें इस वाक्यका अर्थ स्पष्ट नहीं होता। यह अर्थ अनुमानसे दिया गया है।

२. लॉर्ड लैमिंग्टन द्वारा लॉर्ड सभामें पूछे गये प्रश्नका उत्तर देते हुए ६ दिसम्बर, १९११ को लॉर्ड एमॉटने कहा था कि नगरपालिका-अध्यादेशका मसविदा नगरपालिका परिषद्की विशेष समितिके विचारार्थ पेश किया गया है, और समितिकी रिपोर्ट अगले वर्षके जनवरी महीनेसे पूर्व, जब उसकी फिर बैठक होगी, तैयार नहीं हो सकती। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, ६–१–१९१२।

१७६. प्लेग

इस बातकी पूरी आशा है कि पॉइंटमें जो प्लेग फूट पड़ा है वह डर्बन नगरमें नहीं फैलेगा। मंगलवारसे किसी नये व्यक्तिके बीमार होनेकी सूचना नहीं मिली है। हमारा खयाल है कि बन्दरगाहके स्वास्थ्य-अधिकारी और स्वास्थ्य चिकित्सा अधिकारी इस बातका भरसक प्रयत्न कर रहे हैं कि रोग और न फैले। एक यूरोपीय तथा एक रंगदार व्यक्तिकी मृत्युसे स्पष्ट है कि इस मामलेका सम्बन्ध सभी लोगोंसे है। भारतीय नेताओंने जन-स्वास्थ्य विभाग (पब्लिक हॅल्थ डिपार्टमेंट)के साथ मिलकर काम करनेके लिए तुरन्त अपनी एक समिति बनाकर सही रुख अख्तियार किया है। ऐसे मामलोंमें तो साफ-सीधे और खुले तरीकोंसे काम लेनेसे ही सफलता मिल सकती है। यदि भारतीय समाज और निगमके बीच पारस्परिक सहयोगका भाव व्याप्त हो और दुर्भाग्यवश महामारीका कोई भयंकर प्रकोप हो जाये तो उस हालतमें यहाँ रहनेवाले भारतीयोंको डरनेकी आवश्यकता नहीं है। तब वे आश्वस्त रह सकते हैं कि उनके कल्याणके लिए आदमीके हाथमें जो-कुछ है सो सब किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-१-१९१२

१७७. जोहानिसबर्गमें चेचक

इसी सप्ताह चेचकके सम्बन्धमें और ज्यादा जाँच-पड़ताल की गई है। यथासम्भव मरीजको छुपा रखनेकी भारतीयोंकी आदतके कारण इस जाँचके काममें स्वास्थ्य-विभागको बड़ी लगन और परिश्रमसे काम करना पड़ता है। इनका हाथ बँटानेमें श्री काछलिया, इमाम साहब[1] और दूसरे नेताओंकी समितिने बेहद मेहनत की है। कोई बीमार है, इस बातकी खबर लगते ही उसे सेवा-शुश्रूषाके लिए अस्पताल ले जाते हैं। [इस जांचके सिलसिलेमें] जिस मलायीको पहले पकड़ा गया था और बादमें जिसकी मृत्यु हो गई उसके निकट-सम्बन्धियोंमें और भी कुछ लोग बीमार हुए हैं। भारतीय धोबियों और साग-भाजी बेचनेवालोंके साथ सम्बन्ध रखनेवाले गोरोंने उनसे अपना व्यवहार कम कर दिया है। सब मिलाकर रोजगारको भारी धक्का पहुँचा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-१-१९१२

१. इमाम अब्दुल कादिर बावजीर अरब माँ-बापसे उत्पन्न एक भारतीय, जो दक्षिण आफ्रिकामें बस गये थे; हमीदिया मसजिदके पेश इमाम और हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्ष; गांधीजीके दक्षिण आफ्रिका छोड़ देनेके बाद फीनिक्स आश्रममें जा बसे और फिर गांधीजीके अनुरोधपर उनके साथ रहनेको साबरमती आश्रम आ गये। आपने दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रह आन्दोलनमें भी भाग लिया; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३६८-६९।

१७८. पत्र: ई० एफ० सी० लेनको

[जोहानिसबर्ग][1]
जनवरी २९, १९१२

प्रिय श्री लेन,

मेरा खयाल है कि असाधारण 'गज़ट' की वह प्रति जिसमें प्रवासी विधेयक[2] दिया गया है आपके सहज सौजन्यसे ही प्राप्त हुई है। मुझे मालूम हुआ है कि केन्द्रीय समाचार एजेंसीको 'गज़ट' का यह अंक अभीतक नहीं मिला है।

देखता हूँ कि विधेयककी जो प्रति मैंने लगभग एक महीने पहले देखी थी, उससे असाधारण 'गज़ट' में प्रकाशित विधेयक कुछ हद तक भिन्न है। मैं नहीं जानता कि जिन परिवर्तनोंको[3] मैंने जरूरी वताया था उन्हें दाखिल करनेका जनरल स्मट्सका इरादा है या नहीं। खण्ड ५ के उपखण्ड (च)[4] और (छ)[5] सर्वथा नये हैं और मेरी रायमें न्यायके सिद्धान्तोंके सर्वथा विरुद्ध हैं। यह बात बिलकुल बेतुकी लगती है कि जिस प्रवासी अधिकारीको न कानूनी प्रशिक्षण मिला है और न जिसमें

१. अपनी सन् १९१२ की डायरीके अनुसार गांधीजी इस तारीखको जोहानिसबर्गमें थे।

२. सन् १९११ का संघ प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयक उसी साल अप्रैलमें वापस ले लिया गया था; देखिए परिशिष्ट २। यहाँ उस नये विधेयकका उल्लेख है जो भारतीयोंकी आपत्तियोंको दूर करनेके खयालसे तैयार किया गया था; उद्धरणोंके लिए देखिए परिशिष्ट १३। यह नया विधेयक गांधीजीको, गज़टमें प्रकाशित होनेके पूर्व २२ दिसम्बर, १९११ को, जब वे लेनसे मिले थे, दिखाया गया। देखिए "तार: गृह-मन्त्रीके निजी सचिवको", पृष्ठ १९७। इस विधेयकमें जो अन्य परिवर्तन किये गये वे इस तारीखके बादके थे।

३. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१०।

४. खण्ड ५ (च) उन व्यक्तियोंको परिभाषित करता था जो निषिद्ध प्रवासी नहीं थे और जो, यदि खण्ड ४ उनके आड़े न आये तो, संघकी सीमामें प्रवेश कर सकते थे। खण्ड ४ में निषिद्ध प्रवासियोंके प्रकारोंका विवरण था। हरएक भावी प्रवेशार्थीके लिए यह लाजिमी था कि वह प्रवासी अधिकारी द्वारा चुनी हुई भाषामें लेखनकी परीक्षा पास करे (परिशिष्ट १३) और इस बारेमें भी उसकी दिलजमई करे कि वह निषिद्ध प्रवासी नहीं हुआ है।

५. जो एशियाई अपना प्रवेशाधिकार सिद्ध कर चुके हों, उनकी सन्तान या पत्नी होनेके आधारपर यदि कोई प्रवेशका दावा पेश करे तो खण्ड ५ (छ) प्रवासी अधिकारीको उससे उक्त रिश्तेका प्रमाण माँगनेकी सत्ता देता था। उसे यह सत्ता प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (१९०३ के नियम ३०) के संशोधित रूप १९०६ के अधिनियमके ३ से प्राप्त हुई थी। सर्वोच्च न्यायालयकी नेटाल शाखाके न्यायमूर्ति श्री ड्यूक विल्सनने नाथलियाके मुकदमेका फैसला सुनाते हुए यह स्वीकार किया था कि प्रवासी प्रतिबन्धक अधिकारीको स्पष्टतया अनियन्त्रित विवेकाधिकार दे दिया गया था। — (**इंडियन ओपिनियन**, ३-२-१९१२) प्रवासी अधिकारियोंको अपनी दिलजमईके विचारसे इस बातकी जानकारी हासिल कर लेनेका हक भी दिया गया था कि वे पत्नियाँ कहीं "निषिद्ध प्रवासियों" के दायरेमें तो नहीं आ जातीं; देखिए "भारतीय पत्नियाँ", पृष्ठ ११५-१६ और "एक क्षोभकारी मामला", पृष्ठ १५३-५४।

न्यायकर्ताकी-सी समझ है, उसके सम्मुख एक व्यक्ति अपना अधिवासी होना सिद्ध करे; इतना ही नहीं, इसके सम्बन्धमें उसे सन्तुष्ट भी कर दे। और भी यह बात मेरी समझमें नहीं आई कि जिस स्त्रीको कोई व्यक्ति अपनी पत्नी और जिस बच्चेको अपना बच्चा बताता है, वह स्त्री और वह बच्चा उसीके हैं या नहीं, इसके निर्णयका अधिकार प्रवासी अधिकारीको क्यों सौंपा जाना चाहिए। यह नई बात है और वर्तमान कानूनी स्थिति इससे हमारे विपक्षमें हो जाती है।

इसी प्रकार, खण्ड ७ ट्रान्सवालके शिक्षित भारतीयोंपर प्रतिबन्ध लगा देगा; उदाहरणके लिए, वे मौजूदा शिक्षा-परीक्षा पास करनेके बाद भी, नेटालमें प्रवेश नहीं कर सकेंगे। यह बात भी मौजूदा कानूनी स्थितिको बदल देती है; यह सरासर अन्याय है। समुद्री रास्तेसे होनेवाले प्रवेशकी रोकथामके लिए लगभग एक असम्भव-सी शिक्षा-परीक्षाका[1] रखा जाना एक बात है, और उस परीक्षाको अन्तरप्रान्तीय प्रवासके लिए लागू करना दूसरी बात। मैं आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी आकर्षित कर रहा हूँ कि पिछले वर्षका विधेयक मौजूदा स्थितिमें[2] हस्तक्षेप नहीं करता था।

खण्ड २५, उपखण्ड २, मसविदेके उस तीन-साला नियमको देखते हुए फिर भी अच्छा है जो आपने मुझे अवलोकनार्थ दिया था; यद्यपि वह अभीतक अत्यधिक कठोर है। मैं बेशक यह मानता हूँ कि जो एशियाई इस समय दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए हैं उन्हें अपने लिए स्थायी अधिवास प्रमाण-पत्र माँगनेका अधिकार है; उक्त प्रमाणपत्र पानेके लिए उनका प्रवासी अधिकारीकी कृपापर छोड़ दिया जाना उचित नहीं है। यह सच है कि धारा केवल अनुमतिपरक है, और प्रमाणपत्र लेनेके लिए कोई भी बाध्य नहीं है, परन्तु इसका असर निश्चय ही यह होगा कि एशियाइयोंको, खासकर गरीब वर्गके एशियाइयोंको, लगभग मजबूर होकर प्रमाणपत्रोंकी याचना करनी पड़ेगी और तब उनके कागजोंपर मनमाना अनुपस्थिति-काल मुकर्रर कर दिया जायेगा।

इसलिए मैं आशा करता हूँ कि ये तीन मुद्दे सन्तोषजनक रूपसे हल किये जायेंगे। यद्यपि मैंने अपने कई सहयोगियोंसे इसपर सलाह-मशविरा किया है, लेकिन अभी-तक मैंने कोई सार्वजनिक कदम नहीं उठाया है, और ऐसा करनेका मेरा तबतक कोई इरादा भी नहीं है जबतक कि जनरल स्मट्सके इरादेके बारेमें आपसे खबर नहीं मिल जाती। यदि असुविधा न हो तो कृपया मुझे तार द्वारा सूचित करें कि जो मुद्दे मैंने उठाये हैं क्या उनपर जनरल स्मट्स अनुग्रहपूर्वक विचार करेंगे।

हृदयसे आपका,

१. खण्ड ७ से, संघमें रहनेवाले एशियाइयोंकी एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें आने-जानेकी आजादी पूरी तौरपर खत्म हो जाती थी। यदि वे किसी दूसरे प्रान्तमें जाना चाहते थे तो उनके लिए संघकी प्रवास सम्बन्धी कड़ी शिक्षा-परीक्षामें उत्तीर्ण होना अनिवार्य था।

२. वापस ले लिये गये विधेयकके खण्ड ७ में अन्तरप्रान्तीय आवागमनके बारेमें कुछ बातें दी हुई हैं; उसे खण्ड ६ के साथ मिश्रित करके पढ़ना होगा; देखिए खण्ड १० पृष्ठ ५५८-५९। इसमें अन्तरप्रान्तीय प्रवासके लिए किसी प्रकारकी शैक्षणिक परीक्षाकी कोई बात नहीं रखी गई है, परन्तु गांधीजीके मनमें उस समय भी इसके सम्बन्धमें सन्देह बना हुआ था। यह बात ग्रेगरोवस्कीके नाम लिखित उनके पत्रसे स्पष्ट है। देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४४४-४६।

पुनश्च :

आपको लिखे अपने पत्रपर हस्ताक्षर करनेके बाद आरेंज फ्री स्टेट के कानूनोंका अध्याय ३३ मैंने फिर पढ़ा। मैंने देखा कि संघ प्रवासी विधेयकके खण्ड २८ के[1] उपखण्ड २ की शब्द-योजना, पिछले साल सोचे गये उसके मूल रूपसे कुछ भिन्न है। वे प्रवासी, जो शिक्षा-परीक्षा पास करके फ्री स्टेटमें प्रविष्ट हों, अचल सम्पत्तिकी अपने नाम रजिस्ट्री न करा पाने या व्यापारिक धन्धा या खेती न कर सकनेकी निर्योग्यताको भले बरदाश्त कर लें, किन्तु ऐसा नहीं होना चाहिए कि उन्हें शपथपूर्वक खण्ड ८ में सूचित ज्ञापन देना पड़े। खण्ड ८ का बादवाला हिस्सा पढ़नेसे आप समझ जायेंगे कि मेरा मतलब क्या है।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६०१) की फोटो-नकलसे।

१७९. तार: गृह-मन्त्रीके निजी सचिवको[2]

[लॉली]
जनवरी ३०, १९१२

गृह-मन्त्रीके निजी सचिव
केप टाउन

प्रवासी विधेयकपर कल पत्र[3] भेजा, परन्तु आजके प्रथम वाचनको देखते हुए जनरल स्मट्सका ध्यान तुरन्त इस बातकी ओर दिलाना चाहता हूँ कि खण्ड ५, ७, २५ से कानूनी स्थितिमें गड़बड़ी पैदा होती है, क्योंकि उनके अनुसार अधिवासियों और स्त्री-बच्चोंके अधिकारपर अफसरोंका निर्णय अन्तिम, ट्रान्सवालसे केप या नेटालमें प्रवेश करनेवाले भारतीयोंके लिए शिक्षा-परीक्षा और कठिन, नेटालमें भारतीयोंके स्थायी अधिवास प्रमाणपत्र पानेसे सम्बन्धित अधिकार सन्दिग्ध। इसके अतिरिक्त लगता है खण्ड २८का[4] मंशा फ्री स्टेटमें प्रवेश करनेवाले शिक्षित प्रवासीसे अध्याय ३३के खण्ड ८ के

१. यह खण्ड स्पष्ट रूपसे घोषित करता है कि कोई भी एशियाई प्रवासी संघका इमला-इम्तिहान पास कर लेनेके पश्चात् भी ऑरेंज फ्री स्टेट कानूनके मातहत ही रहेगा। और इस कानूनकी रूसे आनेवाले एशियाइयोंके लिए यह लाजिमी होगा कि वे नये सिरेसे पंजीयन करायें। इस अधिनियमके ७वें और ८वें अनुच्छेदोंके अनुसार एशियाई लोग खेती करने या व्यापार करनेके लिए उपनिवेशमें नहीं बस सकते; और उन्हें इस आशयका ज्ञापन शपथ-पूर्वक देना पड़ता था। देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ५०१-०२ और ५०३-०४; तथा "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१० और खण्ड १०, पृष्ठ ५३५-३७।

२. उत्तरमें गांधीजीको निम्नलिखित तार भेजा गया: "तीस जनवरी। आपका तार मिला। प्रवासी विधेयकका द्वितीय वाचन ८ फरवरीसे पूर्व नहीं। तारमें उल्लिखित अन्य मुद्दोंपर विचार किया जा रहा है।" (एस० एन० ५६०५)।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

४. देखिए पाद-टिप्पणी १।

अन्तर्गत ज्ञापन लेना। मुझे आशा है कि इन मुद्दोंपर जनरल स्मट्स अनुकूल विचार करेंगे इसलिए सार्वजनिक कार्रवाई रोक दी है। तार द्वारा उत्तरकी प्रतीक्षा। कृपया यह भी सूचित करें कि दूसरा वाचन कब होगा।[1]

गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६०४) तथा (एस० एन० ५६१९) की फोटो-नकलसे भी।

१८०. तार: गृह-मन्त्रीके निजी सचिवको

[लॉली]
फरवरी १, १९१२

लम्बे उत्तरके[2] लिए जनरल स्मट्सको धन्यवाद; दुःख है कि वह असन्तोषप्रद है। मुझे विश्वास है कि निकाय (बोर्ड) के नियन्त्रणसे भारतीय सन्तुष्ट नहीं होंगे, विशेषकर निकायोंके पिछले अनुभवको देखते हुए। प्रजाको न्यायिक न्यायाधिकरणों (ज्यूडिशियल ट्रिब्यूनल) में अपीलके अधिकारसे वंचित करनेपर वर्तमान कानूनी अधिकारोंमें गड़बड़ी अवश्य होगी। यह कहना भी तर्क-सम्मत नहीं कि खण्ड ७ के अन्तर्गत मिले वर्तमान अधिकारोंमें गड़बड़ी नहीं होगी, क्योंकि मौजूदा परीक्षा पास करके शिक्षित भारतीय आज नेटाल या केपमें जाकर बस सकते हैं। यह आशा कैसे की जा सकती है कि वे इस कानूनी अधिकारके बदले प्रशासकीय मर्जीके मोहताज होनेकी बात मान लेंगे, भले ही उसमें न्यायका पुट ही क्यों न हो? नेटालके भारतीयों-का अनुपस्थितिके अस्थायी अनुमतिपत्र स्वीकार करना स्पष्ट ही अपनी कानूनी स्थितिमें परिवर्तन स्वीकार करना है। इस समय जारी किये जानेवाले प्रमाणपत्रोंमें सम्बन्धित व्यक्तिका पूरा वृत्तान्त रहता है और यदि उनको किसी दूसरेके नामपर किया जाये तो पता चल ही जायगा। जनरल स्मट्स निश्चय ही नहीं चाहेंगे कि प्रतिष्ठित भारतीय फ्री स्टेट कानूनके खण्ड ८ के अन्तर्गत अपना शिनाख्ती ब्योरा दर्ज करायें। उसे दर्ज कराये बिना वे व्यापार या खेती करनेमें असमर्थ रहेंगे, क्योंकि यह केवल उनके लिए माना जाता है जो फ्री स्टेटमें घरेलू नौकरियोंके लिए बसना चाहते हैं। शिनाख्ती ब्योरा दर्ज कराना संघर्षकी पूरी भावनाके विरुद्ध जान पड़ता है, संघर्ष आत्म-सम्मानकी खातिर ही शुरू किया गया था। आशा है, यह उचित परिवर्तन स्वीकार होगा और संघर्षकी भयावह

१. द्वितीय वाचन ३० मईसे पहले नहीं हुआ।
२. देखिए परिशिष्ट १४।

पुनरावृत्ति टाली जा सकेगी। उत्तर[1] आने तक सार्वजनिक कार्रवाई रोक रहा हूँ।[2]

गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६०८) और (एस० एन० ५६१९) की फोटो-नकलसे भी।

१८१. एक टिप्पणी[3]

[फरवरी २, १९१२ या उसके बाद]

फौरी

ब्रिटिश भारतीय यूनियनका पता है — मिलर्स बिल्डिंग्स, ६७, हैनोवर स्ट्रीट, केप टाउन।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६११) की फोटो-नकलसे।

१८२. नया प्रवासी विधेयक

संघ प्रवासी विधेयक (यूनियन इमिग्रेशन बिल) प्रकाशित हो गया है। इसका एक प्रयोजन ट्रान्सवालके भारतीय सत्याग्रहियोंको सन्तुष्ट करना भी है। कुछ दृष्टियोंसे यह गत वर्षके विधेयकसे अच्छा है। परन्तु इसके द्वारा जनरल स्मट्सके वचनका पूर्णतया पालन नहीं होता। जनरल स्मट्सने इस बातकी जिम्मेदारी ली थी कि वे सत्याग्रहियोंकी इच्छा पूरी करनेके लिए बनाये जानेवाले किसी भी सामान्य विधेयकके द्वारा समस्त दक्षिण आफ्रिकामें प्रचलित कानूनी स्थितिमें कोई खलल नहीं आने देंगे।[4]

अन्य बातोंके अतिरिक्त वर्तमान कानूनी स्थिति यह है कि कमसे-कम केप और ट्रान्सवालमें विहित प्रवासियोंके अधिवास और उनके नाबालिग बालकों और पत्नियोंके अधिकार उच्चतम न्यायालयके निर्णयपर आधारित हैं; ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय शिक्षण-सम्बन्धी मामूली-सी परीक्षा पास करके केप या नेटालमें आसानीसे प्रवेश पा

१. देखिए पृष्ठ २२३ की पाद-टिप्पणी १।

२. गांधीजीने अपने वचनका अक्षरशः पालन किया; यहाँतक कि ये तार इंडियन ओपिनियनके, समसामयिक अंकोंमें भी प्रकाशित नहीं किये गये।

३. यह टिप्पणी गांधीजीने एक तारपर लिखी थी जो उन्हें मकादम उडर्स्टोकने केप टाउनसे २ फरवरीको भेजा था और जिसमें लिखा था: "प्रवासी [विधेयक] का द्वितीय वाचन बृहस्पतिवारको, प्रस्ताव तारसे भेजें। यूनियनकी आम सभा रविवारको।"

४. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ४७।

सकते हैं और नेटालके भारतीयोंको कुछ समय पहले तक वहाँ अपना निवास प्रमाणित कर देनेपर अधिवासका प्रमाणपत्र अधिकारके रूपमें मिलता रहा है। नये विधेयकके अन्तर्गत, अधिवासी एशियाइयों और उनकी पत्नियों तथा बालकोंके अधिकारोंपर विचार करनेके लिए प्रवासी अधिकारी ही उच्चतम न्यायालयके रूपमें प्रतिष्ठित होगा; ट्रान्सवालके शिक्षित भारतीयोंको नये विधेयकके अनुसार केप या नेटालमें जानेके लिए अधिक कठिन परीक्षा पास करनी पड़ेगी और नेटालके भारतीय अधिवास प्रमाणपत्रकी माँग अधिकारके रूपमें नहीं कर सकेंगे।[1] ये सब निर्योग्यताएँ नई हैं और सत्याग्रहियोंसे यह आशा नहीं की जा सकती कि वे इन्हें स्वीकार कर लेंगे, परन्तु हमारा खयाल है कि ये बातें भूलसे छूट गई हैं और जनरल स्मट्स समितिमें विचार करते समय त्रुटियोंको सुधार लेंगे। फ्री स्टेटकी कठिनाई पिछले साल दिये गये सुझावके अनुसार हल की जा रही है[2]; फिर भी इतना ध्यान तो रखना ही पड़ेगा कि जो भारतीय शिक्षित प्रवासीकी हैसियतसे फ्री स्टेटमें प्रविष्ट हो उसे फ्री स्टेटके संविधानके अध्याय ३३ के खण्ड ८ के अनुसार कोई ज्ञापन देनेके लिए बाध्य न किया जाये। यदि ये बातें साफ कर दी जायें तो हम समझते हैं कि सत्याग्रहियोंकी सारी माँगें पूरी हो जायेंगी।

परन्तु नेटाल और केपवालोंकी सामान्य आपत्तियाँ इसपर भी शेष रह जाती हैं।[3] शिक्षा-सम्बन्धी नई परीक्षाके विरुद्ध उनका शिकायत करना न्यायसंगत होगा। कमसे-कम उन्हें इतनी गारंटी तो दे ही दी जानी चाहिए कि कुछ शिक्षित भारतीयोंको शैक्षणिक जाँचमें उत्तीर्ण किया जायेगा।

इसके बाद भी एशियाइयोंकी दृष्टिसे विधेयकमें असन्तोषके योग्य कई बातें रह जायेंगी। विभिन्न प्रान्तोंमें आने-जानेपर प्रतिबन्ध एक बड़ी शिकायतका कारण बना रहेगा।[4] ट्रान्सवाल या फ्री स्टेटमें वैध निवासियोंपर भी भूमि आदिके स्वामित्वसे सम्बन्धित निर्योग्यता भारतीयों और अन्य एशियाइयोंकी समृद्धिके मार्गकी एक बड़ी

१. फरवरी ३, १९१२ के इंडियन ओपिनियनके गुजराती विभागमें, सभी भारतीयोंके लिए, एक नोटिस प्रकाशित हुआ था जिसका मसविदा अनुमानतः गांधीजीने तैयार किया था। नोटिसमें कहा गया था कि "केप या नेटालमें रहनेवाले ऐसे किसी भी भारतीयको फिलहाल अपना प्रान्त नहीं छोड़ना चाहिए, जिसके पास सही अधिवास-प्रमाणपत्र न हो।"

२. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ५३५-३७ और "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ९-१०।

३. फरवरी ४ को नेटाल भारतीय कांग्रेसकी एक सभामें (क) प्रवासी विधेयक तथा उसके अन्तर्गत प्रदत्त विस्तृत प्रशासनिक अधिकारों और (ख) अधिवास और विवाह तथा वल्दियतके अत्यन्त प्राविधिक मामलोंके सम्बन्धमें प्रवासी अधिकारीको दिये गये विवेकाधिकारका विरोध करते हुए प्रस्ताव पास किये गये। सभाने नेटालवासी भारतीयोंके इस अधिकारकी भी माँग की कि उन्हें सरकार स्थायी अधिवास-प्रमाणपत्र दे। उसमें शिक्षा-परीक्षा, अन्तरप्रांतीय प्रवासपर प्रतिबन्ध तथा उन नेटालवासी भारतीयोंके अधिकार छीने जानेके प्रति विरोध प्रकट किया गया, जो उस प्रान्तमें अपना तीन सालका अधिवास सिद्ध कर सकते थे।

४. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ २१०-११ तथा गृहमन्त्रीके निजी सचिवके नाम तार पृष्ठ २१२-१३ और २१३-१४।

बाधा बनी रहेगी। आखिर ये भी तो उसी दक्षिण आफ्रिकी राष्ट्रके अंग हैं जो कि इस समय निर्माणकी प्रक्रियाओंमें से गुजर रहा है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९१२

१८३. स्व० श्री अब्दुल्ला हाजी आदम

नेटालके भारतीय समाजके महानतम व्यक्तियोंमें से एक उठ गया। दादा अब्दुल्ला ऐंड कं० की प्रसिद्ध पेढ़ीके मालिक श्री अब्दुल्ला हाजी आदम झवेरी[1] ५८ वर्षकी अवस्थामें गत सोमवारको अपनी विधवा पत्नी और समस्त भारतीय समाजके अतिरिक्त, अनेक यूरोपीय मित्रोंको शोकाकुल छोड़कर सिधार गये। नेटालके भारतीयोंके राजनीतिक और व्यापारिक जीवनसे उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। वे नेटालमें आकर पहले-पहल बसनेवाले स्वतन्त्र भारतीयोंमें से एक थे। वे स्व० अबूबकर आमदके[2] आनेके कुछ ही दिनों बाद यहाँ आये थे। श्री अब्दुल्ला हाजी आदम और उनके साझीदार गत शताब्दीके अन्तिम दस वर्षोंमें दक्षिण आफ्रिकाके शायद सबसे बड़े भारतीय कारोबारके मालिक थे। एक समय तो उनकी पेढ़ीकी शाखाओंकी संख्या शायद पन्द्रह तक पहुँच गई थी और इंग्लैंड, जर्मनी तथा भारतके साथ उनका हजारों पौंडका व्यापार होता था। दक्षिण आफ्रिकामें वे पहले ही भारतीय थे जिन्होंने जहाजोंकी खरीदका काम शुरू किया। 'कूरलैंड' और 'खदीब' नामक जहाज उन्होंने खरीद लिये थे। श्री अब्दुल्ला हाजी आदमकी दक्षता जैसी व्यापारमें बढ़ी-चढ़ी थी वैसी ही राजनीतिक मामलोंमें भी थी। नेटाल इंडियन कांग्रेसके वे संस्थापक अध्यक्ष थे। अपनी मातृभाषामें उनकी वक्तृत्व-शक्ति भी ख़ासी थी। यद्यपि उन्होंने अंग्रेजी काम करते-करते ही सीखी थी, परन्तु वे अंग्रेजीमें आसानीसे घंटों बहस-मुबाहिसा कर सकते थे। उनके यूरोपीय मित्र यह देखकर चकित रह जाया करते थे कि अपनी बातको सिद्ध करनेके लिए वे कहाँ-कहाँसे कैसी-कैसी युक्तियाँ और उपयुक्त उदाहरण खोज निकालते थे। वे कई बार नेटाल सरकारके समक्ष शिष्ट-मण्डलोंके नेताके रूपमें गये थे — विशेषत: स्व० सर जॉन रॉबिन्सनके[3] प्रधान-मन्त्रित्वकालमें। उन्होंने बीमारीकी हालतमें भी राजतिलकके उत्सवका बहिष्कार करनेके आन्दोलनमें प्रमुख

१. इन्होंने सन् १८९३ में गांधीजीको अपना मामला एक अंग्रेज वकीलको समझानेके लिए बुलाया था।

२. अबुबकर आमद झवेरी; ट्रान्सवालमें प्रारम्भमें ही बसनेवाले भारतीयोंमें से एक; रेशमी और सजावटके सामानोंके प्रमुख व्यापारी; और ट्रान्सवालके एकमात्र भारतीय, जिनके नामपर वहाँ जमीनकी मिल्कियत भी थी। उनकी मृत्युके बाद उनकी जमीनके उत्तराधिकारके प्रश्नको लेकर भारी विवाद खड़ा हो गया था; क्योंकि इस जमीनका स्वामित्व उन्होंने १८८५का कानून ३ लागू होनेके पूर्व ही प्राप्त किया था।

३. (१८३९-१९०३); नेटालके प्रथम प्रधान-मन्त्री और उपनिवेश-सचिव, १८९३-९७।

और सक्रिय भाग लिया और जो श्रोता-समाज उन्हें घेरे हुए था उसके सामने अपने पुराने जोश-खरोशसे भाषण दिये। उनके धार्मिक उत्साहकी चर्चा किये बिना उनकी स्मृतिमें लिखा गया कोई भी लेख अधूरा ही कहा जायेगा। धार्मिक और दार्शनिक चर्चाओंमें भाग लेना उनके जीवनका सबसे बड़ा आनन्द था। वे अपने श्रोताओंके सम्मुख अरबके पवित्र पैगम्बर द्वारा चलाये गये मजहबकी खूबियोंके बयानका कोई मौका हाथसे नहीं जाने देते थे।

मरहूम श्री अब्दुल्ला हाजी आदमके परिवारके साथ हम अपनी समवेदना प्रकट करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९१२

१८४. नया प्रवासी विधेयक[1]

उपयोगी खण्डोंका सार और टिप्पणियाँ

विधेयक समस्त दक्षिण आफ्रिकापर लागू होता है।

खण्ड ३

सरकारको सहायता देनेके लिए एक प्रवासी निकाय नियुक्त करनेका अधिकार गवर्नर जनरलको दिया जाता है।

टिप्पणी

हम इस निकायमें हमारे अपने लोगोंकी नियुक्तिकी माँग कर सकते हैं।

खण्ड ४ (क)

जो व्यक्ति प्रवासी अधिकारी द्वारा निर्दिष्ट किसी भाषामें पचास शब्द उसे सन्तुष्ट करने योग्य रीतिसे नहीं लिख सकेगा, उस व्यक्तिको संघमें प्रवेश नहीं करने दिया जायेगा।

टिप्पणी

इसमें संस्कृत और अरबी भाषाएँ भी आ जाती हैं। फिर भी यह खण्ड सख्त है। ट्रान्सवालके भारतीय तो इसका विरोध नहीं कर सकते, लेकिन नेटाल और केप [के भारतीयों]को विरोध करना चाहिए। खण्डमें संशोधनकी आशा तो नहीं की जा सकती, लेकिन हमारी आवश्यकताकी पूर्तिके लिए अमुक संख्यामें शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशकी व्यवस्था कर दी जा सकती है।

१. विधेयकके अंग्रेजी पाठके लिए देखिए परिशिष्ट १३।

खण्ड ४ (ग)

यदि किसी व्यक्तिके सम्बन्धमें किसी विदेशी सरकार द्वारा कोई [विरोधी] सूचना मिले तो उसके प्रवेशपर पाबन्दी होगी।

टिप्पणी

जान पड़ता है, यह खण्ड उपद्रव करनेवाले व्यक्तियोंके लिए है।

खण्ड ५ (च) तथा (छ)

जो व्यक्ति अपने [युद्ध-पूर्वके] अधिवासके आधारपर [संघमें] प्रवेश करना चाहता हो और जिसकी पत्नी तथा बच्चे भी [उसके प्रवेशाधिकारके आधारपर] प्रवेश पाना चाहते हों, उसे अपने अधिकारको इस प्रकार सिद्ध करना होगा जिससे [प्रवासी] अधिकारीको सन्तोष हो जाये।

टिप्पणी

इस खण्डका विरोध सबको करना चाहिए। नेटालके कानूनमें ऐसा एक खण्ड है। सरकार अब केप तथा ट्रान्सवाल [के कानूनों]में भी उसे दाखिल करना चाहती है। यह धारा सत्याग्रहीको भी स्वीकार्य नहीं हो सकती। हमें [अधिकारीके निर्णयोंके विरुद्ध] न्यायालयोंमें अपील करनेका हक मिलना ही चाहिए।

खण्ड ६

निषिद्ध व्यक्तियोंको तीन महीने तक का कारावास दिया जा सकता है; जुर्मानेकी कोई व्यवस्था नहीं है। उसे निर्वासित भी किया जा सकता है।

खण्ड ७

अगर [संघके] किसी एक प्रान्तका भारतीय किसी दूसरे प्रान्तमें जाना चाहता है तो उसे नया [इमला] इम्तहान पास करना होगा।

टिप्पणी

इस खण्डके अन्तर्गत सम्भव है कि नेटाल या केपसे कुछ शिक्षित भारतीय ट्रान्सवाल अथवा फ्री स्टेटमें यदा-कदा आ जायें, लेकिन शिक्षित भारतीयोंके लिए ट्रान्सवालसे केप अथवा नेटालमें प्रवेश करना बड़ा मुश्किल होगा, क्योंकि मौजूदा सरल परीक्षाके बदले उन्हें उस समय जो नई परीक्षा देनी होगी, वह अपेक्षाकृत अधिक कठिन होगी। इस खण्डका विरोध सबको करना चाहिए। यह खण्ड कभी भी स्वीकार नहीं किया जा सकता। [इस विषयपर] सत्याग्रही भी चुप नहीं बैठे रह सकते।

खण्ड ८

कोई निषिद्ध व्यक्ति सम्बन्धित प्रान्त अथवा सम्पूर्ण संघमें ही न कहीं व्यापार कर सकता है और न भूस्वामित्व प्राप्त कर सकता है।

टिप्पणी

इसका प्रभाव यह होगा कि यदि किसी केपवासी भारतीयको नेटालमें रहनेका अधिकार नहीं है, तो वह उस प्रान्तमें जमीनका मालिक अथवा व्यापारी नहीं हो सकता।

खण्ड २३

यह सिद्ध करनेका दायित्व [प्रवेशके लिए इच्छुक] व्यक्तिपर रहेगा कि वह निषिद्ध प्रवासी नहीं है।

टिप्पणी

ऐसा खण्ड इस तरहके सभी कानूनोंमें है।

खण्ड २५ (१)

अस्थायी अनुमतिपत्र अपनी शर्तोंपर जारी करनेका अधिकार सरकार अपने पास सुरक्षित रखती है।

टिप्पणी

सरकार चाहे तो इस खण्डके अनुसार जिन व्यक्तियोंकी सेवाएँ जरूरी समझी जायें उन्हें प्रवेशकी अनुमति दे सकती है।

खण्ड २५ (२)[1]

यदि [प्रवासी] अधिकारी चाहे तो ऐसे किसी भी व्यक्तिको, जिसे अपना हक मारे जानेका डर हो, उसके बाहर जाते समय फिरसे प्रान्त अथवा संघमें प्रवेश करनेका अस्थायी अनुमतिपत्र दे सकता है।

टिप्पणी

ऐसा आपत्तिजनक खण्ड केपके कानूनमें पहलेसे है। लेकिन नेटालके लिए यह नया है। अनुमतिपत्र लेना लाजिमी नहीं है, लेकिन गरीब लोग तो [अगर वापस आनेपर वे अपने प्रवासका अधिकार सिद्ध करनेमें असमर्थ हुए तो] बिलकुल तबाह ही हो जायेंगे। नेटालको इस खण्डका तीव्र विरोध करना चाहिए। सत्याग्रही भी विरोध कर सकते हैं। अभी यह नहीं कहा जा सकता कि उन्हें विरोध करना ही चाहिए। ऐसा अनुमतिपत्र न लेनेपर भी किसीका अधिकार नहीं छिनता और वह अन्य प्रकारके प्रबन्ध करके नेटालसे बाहर जा सकता है।

खण्ड २८ (१) और (२)

जो [इमला] लोग परीक्षा देकर संघमें प्रवेश करेंगे, उनपर १९०८ का अधिनियम ३६ (एशियाई कानून २) लागू नहीं होगा, लेकिन ऑरेंज फ्री स्टेटके कानूनके खण्ड ७ और ८ लागू होंगे।[2]

१. यह अधिकार वस्तुतः मन्त्रीको था (परिशिष्ट १३), लेकिन यहाँ गांधीजीने यह मान लिया है कि व्यावहारिक रूपमें यह अधिकार प्रवासी अधिकारीको ही दिया जायेगा।

२. ऑरेंज फ्री स्टेटके संविधानका ३३वाँ प्रकरण।

टिप्पणी

इस खण्डके अनुसार जो भारतीय परीक्षा पास करके प्रवेश करेगा उसे [संघके] चारों प्रान्तोंमें रहनेका निश्चित अधिकार प्राप्त होगा। उसे पंजीयन नहीं करवाना पड़ेगा। लेकिन वह ट्रान्सवालमें अपने नामसे जमीन नहीं खरीद सकता। ऑरेंज फ्री स्टेटमें भी वह न जमीन खरीद सकता है और न व्यापार अथवा खेती-वाड़ी ही कर सकता है। सत्याग्रही इससे अधिककी माँग नहीं कर सकते। जमीन आदिसे सम्बन्धित हकोंके लिए बड़े पैमानेपर नया संघर्ष आरम्भ किया जाना चाहिए। भारतीयोंमें इसके लिए अपेक्षित बल होना जरूरी है। उसमें समय लगेगा। बहुत-कुछ सीखना और कष्ट सहन करना पड़ेगा।

इस कानूनमें कुल मिलाकर २९ खण्ड हैं; लेकिन यहाँ शेष खण्डोंका सार देनेकी आवश्यकता नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९१२

१८५. तार: ब्रिटिश भारतीय यूनियनको[1]

[लॉली]
फरवरी ३, १९१२

ब्रिटिश भारतीय यूनियन
६७, हैनोवर स्ट्रीट
केप टाउन

पत्नी और बच्चोंके अधिवास प्रमाण विषयक अधिकारीके मनचाहे अधिकार, प्रान्तीय आवागमनके लिए नई शैक्षणिक परीक्षा, अन्य देशोंसे आनेवालोंके लिए नई परीक्षा, केपकी अनुपस्थितिकी अवधि सीमित करनेकी नीतिकी बरकरारी और शिक्षित प्रवासियों द्वारा हलफनामा देना आवश्यक करनेवाले फ्री स्टेटके कानूनके खण्डका विरोध करते हुए प्रस्ताव पास करें। एडवोकेट अलैक्ज़ेंडरको मुद्दे ज्ञात हैं। सलाह दूंगा, उनसे मिलें। तारसे प्रस्तावोंका पाठ भेजना कठिन है।[2]

गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६१२) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "एक टिप्पणी", पृष्ठ २१४।

२. फरवरी ४ को आयोजित केप भारतीयोंकी एक सभामें तारमें निर्दिष्ट आशयके प्रस्ताव सर्वानुमतिसे स्वीकृत किये गये। प्रस्तावोंके लिए देखिए "प्रस्ताव: केप ब्रिटिश भारतीय यूनियनकी सभामें", पृष्ठ २२२-२३।

१८६. पत्र: रावजीभाई पटेलको

माघ वदी २ [फरवरी ४, १९१२][1]

भाईश्री रावजीभाई,

आपका पत्र मिला। मैंने अपना विचार बदला नहीं है; परन्तु यदि आपके पिताजी आपको फीनिक्स आनेसे मना करते हैं तो आपको मना करना मेरा धर्म है। आपका धर्म भी वैसा ही है। परन्तु यदि आपके पिताजी आपसे स्पष्ट अधर्म करायें तो मैं उसमें से मुक्त करानेके लिए आपको फीनिक्समें ले सकता हूँ। मुझे लगता है कि जब हम नीतिके बन्धनोंमें बँध जायें और माँ-बाप किसी खास कदमको उठानेसे हमें रोकें तब हम उस सम्बन्धमें चुप होकर बैठनेपर विवश हैं। किन्तु जब वे हमसे कोई पाप ही कराना चाहें तो हमें वह नहीं करना चाहिए। इस सम्बन्धमें केवल प्रह्लादजीके उदाहरण ही की याद दिलाई जा सकती है। इसके अतिरिक्त पिताकी आज्ञासे सभी शारीरिक कष्ट उठाये जा सकते हैं; उससे आत्मिक दुःख नहीं हो सकता।

आप व्यापारमें रहकर नीतिका पालन कर सकते हैं। उससे आपका शिक्षण होगा और आप जिस तरहका जीवन बिताना चाहते हैं उसकी तैयारी होगी। इसके अतिरिक्त यदि आप अपने व्यापारमें पूरी ईमानदारीका आचरण कर सकेंगे तो आप अपने व्यापारसे दूसरोंका उपकार करेंगे। कोई भी ग्राहक आये, उससे एक ही दाम और वाजिब मुनाफा लें। जो वस्तु आपके लिए त्याज्य है उसे न बेचें. . .। ग्राहकोंसे नम्रतासे बात करें। [किन्तु] अपना माल बेचनेके लिए उनकी चापलूसी भी न करें। यदि नौकर हों तो उनके साथ यह मानकर बरताव करें कि वे आपके भाई हैं। इन सब बातोंका पालन आसानीसे किया जा सकता है। आपको ऐसा नहीं लगना चाहिए कि व्यापारमें रहना तो लालचमें पड़नेके समान है, क्योंकि आपने व्यापार अनीतिके लिए ही पसन्द नहीं किया है। आप तो केवल पिताजीकी आज्ञामें रहनेके कारण ही व्यापार करेंगे। इसलिए उसमें ईमानदारी बरतना आसान होना चाहिए। आप बताते हैं कि आपको पैसेका लोभ नहीं है। हम जिस स्थितिके सम्बन्धमें वीत-राग रहें उसमें हम दुःख पा सकते हैं; परन्तु उसमें भ्रष्ट नहीं हो सकते। प्रह्लादजी राक्षसोंके मध्य रहते हुए विष्णु भगवान्के भक्त बने रहे। मुझे नहीं लगता कि इसमें उन्हें कुछ कठिनाई हुई होगी, क्योंकि वे राक्षसी प्रवृत्तियोंके प्रति पूर्णतः वीतराग थे।

१. यह पत्र रावजीभाई पटेलको नवम्बर २९ को लिखे पत्र (पृष्ठ १८७-८८) के बादका प्रतीत होता है। इसपर भारतीय तिथि दी गई है, किन्तु संवत् नहीं। यदि हम यह मान लें कि यह पत्र भी भारतीय तिथिके अनुसार उसी वर्ष लिखा गया जिस वर्ष पिछला पत्र लिखा गया था (और यह मानना असंगत प्रतीत नहीं होता) तो उस दृष्टिसे ईसवी सन्की उपर्युक्त तिथि ही देनी पड़ेगी, क्योंकि उस वर्ष माघ वदी २ को १९१२ के फरवरी माहकी ४ तारीख पड़ी थी।

मनुष्य सूलीपर बैठकर भी अपने व्रतका पालन कर सकता है। जो व्रत ऐसे समयमें भी पाला जाता है वही सच्चा व्रत होता है। यदि वह नीति हमारे लिए स्वाभाविक हो जाये और हमारे रोम-रोममें बस जाये तो उसका पालन अवश्य ही हो सकेगा। इस हद तक इसे विकसित करना हम सबका कर्त्तव्य है। मैं यह कामना करता हूँ कि आपकी यह सदिच्छा फलवती हो।

मोहनदासका यथायोग्य

गुजराती पुस्तक 'गांधीजीनी साधना'; रावजीभाई पटेल; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९३९

१८७. प्रस्ताव : केप ब्रिटिश भारतीय यूनियनकी सभामें[1]

केप टाउन,
फरवरी ४, १९१२

प्रस्ताव १

अध्यक्ष तथा वक्ताओंके भाषण सुनने और प्रवासी विधेयकके पाठसे अवगत होनेके पश्चात् यह सभा इस प्रस्ताव द्वारा सर्वसम्मतिसे अध्यक्षके इस मतकी ताईद करती है कि भारतीय समाजके अधिकारोंको गम्भीर रूपसे खतरा पैदा हो गया है। सभा विधेयकके वर्तमान स्वरूपमें उसका अननुमोदन करती है और अध्यक्ष तथा मन्त्रीको प्राधिकृत करती है कि वे अध्यक्षके भाषणमें सुझाये गये तरीकेसे विधेयकके पाठमें रद्दोबदल करानेके लिए समूचे आंग्ल-ब्रिटिश भारतीय समाजकी ओरसे संसदमें प्रार्थनापत्र भेजें और उसके लिए आगेकी आवश्यक तथा उचित कार्रवाई करें। सभाके सदस्य व्यक्तिगत रूपसे उसका जोरदार समर्थन करने और जहाँ भी सम्भव हो, सहायता करनेका वचन देते हैं।

प्रस्ताव २

यह सभा समुद्र-पारके प्रवासियों और दूसरे प्रान्तमें प्रवेश या निवासके इच्छुक किसी एक प्रान्तके अधिवासियों, दोनों ही के लिए रखी गई नई श्रुतिलेख परीक्षाके मनमाने ढंगका विरोध करती है।

१. ये प्रस्ताव अध्यक्ष ई० नोरोदियेनके सभापतित्वमें फरवरी ४, १९१२ को हुई संघकी एक सभामें, जिसमें उपस्थिति बड़ी शानदार थी, सर्वसम्मतिसे पास किये गये थे और संघ प्रवासी विधेयकपर केपके भारतीयों द्वारा उठाई गई आपत्तियाँ जाहिर करनेवाले एक प्रार्थनापत्रके साथ केपकी सीनेट और विधानसभाको भेजे गये थे; देखिए **इंडियन ओपिनियन**, १७-२-१९१२। अनुमानतः इनका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था, क्योंकि सभाके दो दिन पहले मकादम नामक किसी व्यक्तिने उनको केप टाउनसे तार द्वारा सभाकी तिथि सूचित करते हुए प्रस्तावोंका मसविदा तारसे भेजनेके लिए लिखा था। जिस कागजपर तार मिला था उसीपर गांधीजीने शीघ्रतासे मसविदा बना डाला था; देखिए "एक टिप्पणी", पृष्ठ २१४। मकादमके तारके पाठके लिए, देखिए इसी शीर्षककी पाद-टिप्पणी।

प्रस्ताव ३

यह सभा इस बातका विरोध करती है कि अधिवासी होने या किसी प्रवासी या अधिकारीकी पत्नी या सन्तान होनेका सबूत सन्तोषप्रद है या नहीं, इसके निर्णय-का अधिकार न्यायालयके बजाय प्रवासी अधिकारीपर छोड़ा जाये।

प्रस्ताव ४

यह सभा अस्थायी तौरपर संघसे बाहर जानेके इच्छुक व्यक्तियोंके मामलेमें उनकी अनुपस्थितिकी अवधि सीमित करनेकी केपकी प्रथाको बरकरार रखनेका विरोध करती है।

प्रस्ताव ५

यह सभा विधेयकके उस खण्डका विरोध करती है जिसमें ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेश करनेवाले शिक्षित प्रवासियों द्वारा शिनाख्ती ब्योरा दर्ज करानेकी व्यवस्था की गई है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–२–१९१२

१८८. तार : गृह-मन्त्रीको[1]

[लॉली]
फरवरी, ६, १९१२

आपके इसी २ तारीखके वादेके अनुसार अबतक तारकी प्रतीक्षा है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रजी मसविदे (एस० एन० ५६१६) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजीके फरवरी १ के तारके उत्तरमें गृह-मन्त्रालयकी ओरसे लिखा गया था कि "आशा है, आपके पहली फरवरीके तारका जवाब सोमवारको दिया जा सकेगा।" (एस० एन० ५६१५) गांधीजी अपनी १९१२की डायरीमें लिखते हैं कि उन्होंने इस तारका मसविदा तो तैयार कर लिया था, किन्तु उसे भेजा नहीं। (देखिए फरवरी ६ और ७के दिन लिखी गई डायरी)। उक्त तार उन्हें दूसरे दिन ही मिल गया था; देखिए परिशिष्ट १५।

१८९. तार: गृह-मन्त्रीके निजी सचिवको[1]

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली
फरवरी ७, १९१२

निजी सचिव
गृह-मन्त्री
केप टाउन

जनरल स्मट्सके तारसे[2] सुलहका रुख जाहिर। कृपया धन्यवाद निवेदन करें। इन परिस्थितियोंमें यह कष्टकर संघर्ष दुबारा न शुरू करनेके लिए लोगोंको समझाना सम्भव बशर्ते विधेयकमें ऐसा संशोधन कर दिया जाये जिससे अन्तर-प्रान्तीय प्रवासके मामलेमें शिक्षित एशियाइयोंके वर्तमान अधिकार सुरक्षित रहें। इस सम्बन्धमें तार कुछ नहीं कहता। फिर भी, जवाब आने तक आन्दोलन स्थगित। आशा है, उत्तर सन्तोषजनक मिलेगा।

गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६१४) और (एस० एन० ५६१९) की फोटो-नकलसे भी।

१९०. तार: गृह-मन्त्रीको

[लॉली]
फरवरी ८, १९१२

गृहमन्त्री

अन्तर-प्रान्तीय प्रवासके सम्बन्धमें सन्तोषप्रद व्यवस्थाके आश्वासनके वचनके लिए जनरल स्मट्सको धन्यवाद देते हुए कहना चाहूँगा कि मौजूदा कानूनी स्थिति बनाये रखनेका आश्वासन दिये बिना सत्याग्रहियोंको सन्तोष नहीं

१. अगले दिन गांधीजीको निम्नलिखित उत्तर मिला: "जनरल स्मट्स आपके उत्तरको उचित मानते हैं और उस भावनाकी सराहना करते हैं जिससे आपने प्रवासके प्रश्नसे सम्बन्धित कठिनाइयोंको समझा है। आपने जिस अन्तरप्रान्तीय प्रवासका उल्लेख किया है उसके सम्बन्धमें वे विचार कर रहे हैं और आशा करते हैं कि शीघ्र ही नेटाल और केप प्रान्तोंके बारेमें आपको सन्तोषजनक आश्वासन दे सकेंगे।" (एस० एन० ५६१७)

२. देखिए परिशिष्ट १५।

होगा। साथ ही यह भी कहना चाहूँगा कि अबतक मैंने जो-कुछ निवेदन किया है, वह केवल अस्थायी समझौतेको ध्यानमें रखकर। विधेयककी अन्य अनेक आपत्तिजनक बातोंकी आलोचनाका अधिकार सुरक्षित रखता हूँ।

गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६१८) और (एस० एन० ५६१८) की फोटो-नकलसे भी।

१९१. प्रवासी विधेयक

नेटाल भारतीय कांग्रेस और केप ब्रिटिश भारतीय यूनियनने तनिक भी देरी किये बिना प्रवासी विधेयकका विरोध करनेके लिए सार्वजनिक सभाओंका[1] आयोजन किया है। इस विधेयकका गत गुरुवारको संसदमें द्वितीय वाचन होनेवाला था। इस विधेयककी रचना इस प्रकार की गई है कि इससे लगभग सभी एशियाइयोंको निकाल बाहर करनेकी नीति ही कार्यान्वित नहीं होगी, बल्कि यदि यह अपने वर्तमान रूपमें ही स्वीकृत हो गया तो इसके कारण एशियाइयोंके निहित अधिकारोंमें भी बहुत अधिक हस्तक्षेप होने लगेगा और वे साधारणतया सब मामलोंमें प्रवासी अधिकारियोंकी कृपाके मोहताज हो जायेंगे। इसलिए इन सभाओं द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव[2] सभीके लिए मान्य होने चाहिए। जनरल बोथाने इंग्लैंडमें कहा था[3] कि दक्षिण आफ्रिकाकी संघ-सरकार वहाँ बसी हुई एशियाई आबादीको परेशान नहीं करना चाहती। यही बात वे अन्यत्र भी दोहरा चुके हैं। इस विधेयकसे उनकी यह बात झूठी पड़ जायगी। इसके निर्माताओंने इसका नाम तो रखा है प्रवासी-एकीकरण विधेयक; परन्तु वास्तवमें यह एशियाई-निर्वासन विधेयक है। इस विधेयकसे यहाँके अधिवासी एशियाइयोंके यहाँ रहनेके अधिकार और उनकी पत्नियों तथा सन्तानके अधिकार तो भारी जोखिममें पड़ ही जायेंगे, शिक्षित एशियाइयोंके ट्रान्सवालसे केप तथा नेटाल और केपसे नेटाल आने-जानेपर भी बहुत पाबन्दी लग जायेगी। इस प्रकार एशियाइयोंका कोई भी वर्ग अछूता नहीं रह पाया है। इसके अतिरिक्त, नेटाल और केपवालोंको एक खास

१ और २. देखिए पृष्ठ २१५, पाद-टिप्पणी २ और "प्रस्ताव: केप ब्रिटिश भारतीय यूनियनकी सभामें", पृष्ठ २२२-२३।

३. जनरल बोथाने, जो साम्राज्य-सम्मेलनके सिलसिलेमें इंग्लैंड गये हुए थे, २३ मई १९११ को २० मईके अस्थायी समझौतेपर सन्तोष व्यक्त करते हुए लन्दनमें अखबारोंके लिए एक वक्तव्य दिया था। उनके बादके कथनकी रिपोर्ट देते हुए रायटरने लिखा था कि "जनरल बोथाने यह विश्वास प्रकट किया कि भारतीय लोग सरकारको सहायता देनेके लिए अपनी ओरसे वस्तु-स्थितिको सन्तोषप्रद बनानेकी दिशामें कुछ उठा नहीं रखेंगे। उन्होंने कहा था कि वे इस बातके लिए आश्वस्त रह सकते हैं कि सरकार उनके प्रति कोई शत्रुताकी भावना नहीं रखती, किन्तु उन्हें यह याद रखना चाहिए कि वह समझौतेमें विहित संख्यासे अधिक भारतीयोंको प्रवेश न देनेके लिए कृत-संकल्प है।"

शिकायत यह है कि शिक्षाकी जो नई मनमानी कसौटी रखी जा रही है उसके कारण मुनीमों और कारकूनोंकी हैसियतके शिक्षित भारतीयोंको व्यवहारतः निषिद्ध प्रवेशार्थी ठहरा दिया जायेगा। विधेयकके इस भागपर गत मासकी ३१ तारीखके 'स्टार' ने जो टिप्पणी[1] दी है वह बहुत उपयुक्त है। आशा की जा सकती है कि नेटाल भारतीय कांग्रेस और केप ब्रिटिश भारतीय यूनियनने ठीक समयपर जो विरोध प्रकट किया है उसे सरकार सहानुभूतिपूर्वक सुनेगी और उस अनिष्टकारी परिस्थितिको उत्पन्न नहीं होने देगी जो अवश्यम्भावी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–२–१९१२

१९२. अकाल निवारण-कोषकी पहली किस्त[2]

हम अकाल निवारण कोषकी पहली किस्त डॉ० प्राणजीवनदास मेहताको भेज चुके हैं। हमने उन्हें १०० पौंडकी हुंडी भेजी है। चन्दा देनेवालोंने जो सुझाव दिये थे, वे भी हमने डॉ० मेहताको सूचित कर दिये हैं। यहाँके भारतीय डॉ० मेहतासे अपरिचित नहीं है। जहाँ अकाल है, उनका विचार वहीं जाकर पैसा खर्च करनेका है। इसलिए हमें लगता है कि हम इस पैसेका अच्छेसे-अच्छा उपयोग डॉ० मेहताके द्वारा ही कर सकते हैं।[3] इसके सिवा विशेष कार्योंके लिए अथवा विशेष स्थानोंमें खर्च करनेके सम्बन्धमें हमें आजतक जो-जो सुझाव मिले हैं और जो आगे भी मिलेंगे, हम डॉ० मेहतासे उन सबको अच्छी तरह कार्यान्वित करवा सकते हैं।

इस चन्देके विषयमें जो सवाल उठे हैं, उनका जवाब भी यहीं दे देना ठीक मालूम होता है। हमने जो कोष खोला है, चन्दा देनेवालोंने उस पैसेका उपयोग हमपर छोड़ दिया है। यह एक रीति है। 'इंडियन ओपिनियन' की मार्फत होनेवाले चन्देके अलावा भी हमें विशेष सुझावके साथ कुछ पैसा मिला है। इस प्रकार हमारे द्वारा पैसा भिजवाना दूसरी रीति है। जो लोग अपना पैसा किसी विशेष जगह स्वतंत्र

१. स्टारने १९०७ के ट्रान्सवाल प्रवासी-प्रतिबन्धक विधेयकमें विहित शिक्षा-परीक्षा (जिसमें प्रवेशार्थीकी मात्र इस क्षमताकी जाँच की जाती थी कि वह यीडिश-सहित किसी यूरोपीय भाषामें प्रवेश करनेकी अनुमति माँगते हुए एक अर्जी लिखकर उसपर अपने हस्ताक्षर कर सकता है अथवा नहीं) की सराहना करते हुए मौजूदा विधेयकको न्याय या युक्तिकी भावनासे हीन बताया था और लिखा था कि इसके अन्तर्गत विहित शिक्षा-परीक्षा सरकारी अफसरोंको असीम अधिकार दे देती है। इसके अतिरिक्त उसमें इस बातपर भी आपत्ति प्रकट की गई थी कि विधेयकमें यीडिश-सहित यूरोपीय भाषाका भी उल्लेख नहीं था और न अधिकारियोंके निर्णयके विरुद्ध अपीलकी व्यवस्था थी। देखिए इंडियन ओपिनियन, १०–२–१९१२।

२. देखिए "देशमें अकाल", पृष्ठ १७७ और १९३-९४ भी।

३. डॉ० मेहताको लिखे गांधीजीके पत्रोंमें अकालकी चर्चा बराबर रहा करती थी। देखिए पृष्ठ १५५, १६१ और १७८।

रीतिसे भेजना चाहते हों, वे वैसा भी कर सकते हैं। हमारा हेतु इतना ही है कि जिन्हें अकालकी स्थितिकी गम्भीरताका भान है उन्हें देशकी मदद करनी चाहिए। इसमें किसी प्रकारकी प्रसिद्धि प्राप्त करनेका कोई सवाल नहीं है।

हमारा इकट्ठा किया हुआ चन्दा बहुत मामूली है, यह हम जानते हैं। जो नेता अपने सिरपर उत्तरदायित्व लेकर बड़े पैमानेपर चन्दा इकट्ठा करना चाहें, वे वैसा कर सकते हैं और उसमें उनकी शोभा है। कोई ऐसी बड़ी राशि इकट्ठा न की जा सके, तो हम मानते हैं कि सब भारतीयोंको इसी कोषमें यथाशक्ति चन्दा देना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-२-१९१२

१९३. पत्र: ई० एफ० सी० लेनको

फरवरी १५, १९१२

प्रिय श्री लेन,

आपने प्रवासी विधेयकके सम्बन्धमें उत्तर[1] देनेका वादा किया था। मैं अब भी उसकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। मैंने अपने तारोंमें[2] जो बातें संक्षेपमें कहीं थीं उन्हें अब यहां फिरसे निवेदित कर रहा हूँ।

धारा ५ के उपबन्ध (च) और (छ) के बारेमें निवेदन है कि यदि उसका अभिप्राय वही है जो आपने अपने तारमें[3] बताया है, अर्थात् अदालतोंका अधिकार समाप्त नहीं होता, तो यह सर्वथा सन्तोषजनक है। हालांकि आपने अपने तारमें मुझे इस सम्बन्धमें आश्वासन दिया है फिर भी नेटाल न्यायपीठके[4] निर्णयको देखकर उक्त धाराके बारेमें मैं हताश हो गया हूँ और इसलिए स्वयं कानूनी सलाह ले रहा हूँ।[5]

खण्ड ७ के विषयमें निवेदन है कि यदि एशियाइयोंकी वर्तमान कानूनी स्थिति, अर्थात् शिक्षित भारतीयोंका यह अधिकार कायम रखा जाये कि नेटाल या केपके

१. गृह-मन्त्रीको भेजे गये फरवरी ८, १९११ के तार (देखिए पृष्ठ २२४) का उत्तर।

२. जनवरी ३०, फरवरी १, फरवरी ७ और फरवरी ८ के तार, जिनके लिए देखिए क्रमशः पृष्ठ २१२-१३, २१३-१४, २२४ और २२४-२५।

३. गृह-मन्त्रीके निजी सचिव द्वारा भेजा गया ७ फरवरीका तार; देखिए परिशिष्ट १५।

४. मुहम्मद मूसा नायलिया बनाम मुख्य प्रवासी अधिकारीके मामलेमें सर्वोच्च न्यायालयके नेटाल डिवीजन (प्रभाग) ने प्रवासी अधिकारीके निर्णयमें हस्तक्षेप करनेसे इनकार कर दिया था। उक्त प्रवासी अधिकारीने अपने विवेकाधिकारका उपयोग करते हुए यह निर्णय दिया था कि नौजवान नयालियाने जो प्रमाण पेश किये हैं वे यह सिद्ध करनेकी दृष्टिसे अपर्याप्त हैं कि वह उसी व्यक्तिका पुत्र है जिसका पुत्र होनेका दावा करता है। अपील अदालतने सर्वोच्च न्यायालयकी नेटाल पीठके निर्णयके विरुद्ध अपीलकी अनुमति भी नहीं दी। देखिए इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९१२, १०-२-१९१२ और १७-२-१९१२।

५. देखिए अगला शीर्षक।

कानूनोंमें विहित शैक्षणिक परीक्षा पास कर लेनेपर वे ट्रान्सवालसे उक्त प्रान्तोंमें जा सकते हैं तो सत्याग्रहियोंको कोई शिकायत नहीं होगी।

जहाँतक फ्री स्टेटकी बात है, यदि आपके कानून-अधिकारियोंका यह खयाल ठीक है कि ऑरेंज फ्री स्टेट संविधानके अन्तर्गत ज्ञापन देना आवश्यक नहीं होगा, तो यह गम्भीर कठिनाई हल हो जायेगी। लेकिन यह बात बहुत महत्वपूर्ण है, इसलिए हम इस सम्बन्धमें भी कानूनी सलाह ले रहे हैं।

अन्तमें निवेदन है कि यदि नेटालके अधिवासी भारतीय अधिकारके रूपमें अधिवासके प्रमाणपत्र पानेका दावा नहीं कर सकते तो सत्याग्रही इस विधेयकके खण्ड २५ (२)[1] का नियमानुसार पालन नहीं कर सकते। फिर भी मैं इस बातकी ओर आपका ध्यान दिलाना चाहूँगा कि यदि एक हजार प्रमाणपत्र जब्त कर लिये गये[2], तो इससे मेरा यह कथन सर्वथा सत्य सिद्ध होता है कि जो प्रमाणपत्र जारी किये जा चुके हैं उन्हें चोरी-चोरी हस्तान्तरित नहीं किया जा सकता। मेरा खयाल है, सन् १८९६ से लेकर आजतक एक हजार प्रमाणपत्र जब्त किये गये हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि हर साल साठ भारतीय दूसरोंके अधिवास प्रमाणपत्रोंका उपयोग करके अपनी प्रतिष्ठा गिरानेके लिए तैयार रहते थे; और अपराधका पता चलनेपर उन्हें समुचित दण्ड दिया जाता था।

हृदयसे आपका,

श्री अर्नेस्ट एफ० सी० लेन
केप टाउन

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६२५) की फोटो-नकलसे।

१९४. पत्र : आर० ग्रेगरोवस्कीको

जोहानिसबर्ग
फरवरी १५, १९१२

प्रिय श्री ग्रेगरोवस्की,

नये विधेयकपर आपकी राय जाननेके लिए मैं उससे सम्बन्धित एक विवरण नत्थी कर रहा हूँ। आपने उस विधेयकके सम्बन्धमें भी मुझे अपनी राय देनेकी कृपा की थी, जिसे पास करानेके लिए जनरल स्मट्सने पिछले साल बड़ा प्रयास किया था;[3] और मैं आपको बता ही चुका हूँ कि वह राय बहुत मूल्यवान साबित हुई

१. इस खण्डमें, अन्य बातोंके अलावा, अस्थायी रूपसे संघसे बाहर जानेके इच्छुक एशियाइयोंके लिए यह आवश्यक था कि वे अधिवास प्रमाणपत्र लें और लौटनेके लिए समय-समयपर उनसे जिस प्रकार शिनाख्त देनेकी अपेक्षा की जाये उस प्रकार शिनाख्त दें। देखिए परिशिष्ट १३।

२. देखिए परिशिष्ट १५।

३. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४४४-४८।

थी। मैं आपकी सुविधाके लिए वक्तव्यके साथ-साथ एक ऐसा अंश भी भेज रहा हूँ जिसमें ऑरेंज फ्री स्टेटके कानूनोंके आवश्यक खण्ड आ जाते हैं। इनके अलावा पिछले वर्ष दी गई आपकी सलाह, सम्बन्धित विधेयक तथा नेटाल और केपके प्रवासी कानून भी भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री आर० ग्रगरोवस्की
प्रिटोरिया

[सहपत्र]

कानूनी सलाहकारके परामर्शके लिए भेजा गया विवरण

कानूनी सलाहकारसे अनुरोध है कि संघ-संसदके सामने प्रस्तुत प्रवासी विधेयकसे उत्पन्न निम्नलिखित मुद्दोंके बारेमें वे अपनी राय दें :

१. खण्ड ५ के उपखण्ड (च) और (छ)[1] वैध प्रवासियों तथा अधिवासी निवासियोंकी ऐसी पत्नियों और नाबालिग बच्चोंको तथा स्वयं ऐसे अधिवासी निवासियोंको भी निषेधक धारासे बरी कर देते हैं जो प्रवासी अधिकारीको पत्नियों, नाबालिग बच्चों या अधिवासी निवासियोंकी हैसियतसे अपने अधिकारोंका विश्वास दिला दें।

क्या यह धारा न्यायालयोंकी सामान्य सत्ता समाप्त कर देती है? यदि नहीं, तो क्या वह किसी बातमें भी न्यायालयोंकी सत्ता समाप्त करती है, और किस हद तक? क्या प्रवासी अधिकारियोंके निर्णयोंके विरुद्ध उसी तरह अपील की जा सकेगी, जिस तरह मजिस्ट्रेटकी अदालतोंके फैसलोंके विरुद्ध की जाती है? क्या छूट-सम्बन्धी धारापर खण्ड ७ का[2] भी कोई असर पड़ता है?

२. आज नेटाल या केपमें बहुत-से ब्रिटिश भारतीय इस आधारपर रहते हैं कि उन्होंने सम्बन्धित प्रान्तोंके प्रवासी-कानूनोंके अन्तर्गत शैक्षणिक परीक्षा पास की है।

वे इस विधेयकके अन्तर्गत किस तरह संरक्षित होते हैं? क्या वे शैक्षणिक परीक्षामें सफल होकर प्रवेश करनेके आधारपर सम्बन्धित प्रान्तोंके अधिवासी बननेके साथ-साथ वहाँ रहनेके अधिकारी भी हो जाते हैं, या वे केवल इसलिए संरक्षित हैं कि विधेयकमें इनके अधिकार स्पष्ट रूपसे छीने नहीं गये हैं।

३. उन लोगोंकी स्थिति क्या है, जिन्होंने नेटाल या केपमें शैक्षणिक परीक्षा पास करके प्रवेश किया था लेकिन जो अभी कुछ समयके लिए अपने-अपने निवासके प्रान्तोंमें नहीं हैं?

१. देखिए पृष्ठ २१० की पाद-टिप्पणियाँ ४ और ५ तथा "पत्र : ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ २१०-१२ और परिशिष्ट १३ भी।

२. देखिए पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ २११ तथा "पत्र : ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ २१०-१२।

४. मौजूदा कानूनोंमें उन लोगोंके अधिकारोंकी रक्षाकी व्यवस्था है जो इन प्रान्तोंके केवल अधिवासी हैं, परन्तु यह विधेयक केवल उन लोगोंके अधिकारोंका संरक्षण करता है जो संघके अथवा किसी प्रान्तके अधिवासी भी हैं और वहाँ रहनेके हकदार भी हैं।
यदि रेखांकित धाराके अन्तर्गत कोई अतिरिक्त प्रतिबन्ध लगाया गया हो तो उसका ठीक-ठीक अर्थ क्या है?

५. खण्ड ७के अनुसार उक्त प्रान्तोंमें रहनेवाले कथित व्यक्तियोंको किसी भी समय उक्त (यानी शैक्षणिक) परीक्षा पास करनेके लिए तलब किया जा सकता है।
क्या किसी ऐसे आदमीको, जो विधेयकके पास हो जानेके बाद एक बार शैक्षणिक परीक्षामें उत्तीर्ण हो चुका हो, यह प्रमाणित कर सकनेपर भी कि उसने ऐसी परीक्षा पास की है, दुबारा परीक्षा देनेके लिए तलब किया जा सकता है? अगर किसीने इस विधेयकके अन्तर्गत परीक्षा पास कर ली हो और वह यह सिद्ध कर सकनेकी स्थितिमें भी हो कि उसने पहले ही संघमें प्रवेश करते समय यह परीक्षा पास कर ली है, क्या तब भी एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें जाते समय उसकी परीक्षा ली जा सकती है?

६. इस विधेयकका २५ वाँ खण्ड मन्त्रीको यह विवेकाधिकार देता है कि वह ऐसे किसी भी व्यक्तिको, जो संघका वैध निवासी है और कुछ दिनोंके लिए वहाँसे बाहर जाना चाहता है, अनुमतिपत्र दे सकता है।[1] जो ऐसे अनुमतिपत्र नहीं ले पायेंगे, उनकी स्थिति क्या होगी? मान लीजिए, वे अनुमतिपत्र न लेकर किसी लेख-प्रमाणक (नोटरी पब्लिक) के सामने जाते हैं और अपने निवासके सम्बन्धमें हलफ लेकर बाहर चले जाते हैं, तथा वापस लौटनेपर अपने अधिवास और निवासके प्रमाणके रूपमें लेख-प्रमाणकके मूल पत्र (प्रोटोकोल) के साथ-साथ अपना हलफनामा पेश कर देते हैं, तो क्या यह उनके संरक्षणके लिए पर्याप्त होगा?

७. विधेयकका खण्ड २८, उपखण्ड २: शैक्षणिक परीक्षा पास करके फ्री स्टेटमें प्रवेश करनेवाले सभी लोग हर तरहसे ऑरेंज फ्री स्टेट संविधानके अध्याय ३३ के खण्ड ७ और ८ से बँधे हुए हैं।[2] अब खण्ड ८ में, अन्य बातोंके साथ-साथ, यह व्यवस्था भी की गई है कि जिन लोगोंको राज्याध्यक्ष इस राज्यमें बसनेकी अनुमति देता है उन्हें उस मजिस्ट्रेट (लैंड-ड्रॉस्ट) के सामने, जिसे वे अर्जी देंगे, शपथपूर्वक और अपने हस्ताक्षरोंके साथ यह घोषणा करनी पड़ेगी कि वे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष किसी तरह कोई व्यापार नहीं करेंगे, आदि। क्या नये विधेयकके अनुसार इस प्रान्तमें प्रवेश करनेवाले लोगोंको भी ऐसा ज्ञापन देना पड़ेगा?

१. देखिए परिशिष्ट १३।
२. देखिए पाद-टिप्पणियाँ १ और २, पृष्ठ २१२ तथा "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ २१०-१२।

८. क्या कानूनी सलाहकार महोदय कृपया प्रस्तुत सामान्य कानूनकी तुलना उन कानूनोंसे करेंगे जिनका यह स्थान लेता है, और बतायेंगे कि अन्य प्रकारसे यह किस सीमा तक प्रजाकी आजादी और भी प्रतिबन्धित करता है?

मो० क० गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६२६–७) की फोटो-नकलसे।

१९५. तीन पौंडी कर[1]

सर्वोच्च न्यायालयकी सम्पूर्ण न्यायपीठ (फुल बैंच) का एक निर्णय[2] इसी अंकमें अन्यत्र प्रकाशित किया जा रहा है। उससे जाहिर है कि ऐसे हर भारतीयको, जो दूसरी बार गिरमिट स्वीकार करता है, १९१० के अधिनियम १९ के अनुसार ३ पौंड वार्षिक देकर गिरमिटका परवाना लेना होगा। इसका मतलब यह है कि जो लोग १९१०के अप्रैलमें जारी की गई सरकारी गश्ती चिट्ठी[3] पढ़कर दुबारा गिरमिट स्वीकार कर बैठे, वे सब बुरी तरह धोखा खा गये हैं। इस अधिनियमका उद्देश्य चाहे जो रहा हो, तथ्य यह है कि जो हजारों भारतीय दुबारा नई गिरमिटमें शायद पूर्णतया यह विश्वास कर लेनेके कारण ही बँधे हैं कि इससे उन्हें बकाया रकम और चालू देनदारी, दोनोंसे छुटकारा मिल जायेगा। केवल इन गरीब और भोले लोगोंने ही ऐसा नहीं समझा, सरकारी विभागोंने भी इसका यही अर्थ लगाकर कार्रवाई की है। जान पड़ता है, कुछ महीने हुए, विधि-विभागने उन सभी लोगोंपर, जिन्होंने चालू परवानेका

१. देखिए "तीन पौंडी कर", पृष्ठ १७३-७६।

२. फरवरी २, १९१२ को सर्वोच्च न्यायालयके नेटाल प्रभाग (डिवीजन) ने टुगेला डिवीजनके मजिस्ट्रेटके निर्णयके विरुद्ध एन० मूडलेकी अपीलपर विचार किया। मजिस्ट्रेटने निर्णय दिया था कि मूडलेको तीन पौंडी कर देना पड़ेगा। अपीलकर्ताकी दलील यह थी कि सन् १९१० का कानून १९ उसे यह कर अदा करनेसे बरी करता है, क्योंकि उसने अपने गिरमिटकी अवधि समाप्त होनेपर दुबारा सेवाका अनुबन्ध किया है। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, १७–२–१९१२।

३. नेटाल भारतीय कांग्रेसने न्याय-सचिवके नाम अपने १८ नवम्बर, १९११ के पत्रमें प्रवासी-संरक्षक द्वारा अनेक भारतीय भाषाओंमें जारी की गई सन् १९१० की गश्ती चिट्ठी (देखिए "तीन पौंडी कर", पृष्ठ १७६, पाद-टिप्पणी २) का उल्लेख करते हुए यह दावा किया था कि दुबारा गिरमिटमें बँधनेवाले भारतीय तथा दीवानी अनुबन्ध करनेवाले अन्य लोग चालू परवाना-शुल्कसे बरी हैं। उसने इस करकी समाप्तिके लिए आन्दोलन करनेका विचार भी व्यक्त किया था और सलाह दी थी कि यदि सरकार चाहे तो राजस्वके इस घाटेको पूरा करनेके लिए उचित कर लगाये। (**इंडियन ओपिनियन**, २–१२–१९१२)। फरवरी २, १९११ के अपने उत्तरमें गृह-मन्त्रीके कार्यवाहक सचिवने दुबारा गिरमिटमें बँधनेवाले ऐसे भारतीयोंके सम्बन्धमें और जानकारी माँगी थी जिनपर यह परवाना-शुल्क न देनेके कारण मुकदमे चलाये गये थे।

शुल्क अदा न किया हो, मुकदमे चलाये जानेकी हिदायतें जारी की थीं। एक परीक्षणात्मक मुकदमा उमलाजीकी[1] अदालतमें दायर किया गया था। उसमें अदालतने फैसला दिया कि गिरमिटकी अवधिमें शुल्ककी वसूली मुल्तवी रखी जाये। इसपर जो चालीस-पचास समन्स जारी किये जा चुके थे, वे वापस ले लिये गये। मालूम पड़ता है कि सरकारने भी उस फैसलेको मान लिया था, क्योंकि फिर इस विषयमें और कुछ नहीं सुना गया। अब प्रतीत होता है कि लोअर टुगेला डिवीजनके मजिस्ट्रेटने इस आशयका निर्णय दिया है कि चालू परवानेका शुल्क अवश्य अदा किया जाये। सर्वोच्च न्यायालयने भी यह फैसला बहाल रखा। इससे झगड़ा अब फिर उभरकर सामने आ गया है। कुछ ही समयमें हमें मालूम हो जायेगा कि सरकारका इरादा इस सम्बन्धमें क्या है। यदि न्याय-मन्त्रीके हृदयमें तनिक भी मानवता अवशिष्ट होगी तो वह अदालतोंके नाम तुरन्त ही मुकदमे न चलानेके आदेश जारी कर देंगे, क्योंकि वे भली-भाँति जानते हैं कि जिन लोगोंपर इस निर्णयका प्रभाव पड़ेगा, उनमें से सब नहीं तो बहुत-से भूतपूर्व नेटाल-सरकारकी गश्ती चिट्ठीमें दिये हुए प्रलोभनके कारण ही नये गिरमिटमें फँस गये हैं। हमें पता लगा है कि कानूनके यन्त्रको गति दी जा रही है और लोगोंके नाम समन्स जारी किये जा रहे हैं।

इस सारी कार्रवाईमें एक पहलू मजाकका भी है। हमें मालूम हुआ है कि यदि कोई स्वतन्त्र भारतीय कर देनेसे बच निकले और भारत लौट जाना चाहे तो उसे जानेसे कोई रोकता नहीं; भले ही ऐसे लोगोंकी देनदारी बीस-बीस पौंड तक क्यों न पहुँच चुकी हो। परन्तु यही सरकार उस आदमीको, जो धोखेमें फँसकर दुबारा गिरमिटिया बन गया हो, यह इनाम बख्शती है कि वह अपने खेत-मालिकों या दूसरे मालिकोंके लाभके खातिर जबतक चाहे तबतक ३ पौंड सालाना कर चुकाते हुए गुलामीमें छीजता रहे। निश्चय ही इस प्रणालीके अन्याय और बेहूदेपनको समझनेके लिए किसी बड़ी अक्लकी जरूरत नहीं है।

इस अंकमें जिस पृष्ठपर यह निर्णय दिया गया है उसीपर हम नेटाल भारतीय कांग्रेस द्वारा गत नवम्बरमें न्यायमन्त्रीके नाम भेजे गये पत्रका गृह-सचिव द्वारा भेजा गया उत्तर भी छाप रहे हैं। कांग्रेसने प्रार्थना की थी कि जिन लोगोंने गश्ती चिट्ठीकी हिदायतोंका पालन किया है उन सबको [पिछले] शुल्ककी अदायगीसे मुक्त कर दिया जाये। अब देखिए कि तीन महीने बाद उसका परिणाम क्या निकला। इन बेचारे भारतीयोंके नाम समन्स न्यायमन्त्रीके विभागकी ओरसे निकाले गये थे और फिर उसीने बिना कुछ सुने एक ऐसा पत्र लिखकर गृह-विभागको भेजा। जिसका उत्तर

१. वेंकटाचल नायकको ३ पौंडी करकी गैर अदायगीके आरोपमें किसी समय नवम्बर, १९११ में उमलाज़ीकी अदालतमें पेश किया था। मजिस्ट्रेटने निर्णय दिया कि उससे चालू परवाना-शुल्क नहीं लिया जाना चाहिए। कारण कदाचित् यह था कि उसने किसीके साथ दीवानी अनुबन्ध किया था। इस निर्णयके बाद कोई ४०–५० समन्स, जो जारी किये जा चुके थे, वापस ले लिये गये। नेटाल भारतीय कांग्रेसने १७ फरवरी, १९१२ को गृह-मन्त्रालयके कार्यवाहक सचिवके नाम लिखे अपने पत्रमें इस मामलेका उदाहरण दिया था। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, २४–२–१९१२।

न्याय-मन्त्री ही अधिक अच्छी तरह दे सकते थे और अब गृह-विभाग भारतीय कांग्रेससे उसका उत्तर मांग रहा है। वास्तवमें जब समन्स जारी करनेवाली अदालतमें यह प्रश्न उठा था तब उसका उत्तर देनेसे इनकार करके यह कह दिया गया कि इसके बारेमें न्याय-मन्त्रीके जरिये जानकारी प्राप्त कर ली जाये।

इस प्रकार हम देख रहे हैं कि शक्तिशाली सरकार अपनी जबरदस्त ताकतका उपयोग उन गरीब और असहाय भारतीय नर-नारियोंको कुचलनेमें कर रही है जिन्होंने नेटालको समृद्ध बनानेके लिए अपना खून-पसीना एक कर दिया है। इन गरीब लोगोंकी बहादुरीके साथ रक्षा करना नेटाल भारतीय कांग्रेसका कर्तव्य है। गृह-मन्त्री-को कांग्रेस उत्तर कैसा भी दे, हर हालतमें यह देखना उसका काम है कि असहायोंकी पुकार व्यर्थ न जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-२-१९१२

१९६. पत्र: चंचल बहन गांधीको

[लॉली]

माघ बदी ० [फरवरी १८, १९१२][1]

चि० चंचल,

तुम्हारा पत्र कई महीने बाद मिला। मैं चाहता हूं कि तुम पत्र लिखनेमें कम आलस्य किया करो।

मैं यह अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि तुम्हारी इच्छा चि० हरिलालके साथ रहनेकी ही होगी। इस सम्बन्धमें मैं बिलकुल आड़े नहीं आना चाहता। तुम दोनोंको जैसा रुचे वैसा रहना और करना। मेरी इच्छा तो यही हो सकती है कि तुम्हें सुख प्राप्त हो और तुम सुखी रहो।

कान्तिके[2] लिए तुम मेलिन्स फूडका प्रयोग करती हो, यह मुझे तो ठीक नहीं लगता। मैं तो भारतमें एक भी विदेशी वस्तुका प्रयोग करना पाप समझता हूँ। फिर किसी खानेकी विदेशी वस्तुका प्रयोग करना तो जरा भी नहीं सुहाता। मुझे तो यही लगता रहता है कि उनकी बनाई हुई समस्त वस्तुएँ अपवित्र हैं। उन्हें चर्बी और दारूका प्रयोग करनेमें आपत्ति नहीं होती, इसलिए उनकी जिन वस्तुओंमें चर्बी और दारू आदि चीजें नहीं होतीं वे भी उनकी छूतसे सर्वथा मुक्त नहीं होतीं। हमारे बच्चे पहले इन वस्तुओंके बिना ही बड़े हो जाते थे, ऐसा जानकर और मानकर हमें भी इन वस्तुओंके बिना काम चलाना चाहिए। मेरी सलाह तो यही है। गेहूँको

1. इससे अगला पत्र जिस दिन लिखा गया था, यह पत्र भी उसी दिन लिखा गया जान पड़ता है; देखिए १९१२की डायरीमें १७ फरवरीके लिए लिखा गया विवरण।

2. चंचल बहनका लड़का।

अच्छी तरह भूनकर बारीक दल लें और उसमें गुड़ और पानी मिला दें तो वह मेलिन्स फूडका काम दे सकता है। और भी बहुत-सी चीजें इसकी जगह ली जा सकती हैं।

यह बात समझना आसान है कि तुम्हारे, रामी[1] और कान्तिके वहाँ रहनेसे छबल भाभीको[2] बहुत शान्ति मिलती होगी।

फिलहाल मेरे या बा के यहाँसे जल्दी निकल सकनेकी सूरत मुझे तो दिखाई नहीं देती।

मणिलाल इस समय यहीं है। वह फाल्गुनके मध्य तक यहाँसे जायेगा। जमनादास भी यहीं है। फिलहाल मैं पाठशालाके कार्यमें व्यस्त रहता हूँ। इसमें २५ छात्र हैं; इनमें से आठ मुसलमान हैं, २ पारसी और शेष हिन्दू। हिन्दुओंमें से पाँच मद्रासके, एक कलकत्तेका और बाकी गुजरातके हैं। जमनादास और दूसरे लोग पढ़ानेमें मदद देते हैं।

रामीबाई और कान्तिभाईको मेरी ओरसे बहुत-बहुत प्यार करना। बलीको पत्र लिखनेके लिए कहना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ९५२९) की फोटो-नकलसे।

१९७. हरिलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश

[टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली]
माघ वदी ० [फरवरी १८, १९१२][3]

चि० हरिलाल,

तुम्हारा पत्र कई महीने बाद मिला। तुमने इसमें लिखा है कि तुम नियमित रहनेका प्रयत्न कर रहे हो। किन्तु जान पड़ता है कि यह प्रयत्न निष्फल हुआ है और तुमने मुझे जो नई आशा बँधाई थी वह भी टूट गई है। तुम्हारे पिछले पत्रके बाद दो डाकें खाली गई हैं।

चंची तुम्हारे साथ ही रहनेकी इच्छा प्रकट करती है और उस सम्बन्धमें मेरी राय जानना चाहती है। उसे मैंने उत्तर[4] दिया है और दूसरी खबरें भी दी हैं।

१. चंचल बहनकी लड़की।

२. चंचल बहन गांधीकी माँ।

३. यह पत्र हरिलाल गांधीके मई १९११ में दक्षिण आफ्रिकासे भारत चले आनेके बाद लिखा गया होगा। इसपर माघ वदी ० की तिथि पड़ी हुई है; अतः यह १९१२ में लिखा गया होगा क्योंकि उस वर्ष माघकी अमावास्या फरवरीकी १८ तारीखको पड़ी थी।

४. देखिए पिछला शीर्षक।

वह तुम्हें पत्र पढ़नेके लिए भेजेगी। न भेजे तो मँगा लेना। इसलिए वे ही बातें यहाँ फिर नहीं लिखता। मुझे तुम दोनोंके साथ-साथ रहनेमें कोई आपत्ति नहीं है। तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा करना और रहना।

तुम सेठ मियाँखांके घर रह रहे हो, यह ठीक ही है। उनसे थोड़ा-बहुत भाड़ा लेनेका आग्रह फिर करना। मैं चाँदाभाईसे मिलूँगा, तब बात करूँगा।

चंचीको बाके जैसा रोग किस कारण से. . .[१]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल गुजराती पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५४१) से।

१९८. पत्र : आर० ग्रेगरोवस्कीको

फरवरी २०, १९१२

प्रिय श्री ग्रेगरोवस्की,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद! मैं बड़ी उत्सुकतासे आपकी रायका इन्तजार करूँगा। मैं इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि यह मसविदा एक भारी धोखेबाजी है और इसे ठीक करनेका एक तरीका है आपका बहुमूल्य परामर्श लेना। आपकी पिछले वर्षकी सलाहसे[२] मेरा काम नहीं चलेगा; क्योंकि प्रस्तुत कानूनमें कुछ नई बातें तो आ ही गई हैं; दूसरे, आपके जो विचार मेरे विचारोंसे मिलते हैं, मैं निश्चय ही उनका उपयोग यहाँ भी और लन्दनमें भी अपने उन तर्कोंके समर्थनमें करूँगा, जिन्हें मैं लोगोंके सामने रख चुका हूँ। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप मेरे द्वारा उठाये गये सभी मुद्दोंपर अपनी राय देंगे; पिछले सालकी सलाहका उल्लेख केवल उसी सीमा तक करें जहाँतक पिछले वर्षके मसविदेसे[३] प्रस्तुत विधेयककी तुलना करनेके लिए आवश्यक हो।

हृदयसे आपका,

श्री आर० ग्रेगरोवस्की
प्रिटोरिया

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६३०) की फोटो-नकलसे।

१. आगेके पृष्ठ उपलब्ध नहीं हैं।
२. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४४४-४६।
३. देखिए खण्ड १०, परिशिष्ट ८।

१९९. तार: एशियाई पंजीयकको

[फरवरी २१, १९१२से पूर्व][1]

एशियाटिक्स
प्रिटोरिया

एम० साले कानजी जीवनभाई लालजी मेघजीभाईके यात्रा-अनुमतिपत्रोंसे सम्बन्धित पत्र-व्यवहार देखा। मेरे खयालमें पूरी परिस्थिति न जाननेके कारण आपने प्रार्थनापत्र नामंजूर किये। ये लोग अब लॉरेंको मार्क्विसमें हैं। मालूम हुआ है वे महाविभव (हिज हाइनेस) आगा खांके प्रतिनिधि हैं और एशियाई खोजों . . .।[2] केन्द्रों . . .[3]का दौरा कर रहे हैं। विश्वास है आप प्रार्थनापत्र मिलनेपर अपने लॉरेन्को मार्क्विस-स्थित प्रतिनिधिको तीन सप्ताहके लिए यात्रा-अनुमतिपत्र जारी करनेका अधिकार देंगे।

गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५६५९) की फोटो-नकलसे।

१. आगा खाँके प्रतिनिधियोंकी जोहानिसबर्ग और टॉल्स्टॉय फार्मकी यात्राका उल्लेख २-३-१९१२ के **इंडियन ओपिनियन**के एक समाचारमें मिलता है। इस समाचारमें यह भी बताया गया है कि उन्होंने फार्मपर एक जोड़ी चप्पलें खरीदीं। गांधीजीने भी "जंजीबार मेमन" के नामसे इनका संक्षिप्त-सा उल्लेख करते हुए अपनी डायरीमें फरवरी २१ को उनके आनेका हवाला दिया है, और अपने उस दिनके हिसाबमें दस शिलिंगकी रकम भी जमा दिखाई है, जो फार्मसे खरीदी चप्पलोंकी कीमत थी। अतएव यदि यह तार, जिसमें उन यात्रियोंको ट्रान्सवाल प्रवेशकी अनुमति देनेका अनुरोध किया गया है, भेजा भी गया होगा तो उस तिथिके यानी २१ फरवरीके पूर्व ही।

२ और ३. यहाँ कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके।

२००. पत्र: ई० एफ० सी० लेनको[1]

[लॉली]
फरवरी २४, १९१२

प्रिय श्री लेन,

अब मुझे विधेयकके बारेमें कानूनी सलाहकारकी राय मिल गई है। उसके अनुसार:

(१) यह विधेयक छोटी अदालतोंका अधिकार-क्षेत्र तो समाप्त कर ही देता है, शाही हुक्मनामेके रूपमें पेश किये गये मामलेके अलावा अन्य मामलोंमें ऊँची अदालतोंकी सत्ता भी समाप्त कर देता है।[2]
इससे औरोंके नहीं तो कमसे-कम ट्रान्सवालके भारतीयोंके कानूनी अधिकार निश्चय ही कम हो जाते हैं।

(२) यह भी हो सकता है कि अगर ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय — भले ही वे विधिवत् पंजीकृत हों — अपने स्त्री-बच्चोंको उपनिवेशमें लाना चाहें तो उनसे, पंजीयनके प्रमाणोंके अलावा, उनके अधिवासी होनेके प्रमाण भी मांगे जायें।[3]
मुझे विश्वास है कि जनरल स्मट्सका कोई ऐसा इरादा नहीं है। अतः मेरा ख्याल है, इस मुद्देपर किसी भी सन्देहकी कोई गुंजाइश नहीं छोड़नी चाहिए।

(३) शिक्षित एशियाई प्रवासियोंको ऑरेंज फ्री स्टेट संविधानके परिच्छेद ३३, खण्ड ८ के अन्तर्गत अपने बारेमें कुछ आवश्यक सूचनाएँ देनी होंगी।[4]

यह तो मानना ही पड़ेगा कि मैंने जिन मुद्दोंका उल्लेख किया है, वे सभी सत्याग्रहकी दृष्टिसे और सामान्य न्यायकी दृष्टिसे भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इसलिए मुझे विश्वास है कि इन दोषोंका निराकरण कर दिया जायेगा।

हृदयसे आपका,

अर्नेस्ट एफ० सी० लेन
केप टाउन

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६३४) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए ई० एफ० सी० लेन और आर० ग्रेगरोवस्कीको लिखे पत्र, पृष्ठ २२७-३१।

२. सन् १९१२ के संघ प्रवासी विधेयकके खण्ड ५ (च) और (छ) की व्याख्यासे यही निष्कर्ष निकलता था; देखिए "पत्र: आर० ग्रेगरोवस्कीको", पृष्ठ २२९।

३. तात्पर्य खण्ड २५ (२) से है।

४. तात्पर्य खण्ड २८ से है।

२०१. गलत-बयानी

नाथलियाके मामलेमें[1] लॉर्ड ऐम्टहिलकी समिति द्वारा भेजे गये प्रार्थनापत्रका उपनिवेश-कार्यालयने जो उत्तर दिया है उसे हम इसी अंकमें अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। श्री हरकोर्टको बताया गया है कि संघकी संसद इस समय जिस विधेयक-पर विचार कर रही है उससे इस "प्रकारके मामलेकी पुनरावृत्ति" नहीं होगी। इसीलिए श्री हरकोर्ट इस सम्बन्धमें कोई कार्रवाई करनेसे इनकार कर रहे हैं। तो भी नया विधेयक इस प्रकारके मामलेकी पुनरावृत्ति नहीं होने देगा, श्री हरकोर्टके इस कथनसे इस मामलेकी कठोरता तो सिद्ध हो ही जाती है। स्पष्ट है कि उन्होंने अपना पत्र संघके मन्त्रियों द्वारा दी हुई जानकारीके आधारपर लिखा है। परन्तु जिन लोगोंको नये विधेयकके विषयमें कुछ भी जानकारी है, वे सभी जानते हैं कि इस विधेयकके वर्तमान रूपसे ऐसा कुछ भी होनेवाला नहीं है। उससे तो वर्तमान बुराई और बढ़ेगी ही। नाथलियाके साथ यह शोचनीय घटना सम्भव ही इस कारण हुई कि प्रवासी अधिकारीको मनमाने अधिकार प्राप्त थे। ये अधिकार नये विधेयक द्वारा और भी बढ़ाये जा रहे हैं। इस प्रकारके मामलोंमें दी गई गलत-बयानीका भण्डाफोड़ सुगमतासे किया जा सकता है। जब संघकी सरकारने यहाँ भी साम्राज्य-सरकारको मिथ्या सूचना देनेमें संकोच नहीं किया तब उन मामलोंमें तो उसने जाने कैसी-कैसी मिथ्या सूचनाएँ लिख भेजी होंगी और उनके बारेमें कभी कुछ प्रकट हो ही नहीं सकता!

यह समझना कठिन है कि बालक नाथलियाके मामलेमें, जो अपने किस्मका एक ही मामला है, श्री हरकोर्टने हस्तक्षेप करनेसे इनकार क्यों कर दिया। अन्याय तो हुआ ही है। इसलिए वे इतना तो कर ही सकते थे कि संघ-सरकारसे, दयाकी भीख देनेके लिए नहीं, उनके अपने ही अधिकारियों द्वारा की गई शरारतका निराकरण करनेको कहते। सरकारकी एशियाई-विरोधी नीतिकी बलिवेदीपर नाथलियाकी जो कुर्बानी हुई, वह दक्षिण आफ्रिकाके प्रत्येक भारतीयके हृदयमें सदा चुभती रहेगी। अगर हम कोई अधिक निर्णयात्मक कार्रवाई नहीं कर पा रहे हैं, तो उसका यह अर्थ नहीं है कि हम इस अन्यायको किसी कदर कम मान रहे हैं। अलबत्ता इससे हमारी निर्बलता जरूर प्रकट होती है। परन्तु साम्राज्य-सरकार या संघ-सरकार निःशंक

१. मामलेके विशद विवरणके लिए देखिए "एक क्षोभकारी मामला", पृष्ठ १५३-५४; "एक लज्जाजनक कृत्य" पृष्ठ १९९-२०० तथा "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ २२७ की पाद-टिप्पणी ४। लन्दन-स्थित दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिने नाथलियाके मामलेमें हस्तक्षेप करनेमें नेटाल अदालतोंकी असमर्थताकी बाबतमें १९ जनवरी, १९१२ को उपनिवेश कार्यालयके नाम एक पत्र लिखा था। उत्तरमें कार्यालयने ५ जनवरी, १९१२ को लिख भेजा कि "श्री हरकोर्टका खयाल है कि संघ-संसदके विचाराधीन वर्तमान प्रवासी विधेयक ऐसे किसी मामलेकी पुनरावृत्तिकी सम्भावना नहीं छोड़ता और वे इस सम्बन्धमें कोई कार्रवाई नहीं करना चाहते।"

होकर हमारी इस निर्बलतासे अनुचित लाभ उठानेका दुस्साहस न करे। जो लोग एक बार सत्याग्रहके शस्त्रका प्रयोग कर चुके हैं वे समय आनेपर फिर वैसा करनेसे नहीं चूकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–३–१९१२

२०२. श्रीमती जसातका मामला

अगर श्रीमती जसातको देश-निकाला दिया गया[1] तो ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघ तथा हमीदिया इस्लामिया अंजुमन और किसी हद तक दक्षिण आफ्रिकाके समस्त भारतीयोंकी नाक कट जायेगी।

सरकारने श्री काछलियाको जो उत्तर[2] दिया है, वह सर्वथा असन्तोषजनक है। उससे यह सिद्ध होता है कि सरकारके किसी आश्वासनपर विश्वास नहीं किया जा सकता। कानून जो कहता है, वही ठीक है।

जनरल स्मट्सने स्पष्ट लिखा था कि न्यायाधीश वेसेल्सके निर्णयके बावजूद वे कष्टदायक मामलोंमें राहत देंगे।[3] भारतीय समाज तो इसका अर्थ यही करता है कि यदि कोई यह सिद्ध कर दे कि उसने अपने धार्मिक विधानके अनुसार दो विवाह

१. इब्राहीम मुहम्मद जसात नामक एक पंजीकृत ट्रान्सवालवासी भारतीयके दो पत्नियाँ थीं — रसूल और फातिमा। रसूल स्टैंडर्टनमें रहती थी और फातिमा भारतमें। रसूलके चले जानेपर जसात फातिमाको दक्षिण आफ्रिका लाना चाहता था। बारबर्टनके मजिस्ट्रेटने फातिमाके प्रवेशके दावेको अस्वीकार कर दिया। उसका कहना था कि चूँकि रसूलको जसातकी पत्नीके रूपमें अधिवासका अधिकार प्राप्त हो गया है, इसलिए उसकी दूसरी पत्नीको वह अधिकार नहीं मिल सकता। फातिमाने सर्वोच्च न्यायालयकी ट्रान्सवाल न्याय-पीठमें अपील की, किन्तु १३ फरवरी, १९१२ को न्यायमूर्ति वेसेल्सने उसकी अपील खारिज कर दी। अपना निर्णय देते हुए उन्होंने इससे पहले आदम इस्माइलके मामले (पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ ११५ और "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ११६-१८) में दी गई अपनी व्यवस्थाका उल्लेख किया और कहा कि कोई भी मुसलमान केवल एक पत्नी ला सकता है और जसातके मामलेमें, उसकी वह पत्नी है रसूल, जिसे उसने तलाक नहीं दिया है। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, २४–२–१९१२।

२. काछलिया और बावजीर दोनोंने फरवरी १५, १९१२ को वेसेल्सके निर्णयपर आपत्ति करते हुए जनरल स्मट्सको पत्र लिखे थे। २९ फरवरी, १९१२ को ब्रिटिश भारतीय संघने उन्हें स्मरण दिलानेके लिए एक तार भी भेजा, जिसके उत्तरमें जनरल स्मट्सने २ मार्च, १९१२ को लिख भेजा कि "श्रीमती जसातके मामलेमें ऐसी कोई असाधारण बात" दिखाई नहीं देती "जिसके आधारपर इसमें हस्तक्षेप किया जाये. . .।" देखिए **इंडियन ओपिनियन**, २४–२–१९१२ और ९–३–१९१२।

३. जनरल स्मट्सने अपने १० जुलाई, १९११ के पत्रमें ब्रिटिश भारतीय संघ तथा हमीदिया इस्लामिया अंजुमनको आश्वासन दिया था कि न्यायाधीशने आदम इस्माइलके मामलेमें मुसलमान प्रवासियोंकी पत्नियोंके सम्बन्धमें जो व्यवस्था दी है, उसे नोट कर लिया गया है और भविष्यमें लोगोंको ऐसी परेशानीमें डालनेवाला जो भी मामला सामने आयेगा, उसपर खयाल किया जायेगा। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, २२–७–१९११ और १४–२–१९१२।

किये हैं और वह अपनी दूसरी पत्नीको लाना चाहता है तो उसे कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

जनरल स्मट्स लिखते हैं कि इसमें उन्हें ऐसी महत्वकी कोई बात नहीं दिखाई देती। वे कौन-सी महत्वपूर्ण बात देखना चाहते हैं? हमारे लिए तो महत्व-पूर्ण बात यह है कि श्रीमती जसात श्री जसातकी परिणीता पत्नी हैं।

श्री जसातका इरादा क्या करनेका है? क्या वे अपनी पत्नीको निर्वासित होने देंगे और पापी पेटकी खातिर स्वयं चुपचाप ट्रान्सवालमें पड़े रहेंगे? और उनके भाई-बन्दोंका इरादा क्या है? श्रीमती जसातको बिना किसी अपराधके लाचार करके जब पुलिस हद पार करेगी तब वे क्या चूड़ियाँ पहनकर यों ही देखा करेंगे?

और संघका कर्त्तव्य क्या होगा? तार भेजने और पत्र लिखनेसे ही क्या उसका कर्त्तव्य पूरा हो गया? क्या हमीदिया इस्लामिया अंजुमन हाथपर-हाथ धरे चुपचाप बैठा रहेगा? इस अंजुमनके कर्ता-धर्ता क्या यह नहीं समझते कि ऐसे मामलोंसे इस्लामका अपमान हो रहा है?

इस मामलेमें यह सवाल नहीं उठता कि श्री जसात गरीब हैं या अमीर, भले हैं या बुरे। वे अपनी पत्नीको यहाँ लाये और अब सरकार उन्हें धक्का देकर बाहर निकालनेके लिए तैयार है। यह धक्का हम सबको दिया जा रहा है।

नेटाल और केप [के भारतीयों]को यह न समझना चाहिए कि ऐसा कानून वहाँ नहीं है।

हम आशा रखते हैं कि श्रीमती जसात बहादुर महिला हैं और वे निर्वासित कर दिये जानेपर अपने पतिसे मिलनेके लिए फिर सीमाका उल्लंघन करके उपनिवेशमें आयेंगी और यदि वैसा करते हुए जेल जाना पड़ा तो जेल भी जायेंगी।

हमें यह भी आशा है कि श्री जसात भारतीय पतिके अनुरूप उत्साह रखते हुए अपनी पत्नीके लिए अपना सब कुछ छोड़कर जो भी कष्ट आन पड़ेगा सहेंगे, और न्याय प्राप्त करेंगे।

हमारा खयाल है कि श्री जसातके भाई-बन्द उन्हें हिम्मत देंगे, आवश्यकता हुई तो पैसेसे भी उनकी मदद करेंगे और सरकारसे न्याय दिलानेके लिए आगे आयेंगे।

हमारा खयाल यह भी है कि संघ और हमीदिया अंजुमनके सदस्य अपने अतीतके महान कार्योंका स्मरण करके तबतक संघर्ष करते रहेंगे जबतक न्याय प्राप्त नहीं हो जाता।

सबको याद रखना चाहिए कि हमारे पास प्रथम और अन्तिम एक ही उपचार है—सत्याग्रह, हमारे पास इसके सिवा और कुछ नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-३-१९१२

२०३. भाषण : विदाई-सभामें[1]

जोहानिसबर्ग
शनिवार, मार्च ९, १९१२

सर्वश्री मेढ और प्रागजीने नेटालसे सारा तौरपर ट्रान्सवाल आकर और जेल जाकर समाजकी बड़ी सेवा की है। जेलसे बाहर आनेपर भी उन्होंने पैसेके लोभमें किसी प्रकारका कारोबार नहीं किया, वरन् टॉल्स्टॉय फार्ममें रहकर पाठशाला आदिके कार्योंमें मदद दी।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, १६–३–१९१२

२०४. पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
फाल्गुन बदी ८ [मार्च ११, १९१२][2]

भाई श्री प्राणजीवन,

यह पत्र भाई सुरेन्द्रराय मेढ और प्रागजी देसाईमें से कोई आपको देंगे। आपके दर्शन करनेकी इनकी इच्छा सहज है, क्योंकि इन्होंने मेरे मुँहसे आपके बारेमें बहुत-कुछ सुना है। यदि सम्भव हो तो इनका विचार जबतक वहाँ रहें, आपके अधीन अकाल-निवारणके सम्बन्धमें काम करनेका है। दोनों पक्के सत्याग्रही हैं। भाई मेढने दस वर्ष तक ब्रह्मचर्य-पालन और देश-सेवा करनेकी प्रतिज्ञा ली है। उनका इससे सम्बन्धित पत्र मैंने आपको भेजा था। भाई प्रागजीका विचार भी ऐसी ही प्रतिज्ञा लेनेका है। यह इस बातपर निर्भर है कि अपने बड़े-बूढ़ोंसे परामर्श करनेके पश्चात् उनका क्या विचार बनता है। भाई मेढको अहमदाबादमें पहुँचकर यह देखना है कि वे किस

१. यह सभा सत्याग्रही सुरेन्द्रराय मेढ तथा प्रागजी खण्डुभाई देसाईको विदाई देनेके लिए जोहानिसबर्गके इंडिपेंडेंट चर्च हॉलमें की गई थी; देखिए अगला शीर्षक।

२. स्पष्ट ही यह पत्र २९ दिसम्बर, १९११ को श्री गोखलेकी प्रस्तावित दक्षिण आफ्रिका-यात्राकी घोषणाके बाद और २२ अक्तूबर, १९१२ को उनके दक्षिण आफ्रिका पहुँचनेके पूर्व लिखा गया था। परन्तु गुजराती तिथि फाल्गुन वदी ८ से मालूम होता है कि यह १९१२ में ही लिखा गया होगा। उस वर्ष फाल्गुन वदी ८ को मार्चकी ११ तारीख पड़ी थी। श्री मेढ और देसाई मार्च २१ को भारतके लिए रवाना हुए। देखिए पिछला शीर्षक भी।

हद तक अपनी प्रतिज्ञापर दृढ़ रह पाते हैं। यह तो निश्चित है कि उनके पिता उनपर भर-सक दबाव डालेंगे।

मैं चाहता हूँ कि आप इन दोनोंको मिलनेके लिए बुलायें। यदि बुलायें तो उन्हें वहाँ आनेका किराया भी दें। ये दोनों गरीबीसे रहते हैं। ये लोग प्रो० गोखलेके आगमनसे पूर्व यहाँ लौट आयेंगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (जी० एन० १२६२)की फोटो-नकलसे।

२०५. गिरमिटिया प्रथा-सम्बन्धी प्रस्ताव

कलकत्तेकी शाही विधान परिषद (इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौन्सिल)में श्री गोखलेका गिरमिटिया मजदूरोंको भारतसे बाहर भेजना सर्वथा बन्दकर देनेका प्रस्ताव स्वीकृत हो जाता[1] तो एक आश्चर्यकी बात होती; परन्तु फिर भी जान पड़ता है कि निर्वाचित सदस्योंमें से तो प्रायः सभीने प्रस्तावके पक्षमें मत दिया। इसलिए यह एक बड़ी नैतिक विजय है। श्री गोखले किसी कामको एक बार उठा लेनेपर फिर उसे छोड़ देनेवाले व्यक्ति नहीं हैं। इस कारण हम आशा कर सकते हैं कि गिरमिटिया मजदूरोंकी प्रथाका, जो दास-प्रथाका अवशेष है, निकट-भविष्यमें अन्त हो जायेगा। श्री गोखलेको हम उनके महान् कार्यपर बधाई देते हैं। हम उनके ऋणी तो थे ही; उन्होंने अपने देशवासियोंके एक असहाय वर्गके लिए जो नवीनतम प्रयास किया है, उसके कारण हम उनके और भी अधिक ऋणी हो गये हैं।

जान पड़ता है, इस प्रस्तावके विषयमें कुछ गलत फहमी है। हमारे कुछ पाठकोंका खयाल है कि इससे नेटालकी वर्तमान स्थितिमें अन्तर पड़ेगा; बात ऐसी नहीं है। इस प्रस्तावके अस्वीकृत हो जानेके कारण भारत-सरकार जो-कुछ पहले कर चुकी है, उसपर पानी नहीं फिर जाता।[2] जिस प्रकार नेटालके लिए गिरमिटियोंकी भरती बन्दकर दी गई है, उसी प्रकार भारतके गवर्नर [-जनरल]को अधिकार है कि भारतीयोंके साथ सन्तोषजनक व्यवहार न होता हो तो वह चाहे जब अन्य उपनिवेशोंके लिए भी भरती बन्द कर दे। अलबत्ता, श्री गोखलेका प्रस्ताव स्वीकृत हो जाता[2] तो उसका यह परिणाम जरूर निकलता कि सभी उपनिवेशोंके लिए गिरमिटिया प्रथाके अन्तर्गत भर्ती बन्द हो जाती।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-३-१९१२

१. गोखलेका प्रस्ताव बाईसके मुकाबले तैंतीस मतोंसे अस्वीकृत हो गया था; देखिए **इंडियन ओपिनियन,** ९-३-१९१२।

२. देखिए पृष्ठ ९७, पाद-टिप्पणी ६।

२०६. श्री रत्नम् पत्तर

इंग्लैंडमें अपना विद्यार्थी-जीवन सफलतापूर्वक समाप्त करके अभी-अभी एक और नवयुवक भारतीय बैरिस्टर हम लोगोंके बीच आ गये हैं; इस नवयुवकका जन्म नेटालमें हुआ है। इससे प्रकट होता है कि भारतीयोंकी नई पीढ़ी तेजस्वी है और उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। श्री रत्नम् पत्तरका जन्म और पालन-पोषण डर्बनमें हुआ था। वे यहाँके हायर ग्रेड इंडियन स्कूलमें पढ़ चुके हैं।[1] अपने स्वागतके लिए आयोजित समारोहमें उन्होंने कहा है कि मैं उत्सुकतासे उस दिनकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ जिस दिन मुझे भी भारतीय समाजके दुःख, समृद्धि और सुखमें भाग लेनेका गौरव मिलेगा। इनमें से पहली बातमें हिस्सा बँटानेका तो निश्चय ही उन्हें पूरा अवसर मिलेगा, दूसरी बातमें उनका सहयोग इस बातपर निर्भर करेगा कि वे समृद्धि किसे मानते हैं और किसे नहीं; और तीसरी बात तो एक मृग-तृष्णा है जो उसके पीछे दौड़नेपर कदापि नहीं मिलती; परन्तु कर्त्तव्यपरायण रहनेसे सुलभ हो जाती है। श्री पत्तरने भारतकी प्राचीन संस्कृतिके प्रति अभिमानका भाव प्रकट करके उचित ही किया है। यदि वे अपने मनमें यह भाव बनाये रखेंगे तो अच्छा होगा। यद्यपि हम विद्योपार्जनमें तेजस्विताका मूल्य कम नहीं आँकते, तथापि हमें इस बातका अंदेशा है कि हमारे जो नवयुवक पूर्णतया पश्चिमी प्रणालीसे शिक्षित होते हैं, वे कहीं अपनी राष्ट्रीयता, धर्म और मातृभाषाकी, जो साहित्य और संस्कृतिका निधान है, अवहेलना न करने लगें। हम अपने युवक मित्रका हार्दिक स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि उनका अपने जन्म-स्थानमें पुनरागमन उनके सम्पर्कमें आनेवाले लोगों, समस्त भारतीय समाज और स्वयं उनके लिए वरदान सिद्ध होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-३-१९१२

१. गांधीजी जब सन् १९०६ में साम्राज्य-सरकारके पास भेजे गये शिष्टमण्डलके सदस्यके रूपमें इंग्लैंडमें थे तो उन्होंने पत्तरके शिक्षणमें बड़ी दिलचस्पी दिखाई थी; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २६-२७, १११, १९२, २५० और २६५-६६।

२०७. तार : गृह-मन्त्रीको[1]

[लॉली]
मार्च २०, १९१२

गृह-मन्त्री
केप टाउन

क्या अब मुझे प्रवासी कानूनके बारेमें सूचना प्राप्त हो सकती है? भारतसे उसके सम्बन्धमें पूछताछ का तार आया है।

गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६४१) की फोटो-नकलसे।

२०८. पत्र : छगनलाल गांधीको

[लॉली]
चैत्र सुदी ६, [मार्च २४, १९१२]

चि० छगनलाल,

मुझे चि० मगनलालका पत्र मिला है। मुझे तुम्हारी सभा और उसकी कार्रवाईकी बात समझ नहीं आती। तुम जब लौटोगे तो तुम्हें अपनी जगह क्यों नहीं मिलेगी, यह बात मैं समझ नहीं पाता। इस सबका क्या परिणाम निकला, सो सूचित करना। चि० मगनलालको मैं अलग पत्र नहीं लिखता। हिसाबके काममें बहुत व्यस्त हूँ। यह भी सुझाना चाहिए कि यदि वे तुम्हें मैनेजरके रूपमें नहीं रखते तो तुम प्रेसमें क्या काम करोगे सो वे ही तय करें। तुम फिलहाल तो चुप ही रहना। वे क्या करते हैं, यह सूचित करना। धीरज रखनेसे यह मृगजल अदृश्य हो जायेगा। चाहता यह हूँ कि तुम स्थिरचित्त रहो।

इसके साथ चि० अभेचन्दकी[2] भेजी हुई अकालके चन्देकी सूची है। इसे छाप देना।[3] चेक यहाँ आ गया है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६३८) की नकलसे।
सौजन्य : छगनलाल गांधी।

१. मन्त्री महोदयने उसी दिन उत्तर दिया कि यह पहलेसे कह सकना नामुमकिन है कि "प्रवासी कानूनपर कब विचार होगा. . . फिर भी मालूम होते ही मैं सम्भावित तिथिकी सूचना आपको भेज दूँगा।" (एस० एन० ५६४२)

२. गांधीजीके एक कुटुम्बी अमृतलालके पुत्र। नेटाल प्रान्तके टोंगाट नामक नगरमें इनका अपना कारोबार था।

३. यद्यपि सूची उपलब्ध नहीं है, किन्तु शायद तात्पर्य उसी सूचीसे है जो ३०-३-१९१२ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित हुई थी।

२०९. सार्वजनिक पत्र: रतन जे० टाटाको

[लॉली]
अप्रैल १, १९१२

सत्याग्रहकी जबरदस्त लड़ाईका खर्च चलानेके लिए आपने दूसरी बार २५,००० रुपयेका जो उदारतापूर्ण दान भेजा था उसकी प्राप्ति स्वीकार करते हुए मैंने अपने पत्रमें[1] आपसे — और अपनेसे भी — यह वादा किया था कि मैं आपके नाम एक सार्वजनिक पत्र लिखूंगा और उसमें आय-व्ययका हिसाब दूंगा। मुझे इस बातकी बड़ी लज्जा है कि यह वादा मैं इतनी देरसे अब पूरा कर पा रहा हूँ। इतनी देर होनेका कारण यह है कि लड़ाईके सिलसिलेमें कोई-न-कोई काम ऐसा आता रहा जिसे टाला नहीं जा सकता था और जिसमें मेरा सारा समय लग जाता था; और मेरी समझमें पैसेका हिसाब दिये बिना उक्त पत्र लिखना ठीक नहीं था। लेकिन बहादुर सत्याग्रही श्री सोराबजी शापुरजीकी उत्साहपूर्ण मददसे यह हिसाब मैंने अभी-अभी पूरा कर लिया है और मैं आपको इस पत्रके साथ उसका पूरा सारांश दे रहा हूँ।[2]

खर्चके खानेमें आप एक मद देखेंगे — "फार्मके पूंजीगत खर्चका हिसाब" (फार्म कैपिटल एकाउन्ट)। यह हिसाब श्री कैलेनबैकके फार्मपर[3] मकान बनवानेमें हुए खर्चका है। श्री कैलेनबैकने सत्याग्रहियोंको अपने फार्मका उपयोग जिन शर्तोंपर करनेकी-अनुमति दी है उनके अनुसार फार्मके खाली कर दिये जानेपर श्री कैलेनबैक यह सारा खर्च या उसका अधिकांश वापस कर देंगे। 'इंडियन ओपिनियन' के खर्चकी मदका स्पष्टीकरण मैं माननीय श्री गोखलेके नाम लिखे हुए सार्वजनिक पत्रमें[4] दिये गये पिछले हिसाबमें कर चुका हूँ। "राहत"में सत्याग्रहियोंके गरीब परिवारोंको दिया गया कुल [निर्वाह-] खर्च और उन्हें तथा उनके परिवारोंको दी हुई दूसरी [फुटकर] सहायता शामिल है। हिसाबकी बाकी मदोंका अर्थ स्पष्ट है। आयके खानेमें दर्जकी हुई मदोंके बारेमें मुझे इतना ही कहना है कि रंगून और लन्दनसे प्राप्त राशियाँ इस हिदायतके साथ भेजी गई थीं कि यह सारा पैसा राहतके कामपर ही खर्च किया जाये। भारतसे प्राप्त कुछ रकमोंके बारेमें श्री पेटिटकी यही हिदायत थी। सभी हिदायतोंका पूरा-पूरा पालन किया गया है। आयके खानेमें "स्थानिक" शीर्षकके अन्तर्गत कुछ राशियाँ दी गई हैं जो सही मानेमें चन्दा नहीं हैं; वे विशेष प्रकारके

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है। टाटाने रु० २५,००० का अपना पहला दान नवम्बर, १९०९ में भेजा था; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ८४। रु० २५,००० का एक दूसरा दान उन्होंने १८ नवम्बर, १९१० को भेजा था; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४०७।

२. हिसाब इस पत्रके अन्तमें दिया हुआ है।

३. टॉल्स्टॉय फार्म।

४. अप्रैल ५, १९१० का पत्र; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ २४५-४९।

खर्चेकी वापसी या अदायगीके सिलसिलेमें प्राप्त रकमें हैं। इसमें फार्मकी हमारी पाठशालामें पढ़नेवाले विद्यार्थियोंके माता-पिताओं द्वारा चुकाया गया उनका भोजन-खर्च भी शामिल है।

बहुत-से स्वयंसेवकोंने स्वेच्छासे और बिना कुछ लिये हमारी मदद की; श्री कैलेनबैकने ठीक समयपर हमें सहायता दी और इस सबसे बढ़कर सत्याग्रहियोंके परिवारोंने फार्मपर जाकर रहनेका सुझाव बड़ी तत्परतासे स्वीकार कर लिया; यदि यह सब न हुआ होता तो खर्च बहुत ज्यादा होता।

इस हिसाबके प्रकरणको समाप्त करनेके पहले मैं इतना और कह देना चाहूँगा कि इस हिसाब-पत्रकमें जो खर्च दिखाया गया है उसमें स्थानिक समितियोंने जगह-जगह जो सैकड़ों पौंड इकट्ठे किये और खर्च किये उनका कोई उल्लेख नहीं किया गया है। इसी प्रकार लोगोंने निजी तौरपर जो पैसा इकट्ठा किया उसका भी कोई जिक्र नहीं है; इसके बारेमें तो शायद हमारे देशके लोगोंको कभी कुछ मालूम ही नहीं होगा। यह संघर्ष चार साल तक चलता रहा और इस अवधिमें समाजको बहुत ज्यादा आर्थिक त्याग करना पड़ा। इस सम्बन्धमें मुझे एक सुखद अनुभव यह हुआ कि जो लोग अपने और अपने देशके सम्मानकी रक्षाके लिए लगातार जेल जा रहे थे उन्होंने खुशीसे इस लड़ाईकी सहायतामें सबसे ज्यादा पैसा भी दिया।

आप देखेंगे जमाके मुकाबलेमें खर्च अधिक हो गया है। और उसे पूरा करनेके लिए जहाँसे भी मदद मिलनेकी सम्भावना दीखती है, उन सभी साधनोंका सहारा लेना पड़ रहा है। घाटेकी यह स्थिति कोई तीन माह पूर्व शुरू हुई थी। सौभाग्यसे इन दिनों श्री पेटिटने बड़े मौकेपर दो बार पैसा भेज दिया। अब अगर भारतसे सहायता न आये और हम यहाँ भी आवश्यक चन्दा इकट्ठा न कर सकें तो हमें जहाँ-तहाँ काट-कसर की बात सोचनी होगी। सत्याग्रहियोंके अधिकांश परिवार — बच्चे और स्त्रियाँ — फार्मसे चले गये हैं और उनके पतियों या परिवारके कमानेवाले सदस्योंने अपनी जीविकाके साधन ढूँढ़ लिये हैं; लेकिन वे सब यह तो मानते ही हैं कि अगर लड़ाई फिर शुरू हुई तो वे पुनः फार्मका आश्रय लेंगे।

यद्यपि संघ-संसदकी बैठकें अभी चल रही हैं और मेरे तथा जनरल स्मट्सके पिछले सालके पत्र-व्यवहारमें[1] तय शुदा शर्तोंको कार्यान्वित करनेके उद्देश्यसे जो विधेयक तैयार किया गया था उसका पहला वाचन हो चुका है, फिर भी अभी यह कहना कठिन है कि इस साल हमारी लड़ाई पूरी तरह समाप्त हो जायेगी या नहीं। सत्याग्रहकी दृष्टिसे विधेयकमें ऐसे दोष हैं जिनके खिलाफ आपत्तियाँ उठाई

१. यह पत्र-व्यवहार नवम्बर, १९१० में शुरू हुआ और २० मई, १९११ तक चलता रहा। मार्च, १९११ के दरमियान गांधीजीने गृह-मन्त्रीके सचिवके नाम जो पत्र लिखे उनके लिए देखिए खण्ड १०; सरकारकी ओरसे गांधीजीके नाम आये हुए पत्रोंके लिए सम्बन्धित परिशिष्ट देखिए। १ अप्रैल और २० मई, १९११ के बीच गृह-मन्त्री अथवा उनके निजी सचिवके नाम गांधीजी द्वारा लिखे पत्रोंकी तारीखें इस प्रकार हैं: अप्रैल ७, ८, १९, २०, २२ और २९ तथा मई ४, १८, १९ और २०। सरकारकी ओरसे आये पत्रोंके लिए देखिए परिशिष्ट १, २, ४, ५ और ६।

जा सकती हैं; वैसे भी उसमें दोष हैं।[1] मेरी रायमें उसमें समझौतेका[2] पूरा पालन नहीं हुआ है। किन्तु मुझे आशा है कि समझौतेके पालनकी दृष्टिसे इसमें जो त्रुटियाँ रह गई हैं संशोधनके द्वारा उनका निवारण कर दिया जायेगा। यदि किसी महत्वपूर्ण बातमें संशोधन नहीं किया गया तो निश्चय ही फिरसे संघर्ष छिड़ जायेगा। ऐसा भी डर है, और वह निराधार नहीं है, कि विधेयक संसदके इस अधिवेशनमें पास ही न किया जाये। लगता है, ऐसी स्थितिमें फार्मको चलाते ही रहना होगा। आप जानते हैं, लड़ाईका मुख्य मुद्दा ट्रान्सवालके प्रवासी कानूनमें जाति-भेदका अस्तित्व ही रहा है। हम आरम्भसे ही इसका विरोध करते आ रहे हैं। ट्रान्सवाल जबतक एशियाइयोंको, केवल एशियाई होनेके कारण, निषिद्ध प्रवेशार्थी माननेका हठ करता रहेगा तबतक संघर्ष भी चलता रहेगा। ज्यों ही यह भेद दूर हुआ और लिखित समझौतेके अनुसार वे सब शर्तें तय हो गई, जिनकी तफसील मुझे यहाँ देनेकी जरूरत नहीं है, कि सत्याग्रहियोंका अभिप्राय पूरा हो जायेगा। इसके बाद सचमुच कितनों और किन लोगोंको ट्रान्सवाल या संघमें प्रवेश करने दिया जायेगा, इस सम्बन्धमें सत्याग्रहियोंने, सत्याग्रहियोंके रूपमें, कोई आग्रह नहीं किया है। कितने आदमी, किस प्रकार प्रवेश कर सकेंगे, इसका निर्णय बहुत-कुछ यहाँके लोगोंके व्यवहार और भारतकी माँगपर निर्भर रहेगा।

इस संघर्षका शायद सबसे बड़ा और ठोस नतीजा निकला है फार्मपर एक स्कूलका प्रारम्भ। अभी हाल तक तो मैं उसे दो पक्के सत्याग्रहियों, श्री मेढ और श्री देसाईकी सहायतासे चला रहा था; अब मेरा एक भतीजा[3] उसमें मेरी सहायता कर रहा है। अभी विद्यार्थियोंकी संख्या पच्चीस है और पचाससे अधिक विद्यार्थी भरती करनेका विचार भी नहीं है। दिनमें पढ़कर घर चले जानेवाले विद्यार्थी नहीं लिये जाते। सबको यहीं फार्मपर रहना पड़ता है। अधिकतर माता-पिता अपने बालकका भोजन-व्यय १ पौंड १० शिलिंग प्रति मास देते हैं। इस प्रकार जो राशि मिलती है उसे सत्याग्रह-कोषके हिसाबमें जमा कर दिया जाता है। पढ़ाईका शुल्क कुछ नहीं लिया जाता। मानसिक शिक्षणके साथ-साथ दस्तकारीका अभ्यास भी करवाया जाता है, परन्तु सबसे अधिक बल चरित्र-निर्माणपर दिया जाता है। विद्यार्थियोंको किसी भी प्रकारका शारीरिक दण्ड न देकर उनके मन और बुद्धिको प्रभावित करके उनकी उत्तम सम्भावनाओंको प्रकट करने और उनका विकास करनेकी पूरी-पूरी कोशिश की जाती है। उन्हें अपने अध्यापकोंके साथ मिलने-जुलने और निस्संकोच अपनी बात कहनेकी अधिकतम छूट दी जाती है। वास्तवमें यह संस्था स्कूल नहीं, एक परिवार है और यहाँ व्यवहार तथा उपदेशके द्वारा ऐसा प्रयत्न किया जाता है कि सब बालक अपने-आपको इस परिवारका अंग समझने लगें। प्रातःकाल तीन घंटे तक बालक कोई सरल-सा शारीरिक श्रम करते हैं—

१. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ २१०-१२ और २२७-२८।

२. २० मई १९११ का समझौता।

३. जमनादास गांधी; देखिए "पत्र: चंचल बहन गांधीको", पृष्ठ २३४ और "पत्र: मणिलाल गांधीको", पृष्ठ २५३।

इसके लिए खेतीको चुना गया है। वे अपने कपड़ आप धोते हैं और उन्हें प्रत्यक काममें पूर्णतया स्वावलम्वी रहना सिखाया जाता है। स्कूलके साथ ही चप्पल वनाने और सिलाई सीखनेका भी एक वर्ग चलता है। सिलाईका वर्ग श्रीमती वॉगलके निरीक्षणमें चलता है, जिन्होंने गत वर्ष भारतीय महिला संघकी ओरसे एक भारतीय वाजारका[1] सफल आयोजन करके दिखलाया था। मुझे यह वतानेकी आवश्यकता नहीं कि श्रीमती वॉगल यह कार्य केवल कर्त्तव्य-भावनासे कर रही हैं। फार्मपर स्कूल या रसोईके कामके लिए वेतन-भोगी नौकर नहीं रख जाते। रसोईका सारा काम श्रीमती गांधी और श्रीमती सोढा करती हैं। दो या तीन विद्यार्थी, जो प्रति सप्ताह वदलते जाते हैं, इनकी सहायता करते हैं। फार्मपर तम्वाकू और शराव न पीने और निरामिष भोजन करनेके नियमका पालन सवको करना पड़ता है। मानसिक शिक्षण प्रतिदिन कमसे-कम साढ़े तीन घंटे तक दिया जाता है। उसमें विद्यार्थियोंकी अपनी-अपनी भाषा, अंग्रेजी, गणित और जितना अंग्रेजी अथवा मातृभापा पढ़ाते हुए प्रसंगवश जरूरी हो जाता है उतना भूगोल तथा इतिहास पढ़ाया जाता है। शिक्षाका माध्यम मुख्यतः भारतीय भाषाएँ, अर्थात् गुजराती, हिन्दी और तमिल हैं। मुझ खद है कि तमिलका कोई अच्छा अध्यापक न मिलनेके कारण उसकी पढ़ाई वहुत प्रारम्भिक अवस्थामें चल रही है। शामको एक घंटा वालकोंको अपने-अपने धर्मसे परिचय करवानेमें लगाया जाता है। इसके लिए इस्लाम, हिन्दू और जरथुस्त्री धर्मोंकी पुस्तकोंका पाठ किया जाता है। इस समय जरथुस्त्री धमकी पुस्तकोंका पाठ वन्द है, क्योंकि स्कूलम जो दो पारसी वालक थे वे हाल ही म चले गये हैं। धर्मोंके अनुसार, यह पत्र लिखनेके समय तक, सोलह वालक हिन्दू और नौ मुसलमान हैं और प्रान्तोंके अनुसार अठारह गुजराती, छः तमिल और एक वालक उत्तर भारतीय है। विभिन्न धर्म-पुस्तकोंका पाठ होनेके समय सभी धर्मोंके वालक उपस्थित रहते हैं। उनमें यह भाव भरनेका यत्न किया जाता है कि वे सर्व प्रथम भारतीय हैं और अन्य सव-कुछ वादमें; और यह भी कि उन्हें अपने धर्मका पूरी सचाईसे पालन करते हुए भी अपने साथी वालकोंके धर्मका समान रूपसे आदर करना चाहिए। फार्मका जीवन अधिकसे-अधिक सादगीका जीवन है।

यह स्कूल अभी एक प्रयोगके रूपमें चलाया जा रहा है। इसलिए ऐसी आशा करना तो वहुत वड़ी वात होगी कि यहाँके वालक वड़े होकर भी किसान ही वने रहेंगे और सादा जीवन वितायेंगे, तो भी इतनी आशा तो रखी ही जा सकती है कि वे इस समय जो-कुछ सीख रहे हैं, जीवन-संघर्षमें पड़कर भी उसके अनुसार कुछ-न-कुछ अवश्य चलेंगे।

अलवत्ता, इस स्कूलको चलाते रह सकनेका सवाल है। मेरी इच्छा है कि जवतक मैं दक्षिण आफ्रिकामें रहूँ तवतक इसी काममें लगा रहूँ और वकालतका जो काम मैं कुछ समयसे विलकुल छोड़ चुका हूँ उसे फिर न करूँ।[2] जिस कामको

१. देखिए "अभिनन्दनपत्र : श्रीमती वॉगलको", पृष्ठ १७९ ।

२. देखिए "पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ ६६ ।

विशुद्ध राजनीतिक कह सकते हैं उसमें मैं फिर भी भाग लेता ही रहूँगा और यहाँ राजनीतिक कामका अर्थ है सम्मान और प्रतिष्ठापूर्वक अपनी जीविका चलानेका यथाशक्ति प्रयत्न करते रहना।

मो० क० गांधी

[सहपत्र]

हिसाब

आय	पौं०	शि०	पें०	व्यय	पौं०	शि०	पें०
भारतसे चन्दा मिला (इसमें श्री रतन टाटा से प्राप्त ५०,००० रु० भी शामिल हैं)	६,७२३	९	३	सत्याग्रहियों और उनके परिवारोंको सहायता दी गई	२,३३५	१	३
				लन्दनकी समितिको भेजा	१,४९०	६	२
रंगूनसे प्राप्त	९७२	०	०	'इंडियन ओपिनियन'	१,२००	०	०
				वेतन	५३०	१	३
जंजीवारसे	५९	३	६	मार्ग-व्यय और माल-भाड़ा	४८२	६	११
मोजाम्बिकसे	५०	०	०	किराया आदि	३५३	१९	१
मुम्वासासे	१८	१२	१०	केप टाउन, नेटाल और ट्रान्सवालमें कानूनी कार्रवाईपर व्यय	३७१	१	३
डेलागोआ-वेसे	११	१२	०				
तमाकानसे	७	१७	४	तार-व्यय	१२१	१८	६
नविशासे	२	६	८	समुद्री तार	१९१	९	१
चिन्देसे	०	१५	०	समाचारपत्र	१५४	१२	१०
चाइचाईसे	०	४	९	डाक टिकट	६५	१२	१
व्लैंटायरसे	१	१	०	स्टेशनरी	३९	१३	११
लन्दनसे	१५९	१९	४	ड्राफ्टों और चेकोंपर वैंकका कमीशन	३१	१०	९
स्थानिक (इसमें सारे द० आफ्रिकामें विभिन्न स्थानोंसे मिला चन्दा, विद्यार्थियोंके भोजन-व्ययके लिए प्राप्त रकम और वापस की हुई राशियाँ भी शामिल हैं)	४५९	१०	१	फार्मकी पूँजी मकान वनाने और सामानका व्यय	४९२	११	११
				'फार्म'को ठीक रखनेका व्यय	६५९	८	०
देना शेष	४३	१	३				
	८,५०९	१३	०		८,५१९	१३	०[1]

[अंग्रजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-४-१९१२

१. कुल रकमोंके सही योगकी दृष्टिसे यही संख्या होनी चाहिए, किन्तु मूलमें ८५०९ है, जो कदाचित् छपाईकी भूल है। यह बात पत्रमें आये गांधीजीके इस वाक्यसे भी सिद्ध होती है कि "आप देखेंगे, जमाके मुकाबले खर्च अधिक हो गया है।" देखिए पृष्ठ २४६।

२१०. पत्र: ई० एफ० सी० लेनको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली
अप्रैल ४, १९१२

प्रिय श्री लेन,

विधेयकके सम्बन्धमें आपके पिछले तारके[1] लिए धन्यवाद। अभीतक विधेयक पेश नहीं हुआ है। क्या आप बता सकेंगे कि इस सत्रमें वह पेश भी किया जायेगा, या उसे छोड़ ही दिया जायेगा? यदि इसे छोड़ देनेकी बात हो, तब तो कोई-न-कोई नई व्यवस्था करनी ही पड़ेगी। आशा है, आप इससे सहमत होंगे। यदि सम्भव हो तो कृपया इसका जवाब तार द्वारा दें।[2]

हृदयसे आपका,
[मो० क० गांधी]

श्री अर्नेस्ट एफ० सी० लेन
केप टाउन

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६४३) से।

२११. बस्तियाँ और रोग

समाचार मिला है कि केप प्रान्तके स्वास्थ्य चिकित्सा अधिकारी डॉ० थॉर्नटनने क्षय-आयोगके सामने गवाही देते हुए अभी उस दिन कहा: नगरपालिकाकी बस्तियोंकी हालत बहुत खराब है। कुछेक [बस्तियों]को छोड़कर, झोंपड़ियोंका किसी प्रकारका निरीक्षण कदाचित् ही किया जाता है। और बहुत कम नगरपालिकाएँ ऐसी हैं जो बस्तियोंसे होनेवाली आयके बदलेमें उन्हें कोई सुविधाएँ प्रस्तुत करती हैं। आयोगके सामने दी गई अन्य गवाहियोंसे सिद्ध होता है कि अधिक "सुसंस्कृत" राष्ट्रोंकी दूसरे लोगोंको "सभ्य" बनानेकी नीतिका परिणाम इस देशके मूल निवासियोंकी मृत्यु और उनके विनाशके रूपमें प्रकट हुआ है। जबतक यहाँकी मूल जातियोंने यूरोपीय रहन-सहन और रीति-रिवाजको नहीं अपनाया था, तबतक यहाँ क्षयका नाम भी लगभग अपरिचित था। ईसाई धर्म-प्रचारकोंके एक केन्द्रका विशेष रूपसे जिक्र करके बतलाया गया है कि वह इस रोगसे अपेक्षाकृत सुरक्षित है और इसका कारण यह है कि वहाँका

१. देखिए "तार: गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ २४४।

२. मन्त्री महोदयने अप्रैल ९ को तार द्वारा जवाब दिया कि "...प्रवासी विधेयक उठा लेनेका कोई इरादा नहीं।" (एस० एन० ५६४४)। फिर इसकी पुष्टि करते हुए उन्होंने अप्रैल ९ को पत्र भी लिखा। (एस० एन० ५६४५)।

जीवन बहुत-कुछ आफ्रिकी गाँवोंसे मिलता-जुलता है। इससे उस पद्धतिकी जबरदस्त नामोशी होती है जो सीधा-सादा जीवन बितानेवाले ग्रामीण लोगोंको उनके प्राकृतिक वातावरणसे हटाकर नगरों और बस्तियोंकी तंग तथा अस्वास्थ्यकर परिस्थितियोंमें डाल देती है। इससे प्रकट है कि लोग आधुनिक जीवन-क्रम अपनानेके मोहमें पड़कर अपने स्वास्थ्यकी बड़ी भारी हानि कर बैठते हैं। सदाचारका प्रश्न इससे कहीं अधिक व्यापक और महत्वपूर्ण है; परन्तु हम यहाँ उसके विषयमें कुछ नहीं कहेंगे — हमारा यह विचार अवश्य है कि इन लोगोंको घनी और तंग बस्तियोंमें इकट्ठा कर देनेका जो परिणाम हो रहा है, उससे बुरा कुछ हो ही नहीं सकता।

जिसने वतनी अथवा भारतीय बस्तीको देखा है उसके मनपर यह छाप पड़े बिना नहीं रह सकती कि वहाँ घर कहने लायक कोई चीज ही नहीं है। वहाँ रास्तोंकी कतई देखरेख नहीं की जाती, नालियोंका सर्वथा अभाव है और मकानोंकी हालत बिलकुल गई-बीती है; यह सब देखकर एकदम पता चल जाता है कि यह जरूर कोई 'बस्ती' है — अर्थात् वह स्थान है जहाँ रंगदार लोगोंको बहिष्कृतोंकी तरह अपना जीवन बितानेके लिए भेज दिया जाता है। लोग एक-दूसरेके कानमें कहते हैं कि वहाँ रातमें अकेले जाना "खतरनाक" है; उससे किसी प्लेगकी जगहकी तरह बचो। नगरपालिकाके मेहतर और मैला-गाड़ियाँ तक वहाँ नहीं फटकतीं। सभी इन नापाक जगहोंके नामसे जिस तरह नाक-भौं चढ़ाते हैं उसी तरह तुम भी करो। लगान और कर तो नियमसे वसूल किया जाता है, परन्तु वह सब केवल नगर-पालिकाकी तिजोरियोंमें चला आता है। यदि कोई नई 'बस्ती' आबाद करनी हो तो उसके लिए, कलतक जहाँ शहरका कूड़ा-करकट और मुर्दा-ढोर वगैरे फेंके जाते रहे हों, ऐसी जगहका काममें लाया जाना सस्ता और सुविधाजनक सौदा समझा जाता है। तब फिर यदि ये बस्तियाँ क्षय और अन्य भयंकर रोगोंके फलने-फूलनेके अड्डे बन जायें तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है?

हमें ज्ञात हुआ है कि जोहानिसबर्गकी नगर-परिषद्ने वतनियोंकी बस्तीका प्रश्न "सुलझाने" का निश्चय कर लिया है और वह वतनियोंको बसानेकी समस्या हल करनेके लिए 'ज़बरदस्त' प्रयत्न करनेवाली है। वह इस कामको यों करना चाहती है: जो लोग अभी अपनी इच्छानुसार जहाँ-तहाँ रह रहे हैं, उन सबको खदेड़कर एक बड़े बाड़ेमें इकट्ठा कर दिया जायेगा और उन्हें वे चाहें या न चाहें, वहीं रहनेपर विवश किया जायेगा। इस बस्तीके चारों ओर एक बाड़ लगा दी जायेगी और उसके "पुरवासियों"[1] (यह शब्द बड़ा व्यंजनापूर्ण है)को एक बड़े फाटकमें से होकर आना-जाना पड़ेगा, जिसपर पुलिसका पहरा रहेगा। फाटक एक निश्चित समयपर बन्द कर दिया जायेगा और खोला ऐसे समय जायेगा कि वतनी अपने यूरोपीय मालिकोंके कामपर वक्तसे पहुँच सकें। जोहानिसबर्गके एक प्रसिद्ध नागरिकने अपनी सम्मति इस तरह प्रकट की है कि यह योजना, केवल सार्वजनिक स्वास्थ्यकी दृष्टिसे ही नहीं, सुरक्षाकी दृष्टिसे भी बहुत सफल रहेगी। यहाँ, जहाँतक सार्वजनिक स्वास्थ्यका

१. मूलमें "इन्मेट्स्" शब्द है।

सम्बन्ध है, हमें निश्चय है कि सार्वजनिकका अर्थ गोरी जनतासे है, उस जनतासे नहीं जिसे कि नगरपालिकाके इस अहातेमें रहनेका विशिष्ट लाभ पहुँचाया जानेवाला है। हमारा खयाल है कि डॉ० थॉर्नटन भी हमसे सहमत होंगे। अब जरा यह सोचिए कि यह "सुरक्षाकी दृष्टि" क्या बला है? लीजिए, हम बतानेकी कोशिश करते हैं; और चूंकि इस विषयमें निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता है, इसलिए हम केवल इतना कहकर सन्तोष मान लेते हैं कि जब सब काले आदमी अलग अहातेमें रख दिये जायेंगे तब [पुलिसको] गोरे अपराधियोंके उस वर्गपर नजर रखना सुगम हो जायेगा जो शहरोंमें जमा हो जाया करता है। अब हम फिर अपनी मुख्य बात-पर आते हैं। हमारा सब न्यायप्रिय और दूरदर्शी लोगोंसे अनुरोध है कि वे क्षय-आयोगके सामने दी हुई गवाहीमें जो चेतावनी है उसकी उपेक्षा न करें। चेतावनी यह है कि बस्तियोंकी संख्या बढ़ाते चले जाना रोग और मृत्युकी वृद्धि करना है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-४-१९१२

२१२. पत्र: मणिलाल गांधीको

[लॉली]

चैत्र वदी ५, [अप्रैल ६, १९१२][1]

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने मुझे वीरजी[2] और सामके सम्बन्धमें पत्र लिखा, सो ठीक किया; यह तो उचित है कि तुम दोष देखो तो उसे मेरे ध्यानमें ला दो। वैसे मेरी इच्छा यह है कि तुम दोषोंकी अपेक्षा लोगोंके गुण अधिक देखो। दोष तो हम सबमें भरे ही हुए हैं। इसलिए हमें लोगोंके गुण ढूंढ़कर उन्हींपर विचार करना चाहिए। ऐसी आदत डालनेसे पड़ सकती है। परन्तु जबतक यह आदत न पड़े, तबतक तुम जिन दोषोंको देखो उन्हें मुझे बतानेमें न झिझको। यदि तुमने जैसा लिखा है वैसा ही हो तो मुझे भी लगता है कि दोनों व्यक्ति व्यर्थ समय खो रहे हैं। छापेखानेके सम्बन्धमें भी तुम्हारी आलोचना ठीक हो सकती है। परन्तु गीताका यह वचन याद रखो: "जो अपरिहार्य है — जिसका हम कोई उपाय नहीं खोज सकते, उसे हमें सहन करना चाहिए।"[3] तुम अपना कर्त्तव्य करते जाओगे तो तुम्हें सन्तोष रहेगा। अगर हम अपना फर्ज पूरा करते रहें और सारी दुनिया जैसीकी-तैसी

१. इंटर नेशनल प्रिंटिंग प्रेसके प्रबन्धक ए० एच० वेस्ट कुछ दिन टॉल्स्टॉय फार्मपर रहनेके लिए ११ अप्रैल, १९१२को पहुँचे थे। दूसरे अनुच्छेदमें उनका उल्लेख है। अन्तिम अनुच्छेदमें बच्चोंके खेल-कूदका उल्लेख है। यह प्रतियोगिता ८ अप्रैल, १९१२को हुई थी (देखिए **इंडियन ओपिनियन** १३-४-१९१२)। चैत्र वदी ५ उस वर्ष अप्रैलकी ६ तारीखको पड़ी थी।

२. इंटर नेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्समें कम्पोजीटर।

३. अभिप्राय कदाचित् "तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि" से है।

चलती रहे तो उसमें हम क्या कर सकते हैं? इसका विचार करना भी अभिमान करना है। तुम्हारी कार्लाइलकी पुस्तक मेरे पास है। उसमें इस सम्बन्धमें कुछ महत्व-पूर्ण वचन मैंने अभी पढ़े हैं। इन्हें किसी समय तुम्हारे लिए लिखकर भेजूँगा।

श्री वेस्ट और अन्य व्यक्ति यहाँ आ रहे हैं। इससे तुम्हें वहाँ कुछ और घबरा-हट होगी। फिर भी, तुम्हें घबराना नहीं चाहिए। श्री वेस्टका आना अच्छा ही है। उनका मिलना जरूरी था।

अपने अभ्यासमें विघ्न न पड़ने देना।

सोमवारको बच्चोंके खेल रखे हैं। अभिभावकोंसे इनाम प्राप्त कर लिये गये हैं। और भी पचास अन्य व्यक्ति आयेंगे। मेरा मन करता है कि ऐसे अवसरपर तुम यहाँ होते।

जमनादासको हिसाब-किताब रखना सिखाया है। यह काम आसान है। मैं उससे बहुत-कुछ सहायता लेता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ९४) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी।

२१३. पत्र : ई० एफ० सी० लेनको[1]

अप्रैल ११, १९१२

प्रिय श्री लेन,

मैंने अभी एक समाचारपत्रकी कतरन देखी है। उसमें व्यापार-संघके मन्त्रीके नाम लिखा गृह मन्त्रालयके कार्यवाहक सचिवका एक पत्र है। उसका एक अंश इस प्रकार है:

> इस विधेयकके मसविदेका उद्देश्य यह नहीं है कि इमला-इम्तहानका उपयोग एशियाइयोंको ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेश देनेके साधनके रूपमें किया जाये। उसका उद्देश्य तो इस उपनिवेशमें उनका प्रवेश रोकना है। इस विधिसे यह राज्य आज फ्री स्टेट विधि-पुस्तकके परिच्छेद ३३की धाराओंके अन्तर्गत एशियाइयोंका प्रवेश रोकनेकी दृष्टिसे जितना सुरक्षित है, प्रस्तुत विधेयककी धाराओंके अन्तर्गत उससे कहीं अधिक सुरक्षित रहेगा।[2]

१. इसके उत्तरमें श्री लेनने १७ अप्रैलको लिखा था: "...आप व्यापार संघके मन्त्रीको लिखे पत्रकी जो व्याख्या करते हैं वह बिलकुल सही है।" (एस० एन० ५६४७)

२. यह पत्र **नेटाल मर्क्युरी**में प्रकाशित हुआ था और वहाँसे ६-४-१९१२के **इंडियन ओपिनियन**में उद्धृत किया गया था। पत्रमें कार्यवाहक सचिवने अन्य बातोंके साथ-साथ यह भी कहा था कि "एशियाई लोग मौजूदा कानूनके अन्तर्गत फ्री स्टेटमें प्रवेश करके वहाँ स्थायी रूपसे बसनेकी अनुमति प्राप्त करनेके लिए अर्जी देनेसे पूर्व, वहाँ काफी दिनों तक रह सकते हैं, जबकि प्रस्तावित कानूनके अन्तर्गत उन्हें इस प्रान्तकी सीमापर ही प्रवेश करनेसे रोका जा सकता है।"

मेरी समझमें इसका आशय यह नहीं है कि जिन लोगोंको प्रवासी-परीक्षाके आधारपर संघमें प्रवेश करनेकी अनुमति दी जा चुकी है, उन्हें फिरसे ऐसी परीक्षा देनेपर मजबूर किया जायेगा, और उन्हें असफल बताकर उनका प्रवेश फ्री स्टेटमें या तो रोक दिया जायेगा या रोका जा सकेगा। यदि आप मुझे पुनः इस सम्बन्धमें आश्वस्त करनेकी कृपा करें तो मैं आभारी होऊँगा।

हृदयसे आपका,
[मो० क० गांधी]

श्री अर्नेस्ट एफ० सी० लेन
केप टाउन

टाइप की हुई दफ्तरी प्रति (एस० एन० ५६४६)की फोटो-नकलसे।

२१४. पत्र: मणिलाल गांधीको

[लॉली]
चैत्र वदी ११ [अप्रैल १३, १९१२][1]

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। श्रीमती पाइवेल[2] आदिने तुम्हारे लिए बड़ी तकलीफ उठाई; इसलिए तुम्हारे मनमें कृतज्ञतापूर्ण भावनाका आना ठीक ही है।

तुम्हारे अव्यवस्थित ढंगसे मुझे बहुत दुःख होता है। मैं चाहता हूँ कि इसके लिए तुम्हें कितना भी प्रयत्न क्यों न करना पड़े, तुम व्यवस्थित बनो।

तुम्हारा चित्र देखा। तुम्हारा बिलकुल अंग्रेजी लिबास मुझे पसन्द नहीं आ सकता। कालरपर भी कलफ? बेशक तुम्हें साफ-सुथरे कपड़े पहनने चाहिए; परन्तु तुम पक्के अंग्रेजकी तरह कपड़े पहनो, यह हमें शोभा नहीं देता। तुम हमेशा देशी टोपी लगाना तय करो तो भी ठीक है। ऐसे मामलोंमें मेरी आलोचनासे तुम्हें उदास नहीं होना चाहिए। यदि तुम्हें मेरी कोई बात ठीक न जान पड़े तो उसपर ध्यान मत देना। मैं यह नहीं चाहता कि तुम मुझे प्रसन्न रखनेके लिए अपने रहन-सहन और व्यवहारमें फेरफार करो। तुम्हें मेरी दलील ठीक लगे और उसके अनुसार चलनेकी तुममें ताकत हो तभी फेरफार करना।

अनीसे ज्यादा मिलते रहनेकी जरूरत है।

छबीलदासकी[3] पत्नीसे भी मिलते रहना और उनकी सार-सँभाल करना।

१. अन्तिम अनुच्छेदमें वेस्टका उल्लेख आता है जो ११ अप्रैल, १९१२को फार्मपर आये थे। इससे पता चलता है कि यह पत्र १९१२ में लिखा गया होगा। उस वर्ष चैत्र वदी ११ को अप्रैलकी १३ तारीख पड़ी थी।

२. ए० एच० वेस्टकी सास।

३. डर्बनके छबीलदास मेहता।

श्री वेस्टको रम्भाबाईके[1] पासके कमरे दिये गये हैं। वे भोजन हमारे साथ करते हैं। उन्हें कोई असुविधा होती है, ऐसा मुझे नहीं लगता।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ९७) से।
सौजन्य: सुशीलाबहन गांधी।

२१५. पत्र: छगनलाल गांधीको

वैशाख सुदी ८ [अप्रैल २४, १९१२][2]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। वेस्टसे सम्बन्धित कागज उन्हें भेजे दे रहा हूँ।

प्रोफेसर गोखले-सम्बन्धी सभी सामग्री छाप देना। तुमने जो टिप्पणियाँ सुझाई हैं वे काफी हैं। यदि यह सब, अंग्रेजी और गुजराती दोनोंमें, प्रोफेसर गोखलेके चित्रके साथ जा सके तो अच्छा हो। साथ ही यदि तमिल अनुवाद भी, भले ही वह अलग छपे, दिया जा सके तो अच्छा हो। मेरा खयाल है उसकी १,००० प्रतियाँ खप जायेंगी। "सम्माननीय श्री गो० कृ० गोखले" ये शब्द पूरे छापना।

गेहूं इतने भून लेने चाहिए कि वे खूब लाल हो जायें। यदि वे एक रात भिगोकर भूने जायें तो ज्यादा ठीक हो। भुने हुए गेहूँको मोटा-मोटा रवादार दला जाये। यह दलिया रेशम जैसा नरम होने तक उबाला जाये। उबलते वक्त ही उसमें थोड़ा घी डाल दिया जाये। यह दलिया दूधके साथ खाया जा सकता है। इसे एक घंटे तक उबालना ठीक है। पानी इतना ही डालना चाहिए कि एक घंटे तक पकनेके बाद दलिया खिचड़ी-जैसा पतला बना रहे। उसे शहद डालकर या घरके बने मुरब्बेके साथ खाना ठीक है। जितना पचे उतना ही खाया जाये और उतना ही दिया जाये।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ५७७४ 'क') की फोटो-नकलसे।

१. श्रीमती रम्भाबाई सोढा।

२. शाही विधान परिषद (इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल) में श्री गोखलेने गिरमिटिया मजदूरोंके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव रखा था उसकी रिपोर्ट और उसपर अखबारोंकी आलोचनाएँ, जिनका उल्लेख पत्रके अनुच्छेद २ में है, क्रमिक रूपमें २०-४-१९१२ और २७-४-१९१२ के **इंडियन ओपिनियन**में छापी गई थीं।

२१६. पत्र : मगनलाल गांधीको

[लॉली]
वैशाख सुदी ८ [अप्रैल २४, १९१२][1]

चि० मगनलाल,

[गुजराती] साहित्य परिषदकी[2] रिपोर्ट और हिन्दी पुस्तकें फिलहाल तो रख लेता हूँ। बद्रीका[3] लड़का यहीं है, हिन्दीकी पुस्तकें उसके काम आयेंगी और रिपोर्ट मैं पढ़ लेना चाहता हूँ।

'टाइटैनिक' जहाजकी खबरका जैसा असर[4] होना चाहिए, तुमपर वैसा ही हुआ है। ऐसी घटनाएँ बीच-बीचमें यह भान करा सकती हैं कि हम कीड़ों-मकोड़ों-जैसे ही हैं।

जमनादासमें बहुत ही ज्यादा अस्थिरता है। वह दो दिन तक किसी एक विचार-पर जमा नहीं रह सकता। उसकी और मणिलालकी मानसिक स्थिति लगभग समान है। फिर भी जमनादास आज्ञाकारी युवक है। इसलिए मैं उसके बारेमें निश्चिन्त हूँ। कभी उसमें तीव्र वैराग्य पैदा होता है और कभी वह अत्यन्त मोहग्रस्त हो जाता है। उसके मन उचटनेका कारण बा के प्रति उसका असन्तोष है। यह घूँट तो उसे पीना ही चाहिए; मैंने उसे यह बात बहुत अच्छी तरह समझा दी है। कुछ भी हो, उसने वचन दिया है और मैं उससे उसका पालन करवा लूँगा। जब उसके अनुमतिपत्रकी अवधि खत्म होनेवाली थी, तब हमारी बातचीत हुई थी और उसने अधिक समय तक ठहरनेका निश्चय प्रकट किया था। अब सूचना भी आ गई है कि उसके अनु-मतिपत्रकी अवधि छः मास बढ़ा दी गई है, इसलिए वह अब इस बीच तो जा ही नहीं सकता; यह मैंने उसे समझा दिया। अब तो बा भी ठीक बरताव करती है। इसके अतिरिक्त वह तीन-चार दिन जोहानिसबर्गमें रह आया है; इसलिए मैं समझता हूँ कि वह अब स्थिरचित्त है। फिर भी वह कुछ ही दिनोंमें अस्थिर भी हो

१. अनुच्छेद २ में उल्लिखित 'टाइटैनिक' जहाज १९१२ में डूबा था। अतः स्पष्ट है कि यह पत्र उसी वर्ष लिखा गया होगा। १९१२ में वैशाख सुदी ८ को अप्रैलकी २४ तारीख पड़ी थी।

२. एक साहित्यिक सम्मेलन।

३. गांधीजीके एक पुराने मुवक्किल; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १३८।

४. छगनलाल तथा मगनलाल गांधी दोनों जो भी सम्पादकीय टिप्पणियाँ लिखते थे, उन्हें वे प्रकाशनके पूर्व गांधीजीके सम्मत्यर्थ उनके पास भेज देते थे (उदाहरणके लिए देखिए "पत्र: छगनलाल गांधीको", पृष्ठ १५०)। यहाँ तात्पर्य शायद २७-४-१९१२ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित गुजराती सम्पादकीय टिप्पणी "सर्वशक्तिमान् ईश्वरकी लीला" से है। 'टाइटैनिक'की दुर्घटनाको लेकर उसमें यह दिखाया गया था कि संसारमें एक पत्ता भी उस सर्वशक्तिमानके इंगितके बिना नहीं हिलता, अतः मनुष्यका ज्ञान-विज्ञानका अहंकार व्यर्थ है। यह विचार गांधीजीके विचारोंसे मिलता-जुलता है। ऐसे प्राकृतिक प्रकोपोंपर गांधीजीके विचारोंके लिए देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ४४३-४४; खण्ड ४, पृष्ठ ४५८ और खण्ड ८, पृष्ठ १५०-५१।

सकता है। अस्थिरता तरुणावस्थाका दोष है, इसलिए वह बरदाश्त करने योग्य है। जो युवक अस्थिर होनेपर भी आज्ञाकारी है वह सुगमतासे स्थिर-चित्त हो सकता है। मुझे विश्वास है कि जमनादासके सम्बन्धमें भी ऐसा ही होगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

अनीको प्रतिमास ४ पौंड देने हैं।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ५७७४ 'क' – २) की फोटो-नकलसे।

२१७. पत्र : 'स्पोर्टिंग स्टार' को

[सम्पादक
'स्पोर्टिंग स्टार'
जोहानिसबर्ग
महोदय,]

आपके पत्रके गत २० तारीखके अंकमें "रेकॉर्डर" ने इस सम्बन्धमें सुझाव दिया है कि वॉंडरर्स ग्राउंडमें एशियाइयोंके प्रवेशके बारेमें कोई-न-कोई व्यवस्था की जानी चाहिए। इस सुझावपर आपने मुझसे सम्मति माँगी है। मुझे अपनी सम्मति देते हुए थोड़ा संकोच हो रहा है, क्योंकि लगता है कि "रेकॉर्डर" का सुझाव, उसकी अन्य त्रुटियोंके बारेमें कुछ न कहा जाये तो भी, अव्यावहारिक है। मैं मानता हूँ, उनका हेतु शुद्ध है; परन्तु मैं यदि उनके सुझावका उसके गुण-दोषके आधारपर विवेचन करने बैठूँ तो मुझे कहना ही होगा कि एशियाइयोंको उच्च और निम्न वर्गोंमें बाँटनेका प्रस्तावित सुझाव यदि अन्य कारणोंसे नहीं तो कमसे-कम इस कारणसे तो अवश्य ही सर्वथा अमान्य है, या होना चाहिए कि "रेकॉर्डर" ने जो बात उठाई है, वैसी बातोंमें इस प्रकारका वर्गीकरण असम्भव है। खेल-कूदके मैदानमें प्रवेशके लिए चारित्र्य-बल अथवा शिक्षा-दीक्षाका विचार महत्वपूर्ण है — ऐसी मेरी धारणा नहीं है। मेरा खयाल है कि यूरोपीय लोगोंके सम्बन्धमें इस प्रकारका कोई अन्तर नहीं किया जाता है। औचित्यकी दृष्टिसे देखते हुए जिस बातकी आशा की जा सकती है वह यह है कि प्रवेशके लिए प्रार्थनापत्र भेजनेवाले साफ-सुथरी और उपयुक्त पोशाकमें आयें। चन्द बाड़ोंके कुछेक भाग एशियाइयोंके लिए ही सुरक्षित कर दिये जायें, यह सुझाव भी आम तौरसे पसन्द नहीं किया जायेगा। यदि बातको हमारी नेकनीयतीपर छोड़कर हमसे यह आशा की जाये कि हम मैदानोंके कुछ भागों तक ही सीमित रहें, तो यह एक बात हुई; परन्तु यह कहना कि हम अमुक भागोंमें ही जा सकते हैं, दूसरे भागोंमें जा ही नहीं सकते — यह दूसरी बात हुई। दक्षिण आफ्रिकामें एशियाइयों

और रंगदार लोगोंके प्रति दुर्भाग्यसे जो द्वेष-भाव है उससे मैं अनभिज्ञ नहीं हूँ। परन्तु मुझे ऐसा जरूर लगता है कि जबतक खेलकूदकी व्यवस्था करनेवाली समितिकी कार्यवाहियोंपर पूर्वग्रहका प्रभाव बना रहता है तबतक इस प्रकार अनुदार और कृपणतापूर्ण भावनासे दिये गये अधिकारोंको स्वीकार करनेके बजाय यही अच्छा है कि हम प्रवेश-सम्बन्धी कोई अधिकार न लें।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–५–१९१२

२१८. पत्नी किसे कहा जाये?

जोहानिसबर्गके मजिस्ट्रेट श्री जॉर्डनने[1] हमें [संघर्षका] एक स्पष्ट आधार दे दिया है। एक भारतीय पत्नी अपने पतिके साथ ट्रान्सवाल आ गई थी। उसके मामलेमें[2] श्री जॉर्डनने निर्णय दिया है कि वह निषिद्ध प्रवासिनी है; क्योंकि उसके पतिने एकसे अधिक पत्नियोंसे विवाह कर रखा है और इसलिए दक्षिण आफ्रिकाकी अदालतें उसके विवाहको मान्यता प्रदान नहीं कर सकतीं। श्री जॉर्डन सर जॉन वेसेल्ससे भी आगे बढ़ गये हैं। सर वेसेल्सने तो हमें असमंजसकी अवस्थामें छोड़ दिया था। उक्त विद्वान न्यायाधीशने श्रीमती जसातके मुकदमेका[3] जो फैसला किया था, उसके अनुसार एकसे अधिक स्त्रियोंसे विवाह करनेवाले मुसलमानको अपने साथ पत्नी ला सकनेकी छूट थी। परन्तु श्री जॉर्डनका स्पष्ट निर्णय यह है कि जो पुरुष प्रथम पत्नीके जीवित रहते हुए एकसे अधिक स्त्रियोंके साथ विवाह करेगा उसकी सभी पत्नियाँ निषिद्ध प्रवासिनी मानी जायेंगी। श्री जॉर्डनका निर्णय अधिक कठोर भले ही हो, परन्तु हम इसे अधिक ईमानदारीका मानते हैं। यदि इस मजिस्ट्रेटके इस निर्णयको चुनौती न दी गई तो एकसे अधिक पत्नियोंवाले सभी भारतीयोंकी स्थिति अत्यन्त संकटापन्न हो जायेगी। सम्बन्धित व्यक्तियोंका कर्त्तव्य है कि वे उच्चतम न्यायालयका निर्णय प्राप्त करें। सच

१. एच० एच० जॉर्डन; जोहानिसबर्गके एक मजिस्ट्रेट; इन्हींकी अदालतमें गांधीजीको सर्वप्रथम २८ दिसम्बर, १९०७ को सजा हुई थी।

२. तात्पर्य हुसेन मुहम्मदकी पत्नीके मामलेसे है। हुसेन मुहम्मदने, जो एक पंजीकृत एशियाई था, सन् १८९५ में भारतमें विवाह किया था। सन् १९०५ में उसने मुस्लिम कानूनके अनुसार दूसरा विवाह किया, किन्तु इस पत्नीको तलाक दे दिया। उसकी पहली पत्नीको मजिस्ट्रेट जॉर्डनने ट्रान्सवालमें प्रवेश नहीं दिया। उन्होंने उसके अधिवासी एशियाईकी पत्नीके नाते प्रवेश करनेके दावेको इस आधारपर अस्वीकार कर दिया कि इस देशमें बहुपत्नी विवाह वैध नहीं है। और उन्होंने इस कारणसे उसे निषिद्ध प्रवासी ठहराया कि वह ट्रान्सवाल प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत शैक्षणिक परीक्षामें उत्तीर्ण नहीं हो सकी। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, ४–५–१९१२।

३. देखिए "श्रीमती जसातका मामला", पृष्ठ २३९-४०।

तो यह है कि इस मामलेमें सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयको भी अन्तिम नहीं माना जा सकता। यदि उस महान् संस्थाका निर्णय हमारे विपरीत बैठे तो समाजको साम्राज्य-सरकारसे उसके रुखके बारेमें कोई स्पष्ट घोषणा करवानी पड़ेगी। यह प्रश्न प्रतिष्ठाका है और आगे-पीछे इसका निबटारा करवाना ही पड़ेगा। श्री जॉर्डनका निर्णय हमें ललकार रहा है कि हम इसका निबटारा शीघ्र करवायें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११–५–१९१२

२१९. जोहानिसबर्गका स्कूल

आखिर प्रान्तीय परिषदकी कार्यकारिणीने यही निर्णय किया कि भारतीय बालकोंके शिक्षणके लिए भारतीयोंको पृथक् स्कूल न खोलने दिया जाये। पृथक् स्कूल खोलनेकी अनुमति न देनेका कोई उचित कारण नहीं था, इसलिए हमें विवश होकर यह मानना पड़ता है कि कार्यकारिणीने भारतीयोंकी प्रार्थनाको अपनी एशियाई-विरोधी भावनाके सबबसे ही अस्वीकृत किया है। स्कूल निकायने स्कूल खोले जानेकी सिफारिश कर दी थी। भारतीयोंकी प्रार्थना स्वीकार कर लेनेके पक्षमें बहुतेरे पूर्व-दृष्टान्त भी विद्यमान थे। स्कूलके संस्थापकों (प्रोमोटर्स) ने गारंटी दे दी थी कि वे स्कूलका किराया देते रहेंगे और उसमें विद्यार्थी भी बड़ी संख्यामें आ जायेंगे। हमारी सम्मतिमें तो भारतीयोंकी माँग पूरी कर देनेके लिए इतना ही पर्याप्त था कि जोहानिसबर्गके रंगदार लोगोंके स्कूल बालकोंको अपनी भाषा पढ़नेकी कोई सुविधा नहीं देते। सरकार भी उन भारतीय युवकोंका कुछ उपयोग नहीं कर सकती जो अपनी भाषा न जानते हों। परन्तु हम जानते हैं कि यहाँकी अपने मुँह मियाँ मिठ्ठूकी कहावत चरितार्थ करनेवाली सरकार भारतीयोंका यहाँ रहना पसन्द नहीं करती और उसे ऐसी इल्लत मानती है, जिससे जल्दीसे-जल्दी छुटकारा पा लेना चाहिए।

खैर, हमें निःसंकोच होकर कह देना चाहिए कि हम इस निर्णयकी परवाह नहीं करते, बल्कि उसका स्वागत करते हैं। अब हमें दिखाना है कि हम किस धातुके बने हैं। जो समाज अपने युवकोंके विकासके प्रति सजग हो वह केवल इस कारण उनकी उपेक्षा नहीं होने देगा कि किसी गैर संस्थाने उनकी सहायता करनेसे इनकार कर दिया है। जब जनरल हेटसॉगने फ्री स्टेटके अंग्रेजी भाषी वर्गके बच्चोंको अंग्रेजी पढ़नेका कोई भी अवसर न देनेका इरादा किया तो उन लोगोंने जवाबमें निजी स्कूल खोले और जहाँ यह सम्भव नहीं हुआ वहाँ अपने बालकोंके लिए जिस शिक्षणको वे सर्वोत्कृष्ट समझते थे उसे देनेकी अन्य व्यवस्था की। जोहानिसबर्गमें हमारा अपना एक भी ऐसा स्कूल नहीं है जहाँ हमारे बच्चोंको अच्छी शिक्षा दी जा सके। हमारा विचार तो यह है कि स्कूलके संस्थापकोंको चाहिए कि वे चुपचाप न बैठें, अपना स्कूल खोल दें और उसे सरकारी सहायताके बिना ही चलाकर दिखायें। वस्तुतः अगर इसका कोई जोरदार व्यवस्थापक-मण्डल बन जाये तो हमें पूरा भरोसा है कि यह

स्कूल हमारी आवश्यकताओंकी पूर्ति अधिक अच्छी तरह कर सकेगा, क्योंकि तब यह सरकारी हस्तक्षेपसे बरी रहेगा।

(यह लेख छपते-छपते हमें जोहानिसबर्गसे और भी पत्र मिले हैं, जिससे स्थितिमें कुछ परिवर्तन हो जाता है। परन्तु हमारा खयाल है कि हमारा मुख्य तर्क अब भी जहाँका-तहाँ है।)

[अंग्रजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–५–१९१२

२२०. पत्र: ई० एफ़० सी० लेनको

लॉली

मई २१, १९१२

प्रिय श्री लेन,

आपका इसी माहकी १४ तारीखका पत्र[1] मिला। उसके लिए धन्यवाद!

यदि वैकल्पिक धाराका अर्थ यह हो कि शिक्षित एशियाइयोंकी दृष्टिसे हमारे पत्र-व्यवहारमें उल्लिखित हलफनामेकी[2] जरूरत नहीं रह जाती तो मेरे विचारसे यह धारा सन्तोषजनक है। निवेदन है कि उक्त धारामें निश्चित रूपसे यह व्यवस्था की गई है कि अनुसूची २ में उल्लिखित हलफनामेकी कोई जरूरत नहीं होगी।

अधिवास-सम्बन्धी कठिनाईको हल करनेके लिए मैं जनरल स्मट्सको धन्यवाद देता हूँ।

मैं यह भी आशा करता हूँ कि जब विधेयक समितिके सामने पेश होगा तब मैंने अपने पत्रोंमें[3] जिन दूसरी कठिनाइयोंका उल्लेख किया है, उनका भी समाधान हो जायेगा। जहाँतक मैं समझा हूँ, ये कठिनाइयाँ अस्थायी समझौतेके परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई हैं।

हृदयसे आपका,

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५६५३) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए परिशिष्ट १६ (गांधीजीके नाम लेनका पत्र)।

२. इस हलफ़नामेमें ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेश करनेवाले एशियाइयोंको यह घोषणा करनी पड़ती थी कि उनका उस प्रान्तमें व्यापार अथवा खेती-बाड़ी करनेके लिए बसनेका कोई इरादा नहीं है; देखिए परिशिष्ट १३।

३. देखिए ई० एफ़० सी० लेनको लिखे पत्र (पृष्ठ २१०-१२, २२७-२८, २३७, २५० और २५३-५४)।

२२१. नेटालमें भारतीयोंकी शिक्षा

नेटाल प्रान्तके शिक्षा-मन्त्री अपनी वार्षिक रिपोर्टमें कहते हैं: "पिछले कुछ वर्षोंमें भारतीय स्कूलोंने बहुत तरक्की की है।" बस भारतीय बच्चोंकी शिक्षाके बारेमें उन्हें इतना ही कहना है। जाहिर है कि वे मौजूदा हालतसे सन्तुष्ट हैं; और मौजूदा हालत यह है कि यूरोपीय बच्चोंकी शिक्षापर सालाना १००,००० पौंडसे भी काफी ज्यादा खर्च होता है और भारतीय बच्चोंकी शिक्षापर ६७६१ पौंडकी अदना-सी रकम। कोई भी व्यक्ति, जिसे यह नहीं मालूम है कि नेटालमें भारतीयोंकी स्थिति क्या है, स्वभावत: यह पूछेगा कि भारतीयों व यूरोपीयोंको दी जानेवाली शिक्षाकी सुविधाओंमें इतना अन्तर होनेका कारण क्या है। भारतीयोंकी जन-संख्या यूरोपीयोंसे अधिक है। क्या सरकारका यह कर्त्तव्य नहीं है कि वह अपने लोगोंको, चाहे वे किसी भी जातिके क्यों न हों, शिक्षा प्रदान करे। वह उन हजारों भारतीयोंके सम्बन्धमें क्या करना चाहती है जो यहाँ प्रान्तके कृषि-सम्बन्धी साधनोंसे उसे अधिकसे-अधिक लाभ देनेकी दृष्टिसे लाये गये हैं? निश्चय ही सत्तारूढ़ लोगोंके कंधोंपर बड़ा भारी दायित्व है। फिर हम यह भी देखते हैं कि एक यूरोपीयको शिक्षा प्रदान करनेका खर्च ५ पौंड १२ शिलिंग २$\frac{3}{4}$ पेंस है और एक भारतीयका १ पौंड १४ शिलिंग ५ पेंस। इस प्रकार थोड़े-से भारतीय बच्चोंको जो शिक्षा मिलती है, उसमें भी बड़ी कंजूसी बरती जाती है; और वह जैसी हालतोंमें दी जाती है, वैसी हालत यूरोपीयोंके लिए कभी गवारा न की जाती। डर्बन तथा पीटरमैरित्सबर्गके सरकारी स्कूलोंमें कुल ५७० भारतीय विद्यार्थी हैं, जिनमें लड़कियोंकी संख्या केवल २५ है। यह बहुत-कुछ इस कारणसे है कि सरकारने स्कूलोंमें लड़कों और लड़कियोंके लिए अलग-अलग व्यवस्था करना अस्वीकार कर दिया है। कभी हायर ग्रेड भारतीय स्कूलमें लड़कियाँ अच्छी संख्यामें पढ़ने जाती थीं; परन्तु बादमें माता-पिताओंने स्कूलसे अपनी लड़कियाँ हटा लीं और अब उसमें केवल ३ लड़कियाँ जाती हैं। माता-पिताओंके इस कदमको भावुकता भी कहा जा सकता है। परन्तु बहुत-से लोगोंकी निगाहमें भावना बड़ी चीज होती है और अधिकारियोंको उनकी भावनाओंकी उपेक्षा करने और उन्हें कुचलनेका कोई हक नहीं है।

परन्तु भारतीयोंको शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाएँ न देनेके लिए हम शिक्षा अधीक्षक (सुपरिंटेंडेंट)को दोष नहीं देना चाहते और न सरकारको ही दोष देनेसे कुछ लाभ है। खुद भारतीय समाज इन मामलोंमें लापरवाह है। आखिर हमें ज्यादातर तो वही मिलता है जिसके हम योग्य हैं। वतनी लोग तो इस समय भी भारतीयोंकी शिक्षापर व्यय होनेवाली सरकारी रकमसे दूनी रकम पा रहे हैं और उनकी मौजूदा कार्रवाईसे लगता है कि वे अपने बच्चोंकी शिक्षाके लिए सरकारी सहायताका उचित भाग दिये जानेकी माँग करना चाहते हैं। परन्तु वतनी सिर्फ सरकारपर ही निर्भर नहीं हैं। इस समय देशके विभिन्न भागोंमें उनकी बहुत-सी अच्छी संस्थाएँ हैं, जिनमें

से कुछ मिशनरियोंने बनवाई हैं और कुछ उन्होंने स्वयं अपनी शक्तिसे। इन संस्थाओंकी संख्या तथा उपयोगिता बढ़ रही है।

पिछले वर्ष सरकारने ९,००० पौंड यूरोपीयोंकी तकनीकी शिक्षापर खर्च किये। इसकी माँग की गई थी, इसलिए यह रकम दी गई। यूरोपीयोंको भी बिना माँग कुछ नहीं दिया जाता। अभी हालमें डर्बनमें एक नई तकनीकी संस्था (इंस्टिट्यूट) २८,००० पौंडकी लागतसे बनाई गई है। यह उन अनेक यूरोपीय सज्जनोंके अथक प्रयत्नोंका फल है, जो अपने बच्चोंके लिए एक ऐसी संस्था बनानेके लिए कृतसंकल्प थे, जिसमें वे विज्ञान, कला और व्यावहारिक कामकी शिक्षा पा सकें। इन्होंने इसके लिए अपने समय और धनका त्याग करते हुए वर्षों काम किया है। प्रश्न किया जा सकता है कि क्या ये संस्थाएँ सबके लिए खुली नहीं हैं। वैसे यह सच है कि सिद्धान्तः तो वे देशके सभी लोगोंके लिए हैं, परन्तु हम जानते हैं कि उनमें व्यवहारतः कोई भी भारतीय भरती नहीं होने दिया जा सकता। निःसन्देह, यह शर्मकी बात है, परन्तु हमें यह बात नजर-अन्दाज नहीं करनी चाहिए कि हमने यूरोपीयोंकी तरह अपने बच्चोंके लिए तकनीकी शिक्षाकी माँग नहीं की है। जब हम संगठित होकर एक ऐसे स्कूलकी माँग करनेको तैयार होंगे, जिसमें हमारे बच्चे शारीरिक कार्यकी और विज्ञान-सम्बन्धी शिक्षा पा सकें तब हम उचित रूपसे उसे पानेकी आशा कर सकते हैं। हमें अपने नवयुवकोंको किसी उपयोगी धन्धेकी व्यावहारिक शिक्षाके लिए उत्सुक देखकर खुशी होगी, परन्तु हमें हाथका काम पसन्द जो नहीं है। शिक्षा-मन्त्री ने जो शब्द प्रिटोरिया सम्मेलनमें कहे थे वे हम अपने ऊपर भली-भाँति लागू कर सकते हैं:

> हमारे बीच ऐसे बच्चोंकी संख्या बढ़ती जा रही है, . . . जिन्हें किताबी शिक्षा मिली है, जो काम करनेसे डरते हैं, और सोचते हैं कि हाथसे काम करना "काफिरोंका काम' है। परिणाम यह हुआ है कि इन लोगोंके लिए दक्षिण आफ्रिकामें कोई स्थान नहीं है और यदि हम गम्भीर रूपसे इस समस्याको सुलझानेमें न जुटे तो दक्षिण आफ्रिकाको जरूर नुकसान पहुँचेगा।

[अंग्रजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-५-१९१२

२२२. पत्र : ई० एफ० सी० लेनको

लॉली
मई ३१, १९१२

प्रिय श्री लेन,

मेरा खयाल है कि जनरल स्मट्सने विधेयकके दूसरे वाचनके समय जो भाषण[1] दिया उससे अन्तरप्रान्तीय प्रवासके प्रश्नकी स्थिति कुछ असन्तोषजनक हो गई है। जान पड़ता है कि इस सम्बन्धमें जो आपत्ति उठाई गई है, उसे संसदमें इस समय पेश इस विधेयकके सम्बद्ध खण्डके वर्तमान स्वरूपमें संशोधन करनेके बजाय जनरल स्मट्स अमलमें नरमी बरत कर दूर करना चाहते हैं। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ, इससे सत्याग्रहियोंको सन्तोष नहीं होगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि इस विधेयकमें कोई ऐसा संशोधन कर दिया जायेगा, जिससे अन्य प्रान्तोंमें रहनेवाले एशियाइयोंका नेटाल तथा केपमें प्रवेश करनेका अधिकार यथावत् बना रहे।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६५४)की फोटो-नकलसे।

२२३. "एक दुर्भाग्यपूर्ण मामला"

'नेटाल ऐडवर्टाइज़र' में उक्त शीर्षकसे एक मामलेका विवरण प्रकाशित हुआ है। यह मामला डर्बनकी प्रथम फौजदारी अदालतमें श्री जे० वाई० गिब्सनके सामने पेश हुआ था। विवरण इस प्रकार है:

> जदुवंसी नामकी एक भारतीय महिलापर यह अभियोग लगाया गया कि गिरमिटिया मजदूरिन होनेके बावजूद उसने अपने कानूनी मालिकके पास लौटनेसे इनकार कर दिया। अभियुक्ताने अपना अपराध स्वीकार किया। मामलेकी परिस्थितियोंको स्पष्ट करते हुए बताया गया कि यह महिला अपने मालिकके पास जानेसे दृढ़तापूर्वक बराबर इनकार करती रही है, जिसके फल-स्वरूप उसे लगातार सजाएँ भोगते रहना पड़ा है, और अबतक वह कुल मिला-कर छः माहकी सजा भोग चुकी है। यह स्टैंगरके एक संस्थान (एस्टेट)में काम करती थी, किन्तु किसी दुर्घटनामें इसका बच्चा जल गया। इसके बाद

१. देखिए परिशिष्ट १७।

वह संरक्षकसे शिकायत करने डर्बन आई, और तभीसे गिरमिटके अनुसार [उक्त मालिकका] काम करनेसे बराबर इनकार करती रही है। मुकदमेके दौरान एक मुद्दा यह उठाया गया था कि क्या एक ही अपराधके लिए बार-बार और लगातार सजाएँ दी जा सकती हैं। श्री गिब्सनने बताया कि ऐसे मामलोंसे सम्बन्धित एक खण्डमें यह व्यवस्था है कि न्यायालयके किसी आदेशका पालन करनेसे जितनी बार इनकार किया जायेगा, उसके लिए अलग-अलग उतनी ही बार सजा दी जा सकेगी। गिब्सन महोदयने आगे कहा कि यह बात बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण जान पड़ती है कि इस प्रकार किसी महिलाको केवल इसलिए बार-बार सजा दी जाये कि उसने किसी खास जगहपर काम करनेसे विशेष अरुचि दिखाई है। यह भी बताया गया कि यदि इस औरतका किसी और जगहपर तबादला हो जाये तो यह वहाँ काम करनेको तैयार है। श्री गिब्सनने मामला एक हफ्तेके लिए मुल्तवी कर दिया और इस बीच जदुबंसीको संरक्षकके पास भेज दिया गया ताकि वह इस बातपर गौर करें कि उसके सम्बन्धमें क्या-कुछ किया जा सकता है।

हमें इस रिपोर्टमें कुछ और भी जोड़ना है, क्योंकि हमें उस महिलाके निकट-सम्पर्कमें आनेका मौका मिला है। अप्रैल माहके प्रारम्भमें वह फीनिक्स आई थी और उसने अपना पूरा किस्सा हमें विस्तारसे बताया था। अव्वल तो उक्त महिला स्टैंगरके किसी संस्थानमें काम नहीं करती थी, बल्कि वह साउथ कोस्टके एक भूमि-धरके यहाँ — जिसका नाम बताना अभी जरूरी नहीं — गिरमिटिया मजदूरिन थी। विवरणसे हमें ज्ञात होता है कि जदुबंसीका बच्चा जल गया था। वह जला ही नहीं था, बल्कि इतनी बुरी तरह जल गया था कि उसीसे उसकी मृत्यु हो गई। जदुबंसी अपने मालिकपर यह आरोप लगाती है कि एक बार घावोंपर पट्टी बँधवा देनेके बाद उसने फिर कहे जानेपर भी जानबूझकर उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया, नतीजा यह हुआ कि उनसे बदबू आने लगी। अपने मालिकके घरके कामसे उसे सुबहके ५ बजेसे लेकर शामके ७ बजे तक बच्चेसे अलग रहना पड़ता था। इस बीच उसे सिर्फ दो बार नाश्ते और भोजनके लिए थोड़ी-थोड़ी देरकी फुर्सत मिलती थी। फलस्वरूप बच्चेको अकेला छोड़ना पड़ता था। पन्द्रह दिनके भयंकर कष्टके बाद बच्चेको अस्पताल भेज दिया गया, जहाँ थोड़े ही दिनोंमें उसकी मृत्यु हो गई। बच्चेकी मृत्युके बाद जदुबंसीको जिन कठिन मुसीबतोंसे गुजरना पड़ा, उनके सम्बन्धमें बताते हुए उसने कहा कि उसके मालिकने तीन दिनों तक उसे भोजन नहीं दिया, हाथचक्कीपर मक्की पीसनेको मजबूर किया, ठोकरें मारकर उसके साथ दुर्व्यवहार किया और उसका वेतन रोक रखा। वह बताती है कि पूरे सालकी मजदूरीमें उसे कुल ६ शिलिंग मिले।

हम जदुबंसीको लेकर भारतीय प्रवासियोंके संरक्षकके पास गये। हमने संरक्षकको सारा हाल बताया और फिर उसकी शिकायतोंकी जाँच होने तक के लिए उसे उक्त

अधिकारीके जिम्मे ही छोड़ आये। अधिकारीने मामलेके सम्बन्धमें मालिकसे पूछा। उसने इस बातसे साफ इनकार कर दिया कि उसने बच्चेकी देख-भाल नहीं की, और लापरवाहीके लिए उसकी माँको दोषी ठहराया। अस्पतालमें डॉक्टरने बच्चेकी मृत्युकी रिपोर्ट तो दी, लेकिन उसकी हालत इतनी बुरी कभी नहीं समझी कि वह उसका विशेष उल्लेख करता।

हमारे सामने ये परस्पर विरोधी बयान हैं और अब हम इन्हें जनताके सामने रखते हैं कि वही निर्णय करे कि अधिक सम्भावना किस बातकी है — इसकी कि एक माँ — जिसका बच्चा दैवयोगसे जल गया है, जानबूझकर उसके प्रति लापरवाही बरतेगी और उसकी शुश्रूषा करनेसे इनकार कर देगी या इसकी कि मालिक [झूठका सहारा लेकर] अपनेको एक गम्भीर आरोपके परिणामोंसे बचानेकी कोशिश करेगा। और ऐसे मामलोंमें डॉक्टरोंकी स्थिति भी क्या है? उनकी नियुक्ति भारतीय प्रवासी न्यास निकाय (इंडियन इमिग्रेशन ट्रस्ट बोर्ड)[1] की ओरसे होती है, और इस न्यासके सदस्य होते हैं खेतों और बागानोंके मालिक। कोई भी आदमी यह आसानीसे समझ सकता है कि ये डॉक्टर ऐसे मामलोंकी रिपोर्ट देनेको बहुत ज्यादा उत्सुक न होंगे जिनसे उन्हें रोजी देनेवाले लोगोंका दोष प्रकट होता हो। इसलिए हमें इस बातको अधिक महत्व नहीं देना है कि बच्चेकी नाजुक हालतके बारेमें रिपोर्ट नहीं की गई। यह तो सर्वविदित है कि इन डॉक्टरोंपर सरकारका कोई नियन्त्रण नहीं है। हमारा खयाल है कि इस परिस्थितिके कारण ऐसी अनेक दर्दनाक घटनाएँ छिपी रह जाती हैं। और मालिकोंका हाल क्या है? जदुवंसी बताती है कि चार भारतीयों — दो औरतें, दो मर्द — और चार वतनियोंको एक ही कमरेमें अपना भोजन बनाना पड़ता था, और यह कमरा भी अस्तबलका एक हिस्सा था। भारतीयोंमें से दो विवाहित थे और दो अविवाहित। किन्तु, सभीको एक ही कमरेमें सोना पड़ता था। कुछ महीने पूर्व संरक्षकके विभागके निरीक्षक वैलरने इस स्थानका मुआयना करके यह सारा हाल देखा था। उसने मालिकको कुछ सुधार-परिवर्तन करनेका आदेश दिया था, किन्तु स्पष्ट है, उसके निर्देशोंका पालन नहीं किया गया। इस प्रकार हम देखते हैं कि मालिक कोई ऐसा आदमी नहीं है जिसे अपने भारतीय मजदूरोंके हितका तनिक भी खयाल हो। और केवल इतना कहना उसपर कृपा करना ही है।

खैर, बादमें यह हुआ कि संरक्षकने मालिकको बहुत समझाया-बुझाया कि वह उस महिलाको, तबादला करके, कहीं और भेज दे, क्योंकि स्पष्ट था कि वह किसी कारण वश वहाँ रहकर काम नहीं करना चाहती थी। किन्तु, मालिकने इनकार कर दिया और लगता है, संरक्षक महोदय इससे आगे कोई संरक्षण नहीं दे सके। पुलिसने जदुवंसीको गिरफ्तार कर लिया और उसे [अपने मालिकके यहाँसे] भागनेके अपराधमें

१. **इंडियन ओपिनियनके** सम्पादकीय स्तम्भोंमें कई बार इस बातकी माँग की गई थी कि इस निकायमें भारतीयोंका भी प्रतिनिधित्व होना चाहिए और उपनिवेश-कार्यालयके नाम लिखे दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके १७ जून, १९११ के प्रार्थनापत्रमें भी श्री पोलकने यही अनुरोध किया था; देखिए परिशिष्ट ८।

जेल भेज दिया। एक महीनेकी कैद काटनेके वाद उसने फिर अपने मालिकके पास लौटनेसे इनकार कर दिया। जान पड़ता है, अव उसके मालिकने उसे वापस पा सकनेकी आशा विलकुल छोड़ दी है, और इसलिए उसे जहाजसे भारत भेज देनेकी अनुमति दे दी है। वह भारत जाना भी चाहती है। उसका कहना है कि भर्ती करनेवाले एक एजेंटने भारतमें उसके साथ धोखे-वाजी की थी और उसे वहाँसे उसकी इच्छाके विरुद्ध जवरदस्ती भेज दिया गया था।

यदि इस महिला द्वारा वताई गई आधी कहानी भी सच हो तो वास्तवमें यह "एक दुर्भाग्यपूर्ण मामला" है। गिरमिट प्रथाके समर्थकोंकी दृष्टिसे भी इसे दुर्भाग्य-पूर्ण ही माना जाना चाहिए कि ऐसे मामले लोगोंके सामने आते हैं। ऐसा एक ही मामला पूरी प्रथाको वुरा सिद्ध कर देनेके लिए पर्याप्त है; क्योंकि इससे यह प्रकट होता है कि सुदूरवर्ती इलाकोंमें कैसी-कैसी भयानक वातें हो सकती हैं। हम श्री गिब्सनको धन्यवाद देते हैं कि उन्होंने इस निरीह महिलाको अधिक भोगनेसे वचा लिया।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–६–१९१२

२२४. गिरमिटिया भारतीयोंका स्वास्थ्य

तपेदिक आयोगके सामने भारतीय प्रवासी-संरक्षकने जो गवाही दी, उससे एक वार फिर इस तथ्यका स्मरण हो आता है कि कुछ अन्य मामलोंकी तरह स्वास्थ्यके मामलेमें भी वह अपने संरक्षित लोगोंको सुरक्षा प्रदान करनेमें असमर्थ है। संरक्षक एक सरकारी कर्मचारी है और प्रवासी न्यास निकाय (इमिग्रेशन ट्रस्ट वोर्ड)से स्वतन्त्र है। इसलिए वह उसके सदस्योंके हस्तक्षेपके विना स्वतन्त्र रूपसे काम कर सकनेकी स्थितिमें है। सफाई-निरीक्षक तथा चिकित्सा-अधिकारी, जिनकी नियुक्ति वैरकों और उनमें रहनेवाले लोगोंके स्वास्थ्यकी हालतकी देखभालके लिए की जाती है, ऐसी स्थितिमें नहीं हैं। उन्हें न्यास निकाय नियुक्त करता है, इसलिए वे अपने इन मालिकोंके दवावमें रहते हैं। हमारा खयाल है कि इन परिस्थितियोंमें इन अधिकारियोंके लिए अपना काम कर सकना कठिन है। जव तपेदिक आयोगने कुछ वैरकोंके इर्द-गिर्दकी जमीनके वारेमें, जो जहाँ-तहाँ गँदला पानी और कूड़ा-करकट फैले होनेसे वड़ी गन्दी हालतमें पड़ी थी, प्रश्न किया तो श्री पॉकिंगहॉर्नने[1] वताया कि इन चीजोंकी देख-भाल करनेके लिए एक सफाई-निरीक्षककी व्यवस्था है। हम इस वातको भली-भाँति समझ सकते हैं कि सफाई-निरीक्षकको मालिक वरावर परेशान करनेवाली एक वला समझते हैं। उसके दोष-दर्शनका मतलव होता है खर्चमें वृद्धि और लाभमें कमी। नतीजा यह है कि अक्सर ये अफसर वहुत आवश्यक सुधारोंके वारेमें भी सुझाव तक नहीं रखते, क्योंकि वे जानते हैं कि यह वर्रके छत्तेको छेड़ना होगा। स्वाभाविक है

१. जे० ए० पॉकिंगहॉर्ने; नेटालमें भारतीय प्रवासियोंके संरक्षक।

कि वे अपने लिए मुसीबत मोल लेकर अपनी स्थितिको खतरेमें डालनेके बदले मामलोंको यों ही छोड़ दें। काफी समय पहले, सन् १९०८ में ही, संरक्षकने अपने वार्षिक प्रतिवेदनमें इस मामलेकी ओर ध्यान आकर्षित किया था। उसने कहा था कि मेरी रायमें नेटालके तटवर्ती जिलोंमें काम करनेवाले गिरमिटिया भारतीयोंकी अधिक मृत्यु-संख्याका कारण काफी हद तक ये हालात ही हैं, और इस घोटालेके विरोध-स्वरूप उसने चिकित्सा अधिकारियोंसे कोई रिपोर्ट नहीं माँगी थी।

प्रवासी न्यास निकायमें गिरमिटिया भारतीयोंके मालिकों द्वारा निर्वाचित सात सदस्य और इनके अलावा संरक्षक तथा सरकार द्वारा मनोनीत एक और सदस्य भी होता है। निकायके गठनका उल्लेख करते हुए संरक्षकने अपनी रिपोर्टमें कहा कि अन्य किसी उपनिवेशमें, जहाँ भारतीय प्रवासियोंको प्रवेश दिया जाता है, मालिकोंका ऐसा कोई भी निकाय नहीं है, और मेरी पक्की राय है कि इस ढंगपर गठित किसी भी निकायको इस उपनिवेशके गिरमिटिया भारतीयोंके प्रति कैसा बरताव किया जाये, इस बातका निबटारा करनेका अथवा उसे प्रभावित करनेका कोई अधिकार नहीं होना चाहिए। हम श्री पॉकिंगहॉर्नसे सर्वथा सहमत हैं। इतना ही नहीं, हमारा तो खयाल है कि वे तपेदिक आयोगके सामने यह बात और अधिक जोरदार ढंगसे पेश कर सकते थे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-६-१९१२

२२५. श्रीमती वॉगलका बाजार[1]

श्रीमती वॉगलके नाम और कामसे अब हमारे पाठक अच्छी तरह परिचित हो गये होंगे। उनकी महत्वाकांक्षाएँ अपार हैं। जैसाकि भारतीय महिलाओंके नाम लिखे कुमारी श्लेसिनके पत्रसे[2] विदित होगा, श्रीमती वॉगल भारतीय महिला संघके तत्वावधानमें पहलेकी अपेक्षा कहीं अधिक बड़े पैमानेपर एक बाजारका आयोजन कर रही हैं। पिछला बाजार आर्थिक तथा सामाजिक, दोनों दृष्टियोंसे सफल रहा। परन्तु श्रीमती वॉगलका खयाल है कि यदि नागप्पन स्मारकको उस उद्देश्यके अनुरूप बनाना है जिसके लिए उस दिवंगत युवकने अपने प्राण दे दिये, तो कोषको काफी समृद्ध करना होगा। वे यह भी सोचती हैं कि यदि समय-समयपर बाजारका आयोजन होता रहे तो संघके शिक्षा-कार्यको अधिक प्रोत्साहन मिलेगा। हमें विश्वास है कि भारतकी महिलाएँ कुमारी श्लेसिनकी अपीलके उत्तरमें पूरे मनसे सहयोग करेंगी और हम आशा करते हैं कि यहाँ भी तथा इंग्लैंडमें भी जो लोग इस उपमहाद्वीपके भार-

१. देखिए "अभिनन्दन पत्र: श्रीमती वॉगलको", पृष्ठ १७९ भी।

२. कुमारी श्लेसिनने, जो ट्रान्सवाल भारतीय महिला संघकी अवैतनिक मन्त्री थीं, अपने १४ जूनके पत्रमें अनुरोध किया था कि सन् १९१३ के अन्तमें जिस बाजारका आयोजन किया जानेवाला है उसके लिए महिलाएँ सजावटके सामान तथा दस्तकारीके नमूने भेजें। उन्होंने भारतके सभी संघोंसे भी अपील की थी कि उनमें से जो भी मदद देना चाहें, दें। **इंडियन ओपिनियन**, २२-६-१९१२।

तीयोंमें जरा भी दिलचस्पी रखते हैं, वे इस अपीलपर ध्यान देंगे और श्रीमती वॉगलने जो महान आन्दोलन शुरू किया है, उसमें मदद करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–६–१९१२

२२६. तार: गृह-मन्त्रीको[1]

जून २५, १९१२

गृहमन्त्री
प्रिटोरिया तथा केप टाउन

संसदके सत्रकी समाप्तिको ध्यानमें रखकर मैं जानना चाहता हूँ प्रवासी विधेयकके बारेमें सरकारका क्या इरादा है और समझौता किस प्रकार कार्यान्वित किया जानेवाला है।[2]

गांधी

जुलाई २०, १९१२के 'इंडियन ओपिनियन' और हस्तलिखित दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६५६) की फोटो-नकलसे।

१. उत्तरमें १६ जुलाईको गृह-मन्त्रीके कार्यवाहक सचिवने लिखा कि "...मन्त्री महोदयके निर्देशानुसार आपके सूचनार्थ निवेदन है कि सरकार इस विधेयकको पास करानेके लिए बहुत उत्सुक थी, किन्तु अन्तमें उसने बड़े दुःखके साथ यह देखा कि ऐसा करा सकना असम्भव ही है।"... अगले अधिवेशनमें एक संशोधित विधेयक पेश किया जायेगा, और फिलहाल इस विषयसे सम्बन्धित मौजूदा कानूनपर पहलेकी तरह ही अमल करते रहना आवश्यक होगा।" **इंडियन ओपिनियन**, २०-७-१९१२। जुलाई १६ को लॉर्ड ग्लैड्स्टनने एक स्मरण-पत्रमें साम्राज्य-सरकारके मन्त्री हरकोर्टको सूचित किया कि उस अधिवेशनमें विधेयकके पास होनेकी कोई सम्भावना नहीं है। इसपर हरकोर्टने "खेद और निराशा" प्रकट करते हुए तार भेजा और यह आशा व्यक्त की कि "विधेयक यथासम्भव शीघ्र ही फिर पेश किया जायेगा और पास भी करा लिया जायेगा।" उत्तरमें दक्षिण आफ्रिकाके मन्त्री महोदयने लिख भेजा कि "घोर विरोध और कार्याधिक्य"के कारण ही विधेयकको वापस लेना पड़ा। जुलाई १७को दक्षिण आफ्रिकी सरकारने एक और भी तार भेजा जिसमें कहा गया था कि "अगले अधिवेशनमें यथासम्भव शीघ्र ही विधेयक फिर पेश किया जायेगा।" ये बातें लॉर्ड एॅम्टहिल द्वारा लॉर्ड सभामें पूछे गये प्रश्नों (देखिए परिशिष्ट १८) के उत्तरमें बताई गई थीं और **इंडिया**ने इन्हें अपने १३–९–१९१२ के अंकमें प्रकाशित किया था।

२. गांधीजीने २१ अप्रैलको गृह-मन्त्रीके निजी सचिवके नाम लिखे अपने पत्रमें (जो उपलब्ध नहीं है) शायद यह जिज्ञासा की थी कि संघ-संसदका अधिवेशन कब समाप्त होगा। लेनने २५ अप्रैलको इसके उत्तरमें लिखा था कि "मैं कोई निश्चित तिथि तो आपको नहीं बता सकता...किन्तु मेरा खयाल है, वह १२ जूनको समाप्त होगा।" —(एस० एन० ५६४८)। प्रवासी विधेयकपर विचार किये बिना ही संघ-संसदका अधिवेशन २४ जूनको समाप्त हो गया। उसका अगला अधिवेशन २३ सितम्बरको प्रारम्भ होनेवाला था।

२२७. तार: द० आ० ब्रि० भा० समितिको

[जोहानिसबर्ग]
जून २६, १९१२

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति
२३१-२ स्ट्रैंड
[लन्दन] डब्ल्यू० सी०

फ्रीडडॉर्पके वाड़ोंके यूरोपीय मालिकोंको अन्तिम रूपसे नोटिस[1] मिले हैं कि वे तीन महीनके अन्दर एशियाई किरायेदारोंको निकाल दें। आदेशका पालन न करनेपर वाड़े जब्त कर लिए जायेंगे; इनमें से कुछ यथार्थमें भारतीयोंके हैं। फ्रीडडॉर्पके ग्यारह भारतीय व्यापारी वाड़े छिन जानेपर बरबाद हो जायेंगे।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
कलोनियल आफिस रेकर्ड्स: सी० ओ० ५५१/३५

२२८. लॉर्ड ऍम्टहिलकी समिति

हमारी विलायतकी समितिका और जोहानिसबर्गमें होनवाले सार्वजनिक कार्यका खर्च उठानेके लिए पैसा न होनेके कारण अभी कुछ दिन हुए, ट्रान्सवालमें चन्दा इकट्ठा करनेका एक काम शुरू हुआ है। इस कामकी जिम्मेदारी, सच पूछिए तो, श्री सोराबजीने अपने ऊपर ली है। उनके साथ अक्सर श्री काछलिया भी निकलते हैं। इसी प्रकार श्री दुलभभाई कल्याणजी, श्री परभुदयाल, श्री मंछा गोसाई,

१. ये नोटिस सन् १९०७के फ्रीडडॉर्प बाड़ा अधिनियमके खण्ड ४के अन्तर्गत ६ जून, १९१२को उन बाड़ा-मालिकोंपर तामिल किये गये थे जिनके बाड़ोंमें एशियाई, वतनी या रंगदार लोग रहते थे। फ्रीडडॉर्प बाड़ा अध्यादेश, ट्रान्सवाल्को उत्तरदायी शासन मिलनेके पूर्व, २८ सितम्बर, १९०६को सरकारी गज़टमें प्रकाशित हुआ था। इस अध्यादेशके अनुसार एशियाइयों या रंगदार लोगोंको इन बाड़ोंकी जमीन पट्टेपर या शिकमी पट्टेपर देनेकी मनाही की गई थी। वे वहाँ बने हुए मकानोंमें घरेलू नौकरोंकी तरह ही रह सकते थे; अन्यथा उनका वहाँ रहना भी मना था। ८ अक्तूबर, १९०६को ब्रिटिश भारतीय संघने लॉर्ड एलगिनको इसका विरोध करते हुए एक प्रतिवेदन दिया था, जिसमें उसे शाही मंजूरी न देनेकी माँग की गई थी; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४७६-७८। इस प्रतिवेदन और दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति द्वारा किये गये अन्य प्रयत्नोंके फलस्वरूप (खण्ड ६, पृष्ठ ३६२-६३ और ३६७) एक नया विधेयक पास हुआ था, जिसमें ४ वर्षके नोटिस और भारतीयों द्वारा बनाये गये मकानोंके सम्बन्धमें मुआवजा देनेकी व्यवस्था थी; देखिए खण्ड ७, पृष्ठ १७४।

श्री जी० के० पटेल, श्री भीखूभाई करसनजी और श्री जेराम गोसाई भी निकलते हैं। श्री सोढा भी चन्दा इकट्ठा करनेके लिए जाते हैं। वेरीनिगिंगसे इस खातेमें २७ पौंड १२ शिलिंग प्राप्त हुए हैं। इन्हें मिलाकर लगभग ३५० पौंड इकट्ठे हो चुके हैं। लोग शीघ्र ही कोष-संग्रहके लिए इस शहरके बाहर भी जायेंगे।

किन्तु लॉर्ड ऐम्टहिलकी समितिका यह सारा खर्च ट्रान्सवालपर नहीं पड़ना चाहिए। इसमें नेटाल, केप आदिको भी हिस्सा लेना चाहिए। यह समिति सारे दक्षिण आफ्रिकाका कार्य कर रही है और उसमें सब भारतीयोंको हिस्सा लेना चाहिए।[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–६–१९१२

२२९. भाषण : हाजियोंकी विदाई सभामें

[जून २९, १९१२]

. . . ऑटोमन क्रिकेट क्लबकी सभा शनिवार [२९ जून] की रातको इसी स्थान [श्री रुस्तमजीके घर] पर हुई थी। उसमें दो-तीन-सौ सज्जन उपस्थित थे। श्री गांधीको अध्यक्ष-पद स्वीकार करनेके लिए कहा गया। उन्होंने आसन ग्रहण करते हुए कहा :

मैं हाजियोंको सम्मानित करनेके लिए यहाँ आया हूँ। मेरा इरादा अध्यक्ष पद ग्रहण करनेका नहीं था, लेकिन इस क्लबके दो पदाधिकारियोंने आसन ग्रहण करनेका आग्रह किया, और उन्होंने [हाजियोंने] बदलेमें यह वचन दिया कि अगर सत्याग्रह संघर्ष फिरसे आरम्भ हुआ तो वे उसमें भाग लेंगे, इस कारण मैंने अध्यक्ष-पद खुशीसे स्वीकार किया है। मेरा तो धन्धा ही देशकी खातिर जेल जानेवालोंको खोज निकालनेका हो गया है। मैं यह चाहता हूँ कि इस क्लबके सदस्य भी सत्याग्रहीके गुणोंको अपनायें और अवसर आनेपर जेल जानेको तैयार रहें। जेलसे डरना क्यों चाहिए? टॉल्स्टॉय फार्मकी पाठशालाके विद्यार्थी ७ मील चलकर वाइटरस्ट गये थे। रास्तेमें नाला आया, वे उसमें नहाये। [इसके लिए] जब वे पकड़ लिये गये तब उन्होंने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। लेकिन जब उन्हें जेल भेज देनेके लिए कहा गया तब उन्होंने कहा कि वे छोड़ दिये जानेसे जेल जाना अधिक पसन्द करेंगे। पकड़नेवालोंने यह सुनकर उनको छोड़ दिया। मतलब यह है कि जेलका डर न रखें, सच्चे साहसी बनें और सत्यकी खातिर लड़ना सीखें, भारतीय समाजके लिए यह शिक्षण जरूरी है।

इसके बाद श्री गांधीने श्री दाउद मुहम्मद तथा अन्य हाजियोंकी विदाईके अवसर पर अपने उपस्थित हो सकनेपर हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की और सभाकी कार्रवाई शुरू की।

१. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके खर्चेके लिए चन्दा देनेकी अपील गांधीजीने पहले भी कई बार की थी; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ३४१-४२; खण्ड ७, पृष्ठ २६८, २७९-८० और ३१८ तथा खण्ड ८, पृष्ठ १४१-४२ और ३६३।

अन्तमें उपसंहार करते हुए उन्होंने कहा :

हजके लिए जानेवाले श्री दाउद मुहम्मद, मुहम्मद कुवाडिया,[1] श्री दाउद सीदत तथा श्री मुल्लाको मैं हृदयसे बधाई देता हूँ। वे हज-यात्रापर जा रहे हैं, यह सुनकर एक हिन्दूके रूपमें मुझे खुशी हुई है। जो सच्चा मुसलमान है, उससे हिन्दूका अहित हो ही नहीं सकता। [इसी प्रकार] सच्चे हिन्दूसे मुसलमानका अहित नहीं हो सकता। जो अपने हिन्दू भाइयोंका अहित कर सकता है, वह मुसलमान सच्चा मुसलमान नहीं है और न अपने मुसलमान भाइयोंका अहित करनेवाला हिन्दू, सच्चा हिन्दू। समाजके निमित्त निःस्वार्थ भावसे किये गये कार्यको मैं सांसारिक कार्य नहीं बल्कि धार्मिक कार्य मानता हूँ। इसलिए मैं यह मानता हूँ कि श्री दाउद मुहम्मदने जेल जाकर[2] समाजकी जो सेवा की है वह निश्चय ही भगवानके दरबारमें भी मंजूर होगी। दूसरी ओर, अशुद्ध मनसे किये गये धार्मिक कार्यको मैं धार्मिक नहीं मानता। यह बात बार-बार कही जाती है कि भारतीय समाजमें एकता नहीं है।[3] लेकिन यह सच ही है, ऐसा नहीं मानना चाहिए। साथ ही हमें आँखें बन्द करके यह भी नहीं कहना चाहिए कि हममें फूट है ही नहीं। हमारे यहाँ [दक्षिण आफ्रिका] के कष्टोंका कारण साहसकी कमी है। पर हममें साहस बिलकुल ही नहीं है, यह भी मैं नहीं कहना चाहता। जिस समय जेल जानेके लिए इमाम साहब आगे आये उस समय कौन कह सकता था कि वे जेलके कष्टोंको झेल सकेंगे? ये अपनी हिम्मतके बलपर आगे आये, और अपनी हिम्मतके बलपर ही वे संघर्षमें अन्ततक टिके हुए हैं। हमारी मुख्य आवश्यकता सत्यवादिता है। सत्य, सत्य और केवल सत्य, यही हमारा उद्देश्य होना चाहिए। हम सत्यके बलपर दुःखोंके समुद्र भी लाँघ सकेंगे। सच्ची मनोवृत्तिसे किया गया काम कभी निष्फल नहीं जाता। समाजका काम केवल सच्ची मनोवृत्तिसे कीजिए। एकता बनाये रखना कोई मुश्किल काम नहीं है। यदि मुसलमान झगड़ा करना न चाहें तो सिर्फ हिन्दू झगड़ा नहीं कर सकते। यदि हिन्दू झगड़ा न करना चाहें तो अकेले मुसलमान भी झगड़ा नहीं कर सकते। एक सौ व्यक्ति झगड़ा करानेवाले हों और अगर एक एकता करानेवाला हो, तो उन सौ व्यक्तियोंकी हार होगी और एक व्यक्तिकी जीत होगी। ऐसा न हो तो खुदाकी खुदाई टिक नहीं सकती।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-७-१९१२

१. मुहम्मद कासिम कुवाडिया; व्यापारी; डर्बन अंजुमनके अध्यक्ष और वेस्ट स्ट्रीट मस्जिदके एक न्यासी।

२. अगस्त १९०८ में, नेटालकी ओरसे संघर्षमें सहयोग देने और उस उपनिवेशमें अपने युद्ध-पूर्वके अधिवास-अधिकारकी परीक्षा लेनेके लिए उन्होंने ट्रान्सवालमें प्रवेश किया था; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४७९।

३. हिन्दू-मुस्लिम एकतापर गांधीजीके पहलेके विचारोंके लिए देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ५३, और १२६-२७, १७५; खण्ड ६, पृष्ठ २७७ और २८१-८२; खण्ड ८, पृष्ठ २७, ९६-९७, ११२, १६३, ३८८ और ४१४ तथा खण्ड ९, पृष्ठ १५३, १७६ और २६४-६५।

२३०. श्री दाउद मुहम्मद

श्री दाउद मुहम्मदका सम्मान करके समाजने मानो, अपना ही सम्मान किया है। श्री दाउद मुहम्मद-जैसी योग्यता, सूझ-बूझ और प्रसन्न स्वभाववाला व्यक्ति हम लोगोंमें दूसरा शायद ही कोई हो। यूरोपीयोंपर जैसा प्रभाव उनका है, वैसा कदाचित् ही किसी अन्य भारतीयका होगा।

सत्याग्रहमें भाग लेनेके कारण उनका नाम सारे दक्षिण आफ्रिकामें विख्यात हो गया है। हमारी कामना है कि उन्हें और उनके साथियोंको अपने ध्येयकी प्राप्तिमें सफलता मिले।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-७-१९१२

२३१. पत्र: ई० एफ० सी० लेनको[1]

जुलाई ६, १९१२

प्रिय श्री लेन,

विदित हुआ है कि आप आजकल प्रिटोरियामें हैं। चूँकि मामला कुछ जरूरी-सा था, इसलिए मैंने गत मासकी २५ तारीखको प्रवासी-विधेयकके बारेमें कुछ जाननेके उद्देश्यसे आपको केप टाउन और प्रिटोरिया, दोनों पतेपर एक तार[2] भेजा था। मैं जनरल स्मट्सको इस सम्बन्धमें कोई तकलीफ नहीं देना चाहता; फिर भी सोचता हूँ कि जो लोग इस विधेयकके बारेमें मुझसे पूछताछ कर रहे हैं, उनको उत्तर देना मेरा कर्त्तव्य है। क्या अब मुझे यह बताया जा सकता है कि उक्त विधेयकके बारेमें सरकारका मन्शा क्या है और अस्थायी समझौता भविष्यमें किस तरह कार्यान्वित किया जायेगा?

हृदयसे आपका,

[मो० क० गांधी]

श्री अर्नेस्ट एफ० सी० लेन
प्रिटोरिया

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६६०) की फोटो-नकलसे।

१. इस पत्रके उत्तरके लिए देखिए पा० टि० १, पृष्ठ २६८।
२. देखिए "तार: गृह-मंत्रीको", पृष्ठ २६८।

२३२. डॉ० म्यूरिसनका आरोप

कहते हैं कि डॉ० म्यूरिसनने क्षय-आयोगके सामने बयान दिया है कि भारतीयोंको झूठ बोलनेकी आदत है और "उनकी आदतोंके कारण उनके निजी जीवनका अधिक हाल जानना कठिन है।" उनकी सम्मतिमें "भारतीयों और वतनियों, दोनोंको, बस्तियोंमें रख देना चाहिए।" हम प्रतीक्षा करते रहे कि डॉ० म्यूरिसन सार्वजनिक रूपसे इस आक्षेपका प्रतिवाद करेंगे और हमने उनके आक्षेपके सम्बन्धमें और भी निश्चित जानकारी प्राप्त करनेके विचारसे उनसे लिखकर पूछा कि क्या आपकी गवाहीका प्रकाशित विवरण ठीक है। परन्तु न तो हमें उनका प्रतिवाद कहीं देखनेमें आया और न उत्तर ही मिला। इसलिए हम यह माने लेते हैं कि बयान ठीक ही प्रकाशित हुआ है। डॉ० म्यूरिसन ईमानदार चिकित्साधिकारी माने गये हैं। हमने उन्हें इस बातपर प्राय: बधाई दी है[1] कि उनके सम्पर्कमें जो लोग आये उनकी हैसियतको सोचे बिना उन्होंने सभीके साथ समान व्यवहार किया। इसलिए हमें उनके द्वारा सारी जातिपर झूठ बोलनेके अविवेकपूर्ण आरोपका बड़े खेदके साथ एतराज करना पड़ रहा है। और फिर इस जातिके विरुद्ध दक्षिण आफ्रिकामें पहलेसे ही भयंकर रूपसे झूठी बातें फैलाई जा रही हैं। पहली बात तो यह है कि चिकित्साधिकारीकी हैसियतसे डॉ० म्यूरिसनका वास्ता ही स्वस्थ लोगोंकी अपेक्षा अस्वस्थ लोगोंसे अधिक पड़ता है और अस्वस्थ लोगोंके दोषोंको उनके सारे समाजपर थोपना और कुछ नहीं तो अत्यन्त असंगत अवश्य है। परन्तु जिन भारतीयोंपर क्षयसे पीड़ित होनेका सन्देह हो उनपर क्या झूठे होनेका आक्षेप करना उचित है? हम यह एकदम मान लेते हैं कि अन्य सब जातियोंके रोगियोंकी भाँति, भारतीय रोगी भी, पृथक्-निवास और ऐसी विशेष चिकित्सासे बचनेके लिए, जिसे वे शायद समझते नहीं, अपने कष्टोंको घटाकर बतलाते होंगे या रोगकी सूचना ही नहीं देते होंगे, या अधिकारियोंको भ्रममें रखनेका यत्न करते होंगे; परन्तु साथ ही हमें विश्वास है कि डॉ० म्यूरिसन भी यदि विचार करेंगे तो वे समझ जायेंगे कि इन लोगोंपर झूठ बोलनेका लांछन लगाना और फिर उसीके आधारपर उन्हें जबरदस्ती बस्तियोंमें पृथक् बसानेकी सिफारिश करना उचित बात नहीं है। हम उन्हें यह याद दिला दें कि लॉर्ड कर्ज़न जब भारतके वाइसरॉय थे तब उन्होंने भी एक बार विश्वविद्यालयके विद्यार्थियोंके सामने भाषण देते हुए इसी प्रकारका एक नासमझीका काम किया था;[2] और उसके कारण उन्हें

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३५७।

२. सन् १९०५ में एक भारतीय विश्वविद्यालयके दीक्षान्त समारोहमें बोलते हुए लॉर्ड कर्ज़नने कहा था कि प्राच्य देशोंमें धूर्तता तथा कूटनीतिक छल-प्रपंचकी सदा सराहना की गई है। गांधीजीने उस समय इसका विस्तृत प्रत्युत्तर दिया था; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४२०-२४।

बहुत हानि उठानी पड़ी थी।[1] पहले भारतमें उनकी जो प्रतिष्ठा थी वे उस सबसे हाथ धो बैठे और उन्होंने अपने आपको इस लांछनका उचित पात्र सिद्ध कर दिया कि मौका मिल जाये तो वे भी झूठ बोलनेमें नहीं हिचकते। एक बार जैंगविलने[2] कहा था कि यदि कोई यहूदी कुछ अपराध करे तो वह अपराध सारी जातिका होता है, परन्तु किसी ईसाईसे कोई अपराध हो जाये तो वह अकेले उसीका होता है।

इस वाक्यमें "यहूदी" शब्दके स्थानपर "भारतीय" रख दीजिए तो इस निन्द्य सत्यका सम्पूर्ण स्वरूप संक्षेपमें सामने आ जायेगा। जब-कभी कोई भारतीय ऐसा काम करता है जिसे निन्दनीय माना जाता है तब समाचारपत्र तो उसे मोटे अक्षरोंमें छापनेमें संकोच नहीं करते और बहुत-से सार्वजनिक कार्यकर्ता अपने व्याख्यानों द्वारा इस देशमें बसे हुए भारतीय-मात्रकी निन्दा करनेमें किसी प्रकारके संकोच या झिझकका अनुभव नहीं करते। हमें यह आशा अवश्य है कि डॉ० म्यूरिसन उपर्युक्त सार्वजनिक कार्यकर्ताओंमें अपनी गिनती करवाना पसन्द नहीं करेंगे। भारतीय समाज उन्हें आदरकी दृष्टिसे देखता है, और उसके वे अधिकारी भी हैं; हम चाहते हैं, उसे वे नासमझीकी बातें करके गँवा न दें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-७-१९१२

२३३. नया मुल्ला

श्री कज़िन्सको नेटालका कार्यकारी प्रवासी अधिकारी नियुक्त किया गया है। उन्होंने आते ही एक फरमान जारी किया है, जिसे एक प्रकारसे गश्ती चिट्ठी कहा जा सकता है। हम इसे अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। इस फरमानमें उस शिनाख्तका जिक्र है जिसे यह अधिकारी अपने सन्तोषके लिए जरूरी समझता है और जिसे नेटाल प्रान्तमें प्रवेश पानेकी इच्छुक महिलाएँ अपनेको अधिवासी भारतीयोंकी पत्नियाँ सिद्ध करनेके हेतु प्रस्तुत करेंगी। हमारा खयाल है कि यह चिट्ठी प्रधान कार्यालयके आदेशसे नहीं निकाली गई होगी। इस चिट्ठीके-जैसी भारतीय भावनाओंको ठेस पहुँचानेवाली दूसरी कोई वस्तु नहीं हो सकती। सामान्य साक्ष्यको अस्वीकार्य ठहराते हुए श्री कज़िन्सने कहा है कि उनके सामने इस बातका असन्दिग्ध प्रमाण दिया जाना चाहिए कि सम्बद्ध पतिकी और कोई पत्नी नहीं है; साथ ही विवाहका प्रमाणपत्र होना चाहिए और यह प्रमाणपत्र तभी सही माना जायगा जब उसके साथ शिनाख्तका सबूत

१. तात्पर्य लॉर्ड किचनरसे हुए विवादके बाद उनके त्यागपत्र देनेसे हैं; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ५०।

२. इजराइल जैंगविल (१८६४-१९२६); यहूदी उपदेशक, उपन्यासकार और नाटककार; जन्म और लालन-पालन इंग्लैंडमें; **एरियल** तथा **लंदन पक**के संस्थापक और सम्पादक; अधिकांश कृतियाँ यहूदी-जीवन और गम्भीर सामाजिक समस्याओंसे सम्बन्धित; प्रारम्भमें ब्रिटिश साम्राज्यके अन्दर यहूदियोंके लिए अलग देश बसानेकी माँग की थी और बादमें यहूदीवाद (फिलिस्तीनको यहूदियोंका स्वतंत्र राज्य बनानेके आन्दोलन)के नेता।

पेश किया जायेगा।[1] यदि उक्त प्रमाणपत्र प्रस्तुत न किया जाय तो श्री कज़िन्स यह चाहते हैं कि किसी उच्च यूरोपीय मजिस्ट्रेटका इस आशयका प्रमाणपत्र, उसपर पत्नीका अँगूठा लगवाकर, पेश किया जाये कि यह स्त्री प्रार्थीकी ही पत्नी है और उक्त उच्च अधिकारीने स्वयं प्रार्थीकी शपथके आधारपर इस विवाहकी तारीख आदि की जाँच कर ली है।[2] फिर प्रार्थीको अपनी शिनाख्तका भी असन्दिग्ध प्रमाण देना चाहिए और उस यूरोपीय अधिकारीको अपने सामने दिये हुए बयानोंकी मूल प्रति, पति तथा पत्नीकी शिनाख्तके प्रमाणोंके साथ भेजनी चाहिए। परिपत्रमें इसी प्रकारकी और भी अनेक बातें हैं। इस प्रकार श्री कज़िन्सने इस एक परिपत्रके द्वारा भारतीय स्त्रियोंका अपमान और भारतीय मजिस्ट्रेटों — और न्यायाधीशों तक — की ईमानदारी-पर अविश्वास तो किया ही है (न्यायाधीशोंका नाम लेनेका हमारा कारण यह है कि हमारी समझमें यदि उच्च न्यायालयके न्यायाधीश भारतीय होंगे तो श्री कज़िन्स उनके प्रमाणपत्रोंको भी नहीं मानेंगे), उन्होंने उच्च यूरोपीय अधिकारियों तक का अपमान कर डाला है, क्योंकि वह चाहते हैं कि ये उच्च यूरोपीय अधिकारी अपने प्रमाणपत्रोंके साथ वे कागजात भी भेजें जिनके आधारपर उन्होंने ये प्रमाणपत्र दिये हों। हमें आशा है कि इस असाधारण परिपत्रके विषयमें भारत-सरकार अपना कुछ-न-कुछ मत प्रकट करेगी; इसके द्वारा भारतीय जनताका जो अकारण अपमान किया गया है उसे वह चुपचाप नहीं सह लेगी; और नेटालके भारतीय इसकी वही गति करेंगे जिसके कि यह योग्य है और अपनी पत्नियोंके अँगूठेका या अन्य कोई निशान लगवानेसे साफ इनकार कर देंगे। भारतीय पुरुषोंपर यदि छद्म-परिचय देने या चोरी-छिपे प्रवेश करने[3] आदिका कोई सन्देह हो तो उनसे अपनी शिनाख्त देनेको कहना एक बात है; परन्तु भारतीय स्त्रियोंका अपमान करनेके लिए वैसी शर्त रखना और बात हो जाती है। आशा है कि संघकी सरकार इस परिपत्रको वापस करवाकर साधारण साक्षीको ही पर्याप्त मान लेनेकी प्रथा जारी रहने देगी। हम श्री कज़िन्सको बतलाना चाहते हैं कि किसी सरकारी अधिकारीकी योग्यता उन लोगोंको डराने-धमकानेमें अपना जोश दिखलाते रहनेमें नहीं है, जिनसे उसका वास्ता पड़ता है प्रत्युत इस बातमें है कि उसे जिन कानूनोंका पालन करानेके लिए नियुक्त किया जाये

१. "अपनी पत्नियोंको प्रवेश दिलानेके इच्छुक प्रार्थियोंके नाम जारी किये गये" इस परिपत्रमें यह भी कहा गया था कि प्रार्थीके लिए श्री कज़िन्सको यह विश्वास दिलाना आवश्यक होगा कि स्वयं वह वैध निवासी है। **इंडियन ओपिनियन**, १३-७-१९१२।

२. परिपत्रमें आगे कहा गया था कि मजिस्ट्रेटको यह घोषणा भी करनी पड़ेगी कि (क) उसके द्वारा प्रमाणित तथ्य सही हैं और (ख) उसने पुलिस द्वारा जाँच करवा ली है। उसे कागजातके साथ पुलिस-जाँचकी रिपोर्ट भी नत्थी कर देना जरूरी था और यह स्पष्ट कर देना भी कि प्रार्थनापत्रमें प्रवेशार्थीके तथा वह जिस व्यक्तिके अधिकारके आधारपर प्रवेश करना चाहता है, उसके बीच बताया गया सम्बन्ध सही है।

३. सन् १९०६ से ही भारतीयोंपर बार-बार यह आरोप लगाया जा रहा था कि वे चोरी-छिपे उपनिवेशमें प्रवेश कर जाते हैं और अपना छद्म-परिचय देते हैं; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ २३१-३२ और ४३४, खण्ड ६ पृष्ठ १, ५५-५६; खण्ड ७ पृष्ठ २८६-८७ और खण्ड ८, पृष्ठ ९-११, ११७-२० तथा १७४।

उनके अमलमें हस्तक्षेप न करते हुए वह आम लोगोंके साथ समान रूपसे नम्रता और शिष्टताका व्यवहार करे। हम नहीं समझते कि इस परिपत्रकी, शासनके हितकी दृष्टिसे, कोई आवश्यकता है। इससे तो व्यवहार-कुशलताका शोचनीय अभाव ही प्रकट होता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–७–१९१२

२३४. भारतीय दुभाषिये

हमारा ध्यान इस तथ्यकी ओर आकृष्ट किया गया है कि सर्वोच्च न्यायालयकी नेटाल शाखामें तीन भारतीय भाषाओं (हिन्दुस्तानी, तमिल और तेलुगु)के लिए केवल एक दुभाषिया रखा गया है। जैसा कि हमें वतलाया गया है, सम्भव है कि यह सज्जन इन तीनों भाषाओंको समझा सकते हों, परन्तु हमारा यह कहना है कि जव एक ही आदमीसे एक साँसमें इन तीनों भाषाओंकी विभिन्न वोलियोंमें मतलव समझानेको कहा जायेगा तव वह सवको सन्तुष्ट नहीं कर सकेगा। सर्वोच्च न्यायालयको जीवन और मृत्युके प्रश्नोंका निर्णय करना पड़ता है और अभियुक्तका भाग्य गवाहीके ठीक-ठीक समझे जानेपर निर्भर होता है। जव कैदीसे प्रश्न पूछनेके लिए कहा जाता है तव वह गवाहोंकी भाषा न समझ सकनेके कारण उनसे प्रश्न नहीं कर सकता। उदाहरणके लिए, मान लीजिए कि हिन्दुस्तानी और तमिल वोलनेवाले दो भारतीय एक ही मुकदमेमें अभियुक्त हैं। एक तेलुगु-भाषी गवाह कठघरेमें जाकर उन दोनोंके विरुद्ध गवाही देता है। अभियुक्तोंका वकील कोई नहीं है, इसलिए उन्हें गवाहसे स्वयं ही जिरह करनेका अवसर दिया जाता है। तमिल अभियुक्त तेलुगु गवाहसे दुभाषियेकी मार्फत कुछ पूछता है। दुभाषिया [गवाहका] उत्तर [अभियुक्तको] तमिल भाषामें और अदालतको अंग्रेजी भाषामें वता देता है। क्या-कुछ हो रहा है इसका पता हिन्दुस्तानी-भाषी अभियुक्तको भी लगना लाजिमी है; परन्तु हमारा खयाल है कि आजकी परिस्थितियोंमें, गवाही उसे समझाई नहीं जाती। दुभाषियेसे यह अपेक्षा रखी जाती है कि वह सारी कार्रवाई याद रखे और उसका सारांश अभियुक्तोंको वतला दे। अदालती कार्रवाई केवल एक भाषामें हो तो भी कुछ-न-कुछ कसर अवश्य रह जाती है, किन्तु यदि अभियुक्त दो और भारतीय भाषाएँ तीन-तीन हों तव तो अभियुक्तोंको दुभाषिये द्वारा कार्रवाईकी पूरी-पूरी जानकारी मिलनेकी सम्भावना वहुत कम रह जाती है। सहज ही समझा जा सकता है कि अभियुक्तको सेंतमेत मृत्यु-दण्ड दे दिया जा सकता है।

हम गुजराती दुभाषियोंके न होनेकी वात इसके पहले भी उठा चुके हैं। इस भाषाको वोलनेवाले लोग तो वहुत हैं, परन्तु अदालतोंमें उन्हें सदा हिन्दुस्तानी वोलनी पड़ती है। हिन्दुस्तानी उन्होंने कभी नहीं सीखी; यहीं दक्षिण आफ्रिकामें आनेके वाद वे उसे थोड़ा-वहुत समझने-वोलने लगे हैं।

सारा सवाल सरकारकी कंजूसीका ही है। एक ओर अधिकारीगण अदालतोंमें पर्याप्त संख्यामें योग्य दुभाषिये रखनेकी बातपर कुछ सौ पौंड सालाना खर्च करते हुए पाई-पाईका विचार करते हैं, परन्तु दूसरी ओर सरकारी इमारतोंके लिए लाखों पौंड खर्चते हुए उन्हें कोई कलक नहीं होता। इस अपव्ययकी श्री मेरीमैन आदि संसद-सदस्योंने बड़ी कठोर आलोचना की है। जबतक सभी भारतीय भाषाओंके योग्य दुभाषिये नियुक्त नहीं किये जाते तबतक यह नहीं कहा जा सकता कि भारतीयोंके साथ पर्याप्त न्याय किया जाता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-७-१९१२

२३५. नेटालमें अधिवासके प्रमाणपत्रोंका सवाल

नेटालमें भारतीयोंको अब अधिवासके नये प्रमाणपत्र नहीं मिलते। इतना ही नहीं, जिनके पास पुराने प्रमाणपत्र हैं उनसे वे ले लिये जाते हैं और नया हलफनामा पेश करनेपर ही उनके बदले नये प्रमाणपत्र दिये जाते हैं। इससे गरीब भारतीयोंको बड़ी तकलीफ होती है। हमें लगता है कि अधिवासपत्रोंके इस सवालको लेकर कांग्रेस जो मुकदमा लड़ना चाहती थी वह उसे अवश्य लड़ना चाहिए। इस बीच जिनके पास पुराने प्रमाणपत्र हैं उनको, उन्हें लौटाकर नये लेनेकी कोई जरूरत नहीं है। जिसे नया प्रमाणपत्र लेना ही हो उसे भी अधिकारीको दुबारा प्रमाण देनेकी जरूरत नहीं है। जिसके पास कुछ न हो वह हलफनामा देकर और अपने निवासके प्रमाणोंको जितना बने उतना मजबूत बनाकर अधिवासपत्रके बिना ही यह देश छोड़ सकता है। कोई भी व्यक्ति अधिवासका प्रमाणपत्र रखनेके लिए बाध्य नहीं है। इसलिए प्रमाण इकट्ठे कर लेनेके बाद देश छोड़नेमें कोई परेशानीकी बात नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-७-१९१२

२३६. पत्र : गृह-मन्त्रीको[1]

[लॉली]
जुलाई १७, १९१२

माननीय गृह-मन्त्री
प्रिटोरिया
महोदय,

प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकसे सम्बन्धित मेरे पत्रोंके जवाबमें आपका १६ तारीखका पत्र[2] मिला। उसके लिए धन्यवाद।

मेरी समझमें आपके पत्रका अर्थ यह है कि समझौतेके अनुसार अपेक्षित कोई सन्तोषजनक कानून बन जाने तक पिछले वर्षका अस्थायी समझौता कायम रहेगा। इसलिए मैं मान लेता हूँ कि उक्त सम्भावनाके आधारपर पिछले वर्षकी तरह ही इस वर्ष भी कुछ शिक्षित एशियाइयोंको प्रवेश दिया जायेगा। आपका पत्र मिलनेपर इस प्रान्तमें प्रवेश पानेके इच्छुक शिक्षित भारतीयोंके नाम सरकारके पास भेज दिये जायेंगे, ताकि उन्हें अनुमतिपत्र प्राप्त हो सकें।

आपका
[मो० क० गांधी]

जुलाई २०, १९१२ के 'इंडियन ओपिनियन' और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६६३) की फोटो-नकलसे भी।

२३७. नये मुल्लाके बारेमें कुछ और[3]

श्री कज़िन्स अभी तक "बेधड़क बढ़ते ही जा रहे हैं।" उन्हें हमारी माताओं और बहनोंका अपमान करके ही सन्तोष नहीं — यद्यपि इससे अधिक बड़ी बात हो भी क्या सकती है? — वह हमें हर बातमें छेड़ना चाहते हैं। उनका नया हुक्म यह है कि जो लोग भारतसे लौटें वे कागजात पेश करके अपनी शिनाख्त प्रमाणित तो करें ही, किन्तु केवल इतनेसे काम नहीं चलेगा; वे [कज़िन्स साहब] अपने-आप

१. इसके जवाबमें कार्यवाहक गृह-सचिवने जुलाई १९ को लिखा : "मैं आज आपके नाम भेजे गये निम्नलिखित तारकी पुष्टि करता हूँ: . . . । गत वर्षका अस्थायी समझौता कानून बन जाने तक कायम रहेगा। इसलिए इस साल छः शिक्षित भारतीयोंको पंजीयनका सवाल उठाये बिना प्रवेश दिया जायेगा. . . । उपर्युक्त तारके सम्बन्धमें उन छः शिक्षित भारतीयोंके नाम भेज देनेकी कृपा करें जिन्हें आप इस वर्ष प्रवेश दिलाना चाहते हैं।" (एस० एन० ५६६७)

२. देखिए पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ २६८।

३. देखिए "नया मुल्ला", पृष्ठ २७४-७६।

भी इन कागजातकी जाँच करेंगे। कागजातके मालिकोंने जिन प्रमाणोंके बलपर कागजात प्राप्त किये, श्री कज़िन्स उनको भी पुनः परखनेका आग्रह कर रहे हैं। दूसरे शब्दोंमें, वे प्राप्त प्रमाणपत्रोंको ही माननेसे इनकार करते हैं। यह ठीक वही बात है जो ट्रान्सवालकी सरकारने करनी चाही थी और फिर उसे मुँहकी खानी पड़ी थी।[1] यही हाल श्री कज़िन्सका भी होगा। जो यहाँ अधिवासके प्रमाणपत्र प्राप्त कर चुके हैं वे निश्चय ही इसके लिए तैयार नहीं होंगे कि उनके कागजात निरर्थक समझे जायें। यदि वे प्रमाणपत्र उन्हींके हैं तो वे उनके बलपर इस देशमें आनेका दावा करेंगे।

यह मामला बिलकुल ऐसा है जिसे कांग्रेसको अपने हाथमें लेना चाहिए और इसमें पल-भरका विलम्ब नहीं करना चाहिए। अब स्थिति असह्य होती जा रही है। हानि केवल गरीब लोगोंको उठानी पड़ रही है। कांग्रेसका अस्तित्व तभी सफल सिद्ध होगा जब वह गरीबोंकी पुकारकी अनसुनी न होने दे। यदि एक भी ईमानदार परन्तु गरीब भारतीय, निवासका अधिकार होते हुए भी, नेटालसे लौटा दिया गया तो इसकी सारी जिम्मेदारी कांग्रेसपर होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९१२

२३८. डॉ० म्यूरिसनका पत्र

हमने गत सप्ताह इन स्तम्भोंमें डॉ० म्यूरिसनके नाम अपने जिस पत्रका[2] जिक्र किया था उसके उत्तरमें[3] प्राप्त उनका पत्र हम अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। डॉ०

१. सन् १९०३ में लॉर्ड मिल्नरने यह माँग की थी कि भारतीय लोग युद्ध-पूर्व कालमें ट्रान्सवालमें अपने निवास तथा अधिवासके अधिकारके प्रमाणके रूपमें बोअर सरकारको दिये तीन पौंडकी रसीद पेश करें। लॉर्ड मिल्नरके अनुरोधपर अधिकांश भारतीयोंने ये रसीदें दे दीं और उनके बदले शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत दिये जानेवाले अनुमतिपत्र ले लिये। लॉर्ड मिल्नरने इस प्रसंगमें यह आश्वासन दिया था कि "जहाँ एक बार उनका नाम पंजीयन-पुस्तक (रजिस्टर) पर आ गया कि अधिवासीके रूपमें उनकी स्थिति कायम हो जायेगी और फिर दुबारा पंजीयन करानेकी जरूरत नहीं होगी और न नया अनुमतिपत्र ही लेना पड़ेगा"; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३२७-२८ और ३३३ तथा खण्ड ६, पृष्ठ ५०-५१। सन् १९०५ में एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशके अन्तर्गत भारतीयोंसे पुनः यह कहा गया कि वे सिद्ध करें कि उनके पास जो शां० र० अध्या० अनुमतिपत्र या तीन पौंडी डच प्रमाणपत्र हैं वे असली हैं; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४२२-२३।

२. गांधीजी द्वारा डॉ० म्यूरिसनको लिखा यह पत्र तथा इस मामलेसे सम्बन्धित अन्य पत्र भी उपलब्ध नहीं हैं।

३. डर्बन नगरके स्वास्थ्य चिकित्सा-अधिकारी डॉ० म्यूरिसनने तपेदिक-आयोगके सामने गवाही देते हुए कहा था कि भारतीयोंको झूठ बोलनेकी आदत है। इसपर गांधीजीने २८ जून, १९१२ को डॉ० म्यूरिसनको एक पत्र लिखा, जिसका उत्तर उन्होंने १० जुलाई, १९१२ को भेजा। उत्तरमें डॉ० म्यूरिसनने अपने आरोपका बचाव किया था। उनका खयाल था कि "सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा सफाईसे सम्बन्धित मामलोंमें इस जातिसे कोई सच्चा उत्तर प्राप्त करना असम्भव है।" **इंडियन ओपिनियन**, २०–७–१९१२ देखिए "डॉ० म्यूरिसनका आरोप", पृष्ठ २७३-७४।

म्यूरिसनके सामने आनेवाली कठिनाइयोंपर हम उनके साथ सहानुभूति प्रकट करते हैं। परन्तु हमारी धारणा तो यह है कि जो कुछेक बातें डॉक्टर साहबकी निगाहमें आईं उन्होंने उन्हें अनजाने ही तूल दे दिया। हमें यह कहनेकी इजाजत दी जाये कि जैसा कष्ट उन्हें भारतीय रोगियोंसे पहुँचता है वैसा अन्य रोगियोंसे भी पहुँचता है। डॉ० म्यूरिसनसे हमारा यह कहना है कि सारी जातिपर झूठ बोलनेका आरोप मढ़नेसे उनका काम अधिक सुगम नहीं हो जाता। इस कठिनाईका एकमात्र हल यह है कि जो रोगी उनके विभागको चकमा देते हैं उनके साथ शिष्टता परन्तु दृढ़ताका व्यवहार किया जाये। यदि चेचकके कुछ भारतीय रोगियोंने अपने रोगको छिपाया तो अन्य भारतीयोंने रोगके निवारणमें उनके विभागकी सहायता भी तो की। इस बातपर हमसे बढ़कर खेद अन्य किसीको नहीं हो सकता कि भारतीय किसी भी रोगसे आक्रान्त हों, अथवा किसी संक्रामक रोगको भय या अपने अज्ञानके कारण छिपानेका यत्न करें। परन्तु भारतीयोंपर झूठ बोलने-जैसे गम्भीर आरोपकी पुष्टि केवल उन दुःखद अनुभवोंके आधारपर नहीं की जा सकती है जिनका डॉ० म्यूरिसनने जिक्र किया है।

परन्तु डॉ० म्यूरिसनकी स्पष्टवादिता और भारतीय तथा अन्य लोगोंकी समान रूपसे सेवा करनेकी उनकी प्रत्यक्ष इच्छाके लिए भारतीय समाजको उनका कृतज्ञ होना ही चाहिए। हममें से जो व्यक्ति जिम्मेदार होनेका दावा करते हों उनका कर्त्तव्य है कि वे इस बातका ध्यान रखें कि नगरको रोग तथा ऐसे लापरवाह या डरपोक लोगोंके भयसे, जो छूतछातकी बीमारीकी उपेक्षा या दुराव करते हैं, मुक्त रखनेमें डॉ० म्यूरिसनको पूरी सहायता मिलती रहे। डॉ० म्यूरिसनके झूठ बोलनेके सामान्य आरोपका प्रतिवाद करनेमें समर्थ होना ही सन्तोषके लिए काफी नहीं है; वास्तविक सन्तोष तो हमें तब होना चाहिए जब हम ऐसा कोई आरोप लगाये जा सकनेके छोटेसे-छोटे कारणका भी अन्त कर देनेका प्रयत्न करते हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–७–१९१२

२३९. डॉ० म्यूरिसनका आरोप

डॉ० म्यूरिसनने डर्बनके भारतीयोंपर झूठे व्यवहारका आरोप लगाया था। हमने उनसे उसका स्पष्टीकरण माँगा। उन्होंने जो जवाब दिया है वह सोचने-समझने लायक है। उनके इस जवाबसे सारे समाजपर झूठे व्यवहारका आरोप सिद्ध नहीं होता। लेकिन हम अपने पक्षमें इतना कहकर चुप नहीं बैठे रह सकते। डॉ० म्यूरिसनने जो उदाहरण दिये हैं वे तो हमें स्वीकार करने ही चाहिए। कुछ भारतीयोंमें [संक्रामक] बीमारियोंको छिपाने और सरकारी अधिकारियोंको झूठे जवाब देनेकी आदत है ही। यह आदत जानी चाहिए। मनुष्य अक्सर भयके कारण झूठ बोलता है। भय अज्ञानका परिणाम है। इसलिए यदि अज्ञान दूर हो, तो भय दूर हो जाये और भय दूर हो जाये तो झूठ बोलना भी खत्म हो जाये। उदाहरणार्थ, हमें ऐसा

लगता है कि यदि हम चेचकका केस जाहिर कर देंगे, तो ये लोग हमें मार ही डालेंगे अथवा अस्पतालमें ले जाकर हमें हैरान करेंगे। इस अज्ञान और इससे उत्पन्न होनेवाले भयके कारण हम इस बीमारीको छिपाते हैं। लेकिन वास्तविकता यह है कि कोई इस कारण हमें मार डाले, यह हो नहीं सकता। और यदि हममें तेज हो, तो अस्पतालमें भी कोई हैरान नहीं कर सकता। तो फिर हम डरते किसलिए हैं? एक बात और है; झूठ बोलकर हम बीमारी छिपा भी नहीं सकते। सच्चा डर तो झूठ बोलनेका होना चाहिए। झूठ बोलने और बीमारीकी बात छिपाने और फिर उसके जाहिर हो जानेसे हमारी फजीहत ही होती है। हमारे ऊपर मुकदमा चलता है और सजा भी हो जाती है। बीमारी छिपाई हो, तो अस्पतालमें भी हमें ज्यादा हैरान किया जाता है। हमारे नाते-रिश्तेदारोंको भी उसमें घसीटा जाता है। हम इस सवालको इस तरह देखना सीखें, तो फिर हमें डरनेका कोई कारण न रहे।

किन्तु जो लोग सरकारी अधिकारियोंको धोखा देते हैं, हमारी यह टीका उनमें से शायद ही किसीकी नजरसे गुजरे। इसलिए जिम्मेदारी केवल नेताओंपर है। यदि हम ईमानदार हों, ईमानदारीपर दृढ़ रहें और ऐसी इच्छा करें कि दूसरे लोग भी ईमानदार हों तो बहुत-कुछ कर सकते हैं। नेताओंका कर्त्तव्य है कि वे समाजके गरीब लोगोंके सम्पर्कमें आयें और आते रहें, उन्हें बार-बार सही रास्ता दिखायें और स्वयं भी उसी रास्ते चलें। यदि हम ऐसा करें, तो फिर हमारे ऊपर एक भी आरोप लगाये जानेकी सम्भावना न रह जाये।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-७-१९१२

२४०. पत्र : एशियाई पंजीयकको[1]

जुलाई २२, १९१२

[सेवामें
एशियाई पंजीयक
प्रिटोरिया
महोदय,]

आपका इसी माहकी १३ तारीखका कृपापत्र मिला। उत्तरमें निवेदन करना चाहता हूँ कि आपके कार्यालयके बाहर प्रतीक्षा करनेवाले भारतीयोंको बहुत अधिक असुविधा उठानी पड़ रही है। जैसा कि आप जानते हैं, बहुतोंको अपनी बारी आने

१. यह पत्र एशियाई पंजीयक श्री चैमनेके १३ जुलाईके पत्रके उत्तरमें भेजा गया था। श्री चैमनेने लिखा था : "इस माहकी ११ तारीखको आपकी मेरे साथ जो भेंट हुई थी, उसके संदर्भमें यदि आप मेरे कार्यालयके सामने सड़कपर प्रतीक्षामें खड़े रहनेवाले भारतीयोंको जो असुविधाएँ होती हैं और वे क्या चाहते हैं, इस सम्बन्धमें एक लिखित बयान दें तो मैं आभारी होऊँगा।" **इंडियन ओपिनियन**, ३-८-१९१२।

तक काफी रुकना पड़ता है। अनिश्चित समय तक बाहर सड़कपर खड़े रहना, और कुछ न सही, बहुत थका देनेवाला तो होता ही है। वस्तुतः जिन लोगोंको वहाँ खड़े रहकर प्रतीक्षा करनी पड़ी है, उन्होंने अक्सर ब्रिटिश भारतीय संघसे इसकी शिकायत की है। फिर, हवा, धूप और वर्षासे बचनेका भी कोई प्रबन्ध नहीं है। जब प्रतीक्षा करनेवालोंकी संख्या बहुत ज्यादा होती है तब तो यह समझना भी उनके लिए कठिन होता है कि अब सड़कपर खड़े हों अथवा पटरीपर; क्योंकि तब वे जहाँ-कहीं भी खड़े होंगे, रास्ता रुकेगा। सार्वजनिक कार्यालयोंसे जिस जनताका साबका पड़ता है, एशियाई भी चूँकि उसीका अंश हैं इसलिए हमारी नम्र रायमें अन्य सार्वजनिक कार्यालयोंकी भाँति आपके कार्यालयमें भी उनके लिए ठीक स्थानका प्रबन्ध होना चाहिए' जिसका उन्हें अधिकार है।[1]

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३–८–१९१२

२४१. पत्र : गृह-सचिवको

जुलाई २२, १९१२

गृह-सचिव
प्रिटोरिया
महोदय,

१९ तारीखका आपका तार और पत्र प्राप्त हुए।[2] तदर्थ धन्यवाद!

इस वर्षके छः शिक्षित भारतीय प्रवेशार्थियोंके नामोंकी सूचीमें यथासमय भेजूँगा।[3]

आपका
मो० क० गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६६८) तथा २७–७–१९१२ के 'इंडियन ओपिनियन' से।

१. श्री चैमनेने इस पत्रके उत्तरमें २६ जुलाईके अपने पत्रमें लिखा : "...मेरे कार्यालयमें आनेवाले एशियाइयोंकी सुविधाके लिए कोई विशेष स्थान उपलब्ध नहीं है, और न ही इस कार्यके लिए हमें कोई पैसा मिल सकता है जिससे इस समय विशेष स्थानका प्रबन्ध किया जा सके। आपके पत्रके अन्तिम वाक्यके बारेमें मुझे यह कहना है कि मैंने ठीक पता चला लिया है कि ऐसे बहुत-से कार्यालय हैं जहाँ साधारण जनताको — जिसमें यूरोपीय भी शामिल हैं — जाना पड़ता है; किन्तु जहाँ विशेष स्थानकी कोई सुविधा नहीं है।" **इंडियन ओपिनियन**, ३–८–१९१२।

२. देखिए "पत्र : गृह-मन्त्रीको", पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ २७८।

३. यदि गांधीजीने सूची भेजी हो तो वह उपलब्ध नहीं है।

२४२. पत्र: गृह-सचिवको[1]

जुलाई २२, १९१२

गृह-सचिव
प्रिटोरिया
महोदय,

जिन ब्रिटिश भारतीयोंको पिछले वर्ष समझौतेके अन्तर्गत प्रवेश मिला था, उनमें से श्री आर० एम० सोढा एक हैं। जैसा कि मैंने गत वर्ष निवेदन किया था, श्री सोढा जीविकोपार्जनके लिए ट्रान्सवालमें कोई रोजगार करना चाहते हैं, परन्तु चूंकि खयाल यह था कि पिछले अधिवेशनमें कानून बन ही जायेगा, इसलिए समाजने श्री सोढाके गुजारेकी व्यवस्था कर दी। परन्तु वे, स्वाभाविक है, बेकार नहीं बैठना चाहते, और व्यापारिक परवाना लेनेके लिए चिन्तित हैं। मैं समझता हूँ कि उन्हें जो अनुमतिपत्र दिया गया है, उसके आधारपर उन्हें परवाना नहीं मिल सकता। इसलिए यदि सोढा द्वारा पंजीयन-प्रमाणपत्र पेश किये बिना, सरकार राजस्व आदाताको एक परवाना जारी करनेका अधिकार दे दे तो बड़ी कृपा हो।

आपका
[मो० क० गांधी]

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६६९) की फोटो-नकलसे।

२४३. समझौता चलता रहेगा

संघ-सरकार और श्री गांधीमें जो पत्र-व्यवहार[2] हुआ है वह पढ़नेमें मनोरंजक है। इसके अनुसार गत वर्षका[3] अस्थायी समझौता तबतक चलता रहेगा जबतक कि इस सम्बन्धमें कोई सन्तोषप्रद कानून, जिसे सरकार संसदके अगले अधिवेशनमें दुबारा पेश करनेकी बात सोच रही है, पास नहीं हो जाता। इस बीच छः शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंको ट्रान्सवालमें इस प्रकार आने दिया जायेगा मानो यह कानून पहले ही स्वीकृत हो चुका हो।[4] यह सब अच्छा है। इस पत्र-व्यवहारमें विवादास्पद प्रश्नोंके कारण पुनः सत्याग्रह छिड़नेसे बचनेका यत्न किया गया है।

१. एशियाई पंजीयक माउन्ट फोर्ड चैमनेने अगस्त १ को इसका जवाब देते हुए लिखा "...मेरी समझके मुताबिक समझौतेका मंशा यह था कि प्रतिवर्ष छः शिक्षित एशियाइयोंको उनके ऐसे देशभाइयोंके हित और लाभकी दृष्टिसे प्रवेश दिया जाये जिन्हें उन्हींकी तरह शिक्षा नहीं मिल पाई है। मेरी रायमें उसका यह मंशा कदापि नहीं था कि उक्त छः भारतीयोंको उनसे अपने स्वार्थ साधनके लिए प्रवेश दिया जाये। कृपया अपने विचारोंसे अवगत करें।" —(एस० एन० ५८६२)

२. जनवरी २९ और जुलाई १७, १९१२के बीचमें।

३. २० मई १९११का।

४. देखिए "पत्र: गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ २७८।

परन्तु लॉर्ड ऍम्टहिलके, जो हमारे पक्षका समर्थन अनथक उत्साहसे करते रहे हैं, आक्षेपोंका उत्तर अबतक नहीं दिया गया है।[1] उनका प्रधान आक्षेप यह है कि समझौतेके शब्दोंका तो पालन किया जा रहा है, परन्तु उसकी भावनाको भंग कर दिया गया है। भावना यह है — और जनरल बोथाकी सार्वजनिक घोषणाएँ[2] भी यही हैं — कि जो भारतीय दक्षिण आफ्रिकामें बस चुके हैं उन्हें शान्तिपूर्वक रहने दिया जायेगा। परन्तु जबतक भारतके कानूनों द्वारा मान्यता-प्राप्त पत्नियोंको यहाँसे लौटाया जाता रहेगा, जबतक स्वर्ण-अधिनियम[3] और कस्बा-कानूनका[4] प्रयोग इस प्रकार किया जाता रहेगा कि भारतीय व्यापारी लगभग तबाह हो जायें, जबतक पुराने निवासियोंके बसनेके लिए पहले जो बस्तियाँ निर्दिष्ट की गई थीं उन्हें उनसे निकलनेपर विवश किया जाता रहेगा, जबतक निवासके प्रमाणपत्रोंकी उपेक्षा की जाती रहेगी, जबतक विवाह अथवा अधिवास प्रमाणित करनेके लिए असम्भव प्रमाणोंकी माँग की जाती रहेगी और जबतक परवाना कानूनोंके अत्याचारपूर्ण अमलके द्वारा व्यापार करना प्रायः असम्भव किया जाता रहेगा, तबतक शान्ति नहीं हो सकेगी।[5]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९१२

१. लॉर्ड सभामें अस्थायी समझौतेके अमलके विषयमें लॉर्ड ऍम्टहिलके १७ जुलाई, १९१२ को किये गये प्रश्नके लिए देखिए परिशिष्ट १८।

२. सन् १९०९ में बोथाने लॉर्ड कर्जनको आश्वासन दिया था कि वे ब्रिटिश भारतीयोंके साथ न्याय और उदारताका व्यवहार करेंगे; देखिए खण्ड ९, पृष्ठ १७४। २३ मई १९११ को अस्थायी समझौतेपर अपने विचार प्रकट करते हुए जनरल बोथाने कहा था कि समझौता बहुत उपयुक्त समयपर हुआ। उन्होंने यह चेतावनी तो दी थी कि दक्षिण आफ्रिकामें केवल उन्हीं भारतीयोंको प्रवेश करने दिया जायेगा, जिन्हें समझौतेके अनुसार ऐसा करनेका अधिकार होगा; किन्तु साथ ही उन्होंने यह वचन भी दिया था कि भविष्यमें भारतीयोंके जीवनकी परिस्थितियोंको दक्षिण आफ्रिकामें जितना सह्य बनाया जा सकता है, उतना सह्य बनानेकी पूरी कोशिश की जायेगी। सच तो यह है कि उन्होंने स्पष्ट कहा था कि उनके मनमें भारतीयोंके प्रति कोई दुर्भाव नहीं है। लन्दनमें शाही परिषद्में भाग लेनेके बाद, २६ सितम्बर, १९१२ को रीट फॉटीनमें बोलते हुए उन्होंने कहा था कि एशियाई सवालको हल करनेकी कोशिशमें जनरल स्मट्सने इतना परिश्रम किया कि वे सूख कर काँटा हो गये।

३. देखिए "कुमारी मॉड पोलकके नाम लिखे पत्रका अंश", पृष्ठ ४-५ और परिशिष्ट २१।

४. स्वर्ण-अधिनियम या कस्बा-कानूनके द्वारा उन भारतीयोंको बस्तियोंमें जाकर बसनेपर मजबूर किया जा रहा था, जो "घोषित क्षेत्रों" तथा अन्य ऐसे क्षेत्रोंमें रह रहे थे, जहाँ उन्होंने अपना खासा कारोबार बना लिया था। जो स्थान इससे प्रत्यक्ष रूपसे प्रभावित होते थे उनमें क्लार्क्सडॉर्प ("कुमारी मॉड पोलकके नाम लिखे पत्रका अंश", पृष्ठ ४-५) क्रूगर्सडॉर्प ("तूफान उमड़ रहा है", पृष्ठ १३५) और रूडीपूर्ट तथा जर्मिस्टन ("जर्मिस्टनके भारतीय", पृष्ठ १५२-५३ और २४४) आदि शामिल थे।

५. भारतीयोंके विरोधके परिणाम-स्वरूप सन् १९११ और १९१२ के संघ प्रवासी विधेयकमें जनरल स्मट्स द्वारा प्रस्तावित परिवर्तनोंसे सहमत होते हुए गांधीजीने कहा था कि अपनी दूसरी शिकायतों (जिनका खासा ब्योरा इस लेखमें मिल जाता है) को लेकर भारतीय भविष्यमें संघर्ष कर सकते हैं; देखिए "तार: गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ २२४-२५ और "आखिरकार!" पृष्ठ ९१-९२।

२४४. जर्मिस्टनके भारतीय

प्रत्यक्ष है कि जर्मिस्टनकी नगरपालिका वहाँकी बस्तीमें बसे हुए भारतीयोंको बरबाद करनेमें सफल हो गई है। काला सिंह **बनाम** नगरपालिकाके मुकदमेके बाद, नगरपालिका भारतीयोंकी अनेक इमारतें गिरा चुकी है; और अब ऐसे कई भारतीयोंको, जिनपर बस्तीमें व्यापार करनेका सन्देह है, नीचे लिखा हुआ अपने ढंगका निराला नोटिस जारी किया गया है:

> **मालूम हुआ है कि आप जॉर्ज टाउन बस्तीके बाड़ेमें स्थित दूकानपर परचूनकी चीजें बेचते हैं। अब मुझे हिदायत हुई है कि इस शिकायतकी पुष्टिके सबूत इकट्ठे करूँ। आपको [जुर्म करते हुए] पकड़नेकी कोशिश की जायेगी और यदि वह सफल हो गई तो क्या परिणाम होगा, इसका आपको पता चल जायेगा।**

परिणाम उनकी इमारतोंकी जब्ती ही समझिए। और इस प्रकार नगरपालिका उम्मीद कर रही है कि वह भारतीयोंको धीरे-धीरे भूखों मरनेपर मजबूर करके उन घूरोंपर जा बसनेपर लाचार कर देगी जो उसने नई बस्ती बसानेके लिए चुन रखे हैं। १८८५का कानून ३ भारतीयोंको बस्तियोंमें व्यापार करनेका विशेष रूपसे अधिकार देता है, परन्तु जर्मिस्टनकी नगरपालिका अब इसे भी सफलताके साथ खतम किये दे रही है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९१२

२४५. बॉक्सबर्गका मुकदमा[1]

श्री भायातके मुकदमेके फैसलेका[2] फल यह निकला है कि स्वर्ण-क्षेत्रमें रहनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंके कारोबारका मूल्य चार टके भी नहीं रहा। 'ईस्ट रैंड एक्सप्रेस'ने

१. आमद मूसा भायात हाइडेलबर्गके एक जाने-माने व्यापारी थे। सत्याग्रहीके रूपमें उन्होंने बड़ी आर्थिक क्षति उठाई थी और कैद भी भोगी थी। ६ नवम्बर, १९११ को उन्होंने बॉक्सबर्गमें श्री रिचके नाम दर्ज अहातेमें एक दूकान खोली। यूरोपीयोंने इसे अपने व्यापारके लिए खतरा समझा और इस बातको लेकर भारी तूफान खड़ा कर दिया। **ईस्ट रैंड एक्सप्रेस** तथा **ट्रान्सवाल लीडर**—जैसे पत्र उनकी वकालत करनेको आगे आये और नगर-परिषद्‌ने भी स्वभावतः उनका ही पक्ष लिया। सरकारपर जबरदस्त दबाव डाला गया और निदान उसने १२ जनवरी, १९१२ को श्री रिचके नाम नोटिस जारी किया कि वे २१ अगस्त, १९११ का ताजका अनुदान, जिसके अन्तर्गत उन्हें बाड़ोंपर निष्कर स्वामित्व (फ्रीहोल्ड) दिया गया था, वापस कर दें; क्योंकि उन्होंने एक रंगदार व्यक्तिको बाड़ेमें रहनेकी अनुमति देकर उस अनुदानकी शर्तें तोड़ डाली हैं। सरकारकी अर्जीपर १२ फरवरी, १९१२ को सर्वोच्च न्यायालयकी ट्रान्सवाल शाखाने श्री रिच और श्री भायातके नाम समन्स जारी किये और ७ जूनको मुकदमेकी सुनवाई हुई। **इंडियन ओपिनियन**के ४–११–१९११ से लेकर १३–७–१९१२ तकके अंकोंके आधारपर।

२. न्यायाधीश मैसनने निर्णय दिया कि श्री रिच उन शर्तोंसे (अर्थात्, कस्बा-कानून और स्वर्ण-अधिनियमकी सम्बन्धित धाराओंसे) बँधे हुए हैं, जिनपर उन्हें ताजकी जमीनका स्वामित्व हस्तान्तरित

तो अन्य नगरपालिकाओंको पहलेसे ही यह सलाह दे रखी है कि वे भी वॉक्सवर्ग-की नगरपालिकाके जैसा कदम उठायें और सरकारको ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंके विरुद्ध कार्रवाई करनेपर विवश कर दें। निश्चय ही अब सरकारके लिए स्वर्ण-क्षेत्रों-में ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंके कब्जेकी जमीनके सम्बन्धमें मुकदमा दायर करनेका रास्ता साफ है। इस कारण सर्वाधिक महत्वकी बात यह है कि श्री भायातका मुकदमा अन्ततक लड़ा जाये। संघ-सरकारने साम्राज्य-सरकारको विश्वास दिलाया था कि कस्बा कानून खास तौरपर ब्रिटिश भारतीयों या अन्य एशियाइयोंके विरुद्ध कार्रवाई करनेके लिए नहीं बनाया गया है और न इसमें कोई ऐसी धारा है जिसका प्रभाव विशेष रूपसे उनपर पड़ता हो।[1] परन्तु जब हम देख रहे हैं कि यदि ट्रान्सवालके न्याय-पीठ द्वारा किया हुआ निर्णय रद नहीं कराया गया तो कस्बा-कानूनका प्रयोग स्वर्ण-अधिनियम के साथ मिलाकर किया जायेगा[2] और इन दोनों अधिनियमोंका सम्मिलित परिणाम यह होगा कि कस्बा कानून व्यवहारतः एक वर्ग-विभेदकारक विधान बन

किया गया था। अतः दक्षिण आफ्रिका संघको उस हस्तान्तरणके दस्तावेजको रद करके श्री रिचसे तीनों बाड़ोंका स्वामित्व छीन लेनेका अधिकार है। उसे दूसरे प्रतिवादी भायातको बेदखल कर देनेका भी अधिकार है और वह मुकदमेके खर्चेकी हकदार है। श्री रिचका तर्क था कि मूल पट्टेमें, जो १८९६ में लिखा गया था, ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी कि उस जमीनपर कोई रंगदार व्यक्ति नहीं रहेगा। और जिन शर्तोंपर पट्टा-स्वामित्त (लीजहोल्ड) को निष्कर स्वामित्व (फ्रीहोल्ड) का रूप दिया गया वे शर्तें (अर्थात् बाड़ेको किसी रंगदार व्यक्तिके नाम हस्तान्तरित न करनेकी शर्तें) विनियम द्वारा लागू की गई हैं और गैर-यूरोपीय माता-पिताओंसे उत्पन्न लोगोंके विरुद्ध उनका प्रयोग नहीं किया जा सकता। कारण यह है कि चूँकि ये शर्तें केवल एशियाइयोंपर लागू की गई हैं और यूरोपीयोंपर नहीं, इसलिए इनका स्वरूप वर्गभेदकारी है और इसलिए इनपर पहले साम्राज्य-सरकारकी स्वीकृति ली जानी चाहिए थी, जो नहीं ली गई। **इंडियन ओपिनियन**, १३-७-१९१२ और २७-७-१९१२।

१. देखिए परिशिष्ट १९।

२. सन् १८८५के कानून ३के अन्तर्गत ट्रान्सवालके एशियाई लोग बस्तियोंसे बाहर कहीं भी भूमित्व प्राप्त नहीं कर सकते थे। किन्तु, ऐसा हो सकता था कि यूरोपीय अपने नामपर जमीनका पट्टास्वामित्व (लीजहोल्ड) अथवा निष्कर स्वामित्व (फ्रीहोल्ड) प्राप्त करके उस जमीनको पट्टेपर एशियाइयोंको दे दें। इसे न्यायोचित स्वामित्व (इक्विटेबल ओनरशिप) की संज्ञा दी गई थी और सन् १९०५ में ट्रान्सवाल सर्वोच्च न्यायालयने भी इस व्यवस्थाको मान्यता दी थी। इस प्रकार एशियाई पुश्त-दर-पुश्त इन जमीनोंके "न्यायोचित स्वामी" रह सकते थे। किन्तु, सन् १९०८ के कस्बा कानूनमें यह व्यवस्था की गई कि कस्बोंके सभी बाड़ोंका पट्टा-स्वामित्व परवाना-शुल्कके रूपमें एक छोटी-सी रकम अदा करके निष्करस्वामित्वके रूपमें परिवर्तित किया जा सकता है; और कुछ स्थितियोंसे ऐसा परिवर्तन किया भी गया था। ऐसी ही एक स्थिति तब उत्पन्न होती थी जब बाड़ोंके स्वामित्वके उत्तराधिकारका प्रश्न आता था। किन्तु, ज्यों ही इन बाड़ोंका पट्टा-स्वामित्व निष्कर स्वामित्वमें परिवर्तित होता था, वे १९०८ के स्वर्ण अधिनियमके अन्तर्गत आ जाते थे, जिसके अनुसार इन बाड़ोंपर किसी भी रंगदार व्यक्तिको रहने देना दण्डनीय अपराध था। इस प्रकार कस्बा कानून और स्वर्ण अधिनियम, दोनोंका सम्मिलित प्रभाव यह था कि एशियाई लोग बस्तियोंसे बाहर कहीं किसी प्रकारका स्वामित्व प्राप्त नहीं कर सकते थे और घरेलू नौकरोंके अलावा किसी अन्य रूपमें वे बस्तियोंसे बाहर रह भी नहीं सकते थे।

बैठेगा।[1] इसलिए जहाँ यह आवश्यक है कि इस मामलेको अपीलके उच्चतम न्यायालय तक ले जाया जाये वहाँ यह भी उतना ही आवश्यक है कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समझ रखें कि न्यायालयोंके लिए इस प्रकारके मामलोंमें कोई अन्तिम निर्णय देना किसी तरह सम्भव नहीं है। यदि अपीलके उच्चतम न्यायालयमें भी यही फैसला बहाल रहा तो उन्हें इन दोनों कानूनोंमें संशोधन करवानेका प्रयत्न करना पड़ेगा।

अपीलका सारा भार उठा लेनेकी आशा श्री भायातसे नहीं की जा सकती। सारे समाजका कर्त्तव्य है कि वह उनकी सहायता करे। इस मुकदमेका फैसला सब-पर लागू होता है; इसलिए आशा है कि अब जो कार्रवाई की जा रही है उसके खर्चमें हाथ बँटानेके लिए सम्पन्न ब्रिटिश भारतीय चन्दा देनेमें आगा-पीछा नहीं करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–७–१९१२

२४६. पत्र : मनसुखको[2]

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
आषाढ शुक्ल १४, [जुलाई २७, १९१२][3]

भाई श्री मनसुख,

आपका पत्र मीला है। मी० मणीलाल डॉक्टरके लिये में[4] तार भेजा था। उसका जवाब आपने न भेजा इस परसे मैं समझा की आप लोग उसकु मुक्त करनेमें राजी न थे। दूसरे सबबोंके लिये भी मी० मणिलालजीने फीजी ही जानेका निश्चय किया। गत सूक्रके रोज ये भाई केपसे नीकल चुके हैं। आपको तार भी दिया है। अस्ट्रेलिया होकर वहाँ पहोंचेंगे।

१. गांधीजीने सदा वर्ग-विधानका विरोध किया था। चूँकि महारानी विक्टोरियाकी घोषणाके अनुसार भारतीय भी ब्रिटिश साम्राज्यके सदस्य हो गये थे; इसलिए नेटाल तथा ट्रान्सवालके संविधानोंमें ऐसे सभी वर्ग-विधानोंपर साम्राज्य-सरकारकी स्वीकृति लेनेकी व्यवस्था की गई थी जो सम्पूर्ण ब्रिटिश भारतीय समाजके विरुद्ध पड़ते हों। खण्ड ६, पृष्ठ ३-४ और २७८-७९

२. यह गांधीजी द्वारा हिन्दीमें लिखा गया पहला पत्र है। मूल हिन्दी पत्रोंमें हिज्जेकी दृष्टिसे भी कहीं कोई सुधार नहीं किया गया है, किन्तु जहाँ अर्थ स्पष्ट करनेके लिए पाद-टिप्पणियाँ देना आवश्यक लगा है, वहाँ वे दे दी गई हैं।

३. पत्रमें मणिलालके फीजी जानेकी बात कही गई है। वे २६ जुलाई, १९१२ को केप टाउनसे रवाना हुए थे। इससे जान पड़ता है कि यह पत्र १९१२ में ही लिखा गया था। उस वर्ष आषाढ़ शुक्ल १४ को जुलाईकी २७ तारीख पड़ी थी।

४. मैंने

मेरी उमीद है के आप सब अब राजी[1] होवेंगे और भी मणीलालजीकी अच्छी तरह बरदास करोगे। उनका रहना अन[2] खानेका बंदोबस्त वहाँके लोगोंने हाल तुरतमें करना चाहीये।

सब भाइओंको उत्तेजन मीलेगा तो अवश्य मी० मणीलालजी वहाँ स्थायी बनेंगे।

फेर कुछ लिखना होगा तो लिखना।

मोहनदास गांधीके यथायोग्य

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल हिन्दी प्रति (जी० एन० २५५३) की फोटो-नकलसे।

२४७. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
जुलाई २८, १९१२

प्रिय श्री गोखले,

आपका तार[3] पाकर हर्ष हुआ। सभी आपके यहाँ आनेकी तारीखके बारेमें पूछ रहे हैं। आशा करता हूँ कि आप हम लोगोंके बीच कमसे-कम एक महीना रहेंगे। सभी प्रमुख नगरोंके भारतीय संघ आपको अपने यहाँ बुलानेके लिए बहुत उत्सुक हैं।

यदि आपके साथ आपके सचिव या अन्य कोई सज्जन आ रहे हों तो कृपया सूचित करें।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि दक्षिण आफ्रिकामें सर्वत्र आपका बहुत हार्दिक स्वागत होगा।

आशा है, इस यात्रासे आपके स्वास्थ्यको बहुत लाभ पहुँचा होगा। जब कुमारी पोलकसे यह मालूम हुआ कि डॉक्टरोंने आपपर यह पाबन्दी लगा दी है कि आप फिलहाल कुछ दिन किसी आगन्तुकसे भेंट न करें, तब मैं चिन्तित-सा हो उठा था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[गो० कृ० गोखले
इंग्लैंड]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ३७७२) की फोटो-नकलसे।

१. स्वस्थ

२. और

३. जुलाई २५, १९१२ का तार। उन्होंने इस तार द्वारा सूचित किया था कि वे ५ अक्तूबरको रवाना होनेवाले हैं।

२४८. पत्र : एशियाई-पंजीयकको

[लॉली]
जुलाई २९, १९१२

[महोदय,]

आपका इसी २६ तारीखका कृपा-पत्र[1] प्राप्त हुआ। मेरी नम्र रायमें, अगर किसी खास समुदायके लोग सरकारी दफ्तरमें लोगोंको बैठाने आदिके लिए कोई समुचित व्यवस्था कर देनेकी प्रार्थना करते हैं और उत्तरमें एक इतनी बड़ी सरकार यह कहती है कि पैसेका अभाव है तो इसे कोई सन्तोषजनक कारण नहीं माना जा सकता।

मेरी समझमें मेरे पत्रके अन्तिम अंशका अर्थ नहीं समझा गया। मेरे कहनेका मतलब यह नहीं था कि दूसरे सरकारी दफ्तरोंमें लोगोंको बैठाने आदिकी कोई विशेष, यानी असाधारण, व्यवस्था है। मैं इतना ही निवेदन करना चाहता था, और अब भी मेरा यही निवेदन है, कि दूसरे सरकारी दफ्तरोंमें आम जनताके बैठनेके लिए पर्याप्त स्थान हैं। मेरी जानकारीके मुताबिक तो आपके दफ्तरके अलावा और कोई भी सरकारी दफ्तर ऐसा नहीं है, जहाँ जनताको पैदल-पटरियों या आम सड़कोंपर खड़े रहना पड़ता हो।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३–८–१९१२

२४९. भाषण : वी० ए० चेट्टियारके लिए जोहानिसबर्गमें आयोजित विदाई-सभामें[2]

अगस्त १, १९१२

कल रात ट्रान्सवालके भारतीय सत्याग्रह संघर्षके सबसे कठिन दौरकी चर्चा हुई और उसमें श्री गांधीने आगाह किया कि सम्भव है, स्वेच्छासे सपरिश्रम कारावास भोगनेवाले लोगोंको फिर ऐसे ही कष्ट उठाने पड़ें; और कहा कि उन्हें इसके लिए तैयार रहना चाहिए।

१. देखिए पृष्ठ २८२, पाद-टिप्पणी १।

२. इस प्रीतिभोजका आयोजन श्री चेट्टियारके भारत लौटनेके अवसरपर जोहानिसबर्गके तमिल समाज द्वारा किया गया था। समारोहमें कोई ३०० लोग उपस्थित थे, जिनमें भारतीयोंसे सहानुभूति रखनेवाले बहुत-से यूरोपीय सज्जन भी शामिल थे। इस अवसरपर रेवरेंड डॉ० रॉस, रेवरेंड डोक तथा हॉस्केन भी बोले थे।

यह सब श्री वी० ए० चेट्टियारके सम्मानमें दिये गये भोजके अवसरपर हुआ, . . . श्री चेट्टियार मद्रास वापस जानेवाले हैं।

श्री गांधीने, जिन्हें श्री हॉस्केनने सत्याग्रहका मन्त्र-दृष्टा और गुरु बताया, अपने श्रोताओंको चेतावनी दी कि दक्षिण आफ्रिकाका महान संघर्ष अभी हरगिज समाप्त नहीं हुआ है। उन्होंने कहा कि वह थम-भर गया है और हो सकता है कि समाजको फिर काफी कष्ट झेलना पड़े।

"अतिथियों" के लिए शुभकामना व्यक्त करते हुए श्री गांधीने श्री हॉस्केन तथा अन्य उपस्थित यूरोपीयोंकी बड़ी प्रशंसा की और कहा कि आप लोगोंकी बदौलत ही आज हम सब इस मेजपर बराबरीकी हैसियतसे इकट्ठा हुए हैं। मेरी समझमें तो हर सभ्य देशमें, और विशेष रूपसे हर ईसाई समाजमें, समानताकी भावना एक साधारण-सी बात होनी चाहिए। किन्तु चूँकि हमें भयंकर कठिनाइयों और पूर्वग्रहोंसे गुजरना पड़ रहा है, इसलिए किसी भी प्रकारकी समानताका दर्जा प्राप्त कर सकना हमारे लिए सौभाग्यकी बात बन जाती है।

[अंग्रेजीसे]

ट्रान्सवाल लीडर, २-८-१९१२

२५०. जर्मिस्टनकी बस्ती

जर्मिस्टनमें जिस स्थानपर नया एशियाई बाजार खोलनेका विचार किया जा रहा है, हम उसके विषयमें अन्यत्र संघ-सरकारके कार्यकारी स्वास्थ्य चिकित्साधिकारी (मेडिकल ऑफिसर ऑफ हेल्थ) डॉ० एफ० आरनॉल्डका विवरण प्रकाशित कर रहे हैं। हमारी सम्मतिम विवरण नगर-परिषद द्वारा चुने हुए स्थानकी विशेष वकालत करता है। डॉ० मैकनैबने इस स्थानके विरुद्ध जो सख्त बातें कही थीं इसमें उनकी उपेक्षा कर दी गई है। यह ठीक है कि डॉ० मैकनैबने अपने कुछ एतराज वापस ले लिए हैं, परन्तु उनकी मुख्य आपत्ति — कि बस्तीका स्थान एक लम्बे-चौड़े घूरेके समीप रखा जानेवाला है और जहाँ घिनौने पशु-ज्वरसे बीमार होकर मरनेवाले जानवरोंको दफनाया जाता रहा है — अब भी कायम है। डॉ० आरनॉल्डने कुछ शर्तें लगा रखी हैं, जिनके पूरा होनेपर ही स्थानको एक चिकित्सा-सम्बन्धी दृष्टिसे उपयुक्त ठहराया जा सकेगा। इससे भी यही सिद्ध होता है कि डॉ० मैकनैबकी कठोर आलोचना सर्वथा उचित थी। फिर यह भुला देना भी ठीक नहीं होगा कि जर्मिस्टनकी नगरपालिका द्वारा चुनी हुई जगहमें वह खास टुकड़ा भी आ जाता है जहाँ नगरका मलमूत्र डाला जाता रहा है। विशुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिसे यह बात अलबत्ता कुछ सन्तोषकी हो सकती है कि बस्तीका यह भाग कुछ समय तक इमारतें बनानेके काममें नहीं लाया जायेगा; परन्तु इस प्रकारके मामलोंमें केवल चिकित्साधिकारीकी अनुकूल सम्मतिको विभिन्न आपत्तियोंका निर्णयात्मक उत्तर नहीं माना जा सकता। वैद्यकीय दृष्टिसे कोई पुराना

कब्रिस्तान बस्ती बसानेके लिए खासा अच्छा स्थान हो सकता है, परन्तु अन्य अनेक सर्वथा उचित दृष्टियोंसे वही स्थान बिलकुल अनुपयुक्त ठहर सकता है। जैसा कि हम पहले भी बता चुके हैं, यह एक विचित्र संयोग है कि नगरपालिकाओंको एशियाई बाजारों और वतनियोंकी बस्तियाँ बसानेके लिए सर्वाधिक उपयुक्त क्षेत्र घूरा जमा करनेके स्थानोंके समीप ही मिलता है। अब तो हम इतना ही कह सकते हैं कि डॉ० आरनॉल्डकी अनुकूल रिपोर्टके बावजूद जमिस्टनके भारतीयोंको इस सड़ियल जगहपर जानेसे इनकार कर देना चाहिए। हम जानते हैं कि उन्हें इस जगह जानेसे इनकार करनेके लिए असाधारण साहसकी आवश्यकता पड़ेगी। पुरानी बस्तीके सारे कारोबारको ठप्प करके नगरपालिकाने वहाँ रहना प्रायः असम्भव कर दिया है। वह कई इमारतें गिरा चुकी है और अन्य इमारतोंके मालिकोंको यह धमकी दे रही है कि यदि वे बस्तीमें व्यापार करते पकड़े गये तो उनका भी यही हाल किया जायेगा। हमें आशा है कि जमिस्टनके भारतीयोंको कितनी ही कठिनाइयोंका सामना क्यों न करना पड़े, वे दृढ़ रहेंगे और नगरपालिका द्वारा बिछाये हुए जालमें फँसनेसे इनकार कर देंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-८-१९१२

२५१. पत्र : गृह-मन्त्रीके सचिवको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
अगस्त ३, १९१२

[सेवामें]
गृह-मन्त्रीके सचिव
केप टाउन

महोदय,

आपका इसी १ तारीखका कृपा-पत्र,[1] संख्या ३४/ई/ १५३३०, प्राप्त हुआ। आपने २२ तारीखके जिस पत्रका उल्लेख किया है वह मेरे सामने नहीं है, परन्तु मेरा खयाल है कि यह वही पत्र[2] है जो श्री सोढाके बारेमें मैंने मन्त्रालयके सचिवको लिखा था। चूंकि मामला बहुत जरूरी है, इसलिए मैं फार्मपर से ही जवाब दे रहा हूँ।

मेरी नम्र रायमें शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशके प्रश्नसे इसका कोई सरोकार नहीं है कि वे व्यक्तिगत लाभके लिए आते हैं अथवा समाजकी जरूरतकी पूर्तिके लिए। मेरा अनुमान है कि कानून बन जानेके बाद शिक्षित व्यक्ति अपनी योग्यताके बलपर ही निर्धारित संख्यामें प्रवेश पायेंगे। जिन लोगोंने कानूनी समानताके सिद्धान्तके लिए संघर्ष किया है, उनकी यह मान्यता रही है कि उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीय अपना-अपना

१. और २. देखिए "पत्र : गृह-सचिवको", पृष्ठ २८३।

काम करते हुए समाजकी सेवा भी अवश्य करेंगे। पिछले वर्ष आये हुए लोगोंके सम्बन्धमें मैंने श्री लेनसे खास तौरपर बातचीत की थी। तब मैंने उनसे कहा था कि मैं गारंटी तो नहीं दे सकता, फिर भी मुझे आशा है कि श्री सोढाको छोड़कर उनमें से कोई दूसरा व्यक्ति व्यापार नहीं करेगा। मैंने उन्हें यह भी बताया कि श्री सोढा यहाँ युद्धसे पहले तीन वर्ष रह चुके हैं और निःसन्देह उनका इरादा व्यापार करनेका है। परन्तु श्री सोढाके व्यापार करनेका अर्थ किसी भी तरह यह नहीं है कि वे समाजके लिए कतई उपयोगी नहीं रह जायेंगे। यह तो मानना ही पड़ेगा कि शिक्षित व्यक्तिकी हैसियतसे ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेवाला हर आदमी अपने देशभाइयोंके बीच कोई-न-कोई स्वतन्त्र धन्धा करके रोजी कमायेगा। मैं आशा करता हूँ कि श्री सोढाके बारेमें शीघ्र ही निर्णय किया जायेगा। आप इस पत्रकी एक नकल मुझे भेज दें तो कृपा होगी, क्योंकि मैं स्वयं इसकी नकल नहीं कर पाया हूँ।[1]

आपका

[मो० क० गांधी]

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६९७)की फोटो-नकलसे।

२५२. बली वोरा और चंचलबहन गांधीको लिखे पत्रका अंश

[अगस्त ३, १९१२ के बाद][2]

चि० बली और चंची,

तुम दोनोंके पत्र मिले।

मेरा खयाल है कि रामीका हाथ टूटनेमें थोड़ा-बहुत दोष तुम दोनोंका है। यों ऐसी दुर्घटनाएँ तो हुआ ही करती हैं। यदि भाग्यमें जिन्दगी लिखी है तो ईश्वर ऐसी दुर्घटनाओंसे भी बचा लेता है।

चि० वेणीने[3] लिखा है कि चंची यहाँ आ जाना चाहती है। उसे इतना तो समझना ही चाहिए कि वह जब चाहे तब आ सकती है। मैंने तो उसे यह सोचकर

१. एशियाई-पंजीयकने इसके जवाबमें १६ अगस्तको लिखा कि "... जबतक कोई ऐसा कानून पास नहीं कर दिया जाता जिसके द्वारा खास तौरसे बरी करार दिये गये शिक्षित एशियाइयोंके निवासको वैध रूप मिल जाये, तबतक यह कानून-सम्मत नहीं होगा कि राजस्व-आदाता उनके नाम सामान्य विक्रेता-परवाने जारी करे। मुझे खेद है कि उपर्युक्त कारणसे मैं किसी राजस्व-आदाताको ऐसा आदेश नहीं दे सकता कि वह श्री सोढाके नाम, जो फिलहाल ट्रान्सवालमें एक अस्थायी अनुमतिपत्रके आधारपर रह रहे हैं, व्यापारिक परवाना जारी करे।" (एस० एन० ५६९६)

२. मणिलाल डॉक्टर, जिनका उल्लेख पत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें किया गया है, जुलाई २६, १९१२ को जहाज द्वारा केप टाउनसे फीजीके लिए रवाना हुए थे और इसकी सूचना **इंडियन ओपिनियन**में ३ अगस्तको जाकर छपी थी (हालाँकि उसमें छपाईकी भूलसे प्रस्थान-तिथि २० जुलाई बताई गई थी)। अतः यह पत्र ३ अगस्तके बाद ही लिखा गया होगा।

३. प्रिटोरियाके एक प्रमुख भारतीय जयशंकर व्यासकी पत्नी।

जाने दिया था, और अव भी मेरा वही खयाल बना हुआ है कि वह अपनेको वहाँ ज्यादा सुखी महसूस करेगी; हरिलालकी भी यही इच्छा थी। इसीलिए उसे वहाँ जाने दिया। अभी यह कह सकना कठिन है कि मैं वहाँ कब जा पाऊँगा। मेरा खयाल है कि जबतक विधेयक पास नहीं हो जाता तबतक यहाँसे निकल सकना सम्भव नहीं है।

कान्ति कनकना होता जा रहा है, यह जानकर प्रसन्नता हुई। मेरी सलाह यह है कि घरमें विदेशी खान-पान कतई दाखिल न किया जाये, इसके बारेमें मेरा अनुभव बहुत बुरा रहा है। दिनपर-दिन मेरा यह विश्वास दृढ़ होता जा रहा है कि लगभग ये सभी खाद्य-पदार्थ दोषयुक्त होते हैं।

यह बहुत अच्छी बात है कि वलीने संस्कृत पढ़ना प्रारम्भ कर दिया है। मुझे जब कभी भारत पहुँचने और वहाँ काम शुरू करनेका अवसर मिलेगा तब वलीसे पूरा-पूरा काम लेनेका इरादा है।

मणिलाल, रामदास और देवदास फार्मपर हैं। डॉ० मेहताकी पुत्री जयाकुँवर बेन भी यहीं मेरे साथ है। बच्चोंको पढ़ाने-लिखानेमें वह मेरा बहुत हाथ बँटा रही है। तुमने 'इंडियन ओपिनियन' में पढ़ा होगा कि उसके पति फीजी गये हुए हैं।[1] चि० जमनादास भी मेरे साथ हैं। अनी भी फार्मपर है। देवी बहन[2]. . .[3]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस०एन० ९५३०) की फोटो-नकलसे।

१. डॉ० प्राणजीवन मेहताको लिखे अपने २२ अक्तूबर, १९११ के पत्र (देखिए पृष्ठ १६३-६६) में गांधीजीने मणिलाल डॉक्टरकी भावी योजना — अर्थात् उन्हें पुनः मॉरिशस लौटकर सार्वजनिक कार्य प्रारम्भ करना चाहिए अथवा ट्रान्सवालमें ही रहना चाहिए — के सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट किये थे। अप्रैल २९ को उन्होंने ई० एफ० सी० लेनको एक पत्र लिखकर, शायद, यह जिज्ञासा की थी कि क्या मणिलाल डॉक्टरको उन भारतीयोंमें शामिल किया जा सकता है जो अस्थायी समझौतेकी इस व्यवस्थाके अन्तर्गत उपनिवेशमें प्रवेश करनेवाले हैं कि प्रतिवर्ष छः शिक्षित भारतीयोंको प्रवेश दिया जायेगा। लेकिन यह पत्र उपलब्ध नहीं है। मई ३ को उनके पत्रका उत्तर (एस० एन० ५६४९) देते हुए श्री लेनने लिखा था कि समझौतेको कानूनी रूप देने तक तो वे मणिलाल डॉक्टरको अस्थायी अनुमतिपत्र ही दे सकते हैं। जुलाई ८ को गांधीजीने अपनी डायरीमें लिखा है कि मणिलाल डॉक्टर वास्तवमें फीजी जाना नहीं चाहते, किन्तु कुछ दिन बाद उन्होंने फिर अपनी डायरीमें लिखा है कि वे २९ जुलाईको जहाजसे फीजीके लिए रवाना हो गये हैं।

२. कुमारी एडा वेस्ट।

३. बाकी हिस्सा उपलब्ध नहीं है।

२५३. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

टॉल्स्टॉय फार्म
अगस्त ४, १९१२

प्रिय श्री गोखले,

आपकी लम्बी चिट्ठीके[1] लिए बहुत-बहुत धन्यवाद! अभी आप बीमारीसे उठे ही हैं, इसलिए मैं सपनेमें भी यह नहीं चाहूँगा कि आपको जिस परहेज और आरामकी जरूरत है उसकी उपेक्षा करके आप यहाँ आयें। वैसे मेरा खयाल यह है कि आप दक्षिण आफ्रिकाके लिए रवाना होनेसे पहले बिलकुल अच्छे हो जायेंगे। यदि आपकी सहमति हो तो मोटे तौरपर कार्यक्रम इस प्रकार रख लिया जाये: २२ और २३ अक्तूबर केप टाउन, २५ और २६ किम्बर्ले, २७ जोहानिसबर्ग। ज्यादातर वक्त तो जोहानिसबर्गमें ही बीतेगा। दो दिन प्रिटोरियाको दिये जा सकते हैं। मैं सोचता हूँ, यदि आप तार द्वारा अन्यथा आदेश न दें तो जनरल बोथा और श्री फिशरसे[2] आपकी अगवानी करनेका अनुरोध करूँ। यदि उस समय तक लॉर्ड ग्लैडस्टन वापस आ जाते हैं, तो मैं उनसे भी कहनेकी बात सोचता हूँ। श्री मेरीमैनसे[3] तो मैं आपका स्वागत करनेको कहूँगा ही। वे दक्षिण आफ्रिकाके सबसे बड़े राजनयिक हैं। मैंने ऊपर जिन स्थानोंके नाम दिये हैं, उन सभी स्थानोंमें आपको अभिनन्दन-पत्र भेंट किये जायेंगे। जोहानिसबर्गमें एक मिले-जुले प्रीतिभोजका आयोजन करनेका भी विचार है। अध्यक्षता शायद महापौर महोदय करेंगे। अपने प्रवासका अन्तिम सप्ताह आप फीनिक्स, डर्बनमें बितायेंगे। और

१. जुलाई २७, १९१२ का पत्र; देखिए परिशिष्ट २०।

२. अब्राहम फिशर; दिसम्बर १९०७ से मई १९१० तक ऑरेंज रिवर कॉलोनीके प्रधान मन्त्री; सन् १९१० में दक्षिण आफ्रिका संघके निर्माणके बाद संघ-सरकारके भूमि-मन्त्री (यूनियन मिनिस्टर फॉर लैंड्स)। सन् १९१२ में प्रतिरक्षा विधेयकके पास होनेपर जनरल स्मट्सने गृह-मन्त्रालय छोड़ दिया और वित्त-मन्त्रालयका दायित्व सँभाला, हालाँकि प्रतिरक्षा और खनिज मामलोंकी जिम्मेवारी तब भी उन्होंने अपने ही हाथमें रखी। नई व्यवस्थामें जनरल बोथाने गृह-मन्त्रालयका दायित्व स्मट्ससे लेकर श्री फिशरको दिया। संघ-संसदमें १९१३ का प्रवासी विधेयक फिशरने ही पेश किया।

३. जॉन जैवियर मेरीमैन; इनका जन्म इंग्लैंडमें हुआ था, किन्तु इन्होंने दक्षिण आफ्रिकाको ही अपना देश बना लिया था। प्रतिष्ठित और सफल संसद-सदस्य; रोड्सके पहले मन्त्रिमण्डलमें राजकोष मन्त्री (ट्रेज़रर); सन् १९०८-१० में केप कालोनीके प्रधान-मन्त्री; संघके निर्माणके बाद प्रधानमन्त्री पदके लिए जनरल बोथाके प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी; १९०९ में गांधीजी शिष्टमण्डल लेकर जिस जहाजसे इंग्लैंड जा रहे थे, उसी जहाजसे ये भी इंग्लैंड जा रहे थे। गांधीजीको इनका रुख भारतीयोंके प्रति बड़ा सहानुभूतिपूर्ण जान पड़ा था। और इन्होंने भारतीयोंको सहायता देनेका भी वचन दिया था; परन्तु बादमें वे उसे निभा नहीं सके। देखिए खण्ड ९ पृष्ठ २७२, २७७ और ३०५ तथा **इंडियन ओपिनियन**, स्वर्ण-अंक; **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय ५ और ३२ भी।

फिर आप डर्बनसे जहाज द्वारा प्रस्थान करेंगे। आपका भारत जानेका टिकट आपके यहाँ आ जानेके बाद सुविधापूर्वक लिया जा सकता है।

मैंने कार्यक्रमकी रूपरेखा पहलेसे ही इसलिए तैयार कर ली है कि यदि आप उसमें कोई परिवर्तन करना चाहें तो तार और पत्रसे सूचित कर दें।

यदि श्री फिशर जनरल स्मट्स द्वारा किये गये वादेसे पीछे हट जायें तो उससे कोई बड़ा अकाज नहीं होगा। उससे हमारा पक्ष और भी सबल हो जायेगा। परन्तु मैं नहीं समझता कि ऐसा कर पाना सरकारके लिए सम्भव होगा। जो बात अधिक सम्भव दीखती है, वह यह है कि (स्थानीय) संसद, सरकारी विधेयकको शायद पास न करे। और सम्भव है, सरकार (स्थानीय) संसदके इस आचरणको अपने सम्मानका प्रश्न न बनाये और हमें तथा शाही सरकारको भी सीधा कह दे कि वह लाचार है। उस हालतमें संघर्ष तीव्र और भयानक हो जायेगा; परन्तु वह तबतक जारी ही रहेगा जबतक हममें से दो-चार भी जीवित हैं।

श्री सोराबजी अब वहीं हैं; और वे अबतक आपके दर्शन अवश्य कर चुके होंगे।

श्री टाटाने फिर २५,००० रुपये[1] देकर कितनी बड़ी कृपा की है? मैं जानता हूँ कि यह सब आपकी ही बदौलत है। हर बार दान ऐन मौकेपर पहुँचा है। फार्मको चलाना मुश्किल होता जा रहा था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ३७७३) की फोटो-नकलसे।

२५४. श्री टाटाकी उदारता

श्री रतन टाटा खुद अपनेसे बाज़ी मार ले गये हैं। गत मासकी ३१ तारीखको बम्बईमें शेरिफ द्वारा एक सभा[2] बुलाई गई थी। सर जमशेदजीने उसकी अध्यक्षता की थी। सभामें घोषणा की गई कि श्री टाटाने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रह-कोषमें तीसरी बार २५,००० रु० का दान दिया है। इसे मिलाकर श्री टाटाके दानकी राशि ५,००० पौंड तक पहुँच जाती है — यह अपने-आपमें एक खासी बड़ी निधि है। श्री पेटिट १,५०० पौंड तो तारसे श्री गांधीको भेज भी चुके हैं। श्री टाटाकी उदारतासे उनके हृदयकी विशालता तो प्रकट होती ही है, यह भी पता लगता है कि वह इस

१. श्री टाटा द्वारा दिये गये अन्य अनुदानोंके लिए देखिए पाद-टिप्पणी १ पृष्ठ २४५।

२. यह सभा १ अगस्तको की गई थी। इसमें उपनिवेशोंमें, विशेष रूपसे दक्षिण आफ्रिका, पूर्व आफ्रिका तथा कैनेडामें भारतीयोंके साथ किये जानेवाले दुर्व्यवहारके प्रति विरोध प्रकट किया गया था; गिरमिटिया मजदूरोंकी प्रथाके प्रचलनकी भर्त्सना करते हुए मार्क्विस क्रूको भेजनेके लिए भारत सरकारके नाम एक स्मरणपत्रके मसविदेपर स्वीकृति दी गई; और दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको प्रोत्साहन देनेके लिए एक सन्देश भेजा गया।

संघर्षके कितने प्रशंसक हैं। श्री टाटाने सत्याग्रहियोंको ही नहीं, दक्षिण आफ्रिकाकी समस्त भारतीय जनताको अपना चिर-ऋणी बना लिया है। उन्होंने सत्याग्रहियोंकी परेशानियाँ कम कर दी हैं। जो लोग इस संघर्षमें संलग्न हैं, उनका उत्साह यह देख-कर बढ़ जाता है कि ऐसे प्रतिष्ठित भारतीय भी हमारे पृष्ठपोषक हैं। और इससे उन्हें अपना लक्ष्य भी कुछ समीप आ गया जान पड़ता है। जो लोग पूर्वग्रहके कारण हमारे विरोधी बने हुए हैं, उनपर इस प्रकारकी सहायताका जो नैतिक प्रभाव पड़ता है, वह तो स्पष्ट ही है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–८–१९१२

२५५. शेरिफकी सभा

भारतमें किसी बड़े नगरके शेरिफ द्वारा बुलाई गई सभाकी वही वकत मानी जाती है जो यहाँ, समझ लीजिए, डर्बनके महापौर (मेयर) द्वारा बुलाई हुई सभाकी हो सकती है। भारतमें "शेरिफ" शब्दका अर्थ वही नहीं है जो हम यहाँ दक्षिण आफ्रिकामें समझते हैं। "शेरिफ" का पद अवैतनिक होता है और यह भारतके अत्यन्त प्रतिष्ठित नागरिकोंको प्रदान किया जाता है। हमारे जिन पाठकोंको भारतके विषयमें अधिक मालूम नहीं है वे भी अब जान जायेंगे कि हालमें बम्बईमें शेरिफके बुलाये जानेपर जो सार्वजनिक सभा हुई थी उसका क्या महत्व है। स्पष्ट है कि इस सभामें बम्बईकी जनताके सभी वर्गोंका प्रतिनिधित्व था। और इसीलिए इसके प्रस्तावोंका असर पड़े बिना नहीं रह सकता। सभाने ब्रिटिश उपनिवेशोंमें बसे हुए अपने देशवालोंकी समग्र स्थितिपर विचार करके सर्वथा उचित ही किया। पूर्वी आफ्रिकाके यूरोपीय हमारे देशवालोंको उस ब्रिटिश-रक्षित प्रदेशसे खदेड़कर बाहर निकाल देना चाहते हैं। वे इतना तक नहीं समझते कि यदि भारतीय वहाँसे चले जायें तो वह देश शीघ्र ही भयंकर वीरानेमें परिवर्तित हो जायेगा। कैनेडा अपने यहाँ कानूनन बसे हुए भारतीयोंकी पत्नियों तक को प्रवेश नहीं देता कि वे अपने पतियोंके साथ रह सकें। इस प्रकार वह न्याय और शिष्टताके सभी नियमोंकी उपेक्षा कर रहा है। अपने सफल प्रतिस्पर्धियोंके प्रति द्वेष तो समझमें आ सकता है, परन्तु स्वार्थके वशीभूत होकर किये गये पागल-पनके कामोंको समझना असम्भव है। कहनेको कैनेडा ब्रिटिश उपनिवेशोंमें सबसे पुराना और सबसे अधिक सभ्य उपनिवेश है, परन्तु वहाँ इन दिनों यही सब हो रहा है।

पारसी बैरॉनेटके सभापतित्वमें की गई इस सभामें इन्हीं सब प्रश्नोंपर विचार किया गया था। दूर-दूरके देशोंमें बसे हुए हम लोगोंको अधिकार है कि हम अपनी मातृभूमिसे सहायताकी आशा करें। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है और भारतसे बाहर गये हुए लोगोंकी दशाके बारेमें देशको अधिक व्यापक जानकारी होती जाती है, त्यों-त्यों वहाँ सहानुभूति बढ़ती जाती है।

भारतीय जनताको शिक्षित करनेके इस महान् कार्यके लिए हम मुख्यतया श्री पोलकके कृतज्ञ हैं। उन्होंने ही पहले-पहल अध्यवसाय और चतुराईसे प्रवासियोंकी हिमायत की थी। शायद ही ऐसा कोई महत्त्वपूर्ण नगर हो, जहाँ श्री पोलक न गये हों, शायद ही कोई ऐसा नेता हो जिससे वे मिले न हों और शायद ही कोई समाचारपत्र हो जिसे उन्होंने जानकारी न दी हो। शेरिफकी सभा महत्त्वपूर्ण थी, किन्तु यह उनके परिश्रमका सर्वोत्कृष्ट फल कदापि नहीं था। यह हमारा सौभाग्य है कि हमारे बीच श्री पोलक-जैसे कार्यकर्ता विद्यमान हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९१२

२५६. अवैध विनियम

अभी पिछले दिनों श्री रिचने मजिस्ट्रेटकी अदालतमें बॉक्सबर्गके एक भारतीयकी[1] पैरवी की। आरोप यह था कि वह एक ऐसे अहातेका संचालन करता है, जिसमें वतनी किरायेदार रखे जाते हैं, और यह नगरपालिकाके विनियमोंका उल्लंघन है। अभियुक्तको सजा हो गई। श्री रिचने अपील की। अपीलकी पैरवी श्री ग्रेगरोवस्कीने की और न्यायालयने इस आधारपर सजा रद कर दी कि उक्त विनियम अवैध हैं। यह एक महत्वपूर्ण फैसला है। यदि विनियमोंको वैध ठहराया गया होता तो बहुत-से भारतीयोंको इससे बड़ा नुकसान पहुँचता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९१२

२५७. माननीय श्री गोखले

माननीय श्री गोखले-जैसा भारतीय इस देशमें पहली बार आ रहा है। श्री गोखलेने हमारी बहुमूल्य सहायता की है। गिरमिटकी प्रथा बन्द होनेके लिए हम उनका जितना आभार मानें उतना कम है। उनके प्रयत्नसे ही हमें सत्याग्रहियोंके लिए इकट्ठे किये गये कोषमें भारी रकम प्राप्त हुई। सत्याग्रहियोंके प्रति उन्हें गहरी सहानुभूति है। श्री पोलककी उन्होंने बहुत मदद की है। भारतकी विधान-परिषद (लेजिस्लेटिव कौंसिल) में उनका बहुत प्रभाव है।

श्री गोखले यहाँ खास तौरसे हमारी स्थितिका अध्ययन करने आ रहे हैं। वे यहाँके सरकारी अधिकारियोंसे मिलेंगे। वे भारतीय [राष्ट्रीय] कांग्रेसके इस वर्षके अधिवेशनके अध्यक्ष होनेवाले हैं।

१. मूसा। इन्हें बॉक्सबर्ग स्वास्थ्य उपनियमके खण्ड ३३ का उल्लंघन करनेके अभियोगमें सजा दी गई थी। अपील करनेपर सजा रद करते हुए जजने निर्णय दिया कि सत्ता देनेवाले नियममें यूरोपीयों और रंगदार लोगोंके बीच भेद करनेकी गुंजाइश नहीं है और इन उपनियमोंमें वैसा भेद किया गया है, इसलिए ये अवैध हैं। **इंडियन ओपिनियन**, १०-८-१९१२।

इन कारणोंसे, स्वार्थकी दृष्टिसे देखते हुए भी, हमारा कर्त्तव्य है कि

(१) हम उनका स्वागत बड़े पैमानेपर करें।

(२) स्वागतमें हिन्दू-मुसलमानका सवाल नहीं उठना चाहिए।

(३) विभिन्न संस्थाएँ अलग-अलग सम्मान करें, इसमें तो कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु उन्हें इस बातका खयाल रखना चाहिए कि सर्वोपरि वे भारतीय हैं।

(४) उन्हें दक्षिण आफ्रिकाके सारे [भारतीय] समाजका मेहमान मानना चाहिए।

(५) यदि हम ऐसा आभास होने देना चाहते हैं कि वे हिन्दू हैं तो उनके सम्मानमें मुसलमानोंको आगे बढ़कर हिस्सा लेना चाहिए। समाजकी इन दो शाखाओंका भाईचारा इसी तरह बढ़ सकता है।

(६) श्री गोखलेका समुचित सम्मान करनेके लिए हमें काफी पैसा इकट्ठा करनेकी जरूरत है।

(७) अपनी प्रतिष्ठाकी दृष्टिसे और वे यहाँ जो काम करनेके लिए आ रहे हैं, उसका खयाल करके हमें उन्हें बहुत अच्छी जगह ठहरानेकी व्यवस्था करनी चाहिए।

(८) यदि कहीं फूटका वातावरण हो और संस्थाएँ साथ मिलकर काम न करती हों, इस अवसरपर वहाँ भी एकताका वातावरण फैलना चाहिए।

ऐसा अवसर फिर नहीं आयेगा। इस मौकेपर किया हुआ परिश्रम और प्रदर्शित एकता चिरकाल तक हमारे काम आती रहेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-८-१९१२

२५८. पत्र : छगनलाल गांधीको

श्रावण सुदी ४ [अगस्त १६, १९१२][1]

चि० छगनलाल,

इन दिनों बा सख्त बीमार है[2] अनीकी हालत चिन्ताजनक है और किसना[3] भी बीमार है। कहा जा सकता है, तीनों खटियापर पड़े हैं। मैं तीमारदारीमें व्यस्त होनेके कारण दूसरा कोई काम नहीं कर सकता। रातको किसना और नगीन[4] मेरे पास सोते हैं, इसलिए नींद भी ऐसी ही होती है। गोकुलदास[5] यहाँ है। वह अनीके पास

१. पत्रमें कस्तूरबा गांधी और अनी देसाईकी बीमारीका उल्लेख है; इनकी बीमारियोंका उल्लेख सन् १९१२ की डायरीमें भी है। पत्र सन् १९१२ का ही है, इसकी पुष्टि इस बातसे भी होती है कि कोटवाल, जिनका नाम पत्रमें आया है, संस्थाके सदस्यके रूपमें, टॉल्स्टॉय फार्ममें सन् १९१२ में ही कार्य कर रहे थे। इस वर्ष श्रावण सुदी ४ अंग्रेजी तिथि-गणनाके अनुसार अगस्त १६ को पड़ी थी।

२. बा और अनी ११ तारीखको बीमार पड़ी थीं; देखिए १९१२ की डायरीमें उस दिनकी टीप।

३ और ४. अनी और पुरुषोतमदास देसाईके पुत्र।

५. पीताम्बरदास गांधीके पुत्र और गांधीजीके चचेरे भाई।

सोता है। तीनों बीमारोंको पहलेसे अच्छा मानता हूँ; फिर भी अभी अनी खतरेके बाहर तो नहीं है।

अकाल [कोष]के आँकड़ोंकी भूल पकड़में आ गई है। अब मुझे एक बार देख जाना बाकी है। मैं फुर्सत मिलनेपर आँकड़े भेजूँगा। पोपटकी चिट्ठी मिली। तुमने जो-जो भेजा था, सब मिल गया है। तुम्हारी चिट्ठी मेरे पास नहीं है, इसलिए तालिकामें क्या-क्या दिया है सो भूल गया हूँ।

प्रो० गोखलेकी पुस्तक[1] अच्छी निकले, यह आवश्यक है। हम जो-कुछ यहाँ कर रहे हैं, तुम्हें भी वही करनेके लिए कह सकता हूँ। उस कामके लिए शनिवार और रविवारका उपयोग करना। जिसकी इच्छा हो वह मदद करे। यहाँ देवी बहन और भाई कोटवालका अमूल्य सहयोग मिल रहा है। देवी बहन सात बजे काम शुरू करती है और रातके नौ बजेतक करती रहती है। सारा भोजन खुद बनाती है और स्वयं उसे खाने तक की फुरसत नहीं मिलती। भाई कोटवाल सुबह तीन बजे उठकर रोजा रखनेवालोंके लिए खाना पकाते हैं। इन दिनों जैकीकी तबीयत भी बहुत अच्छी हो गई है। इसलिए वह भी बहुत मदद करती है। तुम सबने मिलकर जमनादासकी तबीयत बिगाड़ डाली है, इसलिए वह इच्छा होते हुए भी पूरा काम नहीं कर सकता। उसे कुछ-न-कुछ लगा ही रहता है। वहाँ उसने खानेमें हर तरहकी छूट ले ली थी और तुम सबने बड़ा प्रेम जाहिर करके दे दी थी। उसीका परिणाम भोग रहा है। वह खुद भी ऐसा मानता है। क्या-क्या छूटें ली थीं, उनका वर्णन भी उसीने किया है। वहाँ सितम्बरमें मेरा आना सम्भव दिखता है।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

देवी बहनकी मदद मुझे मिलती है, किन्तु उससे काम कम नहीं हुआ है। मुझे तो सँभाल करनी ही पड़ती है, क्योंकि बा का भय बना रहता है। उसे आदत पड़ जायेगी तब मुझे कुछ राहत मिलेगी। फिर भी आँकड़े भेजनेकी बात तो मेरे जिम्मे ही है। उसके साथ देवी बहनके कागज भी भेजूँगा।

लल्लूभाईको तो अपनी पुस्तकसे कमाई करना है। ठीक है, करें। [मगर] तुमने उसका विज्ञापन अखबारके समाचार-स्तम्भमें क्यों दिया?

हिन्दू सम्मेलन (कान्फ्रेन्स) की कोई बात हमें [अपने] अखबारमें नहीं देनी है, यह याद रखना। उनका विज्ञापन आये तो वह भी नहीं। वह सब निरा ढोंग और प्रदर्शनबाजी है, यह तो तुमने देख लिया होगा।

१. **दि ऑनरेबल मि० गोखले ऐंड दि इंडेंचर सिस्टम (माननीय श्री गोखले और गिरमिटिया प्रथा);** इस पुस्तिकामें गोखलेके सार्वजनिक जीवनका संक्षिप्त विवरण और कलकत्तामें, वाइसरॉयकी लेजिस्लेटिव कौंसिलमें उनके द्वारा प्रस्तुत प्रस्तावपर हुए वाद-विवादकी पूरी रिपोर्ट दी गई थी। श्री गोखले दक्षिण आफ्रिका आनेवाले थे और फीनिक्स संस्था उनके आगमनके अवसरपर उनके सम्मानमें उसे प्रकाशित करनेवाली थी।

[नेटाल भारतीय] कांग्रेसके काम-धामके लिए मैं फिलहाल नहीं निकल सकूँगा।

श्री वेस्टनने किराया वगैरह ठीक लिखाया है। वह रकम उनसे मुजरा नहीं लेनी है। यहाँसे उन्होंने कुछ नहीं लिया।

सम्भव है, मणिलाल डॉक्टर अपने वचनका पालन करनेके लिए फीजी जायें।[1] अभी एकदम तो वे वकालतका काम नहीं कर सकेंगे। नये कानूनके बन जानेपर ही यह सम्भव होगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ५७१०) की फोटो-नकल से।

२५९. जोहानिसबर्गमें चेचक

जोहानिसबर्गमें दूसरी बार चेचकका प्रकोप हुआ है। इस सम्बन्धमें जोहानिसबर्गके भारतीयोंका ध्यान हम अन्यत्र दिये गये 'संडे पोस्ट' के एक उद्धरणकी[2] ओर आकर्षित कर रहे हैं। अभीतक तो भारतीय बचे हुए जान पड़ते हैं। फिर भी उनका कर्त्तव्य है कि जिन कारणोंसे उनमें रोग फैलनेकी सम्भावना हो उन सबको दूर करके वे अधिकारियोंकी सहायता करें। उक्त लेखमें शिकायत की गई है कि हम सफाईके नियमोंका पालन नहीं करते। इस आक्षेपके निवारणका सबसे अच्छा उपाय निस्सन्देह यह है कि हम अपने घरोंको खूब साफ-सुथरा रखें। हमें सफाईके साधारण नियमोंका पालन करनेके लिए मुकदमा चलने या नोटिस मिलनेकी घड़ी तक रुके नहीं रहना चाहिए। कहते हैं, डॉ० पोर्टरने एक मिलनेवालेसे कहा कि ठीक जोहानिसबर्गके बीचों-बीचमें ही कुछ ऐसे मकान हैं जो पूर्णतया नष्ट कर दिये जानेके सिवा किसी मसरफके नहीं हैं; और उनमें अन्य लोगोंके अतिरिक्त भारतीय और अनेक यूरोपीय भी रहते हैं। हमारी राय है कि इस इलाकेमें जिन मकानोंकी मरम्मत ठीक तरहसे न की जा सकती हो, उनमें रहनेवाले भारतीयोंको उन्हें एकदम खाली करना शुरू कर देना चाहिए। सम्भव है कि उन्हें किराया कुछ अधिक देना पड़े, परन्तु वे देखेंगे कि यह

१. मणिलाल डॉक्टर इस तारीखसे पहले ही जा चुके थे। इसलिए जान पड़ता है, गांधीजी यह कहना चाहते थे कि "मणिलाल डॉक्टर अपने वचनका पालन करनेके लिए फीजीमें ठहरेंगे"; देखिए "पत्र: मनसुखको", पृष्ठ २८७-८८। इस वाक्यको इस पृष्ठभूमिमें भी समझनेकी आवश्यकता है कि मणिलाल डॉक्टर ट्रान्सवाल छोड़नेको राजी नहीं थे; देखिए "१९१२ की डायरी" में ८ जुलाईकी टीप।

२. इसमें एक मुलाकातके सिलसिलेमें स्वास्थ्य चिकित्सा अधिकारी डॉ० पोर्टरकी इस उक्तिका उल्लेख था: "गत अनुभवोंके आधारपर तो यही लगता है कि ऐसी बीमारियोंको फैलनेसे रोकनेका उपाय नगरकी गोरी और रंगदार आबादीका पृथक्करण है. . .। आवश्यकता इस बातकी है कि [नगर-] परिषदको सभी रंगदार लोगोंको — चाहे वे मलायी हों या भारतीय, केपकी रंगदार जाति हो या चीनी — निर्धारित बस्तियोंमें बसानेका अधिकार दिया जाये। इस समय [नगर-] परिषदको तो यह अधिकार नहीं ही है, प्रान्तीय परिषद् भी. . . इस दृष्टिसे असमर्थ है।" **इंडियन ओपिनियन**, १७-८-१९१२।

अतिरिक्त व्यय जब भगदड़ मचेगी तब कुल मिलाकर सस्ता ही पड़ेगा और लोगोंका स्वास्थ्य भी सुधर जायेगा। डॉ० पोर्टरने इस भयानक रोगके विरुद्ध जो लड़ाई छेड़ी है, उसमें उनकी जो भी सहायता की जा सके, अवश्य करनी चाहिए। वे उसके पात्र हैं और हर प्रकारसे उसके अधिकारी हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-८-१९१२

२६०. जोहानिसबर्गमें चेचक

जोहानिसबर्गमें फिर चेचक फूट पड़ा है। ऐसे विशाल और घनी आबादीवाले नगरमें एक बार रोगके फैल जानेपर उसे तुरन्त समाप्त कर सकना या दबा सकना बहुत ही मुश्किल काम है। इसलिए रोगकी खबर फैलते ही जबरदस्त दौड़धूप शुरू हो गई है, और चेचकका टीका लगवानेके लिए हजारों लोगोंकी रेंग लगी हुई है। लेकिन रोगको फैलनेसे रोकनेके लिए खास जरूरत इस बातकी है कि एक दूसरेसे इसकी छूत न लगने पाये। इसलिए विभिन्न समाजोंके लोगोंको अलग-अलग रखनेके प्रश्नपर विशेष जोर दिया जाने लगा है, और इसके लिए आवश्यक अधिकार प्राप्त करनेके प्रश्नपर भी विचार किया जा रहा है।[1] यह कहनेकी जरूरत नहीं कि जब अलग रखनेकी बात उठी है तो भारतीयोंको भी अलग रखनेकी बात होगी ही। और यदि भारतीयोंको रोगके कारण अलग बस्तियोंमें भेजनेकी बात हुई तब तो प्रजातीय भेदभावके आधारपर कोई प्रश्न उठाना सम्भव भी नहीं हो सकेगा। फिर, इस बातसे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि हम लोग रोगको ज्यादा छिपाते हैं, जिससे छूत और भी फैलती है। इसलिए हम भारतीयोंको आगाह कर देना चाहते हैं कि इस बीमारीके बहाने [हमारे विरुद्ध] कुछ गम्भीर सुझाव दिये जा सकते हैं और उस समय हम उनका विरोध भी शायद ही कर सकें। इस बार रोगकी शुरुआत भारतीयोंसे नहीं हुई, और अभीतक उनमें बहुत कम लोग बीमार भी हुए हैं। फिर भी, इस सम्बन्धमें उन्हें कुछ कम सावधानी नहीं बरतनी है। डॉ० पोर्टरने कहा है कि भारतीयों आदिके कुछ घर, जो [शहरके] मध्य भागमें हैं, इतने गन्दे हैं कि उनको जलाकर बिलकुल नष्ट कर देना पड़ेगा। भारतीयोंका यह कर्त्तव्य है कि वे इन घरोंको तुरन्त खाली कर दें और इसके बाद जहाँ जायें वहाँ बहुत सफाईसे रहें। ऐसा करनेमें अगर कुछ खर्च भी उठाना पड़े तो वह ठीक ही माना जायेगा। इस सम्बन्धमें भारतीय समाजको चिकित्सा-अधिकारीकी पूरी मदद करनी चाहिए। अगर समाजने इस विषयमें लापरवाही की तो इस रोगके बहाने उसके विरुद्ध मनचाहे सख्त कदम उठाये जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-८-१९१२

१. देखिए पिछले शीर्षककी पाद-टिप्पणी २।

२६१. पत्र : एशियाई-पंजीयकको

[लॉली]
अगस्त १९, १९१२

एशियाई-पंजीयक
प्रिटोरिया

महोदय,

आपका इसी १८ तारीखका कृपा-पत्र[1] प्राप्त हुआ। आशा है, मैं शीघ्र ही छः ब्रिटिश भारतीयोंकी सूची भेज सकूँगा। नामोंके बारेमें विचार-विमर्श किया जा रहा है। बहुत-से नाम आये हैं; उनमें से वे ही नाम भेजने हैं जो सर्वाधिक उपयुक्त हों।

आपका

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६९९) से।

२६२. भेंट : 'ट्रान्सवाल लीडर' के प्रतिनिधिको

जोहानिसबर्ग
अगस्त २२, १९१२

यद्यपि श्री गांधीका मुकाम आजकल जोहानिसबर्गमें नहीं है, किन्तु वे अब भी ऐसे सारे सार्वजनिक मामलोंसे अपनेको पूरी तरह अवगत रखते हैं जो उनके अपने लोगोंसे सम्बन्धित हैं। कभीके सत्याग्रही श्री गांधी आजकल टॉल्स्टॉय फार्ममें अपेक्षाकृत निवृत्त-जीवन बिता रहे हैं और वे वहींसे घूमते-घामते यहाँ आ गये थे। कल सुबह 'लीडर' के प्रतिनिधिने उनसे एक भेंट ली।

जब श्री गांधीसे यह पूछा गया कि क्या आपने चेचकके प्रकोपके सम्बन्धमें पिछले कुछ हफ्तोंमें प्रकाशित लेखोंको पढ़ा है, तो उन्होंने जवाबमें "हाँ" कहा। रंगदार-जातियोंके पृथक्करणके सुझावके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि मैं स्वेच्छया पृथक्करणको तो पसन्द करता हूँ, लेकिन किसी भी प्रकारकी बाध्यताका विरोधी हूँ।

पृथक्करणका किसी भी हालतमें कोई असर नहीं होगा। यदि भारतीयोंको एक इलाकेमें रखा जाये और आफ्रिकामें उत्पन्न यूरोपीयोंको दूसरेमें तब भी आप उन्हें रोजमर्राके कामकाजके सिलसिलेमें परस्पर मिलने-जुलनेसे रोक नहीं सकते। पृथक्करणसे छूतका खतरा भी दूर नहीं हो सकता। [पृथक्करणके बाद भी] आप देखेंगे कि ऐसा कोई

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है; फिर भी देखिए पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ २७८।

भी भारतीय फल-विक्रेता, जो किसी चेचक-ग्रस्त क्षेत्रसे आता है, दूसरे क्षेत्रोंमें भी छूत फैला देगा। इस रोगकी मौजूदा लहरमें बहुत कम भारतीय बीमार हुए हैं और स्वास्थ्य-अधिकारी इस बार हमें दोषी नहीं ठहरा सकते। हम अधिकारियोंको मदद देनेके लिए बहुत उत्सुक हैं; किन्तु अनिवार्य पृथक्करणसे हमारा विरोध है। कुछ साल हुए, इस सम्बन्धमें डॉ० मूरेने अस्वच्छ क्षेत्र स्वामित्वहरण आयोग (इन्सेनिटरी एरिया एक्सप्रोप्रिएशन कमीशन) के सामने बड़ी महत्त्वपूर्ण गवाही दी थी। उन्होंने कहा था कि ब्रिटिश भारतीयों या अन्य लोगोंमें सफाईके प्रति जो उपेक्षाका भाव है उसके सफल निराकरणका तरीका यह नहीं है कि उन्हें ऐसे बाजारोंमें भेज दिया जाये जहाँ लोग आसानीसे न आ-जा सकें अथवा उन्हें ऐसे स्थानोंमें सीमित कर दिया जाये जिनपर स्वास्थ्य-अधिकारी ठीक-से नियन्त्रण न रख सकें।

कठोर उपनियम स्वीकृत

जहाँ समाजके स्वास्थ्यका सवाल हो, वहाँ मैं कठोर उपनियमोंका पूरा समर्थन करता हूँ। ऐसे नियमोंके विरुद्ध आचरण करनेवालोंके प्रति मैं जरा भी दया नहीं दिखाऊँगा।

[प्रश्न :] लोक-स्वास्थ्य समितिने गन्दे आवासोंको गिरानेका अधिकार प्राप्त करनेके लिए अर्जी दी है; क्या आप उसकी इस कार्रवाईको पसन्द करते हैं?

अवश्य! मैं चाहूँगा कि इस सम्बन्धमें कानून अधिकसे-अधिक कठोरताके साथ लागू किया जाये। इस दृष्टिसे समाजके सभी वर्गों — यूरोपीयों, एशियाइयों, आफ्रिकामें उत्पन्न यूरोपीयों और वतनियों — से निबटनेका सही तरीका यह है कि उन्हें गति-विधिकी पूरी स्वतन्त्रता देते हुए स्वास्थ्य-सम्बन्धी बातोंमें उनपर सख्त निगरानी रखी जाये। मुझे ऐसे मामलोंका कोई २० वर्षोंका अनुभव है, और [उसके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि] यदि आपने भारतीयोंको अलग करके उन्हें शहरोंसे, मान लीजिए ४–५ मील, दूर बाजारोंमें बसनेको मजबूर किया तो इसका मतलब चेचक-जैसे रोगोंके फैलनेका भारी खतरा मोल लेना होगा।

हमारे पूरे समाजपर यह लांछन लगाया गया है कि जब-कभी कोई बीमारी फैलती है तो हम उसे छिपा रखना चाहते हैं। इस हालतमें जब भारतीयोंके लिए बाकी आबादीसे अलग रहनेकी व्यवस्था कर दी जायेगी तब क्या होगा? मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि उस हालतमें छूतका खतरा और भी अधिक होगा। जो भी हो, मुझे विश्वास है कि शाही सरकार किसी वर्ग-विधानको मान्यता नहीं देगी; और पृथक्करणकी नीतिसे तो ऐसा ही विधान फलित होगा। हमारा सम्पूर्ण समाज कानूनोंका पालन करनेको उत्सुक है और मेरा विश्वास है कि नये नगरपालिका अध्यादेशके अन्तर्गत सफाई-सम्बन्धी जो उपनियम बनाये जायेंगे उन्हें न्यायोचित तरीकेसे सख्तीके साथ लागू किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

ट्रान्सवाल लीडर, २३–८–१९१२

२६३. एक उदात्त जीवन-गाथा

इस लेखके नायक, श्री गोखलेसे लोग इतने सुपरिचित हैं कि वे कौन और क्या हैं, यह कहना आवश्यक नहीं है। उन्होंने दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंके पक्षकी जो अनवरत वकालत की है और उनके कष्टोंके प्रति जैसी सहानुभूति दिखाई है, उसे वे भारतीय अत्यन्त कृतज्ञतापूर्वक याद करते हैं। भारतमें नेटालके लिए होनेवाली गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्ती बन्द करा देनेका अधिकांश श्रेय उन्हींको है और वे अपने इस कार्यके लिए सदैव याद किये जायेंगे। इधर हालमें श्री गोखले वाइसरॉयकी कौंसिलमें वह विधेयक प्रस्तुत करनेमें लगे रहे, जिसका मन्शा भारतमें प्रत्येक बच्चेको निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा सुलभ कराना था। यद्यपि वे इसमें असफल हुए, परन्तु श्री गोखले असफलतासे निराश होनेवाले व्यक्ति नहीं हैं। विधेयकके भविष्यको अन्धकारपूर्ण देखकर भी उन्होंने इसकी कोई शिकायत नहीं की। उन्होंने परिषदमें अपने भाषणमें कहा, "१८७० का कानून पास होनेके पहले इंग्लैंडमें इस दिशामें किये गये प्रामाणिक प्रयासोंका क्या हाल हुआ था, इस बातको मैं बखूबी जानता हूँ; अतः मैं न तो अपनी इस विफलतासे मायूस हुआ हूँ और न मुझे उसकी शिकायत है। मैंने हमेशा महसूस किया है और बहुधा कहा भी है कि हम, भारतकी वर्तमान पीढ़ीके लोग, अपनी विफलताओंके द्वारा ही भारतकी सेवा करनेकी आशा कर सकते हैं।" ऐसे हैं हमारे आजकी चर्चाके विषय श्री गोखले! उनका जीवन मातृभूमिकी सेवामें व्यतीत हुआ है, और भारतमें तथा अन्यत्र करोड़ों लोगोंकी प्रार्थना है कि उन्हें अपने इतने प्रिय कामको अंजाम देनेके लिए बड़ी उम्र मिले।

गोपाल कृष्ण गोखलेका जन्म भारतके कोल्हापुर नामक शहरमें सन् १८६६ में हुआ था। उनके माता-पिता गरीब थे, परन्तु वे स्थानीय कॉलेजमें शिक्षा प्राप्त करनेके लिए भेजे गये। वे एक सफल छात्र थे और उन्होंने अपनी बी० ए० की पढ़ाई मुख्य रूपसे एलफिन्स्टन कॉलेज, बम्बई और अंशतः डेकन कॉलेज, पूनामें पूरी की। १८८४ में डिग्री लेनेके बाद वे डेकन शिक्षा-समिति (डेकन एजूकेशन सोसायटी) के सदस्य बन गये। इस समितिके आजीवन सदस्य फर्ग्युसन कॉलेजमें और सोसाइटीके अन्य स्कूलोंमें २० साल तक मात्र ७५) रुपये मासिक वेतनपर काम करनेकी प्रतिज्ञा करते हैं। कुछ समय तक श्री गोखलेने अंग्रेजी और गणितके प्राध्यापकके रूपमें काम किया, किन्तु अपने अधिकांश सेवाकालमें वे इतिहास तथा अर्थशास्त्रके शिक्षक रहे। इन दोनों विषयोंपर उनका जबरदस्त अधिकार है और वे इनके विशेषज्ञ माने जाते हैं। अपने कार्यके प्रति उनकी भक्ति और अनुरक्ति इतनी तीव्र थी कि कई वर्षोंतक उन्होंने अपनी छुट्टियाँ भी निरन्तर यात्रा करते हुए, तकलीफें सहते हुए व अपमान झेलकर कोष इकट्ठा करनेमें बिताईं। यद्यपि श्री गोखलेने कभी भी प्रिंसिपलका पद नहीं सम्हाला, फिर भी उसके कार्य-संचालनमें उनका बड़ा हाथ होता था। जिस समय उन्होंने फर्ग्यु-सन कॉलेजमें प्रवेश किया, लगभग उसी समय वे जस्टिस रानडेके सम्पर्कमें आये और

उनसे प्रभावित होकर कई वर्षोंतक उन्होंने उनके साथ विश्वकी समस्याओंका, विशेष रूपसे भारतसे सम्बन्धित समस्याओंका अध्ययन किया। १८८७ में श्री रानडेकी[1] इच्छाके अनुसार श्री गोखले पूना सार्वजनिक सभाके 'क्वार्टरली जर्नल' के सम्पादक बने। बादमें वे डेकन सभाके अवैतनिक मन्त्री बने। चार साल तक वे पूनासे प्रकाशित अंग्रेजी और मराठी भाषाओंमें छपनेवाले 'सुधारक' साप्ताहिकके भी एक सम्पादक रहे। चार साल तक वे बम्बईकी प्रान्तीय परिषद (बॉम्बे प्रॉविंशियल कौंसिल) के मन्त्री रहे और सन् १८९५ में जब राष्ट्रीय महासभा (इंडियन नेशनल कांग्रेस) का अधिवेशन पूनामें हुआ तो उसके एक मन्त्री श्री गोखले चुने गये। १८९७ में वे वेल्बी कमीशनके सामने अन्य प्रमुख सार्वजनिक कार्यकर्ताओंके साथ भारतीय व्यय (इंडियन एक्सपेंडीचर) पर साक्ष्य देनेके लिए इंग्लैंड जानेके लिए चुने गये। अपने उत्तम प्रशिक्षणके कारण विशेषज्ञ आयुक्तोंके प्रश्नोंकी बौछारसे वे तनिक भी विचलित नहीं हुए और उन्होंने सिद्धान्तों व तफसीलके सम्पूर्ण ज्ञानका सुन्दर प्रदर्शन किया। इसी समय उन्होंने ब्रिटिश समाचारपत्रोंको भारतमें प्लेगसे सम्बन्धित सरकारी प्रबन्धके बारेमें कुछ पत्र लिखे थे। इन पत्रोंको लेकर बादमें जो-कुछ हुआ, उससे उनकी चारित्रिक ईमानदारीपर अच्छा प्रकाश पड़ता है। जब वे भारत वापस आये तो उनसे अपने आरोप सिद्ध करनेको कहा गया और जब उनके मित्र, जिन्होंने उन्हें तत्सम्बन्धी जानकारी दी थी, उनके पक्षका समर्थन करनेके लिए आगे नहीं आये तो श्री गोखलेने सार्वजनिक जीवनकी उत्तम परम्परा निभाते हुए उदारतापूर्वक माफी माँग ली। इस शराफतके व्यवहारके कारण श्री गोखलेको कई क्षेत्रोंमें काफी अप्रिय बनना पड़ा। १९०० और १९०१ के बीच श्री गोखले बम्बई विधान-परिषदके निर्वाचित सदस्य रहे; उन्होंने वहाँ अत्यन्त उपयोगी काम किया। १९०२ में वे सर्वोच्च विधान-परिषदके, (सुप्रीम लेजिस्लेटिव कौंसिल) जिसके अध्यक्ष भारतके वाइसरॉय हैं, सदस्य चुने गये। वहाँ बजटपर अपने पहले ही भाषणमें उन्होंने जिस योग्यताका परिचय दिया, उससे लोग चकित रह गये। तबसे बराबर बजटके मौकेपर उनके भाषणकी प्रतीक्षा लोग उत्सुकता व दिलचस्पीसे करते रहे हैं। तथ्यों और आँकड़ोंपर उनके सम्पूर्ण अधिकारकी, प्रशासनिक समस्याओंके विस्तृत ज्ञानकी, सादे, स्पष्ट और ओजस्वी वक्तृत्व तथा उद्देश्यकी सच्चाईकी सराहना तो उनके विरोधी भी करते हैं। भारतमें कुछ बहुत ऊँचे पदाधिकारी उनके निजी मित्र हैं और लॉर्ड कर्जनने भी श्री गोखलेको अपनी जोड़का "ऐसा प्रतिद्वन्द्वी" माना है जिससे दो-दो हाथ किये जा सकते हैं।" कहते हैं, वाइसरॉयने उनके विषयमें यह कहा कि श्री गोखलेसे लड़नेमें लड़नेका मजा है और मैं जिन भारतीयोंसे मिला उनमें श्री गोखले सबसे योग्य हैं। लॉर्ड कर्जनके मनमें श्री गोखलेकी योग्यता व चरित्रके प्रति आदरकी जो भावना है उसे उन्होंने उन्हें [श्री गोखलेको] सी० आई० ई० का खिताब देकर व्यक्त किया।

१. श्री महादेव गोविन्द रानडे (१८४२–१९०१); अर्थशास्त्री, इतिहासकार और समाज-सुधारक; १८९३ में बम्बई उच्च न्यायालयके जज; **राइज़ ऑफ मराठा पावर** आदि अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकोंके लेखक।

श्री गोखलेने १९०५में सर्वेट्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटीकी स्थापना की। श्री गोखले-का विश्वास है कि मातृभूमिको ऐसे लोगोंकी बेहद जरूरत है जो स्वेच्छापूर्वक अपना जीवन सेवामें लगा दें। इस संस्थाके माध्यमसे वे ऐसे सेवकोंका निर्माण कर रहे हैं जो भारतके लोगोंको भौतिक व नैतिक लाभ पहुँचानेवाली शिक्षा देनेका उदात्तकार्य कर सकें। उसी वर्ष श्री गोखले बम्बईकी जनताकी तरफसे एक कार्य-विशेषके लिए इंग्लैंड गये और वहाँ भारत रवाना होनेके समय उन्हें बनारसमें होनेवाली आगामी कांग्रेसके सभापति बननेका साग्रह निमन्त्रण मिला। श्री गोखले उस समय स्वस्थ न थे और यदि उन्होंने इस कठिन कर्त्तव्यको अपने हाथोंमें लेनेसे इनकार कर दिया होता, तो भी अनुचित न होता। परन्तु अन्तमें उन्होंने सार्वजनिक आग्रहको मान दिया। श्री गोखलेने सभापति-पदसे जो भाषण दिया, उसमें लॉर्ड कर्ज़नके प्रशासन, बंगालके विभाजन, स्वदेशी आन्दोलन, भारतीय जनताकी अपने देशके प्रशासनमें अधिक हिस्सेकी माँग आदि बातोंपर बड़े ही अच्छे ढंगसे प्रकाश डाला गया था। श्री गोखलेके जीवनकी इस छोटी-सी रूपरेखामें इसकी या उनके अन्य भाषणोंकी अधिक चर्चा करना सम्भव नहीं है, परन्तु हम पाठकोंको सलाह देंगे कि वे श्री गोखलेके प्रकाशित भाषण प्राप्त करें और उनका अध्ययन करें। कुछ और न कहकर अब इस लेखका उपसंहार हम श्री नटेसन द्वारा प्रकाशित 'द स्पीचेज़ ऑफ ऑनरेबल मि० जी० के० गोखले' (माननीय श्री गो० कृ० गोखलेके भाषण) की सुन्दर प्रस्तावनाकी अन्तिम पंक्तियाँ उद्धृत करके करना चाहेंगे। हमने उनके जीवनकी इस रूपरेखाके लिए तथ्योंका संचय उक्त प्रस्तावनासे ही किया है।

> स्वभावसे उदार, वे कभी भी अपने विरोधियोंकी भावनाओंपर चोट नहीं करते, चाहे वे स्वयं उनपर कितना ही कठिन प्रहार क्यों न कर रहे हों। वे नरमदलीय राजनीतिक विचारधाराके माने जाते हैं, किन्तु उनका स्वभाव दलीय व्यक्ति (पार्टी-मैन) के स्वभावसे कोसों दूर है। जिसका मतलब झगड़नेके सिवा कुछ और नहीं होता, ऐसे किसी झगड़ेमें वे कभी नहीं पड़ते। वे सबसे ज्यादा व्यग्र इस बातके लिए हैं कि सभी दलोंको देशप्रेमकी सामान्य डोरसे बाँधकर एक कर दिया जाये। वे जिन परिस्थितियों और जिस वातावरणमें बड़े हुए हैं उनसे उन्हें कठोर आत्म-निरीक्षणकी शिक्षा मिली है और इसलिए वे दलीय भावनाके कुटिल प्रभावसे मुक्त रहनेकी दिशामें सदैव सावधान रहते हैं, तथा देशभाइयोंके प्रति अपने प्रेमको व्यर्थके भेदोंसे कभी भी दूषित नहीं होने देते। मनसा-वाचा-कर्मणा पवित्र, किसी वस्तुको सहज ढंगसे स्पष्ट कर देनेकी कलामें दक्ष, उत्तेजित किये बिना प्रेरणा प्रदान करनेवाले वक्ता, शान्तिप्रिय किन्तु संघर्षोंसे न डरनेवाले नागरिक, आदेशोंका पालन करनेकी शालीनता और आदेश देनेकी क्षमतासे युक्त कार्यकर्ता, अपने उद्देश्यमें अडिग आस्था रखनेवाले प्रगतिके सेनानी — श्री गोखले वास्तवमें भारतके सच्चे सेवक हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-८-१९१२

२६४. भाषण : ब्रिटिश भारतीय संघकी सभामें

जोहानिसबर्ग
अगस्त २५, १९१२

ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा जारी की गई सूचनाके अनुसार इसी २५ तारीख़को हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके भवनमें एक सभा हुई। सभाकी अध्यक्षता श्री काछलियाने की. . .।

श्री काछलियाने सभाकी कार्यवाही प्रारम्भ करते हुए कहा कि वह दिन, जब श्री गोखले यहाँ पधारेंगे, दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके लिए बड़े महत्वका होगा।. . . इसके अनन्तर उन्होंने श्री गांधीसे उस कार्यक्रमपर प्रकाश डालनेको कहा, जिसे संघ सभाकी सम्मतिके लिए प्रस्तुत करना चाहता था।

श्री गांधीने कहा कि श्री गोखले २२ अक्तूबरको केप टाउन पहुँचेंगे और दक्षिण आफ्रिकामें ३ सप्ताहसे[1] अधिक नहीं ठहर सकेंगे। उन्हें दिसम्बरके प्रारम्भमें भारत पहुँच जाना है, क्योंकि वे भारतीय राष्ट्रीय महासभा (इंडियन नेशनल कांग्रेस) के सभापति चुने गये हैं और लोक-सेवा आयोगके सदस्य भी नियुक्त किये गये हैं। इसलिए मेरे खयालसे, वे केप टाउनको दो और किम्बरलेको एक दिन दे सकेंगे। इन दोनों जगहोंसे निमन्त्रण आ चुके हैं। वे जोहानिसबर्ग लगभग २७ अक्तूबरको पहुँचेंगे। वे ट्रान्सवालमें कोई दस दिन रुक पायेंगे और उनका अधिकांश समय जोहानिसबर्गमें बीतेगा। वे जिस दिन [जोहानिसबर्ग] पहुँचेंगे, उस दिन उन्हें संघकी ओरसे एक उपयुक्त अभिनन्दनपत्र भेंट किया जायेगा। और यदि समाजकी विभिन्न जमातें संघके मानपत्रमें कही गई सर्वसामान्य बातोंके अलावा अपनी भावनाओंको अलगसे व्यक्त करना चाहेंगी तो उनके मानपत्र भी उसी अवसरपर उन्हें भेंट कर दिये जायेंगे। हम लोगोंको इस बातका खयाल रखना ही होगा कि श्री गोखले पूर्ण रूपसे स्वस्थ नहीं हैं और इसलिए कार्यक्रमपर विचार करते समय यह बात नहीं भूलनी है। वक्ताने कहा कि उसके दूसरे दिन प्रीतिभोजका आयोजन होगा, जिसमें लगभग १,००० व्यक्ति उपस्थित रहेंगे। यदि सम्भव हो तो दोनों समारोह वांडरर्समें ही किये जाने चाहिए और अध्यक्षका आसन ग्रहण करनेके लिए मेयरसे निवेदन किया जाना चाहिए। यदि अनुमति मिल गई तो रेलवे स्टेशनके समीप अथवा सभास्थलमें एक तोरण-द्वार भी खड़ा किया जायेगा; अन्यथा उनके टिकाये जानेके लिए किरायेपर लिये गये मकानके सामने। श्री गांधीने आगे कहा कि श्री गोखलेका हम कितना भी सम्मान करें, वह कम ही माना जायेगा। उनकी नैतिक और बौधिक शक्ति इतनी

१. देखिए परिशिष्ट २०।

बढ़ी-चढ़ी है कि यदि उनका जन्म यूरोपमें — मान लीजिए, फ्रांसमें हुआ होता — तो वे सम्भवतः उस गणराज्यके अध्यक्ष होते; और यदि इंग्लैंडमें हुआ होता तो वे उस देशके प्रधानमन्त्री हुए होते। दक्षिण आफ्रिकाके लिए उन्होंने जो विशेष कार्य किया है, सो सभीको मालूम है। जलसेके खर्चके लिए १,००० पौंडकी जरूरत होगी। समाजके सभी अंगोंसे स्वयंसेवक भर्ती किये जायेंगे और उन्हें श्री गोखलेके प्रवासकी अवधिमें और उससे पहले भी कुछ दिन अपना पूरा समय देना होगा। श्री गांधीने यह भी बताया कि एक तार आया है, जिसमें कहा गया है कि महाविभव आगा खाँ निकट भविष्यमें दक्षिण आफ्रिका और पूर्वी आफ्रिका आना चाहते हैं। समाजको चाहिए वह उन्हें तार भेजकर इस समाचारपर हर्ष प्रकट करे और साथ ही उन्हें निमन्त्रित भी कर दे।[1]

इसके अनन्तर प्रिटोरियाके हाजी हबीबने इस आशयका प्रस्ताव उपस्थित किया कि एक समिति नियुक्त की जाये जिसे सभी आवश्यक अधिकार सौंप दिये जायें। उस समितिका काम होगा चन्दा एकत्रित करना, कार्यक्रमकी व्यवस्था करना और श्री गोखलेके आगमनपर उनके स्वागत-सम्बन्धी अन्य आवश्यक कार्य करना। यह समिति अपने प्रतिनिधि नियुक्त कर दे, जिन्हें केप टाउन जाकर श्री गोखलेका स्वागत करनेका काम सौंपा जाये। उन्होंने अपने प्रस्तावमें यह भी कहा कि ऊपर जिस आशयके तारका जिक्र किया गया है, वैसा तार महाविभव आगा खाँको भेजा जाये।

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्ष इमाम साहब अब्दुल कादिर बावजीरने इस प्रस्तावका अनुमोदन किया और कहा कि निस्सन्देह समस्त भारतीय समाजका यह कर्त्तव्य है कि वह श्री गोखलेका शानदार स्वागत करे। ऐसे प्रतिष्ठित व्यक्तिका आदर करके वह स्वयं अपनेको गौरवान्वित करेगा। . . .

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९१२

१. महाविभव आगा खाँको निम्नलिखित तार भेजा गया: "ब्रिटिश भारतीय संघको यह समाचार पढ़कर कि आपका विचार दक्षिण आफ्रिका आनेका है, हर्ष हुआ है। समाज आपका स्वागत प्रसन्नताके साथ करता है। जिस समय श्री गोखले पहुँच रहे हैं क्या आपके लिए उस समय यहाँ पहुँचना सम्भव होगा? काछलिया—अध्यक्ष।"

२६५. भाषण: ब्रिटिश भारतीय संघकी सभामें[1]

जोहानिसबर्ग
अगस्त २५, १९१२

अनुरोध किये जानेपर श्री गांधीने स्कूलके विषयमें[2] बोलते हुए कहा कि सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ होनेके बादसे हमारी हमेशा यह इच्छा रही है कि एक सभा-भवनका निर्माण किया जाये, जिसका नाम फेडरेशन भवन[3] रखा जा सकता है। इस कार्यके [आरम्भके] लिए यह बहुत समुचित अवसर है। यदि हम अपने समाजकी प्रतिष्ठाके अनुरूप एक ऐसे भवनका निर्माण करें जिसमें सभा-गृह, सार्वजनिक विद्यालय, छात्रावास, अतिथिगृह आदि हों तो यह एक बहुत अच्छा काम होगा। इसमें करीब १०,००० पौंड तक लग सकता है, किन्तु यह रकम ट्रान्सवालके भारतीय निवासियोंके वशके बाहर नहीं है . . .।[4]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९१२

२६६. पत्र: हरिलाल गांधीको

[लॉली]
श्रावण वदी २ [अगस्त २९, १९१२][5]

चि० हरिलाल,

लगता है, तुमने तो पत्र न लिखनेका ही निश्चय कर लिया है।

साथमें करसनदास[6] काकाका पत्र है। इस कर्जको मैं तो समझ नहीं सकता। गोकलदासके[7] विवाहमें खर्च कैसे हुआ और किसने किया, इस सबसे मैं नावाकिफ हूँ। परन्तु यदि तुम्हें कुछ याद हो तो लिखना कि मैंने किस खर्चकी मंजूरी दी थी। इतना ज्यादा खर्च करनेकी मंजूरी मैंने दी हो, यह तो हो नहीं सकता। फिर भी तुम्हें जो-कुछ याद हो, सूचित करना।

१. पिछला भाषण भी इसी सभामें दिया गया था।

२. टॉल्स्टॉय फार्ममें खोले गये स्कूलके विषयमें।

३. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ८७ और ११३।

४. बादमें सम्भवत: चन्दा इकट्ठा करनेके उद्देश्यसे इब्राहीम कुवाडिया, फैन्सी और कुमारी श्लेसिनकी एक समिति नामजद की गई थी जिसमें बावज़ीर और काछलिया भी शामिल थे।

५. गोखलेकी यात्राके उल्लेखसे प्रतीत होता है कि यह पत्र १९१२ में लिखा गया था।

६. गांधीजीके बड़े भाई।

७. सन् १९०८ में गोकुलदासका देहान्त हो गया था; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २२६-२७ और पृष्ठ २४७।

इस समय तो प्रो० गोखलेके आगमनके सम्बन्धमें तैयारियोंकी धूमधाम चल रही है। भाई कोटवाल फार्ममें खूब काम करते हैं। जेकी बहन भी मदद करती है। मणिलाल पढ़नेमें लगा है। रामदास और देवदास भी नियमित रूपसे पढ़ते हैं। खेतमें काम भी करते हैं।

अनी बहन भी फार्मपर है।

मैं श्री पोलकको लेनेके लिए दो दिनोंमें डर्बन जानेवाला हूँ।[1] उस समय बा और देवदास मेरे साथ आयेंगे और कुछ समय फीनिक्समें रहेंगे।

चंचीकी इच्छा जब भी यहाँ आनेकी हो, वह आ सकती है। तुम अपनी ओरसे कुछ समाचार भेजो तो अच्छा।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ९५३६) की फोटो-नकलसे।

२६७. श्री ह्यूमका देहान्त[2]

इंग्लैंडसे आई ताजा डाकसे श्री ए० ओ० ह्यूमके देहान्तका समाचार मिला है। वे "भारतीय राष्ट्रीय महासभाके पिता"के नामसे प्रसिद्ध थे। हम अन्यत्र 'इंडिया' से उद्धृत करके उनकी स्मृतिमें श्रद्धांजलियाँ प्रकाशित कर रहे हैं। भारतके सच्चे मित्र बहुत कम हैं और इसलिए जो लोग ब्रिटिश साम्राज्यमें भारतकी विचित्र और कई दृष्टियोंसे दुर्भाग्यपूर्ण स्थितिको समझनेका कष्ट करते हैं, उनके हम विशेष कृतज्ञ हो जाते हैं। अधिकतर तो हम यही देखते हैं कि भारतीय सिविल सर्विसके सेवा-निवृत्त लोगोंमें भारतीय जनताके प्रति सहानुभूतिका अभाव होता है। स्वर्गीय श्री ह्यूम इसका अपवाद थे। उनका विश्वास था कि भारतीयोंके साथ बराबरीके दर्जेपर मिलनेसे प्रतिष्ठाकी हानि नहीं होती। वे जनताके नेताओंके साथ मिलकर काम करते थे और उन्हें अपने मीठे तथा सहानुभूतिपूर्ण व्यवहारके द्वारा अधिक ऊँचे और अधिक कल्याणकारी कार्य करनेके लिए उत्साहित तथा प्रेरित करते रहते थे। कहते हैं कि यद्यपि उनका शारीरिक बल क्षीण हो गया था, परन्तु उनका उत्साह अन्ततक जैसाका-तैसा बना रहा। ऐसे पुरुषोंकी स्मृति ब्रिटिश लोगोंकी न्यायप्रियतामें हमारे डगमगाते हुए विश्वासको पुनः जमा देती है। हमें अब भी आशा और विश्वास है कि इंग्लैंड श्री ह्यूम

१. श्री पोलक और उनकी पत्नी भारतसे ४ सितम्बरको डर्बन पहुँचे थे।

२. "भारतीय राष्ट्रीय महासभाके पिता" के नामसे प्रख्यात एलेन आक्टेवियन ह्यूम गदरके समय इटावाके मजिस्ट्रेट थे; १८७० में भारत सरकारके सचिव नियुक्त हुए और इस पदपर रहते हुए माल, खेती और वाणिज्य विभागोंके संगठनमें बहुत अच्छा काम किया; **ओल्ड मैन्स होप, द स्टार इन द ईस्ट, दि राइज़िंग टाइड,** आदि पुस्तकोंके लेखक; यह अन्तिम पुस्तक भारतकी तत्कालीन राजनीतिक हलचलपर है।

सरीखे उन पुरुषोंको जन्म दे सकता है, जो कुछ भी हो जाये, सदा न्यायका पक्ष लेते हैं। श्री ह्यूमकी मृत्युसे भारतका एक सच्चा मित्र जाता रहा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९१२

२६८. ट्रान्सवालमें रेल यात्रा

रेलवे प्रशासन और कुमारी श्लेसिनके बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है,[1] वह हम अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। कुमारी श्लेसिनने जो प्रश्न उठाया है वह, निस्सन्देह, बहुत ही नाजुक है, और उसके लिए उन्हें बहुत समझदारी और सावधानीसे काम लेना होगा। प्रशासनके लिए भी उतनी ही समझदारी और विवेक बरतनेकी जरूरत है। हम समझते हैं कि भारतीय महिला संघकी अवैतनिक मन्त्रीकी हैसियतसे कुमारी श्लेसिन, अपनी गरिमा तथा जिन हितोंकी वे संरक्षिका हैं उनका खयाल रखते हुए, और कोई रुख अपना भी नहीं सकती थीं। अपने साथी कार्यकर्ताओंको, जो समान उद्देश्यसे उनके साथ यात्रा कर रहे हैं, छोड़कर उनका कहीं और बैठना उचित नहीं होता। यदि वे ऐसा करतीं तो उसका मतलब होता समाजमें व्याप्त एक अनुचित और बेतुके पूर्वग्रहका जरूरतसे ज्यादा खयाल करना। और हमारा खयाल है कि कुमारी श्लेसिन यद्यपि रेल विभागको तुष्ट करनेकी स्वाभाविक इच्छा रखती हैं, फिर भी वे इन विनियमोंको लागू करनेके तरीकेसे बिलकुल बँधी हुई नहीं हैं; क्योंकि उनके इस तरहके प्रशासनसे उस उद्देश्यकी पूर्ति नहीं होती जिसे दृष्टिमें रखकर ये विनियम बनाये गये थे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९१२

१. इस पत्र-व्यवहारका विषय ऐसी दो घटनाएँ थीं, जिनमें सोंजा श्लेसिनको अपने भारतीय मित्रोंके साथ रंगदार लोगोंके लिए आरक्षित डिब्बोंमें यात्रा करते समय दूसरे डिब्बेमें चले जानेको कहा गया था। दोनों ही मौकोंपर उन्होंने वहाँसे हटनेसे इनकार कर दिया था, और रेलवे प्रशासनको अपने ऊपर मुकदमा करनेकी चुनौती दी थी।

२६९. "स्पष्टतः कष्टदायक"

दक्षिण आफ्रिकामें प्रवासी कानूनोंको जिस प्रकार कार्यान्वित किया जा रहा है, वह किसी भी सभ्य देशके लिए कलंकका कारण हो सकता है। इससे बढ़कर क्रूरता और हृदयहीनताकी बात क्या होगी कि कुछ लोग केवल इस कसूरपर अपने घरके दरवाजेसे लौटा दिये गये कि जिस जहाजमें वे भारतसे आये थे वह तूफानके कारण यहाँ विलम्बसे पहुँचा। उस दिन केप टाउनमें पाँच भारतीयोंके साथ यही बरताव किया गया।[1] इनके प्रार्थनापत्रकी सुनवाई न्यायमूर्ति श्री सर्लने की थी। उन्होंने कहा कि इस मामलेमें होनेवाली तकलीफ तो स्पष्ट है, परन्तु मुझे कानूनके सीधे और साफ़ अर्थके अनुसार कार्य करना है, मैं अपनी मर्जीसे कुछ नहीं कर सकता। अब हम तो इतना ही कह सकते हैं कि कानूनमें कोई बहुत बड़ी त्रुटि है। जिस न्यायाधीशको यह लज्जास्पद स्वीकारोक्ति करनी पड़ी हो कि उसे न्याय करनेका अधिकार नहीं है उसकी स्थिति दयनीय है। किन्तु इसमें दोष न्यायाधीशका नहीं है। न्यायाधीशोंका काम कानून बनाने या उनमें सुधार करनेका नहीं, केवल उनका अर्थ देखनेका है। केप और नेटालके प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमोंमें या तो संशोधन कर देने चाहिए या उनको समाप्त कर देना चाहिए। इस प्रान्तमें कानूनन बसे हुए भारतीयों तक को आये दिन डर्बनसे केवल एक आदमीकी[2] सनकके कारण निकाला जा रहा है। वह सरकारी नौकर है और इसलिए जनताका नौकर है; परन्तु उसमें समझ अथवा व्यवहार-बुद्धि किसी स्कूलमें पढ़नेवाले लड़के जितनी भी नहीं है। उच्चतम न्यायालय तक को यह मानना पड़ता है कि वह प्रवासी-अधिकारीके निरंकुश अधिकारोंका नियन्त्रण करनेमें असमर्थ है। इस अधिकारीको केवल अपनी दिलजमईकी चिन्ता है और इसमें कोई आड़े नहीं आ सकता। क्या दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय हाथपर-हाथ रखकर बैठे रहेंगे और इस असह्य परिस्थितिको चुपचाप सहन करते चले जायेंगे? यदि वे चुप बैठे रहे, तो यही मानना पड़ेगा कि वे इसीके योग्य हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९१२

१. दक्षिण आफ्रिकाके अधिवासी चार भारतीय, जो अस्थायी अनुमतिपत्र लेकर भारत गये थे, वापस केप टाउन लौटे। उनमें से एकके साथ उसका लड़का था। चूँकि उनके अनुमतिपत्रोंमें दी हुई अवधि बीत चुकी थी, इसलिए उन्हें प्रवेशकी अनुमति नहीं दी गई। उनके वकीलने दलील देते हुए कहा कि रास्तेमें मौसमकी खराबीके कारण देर न हुई होती तो वे लोग १२ दिन पहले आ जाते। जजने यह बात मंजूर की, किन्तु यह कहकर अपनी असमर्थता जाहिर की कि उसे तो कानूनके शब्दोंके स्पष्ट अर्थका अनुसरण करना होगा। **इंडियन ओपिनियन, ३१-८-१९१२।**

२. कजिन्स; देखिए "नया मुल्ला", पृष्ठ २७४-७६ और "नये मुल्लाके बारेमें कुछ और", पृष्ठ २७८-७९।

२७०. पत्र: हरिलाल गांधीको

[फीनिक्स]

श्रावण वदी ९ [सितम्बर ५, १९१२][1]

चि० हरिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे आश्चर्य होता है। एक भी महीना तुम्हें लिखे बिना गया हो, ऐसा मुझे याद नहीं आता। मुझे तो यही लगता है कि तुम्हें लिखे पत्र गुम हो गये हैं। तुम मेरे पत्र [न आने] की शिकायत करते हो और दुःख प्रकट करते हो। तुम्हारे पत्र न आनेपर हम. . .[2] देखें, इस पतेपर क्या होता है। बा, देवदास और मैं फीनिक्स आ गये हैं। बा बहुत बीमार हो गई थी इसलिए उसे साथ ले आया। और देवदास यहाँ आनेको बहुत उत्सुक था — इसलिए उसे भी। उसके साथ यह शर्त है कि वह फीनिक्समें मेरे दूसरी बार आनेतक रहेगा, कम्पोज करना सीखेगा और पढ़ेगा भी तथा महीनेमें २८ दिन अलोना खायेगा। अभी तो वह यह सब कुछ करता है।

अपने रहन-सहनमें मैंने और परिवर्तन किये हैं। इस सम्बन्धमें अवकाशके समय लिखनेका विचार करता हूँ।

श्री और श्रीमती पोलक फिलहाल डर्बनमें रहेंगे। मैंने श्री पोलकको वकालत शुरू करनेकी सलाह दी है। देखें, कैसी चलती है।

यहांका प्रवासी अधिकारी आजकल बड़ी सख्ती कर रहा है। इसीलिए भाई प्रागजी[3] अभीतक [जहाजसे] उतर नहीं सके हैं। वे शायद कल उतरेंगे।

सोराबजीके पत्र आते रहते हैं।

मणिलाल पढ़नेमें व्यस्त है। रामदास, भाई कोटवाल, जेकी बेन, अनी आदि फार्मपर हैं।

श्री कोटवाल और मैं एकाशन कर रहे हैं। चंचीसे तुम्हारे एकाशन करनेकी बात सुनकर मेरे मनमें भी एकाशन करनेकी तीव्र इच्छा जगी। उसपर भाई कोटवालका साथ मिल गया; और यह इच्छा तुरन्त अमलमें आ गई। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखते हुए जो मनमें आये सो करो। स्वास्थ्यको बिगाड़ोगे तो मैं बिलकुल माफ नहीं करूँगा। फ्रेंच सीखनेमें समय और पैसा बरबाद होता है, मुझे तो ऐसा ही लगेगा। यह अमूल्य समय अगर तुमने संस्कृत पढ़नेमें लगाया होता तो कितना अच्छा होता

१. पत्रमें कस्तूरबा गांधीकी बीमारी और उनके फार्मपर रहनेका उल्लेख है, और बादमें कोटवालकी चर्चा की गई है, इससे पता चलता है कि यह पत्र १९१२ में ही लिखा गया होगा।

२. यहाँ एक पृष्ठ गायब है।

३. प्रागजी खण्डुभाई देसाई जो थोड़े समयके लिए भारतकी यात्रापर गये थे; देखिए "पत्र: डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ २४१-४२। किन्तु गांधीजी अपनी "१९१२ की डायरी" से लिखते हैं कि प्रागजी उनसे ४ सितम्बरको भेंट करने आये। यह सम्भव है कि गांधीजीने यह पत्र ३ सितम्बरको लिखना आरम्भ किया हो और इसे ५ सितम्बरको भेजा हो।

यह मैं तुम्हें बता ही नहीं सकता। लेकिन आजकल तुम जिस वातावरणमें रहते हो वह दूषित है, इसीलिए फ्रेंच सीखनेकी सूझी। तुमने परीक्षा एक वर्ष देरसे पास की होती, लेकिन संस्कृत सीख ली होती तो कितना अच्छा होता! संस्कृतके ज्ञानसे सब भारतीय भाषाओंको जाननेका द्वार खुल जाता है। उसको तुमने अपने हाथसे बन्द कर दिया। तुमने फिरसे फ्रेंचकी चर्चा छेड़ी है, इसीलिए इतना लिख रहा हूँ। अगर तुम अब भी सोच-विचार कर एक वर्षके लिए परीक्षा देनेका विचार छोड़ दो और संस्कृत पढ़ो तथा उसमें निजी अभ्यासके लिए सातके बदले आठ रुपये भी खर्च करो तो मुझे प्रसन्नता होगी। फिर भी जैसा मनमें आये, वैसा करना। तुम जिस कक्षामें चाहो दाखिल हो जाओ। मैं तुम्हारी इच्छामें विघ्न नहीं डालना चाहता। मेरी सलाहको एक घनिष्ठ मित्रकी सलाह मात्र समझना।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

चंची क्यों नहीं आई, यह मैं नहीं समझ सका। चंचीको जब भेजो तब तार देना जिससे उतारनेका प्रबन्ध कर सकूँ। रामीका समाचार भी चंचीने ही दिया था।[1]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ९५४२) की फोटो-नकल से।

२७१. श्री और श्रीमती पोलक

श्री और श्रीमती पोलकके भारतसे लौटनेपर डर्बनके भारतीयोंने उनका हार्दिक स्वागत किया। श्री पोलकका इस पत्रके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है, इसलिए उनके कामकी[2]

१. देखिए "बली वोरा और चंचलबहन गांधीको लिखे पत्रका अंश", पृष्ठ २९२-९३।

२. श्री पोलक ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय प्रश्नको वहाँकी जनताके सामने रखनेकी दृष्टिसे भारत भेजे गये थे और वे नवम्बर १९११ के मध्यमें भारत पहुँचे थे। पहुँचनेपर जल्दी ही नेटाल भारतीय कांग्रेसने भी तार द्वारा उनसे भारत-सरकार और सार्वजनिक संस्थाओंके सामने अपनी बात रखनेकी दृष्टिसे प्रतिनिधित्व करनेकी प्रार्थना की। उनसे तीन पौंडी करको रद किये जानेपर विशेष बल देनेकी प्रार्थना की गई। श्री पोलकने इस बातको लेकर व्यापार तथा उद्योग-विभागके सचिवको अनेक पत्र लिखे। सरकारके साथ उन्होंने ट्रान्सवाल कस्बा-कानून संशोधन अधिनियम, १९०८, स्वर्ण-कानून तथा ट्रान्सवाल सरकार द्वारा मुस्लिम कानूनके मुताबिक हुए बहुपत्नीक विवाहोंको अमान्य करनेके विषयमें भी लिखा-पढ़ी की। वे दिसम्बर, १९११ की कलकत्ता कांग्रेस तथा मुस्लिम लीगके छठे अधिवेशनमें भी दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी स्थितिपर बोले। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक संस्थाओंके तत्वावधानमें आयोजित सभाओंमें उन्होंने उक्त प्रश्नपर प्रकाश डाला और इन सभाओंमें से कई सभाओंमें दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके प्रति किये जानेवाले व्यवहारको लेकर निन्दाके प्रस्ताव पास किये गये तथा उनमें भारत-सरकारसे इन शिकायतोंको दूर करने तथा गिरमिट प्रथाको बन्द करनेकी प्रार्थना की गई शेरिफकी सभामें पोलकने जो सनसनी पैदा करनेवाला भाषण दिया (देखिए पृष्ठ २९६-९७), उसके फलस्वरूप सभाने वाइसरॉयको स्मरणपत्र भेजा और सभाके अध्यक्ष सर जमशेदजी जीजीभाईने पोलकके सम्मानमें एक भोज दिया तथा उनकी भारत-सेवाकी प्रशंसा की। देखिए "पोलकका कार्य", पृष्ठ १११, तथा "श्री पोलक भारतीय राष्ट्रीय-महासभामें", पृष्ठ २०३।

चर्चा करनेके लिए यह शायद उपयुक्त स्थान नहीं है। परन्तु इस पत्रकी सम्पादकीय पतवारके फिर उनके हाथमें जानेसे पहले उनके सार्वजनिक कार्योंपर विचार कर लेना शायद अनुपयुक्त नहीं होगा। सम्पादकीय कार्य तो, हमारे पाठक जानते ही हैं कि वे केवल प्रेमवश करते हैं।

श्री पोलक अपनी चतुराई, योग्यता और अटूट लगनके कारण भारतका लोकमत जाग्रत करनेमें इतने सफल रहे कि आज भारतकी जनता दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके प्रश्नमें सबसे ज्यादा रुचि ले रही है और उनके पक्षका वहाँ सबके द्वारा जैसा समर्थन हो रहा है, वैसा किसी और बातका नहीं। माननीय श्री गोखलेने गिरमिटिया प्रश्नको हल करनेमें जो शानदार सफलता प्राप्त की, वह भी उनके ही सतत प्रयत्नका परिणाम थी। उन्हींके प्रयत्नसे सत्याग्रहियोंकी सहायताके लिए खोला गया कोष, जो खाली हो चला था, फिर भर गया[1]; और यह उन्हींके अनथक उत्साहका फल है कि भारत सरकार हमारी शिकायतोंसे पूर्णतया परिचित हो गई है।

परन्तु, यदि श्रीमती पोलकने उमंग और उत्साहसे श्री पोलककी सहायता न की होती तो वे कुछ भी न कर पाते। इतना ही नहीं, उन्होंने इस कार्यमें स्वयं सक्रिय हिस्सा भी लिया। वे निःसंकोच भारतीय महिलाओंसे मिलती रहीं और उन्हें हमारी स्थितिसे परिचित कराती रहीं। उनका विश्वास है — और वह ठीक ही है — कि कोई भी सुधार या आन्दोलन तबतक सफल नहीं हो सकता जबतक कि मानवताका शेष आधा भाग भी उसमें रुचि न ले। इसलिए उन्होंने भाषण और लेखन द्वारा अपने पतिकी सहायता करनेका कोई भी अवसर हाथसे नहीं जाने दिया। हमें यह भी ज्ञात है कि उन्होंने श्री पोलकके लिपिक तक का बहुत-सा काम करना अपनी प्रतिष्ठाके विरुद्ध नहीं समझा। समाज ऐसे मित्रों और कार्यकर्ताओंका सम्मान करे तो यह उचित ही है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-९-१९१२

२७२. महाविभव आगा खाँ

ज्ञात हुआ है कि महाविभव आगा खाँने दक्षिण आफ्रिका आनेका निश्चय किया है। इसपर भारतीय समाज अपने-आपको प्रत्येक दृष्टिसे बधाई दे सकता है। महाविभव मुसलमानोंके एक अति प्रभावशाली सम्प्रदायके धर्मगुरु हैं। वे भारतीय मुसलमानोंके सर्वमान्य राजनीतिक नेता हैं और एक ऐसे सुसंस्कृत भारतीय हैं, जो भारतके हितसे सम्बद्ध प्रत्येक कार्यमें सक्रिय और विचारपूर्ण भाग लेते रहते हैं। वे उदार विचारोंके राजनीतिज्ञ हैं और हिन्दुओं और मुसलमानोंको एक-दूसरेके और ज्यादा

१. हो सकता है कि श्री पोलकने अपनी भारत-यात्राके दौरान सत्याग्रह कोषके लिए सर्वसामान्य रूपसे चन्दा इकट्ठा किया हो, किन्तु यहाँ तात्पर्य शायद बम्बईमें आयोजित शेरिफकी सभामें रतन टाटा द्वारा २५,००० रुपये देनेकी घोषणासे है; देखिए पृष्ठ २९५ ।

नजदीक लानेका यत्न करते रहते हैं। सुनते हैं, अखिल भारतीय मुस्लिम-लीगकी लन्दन शाखाने उनकी ही प्रेरणासे भारतीय राष्ट्रीय महासभाके साथ निकट-सहयोग करनेका सुझाव दिया है। हमारी दृष्टिसे शायद सबसे महत्वकी बात यह है कि महाविभवने हमारे पक्षका सदा समर्थन किया है और वे अनेक बार निर्भीकतासे हमारे पक्षमें बोले हैं। इसलिए यह उचित ही हुआ कि दक्षिण आफ्रिकाकी प्रमुख भारतीय सभाने उन्हें निमन्त्रण भेजा और सुझाव दिया कि वे माननीय श्री गोखलेके यहाँ पधारनेके समय पधारें।[1] यदि हम इन दोनों प्रतिष्ठित अतिथियोंका एक ही समय स्वागत कर सकें तो निश्चय ही यह प्रत्येक दृष्टिसे बहुत बड़ी बात होगी। [वे उस समय आ सकें या न आ सकें,] हम इतना तो जानते ही हैं कि जब-कभी महाविभव यहाँ पधारेंगे तभी दक्षिण आफ्रिकाका भारतीय समाज सर्वत्र उनका राजसी स्वागत करेगा!

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–९–१९१२

२७३. तुमसे ऐसी आशा नहीं थी!

अन्यत्र हम नेटाल न्यायपीठ (बेंच) के एक न्यायाधीशके वे शब्द प्रकाशित कर रहे हैं, जो उन्होंने एक भारतीयके कत्लके मुकदमेमें जूरीको सम्बोधित करते हुए अपने श्री-मुखसे निकाले। उन्हें पढ़कर हमारे पाठकोंको दुःख, भय और दरअसल रोष तक आये विना नहीं रहेगा। ये न्यायाधीश महोदय इस मुकदमेसे सम्बन्धित व्यक्तियोंकी चर्चा करते-करते निरर्थक ही सामान्य भारतीय जनतापर उतर आये। विचाराधीन मामलेमें जिस स्त्रीका कत्ल हुआ वह गन्नके एक खेतपर काम करती थी और कहा गया है कि उसके दो "पति" थे। न्यायाधीशने इस स्थितिको "घृणास्पद" विशेषण तो ठीक ही दिया, परन्तु साथ ही उन्होंने यह कह डाला कि "इन भारतीय लोगोंमें इस प्रकारका घृणास्पद आचरण एक सामान्य बात है।" प्रकरणसे स्पष्ट है कि न्यायाधीशने "इन" शब्दका प्रयोग भारतीयोंके किसी विशिष्ट वर्गका निर्देश करनेके लिए नहीं, प्रत्युत अपने इस मतपर जोर देनेके लिए किया है कि इस प्रसंगमें वे भारतीयोंकी ही चर्चा कर रहे हैं, अन्य किन्हीं लोगोंकी नहीं। इस प्रकार न्यायाधीशने एक साथ सारे भारतीय समाजकी ही निन्दा कर डाली है। परन्तु प्रतीत होता है कि जूरीके सदस्य दुनियाको, और इसलिए वास्तविकताको, अधिक भली प्रकार जानते थे। उन्होंने अभियुक्तोंको अपराधी करार देते हुए उसमें इतना और जोड़ दिया कि इस वस्तुस्थितिका ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिए कि गन्नेके खेतोंपर "हजारों आदमियोंको इकट्ठे रहना पड़ता है और उनमें स्त्रियोंका अनुपात बहुत कम होता है।"

१. आगा खाँको यह निमन्त्रण गांधीजीके सुझावपर भेजा गया था, देखिए "भाषण: ब्रिटिश भारतीय संघकी सभामें", पृष्ठ ३०९।

जो लोग इन खेतोंका हाल जानते हैं वे तो वहाँ रहनेवालोंमें भी पवित्रताके कुछ बच रहने और वहाँ उग्र अपराधोंके इतने कम होनेपर आश्चर्य ही करते हैं।

हम कहना चाहते हैं कि ये न्यायाधीश महोदय भारतीय समाजको बिलकुल नहीं जानते। हमें तो लगता है कि जिस स्थितिका उन्होंने जिक्र किया, उनके सामने उसके आधा दर्जन उदाहरण भी नहीं आये होंगे। ये न्यायाधीश गिरमिट भुगतनेवाले भारतीय मजदूरों और स्वतन्त्र भारतीयोंके अन्तर तक को नहीं समझ सके। उच्च न्यायालयके न्यायाधीशोंमें इस प्रकारकी जल्दबाज़ी शायद ही कभी किसीने देखी हो। यदि न्यायाधीशको सत्य तक पहुँचनेकी चिन्ता होती तो उन्होंने देखा होता कि स्वतन्त्र भारतीय जनतामें इस प्रकारके उदाहरण होते नहीं; गिरमिटिया भारतीयों तक में ये बहुधा घटित नहीं होते और जब-कभी होते भी हैं तो वे मामले विवाहके नहीं, बल्कि इन परिस्थितियोंमें रहनेवाली स्त्रियोंके पुरुषोंकी वासनाओंका शिकार होकर असहाय वेश्या बन जानेके उदाहरण-मात्र होते हैं। और जिन कुछेक स्त्रियोंको रूढ़िगत सदाचारके पालनका नाम रखनेके लिए कानून वहाँ आनेको विवश करता है उन्हें ये पुरुष अपना स्वाभाविक शिकार समझने लगते हैं। यदि न्यायाधीश और भी गहराईमें उतरते तो उन्हें पता चल जाता कि ये आदमी जब भारतसे निकले थे तब ये निरे पशु नहीं थे; और अन्य लोगोंको भी इनकी परिस्थितियोंमें रहना पड़े तो उनमें से अधिकांश इन-जैसे ही हो जायें; इस कारण दोष इनका नहीं, इस प्रणालीका है।[1] हमने जिन बातोंकी ओर इशारा किया है, यदि न्यायाधीशने उन सबकी जाँच करनेका कष्ट किया होता तो वे भी अपने अविचारपूर्ण शब्दोंसे भारतीयोंकी भावनाको अनावश्यक ठेस पहुँचानेके स्थानपर इस प्रणालीकी बुराइयोंकी ओर अधिकारियोंका ध्यान आकृष्ट करते और उससे कुछ लाभ भी होता।

उपनिवेशमें जन्मे हमारे मित्र चाहें तो कार्य करनेका यह अच्छा क्षेत्र उनके सामने है। कांग्रेस भी इस क्षेत्रमें काम कर सकती है, परन्तु उक्त मित्रोंके जितना नहीं। इन मित्रोंको इस मामलेकी जाँच करके इसका विस्तृत प्रतिवाद करना चाहिए और सिद्ध करना चाहिए कि न्यायाधीशके शब्द कितने निराधार हैं। कांग्रेसको चाहिए कि वह तुरन्त ही न्याय-विभागको लिखकर बतलाये कि जूरीके सामने दिया गया न्यायाधीशका भाषण कितना विचित्र था। वह इसकी जाँच किये जानेकी माँग भी करे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-९-१९१२

१. मुकदमा अगस्त २७, १९१२ को डर्बनके सर्किट कोर्टमें हुआ था। बचाव पक्षके वकीलने जिरह करते हुए कहा कि ये भारतीय पशु-तुल्य आचरण करते हैं और उनके बारेमें उसी दृष्टिसे विचार किया जाना चाहिए; किन्तु न्यायमूर्ति कार्टरने अपने फैसलेमें कहा कि भारतीयोंको न्यायकी वैसी ही सुविधा मिलती है जैसी यूरोपीयोंको; अतः वे जिस कानूनसे प्राप्त सुरक्षाके अधिकारी हैं, उसी कानूनके मुताबिक सजाके भी। **इंडियन ओपिनियन, ७-९-१९१२।**

२७४. फीनिक्सका न्यासपत्र[1]

पक्ष एकके मोहनदास करमचन्द गांधी, फीनिक्स, नेटाल प्रान्त, दक्षिण आफ्रिका और पक्ष दोके उमर हाजी आमद झवेरी,[2] व्यापारी, डर्बन, पारसी रुस्तमजी जीवणजी घोरखोदू, व्यापारी, डर्बन, हरमान कैलेनबैक, वास्तुकार और कृषक, जोहानिसबर्ग, लुई वाल्टर रिच, बैरिस्टर, जोहानिसबर्ग और प्राणजीवनदास जगजीवन मेहता, बैरिस्टर, रंगून, के द्वारा तथा उनके बीच प्रतिपन्न ——

यह अनुबन्धपत्र साक्षी है कि

१. उक्त पक्ष एक [मोहनदास करमचन्द गांधी] पूर्वोक्त फीनिक्समें जमीनके एक टुकड़ेका मालिक है, जिसका विस्तार एक सौ एकड़ है और जिसमें कुछ मकान और मशीनें हैं —— इन मकानों और मशीनोंका विवरण अधिक तफसीलके साथ संलग्न अनुसूची "क"में दिया गया है।

२. उक्त पक्ष एक 'इंडियन ओपिनियन', नामक एक साप्ताहिक पत्रका, जो उक्त फीनिक्समें मुद्रित तथा प्रकाशित होता है, तथा वहाँ अवस्थित इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेसका[3] एकमात्र स्वामी है।

३. उक्त पक्ष एकने इसके बाद उल्लिखित उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए पूर्वोक्त फीनिक्समें सन् १९०४ में एक प्रतिष्ठानकी संस्थापना की थी।

४. प्रस्तुत दस्तावेजपर हस्ताक्षर करनेकी तिथिपर पूर्वोक्त फीनिक्सके प्रतिष्ठानमें कुछ व्यक्ति निवास कर रहे हैं या उससे सम्बद्ध[4] हैं और उक्त समाचारपत्र, 'इंडियन ओपिनियन'के छापेखानेमें जुदा-जुदा हैसियतोंसे काममें लगे हैं या उसीसे सम्बन्धित[5]

१. न्यासपत्रका पहला उल्लेख "पत्र : ए० ई० छोटाभाईको", पृष्ठ ६० में मिलता है। हरिलाल गांधीके दक्षिण आफ्रिका छोड़कर भारत चले आनेके पहले गांधीजीने उनके साथ उसकी चर्चा की थी इसके बाद मगनलाल और छगनलाल गांधीके नाम लिखे पत्रोंमें उसका उल्लेख कई बार हुआ मिलता है; देखिए पृष्ठ १२४ और १२८। उसका एक प्रारम्भिक मसविदा तैयार हो चुका था और यह 'निवासियों'के बीच घुमाया भी जा रहा था। छगनलालके नाम लिखे, १ अगस्त, १९११ के पत्रमें गांधीजीको हम यह कहते हुए देखते हैं कि 'फीनिक्स-विधान'को शायद बदलना पड़ेगा। गांधीजीके कागजोंमें प्राप्त न्यासपत्रके टाइप किये हुए मसविदे (एस० एन० ५५८४ और ५५९२) पर साक्षियोंके रूपमें जॉन एच० कोर्डिज, मार्क हेनरी हॉथॉर्न और जगन्नाथ नारायण दांडेकरके हस्ताक्षर हैं। कोर्डिजने उसपर अपनी सही अडयार (मद्रास) में १२ नवम्बर, १९११ को की थी और शायद उसे एक व्याख्यापत्र (कवरिंग लेटर) के साथ वापस किया था। देखिए परिशिष्ट १०। इस मसविदे और न्यासपत्रके ऊपर दिये जा रहे पाठमें जहाँ कहीं महत्वपूर्ण भेद दिखाई दिया है, वहाँ उसे पाद-टिप्पणियोंमें बताया गया है।

२. उमर हाजी आमद झवेरी; डर्बनके प्रमुख व्यापारी; १९०७ में नेटालकी भारतीय कांग्रेसके संयुक्त मन्त्री; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४७४-७५ और ४७५-८१।

३. "तथा. . . प्रेसका" — यह अंश मसविदेमें नहीं है।

४ और ५. "उससे सम्बद्ध" और "उसीसे सम्बन्धित" — ये शब्द इस पाठमें नये हैं; आशय निष्पादकों (एक्जीक्यूटर्स) और न्यासियोंसे है, जिनमें से कोई भी उस समय फीनिक्समें नहीं रहता था।

कोई दूसरा काम कर रहे हैं। (इन्हें तथा भविष्यमें उक्त प्रतिष्ठान (सेटिलमेंट) में आकर बसनेवाले और अनुसूची "ख" पर सही करनेवाले[1] अन्य व्यक्तियोंको आगे 'निवासी'—सेटलर कहा जायेगा)।

५. उक्त प्रतिष्ठानके वर्तमान निवासियोंमें से बहुसंख्यक उक्त प्रतिष्ठानमें निम्नलिखित शर्तोंपर, निम्नलिखित ध्येयों और प्रयोजनोंकी सिद्धिके लिए शामिल हुए थे—

(१) अपना रहन-सहन यथासम्भव ऐसा बनाना कि अन्ततोगत्वा दस्तकारीके[2] द्वारा अथवा यथासम्भव यन्त्रोंकी मददके बिना खेती करके जीविकोपार्जनकी सामर्थ्य पैदा हो;

(२) दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए यूरोपीयों और ब्रिटिश भारतीयोंके बीच और अधिक सद्भावना पैदा करनेकी दृष्टिसे सार्वजनिक कार्य करना, और ब्रिटिश भारतीयोंकी तकलीफोंको प्रकाशमें लाना तथा उन्हें दूर करवानेका प्रयत्न करना;

(३) उन आदर्शोंका पालन और प्रचार, जिन्हें टॉल्स्टॉय और रस्किनने अपने जीवन और ग्रन्थोंमें प्रस्तुत किया है।

(४) स्वयं पवित्र जीवन बिताकर दूसरोंको निजी जीवनमें पवित्रता लानेकी प्रेरणा देना;

(५) मुख्यतः भारतीय बच्चोंको उनकी अपनी मातृभाषाओंके माध्यमसे शिक्षा देनेके लिए एक स्कूल खोलना;

(६) कुदरती उपचारोंके द्वारा रोगोंकी रोकथामकी दृष्टिसे एक सेनेटोरियम और आरोग्य-भवन स्थापित करना;

(७) अपने-आपको अन्यान्य सामान्य उपायों द्वारा मानवताकी सेवाके योग्य बनाना;

(८) उल्लिखित आदर्शोंके प्रचार और प्रसारके लिए उक्त 'इंडियन ओपिनियन' को चलाना;

६. और उक्त पक्ष एक अब उक्त जमीन, मकान, मशीनें, समाचारपत्र और अन्य सभी आनुषंगिक वस्तुएँ, व्यवसायसे सम्बन्धित माल, बहियोंमें दर्ज पावना, साज-सामान तथा उससे और प्रतिष्ठान (सेटिलमेंट) से सम्बन्धित दूसरी चीजें, जिनमें इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेसका कारोबार भी शामिल है, उक्त दूसरे पक्षको तथा अपनेको न्यासके रूपमें उक्त प्रतिष्ठानके उपयोग और अनुच्छेद ५ में गिनाये गये ध्येयों और कार्योंकी पूर्णतर सिद्धिके लिए हस्तान्तरित करना, सौंपना और इसलिए उनके नाम-पर कर देना चाहता है;

७. और पक्ष दोके व्यक्तियोंने व्यक्तिशः और मिलकर अपने और पक्ष एकके नाम पूर्वोक्त जमीन, मकानों आदिका, जिनका कि पहले उल्लेख हो चुका है, हस्तान्तरित किया जाना स्वीकार किया है और उक्त न्यासको उक्त पक्ष एकके साथ इसके पहले और बादमें कही गई शर्तोंपर अंगीकार किया है;

१. "और . . . वाले"—ये शब्द मसविदेमें नहीं हैं। अनुसूची "ख" उपलब्ध नहीं है।
२. "दस्तकारी" शब्द बादमें जोड़ा गया है।

इसलिए ये दस्तावेज साक्षी हैं कि

८. उक्त पक्ष एक फीनिक्स, नेटालमें, स्थित पूर्वोक्त जमीन और मकानों, मशीनों, समाचारपत्र, साज-सामान, व्यवसायसे सम्बन्धित माल, बहियोंमें दर्ज पावना और अन्य आनुषंगिक वस्तुओंपर अपना सारा अधिकार और स्वामित्व उक्त दूसरे पक्षके सज्जनों और स्वयं अपनेको न्यासियोंके रूपमें इस उद्देश्यसे सौंपता है कि इस सबपर उनका और उनके उत्तराधिकारियोंका न्यासाधिकार हो और वे निम्नलिखित अतिरिक्त शर्तोंके अनुसार पूर्वोक्त उद्देश्यों, कार्यों और शर्तोंके साथ इन सबका उपयोग करते रहें:

(क) उक्त मो० क० गांधी अपने जीवन-कालमें न्यासके उद्देश्योंकी उचित पूर्तिके निमित्त उक्त न्यासियोंके नियन्त्रणके अधीन न्यासका व्यवस्थापक होगा;

(ख) उक्त मो० क० गांधी जिस समय दक्षिण आफ्रिकामें हाजिर न हो उस समय अथवा उसकी मृत्युके बाद न्यासीगण अपनेमें से किसीको आवश्यकताके अनुसार, उस अवधिके लिए या हमेशाके लिए व्यवस्थापक नियुक्त कर सकते हैं;

(ग) उक्त मो० क० गांधी अथवा कोई अन्य व्यवस्थापक न्यासके उचित प्रबन्धके लिए शेष न्यासियोंके प्रति उत्तरदायी रहेगा।

(घ) न्यासियोंके अधिकार-क्षेत्रमें आनेवाली सभी बातोंमें अल्पमतपर उक्त न्यासियोंके बहुमतका निर्णय बन्धनकारक होगा, और, यदि [किसी बातपर] न्यासियोंके मत समान संख्यामें विभक्त हो जायें तो प्रतिष्ठानके निवासी बहुमतसे जो निर्णय करें वह न्यासियोंके लिए बन्धनकारक होगा।

(ङ) बैंकमें 'फीनिक्स ट्रस्ट एकाउंट'के नामसे खाता खोला जायेगा और उससे सम्बन्धित जमा-खर्च न्यासके व्यवस्थापकके हाथमें या उसके द्वारा नियुक्त एवजी या एवजियोंके हाथमें रहेगा।

(च) न्यासियोंमें से किसीकी मृत्यु होने या किसीके त्यागपत्र देनेपर शेष न्यासी न्यासके संचालनके लिए सक्षम होंगे, तथापि उस समय दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले [प्रतिष्ठानके] निवासी अपने बहुमत द्वारा लिये गये निर्णयसे रिक्त स्थानोंकी पूर्तिके लिए न्यासियोंको नामजद कर सकेंगे। इस नामजदगीको शेष न्यासीगण स्वीकार करेंगे।

(छ) निवासियोंकी स्वीकृतिसे न्यासियोंको अपनी संख्यामें वृद्धि करनेका अधिकार होगा।

(ज) न्यासियोंको अपने विचार-विमर्शमें निवासियोंकी सलाह लेनी होगी और उनका निर्णय स्वीकार करना होगा; किन्तु निवासियोंको न्यासियोंपर न्यासकी नीति अथवा ध्येयोंमें कोई परिवर्तन करानेकी सत्ता नहीं होगी;

(झ) निवासियोंकी स्वीकृतिसे, न्यासीगण न्यासके उद्देश्योंका विस्तार कर सकते हैं; अन्यथा नहीं;

(ञ) न्यासीगण निवासियोंकी स्वीकृतिसे नये निवासियों अथवा अस्थायी कार्यकर्ताओंको शामिल कर सकते हैं; और उनकी स्वीकृतिसे किन्हीं निवासियों अथवा अस्थायी कार्यकर्ताओंको हटा [भी] सकते हैं। किन्तु कोई भी निवासी बेईमानी, अत्यन्त अनुचित आचरण अथवा सौंपे गये कर्त्तव्यकी घोर अवहेलनाके सिवा [अन्य किसी कारणसे] अलग नहीं किया जा सकता।

(ट) न्यासीगण वर्तमान व्यवस्थाओं तथा संविदाओं (कान्ट्रैक्ट्स) का समादर और उनकी संपुष्टि करेंगे;

(ठ) उक्त मो० क० गांधी अपने और अपने कुटुम्बके द्वारा अभी काममें लाई जा रही दो एकड़ भूमि और मकानका अन्य निवासियों-जैसी शर्तोंपर उपयोग करते रहने तथा छापाखाने और अन्य कामोंकी आयसे जीवन-वेतन लेनेका अपना अधिकार सुरक्षित रखता है; यह रकम प्रतिमास पाँच पौंडसे अधिक नहीं होगी;

(ड) उक्त मो० क० गांधीकी मृत्युके बाद, यदि उसकी पत्नी जीवित रहे तो वह जीवन-पर्यन्त अपने लिए तथा अपने दो नाबालिग बच्चों, रामदास और देवदासके लिए प्रतिष्ठानकी आयमें से प्रति माह ज्यादासे-ज्यादा पाँच पौंड लेती रहेगी। उसकी (मो० क० गांधीकी पत्नीकी) मृत्युके बाद इन नाबालिग बच्चोंके अभिभावकको इतनी ही रकम तबतक मिलती रहेगी जबतक कि छोटा लड़का या उनमें से किसीके चल बसनेपर दूसरा लड़का २१ वर्षका न हो जाये। मो० क० गांधीकी पत्नी और नाबालिग बच्चोंको पूर्वोक्त दो एकड़ जमीन और उसपर बने मकानोंके उपयोगका भी वैसा ही अधिकार होगा;

(ढ) न्यासीगण निवासियों अथवा उनमें से कुछको 'इंडियन ओपिनियन' का स्वामित्व दे सकते हैं; और उन्हें छापाखाना, टाइप और इनसे सम्बन्धित दूसरे जरूरी साधन पट्टेपर दे सकते हैं;

(ण) न्यासियोंको समय-समयपर न्यासके नियमोंमें परिवर्तन और संशोधनका अधिकार होगा; परन्तु हर बार निवासियोंकी सहमति आवश्यक होगी;

(त) न्यासियोंको निवासियोंकी सहमतिसे पूर्वोक्त अनुसूची "क" में वर्णित या बादमें ली जानेवाली सम्पत्ति बेचने या रेहन रखने तथा और जमीन बिसाहने, मकान बनाने तथा और मशीनें व माल खरीदनेका अधिकार होगा;

(थ) "निवासी" शब्दके अर्थमें उन सभी व्यक्तियोंका समावेश होगा जो इस समय उक्त प्रतिष्ठानमें निवास कर रहे हैं या जो उससे सम्बद्ध हैं और जिन्होंने यहाँ संलग्न अनुसूची "ख" पर सही की है अथवा जो इसके बाद वहाँ निवास करेंगे या उससे सम्बद्ध होंगे और जो यहाँ प्रस्तुत उद्देश्यों और नियमोंको स्वीकार करेंगे तथा अनुसूचि "ख" पर सही करेंगे।

९. इस लेखका कोई अंश असंगत प्रतीत हो तो भी यह अनुबन्धपत्र पंजीयनके दिनसे अमलमें आ जायेगा और प्राणजीवनदास जगजीवन मेहताकी सही न होनेपर भी उसका पंजीयन कराया जायेगा और उक्त सज्जन [श्री मेहता]की सही भारतसे यहाँ ज्यों ही पहुँचेगी त्यों ही इसमें सम्मिलित कर दी जायेगी।

दस्तावेजके अन्तमें हस्ताक्षर करनेवाले साक्षियोंकी उपस्थितिमें दोनों पक्षोंके व्यक्तियों द्वारा हस्ताक्षरित।

अनुसूची "क"

	पौं०	शि०	पें०
जमीन	१,०८७	१०	३
मकान	१,५३५	१४	१
मशीनें और छापाखानेका दूसरा सामान	१,५४८	१	०
छापाखानेका स्टॉक	३०७	७	१०
वहियोंमें दर्ज पावना	६००	१८	३
पुस्तकालय और स्कूलकी पुस्तकें	५०	१३	०
कुल	५,१३०	४	५

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९१२

२७५. अपने विषयमें

इस अंकमें प्रकाशित न्यासपत्र[1] हमारे कार्यके एक नये कदमका सूचक है। उसकी रजिस्ट्री करवाई जा रही है। इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस नामक जिस छापेखानेमें यह पत्र छपता है उसके एकमात्र वैध स्वामी अब श्री गांधी नहीं रहे। हमें फीनिक्स आये हुए लगभग आठ वर्ष हो गये। हमारा विचार था कि कार्यकर्ता अपने निर्वाहके लिए 'इंडियन ओपिनियन' की बिक्री और इसमें प्रकाशित विज्ञापनोंकी आयपर निर्भर रहनेके स्थानपर शायद जमीनके सहारे रह सकेंगे। परन्तु इस अवधिमें हम जमीनपर उतना ध्यान नहीं दे सके जितना हमने सोचा था। यह तो स्पष्ट ही है कि हम अपना व्यय खेती द्वारा पूरा नहीं कर पाये। यह भी सभी जानते हैं कि यह पत्र भी स्वावलम्बी नहीं हो पाया।[2] एक बार तो उसके बन्द होने तक की नौबत आ गई थी। इस संकटको वह सन् १९०९ में श्री टाटासे मिली हुई सहायताके सहारे ही पार कर सका है।[3]

हमने यह भी निर्णय कर लिया है कि अपने आदर्शोंपर चलते हुए हम अपने व्ययोंकी पूर्तिके लिए विज्ञापन नहीं ले सकते। हमारी समझमें विज्ञापनोंकी प्रणाली ही बुरी है, क्योंकि इससे अनुचित प्रतिस्पर्धा फैलती है और हम ऐसी प्रतिस्पर्धाके विरुद्ध हैं।[4] यह बहुधा बड़े पैमानेपर भ्रान्त विचारोंके प्रचारका साधन बन जाती

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ १००, १४० और २४७।

३. रतन टाटाने ३० नवम्बर, १९०९को तार द्वारा गांधीजीको रु० २५,००० का दान भेजा था। यह दान "एशियाई पंजीयन अधिनियमके खिलाफ अपना संघर्ष जारी रखनेमें भारतीयोंकी सहायता" के लिए भेजा गया था; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ८४ भी।

४. **इंडियन ओपिनियन**में विज्ञापन लेना बन्द कर देनेके सम्बन्धमें गांधीजी इससे पूर्व भी विचार करते रहे हैं। देखिए खण्ड १० पृष्ठ ४११।

है। इसके अतिरिक्त, यदि हम इस पत्रके द्वारा अपना पूरा निर्वाह करना ठीक नहीं मानते तो हमें यह अधिकार नहीं है कि हम अपने स्थानका उपयोग विज्ञापनोंके लिए करें और अपना समय उन्हें तैयार करनेमें लगायें। अवतक भी हम जो विज्ञापन लेते थे उनके चुनावमें विवेकका उपयोग करते थे और ऐसे अनेक विज्ञापन अस्वीकृत करते रहे हैं जो हमारे मन्तव्योंसे संगत नहीं होते थे। आशा है कि हमारे जो मित्र और हितचिन्तक आजतक हमारी सहायता करते रहे हैं वे हमारे विज्ञापन छापना वन्द कर देनेका कुछ और अर्थ नहीं समझेंगे। इस समाचारपत्रको प्रकाशित करनेके दो उद्देश्य[1] हैं: दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंको लोगोंके सामने लाना और उन्हें दूर करनेके उपाय करना तथा साथ ही जीवनको ऊँचा उठानेवाली पाठ्य-सामग्री प्रकाशित करके जन-शिक्षणका कार्य करना। आशा है, हमारे पाठक हमारी स्थितिको समझेंगे और पत्रके ग्राहक वनकर इसकी यथापूर्व सहायता करते रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–९–१९१२

२७६. जोहानिसबर्गका प्रस्तावित स्कूल

श्री हबीव मोटनको प्रस्तावित भारतीय स्कूलके सम्वन्धमें जो सबसे ताजा उत्तर मिला है, वह पहले उत्तरसे[2] तो अच्छा है; फिर भी हमारे विचारसे वह सर्वथा अस्वीकार्य है। उसमें असमानताकी प्रणाली अब भी बरकरार है, जो बहुत आपत्तिजनक है। उसमें वेतन योग्यताके अनुसार नहीं, चमड़ीके रंगके आधारपर दिये जानेकी बात है।[3] हमारी समझमें अधीक्षककी कोई आवश्यकता नहीं है; किन्तु यदि हो भी तो हम आशा करते हैं कि अधीक्षककी नियुक्ति गोरे लोगोंमें से ही किये जानेकी व्यवस्थापर सम्वन्धित व्यक्ति तीव्र आपत्ति करेंगे।

हमारी इन महत्वपूर्ण आपत्तियोंके अतिरिक्त यह आशंका भी है कि सरकारका प्रस्ताव अभियोजकोंके उद्देश्यको ही विफल कर देगा। वे भारतीय बच्चोंको उनकी अपनी मातृभाषामें शिक्षा नहीं दे पायेंगे। कारण, सरकार [भारतीय शिक्षकोंको]

१. **इंडियन ओपिनियन**के उद्देश्योंके विषयमें गांधीजीकी पिछले उल्लेखोंके लिए देखिए खण्ड ४, पृष्ठ १०६, ३४५-४६, ३५८-५९ और ३६७-६८ खण्ड ७, पृष्ठ १९०; **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय १९ और २० तथा **आत्मकथा**, भाग ४, अध्याय १३, १९, २० और २१।

२. देखिए "जोहानिसवर्गका स्कूल", पृष्ठ २५९-६०।

३. विट्वाटर्सरैंड केन्द्रीय स्कूल निकाय (सेंट्रल स्कूल बोर्ड) ने यूरोपीय प्रिंसिपलके लिए सालाना २०० पौंड, यूरोपीय पुरुष शिक्षकोंके लिए सालाना १५० पौंड, यूरोपीय महिला शिक्षकोंके लिए प्रति वर्ष १२० पौंड और भारतीय शिक्षकोंके लिए, उनकी योग्यताके अनुसार, सालाना ४० से ६० पौंड तक देना मंजूर किया था। निकायके मन्त्रीने अपने ४ सितम्बरके पत्रमें प्रस्तावित स्कूलके प्रिंसिपल तथा शिक्षकोंकी योग्यता भी निर्धारित कर दी थी। इसके अतिरिक्त उसने अधीक्षक-पदपर किसी यूरोपीयकी नियुक्तिकी ही सिफारिश की थी। **इंडियन ओपिनियन, १४–९–१९१२**।

जो वेतन देना चाहती है, वह हास्यास्पद है और उस वेतनपर निश्चय ही प्रतिष्ठित और चरित्रवान् भारतीय शिक्षक नहीं मिल सकते।

परन्तु हमारा खयाल है कि यदि सरकार उक्त स्कूलको सचमुच ही आर्थिक सहायता देना चाहती है तो वह अपने प्रस्तावमें सुधार करके शिक्षकों आदिके वेतनके लिए प्रतिवर्ष एक निश्चित रकम, मान लीजिए १,००० पौंड, देनेकी व्यवस्था कर दे। शिक्षकोंकी नियुक्ति और उनके वेतनका निश्चय एक निरीक्षण निकाय (सुपरिन्टेंडिंग बोर्ड) करे। इसके सदस्योंमें यूरोपीय और भारतीय दोनों हों। ये सदस्य भारतीय समाज द्वारा नामजद हों; और नामजदगीपर सरकारकी स्वीकृति आवश्यक रहे। इस निकायको पाठ्यक्रम निर्धारित करने, कौन-कौन-सी भाषाएँ पढ़ाई जायें, यह तय करने तथा समय-समयपर स्कूलकी कार्य-पद्धतिपर रिपोर्ट देनेका भी अधिकार हो। हमें भरोसा है कि श्री हबीब मोटन सरकारको लिखे पत्रमें हमारे सुझावोंको शामिल कर लेंगे और सरकार भी उन्हें स्वीकार कर लेगी। सरकार जब इस दिशामें एक खासी धनराशि खर्च करनको तैयार ही है तो अब आवश्यकता बच रहती है केवल कुशल प्रबन्ध और भारतीयोंकी भावनाका आदर करनेकी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९१२

२७७. अधिकारियों द्वारा कानूनकी अवज्ञामें वृद्धि[1]

हमें प्राय: प्रत्येक अंकमें श्री कज़िन्सकी कटु आलोचना करनी पड़ती है और ऐसा करते हुए हमें बहुत खेद होता है। किन्तु यह अधिकारी कभी तो अपनी मूर्खताके द्वारा और कभी अपने गैरकानूनी कामोंसे लगातार हमें कुछ-न-कुछ कहनेपर बाध्य करता रहता है।[2] श्री लॉटनने हाल ही में 'नेटाल मर्क्युरी'को लिखे गये पत्रमें[3] — जिसे हम उद्धृत कर चुके हैं — यह बताया है कि नेटाल प्रवासी अधिनियमकी तामील

१. देखिए "नया मुल्ला", पृष्ठ २७४-७६ तथा "नये मुल्लाके बारेमें कुछ और", पृष्ठ २७८-७९।

२. गांधीजी सितम्बर ६, १९१२ को कज़िन्ससे और सितम्बर ११ को लॉटनसे मिले भी थे; देखिए "डायरी १९१२" में इन्हीं तिथियोंकी टीपें।

३. अपने पत्रमें लॉटनने **नेटाल मर्क्युरी**की इस उक्तिसे सहमति प्रकट की थी कि अधिकारीगण प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमका प्रशासन समझदारीके साथ करें। उन्होंने इस बातका जोरदार विरोध करते हुए कि उपनिवेशमें और भी भारतीयोंको प्रवेश दिया जाये, उतने ही जोरदार ढंगसे यह भी कहा कि उन अनेक अधिकारोंकी भी रक्षा होनी चाहिए जो उन्हें पहलेसे ही प्राप्त हैं। उन्होंने प्रवासी अधिकारी द्वारा प्रवासी कानूनके अन्यायपूर्ण प्रशासनके दो उदाहरण भी दिये। इनमें से एक यह था कि एक भारतीयको भारतसे डर्बनके रास्ते किम्बर्ले लौटते हुए जल और थल दोनों मार्गोंसे आगे बढ़नेसे रोक दिया गया। इसके बाद उसने डेलागोआ-बे से डर्बनके रास्ते पोर्ट एलिज़ाबेथ जानेकी कोशिश की, किन्तु तब उसे डर्बनमें रोक दिया गया। आखिर वह सीधे केप टाउन गया, जहाँ प्रवासी अधिकारीने उसे किम्बर्ले जानेकी अनुमति दे दी। **इंडियन ओपिनियन**, ७-९-१९१२।

करानेके लिए डर्बनमें नियुक्त यह प्रवासी अधिकारी इस बातका निर्णय भी खुद ही करता है कि केप उपनिवेशमें, जहाँ कि कानून दूसरे प्रकारका है, कौन प्रवेश करेगा और कौन नहीं। केपके कानूनके अन्तर्गत अक्सर अपील करनेकी गुंजाइश होती है; इतना ही नहीं, कई मामलोंमें प्रान्तीय कानूनके तहत नियुक्त प्रवासी अधिकारियोंके निर्णयके खिलाफ सर्वोच्च न्यायालयमें ऐसी अपील सफलतापूर्वक की भी गई है। हमारा निश्चित मत है कि जबतक श्री कज़िन्स नेटालमें नियुक्त हैं तबतक वे केप प्रवासी कानूनके अन्तर्गत किसी भी प्रकारकी सत्ताका प्रयोग नहीं कर सकते। केप प्रवासी कानूनकी व्याख्या सर्वोच्च न्यायालयके स्थानिक खण्डके अधिकार-क्षेत्रके बाहर है। इसलिए श्री कज़िन्सने एक ऐसी सत्ताका प्रयोग किया है जो उन्हें प्राप्त नहीं है और हमारा खयाल है कि उन्होंने श्री लॉटनके मुवक्किलको पड़ोसी उपनिवेशके अपने गन्तव्य स्थानकी ओर जानेसे रोककर —— ऐसे और भी बहुतसे मामलोंकी शिकायतें हुई हैं —— और इस प्रकार उसे उस प्रान्तके न्यायालयों तक पहुँचनेसे वंचित करके भारी भूल की है। हमारा विश्वास है कि श्री कज़िन्सकी इस कार्रवाईके खिलाफ सम्बन्धित क्षेत्रोंमें समुचित कदम उठाया जायेगा और हमें पता चला है कि ऐसा किया भी जा रहा है। यदि प्रवासी अधिकारीगण ऐसा व्यवहार करें मानो मौजूदा प्रान्तीय कानून हैं ही नहीं या उनका स्थान संघीय कानूनने —— जो सम्भव है, कभी पास ही न हो —— ले लिया हो, तो यह परिस्थिति असह्य मानी जानी चाहिए। यदि शाही सरकारके समक्ष यह सिद्ध करनेके लिए कि स्पष्टत: अनुत्तरदायी और निरंकुश अधिकारियोंके हाथमें बड़ी सत्ता देना बिलकुल अनुचित है, किसी और प्रमाणकी जरूरत हो तो श्री कज़िन्सने इस कार्यके द्वारा इस बातका जैसा ज्वलन्त उदाहरण पेश किया है वैसा वे किसी और तरहसे नहीं कर सकते थे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९१२

२७८. अपने विषयमें

इस पत्रको फीनिक्समें छपते हुए सात वर्षसे अधिक हो गये। अब हम एक कदम आगे बढ़ रहे हैं। आजतक श्री गांधी कानूनन इस संस्थानके मालिक थे, किन्तु अब फीनिक्सकी मालिकी न्यासियों (ट्रस्टियों) के हाथमें जाती है और फीनिक्स संस्था जिन उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए चलाई जायेगी उनके विषयमें निश्चित नियम निर्धारित किये गये हैं। हमारा खयाल है कि इस पत्रके पाठक भी इसे ठीक दिशामें उठाया गया कदम मानेंगे।

जब अखबारका पूरा खर्च अखबारसे ही निकल आया हो, ऐसी स्थिति तो कभी नहीं रही। इसके कारणोंके विवेचनकी जरूरत नहीं है। किन्तु इतना तो इस समय स्मरण कर ही लेना चाहिए कि यदि हमने श्री टाटाके दानका उपयोग इस अखबारके लिए न किया होता तो अखबारके बन्द होनेकी नौबत आ गई होती।

जिस समय कार्यकर्ताओंने फीनिक्समें रहकर अखबार प्रकाशित करनेका निर्णय किया, उस समय ऐसा खयाल था कि जमीनसे तथा इस अखबारसे जो आय होगी, उससे कार्यकर्ता न केवल अपनी जीविका कमा लेंगे बल्कि वे काफी अच्छी बचत भी कर सकेंगे; क्योंकि तब इन प्रवृत्तियोंके मालिक वे ही थे और यदि इनसे नफा होता तो वह भी उनका ही होता। अनुभवसे हमने देखा कि यह धारणा गलत थी। हमने देखा कि फीनिक्सके नियमोंके अनुसार निर्धारित जीवनके साथ पैसेके लाभका मेल नहीं बैठता और पिछले अनेक वर्षोंसे अभीतक फीनिक्सकी संस्था ज्यादातर इसी नीतिके अनुसार चलती रही है।

हमारा मुख्य उद्देश्य यह था कि जैसे बने वैसे खेतीसे अपना निर्वाह करके हम यथाशक्ति लोकसेवा करेंगे और यह अखबार लोगोंके आगे रखेंगे। इस उद्देश्यमें हम आजतक सफल नहीं हुए।

धन्धेकी तरह दूसरोंका काम प्राप्त करके छापना (जॉब वर्क) हमने कई वर्षोंसे बन्द कर रखा है। अब हमें ऐसा प्रतीत हो रहा है कि हमें [अखबारमें] विज्ञापन छापनेका काम भी छोड़ देना चाहिए। पहले हमारा खयाल था कि विज्ञापन प्रकाशित करना गलत नहीं है, किन्तु ज्यादा सोच-विचारके बाद हम इस निर्णयपर पहुँचे कि यह रिवाज बिलकुल अवांछनीय है। जो लोग पैसा कमानेके लिए आतुर हैं, वे अपने व्यापारमें दूसरोंसे आगे बढ़ जानेके उद्देश्यसे विज्ञापन प्रकाशित कराते हैं। विज्ञापनोंकी हवा आजकल ऐसी बढ़ रही है कि पैसेके लिए [सच्चे-झूठे] चाहे जैसे विज्ञापन दिये जाते हैं और लिये जाते हैं। आधुनिक सभ्यताका यह एक अत्यन्त दुःखद लक्षण है और हम उससे मुक्त हो जाना चाहते हैं। जो विज्ञापन व्यापारसे सम्बन्ध नहीं रखते और लोकोपयोगी भी हैं, ऐसे विज्ञापनोंको हम पैसा लेकर छापेंगे — क्योंकि उन्हें मुफ्त छापनेसे हमारा अखबार केवल उन्हींसे भर जायेगा — किन्तु दूसरे विज्ञापन अब हम नहीं छापेंगे। जो विज्ञापन अभी हमारे पास हैं, उनके बारेमें उनके मालिकोंके साथ प्रबन्ध करके हम उनसे छुटकारा पानेका प्रयत्न करेंगे। ऐसा होनेसे हम खेतीका काम ज्यादा कर सकेंगे और अंकमें साथ जो दस्तावेज [ट्रस्ट-डीड][1] प्रकाशित किया जा रहा है, उसके मुख्य उद्देश्यको ज्यादा अच्छी तरह कार्यान्वित कर सकेंगे।

हम मानते हैं कि इस नये परिवर्तनसे लोक-सेवा करनेकी हमारी शक्ति बढ़ेगी। हमारा खयाल है कि अखबारमें हम ज्यादा अच्छी और मूल्यवान पाठ्य-सामग्री भी दे सकेंगे। हमारा प्रयत्न यह रहा है कि यह अखबार उत्तरोत्तर सुनीतिके प्रचारका साधन बनता रहे। इस अखबारके प्रकाशनके केवल दो उद्देश्य हैं — एक तो यह कि इस देशमें भारतीयोंको जो कष्ट सहने पड़ते हैं उन्हें दूर करनेका प्रयत्न किया जाये और दूसरा यह कि सुनीतिकी शिक्षाका प्रचार किया जाये। यह दूसरा कार्य मुख्यतः हमारी अपनी जीवन-पद्धति सुधारनेपर निर्भर है। इन्हीं कारणोंसे इस अखबारसे सम्बन्धित व्यापारिक पहलुओंको — जैसे कि बाहरका फुटकर काम (जॉब), विज्ञापन आदि लेना — हम यथाशक्ति बन्द करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। हमारा रहन-सहन

१. देखिए "फीनिक्सका न्यासपत्र", पृष्ठ ३१८-२२।

और हमारा जीवन ज्यों-ज्यों दस्तावेजमें बताई गई नीतिका अनुसरण करेगा, त्यों-त्यों हम पाठकोंके समक्ष ज्यादा उपयोगी सामग्री रख सकेंगे। अपने इस प्रयत्नमें हम सारे भारतीयोंसे मददकी आशा रखते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-९-१९१२

२७९. मुसलमान पत्नियाँ

हम एक दूसरे कालममें जो पत्र उद्धृत कर रहे हैं, वह भारत कार्यालय (इंडिया ऑफिस)की ओरसे दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको भेजा गया था। इस पत्रसे प्रतीत होता है कि समय-समयपर साम्राज्य-सरकार और भारत-सरकारको भेजे गये प्रार्थनापत्र फलीभूत हुए हैं। हमें ज्ञात हुआ है कि दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए मुसलमानोंकी पत्नियोंके प्रवासके प्रश्नपर भारत कार्यालय और उपनिवेश कार्यालय आपसमें सलाह-मशविरा कर रहे हैं। जब फातिमा और सकीनाके मामले तय किये गये थे, हालत तब भी बहुत खराब थी; किन्तु अब श्री कज़िन्सके उस कुख्यात परिपत्रसे[1] स्थिति एकदम संकटापन्न हो गई है, जिसमें यहाँतक कहा गया है कि भारतीय आदतन अनैतिक उद्देश्योंसे स्त्रियोंको नेटालमें लाया करते हैं; यद्यपि भारतीय समाजके गत इतिहासमें ऐसे आरोपके लिए कोई आधार नहीं है। स्थिति जैसी है, वैसी नहीं रहने दी जा सकती, और न दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीय समाज, जिसे न्याय और प्रशासन-सम्बन्धी भयंकर भूलोंके कारण इतनी भारी हानि उठानी पड़ती है, उस अपमान और तिरस्कारको ही [चुपचाप] बरदाश्त कर सकता है जो इन भूलोंके सबबसे उसपर लाद दिया जाता है। इस मामलेका साम्राज्य-सरकारकी प्रतिष्ठासे बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। भारतीयोंके जिस वैयक्तिक कानूनकी सुरक्षाकी १८५८ में घोषणा की गई थी वह उनपर, वे ब्रिटिश साम्राज्यमें कहीं भी चले जायें, सर्वत्र लागू होती है और महामहिम सम्राट्के मन्त्रियोंने विलम्बसे ही सही, यह अनुभव करके बुद्धिमानीका काम किया है कि परिवारोंके विभाजन और घरेलू बन्धनोंका उच्छेद करनेवाली शर्मनाक बातोंको चलने देनेसे साम्राज्य-सरकारके गौरवको बड़ी हानि पहुँचेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-९-१९१२

1. देखिए "नया मुल्ला", पृष्ठ २७४-७६।

२८०. प्रवासी अधिकारियोंके कान फिर खींचे गये

सर्वोच्च न्यायालयके केप प्रान्तीय डिवीजनके सामने नाथा ऊकाकी[1] अपीलने, जिसका फैसला पत्रमें अन्यत्र दिया जा रहा है, फिर एक बार अदालतको उक्त प्रान्तके और प्रसंगवश, संघके अन्य प्रान्तोंके प्रवासी कानूनोंके मौजूदा अमलके तरीकेपर अपने विचार प्रकट करनेका मौका दिया। दक्षिण आफ्रिकाके उन वैध भारतीय निवासियोंको, जो यहाँ वापस आकर अपने पुराने स्थानोंमें रहना चाहते हैं, परेशान करनेकी अधिकारियोंकी नीतिकी अदालतने फिर कड़ी आलोचना की है; और इस प्रकार उन तमाम कटु शिकायतोंको पूरी तरह सही साबित कर दिया है जो संघमें सरकार द्वारा बार-बार प्रवासी कानूनकी भावनाको भंग करनेके विरुद्ध सर्वत्र सुनाई देती हैं।[2] अभी हाल ही में केपकी अदालतोंने इस प्रान्तके कुछ ऐसे अधिवासी भारतीयोंको, जो अपने [बाहर जानेके अस्थायी] अनुमतिपत्रोंकी अवधि समाप्त होनेके कुछ दिन बाद यहाँ पहुँचे थे, निषिद्ध प्रवासी करार देकर इस प्रान्तमें प्रवेश देनेसे इनकार कर दिया था। उन्हें देर कुछ ऐसे कारणोंसे हो गई थी, जिनपर उनका कोई वश नहीं था, और इन कारणोंमें से कुछकी वजह तो नेटालके प्रवासी अधिकारीकी टालमटोलकी नीति थी। इससे सम्बन्धित कानूनके जिस मसविदेके अगले अधिवेशनमें पेश किये जानेका वचन दिया गया है, उसपर विचार करते समय शाही सरकार तथा भारतकी सरकारको ऐसे मामले ध्यानमें रखने होंगे। जिस मामलेकी चर्चा यहाँ हो रही है, उसमें अपील करनेवाला व्यक्ति, जाहिर है, खर्चीली मुकदमेबाजीका बोझ बर्दाश्त कर सकनेमें समर्थ था; लेकिन यह सुविधा पुन:प्रवेशकी प्रार्थना करनेवाले औसत गरीब व्यक्तिको तो नहीं होती। जिस कानूनके बनानेकी बात सोची गई है, उसमें हमारे विचारसे ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि सर जॉन बुकाननने अधिकारियोंकी जैसी भारी भूलोंकी निन्दा की है, वैसी भूलोंका निराकरण जल्दी और कम खर्चमें हो सके। हमारा यह विश्वास है कि सम्राट्की सरकार ऐसी व्यवस्था करा देना अपना कर्त्तव्य मानेगी। इस सालके उस विधेयकमें, जो अब खत्म हो गया है, जिन तथाकथित अपील निकायोंकी कल्पना की गई थी वे तो निरर्थक ढकोसले ही थे; समुचित न्याय करना है तो उनके स्थानपर कोई अधिक सक्षम प्रणाली लानी होगी। प्रवासी-विभागके "क्षुद्र तानाशाह" अपने निरंकुश और मदान्ध शासनसे दक्षिण

१. केपका एक व्यापारी; ईस्ट लन्दनकी किसी पेढ़ीमें अपनी साझेदारी छोड़कर १९०६ में भारत गया। जुलाई १९११ में लौटा, किन्तु उसे जहाजसे उतरने नहीं दिया गया। अपील करनेपर उक्त अदालतने प्रवासी अधिकारीके रवैयेकी निन्दा करते हुए उसके पक्षमें फैसला दिया और खर्च दिलाया। न्यायमूर्ति बुकाननने फैसलेमें कहा, "ऐसे मामलोंमें कानूनके शब्द" की अपेक्षा "कानूनकी आत्माका विवेकपूर्ण अनुसरण" कहीं अच्छा होगा। इंडियन ओपिनियन, २८-९-१९१२।

२. देखिए "अधिकारियों द्वारा कानूनकी अवज्ञामें वृद्धि", पृष्ठ ३२४-२५।

आफ्रिकाके भारतीयोंके महत्वपूर्ण अधिकारों और अत्यन्त अन्तरंग हितोंको नष्ट-भ्रष्ट कर रहे हैं और अपने इस अनाचारमें उन्हें, जैसा कि विदित है, एक ऐसी सरकारका समर्थन प्राप्त है, जो शाही सरकारके निकट भारतीय समाजके हितोंका बहुत ध्यान रखनेका ढोंग करती है। भारतीय इस स्थितिको कभी गवारा नहीं कर सकते।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-९-१९१२

२८१. माननीय श्री गोखलेका शुभागमन

रायटरने घोषणा की है कि माननीय श्री गोखले "डोवर कैसल"[1] जहाजसे दक्षिण आफ्रिकाके लिए आज रवाना होंगे और इस मासकी २६ तारीखके आसपास केप टाउन पहुँच जायेंगे। उनके उचित स्वागतकी तैयारीके लिए विभिन्न स्वागत-समितियोंके पास समय बहुत ही थोड़ा है; फिर भी हमें भरोसा है कि उनके आगमनको सफल और सुखद बनानेके लिए वे कुछ भी उठा नहीं रखेंगी। जान पड़ता है कि रवाना होनेसे पहले ही दक्षिण आफ्रिकाके जाति-विद्वेषका पूरा बोझ श्री गोखलेके सिरपर लाद दिया गया है; क्योंकि सुनते हैं कि यूनियन कैसल कम्पनीने उनसे यह कह दिया कि यदि आप पूरी कोठरी (कैबिन) का किराया देनेको राजी न होंगे तो हम आपको नहीं ले जायेंगे, "क्योंकि हो सकता है, कोई भी यूरोपीय यात्री आपके साथ उस कोठरीमें चलना पसन्द करे।" हमें यह विश्वास नहीं था कि इंग्लैंडमें भी कोई ऐसी निर्लज्ज धृष्टता कर सकेगा, परन्तु इस घटनासे स्पष्ट हो गया कि दक्षिण आफ्रिकी वर्ण-विद्वेषका प्रभाव कितना दूर-व्यापी है। जैसी कि आशा थी, श्री गोखलेने कम्पनीकी शर्त माननेसे साफ इनकार कर दिया, और कुछ लिखा-पढ़ीके बाद कम्पनीने यह शर्त छोड़ दी।[2] सिद्धान्तके प्रति ऐसी दृढ़ताके कारण श्री गोखले इस देशके भारतीयोंमें और भी प्रिय हो जायेंगे तथा उनके उदाहरणसे उन्हें भी अवसर पड़नेपर भारतके नाम और मानके लिए ऐसा ही करनेकी प्रेरणा मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-१०-१९१२

१. वे 'डोवर कैसल' के बजाय 'सेक्सन' से रवाना हुए और उनके २२ अक्तूबर, १९१२ को केप टाउन पहुँचनेकी आशा थी।

२. गोखलेके ही शब्दोंमें घटनाकी विस्तृत जानकारीके लिए देखिए परिशिष्ट २०।

२८२. पत्र: हरिलाल गांधीको

[लॉली]
आश्विन सुदी ६ [अक्तूबर १६, १९१२][1]

चि० हरिलाल,

कई महीनोंके बाद मुझे तुम्हारा पत्र मिला है, लगता है मैंने तुम्हें जो पत्र लिखे थे, वे तुम्हें मिले नहीं।

मैंने आदरणीय रेवाशंकरभाईको तुम्हारे कांग्रेसमें सम्मिलित होनेके बारेमें लिखा है।[2]

सोरावजीके सम्बन्धमें मैंने जो कदम उठाया है उसे तुम समझ नहीं पाये हो। मुख्य बात यह है कि वे पारसी हैं और एक हिन्दूका उन्हें प्रोत्साहन देना शोभाकी बात है। अगर सोरावजी वैरिस्टर हो जाते हैं तो उनका उत्तरदायित्व बढ़ेगा। सोरावजीकी सेवाओंका विशेष उपयोग नहीं किया जा सकता, मेढकी सेवाओंका किया जा सकता है। इसीलिए मैं मेढको वैरिस्टर होनेमें प्रोत्साहन नहीं देता। तुम्हें तो दे ही कैसे सकता हूँ? तुम्हें दूँ तो मेरे सारे विचारोंपर पानी फिर जायेगा। लेकिन मेरे विचार फिलहाल तुम्हें पसन्द नहीं आयेंगे। जब मिलेंगे तब विचार विमर्श करेंगे। अभी तो इतना ही काफी है कि तुम स्वतन्त्र रूपसे अपने चरित्रका निर्माण करो। मुझे विश्वास है, भविष्यमें तुम अपने विचारोंमें परिवर्तन कर सकोगे।

जहाँतक चंचलकी बात है तुम पुनः वासनाके शिकार बन चुके हो। मैं यह सब अच्छी तरह समझता हूँ। इसमें अहमदाबाद [वातावरण] का कोई दोष नहीं है। यह बात है ही ऐसी कुछ कठिन कि एक महान प्रयत्न तथा सतत जागरूकताके बिना इसे उपलब्ध कर पाना असम्भव ही है। परन्तु यदि तुम अपने प्रयत्नमें लगे रहे तो किसी दिन इस पतनकारी वासनापर अवश्य ही विजय पा सकोगे। और यदि तुम इसमें सफलता पा सके तो अपनेको एक बदला हुआ व्यक्ति ही पाओगे और अपनेमें एक नई चेतनाका अनुभव करोगे। तुम्हारे पत्रसे लगता है कि चंची अब कुछ वर्षोंतक यहाँ नहीं आ सकेगी।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ९५४४) की फोटो-नकलसे।

१. तीसरे अनुच्छेदमें गांधीजी इस बातकी चर्चा करते हैं कि उन्होंने डॉक्टर मेहताके खर्चेसे इंग्लैंडमें बैरिस्टरी पढ़नेके लिए सत्याग्रहियोंमें से सोरावजी शापुरजी अडाजानियाको क्यों चुना है; देखिए "पत्र: मगनलाल गांधीको", पृष्ठ १ और "पत्र: डॉ० प्राणजीवन मेहताको", पृष्ठ ६५। सोरावजी वकालतकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए २१ जुलाई, १९१२ को लन्दनके लिए रवाना हुए। उस वर्ष आश्विन सुदी ६ को अक्तूबरकी १६ तारीख पड़ी थी।

२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

२८३. श्री गोखलेका आगमन

फिलहाल जितना-कुछ मालूम हो सका है, उसके अनुसार माननीय श्री गोखलेका जोहानिसवर्ग-आगमनसे सम्वन्धित कार्यक्रम इस प्रकार है: श्री गोखले डायमंड एक्सप्रेससे आ रहे हैं; उनकी अगवानीके लिए लगभग ५०० आदमी २७ तारीखको रात्रिके १० वजे एक स्पेशल ट्रेन द्वारा पार्क स्टेशनसे क्लार्क्सडॉर्प रवाना होकर वहाँ लगभग २ वजे सवेरे जा पहुँचेंगे। किम्बर्लेसे खास तौरपर श्री गोखले और उनके दलके लिए नियत किया गया डिब्बा उक्त एक्सप्रेससे काटकर इस स्पेशलमें जोड़ दिया जायेगा। क्लार्क्सडॉर्पमें श्री गोखलेको एक मानपत्र दिया जायेगा और मुमकिन है, शहरमें उनका जुलूस भी निकले। प्रातःकाल १० वजे स्पेशल गाड़ी क्लार्क्सडॉर्पसे वापस लौटेगी और लगभग दोपहरको पॉचेफस्ट्रूम पहुँचेगी। वहाँ वे काफी देर तक रुकेंगे ताकि उन्हें स्थानीय समाजका मानपत्र भेंट किया जा सके और वे किसी गाड़ीमें प्रायोगिक फार्म तक ले जाये जा सकें। इसके वाद उनकी स्पेशल क्रूगर्सडॉर्पके लिए चल पड़ेगी। वहाँ स्थानीय जनताको मानपत्र प्रदान करनेका अवसर देनेके विचारसे श्री गोखलेका एक और छोटा-सा मुकाम होगा। इसके वाद गाड़ी विना कहीं रुके सीधे पार्क जायेगी और सायंकाल ठीक ४ वजे वहाँ पहुँच जायेगी। यहाँ (भारतीय समाजके अलावा) जोहानिसवर्गके महापौर तथा अन्य यूरोपीय नागरिक उनकी अगवानी करेंगे। तब उनका दल इसी अवसरके लिए स्टेशनपर बनाये गये सभा-मंचकी ओर जायेगा और वहाँ नगरके महापौरकी अध्यक्षतामें मानपत्र दिये जायेंगे। केवल ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा दिया जानेवाला मानपत्र ही पढ़ा जायेगा; हमीदिया इस्लामिया अंजुमन, हिन्दू-समाज, तमिल कल्याण समिति और पाटीदार संघ आदि विभिन्न समाजोंके दूसरे मानपत्र उनके अध्यक्षों द्वारा बिना पढ़े ही श्री गोखलेको औपचारिक रूपसे भेंट कर दिये जायेंगे। इस दृष्टिसे कि कार्यक्रम एक घंटेमें पूरा हो जाये ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षीय भाषणको छोड़कर स्वागत-समितिकी ओरसे कोई भाषण नहीं होगा। अन्तमें माननीय महापौर महोदय दो शब्द कहेंगे और माननीय श्री गोखलेसे प्रत्युत्तरके लिए निवेदन करेंगे। और तब राष्ट्रगीतके साथ सभा विसर्जित होगी। ३० तारीखको यूरोपीय समितिकी बैठक श्री हॉस्केनके घरपर होगी ताकि श्री गोखले समिति [के सदस्यों] से मिल सकें और समग्र भारतीय समस्यापर चर्चा की जा सके। ३१ को मैसॉनिक भवनमें एक दावत होगी। गोरे नगरवासी भी श्री गोखलेसे मिल सकें, ऐसी व्यवस्था की जा रही है। भारतीय नारी समाज एक प्रीतिभोजका आयोजन कर रहा है, जिसका समय और स्थान निश्चित होनेको है। शनिवार और रविवार श्री गोखले टॉल्स्टॉय फार्ममें वितायेंगे। आगामी सप्ताह वे मन्त्रियोंसे भेंट करेंगे और तदनन्तर शीघ्र ही नेटाल रवाना हो जायेंगे। श्री कैलेनवैकने माउण्टेन व्यूका अपना

मकान भारतीय समाजको दे रखा है; और शहरमें भी श्री गोखलेके लिए कुछ स्थान निश्चित कर लिये गये हैं, जहाँ वे दिनमें भेंट करनेवालोंसे मिल सकें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१०-१९१२

२८४. भेंट : 'केप आर्गस' को[1]

केप टाउन
अक्तूबर २२, १९१२

श्री गोखलेकी यात्राके सम्बन्धमें आर्गसके प्रतिनिधि द्वारा पूछे जानेपर श्री गांधीने कहा कि यद्यपि वे यहाँ भारत-सरकारकी जानकारीमें आये हैं, किन्तु आये वे बिलकुल अपनी मर्जीसे ही हैं। उन्होंने साम्राज्यके हितैषीके रूपमें इसे अपना कर्त्तव्य समझा कि वे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके समूचे प्रश्नकी स्वयं जाँच करें और संघके मन्त्रियोंसे परिचय प्राप्त करें। श्री गोखलेने अभी यह तय नहीं किया है कि वे किन-किन मुद्दोंपर विचार-विनिमय करना अथवा कराना चाहते हैं। केप, ट्रान्सवाल और नेटालकी कुछ स्थायी शिकायतोंको छोड़कर अन्य बड़े प्रश्न हैं भी नहीं। मैं यह आशा नहीं करता कि श्री गोखलेके यहाँ आनेसे ये सब प्रश्न अन्तिम रूपसे तय हो जायेंगे। ये प्रश्न इतने बड़े हैं कि किसी प्रमुख विधायकके केवल एक बार आ जानेसे तय नहीं हो सकते। किन्तु मैं आशा करता हूँ कि श्री गोखलेके आनेसे यूरोपीयों और भारतीयोंमें सद्भाव बढ़ेगा और दोनों जातियाँ एक-दूसरेके प्रति अधिक अच्छा रुख ग्रहण करेंगी। निस्सन्देह श्री गोखले यहाँ जो सदुद्देश्य लेकर आये हैं यह भी उसका एक भाग है। श्री गोखलेने मुझे बताया है कि दक्षिण आफ्रिकी प्रश्नपर भारतमें बहुत क्षोभ है और भारतके समस्त वर्ग इस प्रश्नपर जितने एकमत हैं उतने किसी अन्य प्रश्नपर नहीं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१०-१९१२

२८५. भाषण : केप टाउनमें गो० कृ० गोखलेकी स्वागत-सभामें[2]

अक्तूबर २२, १९१२

मेयर (श्री हैरी हैंड्स) ने सभाकी अध्यक्षता की,. . . डॉ० अब्दुर्रहमान और एशियाई समाजके अन्य नेता भी मंचपर बैठे हुए थे।

मेयरने कार्रवाई आरम्भ करते हुए कहा कि हम यहाँ महामहिम सम्राट्के एक बहुत ही विशिष्ट भारतीय प्रजाजनका स्वागत करनेके लिए इकट्ठे हुए हैं। आप

१. यह भेंट २२ अक्तूबरको केप टाउनमें श्री गोखलेके आगमनके तुरन्त बाद दी गई थी।

२. यह स्वागत-समारोह केप टाउनके सिटी हॉलमें किया गया था जिसमें कुछ प्रमुख गोरे भी उपस्थित थे और विविध संस्थाओंकी ओरसे मानपत्र दिये गये थे।

भारतके वाइसरॉयकी कौंसिलके सदस्य हैं, और मेरा विश्वास है कि आप निजी तौरपर दक्षिण आफ्रिकी संघमें संघ-सरकारकी पूर्ण सहमतिसे एक ऐसे आर्थिक मसलेकी जाँच करने आये हैं जो हमारे मध्य उत्पन्न हो गई है और जिसे लेकर हमारे साथी भारतीय प्रजाजन कुछ समयसे परेशानीका अनुभव कर रहे हैं। मुझे दक्षिण आफ्रिकाके इस प्रथम नगरमें आपका स्वागत करते हुए प्रसन्नता हो रही है और मैं यह आशा प्रकट करता हूँ कि आपके कार्यके परिणामस्वरूप यह कठिनाई ऐसे ढंगसे हल हो जायेगी, जो सभी सम्बन्धित जनोंके लिए सन्तोषजनक होगा (तालियाँ). . .

श्री मो० क० गांधीने कहा, श्री गोखलेका नाम मेरे लिए एक पवित्र नाम है। वे मेरे राजनीतिक गुरु हैं। और दक्षिण आफ्रिकामें, जिसका मैं नागरिक होनेका दावा करता हूँ, अपने देशभाइयोंकी यत्किंचित् सेवा श्री गोखलेके कारण ही कर सका हूँ। (हर्षध्वनि)। दक्षिण आफ्रिकाका यह प्रश्न उनके लिए नया प्रश्न नहीं है। किन्तु हमारे प्रेमका कारण उस प्रश्नमें उनकी रुचि ही नहीं है, बल्कि उसका कारण वे काम हैं जिन्हें वे जीवन-भर करते रहे हैं। यद्यपि वे भारत सरकारकी स्पष्ट आलोचना करते हैं, किन्तु वे उसके मित्र भी हैं। (तालियाँ)। मेरे खयालसे यह एक आशाप्रद लक्षण है कि यहाँ इस सभामें, जिसकी अध्यक्षता मेयर कर रहे हैं, सभी जातियोंके प्रतिनिधि आये हैं। श्री गोखलेका जो सत्कार किया गया है, उससे प्रकट होता है कि यूरोपीय और भारतीय समाजोंमें करारी टक्करोंके बावजूद कटुता उत्पन्न नहीं हुई है। जहाँ-जहाँ ये सभाएँ की जानेवाली हैं, उन सभी शहरोंके मेयरोंने अध्यक्षता करनेका अपना इरादा व्यक्त किया है। श्री गोखले दोनों समाजोंको निकटतर लानेमें हमारी सहायता करने आये हैं और आप उनके कार्यसे जान जायेंगे कि इस देशके पीछे दूसरा एक ऐसा देश भी है जिसके लोग यहाँ स्थित अपने प्रतिनिधियोंपर ध्यान लगाये हुए हैं। हम जानते हैं कि इसी प्रश्नके सम्बन्धमें अगले वर्ष किसी समय महाविभव आगा खाँके आनेकी आशा की जाती है।[1] ब्रिटिश भारतीय संघको उनका एक पत्र अभी मिला है, जिसमें उन्होंने अपना यह विचार प्रकट किया है कि वे उस प्रश्नका, जहाँतक वह उनके यहाँ बसे हुए देशवासियोंको प्रभावित करता है, अध्ययन स्वयं करनेके लिए दक्षिण आफ्रिका आ रहे हैं। किन्तु मैं कुछ शब्द चेतावनीके रूपमें कहना चाहता हूँ और वे ये हैं कि हममें से कितने ही लोग अज्ञानवश यह झूठी आशा बाँधे हुए हैं कि श्री गोखलेकी यात्रा कोई जादू कर देगी और उससे उनकी सब निर्योग्यताएँ लुप्त हो जायेंगी। मैं आशा करता हूँ कि मेरे देशवासी ऐसी अपेक्षाएँ नहीं करेंगे या यदि उनकी ऐसी अपेक्षाएँ हैं तो उन्हें त्याग देंगे। श्री गोखले अवश्य हमारी सहायता करेंगे, किन्तु हमें यह स्मरण रखना है कि अपने पैरोंपर खड़े होनेसे अधिक मूल्यवान कोई वस्तु नहीं है। (तालियाँ)। हमें

१. देखिए "भाषण : ब्रिटिश भारतीय संघकी सभामें", पृष्ठ ३०९।

अपने कष्टमोचनका उपाय स्वयं ही करना होगा। श्री गोखले और श्री श्राइनर[1]-जैसे व्यक्ति तो समस्याके हलकी दिशामें केवल संकेत ही कर सकते हैं और हमारा रास्ता आसान बना सकते हैं। हम जिसके योग्य नहीं हैं, ऐसी कोई वस्तु हमें नहीं मिल सकती। और हमें अपने पिछले कार्योंका फल भी समय आनेपर ही मिल पायेगा। (जोरोंकी तालियाँ)।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २-११-१९१२

२८६. भाषण : किम्बर्लेकी सभामें[2]

[अक्तूबर २५, १९१२]

श्री गांधीने कहा कि यह एक पवित्र और स्मरणीय अवसर है। उन्होंने श्री गोखलेकी विनयशीलता, स्वयंको खपा देनेके गुण, अतिशय भारत-प्रेम और उस भारत-

१. विलियम फिलिप श्राइनर (१८५७-१९१९); प्रसिद्ध लेखिका ऑलिव श्राइनरके भाई; गांधीजीका ध्यान उनकी न्याय-भावना और भारतीयोंके प्रति मैत्रीके भावकी ओर गया था; रोड्सके दूसरे मन्त्रिमण्डलके सदस्य, १८८३; बैरिस्टर और एक समयके वकील-संघके नेता; ये दो बार अटर्नी-जनरल रहे; केप कालोनीके प्रधानमन्त्री, १८९८-१९००; दक्षिण आफ्रिकाके इतिहासकार एरिक वाकरने उन्हें संघवादका प्रमुख समर्थक बताया है; उन्होंने १९०९ में दक्षिण आफ्रिकी [संघ] अधिनियमके मसविदेके खण्ड ३५ का, जो केपके रंगदार लोगोंको मताधिकारसे वंचित करता था, तीव्र विरोध किया; उनकी ओरसे इंग्लैंड गये और लॉर्ड सभामें दक्षिण आफ्रिकाके एकीकरणके विधेयकके स्वीकृत हो जानेपर भी प्रयत्न करते रहे; देखिए खण्ड ९, पृष्ठ २७२, ३३८ और ३६४। मार्च १९११ में गांधीजीने संघीय प्रवासी विधेयक (यूनियन इमिग्रेशन ऐक्ट)के सम्बन्धमें उनसे सलाह करनेका विचार किया; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ४५९ और ४७१। **इंडियन ओपिनियनके** स्वर्णांक (१९०६-१४) में उनके भारतीय समाजके प्रति न्यायके लिए सतत् संघर्षका उल्लेख है। ये १९१४ में इंग्लैंडमें दक्षिण आफ्रिकी संघके उच्चायुक्त नियुक्त किये गये। देखिए **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास,** अध्याय ५ भी।

२. श्री गो० कृ० गोखलेके सम्मानार्थकी गई यह सभा टाउन हॉलमें हुई थी। सभा-भवन भारतीय समाजके सदस्योंसे ठसाठस भरा था और जहाँ-तहाँ यूरोपीय सज्जन भी बड़ी संख्यामें बैठे हुए थे। सभाकी अध्यक्षता मेयरने की। उनके स्वागत-भाषणके बाद श्री गोखलेको भारतीय समाजकी ओरसे एक मानपत्र भेंट किया गया। दक्षिण आफ्रिकामें दिये गये अपने इस पहले सार्वजनिक भाषणमें श्री गोखलेने नेटालमें गिरमिट प्रथाके बन्दकर दिये जानेपर सन्तोष प्रकट किया। उन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके प्रश्नकी संक्षेपमें चर्चाकी और कहा कि वे कोई मत प्रकट करनेसे पूर्व इस प्रश्नको सभी दृष्टियोंसे समझ लेना चाहते हैं। इस घटनाकी स्मृति अवश्य ही गांधीजीकी प्रिय स्मृति रही होगी। तभी तो कई वर्ष बाद यरवदा जेलमें किसी टीपके बिना ही उस अवसरपर श्री गोखलेने जो भाषण दिया वे उसका स्मरण इस प्रकार करते हैं: "वह संक्षिप्त, सुलझा हुआ और दृढ़ताके साथ-साथ शिष्टतापूर्ण था। उसे सुनकर भारतीय प्रसन्न और यूरोपीय मुग्ध हुए।" गांधीजी आगे कहते हैं, "मैंने सीनेटके सदस्य डब्ल्यू० पी० श्राइनरसे अध्यक्षका पद ग्रहण करनेकी प्रार्थना की. . . और उन्होंने कृपा करके उसे स्वीकार कर लिया।" देखिए **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास,** अध्याय ३६। यद्यपि श्राइनर उस अवसरपर बोले थे और सभाके प्रमुख वक्ता थे, किन्तु अध्यक्षता मेयरने की थी।

प्रेमको अक्षुण्ण रखते हुए मानव-जाति और साथ ही उनके उस साम्राज्यके प्रति, जिसके वे अत्यन्त प्रमुख नागरिक हैं, प्रेमकी बड़ी प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि मैं उन्हें एक राजनीतिक सम्पदा मानता हूँ। उन्होंने फर्ग्युसन कॉलेजके लिए और शिक्षाके निमित्त श्री गोखलेकी सेवाओं और उनके त्यागोंका प्रशंसापूर्ण शब्दोंमें उल्लेख किया। उन्होंने गौरव प्रदर्शित करते हुए कहा कि यदि श्री गोखले अंग्रेज होते तो उन्हें वही पद मिला होता जो इस समय श्री ऐस्क्विथको प्राप्त है और यदि कहीं फ्रांसमें उत्पन्न हुए होते तो वे फ्रांसीसी गणतन्त्रके अध्यक्ष होते। उन्होंने यह आशा प्रकट की कि उनके इस कार्यके परिणामस्वरूप दक्षिण आफ्रिका-निवासी यूरोपीयों और भारतीयोंमें सद्भाव बढ़ेगा। उन्होंने अपने देशवासियोंको चेतावनी देते हुए कहा कि हम श्री गोखलेकी यात्रासे झूठी आशाएँ और अपेक्षाएँ न रखें। श्री गोखले हमारे बीच आये हैं, किन्तु केवल इसीसे भारतीय समाजमें सुख-समृद्धिका युग प्रारम्भ न हो जायेगा और न हम यही आशा करते हैं कि उनकी समस्त निर्योग्यताएँ छूमन्तर हो जायेंगी। फिर भी उनके आगमनसे सद्भाव बढ़ सकता है, और हम एक-दूसरेको अधिक अच्छी तरह समझने लग सकते हैं। उससे उस बड़ी समस्याके हलकी सम्भावना भी बढ़ जायेगी जो दक्षिण आफ्रिकाके ही सम्मुख नहीं, बल्कि समस्त साम्राज्यके सम्मुख उपस्थित है। उपाय तो मुख्यतः भारतीयोंके ही हाथोंमें है। (तालियाँ)।

[अंग्रेजीसे]

डायमंड फील्ड्स ऐडवर्टाइज़र, २६–१०–१९१२

२८७. भाषण: किम्बर्लेमें गोखलेको दिये गये भोजके अवसरपर[1]

[अक्तूबर २६, १९१२]

. . . श्री गांधीके खड़े होते ही लोगोंमें हर्षकी लहर दौड़ गई। उन्होंने कहा कि श्री ऑलिवर हमसे मिलने आये थे और उन्होंने विनोदमें कहा था कि श्री गोखले अपने साथ वर्षा लेकर आये हैं, जिसके लिए किम्बर्लेका तृषित प्रदेश इतना तरस रहा था। यदि उनका कहना सही है तब तो हमारा इस शामके अपने मेहमानके सम्मानमें शुभकामनाका आपानक लेना[2] बहुत ही उपयुक्त है। आशा है कि वर्षा मेरे निवास-स्थान, जोहानिसबर्ग तक ही नहीं बल्कि संघ-भरमें पहुँची होगी। उन्होंने

१. सम्मान-भोज किम्बर्लेके भारतीयोंने दिया था और बेकन्सफील्डके मेयर टी० प्रैटलेने उसकी अध्यक्षता की थी। वक्ताओंमें किम्बर्लेके मेयर डब्ल्यू० गैसों, कैलेनबैक, काछलिया और श्री गोखले थे। "स्थानीय इतिहासमें यह पहला ही अवसर है जब यूरोपीय और भारतीय एक ही भोजमें शामिल हुए हैं . . .।"

२. मूलमें "ड्रिंक द टोस्ट ऑफ द गेस्ट ऑफ द इवनिंग"।

कहा कि हम भारतीय अंध-श्रद्धालु माने जाते हैं; मुझे यकीन है कि इस मामलेमें मेरे अधिकांश देशवासी मेरी ही तरह अंध-श्रद्धालु होंगे और मानते होंगे कि इस चिर-प्रतिक्षित वर्षाको श्री गोखले ही अपने साथ लाये हैं। (तालियाँ)। परन्तु मेरे खयालसे एक और कारण भी है, जिससे कि स्वागत-समितिके निमन्त्रणको स्वीकार करके आनेवाले कृपालु यूरोपीय मित्रों और मेरे अपने देशवासियों, दोनोंके द्वारा शुभ-कामनाके इस आपानकका स्वागत किया जाना चाहिए। श्री ओट्सने हमारे आजके मेहमान और उनके साथियोंको अपनी विशाल खान देखनेके लिए आमन्त्रित किया था। उनके साथ वहाँ जानेपर मैंने जो बड़ी-बड़ी मशीनें देखीं, मैं उनकी विशालतासे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। समारोहमें उपस्थित मेरे कुछ मित्र जानते हैं कि मैं मशीनोंमें विश्वास नहीं करता। मैं अपनेतईं तो यह मानता हूँ कि यदि किम्बर्लेमें हीरे और मशीनें न होतीं तो भी किम्बर्लेसे मेरा काम चल जाता। मैं लाखोंकी धनराशि और हीरोंमें विश्वास नहीं करता। परन्तु वहाँ मुझे लगा कि मैं हीरोंके सम्राटोंके सामने खड़ा हूँ और इसलिए उनके सामने मेरा सिर झुक गया। उन मशीनोंको देखकर मेरे दिमागमें एक विचार जोरोंसे उठा कि यदि सभी मनुष्य इस अद्भुत और विशालकाय मशीनकी भाँति ही मिलकर काम करने लगें तो मानव-परिवार कितना सुखी हो जाये। तब सचमुच ही तलवारोंको गलाकर हलोंके फाल ढाल लिये जायेंगे और शेर और बकरी दोनों एक ही घाट पानी पीने लगेंगे। मुझे यह भी लगा कि यदि उस विशालकाय मशीनका एक पेंच भी ढीला पड़ जाये तो शायद पूरी मशीनके जोड़ खुल जायेंगे। इस बातको मनुष्योंपर घटा कर देखें तो ऐसे उदाहरण बहुधा सामने आते रहते हैं कि शोर-गुल मचानेवाला कोई एक ही व्यक्ति पूरी सभाको छिन्न-भिन्न कर देता है और परिवारका एक ही आवारा सदस्य पूरे परिवारकी इज्जत धूलमें मिला देता है। दूसरी ओर, यदि मशीनके मुख्य-मुख्य पुर्जे अपना काम ठीक करते रहते हैं तो हम देखते हैं, दूसरे पुर्जोंमें भी पारस्परिक मेल कायम रहता है और सब अपना काम ठीक करते रहते हैं। श्री गांधीने कहा कि श्री गोखले एक पवित्र उद्देश्य लेकर आये हैं और मुझे इस बातपर गर्व है कि श्री गोखलेके निमित्तसे किम्बर्लेमें एक ही दस्तरखानपर यूरोपीयों और भारतीयोंके सबसे प्रमुख प्रतिनिधियोंके साथ-साथ बैठने-जैसी बड़ी चीज हुई। आशा है, अब आये दिन ऐसे आयोजन हुआ करेंगे। अलबत्ता, मैं टॉल्स्टॉयके जीवन और उनकी शिक्षाओंके एक विनम्र विद्यार्थीके नाते यह भी महसूस करता हूँ कि इस प्रकारके भोज अनावश्यक हैं और कभी-कभी इनसे बड़ी हानि होती है — चाहे वह हानि पाचन-क्रियाकी गड़बड़ीके रूपमें ही क्यों न हो। (हँसी)। परन्तु टॉल्स्टॉयका शिष्य होनेके बावजूद यदि इस प्रकारके भोज हमें करीब लाते हैं और एक-दूसरेको और अच्छी तरह समझनेमें हमें मदद देते हैं तो मैं इस समय तो ऐसे भोजोंकी उपयोगिता माननेको तैयार हूँ। मुझे एक श्रेष्ठ भजनकी पंक्तियां याद आती हैं — "जब यह कुहासा छँट जायेगा, तब

हम एक-दूसरेको और अच्छी तरह जानेंगे-समझेंगे।"[1] और मेरे विचारमें, हम मतभेद होते हुए भी अज्ञानका कुहासा छँटनेपर एक-दूसरेको ज्यादा अच्छी तरह समझ सकेंगे। मेरे प्रतिष्ठित देशवासी श्री गोखले अज्ञानके उसी कुहासेको हटानेके लिए दक्षिण आफ्रिका आये हैं। आपके सामने भारतने अपनी निधिमें से यह सर्वाधिक कान्तिमय मणि प्रस्तुत की है। मैं जानता हूँ कि श्री गोखलेके कर्त्तव्य और उपलब्धियोंकी चर्चा [उन्हींके सामने] करनेसे उन्हें बहुत अटपटा लगता है, परन्तु मुझे यह कष्टकर कर्त्तव्य निभाना ही पड़ेगा। बात यह है कि श्री गोखलेने भारतके राजनीतिक क्षेत्रमें जो-कुछ किया है, उसके बारेमें जितना मैं बतला सकता हूँ उतना कोई और नहीं बता सकता। वे श्री गोखले ही हैं, जिन्होंने नाममात्रके पारिश्रमिकपर अपने जीवनके २० वर्ष शिक्षा-कार्यमें खपा दिये। श्री गोखले चाहते तो बड़ी सम्पत्ति खड़ी कर सकते थे, लेकिन वे आज भी गरीबीका जीवन बिताते हैं। उन्होंने जब भी सार्वजनिक संस्थाओंके लिए हाथ पसारा तभी लोगोंने उनको सैकड़ों पौंड दे दिये। भारतका वाइसरॉय अपने कन्धोंपर साम्राज्यकी जिम्मेदारियाँ पाँच वर्ष तक सँभालता है (कोई लॉर्ड कर्जन हो तो सात वर्ष तक सँभाल सकता है); सो भी तब, जब उसकी सहायताके लिए अनेकानेक कर्मचारी रहें। परन्तु हमारे देशके ये स्वनामधन्य सज्जन बिना किसी सहायता, बिना किसी सहायक कर्मचारी और बिना किसी पुरस्कारके अपने कन्धोंपर अकेले ही साम्राज्यका भार सँभाले हुए हैं। हाँ, यह ठीक है कि उनको "सी० आई० ई०" की उपाधिसे विभूषित किया गया है; पर मेरा खयाल है कि वे इससे कहीं बड़ी उपाधिके योग्य हैं। श्री गोखले जिस भूषणको अपने हृदयमें सबसे ऊँचा स्थान देते हैं वह है अपने देशवासियोंके प्रति उनका प्रेम और उनकी अपनी अन्तरात्मा द्वारा उनके कार्योंका अनुमोदन। पाश्चात्य विचारोंमें दीक्षित भारतीयोंको उन्होंने विनम्रता और सज्जनता सिखाई है। (तालियाँ)।

[अंग्रेजीसे]

डायमंड फील्ड्स ऐडवर्टाइज़र, २८-१०-१९१२

१. मूल अंग्रेजी पंक्तियाँ इस प्रकार हैं: "वी शैल नो ईच अदर बेटर वेन द मिस्ट्स हैव रोल्ड अवे।"

२८८. ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे मा० श्री गोखलेको मानपत्र[1]

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर २८, १९१२[2]

माननीय गोपाल कृष्ण गोखले, सी० आई० ई०की सेवामें
जोहानिसबर्ग

महानुभाव,

ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे हम दक्षिण आफ्रिका संघ तथा विशेषतया ट्रान्सवालमें आपके आगमनपर आपका हार्दिक स्वागत करते हैं। मातृभूमिमें हमारे देशभाई आपको जिस ऊँची नजरसे देखते हैं, उसे ध्यानमें रखकर हमारे द्वारा आपका हार्दिक स्वागत स्वाभाविक ही है। इसके अतिरिक्त अन्य विशेष कारणोंसे भी हम आपके कृतज्ञ हैं।

जब सत्याग्रह अपने पूरे जोरपर था, और जब हमारे सैकड़ों देशभाई इस प्रान्तमें अपने अन्तरकी प्रेरणासे कारावासका कष्ट झेल रहे थे तब भी हमें यह ज्ञात था कि हमें पूरी तौरसे आपका सक्रिय समर्थन और सहयोग प्राप्त है। हमें मालूम है कि हमारे सत्याग्रह-कोषमें भारतसे जो बड़ी-बड़ी रकमें आईं, उसका यही कारण था कि आपने हमारे पक्षमें अपने प्रभावका उपयोग करनेमें कुछ उठा नहीं रखा। श्री पोलकने हमें बताया है कि जब वे भारतमें हमारे प्रतिनिधिके रूपमें काम कर रहे थे तब उनके लिए आपका परामर्श और मार्गदर्शन कितना अमूल्य हुआ करता था। आपके ही प्रयत्नोंसे दक्षिण आफ्रिकाके लिए गिरमिटिया भारतीय मजदूरोंकी भर्ती बन्द हुई। इसके लिए केवल आपके देशवासी ही कृतज्ञ नहीं हैं; हमारा खयाल

१. यह अभिनन्दन और हमीदिया इस्लामिया अंजुमन, जोहानिसबर्गके हिन्दुओं, तमिल कल्याण समिति (तमिल बेनिफिट सोसाइटी), पाटीदार संघ और पीटर्सबर्गके भारतीयों द्वारा अर्पित अन्यान्य अभिनन्दनपत्र गोखलेको पार्क स्टेशन, जोहानिसबर्ग पहुँचनेपर दिये गये थे। **ट्रान्सवाल लीडर**के अनुसार इस अवसर-पर उपस्थित समुदायने वहाँ उनका "स्वागत पूर्वदेशीय उत्साह और ठाट-बाटसे" किया था और उनपर गुलाबके फूलोंकी वर्षा की गई थी। गोखले "श्री गांधीके साथ एक बहुत सजे हुए और सुन्दर गालीचेसे मण्डित मंचपर" पधारे, जहाँ "जोहानिसबर्गके मेयर और उनकी पत्नीने उनकी अगवानी की।" यह अभिनन्दनपत्र "भारत और श्रीलंकाके मानचित्रसे युक्त एक ठोस स्वर्णपत्रपर उत्कीर्ण किया गया था और उस अवसरपर केवल यही मानपत्र पढ़कर सुनाया गया था। **इंडियन ओपिनियन**, ९-११-१९१२।

२. इस शीर्षकका हमारा एक साधनसूत्र ९-११-१९१२ का **इंडियन ओपिनियन** है और उसके अनुसार गोखले २९ अक्तूबरको ही जोहानिसबर्ग पहुँचे और उसी दिन उन्हें यह तथा हिन्दू समाज द्वारा प्रस्तुत अभिनन्दनपत्र (देखिए अगला शीर्षक) दिये गये। किन्तु, हमारे एक दूसरे साधनसूत्र, अर्थात् श्री गोखलेकी यात्राकी स्मृतिमें प्रकाशित **इंडियन ओपिनियन**के विशेषाङ्कके अनुसार यह सब २८ अक्तूबरको हुआ। "१९१२ की डायरी" की एक टीपके अनुसार भी यही तिथि सही ठहरती है।

है कि दक्षिण आफ्रिकाके यूरोपीय निवासियोंने भी इस दिशामें किये गये आपके कामकी सराहना की है।

स्थितिका स्थानिक अध्ययन करनेकी दृष्टिसे यहाँ पधारकर तो आपने दक्षिण आफ्रिकासे सम्वन्वित अपने इस विशिष्ट कार्यमें चार चाँद लगा दिये हैं। यहाँ आनेमें आपको जो त्याग करना पड़ा है, उसे हम जानते हैं और वह कभी भुलाया नहीं जा सकता। हम इस आगमनके लिए आपके आभारी हैं और आशा करते हैं कि यहाँसे लौटनेपर आपके मनमें दक्षिण आफ्रिकाकी यात्राके सुखद संस्मरण आते रहेंगे। ईश्वरसे हमारी प्रार्थना है कि वह आपको दीर्घायु करे ताकि आप मातृभूमिकी सेवा, जिसे आपने उत्कट देशप्रेमकी भावनासे अपना जीवन-कार्य वना लिया है, करते रह सकें।

भवदीय,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
मो० क० गांधी
अवैतनिक मन्त्री

[अंग्रेजीसे]

'इंडियन ओपिनियन', ९-११-१९१२ तथा इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स द्वारा प्रकाशित 'ऑनरेवल मि० गोखलेज़ विज़िट टु साउथ आफ्रिका, १९१२' से भी।

२८९. जोहानिसबर्गके हिन्दुओंकी ओरसे गो० कृ० गोखलेको मानपत्र[1]

जोहानिसवर्ग
अक्तूबर २८, १९१२

माननीय गो० कृ० गोखले, सी० आई० ई०
जोहानिसवर्ग
महानुभाव,

हम जोहानिसवर्गके हिन्दू समाजके प्रतिनिधि विशेष रूपसे आपके प्रति अपनी श्रद्धा और सम्मान-भावना व्यक्त करना चाहते हैं।

आपने मातृभूमि और संसार-भरमें यहाँ-वहाँ विखरे हुए उसके पुत्रोंके कल्याणके लिए जो अथक परिश्रम किया है, हममें से प्रत्येक उससे सुपरिचित है। आपका नाम हमारे यहाँ घर-घरमें गूंज रहा है, आपकी मूर्ति हमारे हृदयोंमें अंकित है और आपका आदर्श उदाहरण हमें सदा कर्त्तव्य-पालनकी प्रेरणा देता रहता है।

१. यह मानपत्र ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा प्रस्तुत मानपत्रके बाद दिया गया था; देखिए पिछला शीर्षक।

हम अपने इस अंगीकृत प्रदेशमें आपका स्वागत करते हैं। हमें विश्वास है कि हमारे बीच आपका यह प्रवास सुखकर होगा। ईश्वर करे, आप हमारे बीच बहुत वर्षों तक रहें, और आपको अपना गौरवपूर्ण कार्य जारी रखनेके लिए स्वास्थ्य और शक्ति मिलती रहे।

मो० क० गांधी
[और ५७ अन्य]

[अंग्रेजीसे]

'इंडियन ओपिनियन', ९-११-१९१२ तथा इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स द्वारा प्रकाशित 'द ऑनरेबल जी० के० गोखलेज़ विजिट टू साउथ आफ्रिका, १९१२' से।

२९०. भेंट: 'ट्रान्सवाल लीडर' के प्रतिनिधिको[1]

[जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ३०, १९१२][2]

माननीय गो० गोखलेके ठहरनेका इन्तजाम चुडलेज़ बिल्डिंग्ज़के कुछ कमरोंमें किया गया है। वहाँ वे बहुत व्यस्त हो गये हैं; उनसे मिलनेके लिए सभी वर्गों और विचारोंके लोगोंका ताँता लगा रहता है। 'ट्रान्सवाल लीडर' का प्रतिनिधि भी उनसे मिलने गया था। उससे पहले वे मजदूर नेता श्री क्रेसवेलसे मिलनेवाले थे और बादमें पारसियोंका एक प्रतिनिधिमण्डल आनेवाला था।. . .

'लीडर' का प्रतिनिधि जब भेंटके लिए प्रतीक्षा कर रहा था, उस बीच भारतीय जनताके स्थानीय नेता श्री मो० क० गांधीसे उसकी बातचीत हुई। श्री गांधीने कहा कि श्री गोखलेकी यात्राके उद्देश्यके बारेमें कुछ प्रश्नोंके उत्तर तो मैं भी दे सकता हूँ और यह अच्छा भी रहेगा, क्योंकि इससे श्री गोखलेके समयकी बचत होगी।

श्री गांधीने सबसे पहले अनेक लोगोंके मनमें इस सम्बन्धमें फैली शंकाका समाधान किया कि श्री गोखले सरकारी तौरपर आये हैं अथवा निजी तौरपर।

[प्रश्न]: क्या श्री गोखलेको भारत-सरकारने इस मामलेमें औपचारिक रूपसे अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया है?

[उत्तर]: जी नहीं, श्री गोखले व्यक्तिगत रूपसे परन्तु भारतीय और साम्राज्यीय दोनों ही सरकारोंकी पूरी जानकारीमें, उनकी सहमतिसे आये हैं। उन्होंने इंग्लैंडसे

१. ट्रान्सवाल लीडरमें उक्त भेंटकी एक अधिक विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी और उस रिपोर्टको श्री गोखलेकी दक्षिण आफ्रिका-यात्राकी स्मृतिमें प्रकाशित इंडियन ओपिनियनके विशेषांकमें उद्धृत किया गया था। पहला अनुच्छेद उसीसे लिया गया है।

२. इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित किसी भी विवरणमें भेंटकी तिथिका उल्लेख नहीं है, पर इस विवरणमें उल्लिखित श्री क्रेसवेलसे और पारसी शिष्टमण्डलसे की गई भेंटकी तिथि ३० अक्तूबर, बताई गई है।

रवाना होनेसे पहले औरोंके सिवा मार्क्विस क्रू (भारत-मन्त्री) श्री हरकोर्ट (उपनिवेश-मन्त्री), लॉर्ड ग्लैडस्टन, सर रिचर्ड सॉलोमन और सर स्टार जेमसनसे भी भेंट ली थीं।

वे दक्षिण आफ्रिकामें कबतक हैं?

श्री गोखले नवम्बर ६को नेटालके लिए रवाना होंगे। डर्बनमें उनके स्वागतकी जोर-शोरसे तैयारियाँ की जा रही हैं। १४ तारीखको वे प्रिटोरियाके मन्त्रियोंसे भेंट करेंगे और उसके बाद तुरन्त ही डेलागोआ-बेसे होते हुए भारत लौट जायेंगे।

लेकिन इतने महत्वपूर्ण कार्यके सम्पादनके लिए तो यह समय निश्चय ही बहुत थोड़ा है?

हाँ, बहुत ही थोड़ा है; लेकिन श्री गोखलेको विधान-परिषदके अपने कामके सिलसिलेमें दिसम्बरके शुरूमें भारत पहुँच जाना है।

लेकिन क्या संघीय मन्त्रियोंसे भेंट करनेके समय तक श्री गोखले विभिन्न प्रश्नों-पर अपने सभी मन्तव्य निश्चित कर चुकेंगे?

एक भी अधिकार छोड़ा नहीं जायेगा

हाँ, कर चुकेंगे। भारतीयोंके अधिकारोंके बारेमें तो उनको अपनी कोई राय बनानी ही नहीं है। वे तो खुला मन रखकर यहाँ यही सुनने-समझने आये हैं कि भारतीयों और यूरोपीयोंके इस झगड़ेमें यूरोपीयोंका क्या कहना है। सिद्धान्तकी हद तक वे एक प्रतिष्ठित देशभक्तके नाते अपने देशवासियोंका कोई भी अधिकार छोड़ देनेकी बात तो कभी सोच नहीं सकते। परन्तु, सिद्धान्तको व्यवहारका रूप कैसे दिया जाये, इस सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध इस देशमें निरन्तर प्रचार करनेवालोंके सम्पर्कमें आने और उनसे स्थानीय परिस्थितिकी जानकारी हासिल करनेपर उनके निष्कर्षोंमें कुछ फेरफार हो सकता है।

बातचीतके दौरान श्री गांधीने आगे चलकर अपना यह विश्वास व्यक्त किया कि समस्या तो अब एक तरहसे संघकी अधिवासी भारतीय जनताके साथ होनेवाले व्यवहार तक ही सीमित रह गई है, और कहा कि श्री गोखलेका भी यही खयाल है।

मैं समझता हूँ कि इस सम्बन्धमें श्री गोखले मोटे तौरपर इस निष्कर्षपर पहुँच चुके हैं कि यहाँके भारतीय अधिवासियोंको नागरिक समानता मिलनी चाहिए। अर्थात्, संघके भीतर उनके आवागमनपर बन्दिशें नहीं लगाई जानी चाहिए और समाजपर लगाये जानेवाले आम किस्मके प्रतिबन्धोंके अधीन रहते हुए उनको व्यापारकी स्वतन्त्रता प्राप्त होनी चाहिए।

और फ्री स्टेटके बारेमें?

जहाँतक फ्री स्टेटकी बात है, श्री गोखले अभी वहाँके कानूनका अध्ययन कर रहे हैं, इसलिए यह बतलाना कठिन है कि उसके सम्बन्धमें उनके निष्कर्ष क्या होंगे। व्यक्तिगत रूपसे मेरा खयाल है कि फ्री स्टेट अभी कुछ वर्षोंतक भूमिकी मालिकी और व्यापार करनेके बारेमें अपनी मौजूदा नीतिपर ही चलेगा। प्रवास-सम्बन्धी

प्रतिबन्धके बारेमें स्थिति यह है कि समझौतेके अनुसार नये अधिनियमके अन्तर्गत जिन थोड़े-से नये प्रवासियोंको प्रवेश दिया जायेगा उन्हें संघके सभी भागोंमें जाने-आनेकी स्वतन्त्रता रहेगी। इसलिए प्रवासके सम्बन्धमें उनपर फ्री स्टेट द्वारा लगाये गये प्रतिबन्ध लागू नहीं होंगे, परन्तु वे उस प्रान्तमें व्यापार नहीं कर सकेंगे और न खेती ही कर सकेंगे। परन्तु फ्री स्टेट द्वारा लगाये गये सभी प्रतिबन्ध किसी-न-किसी दिन तो पूर्णतः हटने ही चाहिए, नहीं तो संघ एक तमाशा बन जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-११-१९१२

२९१. भाषण: गोखलेके सम्मानार्थ जोहानिसबर्गमें आयोजित भोजके अवसरपर[1]

अक्तूबर ३१, १९१२

श्री गांधीने भोजके अवसरपर अध्यक्ष और यूरोपीय अतिथियोंके लिए मंगल-कामनाका प्रस्ताव रखते हुए कहा कि यह प्रस्ताव रखते हुए मैं गर्वका अनुभव कर रहा हूँ। आजका दिन भारतीयोंके लिए गौरवका दिन है कि आप सबने ब्रिटिश भारतीय संघके आमन्त्रणको मान देकर हमारे देशके एक प्रख्यात व्यक्ति और, जैसा कि पहलेके कई वक्ताओंने कहा है, इस साम्राज्यके — जिसमें हम सभी शामिल हैं — सुयोग्य नागरिकका सम्मान करनेके लिए यहाँ इतने मनःपूर्वक पधारनेकी कृपा की है। संघर्षकी पराकाष्ठाके अवसरपर बनाई गई इस समितिके[2] प्रति श्री गोखलेने स्वयं ही अपनी कृतज्ञता व्यक्त की थी। चूँकि समितिने निस्सन्देह ब्रिटिश भारतीयोंकी अन्यतम सेवा की है, इसलिए मेरी समझमें इसने साम्राज्यकी भी अन्यतम सेवा की है। इस समितिके निर्माणसे अपनी अन्तरात्माकी खातिर संघर्ष करनेवाले लोगोंमें एक नई आशाका संचार हुआ था। जिस परिस्थितिमें और जिस अवसरपर इस समितिका निर्माण हुआ था, दक्षिण आफ्रिकाका भारतीय समाज उसे कभी नहीं भूलेगा। हमने अबतक कई सम्मान-भोजोंका आयोजन किया है और उनमें हमारे प्रति मैत्री और सहानुभूतिके भाव रखनेवाले बहुत-से यूरोपीय सम्मिलित भी हुए हैं, लेकिन मुझे एक भी ऐसा अवसर याद नहीं पड़ता जब हमारे विनम्र आमन्त्रणपर दक्षिण आफ्रिकाके

१. ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा आयोजित यह भोज गोखलेके सम्मानमें दिये भोजोंमें सबसे बड़ा था। उसमें लगभग ५०० व्यक्ति सम्मिलित हुए थे और उसकी अध्यक्षता मेयर एल्सिने की थी। इस अवसरपर वेनगारड और न्यूमैनने श्री गोखलेको भोजन-तालिका छपा हुआ एक साटनका कपड़ा भेंट किया था।

२. देखिए "अभिनन्दनपत्र: डब्ल्यू० हॉस्केनको", पृष्ठ १०१।

बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ और बड़े-बड़े नागरिक एक स्थानपर इतनी बड़ी संख्यामें एकत्र हुए हों। इसीलिए मुझे मंगल-कामनाका यह प्रस्ताव रखते हुए अपार प्रसन्नता हो रही है।

[अंग्रेजीसे]

इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स द्वारा प्रकाशित 'ऑनरेबल मि० गोखलेज़ विज़िट टु साउथ आफ्रिका, १९१२' से।

२९२. पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

टॉल्स्टॉय फार्म
लॉली स्टेशन
ट्रान्सवाल
नवम्बर ३, १९१२

प्रिय श्री शास्त्री,[1]

मने आपके बारेमें इतना सुना है कि मुझे लगता है कि हम एक-दूसरेको जानते हैं और इसीलिए मैं परिचितकी तरह पत्र लिख रहा हूं।

एक पखवाड़े तक बहुत ही कठिन परिश्रम करनेके बाद श्री गोखले यहाँ एक-दो दिनके लिए, यत्किंचित् आराम कर रहे हैं। आरामकी उन्हें बड़ी जरूरत है और उसके लिए मैंने ही उन्हें जोर देकर कहा है। आपको पत्र लिखनेका काम इसलिए उन्होंने मुझे सौंपा है। दौरेमें हर जगह स्वागत-समारोह बहुत ही उत्साहवर्धक रहे हैं। यूरोपीयोंने, उनके अनेक प्रमुख नेताओंने, इनमें भाग लिया; यह आपको सर्वेंट्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटीको भेजे गये कागजातसे मालूम हो जायेगा। मेरी रायमें श्री गोखलेका उद्देश्य जरूर सफल होगा। श्री गोखलेके भाषण हर जगह बहुत पसन्द किये गये हैं। भारत जानेवाले जहाजोंकी अनियमितताके कारण श्री गोखलेका कार्यक्रम बदलना होगा। अब वे २० तारीखको डर्बनसे रवाना होनेवाले एस० एस० 'उमकुज़ी' नामक जहाजसे यात्रा करेंगे।[2] यह जहाज लगभग ७ दिसम्बरको कोलम्बो पहुंचेगा।

१. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री (१८६९–१९४६); श्री गोखलेके देहान्तके बाद सर्वेंट्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटीके अध्यक्ष; सन् १९१६ में वाइसरॉयकी विधान-परिषद (लेजिस्लेटिव कौंसिल) के और १९२० में राज्य-परिषद (कौंसिल ऑफ़ स्टेट) के सदस्य चुने गये; राष्ट्र-संघ (लीग ऑफ़ नेशन्स) में तथा वाशिंगटनमें आयोजित शस्त्रास्त्र परिसीमन सम्मेलनमें भारतीय शिष्टमण्डलके सदस्य, १९२१; उसी साल प्रिवीके सदस्य हुए; दक्षिण आफ्रिकामें भारत सरकारके एजेंट-जनरल नियुक्त हुए; गोलमेज परिषद, लन्दनमें प्रतिनिधि, १९३०; आत्मकथाके अंग्रेजी अनुवादकी भूमिका (संस्करण १९४०) में उल्लिखित "आदरणीय मित्र" श्री शास्त्री ही हैं।

२. किन्तु, श्री गोखले २९ नवम्बर, १९१२ को जंजीबारसे एस० एस० प्रेसिडेंट द्वारा रवाना हुए थे।

कृपया इसका ध्यान रखें। श्री गोखले चाहेंगे कि कोलम्बोमें श्री रंगनाथन उनसे मिल लें और आप उन्हें मद्रासमें मिल जायें।

यात्राका टिकट अभी लिया नहीं है। यह पत्र पहुँचनेके पहले आपको तारसे बिलकुल ठीक-ठीक और पूरा विवरण भेज दिया जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

'लेटर्स ऑफ़ श्रीनिवास शास्त्री'; एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९६३।

२९३. भाषण: मैरित्सबर्गमें गोखलेके स्वागत-समारोहके अवसरपर[1]

नवम्बर ७, १९१२

श्री गांधीने कहा कि मैं गत १८ वर्षोंसे दक्षिण आफ्रिकाका निवासी हूँ। गंगा एक पवित्र नदी है। श्री गोखले मानो गंगा हैं, और आज अमसिन्डुसीमें गंगाकी धारा आकर मिल गई है। इसलिए आजका दिन इस नगरके लिए गर्वका दिन है। भारतीयोंकी सहायता करनेके अपने उद्देश्यको पूरा करनेमें श्री गोखले सफल होंगे या नहीं, सो तो भविष्य बतायेगा; किन्तु श्री गोखलेकी यात्राकी प्रत्याशित सफलता कहाँ-तक मूर्त रूप ग्रहण कर पाती है, यह बहुत हद तक दक्षिण आफ्रिकाके लोगोंपर निर्भर करेगा। यदि उनके इस उद्देश्यको उदारतापूर्वक और ऊँची भावना रखकर समझने और अपनानेका प्रयत्न हुआ तो कोई सन्देह नहीं कि उसे अन्यतम सफलता मिलनी ही चाहिए। (तालियाँ)।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-११-१९१२

१. समारोहमें मैरित्सबर्गके सभी प्रमुख नागरिक और अनेक भारतीय सम्मिलित हुए थे और प्रान्तके प्रशासकने उसकी अध्यक्षता की थी। भारतीयोंने गोखलेको एक मानपत्र दिया था और प्रशासक, मेयर लॉटन तथा अन्य यूरोपीयोंने उसमें भाषण किये थे।

२९४. भाषण: गोखलेके सम्मानमें मैरित्सबर्गके जलपान-आयोजनमें[1]

[नवम्बर ८, १९१२]

श्री गांधीने "हमारे यूरोपीय मित्रों" के प्रति मंगल-कामनाका प्रस्ताव रखते हुए कहा कि मैं एक भारतीयके रूपमें, भारतीयोंकी ओरसे बोल रहा हूँ। यदि मैं कहूँ कि आप यूरोपीयोंने हमारे अतिथि भारतके एक प्रख्यात पुत्रके स्वागतमें सहयोग देकर हमें बहुत आभारी बनाया है तो यह भारतीयोंके मनकी बात होगी। आप सबने बड़ी सद्भावनाके साथ इसमें हमारा हाथ बँटाया है। भारतीय अब संघ-निर्माणकी प्रक्रियासे गुजर रहे हैं और मैं चाहता हूँ कि इस प्रक्रियाके दौरान यूरोपीय समाज सर पर्सी फिट्जपैट्रिक और श्री मैरीमैनके उस परामर्शको याद रखे जो उन्होंने संघ-निर्माणके पहले दिया था। मेरा अनुरोध है कि यूरोपीयोंको यदि कहीं कोई चीज खटके तो उसपर वे "सम्मेलनकी भावना"से विचार करें। और हमारे दिमागमें इस समय जो एक बड़ी समस्या है उसपर हमें "गोखलेकी दृष्टिसे" विचार करना चाहिए। (बहुत खूब! बहुत खूब!) मैं समझता हूँ, यदि हम लोगोंने ऐसा किया तो आपका और हमारा आज एक ही आयोजनमें आकर साथ-साथ बैठना व्यर्थ नहीं जायेगा। श्री गोखले जहाँ भी गये हैं, वहाँ शान्तिकी भावना उत्पन्न हुई है। आशा है, उनके चले जानेके बाद भी शान्तिकी यह भावना बरकरार रहेगी। इतना ही नहीं, वह और गहरी होती जायेगी; क्योंकि इस बातका कोई कारण नजर ही नहीं आता कि हम और आप एक ही ध्वजकी छायामें शान्ति और प्रेमसे मिलकर न रह सकें। (हर्ष ध्वनि।)

[अंग्रेजीसे]

इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स द्वारा प्रकाशित 'ऑनरेबल मि० जी० के० गोखलेज़ विज़िट टू साउथ आफ्रिका, १९१२'से।

१. इस जलपानका आयोजन मैरित्सबर्ग स्वागत समितिने किया था। मैरित्सबर्गके प्रशासक और गोखलेने भी उसमें भाषण किया था।

२९५. भाषण : डर्बनमें गोखलेके स्वागत-समारोहमें[1]

[नवम्बर ८, १९१२]

किसी न किसी प्रकार मतदाताओंकी सूचीके एक कोनेमें मेरा नाम भी स्थान पा गया है। यही कारण है कि मैं आप सभी सज्जनोंको, जिनमें गोरे भी उपस्थित हैं, मेरे नागरिक बन्धु कहकर सम्बोधन कर रहा हूँ।[2]

श्री गांधीने कहा कि भारतके ही करोड़ों जन नहीं, इंग्लैंडकी भी जनता श्री गोखलेको महान् राजनीतिज्ञ मानती है। वाइसरॉय तक अनुरोधपूर्वक उनसे सलाह लेते रहे हैं; और यह इसलिए कि श्री गोखले भारतकी नब्ज पहचानते हैं। उन्होंने भारतकी राष्ट्रीय कांग्रेसकी चर्चाओंमें उसका मार्गदर्शन किया है। उनकी गिनती देशके महानतम शिक्षाविदोंमें होती है। यदि वे इंग्लैंडमें पैदा हुए होते तो आज वे श्री ऐस्क्विथके पदपर आसीन होते। यदि वे अमेरिकामें पैदा हुए होते तो वे शायद डॉ० वुडरो विल्सनके पदके लिए चुन लिये जाते; और यदि उनका जन्म ट्रान्सवालमें हुआ होता, तो वे जनरल बोथाके पदपर होते। आगे चलकर श्री गांधीने अपने देशवासियोंको चेतावनी देते हुए कहा कि हम लोगोंको आशाके बड़े ऊँचे-ऊँचे महल खड़े नहीं कर लेने चाहिए। हमें अभी आन्दोलन तो करना ही पड़ेगा। हम जिन अधिकारोंकी माँग कर रहे हैं वे तो श्री गोखले हमें नहीं दे सकते। सम्भव है, उनकी प्राप्तिके लिए हमें अभी जेल जाना पड़े। श्री गोखलेको हमने जो मानपत्र दिये हैं वे भविष्यमें उनसे कुछ पानेकी प्रत्याशासे प्रेरित होकर नहीं, बल्कि हमारे बीच उपस्थित इस व्यक्तिके महान् चरित्रके प्रति हमारी सम्मानांजलिके रूपमें भेंट किये गये हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स द्वारा प्रकाशित 'ऑनरेबल मि० जी० के० गोखलेज़ विज़िट टु साउथ आफ्रिका, १९१२' से।

१. टाउन हॉलमें आयोजित इस समारोहमें श्री रायप्पनने मानपत्र पढ़ा था। वह एक स्वर्णपत्रपर अंकित किया गया था, जो आबनूसकी लकड़ीपर जड़ा हुआ था।

२. ये शब्द गांधीजीके भाषणके गुजराती पाठसे लिए गये हैं जो १६-११-१९१२ के इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित हुआ था।

२९६. भाषण: डर्बनमें गोखलेके सम्मान-भोजमें[1]

नवम्बर ११, १९१२

श्री मो० क० गांधीने यूरोपीय अतिथियोंकी मंगल-कामनाका प्रस्ताव रखते हुए अपने देशवासी-बन्धुओंसे कहा कि हालाँकि आपको दक्षिण आफ्रिकामें कई बार बड़े कड़वे घूंट पीने पड़े हैं, तथापि मंगल-कामनाका यह आपानक बड़ी हार्दिकताके साथ ग्रहण किया जाना चाहिए। हर बादलमें रजत-रेखा होती है।[2] देखिए कि इस अवसर-पर कई यूरोपीय मित्र हाथ बटा रहे हैं। यहाँतक कि उनमें श्री सिल्बर्न भी हैं। श्री सिल्बर्न मानते हैं कि भारतीय साम्राज्य तलवारके बलपर स्थापित किया गया है और तलवारके जोरपर ही वह कायम भी है।[3] मैं उनसे इस बातमें सहमत नहीं हूँ। मेरा मत है कि इंग्लैंडका एक हाथमें न्याय तुला लेकर न्याय करनेका दावा और दूसरे हाथमें तलवार पकड़कर भय दिखाना, असंगत होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-११-१९१२

२९७. भाषण: प्रिटोरियामें गोखलेके स्वागत-समारोहमें[4]

नवम्बर १४, १९१२

श्री गांधीने कहा कि प्रिटोरिया-समितिके अध्यक्षका आदेश है कि मैं दो शब्द कहूँ। मैं यूरोपीय मित्रों और उप-महापौर (डिप्टी मेयर) महोदयको धन्यवाद देता हूँ कि वे निमन्त्रण स्वीकार करके यहाँ पधारे। श्री गोखलेकी यात्राके दौरान लोगोंने उनके साथ बड़ी सद्भावना और सौजन्यका व्यवहार किया है। सबसे अधिक सन्तोषकी बात तो यह है कि उनका आतिथ्य करनेमें यूरोपीयोंने भी भारतीयोंका हाथ बँटाया है। इसके बाद श्री गांधीने समारोहमें अपनी उपस्थितिकी असमर्थतापर जनरल बोथा, श्री अब्राहम फिशर और जनरल स्मट्सकी ओरसे आये हुए खेदके पत्र पढ़कर सुनाये और फिर उप-महापौरसे कार्रवाई आरम्भ करनेका अनुरोध किया।

[अंग्रेजीसे]

इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स द्वारा प्रकाशित 'ऑनरेबल मि० जी० के० गोखलेज़ विज़िट टु साउथ आफ्रिका, १९१२'से।

१. इस भोजमें लगभग ५०० यूरोपीय और भारतीय उपस्थित थे। वक्ताओंमें सम्मान-भोजके अध्यक्ष सर डेविड हन्टर, डर्बनके मेयर एफ० सी० हॉलेंडर और श्री गोखले भी थे।

२. अंग्रेजी कहावतका शाब्दिक अनुवाद।

३. श्री सिल्बर्नने कहा था कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी समस्याको हल करनेकी जिम्मेदारी केवल दक्षिण आफ्रिकाकी है, और दक्षिण आफ्रिकाके अंग्रेज इसमें ग्रेट ब्रिटेन या भारतका हस्तक्षेप सहन नहीं करेंगे। **नेटाल मर्क्युरी**, १२-११-१९१२।

४. यह समारोह गोखलेको विदाई देनेके लिए किया गया था; डिप्टी मेयर जे० एच० एल० फिडलेने उसकी अध्यक्षता की थी।

२९८. पत्र : मगनलाल गांधीको

[लॉली
नवम्बर १७, १९१२ के आसपास][1]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

मुझे प्रोफेसर गोखलेके भाषण श्री कैलेनबैकके पास नहीं मिले। वहाँ स्टेशन-पर, खोई हुई वस्तुओंसे सम्बन्धित कार्यालयमें जाकर पूछताछ करना। सम्भव है कि एक पूरा बंडल ही वहाँ रह गया हो। उस बंडलपर उस दिनकी तारीख है जिस दिन मैं रवाना हुआ था।

महम्मद कासिम कमरुद्दीनसे[2] विज्ञापनके सम्बन्धमें बातचीत करना। वह जो उत्तर दे वह मुझे लिख भेजना।

दादा सेठसे पूछकर पता चलाना कि लड़कोंको पाठशालामें[3] नहीं आने दिया जाता, इसके सम्बन्धमें क्या किया जा रहा है। तुम्हें श्री सुब्रह्मण्यम्से[4] भी हर सप्ताह समाचार प्राप्त करके प्रकाशित करते रहना चाहिए। और यदि श्री पॉलकी मार्फत ऐसा करो तो तुम उनके [श्री सुब्रह्मण्यम्के] सम्पर्कमें रहकर महत्वपूर्ण समाचार प्राप्त करते रह सकोगे। इसमें समय जायेगा, यह तो मैं समझता हूँ। लेकिन इसे अवकाशके समय करना चाहिए। और यह तभी हो सकता है जब फीनिक्समें परस्पर प्रेमका वातावरण हो। वह कैसे सधेगा, इसका उत्तर तो तुम सबके हाथमें है और इसकी जिम्मेदारी भी तुम सभीपर है।

१. अनुच्छेद २ में श्री गोखलेके जिन भाषणोंकी चर्चा की गई है वे सम्भवतः वही थे जो उन्होंने अपनी दक्षिण आफ्रिका यात्राके दौरान अक्तूबर २२, १९१२ तथा नवम्बर १२, १९१२ के बीच दिये थे। गांधीजी, जो यात्राके दौरान सारे समय श्री गोखलेके साथ थे, ८ नवम्बरको डर्बन पहुँचे। (देखिए "डायरी १९१२" में इस तारीखकी टीप), और २२ नवम्बरको वहाँसे रवाना हुए। चूँकि यह पत्र मगनलाल गांधीको, जो फीनिक्स प्रेसमें काम करते थे, लिखा गया है — भाषण फीनिक्स अथवा डर्बनमें खो गये होंगे। गांधीजी टॉल्स्टॉय फार्मपर — शायद अपने दौरेके अन्तमें — १५ नवम्बरको पहुँचे थे। श्री गोखलेकी दक्षिण आफ्रिका-यात्राकी स्मृतिमें फीनिक्ससे एक पुस्तक प्रकाशित की गई थी जिसमें उनके भाषणोंका संकलन था। इस पुस्तककी श्री पोलक द्वारा लिखी भूमिकापर २० नवम्बर, १९१२ की तारीख पड़ी हुई है। इसलिए सम्भव है कि यह पत्र १६ अथवा १७ नवम्बरको लिखा गया था। इसी तारीखको गांधीजी श्री गोखलेको विदा करनेके लिए लॉरेंको मार्क्विस रवाना हुए थे।

२. डर्बनके एक भारतीय व्यापारी।

३. डर्बनमें एच० एल० पॉल द्वारा संचालित एक भारतीय शैक्षणिक संस्था।

४. नेटालके एक भारतीय शिक्षा-शास्त्री जिन्होंने स्कूलके विषयमें गांधीजीसे परामर्श किया था।

श्री अय्यरसे[1] सी० के० डी० पिल्लेके मामलेके सम्बन्धमें जानकारी हासिल करना। यह समाचार भी तुम्हें श्री पॉल तुरन्त दे सकेंगे।

मोहनदासका आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ५७४१)की फोटो-नकलसे।

२९९. पत्र : जमनादास गांधीको

[नवम्बर १७, १९१२]

चि० जमनादास,

तुम्हारे पत्र मिल गये हैं। मैं जवाब फुरसत मिलनेपर ही लिख सकूँगा। फिलहाल इतना ही लिखता हूँ कि तुम रहस्यको समझ गये हो, इसलिए उसका अनुसरण करते हुए जीवनका व्यवहार चलाना।[2]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें पेंसिलसे लिखी मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६३९) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

३००. भाषण : लॉरेंको मार्क्विसमें गोखलेके सम्मानमें आयोजित भोजके अवसरपर[3]

[नवम्बर १८, १९१२][4]

श्री मो० क० गांधीने कहा कि मुझे उस समयका लॉरेंको मार्क्विस याद है, जब यह मलेरियाग्रस्त क्षेत्रके रूपमें बदनाम था। किन्तु, आज तो स्वास्थ्यकी दृष्टिसे यह नगर इतना अच्छा हो गया है कि यहाँ आये हुए यूरोपीय अतिथियोंके स्वास्थ्यके लिए मंगल-कामना करना निरर्थक ही है। इन्होंने आज यहाँ जो भोजन-पान किया है, उसमें मांस और मदिराका न होना भी सुन्दर स्वास्थ्यके अनुरूप रहा। मेरे विचारसे यह समारोह बेमिसाल है; इसमें ईसाई, यहूदी, हिन्दू, मुसलमान और पारसी सभी शामिल हैं। मुझसे अपना भाषण संक्षेपमें समाप्त करनेको कहा गया है, इसलिए अब मैं सभीसे अपने अतिथियों तथा महा वाणिज्य-दूत (कॉसल-जनरल) मैकडॉनेलके लिए मंगल-कामना करनेका अनुरोध करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-१२-१९१२

१. आफ्रिकन क्रॉनिकलके श्री पी० एस० अय्यर।

२. गांधीजी इतना लिखकर लॉरेंको मार्क्विसके लिए रवाना हो गये, और पत्र श्री पोलक द्वारा भेजा गया; जैसा कि पत्रके अन्तमें श्री पोलकके हस्तक्षरोंमें लिखी सूचनाओंसे जान पड़ता है।

३. इस सम्मान-भोजके अध्यक्ष थे ब्रिटिश महा वाणिज्य-दूत एरॉल मैकडॉनेल।

४. इस पत्रकी दूसरी ओर कुमारी श्लेसिनका १८ नवम्बर, १९१२ का लिखा एक संक्षिप्त पत्र है।

३०१. एक तार[1]

आर० पी० डी० 'क्रॉन्प्रिज'

[नवम्बर १९, १९१२, या उसके बाद]

धन्यवाद कार्यक्रम सुविधाजनक। गोखलेका स्वास्थ्य असन्तोषजनक। उन्हें कष्ट न दें।

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५७३६) की फोटो-नकलसे।

३०२. पत्र: गो० कृ० गोखलेको

दारेसलाम

दिसम्बर ४, १९१२

प्रिय श्री गोखले,

मैंने अभी-अभी सुना कि भारत जानेवाली डाक आधे घंटेके भीतर ही निकल जायेगी (अभी सुबहके ९-३० बजे हैं)। हम यहाँ दो दिन और हैं।

जोहानिसबर्गसे इस आशयका तार पाकर कि मंजूषा[2] लॉरेंको मार्क्विसमें मिल गई है और आपके पास भेजी जा रही है, मैंने आपको माही तार[3] भेजा था। उम्मीद है कि तार आपको मिला होगा। एक तार[4] कुमारी श्लेसिनको भी भेजा था जिसमें उनसे उसका बीमा करनेके लिए कहा गया था। अस्तु।

कृपया मेरी कमियोंपर ध्यान न दें। मैं आपका एक योग्य शिष्य बननेका इच्छुक हूँ। यह झूठी विनय नहीं है; बल्कि इसमें भारतीयोचित सच्ची उत्कटता है। पूर्वी शिष्यका जो चित्र मेरे मनमें है उसे मैं अपनेमें ही मूर्तिमान करना चाहता हूँ। हमारे बीच अनेक मतभेद क्यों न हों, परन्तु मेरा निश्चय है कि राजनीतिक जीवनमें आप मेरे आदर्श रहेंगे।

१. श्री गोखले, गांधीजी तथा कैलेनबैकके साथ १८ नवम्बर, १९१२ को मध्य रात्रिमें जर्मन ईस्ट आफ्रिका लाइनके जहाज आर० पी० डी० क्रॉन्प्रिजपर सवार हुए थे। रास्तेमें गोखले और उनके साथियोंने बेरामें उतर कर २१ और २२ तारीख वहाँ बिताई, २७ जंजीबारमें २५ तारीख मोजाम्बिकमें। इन स्थानोंमें श्री गोखलेको पुष्पमालाएँ पहनाई गई और मानपत्र दिये गये। अतः गांधीजीने यह तार १८ और २६ के बीच किसी दिन उपर्युक्त तीन स्थानोंमें से किसी एक स्थानकी स्वागत-समितिको भेजा होगा।

२. कदाचित् यह वह मंजूषा है जिसमें रखकर ब्रि० भा० संघ द्वारा भेंट किया गया अभिनन्दनपत्र और अभिलिखित स्वर्णपत्र श्री गोखलेको दिया गया था। मंजूषाके गुम होनेके विषयमें देखिए पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ ३३८ और डायरी १९१२ में नवम्बर २८ की टीप।

३ और ४. दोनों तार उपलब्ध नहीं हैं।

अब लीजिए नीम-हकीमकी सलाह: पर्याप्त उपवास, दिनमें दो ही बार खानेके नियमका कड़ाईसे पालन, भोजनमें हर प्रकारके मिर्च-मसालेका वर्जन, दाल, चाय, काफी आदिका त्याग, नित्य कूनेकी पद्धतिसे स्नान, रोज तेजीसे गाँवकी खुली जगहमें घूमना (विचारोत्तेजनके लिए की जानेवाली चहल-कदमी नहीं), पर्याप्त प्रमाणमें जैतूनका तेल और नीबू-जैसे फल; और पकाये हुए भोजनका क्रमशः त्याग — इतना यदि आप करें तो इस सबसे आप मधुमेहसे छुटकारा पा जायेंगे और इसी शरीरसे जितना आपका खयाल है, उससे अधिक लम्बा सेवामय जीवन बिता पायेंगे।

श्री कैलेनबैककी इच्छा है कि आपको उनकी याद दिला दूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्चः]

हम दोनोंको आपका तार पाकर प्रसन्नता हुई। क्या आप कृपया श्री शास्त्री या किसी अन्य भारत-सेवक (सर्वेंट ऑफ़ इंडिया) से इं० ओ० के लिए मुम्बासा-स्वागतका विवरण लिख कर भेजनेके लिए कहेंगे?

मो० क० गांधी

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४८४२) की फोटो-नकलसे।

३०३. अपनी भाषाओंके माध्यमसे शिक्षण

दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय शिक्षणके इतिहासमें प्रथम बार यह स्वीकार किया गया है कि स्कूलोंमें भारतीय बालकोंके लिए भारतीय भाषाओंको शिक्षाका माध्यम बनाना आवश्यक है। जोहानिसबर्गमें भारतीय स्कूल[1] खोलनेके सम्बन्धमें विटवाटर्सरैंड केन्द्रीय स्कूल निकाय (स्कूल बोर्ड) ने जो शर्तें मानी हैं उनमें एक यह भी है कि गुजराती "एक भाषाके रूपमें पढ़ाई जा सकेगी और उसका प्रयोग शिक्षणके माध्यमके लिए किया जा सकेगा।" हमें यह देखकर आश्चर्य होता है कि नेटालका शिक्षा विभाग अभीतक इतना भी नहीं समझ सका कि स्कूलमें मातृभाषा अनिवार्य रूपसे शिक्षणका माध्यम होनी चाहिए। इस समय स्थिति यह है कि नेटालमें सरकारी नियन्त्रणमें चलनेवाला एक भी भारतीय स्कूल नहीं है, जहाँ बालकोंको मातृभाषामें

१. सम्भवतः यह वही स्कूल है जिसका उल्लेख गांधीजीने ब्रिटिश भारतीय संघकी अगस्त २५ की बैठकमें भाषण देते हुए किया था और तभी जिसके लिए एक समितिका संगठन भी किया गया था। नवम्बर १६ को विटवाटर्सरैंडके स्कूल निकायके सेक्रेटरीने हर्बीव मोटनको, जो उक्त समितिमें शामिल थे, पत्र लिखा कि वे उनके प्रस्तावके अनुसार दो शर्तोंपर स्कूल खोलनेके ("जोहानिसबर्गका प्रस्तावित स्कूल", पृष्ठ ३२३-२४।) लिए तैयार हैं: (१) शालाका प्रिंसिपल यूरोपीय होगा और उसे वेतन सरकारसे मिलेगा तथा सरकार शालाका निरीक्षण करेगी और (२) अन्य शिक्षकोंके वेतनका आधा भाग भारतीय देंगे। समितिका प्रस्ताव यही था कि गुजरातीको एक भाषाकी तरह और शिक्षणके माध्यमके रूपमें स्थान दिया जाये। **इंडियन ओपिनियन**, ७-१२-१९१२।

शिक्षा दी जाती हो, और न इन स्कूलोंमें भारतीय भाषाएँ ही उन्हें भाषाके रूपमें सिखाई जाती हैं। यह और बात है कि दो एक स्कूलोंमें जो बालक चाहते हैं उन्हें अध्यापक कृपापूर्वक स्कूलके समयके पश्चात् विशेष रूपसे ये भाषाएँ पढ़ा देते हैं। श्री गोखलेने प्रिटोरियामें अपने विदाई-भाषणमें स्कूलके समयमें ही भारतीय भाषाएँ पढ़ाये जानेपर जोर दिया था। उन्होंने यह भी ठीक ही कहा था कि जबतक ये भाषाएँ नहीं पढ़ाई जायेंगी तबतक भारतीयोंको अपने बहीखाते ठीक प्रकारसे रखनेके लिए इन भाषाओंके जानकार मुनीमों तथा अन्य कर्मचारियोंको भारतसे यहाँ बुलानेका बहाना मिलता रहेगा। परन्तु इस सबसे बढ़कर हम तो भारतीय भाषाओंका पढ़ाना आवश्यक इसलिए मानते हैं कि अपनी भाषाके ज्ञानके बिना कोई सच्चा देशभक्त बन ही नहीं सकता। मातृभाषाके ज्ञानके बिना हमारे विचार विकृत हो जाते हैं और हृदयसे मातृभूमिका स्नेह जाता रहता है। भारतके साहित्य और धर्मोंको विदेशी भाषाके माध्यमसे कभी नहीं समझा जा सकता। उपनिवेशमें उत्पन्न हुए अपने नवयुवकोंकी तीव्र बुद्धिकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए भी हमें उनमें इस वस्तुकी कमी दिखाई देती है कि उन्हें वास्तविक भारतीय विचार, इतिहास और साहित्यका ज्ञान नहीं होता। उनमें से अंग्रेजीके अतिरिक्त और कोई भाषा नहीं बोल सकते, कुछेकको अपनी मातृभाषाका केवल बोल सकने योग्य ज्ञान है, परन्तु भारतकी उच्च भाषाओंको पढ़-लिख तो कोई विरला ही सकता है। यह दशा बहुत शोचनीय है। इसलिए हम विटवाटर्सरैंड स्कूल निकायके विचारपूर्ण निर्णयका स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि शीघ्र ही दक्षिण आफ्रिकाके सभी भारतीय स्कूलोंमें भारतीय भाषाएँ पढ़ाई जाने लगेंगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-१२-१९१२

३०४. पत्र: जमनादास गांधीको

मार्गशीर्ष सुदी ९ [दिसम्बर १८, १९१२][1]

चि० जमनादास,

जिस दिन मैं जोहानिसबर्ग पहुँचा उसी दिन तुम रवाना हुए। तुम्हारे दोनों पत्र मिले हैं। पढ़नेके बाद मैं स्वयं ही उन्हें फाड़ दूँगा। तुम्हारी तबीयत क्यों खराब हुई, मैं यह नहीं समझ सका। चि० छगनलालका कहना है कि तुम इस बार कमजोर नजर आते हो। तुम जो पहले सबसे ताकतवर माने जाते थे, सहज ही थक जाते हो। इस सबसे पता चलता है कि इस बारका आहार-सम्बन्धी प्रयोग तुम्हें अनुकूल नहीं पड़ा। कहाँ भूल हुई है, यह तो मैं पास होता तभी बता सकता। छगनलालका कहना यह भी है कि तुम्हारा स्वभाव चिड़चिड़ा हो गया है। छः महीने पूरे हो

१. जमनादास गांधी भारतके लिए १४ दिसम्बर १९१२ को रवाना हुए थे। यह पत्र उनकी रवानगीके बाद शीघ्र ही लिखा गया जान पड़ता है।

जानेपर दूध, घी, दही आदि लेना शुरू कर देना। चीनी अथवा नमककी तो जरूरत नहीं पड़गी। लेकिन अगर यह सब लेना भी जरूरी हुआ तो लेना और अपना स्वास्थ्य सुधारना। यदि कुछ दूसरा प्रयोग करना चाहो तो बादमें जब मैं वहाँ आऊँगा तब करना। तुम्हारा शरीर स्वस्थ नहीं रहेगा तो तुम्हारे प्रयोगपर किसीको श्रद्धा नहीं होगी और अगर [इससे] तुम्हारा चित्त ठिकानें नहीं रहेगा तो यह प्रयोग तुम्हारे किसी भी काम नहीं आयेगा।

और ये रहे तुम्हारे प्रश्नोंके उत्तर!

दही न खायें तो स्वाभाविक है कि मक्खन, छाछ आदि भी न खाना चाहिए। क्योंकि, अगर दही त्याज्य है तो मक्खन और छाछ भी तो उसीके भाग हैं। ये कम स्वादिष्ट होते हैं, इसीलिए इनमें कम दोष हैं। लेकिन यह सूक्ष्म भेद तुम्हें ध्यानमें रखनेकी जरूरत नहीं। तुम घी खाओ तो दूध, दही आदि भी ले सकते हो। पीछे देखा जायेगा।

नारियलका तेल खानेवाला अगर नारियल खाये तो उसमें कोई हर्ज नहीं। और नारियल ही ज्यादा अच्छा भी है। लेकिन जैसे [किसी व्यक्तिको] गेहूँ न पचे लेकिन उसका सत्व पच सकता है वैसे ही सम्भव है कि किसीको नारियल न पचे और तेल पच जाये। जिसके दाँत न हों, उसके लिए तो तेल ही ठीक है। शायद तुम्हारे बारेमें भी यही ठीक हो। तिलके बारेमें भी यही कहा जा सकता है। जिनसे पाँच तोला तेल पेटमें पहुँच जाये, इतने तिल खाना तो बहुत कठिन है। [तेल खानेसे तिलका] फुजला छूट जाता है और कुछ लोगोंके शरीरकी बनावट ऐसी होती है कि फुजला छूट जाना ही ठीक है।

केवल केला खाकर भी निर्वाह हो सकता है। केला खानेवाला व्यक्ति मेवा न खाये तो भी हर्ज नहीं है। मुझे लगता है कि फलोंकी अपेक्षा बादाम आदि अधिक पौष्टिक हैं।

तुम्हें फोड़े होनेके दो कारण हो सकते हैं। उपयुक्त खुराक न लेनेसे तुम्हारे रक्तकी शक्ति कम हो गई और फीनिक्सकी बुरी आबोहवाका आसानीसे तुमपर असर पड़ गया, या हो सकता है कि फीनिक्सका पानी ही त्वचापर ऐसा असर करता हो जैसा स्वच्छ रक्तवाले व्यक्तिकी बाह्य त्वचापर थूहरका हो जाता है।

यदि एनीमा लेते हुए पेटमें थोड़ी हवा चली जाये तो उससे कोई नुकसान नहीं होगा। कभी-कभी पेटमें दर्द हो सकता है। क्योंकि इस तरह हवाका पेटमें जाना अस्वाभाविक है। ऐसा हो जाये तो टट्टीमें बैठकर कांखनेसे काफी हवा निकल जायेगी। पेटमें हवाके चले जानेसे मृत्युकी सम्भावना तो नहीं होती, लेकिन कृष्णा-जैसे नाजुक शरीरवाले व्यक्तिके लिए इसका परिणाम भयंकर हो सकता है।

पेटकी गड़बड़के लिए कुछ हद तक गीली पट्टी जरूर फायदेमन्द होती है। [ऐसा करनेसे] त्वचाके असंख्य छिद्रोंसे तेल निकलता है और उस हद तक भार हल्का हो जाता है तथा उससे कभी-कभी पाखाना भी आता है।

जब रोगीको मिट्टीकी पट्टी भी न दी जा सके और वह उपवास करनेमें भी असमर्थ हो तब [इस उपायके द्वारा] उसके शरीरमें कोई गड़बड़ नहीं हो पाती और

अगर हो भी तो कुछ हानि नहीं होती। उस समय रोगीको गरम दूध अथवा इस तरहके अन्य पेय देकर उसके कनकने हो जानेपर मिट्टी आदिका उपचार करना चाहिए। अगर शरीर इतना दुर्बल हो गया हो कि ठंडे जलका स्पर्श भी सहन न कर सके और उसे चुल्लू-भर पानी भी न पिलाया जा सके तो समझो कि रोगीका अन्त निकट है। तव सन्तोष मानकर उसके मरनेकी राह देखनी चाहिए। किन्तु कभी-कभी उस हालतमें भी रोगी सँभल जाता है।

कुछ-न-कुछ उपाय करते ही रहना चाहिए, ऐसा कोई सार्वभौमिक नियम नहीं है। कई वार कुछ न करना ही रोगीके लिए अच्छा होता है। कृष्णा-जैसे रोगीको चावल अथवा किसी प्रकारकी सख्त रोटी भी नहीं देनी चाहिए। ऐसे रोगीकी आँतोंमें सूजन आ जाती है, इसलिए उसे वहुत सादा पेय ही दिया जाना चाहिए। यह उपचार आन्त्र-ज्वर आदिके लिए है। कृष्णा-जैसे रोगीको सन्तरेका रस छानकर देना चाहिए। उसमें वीज या झिल्लीका कोई अंश नहीं होना चाहिए।

यदि किसी सख्त वीमार रोगीको दस्त लगते हों तो उसके पेटपर बर्फके पानीकी पट्टी रखनी चाहिए और अगर तब भी दस्त आना बन्द न हो तो दस्त आने देना चाहिए।

जव रोगी वड़वड़ाये तव समझना चाहिए कि उसे कष्ट हो रहा है। उस हालतमें उसके माथे और पेटपर मिट्टी रखकर उसे खूब खुली हवामें रखना चाहिए। यदि वह तव भी वड़वड़ाये तो कोई हर्ज नहीं। कुछ समय बीतनेपर वह बड़बड़ाना बन्द कर देगा। अगर जीवन-शक्ति ही नष्ट हो गई हो तो ऐसा रोगी अन्तमें मर जायेगा।

छः महीने वीतनेके वाद तुम खुशीसे मनचाहा आहार लेने लगना।

वुनाईका काम सरलतासे सीख सको तो सीखना। उसपर कोई आग्रह नहीं है।

परमेश्वर और माँसे हम नहीं डरते, इसीलिए [उनको] प्यारमें "तू" कहते हैं। बापका भय रहता है, इससे उसे एकाएक "तू" नहीं कहते; दूसरे लोगोंकी वात तो छोड़ो। वे परमेश्वरकी अथवा माँकी जगह ले ही नहीं सकते।

सुग्रीवने वालिको मरवाया, वस्तुतः यह वात उचित नहीं कही जा सकती। यों उसकी थोड़ी-वहुत वकालत की जा सकती है। 'रामायण' और 'महाभारत' में सदाचारी [मानेजानेवाले] व्यक्तियोंके सव कार्योंका वचाव हो सकता है, ऐसा कुछ नहीं है। कविने भी उन्हें पूर्ण पुरुषके रूपमें चित्रित नहीं किया है।

साइकिलके प्रति अगर तुम्हें इतना मोह हो तो उसपर वैठकर तुम अपने मोहसे छुटकारा पाओ। गाँवों आदिमें साइकिलका प्रयोग करनेसे पशुओंका भय रहता है। पशु हमारी साइकिलसे परिचित नहीं होते, इसलिए वे भड़क उठते हैं और हमपर चोट कर देते हैं। श्री कैलेनवैकको विना किसी हिचकके पत्र लिख सकते हो। मैं तुम्हें पत्र लिखता रहूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६४१) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : नारणदास गांधी।

३०५. श्री गोखले स्वदेश पहुँचे

श्री गोखलेका सम्मान करनेके लिए और उनसे उनकी इस देशकी ऐतिहासिक यात्राका विवरण सुननेके लिए बम्बईमें एक सार्वजनिक सभा हुई थी। इस सभाका कुछ समाचार[1] रायटरने यहाँ पहुँचाया है। श्री गोखलेने अपने मनमें जो आशाएँ बाँधी हैं, इस समाचारसे हमें उनका परिचय मिलता है।

भारतमें कुछ भारतीय ऐसा समझते हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें जितने भारतीय आना और बसना चाहें हम उन सबके आ सकनेकी छूट माँगते हैं। हमारे देशसे आनेवाले अखबारोंमें कभी-कभी ऐसा ही भाव प्रकट होता दिखाई पड़ता है। इसके सिवा भारतके कुछ नेता भी ऐसी माँग करते हैं। ऐसे टीकाकारोंको जवाब देते हुए श्री गोखलेने कहा कि हम इस किस्मके अधिकार नहीं माँगते और ऐसी माँग करना हमारे लिए ठीक भी नहीं है। उन्होंने कहा कि हमें अपने वैध हकोंकी रक्षासे ही सन्तोष हो जाना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि यदि हम समुचित व्यवहारकी आशा रखते हैं तो हमें यहाँकी गोरी प्रजाकी चिन्ता और डरका मूल भी समझ लेना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि एक हद तक यही बात हमारी [भावी] स्थितिका आधार है। मालूम होता है कि श्री गोखलेने बम्बईकी सभामें यह बात भलीभाँति समझा दी।

संघ-सरकारने श्री गोखलेको यह आशा बँधाई है कि प्रवासी कानूनका अमल अनुचित रीतिसे नहीं किया जायगा।[2] हमें देखना है कि यह आशा किस हद तक फलती है। उसकी सफलता बड़ी हद तक हमारे व्यवहारपर निर्भर होगी। श्री गोखलेका निश्चित विश्वास है कि तीन पौंडका क्रूरतापूर्ण कर, जिसका बोझ मजदूर वर्गपर पड़ता है, उठा लिया जायेगा। यदि संसदकी अगली बैठकमें उसे रद करनेका विधेयक न आया तो आश्चर्यकी बात होगी।

किन्तु व्यापारिक परवानोंका सबसे बड़ा और जटिल सवाल तब भी बच रहेगा। इसमें शक नहीं है कि उसके लिए भारतीय समाजको बड़ा प्रयास करना पड़ेगा। श्री गोखले जहाँ-जहाँ गये, वहाँ-वहाँ यूरोपीयोंके साथ इस सवालकी काफी चर्चा हुई है, किन्तु कोई गोरा यह नहीं बता सका कि उसका सन्तोषजनक हल क्या हो सकता

१. दिसम्बर १४ को आयोजित इस सभामें श्री गोखलेने दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंकी समस्याका विश्लेषण किया था। उन्होंने कहा था कि यदि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय अपने प्रति उचित व्यवहारकी अपेक्षा करते हैं तो उन्हें यूरोपीयोंके इस भयका खयाल रखना होगा कि कहीं वह देश रंगदार लोगोंसे न भर जाये। उन्होंने गांधीजीके "आश्चर्यजनक व्यक्तित्व और कृतित्व" की भी बड़ी सराहना की। **इंडियन ओपिनियन**, २१-१२-१९१२ और परिशिष्ट २३।

२. श्री गोखले १४ नवम्बरको प्रिटोरियामें स्मट्स, बोथा और फिशरसे मिले थे तथा १५ नवम्बर, १९१२ को ग्लैड्स्टनसे; देखिए परिशिष्ट २२।

है। संघ-सरकारने भी श्री गोखलेके सामन अपनी कठिनाइयाँ रखी थीं। श्री गोखलेका खयाल है कि यहाँ उसके लिए हमें मेहनत करनी होगी। वे भारतमें हमारे प्रश्नों-पर ध्यान देनेवाली एक विशेष समिति स्थापित करना चाहते हैं और सम्भव है, वे स्वयं उसके मन्त्री बनें। उनका खयाल है कि लन्दनकी [दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय] समितिको भी जारी रखना चाहिए। श्री गोखलेने उस समितिका खर्च जुटानेका एक आसान रास्ता भी बताया है; इसके बारेमें हम बादमें लिखेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-१२-१९१२

३०६. श्री गांधी "नजर-कैद"[1]

फीनिक्स
दिसम्बर २३, १९१२

साहबने प्रश्न किया: "क्या तू भारतीय है?"

उत्तर: "जी हाँ।"

प्रश्न: "तेरा जन्म भारतमें हुआ था?"

उत्तर: "जी हाँ।"

प्रश्न: "क्या तेरे पास कोई कागज है?"

उत्तर: "जी नहीं। मैं ट्रान्सवालकी अदालतका वकील हूँ और मेरे पास जोहानिसबर्गकी वापसी टिकट है। मैं आज ही वापस जाना चाहता हूँ।"

साहबने कहा: "कोई बात नहीं। तू बैठ जा। तेरा फैसला मैं बादमें करूँगा।"

(यह सारा सवाल-जवाब अंग्रेजीमें हुआ था। अंग्रेजीमें "तू"का समानार्थी शब्द प्रयोगमें नहीं आता। साहबने "यू" शब्दका प्रयोग किया था, किन्तु उसका प्रयोग जिस लहजेमें किया गया, उसके अनुसार "यू"का अर्थ "तू" हो सकता है। इस साहबने "यू"का प्रयोग जिस ढंगसे किया, उसे देखते हुए मैंने "यू"का अनुवाद "तू" किया है।)

श्री कैलेनबैक और मैं लोकमान्य श्री गोखलेको जंजीबारके आगे टांगा तक विदा करनेके बाद वापस आ रहे थे। हम लोगोंके पास डेकका टिकट था। टिकट डेलागोआ-बे तक का था। बेरामें समय बचानेके खयालसे हमने स्टीमर बदल लिया था। इस [दूसरे] स्टीमरमें हमारी ही तरह डेकपर उसी वर्गके लगभग साठ यात्री थे। डेलागोआ-बेके प्रवासी-अधिकारीने उन सबकी जाँच करनेके बाद उन्हें डेलागोआ-बेमें उतरनेकी अनुमति दे दी। यात्रियोंको सिर्फ चन्द घंटे रुककर रेलगाड़ीसे जोहानिसबर्ग जाना हो, तो भी यह अधिकारी उनकी जाँच करता था और जाँच करनेके बाद ही वह उन लोगोंको उतरनेका अनुमतिपत्र देता था।

१. "डायरी १९१२" की २९ नवम्बरकी टीपमें भी इस घटनाका उल्लेख है।

हमारे साथके अधिकांश यात्री ग्रीक थे और वे गरीव थे। उनकी जाँचके समय मैं वहाँ हाजिर था। उनकी जाँचमें करीव डेढ़ घंटा लगा होगा। निवासस्थान, धन्वा आदिके विषयमें सवाल पूछकर अधिकारी उन्हें अनुमतिपत्र दे देता था। उनमें से अधिकांश जोहानिसवर्ग जानेवाले थे और उनके पास कुछ कागज भी दिखाई पड़े। ये कागज मुख्यत: इस वातके प्रमाणमें थे कि उनके पास २० पौंडकी रकम है। मेरी वारी आई, तो साहवने मुझसे इस लेखके आरम्भमें दिये हुए सवाल किये।

मेरे वाद श्री कैलेनवैककी वारी आई। श्री कैलेनवैकसे उसने पूछा: "तुम्हारे पास कुछ कागज हैं?" श्री कैलेनवैकने इनकार किया और फिर उसे मेरा परिचय देते हुए कहा कि हम दोनों लोकमान्य श्री गोखलेको विदा करनेके लिए गये थे। मेरा खयाल है कि उस अधिकारीने कैलेनवैककी वात पूरी सुनी भी नहीं। उसने सिर्फ इतना ही कहा, "इसका केस मैं वादमें सुनूंगा। मैं इसे अनुमतिपत्र नहीं दे सकता। यह भारतीय है।" श्री कैलेनवैकने अपने दाँत भींचे। उन्हें वहुत वुरा लगा। उनका अनुमतिपत्र तो उन्हें तुरन्त मिल गया, किन्तु वह उन्हें जहरके समान मालूम हुआ। मुझे वहाँ छोड़कर वे अकेले किनारेपर जायें — यह तो कैसे हो सकता था? इस विचारसे उनका मन दु:खी हुआ। अपना अनुमतिपत्र लेते हुए उन्हें शर्मका अनुभव हुआ। उसे लेते समय क्रोधमें अधिकारीको कुछ खरी-खरी सुनानेके खयालसे मेरी ओर देखकर वे वोले: "ले, भुगत! तू तो एशियाई है। तेरी चमड़ी काली है। मैं यूरोपीय हूँ और गोरा हूँ। तुझे तो कैदमें ही रहना पड़ेगा।" (यहाँ "तू" शब्द स्नेह-सूचक है)। मैं हँस रहा था, किन्तु मेरे दिलमें आग जल रही थी: "मैं कैसा भारतीय हूँ? यह अधिकारी कैसा अन्यायी है? गोरे कितने वुरे हैं? हम भारतीय कितने तुच्छ हैं? लेकिन गोरोंका क्या दोष? अधिकारी क्या करें? मेरे भाइयोंने दक्षिण आफ्रिकामें अपनी जो छाप डाली है, उसका फल मुझे मिलना ही चाहिए। आज इसकी सजा भोग रहा हूँ, कल उसका लाभ उठाऊँगा। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंका भी क्या दोष? जैसे भारतके भारतीय वैसे हम? इसमें मेरा कर्त्तव्य क्या है? क्या अधिकारीपर नाराज होऊँ? नहीं। शासन तो अंधा होता है। तो क्या चुप रहूँ? नहीं। जहाँ दु:ख हो, वहाँ उसका प्रतिकार करनेका प्रयत्न करना ही चाहिए। क्या प्रयत्न किया जा सकता है? मुझे अपने कर्त्तव्यका पालन करना चाहिए। मुझे स्वार्थी न तो रहना चाहिए, न होना चाहिए। डेकके मेरे भारतीय साथी गन्दगीमें रहते थे; अपने रहन-सहनके द्वारा उनके समक्ष मुझे ठीक आदर्श पेश करना चाहिए। मुझे डेकके यात्रीकी तरह यात्रा करनी चाहिए और उनसे अनुरोध करना चाहिए कि वे अपने सम्मानका विचार करें और उसकी रक्षा करें; गन्दगी आदि दूर करें। गोरोंके उन कानूनोंका सम्मान करें जो ठीक मालूम होते हैं और समझमें आते हैं, और दृढ़ता तथा हिम्मतके साथ उन कानूनोंका विरोध करें जो अनुचित मालूम होते हैं और समझमें नहीं आते।

इस घटनाके वाद मुझे समझना चाहिए कि मेरे-जैसोंको तो जहाँतक वने, वहाँतक डेककी ही मुसाफिरी करनी चाहिए। ऐसा करनेपर ही मुझे डेकके यात्रियोंकी स्थितिकी सही कल्पना होगी, और उनकी कुछ मदद भी की जा सकेगी।" मैं अपने

कर्त्तव्यके विषयमें इस निर्णयपर आया। ये सारे विचार मेरे मनमें एक क्षणके ही भीतर आये होंगे। विचारोंका वेग बहुत तीव्र होता है, इस बातपर जिनका ध्यान न गया हो, उन्हें ये शब्द पढ़ते-पढ़ते भी उसका अनुभव हो जायेगा। ये विचार मेरे चोट खाये हुए मनमें बहुत उलटे-सीधे क्रममें आये होंगे, [लेकिन] अन्तमें मेरा मन शान्त हो गया। मुझे याद है कि वह शान्त हो गया था और यह याद है, इसीलिए मैं मानता हूँ कि वह पहले अशान्त हो गया था।

इस तरह मैं तो अर्ध-स्वप्नावस्थामें कुर्सीसे चिपटा बैठा हुआ था और श्री कैलेनबैक बेचैन थे और बेचैनीमें टहल रहे थे। वे पिंजरेमें कैद सिंह-जैसे दिखाई पड़ते थे। कुछ भारतीय भाई जो हमें लेनेके लिए आये थे, किनारेपर खड़े थे। श्री कैलेनबैकने उन्हें मेरे नजर-कैद होनेकी बात कही। उन लोगोंने कहा, "हमने तो श्री गांधीको उतारनेका प्रबन्ध कलसे कर रखा है। हम फिर आदमी भेजते हैं, वह अभी अनुमतिपत्र लेकर आ जायेगा।" यह खबर श्री कैलेनबैक मुझे दे गये। किन्तु उन्हें धीरज नहीं था। वे फिर अधिकारीके पास गये। उसने फिर वही जवाब दिया: "मुझसे अभी कुछ नहीं हो सकता।" जब बाकी सब लोगोंका काम पूरा हो गया, तो अधिकारी उठा और चलने लगा। मुझे कहता गया कि मेरे सम्बन्धमें निर्णय करनेमें अभी समय लगेगा। अधिकारीके जानेके थोड़ी ही देर बाद डेलागोआ-बेके भारतीयों द्वारा किया गया यत्न सफल हुआ। उनका आदमी अनुमतिपत्र लेकर आया। वह उस अधिकारीके मुंशीको दिखाया गया। मुंशीने उसे देखकर मुझे अनुमतिपत्र दिया और मैं वहाँसे मुक्त हुआ। श्री कैलेनबैक और मैं किनारेपर पहुँचे, तथा डेलागोआ-बेके भारतीयोंकी सेवा और सत्कारका रस लेकर उसी दिन जोहानिसबर्ग जानेवाली गाड़ीमें बैठे।

ऊपरकी इस घटनासे मैंने तो बहुत सीखा। 'इंडियन ओपिनियन'के पाठकोंको इसका कुछ खयाल आये और वे भी इससे कुछ सीखें, ऐसा सोचकर मैंने यहाँ उसका वर्णन किया है। क्या ऐसी आपत्ति केवल मेरे ऊपर ही आई है जो मैं उसका पुराण 'इंडियन ओपिनियन'के पाठकोंको सुनाकर उन्हें थकाना चाहता हूँ? मेरी मान्यता है कि ऐसा सवाल किसी भी पाठकके मनमें नहीं उठेगा। मैं जानता हूँ कि डेला-गोआ-बे और दूसरे बन्दरगाहोंपर दूसरे भारतीय यात्रियोंको मेरी अपेक्षा हजार गुना अधिक दुःख उठाना पड़ा है। और इसीलिए मेरा मन ज्यादा जलता है और इसीलिए मैं अपनी कहानी लिख रहा हूँ। मैं तो शिक्षित माना जाता हूँ। मुझे इस बातका ज्ञान है कि कब क्या करना चाहिए। मुझे बहुतेरे गोरे पहचानते हैं। मेरी गिनती "बड़े" लोगोंमें होती है। मुझे मदद करनेवाले भी बहुत लोग हैं। फिर भी यदि मुझे इतना कष्ट उठाना पड़ा तो दूसरे भारतीयोंका, जो शिक्षित नहीं माने जाते और अपनी रक्षा करनेमें अशक्त हैं, क्या हाल होता होगा?

मैं चाहता हूँ कि जितना उत्साह मेरे मनमें है, मेरी स्थितिमें पड़नेवाले किसी और भारतीयके मनमें भी उतना ही उत्साह उत्पन्न हो। [इन सारी मुसीबतोंसे] हमारी मुक्तिकी पहली सीढ़ी यह है कि हमें अपनी स्थितिकी सही पहचान होनी चाहिए। मेरी इस डेककी यात्रामें एक भारतीय भाईने हमारी स्थितिकी चर्चा करते

हुए मत प्रकट किया कि "हम चींटियों-जैसे हो जायें। हमें तो जैसे बने, सब सह कर अपना काम निकाल ले जाना है।" इसे मैं अज्ञान कहता हूँ। हमें अपने सम्मानका भान नहीं। हम अपने सम्मानकी रक्षाके लिए तैयार नहीं। "मेरी कमाई मुझे मिलती रहे, फिर भले गोरे मुझे कुली कहें, जहाजका अधिकारी मुझे लात मारे या मुझे बस्तीमें बन्द कर दिया जाये; भले ही मुझे जमीन न मिले, या मेरी दशा कुत्ते-जैसी हो जाये।" हमारी साधारण स्थिति ऐसी ही है और इस स्थितिको हमने स्वीकार कर लिया है, इसीलिए गोरे हमारी ओर इस दृष्टिसे देखते हैं। अपनी इस अवदशाके निर्माता हम स्वयं ही हैं। ऊपरकी घटनासे हमें यह सार लेना चाहिए और फिर प्रत्येक कठिन स्थितिमें विचारपूर्वक उसके अनुसार व्यवहार करना चाहिए। हमारे इस व्यवहारके दो लक्ष्य हैं: एक तो यह कि समाजके अन्दर ऐसी हरएक खामीको, जो इस स्थितिके लिए उत्तरदायी है, दूर करना है और दूसरे, गोरोंके अन्यायके खिलाफ हरएक आदमीको न्याय प्राप्त करनेके लिए संघर्ष करना है।

मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९१२

३०७. भयंकर अनर्थ

हम अपना भाग्य सराहते हैं कि दिल्लीमें लॉर्ड हार्डिजपर बम फेंकनेवालेका कायरतापूर्ण कृत्य घातक सिद्ध नहीं हुआ और लेडी हार्डिज भी बाल-बाल बच गईं। वर्तमान शताब्दीको मानवताके इतिहासमें ज्ञान और उन्नतिका युग माना जाता है। परन्तु इसमें भी ऐसे लोग विद्यमान हैं जो समझते हैं कि हत्याएँ करके राजनीतिक स्वतन्त्रता अथवा अन्य सुधार प्राप्त किये जा सकते हैं। यह एक ऐसी बात है, जिसे देखकर लोगोंके मनमें यह जिज्ञासा उत्पन्न होनी चाहिए कि जिसे उन्नतिका नाम दिया जा रहा है वह क्या सचमुच उन्नति है। भारतीयोंके नाते हमें यह देखकर खेद होता है कि क्रूरतापूर्ण दानवी हत्याओंके इस निन्दनीय मार्गके अनुगामी भारतमें भी पाये गये। स्मरण नहीं आता कि भारतीय इतिहासमें पहले इस प्रकारके कृत्य हुए हों। स्वार्थके लिए तो हत्याएँ हमेशा होती रही हैं। भारतमें भी इसका चलन वहाँ पश्चिमी प्रभाव पड़नेके बहुत पहलेसे था। परन्तु राजनीतिक हत्याओंका यह फोड़ा भारतके जीवनमें अभी-अभी निकला है। जिस पागल युवकने यह अपराध किया, उसने निस्सन्देह यही समझा होगा कि प्रतिष्ठित व्यक्तियोंकी हत्याओं द्वारा शासकोंको भयभीत करके भारतको स्वतन्त्र करवाया जा सकेगा। यों तो इस प्रकार स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती है, हमें इसमें सन्देह है; किन्तु यदि यह सम्भव हो तो भी हमारा उससे कुछ लेना-देना नहीं होना चाहिए। हम यह बिलकुल नहीं मानते कि बुराईका फल कभी अच्छा भी निकल सकता है।

सच तो यह है कि हत्याएँ करके स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका विचार एक मिथ्या कल्पना-मात्र है। इसका तो एक ही परिणाम हो सकता है: पहलेसे ज्यादा दमन तथा शासकोंके मनमें सन्देह और जनतापर करोंमें वृद्धि। इस सबका फल यह होगा कि देशके गरीब लोगोंके कष्ट बढ़ जायेंगे। इस अन्धकारमय अवस्थामें हम तो केवल यह प्रार्थना ही कर सकते हैं कि भारत हत्याओंके इस अभिशापसे मुक्त हो जाये और जो कुछेक युवक पथ-भ्रष्ट हो गये हैं वे फिर अपने पूर्वजोंकी इस बुद्धिमतापूर्ण सीखके अनुगामी बन जायें कि स्वतन्त्रता केवल तप और आत्म-शुद्धिसे प्राप्त हो सकती है — दूसरोंको सता कर नहीं। हम यह भी प्रार्थना करते हैं कि लॉर्ड हार्डिजके घाव जल्दी भर जायें और वे शीघ्र ही अच्छे हो जायें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१२-१९१२

३०८. पत्र: गो० कृ० गोखलेको[1]

फीनिक्स
नेटाल
दिसम्बर २८, १९१२

प्रिय श्री गोखले,

छगनलालका पुत्र बीमार था, इसलिए ज्यों ही हम जोहानिसबर्ग पहुँचे त्यों ही मुझे यहाँ भागना पड़ा। कटि-स्नान और आंशिक उपवासके फलस्वरूप बच्चेकी हालतमें काफी सुधार है।

मोम्बासासे भेजे गये आपके पत्र और भारतसे भेजे गये आपके तारके लिए अनेक धन्यवाद! आपने तार द्वारा जो आलोचनाएँ प्रेषित की हैं, वे हमारे लिए अप्रत्याशित नहीं है। मैं उससे बिलकुल विचलित नहीं हुआ हूँ। आलोचकोंने समस्याको समझनेका कष्ट नहीं उठाया। श्री नटराजन तकने अपनी पत्रिकामें लिखा है कि मौजूदा परिस्थितियोंमें जितना अच्छेसे-अच्छा सौदा पटाया जा सकता था, हमने पटा लिया है। सचाई तो यह है कि हमने "सौदेबाजी"की ही नहीं है। परन्तु मैं इस सम्बन्धमें आपको परेशान नहीं करना चाहता। मुझे आपके बहुमूल्य समय और स्वास्थ्यका ध्यान है; इसलिए मैं आपको लम्बा पत्र नहीं लिखना चाहता।

आपके तारका उत्तर मैंने इस सप्ताहके आरम्भमें ही दे दिया था। आशा है है कि उपहार-मंजूषा ठीक समयपर पहुँच गई होगी। 'उमकाज़ी' जहाज काफी समय तक बेरामें ठहरा था।

आपकी बात सही निकली और मेरी गलत। हमारी जहाजी यात्राके लिए जोहानिसबर्गमें जो खाद्यान्न खरीदा गया था वह फार्म जा पहुँचा। लगता है कि

१. देखिए "पत्र: गो० कृ० गोखलेको", पृष्ठ ३५०-५१

सबके होशो-हवास गुम हो गये थे, कुमारी श्लेसिनके तो सबसे ज्यादा। आपने यह भी पूछा था कि हमारी यात्राका खर्च देना भूल जानेके लिए कौन जिम्मेदार था। इस्माइलका कहना है कि उसे इसके बारेमें कोई जानकारी नहीं और पोलकका तार उसे मिला ही नहीं था। पोलकको इस्माइलकी बातपर विश्वास नहीं। बेचारे रुस्तमजी बड़े परेशान हुए, जब उन्होंने सुना कि यात्रा-शुल्क बेरामें चुकाना पड़ा था। आपकी यात्राकी दैनन्दिनी आपको पोलकके भुलक्कड़पनके कारण नहीं सौंपी जा सकी। मैं मानता हूँ कि इन भूलोंका होना जरूरी नहीं था। यदि मैं ज्यादा खयाल रखता तो इनसे बचा जा सकता था। मैंने इस दौरेके वक्त जो सबक सीखे हैं, उनको भुलाऊँगा नहीं।

आशा है कि मैं जनवरीके मध्य तक फीनिक्समें रहने लगूँगा।

जोहानिसबर्ग पहुँचनेपर, कुमारी श्लेसिनने मुझे बताया कि सत्याग्रह-कोषमें जो-कुछ बचा था वह सभी खर्च हो चुका है। चूँकि मुझे अभी कई हिसाब चुकाने हैं, इसलिए मैंने आपको भेजे अपने तारमें कुछ और शब्द जोड़नेकी धृष्टता की थी कि आप श्री पेटिटसे कह दें कि वे अपने पासकी बकाया राशि तार द्वारा भेज दें।[1]

आशा है, आपका स्वास्थ्य अब ठीक होगा। अपने आहारमें आप जो भी परिवर्तन करें, उसके तथा अपने स्वास्थ्य आदिके बारेमें कृपया पूरी-पूरी जानकारी देते रहें।

यदि सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके किसी सदस्यको अलगसे दक्षिण आफ्रिका-सम्बन्धी कार्य सौंपा जा सके, तो हर डाक द्वारा उसको यहांकी परिस्थितिके बारेमें नियमित रूपसे एक पत्र और ध्यानपूर्वक वितरणकी दृष्टिसे 'इंडियन ओपिनियन'की कुछ प्रतियां भेजनेका प्रबन्ध किया जा सकता है। आपने यहांकी स्थितिके बारेमें नियमित रूपसे लिखते रहनेके लिए मुझे कहा है। लेकिन मेरा खयाल है कि हर पखवाड़े आपपर लम्बे-चौड़े पत्र पढ़नेका भार डालना अनुचित है। यह सब तो आपके द्वारा नियुक्त कोई सदस्य भी कर सकता है और आवश्यक होनेपर वह आपसे आदेश लेता रह सकता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्चः]

खोई हुई उपहार-मंजूषाको जहाजसे भेजनेकी ब्योरेवार रसीद और उसके बीमेका प्रमाणपत्र संलग्न है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ३८०६) की फोटो-नकलसे।

१. रतन टाटाके २५,००० रुपयेके अनुदानकी रकम तार द्वारा श्री पेटिटने ही भेजी थी; देखिए "श्री टाटाकी उदारता", पृष्ठ २९५-९६।

३०९. डायरी : १९१२[1]

जनवरी १५, सोमवार, पौष वदी ११

मेढ, मणिलाल, प्रागजी लौट आये।

यात्रा टिकटोंकी[2] किताब	१. ६. ३
डाक-टिकट	०. २. ०
रोकड़ वाकी	३. ३. १०

जनवरी १६, मंगलवार

शहर गया। पोर्टर मिला। वापस आया। डर्बनमें प्लेग।

चमड़ा	०. ७. ६
कागज	०. ०. ३
रोकड़ वाकी	२. १६. १

जनवरी १७, बुधवार

शहर गया। श्मशानके वारेमें समितिसे कब्रिस्तानके पास मिला।

तार	०. १. ०
भाड़ा, नमकका	०. १. ०
कागज	०. ०. ३
रोकड़ वाकी	२. १३. १०

डाक — हरिलाल, डॉक्टर, लल्लूभाई, दुर्लभभाई, एन० एम० कादिर, 'गुजराती' सम्पादक, छगनलाल, लल्लूभाई, गुलाबभाई।

१. गांधीजीने ये संक्षिप्त नोट दिन-प्रति-दिन १९१२ की "इंडियन ओपिनियन–पाकिट डायरी" में लिखे थे। यह डायरी इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स, से प्रकाशित की गई थी और ६–१–१९१२ के **इंडियन ओपिनियन**में जिसका इश्तिहार छापा गया था। इसका आकार ४½" × ३½" था। इसमें अधिकांशतः उन लोगोंके नाम आते हैं, जिन्हें वे प्रतिदिन पत्र लिखते थे या जो उनसे टॉल्स्टॉय फार्ममें मिलने आते थे। इसके सिवा इसमें उनके अपने जोहानिसवर्ग या फीनिक्स जाने-आनेका उल्लेख है। ये सब टीपें गुजरातीमें हैं; किन्तु दैनिक आय और व्ययका हिसाव, जो एक ही कालममें ऊपरसे नीचेकी ओर दिया गया है, अंग्रेजीमें है। अनुमानतः यह हिसाव फार्ममें उनके पास जो थोड़ा-सा नकद रुपया रहता था, उसका है और इसमें फुटकर जमा की जानेवाली रकमें और स्कूलके लिए प्राप्त तथा खर्च की गई रकमें शामिल हैं। डायरीमें विराम आदि चिह्न बहुत कम हैं और कहीं-कहीं उनसे भ्रम भी उत्पन्न हो जाता है। इसलिए जहाँ अत्यन्त आवश्यक लगा, वहाँ अनुमानसे विराम आदि चिह्न लगा दिये गये हैं। डायरीमें जिन पत्रोंका उल्लेख है; उनमें कुछकी जाँच पूर्वापर संदर्भोंसे कर ली गई है।

२. जान पड़ता है कि इस पुस्तिकामें एक व्यक्तिके लिए ठनालीसे जोहानिसवर्ग जाने और आनेकी टिकटें होती थीं।

जनवरी १८, गुरुवार

शहर गया। चैमनेसे मिला। उन्होंने कहा कि वे डेलागोआ तार करेंगे। भायातकी पत्नीको सजा।[1]

अखबार	०.	०.	३
बकसुआ	०.	०.	६
भायातसे प्राप्त	०.	१.	०

जनवरी १९, शुक्रवार

पत्र लिखे – इस्माइल मूसा घलेट, दुर्लभ वश, मगनलालको।

चैमनेको तार	०.	४.	३
सन्देशवाहकको	०.	१.	०
रोकड़ बाकी	२.	८.	१०

जनवरी २०, शनिवार, माघ सुदी १

शहर गया। डॉक्टर पोर्टरसे मिला। इस दर्मियान श्री डनिंग फार्मपर आये और उनकी गाड़ी छूट गई। क्लेसिन और दोरावजी साथ-साथ आये। श्रीमती शेरको पत्र लिखा।

अल्बर्ट	१.	०.	०
रिक्शा	०.	१.	३
'स्टार'	०.	०.	३
रोकड़ बाकी	१.	७.	४

जनवरी २१, रविवार

मुहम्मद हाफेजी दूसरे दो मुसलमान तथा भीखू और मोरारजी आये। दोरावजी, हाफेजी और उनके मित्र, क्लेसिन और डनिंग गये। लिखा — क्लेसिन, छगनलाल, मेहता, विंटरबॉटम, मॉड, कौल[2], पुरुषोत्तमदासको। वाल्मीकि रामायण शुरू की।

जनवरी २२, सोमवार

डाक – दादा अब्दुल्ला, गोकुलदास, लॉर्ड ऍम्टहिल।

जनवरी २३, मंगलवार

इस्माइल आये, मोरारजी और भीखू भाई गये। लिखा – डेविड केसवलू, पुरुषोत्तमदास, नायू भाणा, वोमन शाको।

१. इंडियन ओपिनियन, २७-१-१९१२ के अनुसार १८ जनवरी १९१२ को भायातकी पत्नी सलोमीको जोहानिसबर्गके मजिस्ट्रेटने निर्वासनकी सजा देकर हवालातमें भेज दिया था।

२. मूलमें "कोल" है, और वह भी सही हो सकता है। यह नाम डायरीमें कई जगह आया है।

डाक-टिकट	०. २. ६
प्राप्त इस्माइलसे	२. ०. ०
रोकड़ बाकी	३. ४. १०

ऊपरकी टीप सोमवारको कर लेनी थी।[1] थम्बी नायडू आये। लिखा—लेपिन, सैयद हाजीमियाँ, सुभान गॉडफ्रे, श्लेसिन, वेलशी और वर्नेटको।

जनवरी २४, बुधवार

थम्बी नायडू गये। दादाभाई आये और गये। अल्बर्ट आये। लिखा—अभयचन्द, टिंडेल, श्लेसिन, दीवानको।

जनवरी २५, गुरुवार

लिखा—श्लेसिन, ठक्कर, छगनलाल, मगनलालको।

तार हसनको	०. १. ३
डाक-टिकट	०. २. ०
जॉन	०. २. ६
रोकड़ बाकी	३. ०. १

जनवरी २६, शुक्रवार

मोहन सोनी आये और गये। दो गोरे चप्पलें लेने आये।

जनवरी २७, शनिवार

लिखा—लेपिन, शेलत, दुलार खाँ, शेर, टिंडेलको। श्रीमती वॉगल आई और गई। भीमभाई आये। नायडू आये और गये। मणिलाल और जमनादास जो० ब० गये।

जनवरी २८, रविवार

गॉर्डन, जीवनजी, नौरोजी, इस्माइल मूसा बलेड और उनके दो मित्र आये और गये। उनके साथ ही फीरोज शा और माणिक शा भी गये। लिखा—मॉड, विटरबॉटम, छगनलालको।

बलेडसे प्राप्त	२. ०. ०

जनवरी २९, सोमवार

लटावन गया। मैं शहर गया और लौट आया। वेलशी और उसका बेटा रजब अली आये। हुसेन और उसका चाचा जो० ब० आये। लेनको नये विधेयकके बारेमें पत्र लिखा।[2]

अन्य पत्र[3] सम्पादकों, अलेक्जैंडर, श्लेसिनको।

१. यहाँ गांधीजीका तात्पर्य कदाचित् यह है कि इस पाद-टिप्पणी-चिह्नसे पहलेके दो अनुच्छेदोंको २२ तारीखकी टीपमें शामिल करना चाहिए था।

२. देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ २१०-१२

३. यह शब्द अनुमानसे दिया गया है।

रजवअलीके सम्बन्धमें प्राप्त	३. १. ०
प्रेमासे लटावनके सम्बन्धमें	१. १०. ०
किराया चुकाया	०. २. ११
चमड़ा	०. ११. ०
किताबें आदि	०. ३. ०
मणिलाल	०. ६. ६

जनवरी ३०, मंगलवार

हुसेन और उसके फूफा आयें। मणिलाल और जमनादस आये। फकीरा[1] आया और लौट गया। वेलशी गये। लेनको तार दिया।[2] अब्दुल्ला सेठ कल गुजर गये।[3] लिखा—वेस्ट, हरिलाल, श्लेसिनको।
तार—लेनको, दादा अब्दुल्ला [के बारेमें] रुस्तमजी और केपको।

०. १३. ०

जनवरी ३१, बुधवार

ईसपमियाँ गये। इसाककी माँ आई और गई। केनेडी आये और गये और नायडू भी। लेनका एक लम्बा तार मिला।[4] लिखा—हा[जी] हबीब, प्रभाशंकर, वी० एम० पिल्ले, राघवजी, खंडेरियाको।

चप्पलोंके लिए प्राप्त	१. ०. ०
दानाको दिया	०. ६. ६
भाड़ा	०. ४. ६
भूल-चूक	०. १. ०
रोकड़ बाकी	७. १४. ८

फरवरी १, गुरुवार

बद्री, रामलाल, और दो अन्य व्यक्ति आये। हुसेन गया। दाना आया। पत्र—श्लेसिन, छगनलाल, सम्पादक 'इं० ओ०' भायात, रिच, कैलेनबैक, मावजी हरि, रुस्तमजी, उस्मान अहमद, वेलशी केशवजी, क्लेमेंट डोकको। पंजीयक (रजिस्ट्रार) को तार।[5]

मिला इसाकके पिताके लिए	०. ३. ६
जॉनसे आलुओंके लिए	०. १६. ६

१. फकीरा या फकीरभाई — एक फार्मवासी, जिन्हें गांधीजीने डायरीमें फकीरा या फकीर लिखा है। ये फीनिक्समें भंडारी थे। गांधीजीने इन्हें "वीर फकीरा" कहा है। ये ६ या ७ बार जेल गये और अन्तमें निर्वासित कर दिये गये। देखिए खण्ड १०, पृष्ठ २२४ और २३९।

२. देखिए "तार: गृह-मन्त्रीके निजी सचिवको", पृष्ठ २१२-१३।

३. दादा अब्दुल्ला हाजी आदमका देहान्त २९ जनवरी १९१२को हुआ था; देखिए "स्व० दादा अब्दुल्ला हाजी आदम", पृष्ठ २१६-१७।

४. देखिए परिशिष्ट १४।

५. यह उपलब्ध नहीं है।

उधारकी रकमें वापस ०. ७. ०
पैराफीन ०. ०. ६
जॅनके दूधके लिए जॉनको दिये १. १०. ०
तार ०. १६. ९

रोकड़ बाकी ६. १५. ५

फरवरी २, शुक्रवार

बद्री और उनके मित्र गये। प्रभु आया। हुसेन आया। कुमारी श्लेसिनको पत्र।

डाक खर्च ०. २. ०
पंजीयकको भायातके बारेमें तार ०. १. ६

रोकड़ बाकी ६. ११. ११

फरवरी ३, शनिवार, माघ वदी १

सवेरे लिखा – वेस्ट, छगनलाल और पुरुषोत्तमदासको। प्रागजी गये। हुसेन गया। सायंकालकी गाड़ीसे वालजी और दुलभ भगा आये। लेनका तार, स्मट्स सोमवारको उत्तर देंगे।

स्टेशन मास्टरको चुकाया ३. ०. ०
प्रभुसे प्राप्त ०. २. ६

रोकड़ बाकी ३. १४. ५

फरवरी ४, रविवार

लिखा – जोशी, मगनलाल, ठक्कर, विंटरबॉटम, मॉड, आनन्दलाल, एन० एम० कादिर, मुन्नूको।

गॉर्डन, विवन, श्लेसिन, कुप्पु, आये और गये। वालजी और दुर्लभजी भी गये। श्रीमती नायडू और नायना चकी भी गईं।

गॉर्डनसे प्राप्त १. ०. ०

फरवरी ५, सोमवार

लिखा – छगनलाल, वेस्ट, श्लेसिन, वर्नेटको।

डाक टिकिट ०. १. ९
तार कैलेनबैकको ०. १. ३

रोकड़ बाकी ४. ११. ५

फरवरी ६, मंगलवार

बाजा और राजा आये और गये। लिखा – डॉ० गुल, श्लेसिन, कालीदास पटेल, दुलारखाँ, आमद भायात, वेल्शीको। स्मट्सके लिए तारका मसविदा तैयार किया।[1]

डाक टिकिट ०. ०. ६

रोकड़ बाकी ४. १०. ११

१. देखिए "तार: गृह-मंत्रीको", पृष्ठ २२३।

फरवरी ७, बुधवार

. . . का एक व्यक्ति आया और गया।[1] स्मट्सको तार नहीं भेजा। उनका कलकी तारीखका तार मिला।[2] उसके उत्तरमें दूसरा तार दिया।[3] लिखा — वल्लभ राम, ज़ी० अ० मकनजी, वेलशी, श्लेसिनको।

फकीरके लिए प्राप्त	३.	०.	०
स्मट्सके तारका चुकाया	०.	४.	३
गुलको पार्सल और भाड़ा	०.	५.	७

फरवरी ८, गुरुवार

स्मट्सका तार आया — उसका उत्तर तैयार किया।[4] प्रागजी आये। लिखा — श्लेसिनको।

कैलेनबैकके तारका दिया	०.	१.	६
के भाड़ेका बकाया	०.	०.	९
डाक-टिकट	०.	२.	६
रोकड़ बाकी	६.	१६.	१

फरवरी ९, शुक्रवार

बद्री, ओलर, [ऑलिव ?] और गोविन्द आये और गये। कालिका सिंह आये। बद्रीका बेटा और अबलक आये। लिखा — छगनलाल, पुरुषोत्तमदास, पारसी रुस्तमजी, जोशी, दादा उस्मान और आंगलियाको।

स्मट्सके तारका खर्च	०.	४.	६
रोकड़ बाकी	६.	११.	७

फरवरी १०, शनिवार,

अबलक, कालिकासिंह, मणिलाल, मेढ और जमनादास गये। बुश और मुर्गन आये। कुप्पू और डाह्या गये।

जमनादास	०.	५.	०
कुप्पू	०.	३.	०
दाना	०.	७.	३
डाक टिकट	०.	२.	६
मेढको तारके लिए	०.	२.	६
रोकड़ बाकी	५.	११.	४

१. यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।
२. परिशिष्ट १५।
३. देखिए "तार: गृह-मन्त्रीके निजी सचिवको", पृष्ठ २२४।
४. देखिए पृष्ठ २२४ पाद-टिप्पणी १।
५. देखिए "तार: गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ २२४-२५।

फरवरी ११, रविवार

क्रूगर्सडॉर्पका दर्जी आया और गया। कोट लाया। श्लेसिन और कुप्पू नायडू आये और गये। मैं भी कैं० से मिलनेके लिए रिचके साथ गया। डॉक्टरने १२ पौंड दिये।

दर्जीसे प्राप्त	०.	५.	०
'इंडियन ओपिनियन'के लिए	०.	१.	०
स्टेशन मास्टर	३.	०.	०
गाड़ीके यात्रा टिकटके दिये	१.	६.	३

फरवरी १२, सोमवार

क्रूगर्सडॉर्प गया। कैं० से मिला। क्विनके घर भोजन। श्लेसिनकी घटना – हनीफ आया – बालक प्रभु[1] फार्मपर आया – कैलेनबैक, मेढ, मणिलाल, जमनादास, डाह्या, कुप्पू, शेलत और अन्य फार्मपर आये।
पत्र लिखे – वेस्ट, देवी, पुरुषोत्तम, संघवी, श्लेसिनको।

कुप्पूको किराया	०.	३.	०
डाह्यासे मिले	१.	१०.	०
प्रभुका किराया	०.	३.	०
किराया दिया	०.	५.	०
कैलेनबैकको दिया	३.	०.	०

फरवरी १३, मंगलवार

लिखा – छगनलाल, अनी, आनन्दलाल, अभयचन्दको। कैलेनबैक शहर गये। वेलशीके लोगोंके बारेमें पंजीयकको तार। कैलेनबैक और कासिम आये। वेस्ट और मगनलालको पत्र लिखे।

चैमने और वेलशीके तारोंका खर्च चुकाया	०.	६.	३

फरवरी १४, बुधवार

पत्र लिखे – पुरुषोत्तमदास, केशव फकीर, मणिलाल डॉक्टरको। श्लेसिन, कैलेनबैक, नरोत्तम और दुलाभाई आये। कैं०के सिवा सब गये। हुसेन वेरीनिगिंग गया।

डाक-टिकट	०.	२.	३
भागातको तार	०.	२.	१
रोकड़ बाकी	५.	१०.	७

फरवरी १५, गुरुवार

डॉक्टर, छगनलाल, सम्पादक, एन० कादिर, गंगोत, वेलशी, श्लेसिन, मूसा हाजी आदम, गोरन आये और गये। गेब्रल गये। लिखा – शेर, डॉ० गुल, छगनलाल, रिच, टीकली, मेलोको।

१. टॉल्स्टॉय फार्मका एक छात्र।

भाड़ा दिया	०. १. ३
रोकड़ बाकी	५. ९. ४

फरवरी १६, शुक्रवार

लिखा—श्रीमती पोलक, वेस्टको। कैलेनबैक और हुसेन आये।

तार सोराबजीको	०. २. ०
भाड़ा	०. १. ३
कैलेनबैकसे प्राप्त	३. ०. ०
रोकड़ बाकी	८. ६. १

फरवरी १७, शनिवार

पत्र लिखे—सम्पादक, नाथलिया, अब्दुल करीम, केशवजी गोगा, वेलशी, चंची[1], हरिलाल[2]।

प्रभु और भगाको दिया	०. १०. ०
डाह्यासे प्राप्त	०. ०. ६
रोकड़ बाकी	७. १६. ७

फरवरी १८, रविवार

श्लेसिन और थम्बी नायडू आये। दोनों गये। डर्बनमें सोराबजीके उतरनेका तार मिला। पोलकका पत्र श्लेसिनको लिखाया। मॉड और विटरवॉटमको पत्र लिखे।

फरवरी १९, सोमवार, फाल्गुन सुदी १

लिखा—नूर मुहम्मद, सुलेमान, इस्माइल मियाँ, रेवाशंकरभाई, गु० स० कौल, [कोल?], पुरुषोत्तमदास, रावजी — प्रागजी आये। भगा आया।

सोराबजीके तारका दिया	०. १. ०
भाड़ा	०. १. ३
कृष्णसामीको रेलका	०. २. ११
यात्रा-टिकट	१. ६. ३
रोकड़ बाकी	६. ५. २

फरवरी २०, मंगलवार

प्रभुके साथ शहर गया, प्रागजी संध्याकी गाड़ीसे आये, प्रभु और मैं वापस लौटे, कै० भी। दफ्तरसे पुरुषोत्तमदास, डॉक्टर राजकोट,[3] महाजन, जोशी, अ० आदिको पत्र लिखे।

चमड़ेका दिया	०. ९. ६
रेल-किराया	०. ४. ५
रोकड़ बाकी	५. ११. ३

१. "पत्र: चंचलबहन गांधीको", फरवरी १८, १९१२ (पृष्ठ २३३-३४)?
२. "हरिलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश", फरवरी १८, १९१२ (पृष्ठ २३४-३५)?
३. राजकोटमें डॉ० प्राणजीवन मेहताको।

फरवरी २१, बुधवार

सोरावजी, शेलत, जंजीबारके मेहमान,[1] मेढ, प्रागजी, बद्री, लालबहादुर सिंह आये। मेहमान, बद्री और प्रागजी चले गये। हवा चक्कीवाला आया और गया।

आड़ू प्राप्त	०.	१८.	६
बद्री	२.	७.	०
जंजीबारियोंसे चप्पलोंके	०.	१०.	०
भगा	०.	५.	१
माल-भाड़ा	०.	१.	५
रोकड़ बाकी	९.	१०.	५

फरवरी २२, गुरुवार

मुनसामी, पवाडे आये और गये। [लिखा]—हरिलाल, मैनेजर, 'इंडियन ओपिनियन', जसात,[2] अ० करीम, दादा अ०, मुहम्मद इ०, कुमारी श्लेसिन।

फरवरी २३, शुक्रवार

हुसेन आया। दोपहरको लिखा—अब्दुल करीम, आदिको। प्रभु आया। सुलेमान और अली गये।

सु० और अलीका किराया	०.	३.	९

फरवरी २४, शनिवार

हुसेन, फीरोज शा, माणिक शा और प्रभु सुबह गये। सोराबजी, शेलत और दाना दोपहरको गये। कुप्पू, हनीफ और शिव फैन फोक्सरस्ट गये। अनी और अभेचन्दको पत्र लिखे।

डाक टिकट	०.	२.	६
रोकड़ बाकी	९.	४.	२

फरवरी २५, रविवार

गॉर्डन, श्लेसिन, आइज़क और कुप्पू आये। नारणसामी आया। आइज़कके सिवा सब गये।

आइज़कको चमड़ेका दिया	१.	१०.	०
रोकड़ बाकी	७.	१४.	२

फरवरी २६, सोमवार

लिखा—गु[जरात] सं[पादक], 'इं० ओ०', मॉड, विटरबॉटमको। मणिलाल, चतुरभाई, मोतीलाल दीवान [आये]। मणिलाल आइज़क और कैलेनबैक गये। कल रात कैलेनबैकसे

१. एम० सूर्जी, कानजी जीवनभाई और लालजी मेघजीभाई; देखिए "तार: 'एशियाई पंजीयकको'", पृष्ठ २३६।

२. देखिए "[illegible] जसातका मामला", पृष्ठ २३९-४०।

उनकी भतीजीके सम्बन्धमें बातें कीं। सुलेमान और दाना आये। मणिलाल और कै० वापस आ गये।

दानाके लिए प्राप्त	०. १०. ०

फरवरी २७, मंगलवार

लिखा – मगनलाल, वेस्ट, डॉक्टर, पुरुषोत्तम, पोलक, अमरसी, जोशी, जसात, नाथलिया, लछमन पांडे। अली आये।

झाड़ुओंके लिए प्राप्त	१. १५. ३

फरवरी २८, बुधवार

लिखा – मेमन, मूसा अलीसाको। साथमें प्रमाणपत्र भी भेजे। पत्र मुहम्मद इब्राहीम कुनके, पटेल, शेरको भी। मणिलाल गया। मेढ, इस्माइल, फकीर और मुहम्मद गये। कै० भी गये। लल्लूभाई, गांडाभाई, मोरारजी, भीखूभाई और मेढ आये। कै० भी आये।

इस्माइल और मुहम्मदको किराया दिया	०. ३. ०
मणिलाल	०. ५. ०
रोकड़ बाकी	९. ११. ५

फरवरी २९, गुरुवार

शहर गया। मोरारजी आदि गये। कै० अरमिलो गये। श्री हॉवर्डसे मिला। वा आदि और कृष्णसामी फिर आये।

ढुलाई दी	०. २. ०
कृष्णसामीको किराया दिया	०. १. २
रिक्शा	०. ०. ९
रायटर	०. १०. ०
चमड़ा	१. १४. ६
यात्रा-टिकट	१. ६. ३
रोकड़ बाकी	५. १३. ९

मार्च १, शुक्रवार

तार चैमनेको। श्लेसिनके लिए रेल-पत्र। लिखा – चैमने, ग्रेग, रिच, भायात [?], नेलसनको। फकीर, इस्माइल और मुहम्मद आये। मगनलाल और मणिलालको पत्र लिखे।

चैमनेको भेजे तारके लिए	०. ४. ०
डाक-टिकट	०. २. ६
जॉनसे आटेके लिए प्राप्त	०. १. ०
रोकड़ बाकी	५. ११. ३

मार्च २, शनिवार

कुमारी नुडसन आई। मेढ, प्रागजी और जमनादास गये।

जॉनसे मिला आलुओंके लिए	६. ९. ९
दूसरी चीजोंके लिए	३. ९. ०
जॉनको दूधके लिए दिया	०. १३. ६
जमनादास	०. ४. ०
रोकड़ बाकी	५. ३. ६

मार्च ३, रविवार

ये लोग और कुमारी नुडसन व्लेसिन, रोश और उनकी पत्नी तथा कुप्पू आये। वापस गये। कैलेनबैक आये।

मार्च ४, सोमवार

कैलेनबैक, विंटरबॉटम, मॉड, गु० स०, काछलिया, भायात और वल्लभराम आये। मोती-मेढ, देसाई गये।

मार्च ५, मंगलवार, फाल्गुन वदी १

लिखा — पुरुषोत्तमदास, वेस्ट, हरिलाल, मणिलाल, छगनलाल, जीवाराम पंड्या, मोती-लाल, रामजी। अलेक्जैंडर, व्लेसिन और वल्लभराम गये। काछलिया, भायात और कै० प्रातःकाल गये। ऑलिव और जोन [डोक] आये।

आलुओंकी बिक्रीसे प्राप्त	०. १७. १
रोकड़ बाकी	६. ०. ७

मार्च ६, बुधवार

लिखा — कुमारी व्लेसिन, रणछोड़ हरी, 'इं० ओ०', डॉ० पोर्टर, लजारस, चैमने। रिच आये और गये। मेढ आये।

जॉनसे कै० के लिए प्राप्त	३. ०. ०
डाक-टिकट	०. २. ०
मेढ और देसाई	१. ०. ०
गायलियाके सम्बन्धमें कांग्रेसको तार	१. ४. ०

मार्च ७, गुरुवार

पोलक, ठक्कर, लॉरेन्स, दाउद मुहम्मद, वेलजी, व्लेसिन, कै० आये। कुछ पत्र लिखे।

कैलेनबैकसे कैविलके प्राप्त	०. १०. ०
मेढ	०. ९. ६
देसाई	०. ७. १
लड़कोंसे	०. ०. ६

दाउद मुहम्मदको हुसेनके बारेमें और वेस्टको	
तार देनेका और डाक-टिकट	०. ४. ६
कैलेनबैकसे जाँनके लिए	३. ०. ०
रोकड़ बाकी	५. १९. १०

मार्च ८, शुक्रवार

पत्र डाले – वेलशी, नायलिया, आंगलिया, और जो० ब० के अन्य लोगोंको। नायलियाको तार।

लिखा – मैनेजर, 'इं० ओ०,' अनी, डेलानी, वेलशी डी'वेरेको लिखा। श्लेसिन, कैलेनबैक, दौलत आये।

नायलियाको तार	०. १. ०

मार्च ९, शनिवार

आमद भायात [?] और कै० के सिवा सब फार्मसे लौट आये। श्लेसिन प्रातःकाल आई और वापस गई। वॉक्सबर्गसे गजाधर मुझे लिवाने आये।

लड़कोंको किराया	०. ११. ८
हनीफको किराया	०. २. ११
थलेडसे प्राप्त	३. ०. ०
हनीफको दिया	०. ५. ६
रिक्शा	०. ०. ९

मार्च १०, रविवार

वॉक्सबर्ग गया, मेढ और अन्य साथ गये। दो बजेकी गाड़ीसे लौटा। ४ बजे भायातके बारेमें सभा हुई।

रेल-किराया दिया	२. ९. ६
ढुलाई आदि	०. ४. ६

मार्च ११, सोमवार

मेढ और देसाई डर्बन गये। लड़के सोराबजी और जमनादासके साथ फार्मपर वापस आ गये। भगा छोटा और टीकलीका बेटा आये।

भगा छोटाके लिए प्राप्त	२. ०. ०
डाह्या प्रभु	१. १०. ०
फोनका	०. १. ०
मेढके सम्बन्धमें तार	०. १. ०
रोकड़ बाकी	८. १३. ९

मार्च १२, मंगलवार

विटेकर आये, कै० शामको आये। रिचको पत्र, रुस्तमजीको भी। वेसनराम [?]। रातको पत्र – हरिलाल ठक्कर, मणिलाल, छगनलाल, रत्नम्, 'इं० ओ०', मेढ, रुस्तमजी, श्लेसिनको।

मार्च १३, बुधवार

लिखा – डांगरे [?], मूसा, उसावजी, श्लेसिन, वैगने, मुहम्मद इस्माइल, डेविड केनवलूको। शेलत आये और गये। भगा और शिवपूजन आये। कै० आये।

भगाके खानेका	१.	१०.	०
डाक-टिकट	०.	२.	६
रोकड़ बाकी	१०.	१.	३

मार्च १४, गुरुवार

श्लेसिन और हेनरी। पत्र – पुरुषोत्तमदास, सुलेमान आमद, श्लेसिन, विटेकर गये।

सुलेमानका किराया प्राप्त	०.	३.	०

मार्च १५, शुक्रवार

हजूरासिंह, लालबहादुर सिंह और कै० आये। सुलेमानके लिए ८ पौं० १० शिलिंगका चेक दिया।

कैलेनबैकको टिकटोंके लिए दिया	१.	०.	०
रोकड़ बाकी	९.	४.	०

मार्च १६, शनिवार

हजूरा सिंह और लालबहादुर सिंह गये। कै० गये और आये। पत्र छगनलालको।

कैलेनबैकसे प्राप्त	०.	१७.	६
टिकटोंके दिये	०.	१७.	६

मार्च १७, रविवार

श्लेसिन, गॉर्डन, मुर्गन, नायडू और बुश आये – श्लेसिन, गॉर्डन और नायडू गये। जर्मिस्टनका धोबी रहनेके लिए आया। पत्र – लॉटन, मेड, हुसेन [?], तारासिंह, मॉड, विटरबॉटम, मेयो, श्लेसिनको।

श्लेसिनको दिया	०.	४.	०

मार्च १८, सोमवार

कै० गये और वापस आये। बा, मुर्गन और बुश गये। सोढाको कोमाटीपूर्टमें रोकनेका तार आया। शेलत गये। पत्र – श्लेसिन, काछलिया, वेस्ट, रिच, प्राणजीवनको।

श्रीमती ग०	०.	५.	०
माल-भाड़ा	०.	१.	३
यात्रा-टिकट	१.	६.	३
तार "नाइसली"[१] को	०.	१.	०
रोकड़ बाकी	७.	६.	९

१. नेटाल भारतीय कांग्रेसका तारका पता।

मार्च १९, मंगलवार, चैत्र सुदी १

सोरावजी आये – कैलेनबैक आये। श्लेसिनको पत्र, सोढाको भी।

डाक-टिकटोंके दिये	०.	१.	०
वासडा [वासेला ?]से डबल रोटीके लिए प्राप्त	०.	१.	६

मार्च २०, बुधवार

रेवाशंकर शहर गया – वह और रतनसी आये। पत्र – श्लेसिन, कस्तूर और काछलियाको।

तार स्मट्सको[1]	०.	१.	६
रोकड़ बाकी	७.	४.	९

मार्च २१, गुरुवार

सोनी, तुलसी, और वालजी आये। कनवी आये। श्लेसिनको पत्र लिखा।

मार्च २२, शुक्रवार

कै० आये। रतनसी गये और आये। सुलेमान आया। तुलसी और वालजी गये।

सोढासे अकाल सहायता-कोषमें	२.	१.	४
अमीरुद्दीन [?]से प्राप्त	०.	१०.	६
रोकड़ बाकी	९.	१६.	७

मार्च २३, शनिवार

कैलेनबैक गये। पत्र – वेलशी, केशवजी, मुहम्मद, मुहम्मद बेलिमको।

भीखासे प्राप्त	०.	२.	०
जॉनको उधार	०.	१०.	०

मार्च २४, रविवार

पाना भगासे मिलने लगभग छः कनवी आये। कुप्पू भी आये। पत्र — मॉड, विंटरबॉटम, श्लेसिन, रिच, छगनलाल,[2] अभयचन्द, अमीरुद्दीनको।

मार्च २५, सोमवार

वा और कै० आये। रतनसी शहर गये।

हनीफके गद्दे और कम्बलके लिए दिये	१.	९.	३
शिवपूजनके दूधके [?] लिए दिये	०.	५.	९
डाक-टिकट	०.	१.	६
	७.	१२.	१

१. देखिए "तार: गृह-मन्त्रीको", पृष्ठ २४४।

२. देखिए "पत्र: छगनलाल गांधीको", पृष्ठ २४४।

मार्च २६, मंगलवार

सोरावजी गये। मैं पैदल शहर गया – ३ बजे चलकर ९–१५ बजे जो० ब० पहुंचा।

हनीफको लोबानका दिया	०.	१.	०
डाक-टिकट	०.	०.	१
सोरावजीकी जमा रकममें से प्राप्त	०.	०.	३
रोकड़ वाकी	७.	११.	३

मार्च २७, बुधवार

लिखा – उमर झवेरी, मणिलाल, वेलशी, मोहनलाल, श्लेसिन, नाथु भाणा, अहमद भाणा, पडियार, सम्पादक, वेस्टको।

डाक-टिकटोंके दिये	०.	२.	२
माल-भाड़ा	०.	२.	१
रोकड़ वाकी	७.	७.	०

मार्च २८, गुरुवार

पत्र – श्लेसिनको। वालजी हरि और श्लेसिन [आये ?]। कै० वापस आये।

मार्च २९, शुक्रवार

पत्र – श्लेसिनको। कै० गये और वापस आये।

मार्च ३०, शनिवार

नायडू आये और गये। भीखा गये। रतनसी आये। कै० गये और वापस आये।

चारेका भाड़ा दिया	०.	१.	३
रोकड़ वाकी	७.	५.	९

मार्च ३१, रविवार

गॉर्डन, श्लेसिन और ऐनी [?] आये। सब गये।

अप्रैल १, सोमवार

पत्र – विंटरबॉटम, मॉड, श्री मैकडोनल्ड, वेस्ट, लैंग्स्टन, हलीमको। कै० आये। फेडा नामक एक लड़का रात रहने आया। रतनसी और रजबअली गये।

टिकट प्राप्त	०.	१.	०
रोटी बासडा	०.	०.	३
कैलेनबैक	०.	२.	६
साबुनका भाड़ा	०.	१.	०
रजबका किराया	०.	३.	८
रोकड़ वाकी	७.	४.	१०

अप्रैल २, मंगलवार, चैत्र वदी १

[पत्र]–मेढ, हुसेन दाउद, रुस्तमजी, वेस्ट, आंगलिया, चैमने, ठक्कर, फैंसी, दीवान मगनलाल, मुहम्मद इस्माइल, वेस्ट, टाटा[1], नाथलियाको। रिच, श्लेसिन, केनेडी आये और गये। कैलेनबैक आये।

डाक-टिकट	०. ३. ६

अप्रैल ३, बुधवार

दाना शहर गया, कै० भी। पत्र–मेढ, आनन्दलाल, अनी, सम्पादक, मगनलाल, एंड्रचूज, लक्ष्मन पांडे, रणछोड़ हरिको।

दानाका किराया	०. २. ०

अप्रैल ४, गुरुवार

जो० ब० पैदल गये और आये। कै० और मैं साथमें सोराबजी, रतनसी, दाना, रजबअली और उसके भाई आये। दफ्तरमें ८–५० बजे पहुँचे।

लक्ष्मणसे	३. [०. ०]
इनाम आदिके लिए प्राप्त	०. १२. ०
थैलेके लिए दिया	०. ०. ९
रतनसीका किराया	०. २. ३
कागज	०. ०. ३
चमड़ा	०. १७. ६
बकसुए और ट्यूब	०. २. ०

अप्रैल ५, शुक्रवार

सम्पादक, उमियाशंकर, रिच, श्लेसिन, आइजक, मारीमुत्तू और प्रभुके एक सम्बन्धी आये। अलीभाई और प्रभुके सम्बन्धी गये। श्लेसिन गाड़ी चुक जानेसे ठहर गई।

जॉनसे प्राप्त	०. १०. ०
डाक-टिकट	०. १. ७
जॉनसे दूधके लिए	०. १२. ६

अप्रैल ६, शनिवार

पत्र–वेस्ट, चैम्बरलेन, रावजी मणिभाई, नायक, श्लेसिन, मणिलालको।[2] श्री [?] सम्पादक, कोल आये। रतनसी और कुमारी श्लेसिन गईं। रतनसी वापस आये। धनिया, किशमिश, आलू, भाड़ा, सब्जियाँ,

१. "सार्वजनिक पत्र: रतन जे० टाटाको", अप्रैल १, १९१२ (पृष्ठ २४५-४९)?
२. देखिए "पत्र: मणिलाल गांधीको", पृष्ठ २५२-५३।

नारियल कवर[1]	१. १६. ०
डाक-टिकटोंका दिया	०. ०. ६
माल-भाड़ा	०. १. ०
रोकड़ बाकी	७. ७. ०

अप्रैल ७, रविवार

श्रीमती नायडू, श्री नायडू, रंगासामी, कुमारी वुश, मुर्गन आये। हनीफकी तबीयत बहुत खराब रही।

अप्रैल ८, सोमवार

श्री फिलिप्सकी मंडली आई। रिच, गॉर्डन आदि अनेक लोग आये। आवाबाई ठहरी और माणिक शा भी। लगभग २०० लोग आये। सभी चले गये। नायडू और श्रीमती नायडू भी गये। विंटरबॉटम और मॉडको पत्र लिखे।

श्लेसिनको श्रीमती वॉगलके लिए भारतीय महिला संघके सम्बन्धमें दिया	१. ०. ०
रोकड़ बाकी	६. ७. ०

अप्रैल ९, मंगलवार

पत्र – मेहता, सम्पादक, गुलको। रतनसी, कुमारी वुश, मुर्गन, कोल, कै० और इशाक गये। रातको श्लेसिनको पत्र लिखा। कै० और कोल वापस आ गये।

वासडासे चीनीके लिए प्राप्त	०. ०. ३
इसाकका किराया	०. २. ०
रोकड़ बाकी	६. ५. ३

अप्रैल १०, बुधवार

आवाबाई गई। सोरावजी भी। दोरावजी रातको आये।

माल-भाड़ा दिया	०. १. ६

अप्रैल ११, गुरुवार

दोनों पैदल शहर गये; वेस्ट आदि कल आये। आज साथ फार्मपर आये। श्लेसिनको पत्र लिखा। सोढा आये।

मुर्गनको खर्चके लिए दिये	७. ०. ०

अप्रैल १२, शुक्रवार

कोल शहर गया और आया। श्लेसिनको पत्र लिखा।

डाक-टिकटके लिए दिये	०. १. ०

१. यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

अप्रैल १३, शनिवार

कृष्णसामी, दाना, डाह्या और भगा शहर गये। पत्र लिखे।

लकड़ीका भाड़ा दिया	०. १०. ५
दानाका किराया	०. २. ३
रोकड़ बाकी	४. १०. ७

अप्रैल १४, रविवार

श्लेसिन और कुप्पू आये और गये। इसाक आये। इस्माइल गये। लिखा – तैयब हाजी खान मुहम्मद, ल० पांडे, अब्दुल कादिर, नूर मुहम्मद, मुहम्मद हलीम, गोकुलदास, छगनलाल, मणिलालको।[1]

रोकड़ बाकी	४. १०. ७

अप्रैल १५, सोमवार

कै० और कोल गये और वापस आये। दाना और भगा वापस आये। पत्र – विंटर-बॉटम और मॉडको प्रातःकाल और छगनलाल, श्लेसिनको रातमें।

डाक-टिकटका दिया	०. २. ६
यात्रा-टिकट	१. ६. ३
रोकड़ बाकी	३. १. १०

अप्रैल १६, मंगलवार

[पत्र –] डी० एम० खान, दादा अब्दुल्ला, हरिलाल ठक्कर, नाना, उमर झवेरी, पारसी रुस्तमजी, नायक, हाजी दादा, हाजी हबीब, पुरुषोत्तमदास, हरिलाल, मैनेजर ना० ए० [?] सम्पादक 'इं० ओ०' कोलको। वेस्ट, कुमारी वेस्ट और श्रीमती वेस्ट गये।

कैलेनबैकसे माल-भाड़ेके लिए प्राप्त	०. १०. ५
मॉडके लिए प्राप्त	०. ९. ०
डाक-टिकट	०. ०. २
डाक-टिकटके लिए दिये	०. १. ९
रोकड़ बाकी	३. १९. ८

अप्रैल १७, बुधवार

पत्र – बद्री, वी० एस० नायडू, चुन्नीलाल, आंगलिया, दाउद मुहम्मद, हरिलाल ठक्कर, मैनेजर 'इं० ओ०,' अनीको। श्रीमती नायडू और मारीमुत्तू आये। कै० गये और आये।

मेहमानोंकी गाड़ीका दिया	०. ११. ८
डाक-टिकटका दिया	०. १. ९
रोकड़ बाकी	४. ९. ७

१. "पत्र : मणिलाल गांधीको", अप्रैल १३, १९१२; (पृष्ठ २५४-५५) ?

अप्रैल १८, गुरुवार, वैशाख सुदी १

कै० जमनादास और मैं ६ बजे पैदल रवाना हुए। कै०को [जोहानिसबर्ग] पहुंचनेमें ४.४५ घंटे लगे, ज० और मुझे ६ घंटे।

नायडूके लिए प्राप्त	०.	१०.	०
लड़कोंके लिए पुस्तकें	०.	३.	०
पोटाश	०.	२.	०
फीता और पिनें	०.	१.	६
सख्त पनीर	०.	१.	३
कागज	०.	०.	३
रोकड़ बाकी	४.	११.	७

अप्रैल १९, शुक्रवार

कै० शहर गये और वहांसे प्रिटोरिया गये। पत्र – छगनलाल, तवाड़िया, मणिलाल, इस्माइल, जाडा, थम्बी नायडूको।

अप्रैल २०, शनिवार

फकीरा और भाणाभाई गये – रतनसी, वेलशी, जीवन बोजो और इब्राहीम आये। कै० वापस आये। श्लेसिन भी आई। वेलशीने ३ पौंडका चेक भेजा।

वेलशीसे चेक मिला	३.	०.	०
चीनीके लिए प्राप्त	०.	०.	६
माल-भाड़ा दिया	०.	१.	०

अप्रैल २१, रविवार

वेथन, उनकी पत्नी और कैलेनबैक कारसे आये। गॉर्डन और जमनादास पैदल आये। श्लेसिन आदि गये। मैं भी गया। हमीदिया हालमें सभा। दफ्तरमें सोया, लड़के फैन फोक्सरस्टमें सोये।

यात्रा-टिकटका दिया	१.	६.	३

अप्रैल २२, सोमवार

नायडूके पुत्र और मैं लौट आये। सुना, कल पुलिस सिपाहियोंने रेवाशंकरको पीटा।

भाड़ा दिया	०.	१.	०
भायातके बेटेके लिए प्राप्त	१.	१०.	०
रोकड़ बाकी	४.	१३.	१०

अप्रैल २३, मंगलवार

[पत्र –] खुशालचन्द, लक्ष्मीचन्द, करसनदास, मेघजी रावजी, रेवाशंकर, जगजीवनको।

अप्रैल २४, बुधवार

[पत्र –] पुरुषोत्तमदास, चैमने, सम्पादकको।

भगाने लिए प्राप्त	०. १. ०
कॉफी	०. ०. ६
डाक-टिकट	०. २. ०
रोकड़ बाकी	४. १३. ४

अप्रैल २५, गुरुवार

पन्द्रह लड़के, कै० और मैं पैदल शहर गये। रजब अली और हम दोनों वापस आ गये। किचिनसे मिले [?]। चैमनेके सामने गवाहियाँ।

रजबके टिकिटका दिया	०. १. २
रोकड़ बाकी	४. १२. २

अप्रैल २६, शुक्रवार

[पत्र–] मुहम्मद वेलिग, सोराबजी, श्लेसिनको।

अप्रैल २७, शनिवार

हनीफ और कै० शहर गये। पत्र–छगनलाल, रेवाशंकर भाई, डॉक्टर मणिलाल, जेकी, मगनलाल, वेलशी, मोतीलालको। कै० वापस आये। सुलेमान कासू अपना प्रमाणपत्र लेकर आया।

हनीफको दिया	०. ७. ११
डाक-टिकट	०. ०. ९
रोकड़ बाकी	४. ३. ६

अप्रैल २८, रविवार

गॉर्डन, श्लेसिन और मैं पैदल जर्मिस्टन गये। रामदास, रतनसी और शिवपूजन पीछे आये। रिच रेलसे आये। कल रात रिचके घर सोये। काछलिया, सोराबजी और नायडू भी आये।

अप्रैल २९, सोमवार

कल रात गॉर्डनके घर सोया। लड़कोंके साथ फार्मपर प्रातः ६–२० बजे आ गया। कै० हमें रास्तेमें मिले और लौट पड़े। अल्बर्टने अपना १५ दिनका उपवास तोड़ दिया। हनीफ रातको आया; काछलिया अस्वात, बाजा, अन्य सज्जन और सोढा भी। कृष्णसामी, अली और मुहम्मद बाहर हैं।

गॉर्डनसे प्राप्त	०. १. ०
फकीर और इसाक	३. ०. ०
रोकड़ बाकी	७. ४. ६

अप्रैल ३०, मंगलवार

अ० काछलिया, अस्वात आदि वापस गये। अली और मुहम्मद आये। मुहम्मद इसाक

आये। रतनसी और रम्भा गये।

सोढाको दिये	०. १६. १०

मई १, बुधवार

कै० और मैं प्रातः १–४० बजे जो० ब० पैदल गये। जो० ब० से जर्मिस्टन गये। कै० प्रिटोरिया गये। कृष्णसामी आये। वा बीमार।

जॉनसे मिला	०. ०. ६
जर्मिस्टन जानेका किराया दिया	०. १. ७
माल-भाड़ा	०. १. ७

मई २, गुरुवार, वैशाख वदी १

कै० के साथ प्रातः पैदल शहर गया। ५ [घंटा] ४० मिनट लगे। वेस्ट आदि वापस आ गये। छोटेलाल भी आ गया।

घड़ीकी मरम्मतका दिया	०. ३. ६
रेलका	०. ०. २

मई ३, शुक्रवार

वेस्ट शहर गये। पत्र – लेन, मुहम्मद हुसन, मीठा, छगनलाल, डांगरे, मुहम्मद अवा, कैप्टन स्टुअर्टको। वेलशी, वेस्ट वापस आये।

वेस्टके टिकटोंके लिए प्राप्त	०. ७. ११
नायडू लड़कोंका रेलका	०. ५. १०
कोड़ा	०. ०. ९
डाक-टिकट	०. १. ०
रोकड़ बाकी	६. १. ८

मई ४, शनिवार

जमनादास,. . .[१] दाना और हनीफ जो० ब० गये। हनीफ दोपहरकी गाड़ीसे वापस आ गया। ज० और मैं ४ घंटा ३७½ मिनिटमें पहुँचे। हुसेन और इस्माइल गोराको पत्र लिखे।

मई ५, रविवार

श्लेसिन, जमनादास, दाना और भगा पैदल आये। प्रभु, हनीफ और डाह्या और इस्माइल, इमामसे मिले। आइज़क, कुमारी प्लाउमैन और गॉर्डन गाड़ीसे आये। श्लेसिन, गॉर्डन, आइज़क और कुमारी [प्लाउमैन] वापस गये।

माल-भाड़ा चुकाया	०. २. ०

१. यहाँ एक नाम अस्पष्ट है।

मई ६, सोमवार

कैलनबैक भूलसे ट्रेन चूक गये। पैदल जो० ब० गये। वापस आये। सोराबजी आये। पत्र—कुमारी विंटरबॉटम, मॉड आदिको।

वेस्टके लिए व्याससे प्राप्त	१. ०. ०
डाक-टिकट	०. २. ०

मई ७, मंगलवार

वेस्टका परिवार गया। सब लोग उन्हें विदा करने [स्टेशन] गये। कुमारी वेस्ट रह गईं। पत्र—दाउद मुहम्मद, ए० ई० जाडा, छगनलाल, मणिलाल, वेद-धर्म सभा, वॉगलबर्ग, वेस्ट, पुरुषोत्तमदास, नमनेको; अनी, छगनलाल, रहीम, नायक, आनन्दलाल और व्यानको [भी]।

वेस्टके लिए प्राप्त	०. ६. १
गाडा-टिकटका दिया	१. ६. ३
जॉनको दूधका दिया	०. १०. ०
रोकड़ बाकी	५. ७. ०

मई ८, बुधवार

[पत्र—] सम्पादक, इलेसिन, ई० कोतवाल, लजारस, रावजी, कोल, डाह्याभाई, चुन्नीलाल, रोश, लेनको। रातको लालबहादुर सिंह और रामावतार आये।

डाक-टिकट और माल-भाड़ेका दिया	०. २. ०

मई ९, गुरुवार

कै०, सोराबजी और मैं पैदल जो० ब० गये। कै० और मैं लौट आये।

लक्ष्मणके लिए प्राप्त	३. ०. ०
सुल्ताना,[1] झाड़ू, बाल्टी आदिके लिए दिये	०. ११. ०
हनीफके मोजे और दस्ताने	०. २. ६
माल-भाड़ा	०. ०. ११
रोकड़ बाकी	७. १०. ७

मई १०, शुक्रवार

[पत्र—] पारेख, चैमने और पोलकको।

माल-भाड़ा चुकाया	०. २. ०

मई ११, शनिवार

जमनादास, दाना, शिवपूजन, कुप्पू और सुलेमान पैदल शहर गये हैं। रामदासको देवीके घर सोनेके लिए भेजा।

१. बीजरहित मुनक्का जो स्मरनामें पैदा होती है।

व्यासको वेस्टके लिए दिये	०. १७. ०
व्यासके लिए अगले वर्षके व्याजके रूपमें	
पी० सी० नोटके अनुसार प्राप्त	०. १७. ०

यहाँ दी गई रकम रोकड़में दर्ज नहीं की गई, क्योंकि १ मईको प्राप्त १ पौंड भी दर्ज नहीं किया गया था।

मई १२, रविवार

इलेसिन, श्रीमती नायडू और उनकी बहन आईं और गईं। जमनादास, शिवपूजन और कुप्पू लौटे। वेस्ट, मणिलाल, यशवन्त सदाशिव, लजारस, अब्दुल करीम झवेरी, वेलशी, दाउद मुहम्मदको पत्र लिखे।

मई १३, सोमवार

[पत्र –] सम्पादक, मणिलाल डॉक्टर, आनन्दलाल, छगनलाल, प्राणजीवनको। कै० शहर गये और लौट आये।

डाक-टिकटोंके दिये	०. २. ०

मई १४, मंगलवार

[पत्र –] वेस्ट, इस्माइल गोरा, उमर झवेरी, मूसा हाजी आदम और प्रागजीको।

जॉनसे प्राप्त	०. ०. ९
मणिलालको तारका	०. १. ३
डाक-टिकट	०. ०. ९
रोकड़ बाकी	७. ५. ४

मई १५, बुधवार

कै० और मैं पैदल शहर गये। काछलिया आदिके साथ चन्दा करनेके लिए निकले। गॉर्डनके घर सोये।

मई १६, गुरुवार

प्रातःकाल इलेसिन और गॉर्डनके साथ पैदल लौटे। दानो आया। कै०के कुछ मित्र आये और गये। गॉर्डन और इलेसिन भी गये।

मई १७, शुक्रवार, ज्येष्ठ सुदी १

दिनमें एक भी पत्र नहीं लिखा। प्रातःकालका सारा समय रसोई-घरमें गया।

मई १८, शनिवार

हनीफ, मैं और देवदास पैदल शहर गये। चन्दा इकट्ठा करनेमें लगे रहे। गॉर्डनके घर सोये। कोटवालको पत्र लिखा।

हनीफको दिये	०. २. ६
देवदास	०. ०. ६

मई १९, रविवार

तीनों शहरसे वापस आ गये। कोल फार्मपर आये। प्रेम भी आये। प्रेम लौट गये। पत्र – मॉड, विटरबॉटम, कालीदास पटेलको।

मई २०, सोमवार

मणिलाल डॉक्टर, जेकी और सोराबजी आये। रम्भा भी आई। सायंकाल सुलेमान, कैलेनबैक और नरसीमुलू आये।

सॉसमें प्याला ०. १. ०
डाक-टिकटके लिये ०. १. ०

मई २१, मंगलवार

[पत्र –] लेन,[1] मणिलाल, कोटवाल, छगनलाल, डी वेर [?], स्लेसिन, टि. . .,[2] सॉलोमनको।

डाक-टिकटका बिल ०. २. ०

मई २२, बुधवार

[पत्र –] आंगलिया, पैगने, रुस्तमजी, दादा उस्मान, छगनलाल, कोटवाल, धोरीभाईको। रम्भा, रेवाशंकरभाई, पोटन [?] और जमनादास गये। रामपरशी [?] और पुंग्गा आये। आदजक लाये और गये।

डाह्याके खानेका बिल १. १०. ०
जमनादासका बिल ३. ०. ०
माल-भाड़ा ०. २. ३
टीप नहीं की।

मई २३, गुरुवार

[पत्र –] छगनलाल, वेस्ट, पेलगी, वायड।

विजयाका रेल-किराया ०. २. ६
डाक-टिकट ०. १. ०
माल-भाड़ा ०. १. ०

मई २४, शुक्रवार

कृष्णास्वामी, भगा, डाह्या और मैं तीनों पैदल शहर गये। ५ घंटे १४ मिनट लगे। पाठशालाके सम्बन्धमें सभा। मणिलाल, बा और जेकी शहरमें आये। बा, जेकी, मणिलाल और मैं वापस आये। रेवाशंकर भी लौट आये।

माल-भाड़ा ०. १. ०

१. देखिए "पत्र : ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ २६० ।
२. इस नामके कुछ अक्षर अस्पष्ट हैं ।

मई २५, शनिवार

[पत्र–] कोटवाल, चैमने, रुस्तमजी, मणिलालको। श्लेसिन आई और गई।

जॉनसे प्राप्त और डाक-टिकट	०.	०.	९
डाक-टिकट	०.	१.	०
रोकड़ बाकी	२.	१.	१०
प्राप्त : जमनादासने लौटाये (?)	३.	०.	०
	५.	१.	१०

मई २६, रविवार

श्लेसिन, गॉर्डन, क्विन और गुलाम मुहम्मद मुल्ला आये। सभी लौट गये। पत्र लिखे।

देवीसे प्राप्त	०.	५.	०

मई २७, सोमवार

[पत्र–] छगनलाल, पुरुषोत्तमदास, मणिलाल देसाई, कप्तान स्टुअर्ट, मॉड, प्राणजीवन, विंटरबॉटम, आनन्दलाल, वेस्ट, आइज़क, रुस्तमजीको। जमनादास गया। डाह्या, कैलेन-बैक और कोल आये।

डाक-टिकटोंके लिए दिया	०.	२.	६
डाक-टिकटोंके लिए दिया	०.	२.	६

मई २८, मंगलवार

[पत्र] लिखे–वेलशी, आनन्दलाल, सम्पादक, मुहम्मद इस्माइल, श्लेसिन, जमनादास, छगनलाल, वेस्टको। मेढ, और कुँवरजी तवाडिया और दाना शहर गये। कै० और मणिलाल वापस आ गये। फ्रांसिस आदि तीन तमिल आये।

दानाको दिया	०.	२.	०

मई २९, बुधवार

[पत्र–] सम्पादक, पुरुषोत्तमदास, मंगा सोमा, छगनलाल, जमना[दास]को।

मई ३०, गुरुवार

शहर गये–कैलेनबैक, कुप्पू, शिवपूजन, सुलेमान और मैं पैदल ही। मणिलाल और कोटवाल आये। वे उसी रातको लौट गये।

मई ३१, शुक्रवार, ज्येष्ठ वदी १

कोटवाल, मणिलाल, कैलेनबैक, कुप्पू, शिवपूजन, सुलेमान, और मैं पैदल [शहर] पहुँचे। देवी बहन आदि हमें लेने आये। जो० ब० पहुँचनेमें ५ घंटे १२ मिनट लगे। वापसीमें ६ घंटे १० मिनिट लगे।

कोटवालके सामानको लानेके दिये	०. ३. ०
सुलेमान और भगाको सवारीके लिए	०. ५. ०

जून १, शनिवार

१५ लड़के, कैलेनबैक, कोटवाल, श्लेसिन, सोरावजी और मैं वेरीनिगिंग गये।[1] बा, देवी और जेकी, विजया और बच्चा रेलसे आये। भगा और सुलेमान गत रात भोजन बनाने गये।

रेल किराया आदिके लिए दिया	१. ०. ०

जून २, रविवार

यह दिन वेरीनिगिंगमें बिताया। बा, कैलेनबैक, मणिलाल, श्लेसिन और सोरावजी शामकी गाड़ीसे लौटे।

कैलेनबैकको दिया	१. ०. ०

टीप नहीं की

जून ३, सोमवार

लड़कोंके साथ हम सभी वापस आये। श्री सूजी साथ आये। ४ बजते-बजते घर पहुँचे। दाना आया। रणछोड़ बना अपने लड़केके सम्बन्धमें पूछताछ करने आये।

दानाके लिए प्राप्त	०. २. ०
कुमारी वेस्टको दिये	०. २. ६

जून ४, मंगलवार

[पत्र –] आनन्दलाल, पुरुषोत्तमदास, श्लेसिन, नारणदास, हजूरा सिंह, कालीदास पटेल, छगनलाल, मगनलाल, ई० एन० पटेलको। श्री भायातके तीन पुत्र ईसप, मुहम्मद और इब्राहीम आये। कै० पदल आये।

डाक-टिकटोंके दिये	०. २. ०
माल-भाड़ा	०. १. ७
रोकड़ बाकी	२. ८. ०

जून ५, बुधवार

[पत्र –] बीठासी, संघवी, दादा उस्मान, दादा अब्दुल्ला, दमनिया, हसन, ईसप मूसा हाजी आदम, कोल, रिच, सम्पादक, मुहम्मद हासिम, भायातको। नरसीमुलू गये।

दानासे प्राप्त	०. ०. ६
रेल-किराया नरसीमुलू	०. २. ०

जून ६, गुरुवार

कै० और मैं शहर गये। गॉर्डनके घर सोये। कै० वापस गये। श्लेसिनकी वर्षगाँठ।

१. सम्भवतः अस्वातने लड़कोंको जो दावत दी थी उसके लिए; देखिए **इंडियन ओपिनियन**, ८-६-१९१२।

डाह्यासे मेहताकी पुस्तकके लिए प्राप्त	०.	१.	०
माल-भाड़ा दिया	०.	१.	०
दूध	०.	४.	०

जून ७, शुक्रवार

प्रिटोरिया गया। चैमने और लेनसे मिला। फार्म वापस आया। मणिलाल डॉक्टर कल पैदल शहर पहुँचे।

रेल-किराया प्रिटोरियाका दिया	०.	१०.	०
कागज	०.	०.	३
कै०के थैलेका भाड़ा	०.	०.	३
सामानका भाड़ा	०.	१.	४

जून ८, शनिवार

भायातके पुत्र वॉक्सबर्ग गये। पत्र—डॉ० गुल, वेलशी, लजारस, छगनलाल, वेस्ट, उमर झवेरी, फैंसीको। गॉर्डन आये, वालजी भी आये।

डाक-टिकटोंका दिया	०.	२.	३
कैलेनबैकको दिये	०.	२.	६
रोकड़ बाकी	१.	६.	५

जून ९, रविवार

वालजी, कै० और गॉर्डन गये; दाना और भगा भी। एडलेस्टीन [?] आये और गये।

जून १०, सोमवार

[पत्र—] श्रीमती मेयो, छगनलाल, सम्पादक, मॉड, विंटरबॉटम, मेहता, भगा दाजी, नवसारी [हिन्दू युनाइटेड ट्रेडिंग] कं०, श्लेसिनको। जोशी, छगन [लाल भवानीदास], केप टाउनके घीवाला [राँदेरिया] आये और चले गये।

माल-भाड़ा दिया	०.	२.	१
डाक-टिकट	०.	१.	०
माल-भाड़ा	०.	२.	३

जून ११, मंगलवार

[पत्र—] मगनलाल, जमनादास, वेस्ट, ठक्करको। दाना आया। छोटा भगा भी आया। टीकलीका भाई और दूसरे गुजराती हिन्दू अपने बेटोंके सम्बन्धमें [पूछताछ करनेके लिए] आये। वे हिन्दू, टीकली और उसके भाई गये।

जून १२, बुधवार

दाना पाठशाला छोड़कर चला गया।

भगाके लिए डॉ० मेहताकी पुस्तक प्राप्त	०.	१.	३
भगासे डाक-टिकटोंके लिए प्राप्त	०.	०.	९
डाक-टिकट	०.	१.	०

जून १३, गुरुवार

कै०, फकीर, रेवाशंकर और इस्माइल शहर गये। मैं भी। कै० और मैं छोटमके साथ वापस आये। सोराबजी भी आये।

शक्करके लिए प्राप्त	०.	०.	६
ढुलाई दी	०.	१.	०
माल-भाड़ा	०.	७.	०

जून १४, शुक्रवार

[पत्र –] दादा अब्दुल्ला, मुहम्मद हासिम, नाथू कासिम, डांगरे, मोतीलाल दीवान, मणिलाल डॉक्टर और सोराबजी गये।

कै०से प्राप्त	१.	२.	६
डाक-टिकटका दिया	०.	१.	०

जून १५, शनिवार

[पत्र –] सम्पादक, वेलशी, मणिलाल, नारणदास

शक्करके लिए प्राप्त	०.	३.	०
डाक-टिकटोंके लिए प्राप्त	०.	०.	८

जून १६, रविवार, आषाढ़ सुदी १

कुप्पू, रेवाशंकर, और फकीरा आये। इस्माइल नहीं लौटा [आजसे] पाठशाला छोड़ दी। कुप्पू, फकीरा आदि सज्जन गये। पत्र – पुरुषोत्तमदास, छगनलाल, विंटरबॉटम, मॉड, श्लेसिन, दादा उस्मानको।

इसाकके लिए प्राप्त	२.	०.	०
दूधके लिए प्राप्त	०.	०.	६

जून १७, सोमवार

छोटा भगा वापस गया। कै० शहर गये और वापस आये।

छोटा भगाको दिया	०.	१.	६
डाक-टिकट	०.	२.	३

जून १८, मंगलवार

[पत्र –] हरिलाल ठक्कर, सम्पादक, वेस्ट, छगनलाल, गॉर्डन, रिच, इस्माइलको। वाजा और मुहम्मद आये थे, गये।

मेहताकी पुस्तकके लिए प्राप्त	०.	१.	३
शक्कर	०.	०.	३
डाक-टिकट	०.	१.	०
माल-भाड़ा	०.	१.	०

जून १९, बुधवार

[पत्र –] फैंसी, वेस्ट, शेर, प्रभु भगा, नारणदास, भरूचा, वाजा, मूसाजी और सम्पादकोंको। मोडक आये और गये। नायडूके लड़के आये।

माल-भाड़ा दिया	०.	२.	५
डाक-टिकट	०.	०.	४

जून २०, गुरुवार

कै०, मैं, हनीफ, देवदास, प्रभु, कुप्पू, कृष्णसामी, अली, लक्ष्मण, शिवपूजन, और भगा शहर गये। रात रिचके यहाँ रहे। रजब अली प्रिटोरिया गये। प्रभुका भाई दफ्तरमें ५ पौंड लाया।

जून २१, शुक्रवार

अभीतक जो० ब०में। रात गॉर्डनके यहाँ बिताई। सोराबजीके साथ चन्दा इकट्ठा करने गया।

जून २२, शनिवार

कै० और मैं अली और प्रभुको छोड़कर शेष सब लड़कोंके साथ वापस आ गये। दोपहरको श्लेसिन आई। देवी, फकीरा, भारतसारथी आदि लेने आये।

जून २३, रविवार

बॉक्सबर्गके लोग आये। क्विन आये। गॉर्डन और मणिलाल भी आये। सब गये। रातको पत्र लिखे।

जून २४, सोमवार

[पत्र –] सम्पादक, छगनलाल, भायात, मॉड, डॉक्टर, आनन्दलाल, विंटरबॉटम, वेस्ट, अभयचन्द, मोहनलाल, हरिलाल ठक्करको। कैलेनबैक और डेविस आये।

डाक-टिकट	०.	२.	६
माल-भाड़ा	०.	२.	४

जून २५, मंगलवार

[पत्र –] वेस्ट, ठक्कर, छगनलालको।

जून २६, बुधवार

मणिलाल और मैं जो० ब० गये। बा और जेकी गाड़ीसे गईं। वापस आ गये। सोराबजी भी आये।

तार	०.	१.	७
माल-भाड़ा	०.	०.	९
पता नहीं चला	१.	०.	०
रजब अली	०.	५.	३
रोकड़ बाकी	२.	५.	१०

जून २७, गुरुवार

[पत्र] छगनलाल, टीकली, हाजी दादा, हाजी हबीब, मुहम्मद बाबा, दादा अब्दुल्लाको। सोराबजी गये। जॉन अफेंदी आये। कै० गये और वापस आये।

डाह्यासे दानाकी पुस्तकके लिए मिले	०.	०.	३
शक्कर आदि	०.	०.	६
खच्चरोंका दिया	०.	१८.	६
बाकी	१.	८.	१
कुमारी एस०से प्राप्त	१०.	०.	०
रोकड़ बाकी	११.	८.	१

जून २८, शुक्रवार

बा और मैं डर्बनको रवाना।

डर्बनके टिकट	६.	६.	८
श्लेसिन	०.	३.	०

जून २९, शनिवार

डर्बन पहुँचे। रास्तेमें खासी तकलीफ। स्टेशनपर बहुत लोग आये हुए थे। सायंकाल ऑटोमन क्रिकेट क्लबकी बैठक।[1] जमनादास और हम दोनों सायंकालकी ट्रेनसे फीनिक्स गये।

जून ३०, रविवार, आषाढ़ वदी १

जमनादास, मैं और दूसरे फीनिक्ससे पैदल रवाना। रास्तेमें उमर सेठ आदि मिले। मैं [घोड़ा-]गाड़ीसे इस्तम्बूल अंजुमनकी सभामें गया। भोजन हाजी हासिमके घर किया। अब्दुल हकके घर गया। रातको कांग्रेसकी बैठक। अब्दुल करीम सेठ निर्वाचित। उपनिवेशमें पैदा हुए भारतीयोंकी समस्या। रात उमर सेठके घर बिताई।

जुलाई १, सोमवार

प्रातःकाल फीनिक्स गया। ४ बजेकी गाड़ीसे लौटा। दस्तावेज (डीड) के सम्बन्धमें बैठक बुलाई। इस्माइल हाफेजी मूसाके घर भोजन। सायंकाल गुजराती-सभा। उपनिवेशमें उत्पन्न भारतीयोंका प्रश्न।

जुलाई २, मंगलवार

दाउद मुहम्मद, रुस्तमजी, अब्दुल करीम, अब्दुल हक आदि फीनिक्स आये। १ बजकर ३६की ट्रेनसे चेटीके घर भोजनार्थ रवाना। सायंकाल मुहम्मद इब्राहीमके घर। अंजुमनकी बैठक। रत्नम्‌के साथ उसके घर सोने गया। विचित्र बात।

१. देखिए "भाषण: हाजियोंकी विदाई-सभामें", पृष्ठ २७०-७१।

जुलाई ३, बुधवार

दाउद सेठ गये। अब्दुल कादिर सेठके घर गया। रातको उपनिवेशमें उत्पन्न भारतीयोंसे मिला। उमर सेठके यहाँ सोया।

जुलाई ४, गुरुवार

प्रातःकाल फीनिक्स गया। राघवजी, तालेवंत सिंहसे मिला। सामकी पत्नीको एनीमा उपचार [बताया]। डॉक्टर स्टैंटन आये। सायंकाल मुहम्मद इब्राहीम आंगलिया आदि आये। रातको वे वापस गये। पुरुषोत्तमदास और अनी आये।

जुलाई ५, शुक्रवार

मैं और पुरुषोत्तमदास तीसरे पहरकी गाड़ीसे डर्बनको रवाना हुए। बद्रीके घर लोगोंसे भेंट। सायंकाल जो० ब०को रवाना हुआ।

रेल, फोन, साइकिल	०. ६. ०

जुलाई ६, शनिवार

ट्रेनमें कष्ट हुआ।

जुलाई ७, रविवार

जो० ब० पहुँचा। मणिलाल डॉक्टरसे बातें कीं। रातको भाषण। कोटवाल पैदल आये। मणिलाल और बा फार्म गये। मणिलाल, देवी और जेकी आये।

यात्रा-टिकटका दिया	१. ६. ३
रिक्शा आदि	०. १. ६

जुलाई ८, सोमवार

रामदास, फकीरा तथा अन्य लड़के फार्म गये। मणिलाल लिखता है कि उसे अब [फीजी] नहीं जाना है। रातको कोटवाल और मैं दफ्तरमें सोये। जेकी और सोल-बहन प्रातःकालकी गाड़ीसे गईं। मणिलाल, सुलेमान, अली, कै० सायंकालकी [गाड़ीसे] आये। सोराबजी, मैं और भगा पैदल आये।

फकीराके लिए मिले	३. ०. ०

जुलाई ९, मंगलवार

[पत्र –] सम्पादक और वेलशीको। सोराबजी शहर गये। श्रीमती वॉगलको यहाँ आनेका निमन्त्रण भेजा।

जासमाके लिए प्राप्त	०. ०. १
डाक-टिकटोंके लिए दिया	०. २. ०
हनीफ	०. १. ६
नेटाल यात्राका रेल-किराया आदि जो दर्ज नहीं किया	०. ४. ५
रोकड़ बाकी	५. १६. १०

जुलाई १०, बुधवार

[पत्र –] सम्पादक, मेढ, प्रागजी, आनन्दलाल, उमर हाजी आमदको। ऊका भाणा, गोपाल वल्लभ, कानजी रावजी गुरुवार [?]को आये। इब्राहीम अहमद और मुहम्मद अहमद सुनारा आये।

जुलाई ११, गुरुवार

कै० और मैं पैदल शहर गये। कृष्णसामी और दाना भी आये। चैमनेसे मिला। कै०, दाना, डाह्या और मैं वापस आये।

चैमनेको तारके लिए दिया	०. ३. ०
अनी आदिके सम्बन्धमें फीनिक्स तार देनेको दिया	०. २. ०

जुलाई १२, शुक्रवार

[पत्र –] छगनलाल, सम्पादक, दादा उस्मान, राघवजी, पुरुषोत्तमदासको। कोटवाल, मणिलाल और मैं सायंकालकी गाड़ीसे गये। चेट्टियार आदिके सम्मानमें जलसा हुआ। कोटवाल और मैं रिचके यहाँ सोये।

श्रीमती तिलक और श्रीमती स्टेडके लिए प्राप्त	१. १०. ०
रिक्शा	०. १. ०

जुलाई १३, शनिवार

मैं और कोटवाल लौटे। जमनादास, अनी और उसके पुत्र सायंकाल आये।

शक्कर आदिके लिए प्राप्त	०. २. ८
गुलको मणिलालके सम्बन्धमें तार भेजनेका दिया	०. २. ६

जुलाई १४, रविवार

श्रीमती वधासिंह [?], रामजी कानजीके पिता, श्लेसिन और उनकी बहिन गॉर्डन आये। सभी सायंकाल लौट गये। घलेड भी आये थे।

डाह्याके लिए प्राप्त	०. २. ०
एक अपरिचितके लिए दिया	०. २. ०

जुलाई १५, सोमवार, आषाढ़ सुदी १

[पत्र –] नायक, डॉ० गुल, टीकली, पॉल, वेस्ट, सम्पादक, छगनलाल, विंटरबॉटम, मॉड, मेहता, मणिलाल, छगनलाल, टीपनिस, रुस्तमजी, श्रीमती शेर, सुलेमानजी पटेल, शेलत, आंगलिया, वल्लभजी ब्रदर्सको। कैलेनबैक और दाना गये और वापस आये।

डाक-टिकटका दिया	०. २. ६

जुलाई १६, मंगलवार

[पत्र –] श्लेसिन, खारवा, सम्पादक, ठक्कर, साम, लॉटन, जोशी, आंगलियाको। लॉटन-को तार।

दानासे प्राप्त	०. २. ०
डाक-टिकटका दिया	०. २. ०

जुलाई १७, बुधवार

[पत्र –] खान, सम्पादक, मोरारजीको। भगा शहर गया। उसके साथ श्लेसिनको पत्र भेजा।

माल-भाड़ा दिया	०. २. ०
कैलेनबैकका माल-भाड़ा	०. १. ८
डाक-टिकट	०. ०. २

जुलाई १८, गुरुवार

कैलेनबैक, दाना और मैं शहर गये। वापस आये। जुकाम हो गया। टाउन क्लार्कसे मिला। मलय बस्ती और श्मशान-भूमिके सम्बन्धमें बात की।

फकीराकी किताबोंके लिए प्राप्त	१. ०. ०
माल-भाड़ा दिया	०. २. ५

जुलाई १९, शुक्रवार

तीन व्यक्ति आये और गये। जुकाम अभी है। सोराबजी सायंकाल आये। गृह-मन्त्रालयसे तार आया कि समझौता कायम रहेगा।

रुस्तमजी और एशियाटिक्सको[1] तार	०. ३. ८
. . .[2]का भाड़ा दिया	०. १. ०
रोकड़ बाकी	७. ७. ७

जुलाई २०, शनिवार

[पत्र –] छगनलाल, वीरजी, रुस्तमजी, नाथलिया, वीरजी नाथू नायक, गज्जर, बालकृष्ण, आजम आबिद, सुलेमान मामूजी, पुरुषोत्तमदास, प्रभाशंकर, बालकृष्ण, आजम आबिद, ई० [?] पारेख, दीवान, मुहम्मद इस्माइल, आदिको। सोराबजी और श्लेसिन आये और रातकी गाड़ीसे रवाना हो गये।

डाक-टिकट	०. ३. ६

जुलाई २१, रविवार

[पत्र –] मॉड, डॉक्टर, विंटरबॉटम और हरिलालको। कोटवाल, कैलेनबैक, जमनादास और मैं पैदल शहर गये। श्रीमती तिलकके बारेमें सभा। सोराबजी गये। गॉर्डन फार्मपर आये और वापस गये।

१. एशियाई पंजीयकका तारका पता।
२. अस्पष्ट।

जुलाई २२, सोमवार

कोटवाल और मैं फार्मको वापस। बा और जमनादास शहरमें रुक गये। सायंकाल लौटेंगे; कै० भी। [पत्र –] खंडेरिया, आंगलिया, सम्पादकको।

यात्रा-टिकटका दिया	१. ६. ३
सोराबजीके सम्बन्धमें चैमनेको तार	०. २. १
चारेका भाड़ा	०. १. ३
श्रीमती गां०	२. ०. ०
रोकड़ बाकी	३. १४. ६

जुलाई २३, मंगलवार

दाना और मैं शहर गये। कै० ट्रेनसे गये। चैमनेसे मुलाकात। कै० और मैं वापस आ गये।

श्रीमती हर्थको दिया	०. १. ०

जुलाई २४, बुधवार

[पत्र –] आंगलिया, सम्पादक, हकीम सालेजी, अब्दुल हाजी आदम, हाजी दादा, हाजी हबीब।

जुलाई २५, गुरुवार

[पत्र –] नायक, दादा अब्दुल्ला, जयशंकर, सम्पादक, छोटाभाई, छोटाभाई उद्यार, खुशालभाई, छगनलाल, मेघजीभाई, रेवाशंकर, रायप्पन, रत्नम्, पुरुषोत्तमदास, हरिलाल, सम्पादक, सोमाभाई, छबीलदासको। कै० और मणिलाल पैदल शहर गये और वहाँसे लौटे।

डाक-टिकटोंका दिया	०. २. ६

जुलाई २६, शुक्रवार

[पत्र –] इब्राहीम नूरमुहम्मद, शापुरजी, दुरबीन [?], नायक, पुरुषोत्तमदास, श्लेसिन, चार्ली, मलिया, जी० पी० पटेलको। एक नया लड़का कानजी आया। उसे पहुँचानेके लिए दो व्यक्ति आये थे, वे वापस गये।

कानजीके भोजन-खर्चका मिला	१. १०. ०
रोकड़ बाकी	५. १. ०

जुलाई २७, शनिवार

[पत्र –] वल्लभ नाथू, विटरबॉटम, डर्क, वेस्ट, दाना और भगा।

गॉर्डनसे रोटीके लिए प्राप्त	१. ०. ०
कैलेन०को वेस्ट और उसकी पत्नीके लिए रेल-खर्च दिया	१. ६. ९
गॉर्डनको जम[नादास]के सूटके लिए दिया	१. १०. ०

[नहानेके] टब तथा चटनीके बर्तन आदिके लिए	१. १३. ०
निकर, कैलिको आदि	२. २. ०
जेकीका फलालेनी कपड़ा	०. ५. ०
गॉर्डनका कम किया	६. १६. ९
आज नकद दिया	५. ०. ०
रोकड़ बाकी	१. १६. ९
डाक-टिकट	०. २. ०

जुलाई २८, रविवार

श्लेसिन और रिच आये और गये। तार आया कि गोखले ५ अक्तूबरको रवाना होंगे। मणिलाल शुक्रवारको फीजीके लिए रवाना हो गये।

जुलाई २९, सोमवार

[पत्र –] सम्पादक, जोशी, भगा दाजी, मनसुख[1] फीज़ी [?], पुरुषोत्तमदास, कालीदास, सोराबजी, मॉड, डॉक्टर, गोखले,[2] डूंगरसी, कन्हैयालाल, दाना, वालजी, छगनलालको। कै० और दाना आये।

डाक-टिकट	०. २. ०
रोकड़ बाकी	३. ०. ३

जुलाई ३०, मंगलवार

[पत्र –] दादा अब्दुल्ला, वाइवर्ग, उस्मान उमर, रुकनुद्दीन, हुसेन दाउद, कोल, श्लेसिन, सुलेमान मामूजी, रामबहादुर, भवानीदयाल, मोतीलाल, वेस्ट, छबीलदास, खानको। थम्बी नायडू आये और अपने बच्चोंको साथ ले गये।

जुलाई ३१, बुधवार

सायंकाल केशव फकीर, जोज़ेफ, सॉलोमन, रायप्पन, आमद मेतर, गोवन मानजी, फूलचन्द शाह, गोविन्दलालको पत्र लिखे। सॉलोमन, वितासी, सींगाराम, प्रागजी, शेख, कुवाडियाको भी। कै० और गॉर्डन आये।

अगस्त १, गुरुवार

कै०, कोटवाल, रामदास और मैं शहर गये। चेट्टियारको भोज।[3] जेकी सायंकाल आई। मणिलाल और जमनादास ट्रेनसे आये।

यात्रा-टिकट	१. ६. ३

१. देखिए "पत्र : मनसुखको", जुलाई २७, १९१२ (पृष्ठ २८७-८८)।

२. "पत्र : गो० कृ० गोखलेको", जुलाई २८, १९१२ (पृष्ठ २८८)।

३. देखिए "भाषण : वी० ए० चेट्टियारके लिये जोहानिसबर्गमें आयोजित विदाई–सभामें", पृष्ठ २८९-९०।

अगस्त २, शुक्रवार

शहरसे सब लोग प्रातःकाल लौटे, कै० सायंकाल लौटे।

दूधके लिए दिया	०.	०.	३
चमड़ा	१.	५.	०
दही आदि	०.	२.	०
दाना वालजी	०.	२.	६

अगस्त ३, शनिवार

[पत्र –] अभयचन्द, छगनलाल, अल्बर्ट, नायक, व्यास, हंटर, हसन, जसात, दुरबीन, रिच, टुटला, चुन्नू, उमर हाजी आमद, रुस्तमजी, पुरुषोत्तमदास, चैमनेको।

माल-भाड़ा	०.	२.	६
रोकड़ बाकी	०.	१.	९

अगस्त ४, रविवार

[पत्र –] श्लेसिन, चैमने, मॉड, ठक्कर, विंटरबॉटम, गोखले,[1] छबीलदास, सम्पादक, डॉक्टर, फैंसी, सोराबजी, फीजी मणिलालको। चैमनेको तार। श्लेसिन आईं और गईं। गॉर्डन भी रातको आये और वापस गये।

अगस्त ५, सोमवार

कैलेनबैक शहर गये। रतनसी आदि आये हुए थे। वे भी गये।

अगस्त ६, मंगलवार

[पत्र –] जोशी [केप], श्लेसिनको। श्लेसिनके उपयोगके लिए उन्हें और. . .[2]को रेल-पोस्टसे टाउन क्लार्क और फातिमा-सम्बन्धी पत्रोंके मसविदे भेजे। लॉटन, नाथलिया, माधवदास, उमर हाजी आमद, गोडबोले, राजकुमार, सोमाभाई [को भी पत्र लिखे।] कैलेनबैक आये।
नायडूके पुत्र भी आये।

अगस्त ७, बुधवार

कानजी आया। श्लेसिनको पत्र लिखा। कैलेनबैक रातकी गाड़ीसे शहर गये।

कानजीसे प्राप्त	०.	२.	०
माल-भाड़ा	०.	१.	६

अगस्त ८, गुरुवार

[पत्र –] नारणसामी अय्यर, छगन, चंचल, उमियाशंकर, नायडू, नायडू [?], ईश्वरभाई गोवर्धनदास, एन० जे० शेखको, जानी [?], जगाभाई छबीलदास, गौरीशंकर,

1. देखिए "पत्र : गो० कृ० गोखलेको", अगस्त ४, १९१२ पृष्ठ २९४-९५।
2. मि० भा० संघ, जोहानिसबर्ग।

क्रिस्टोफर, मगनभाई, सम्पादकको भी। कै० रातको आये।

जॉनके लिए मिला	०.	२.	९
माल-भाड़ा आदि मिला	०.	१.	६
माल-भाड़ा दिया	०.	१.	६

अगस्त ९, शुक्रवार

नेटाल बैंकको पत्र भेजा।

गोकुलदासको तारका दिया	०.	१.	०
डाक-टिकट	०.	१.	६
दूधका भाड़ा दिया	०.	०.	३

अगस्त १०, शनिवार

कोटवाल और मैं पैदल शहर गये; कैलेनबैक भी। मैं काछलियाके साथ रूडीपूर्ट और क्रूगर्सडॉर्प गया। कोटवाल अपने दस्तखत करके वापस आ गये।

अगस्त ११, रविवार

प्रातःकालकी गाड़ीसे क्रूगर्सडॉर्पसे जो० ब० गया। बा और अनीको अस्वस्थ पाया। श्लेसिन और फकीरा भी ट्रेनसे आये।

श्लेसिनसे प्राप्त	०.	१२.	६
लॉली [स्टेशन तक]का किराया दिया	०.	२.	३

अगस्त १२, सोमवार

बीमारी जारी। सायंकाल पाठशाला बन्द रही। कैलेनबैक शहर गये और लौटे। उनके साथ गोकुलदास, माकवाकी माँ, बा, म. आदि आये; तुलसी भी।

अगस्त १३, मंगलवार, श्रावण सुदी १

तुलसी आदि प्रातःकाल लौट गये। कैलेनबैक शहर गये और वापस लौटे। थर्म्बी नायडू आये और तीसरे पहर वापस गये।

अगस्त १४, बुधवार

बीमारी अभी जारी। रमजान शुरू हो गया है। लगभग सभी लड़कोंने एक ही वक्त भोजन किया। इसाक जो० ब० गये। कै० रातकी गाड़ीसे शहर गये। श्लेसिन और उसकी एक सखी आई। दोनों गईं। चेट्टियार सोमवारको आये थे। वे भी गये।

अगस्त १५, गुरुवार

कैलेनबैक सायंकाल आ गये।

अगस्त १६, शुक्रवार

लल्लूभाई, लछमन पांडे और रामावतार आये। वे तीसरे पहर लौट गये। रजबअली और मुहम्मद शहर गये।

अगस्त १७, शनिवार

'इं० ओ०'को पत्र भेजा। छगनलाल[1] और पुरुषोत्तमदासको पत्र लिखे। बीमारी अब घट गई है। हनीफ, कुप्पू और भगा शहर गये। देवी बहन भी शहर गई।

गोकुलदासके लिए मिला	०.	७.	०
हनीफको दिया	०.	४.	६
देवी	०.	५.	०

अगस्त १८, रविवार

कोटवाल, कृष्णसामी, कानजी, गोपाल, लक्ष्मण, गोविन्दू और मैं पैदल गये। हिन्दुओंकी एक सभा थी। बहुत गड़बड़ी हुई। कोटवालसे लम्बी बातचीत हुई।

अगस्त १९, सोमवार

कोटवाल, लक्ष्मण, देवी और मैं फार्मपर वापस आये। हनीफ, कैलेनबैक और ईसाक रातकी गाड़ीसे आये।

लक्ष्मणसे प्राप्त	५.	०.	०
किताबोंका १०% वापस जमा शामिल	०.	०.	९
यात्रा-टिकटका दिया	१.	६.	३
माल-भाड़ा	०.	१.	८
लक्ष्मणका टिकट	०.	१.	६

अगस्त २०, मंगलवार

[पत्र–] उमर झवेरी, रुस्तमजी, श्लेसिन, चैमने,[2] आनन्दलाल, पोपट, वीरजी, पुरुषोत्तमदास, मोतीलाल, दादा अब्दुल्ला, छगनलाल, वेलशी, भगा, कानजी और गोपाल आये।

डाक-टिकट	०.	१.	०
फलोंपर भाड़ा	०.	१.	३

अगस्त २१, बुधवार

[कोई टीप नहीं।]

अगस्त २२, गुरुवार

कोटवाल और मैं थियॉसफीपर व्याख्यान देनेके लिए शहर गये।

कुमारी[3] वेस्टके लिए यात्रा-टिकट	०.	६.	३
कै०की भेंट	०.	१०.	०

अगस्त २३, शुक्रवार

फिर शहरमें।

१. देखिए "पत्र : छगनलाल गांधीको", अगस्त १६, १९१२ (पृष्ठ २९८-३००)?

२. "पत्र : एशियाई-पंजीयकको", अगस्त १९, १९१२ (पृष्ठ ३०२)?

३. इस तारीखका हिसाब रद कर दिया गया है और २६ अगस्त, १९१२ में लिख दिया गया है।

अगस्त २४, शनिवार

श्लेसिन और गीवर्स [?] आये और गये।

अगस्त २५, रविवार

कोटवाल, मैं और जमनादास संघकी बैठकमें गये।[1] गीवर्सके घर भोजन किया।

अगस्त २६, सोमवार

हम तीनों फार्म लौट आये। श्रीमती पी० के० नायडू आईं।

गुरुवारको कुमारी वेस्टको यात्रा-टिकट	१.	६.	३
कैलेनबैक द्वारा भेंट	०.	१०.	०
घोड़ा-गाड़ीकी मरम्मत	१.	५.	०

अगस्त २७, मंगलवार

गीवर्स आये।

अगस्त २८, बुधवार, श्रावण वदी १

कोटवाल और मैं शहर गये। तमिलोंकी सभा — वापस आये।

मूसा नाथीसे प्राप्त	०.	३.	०
कोटवालके पार्सल	०.	७.	११

अगस्त २९, गुरुवार

कैलेनबैक, कोटवाल, मणिलाल, शिवपूजन, दाना पैदल शहर गये।

श्लेसिनके लिए प्राप्त	०.	१०.	०
मेहताकी पुस्तकके लिए प्राप्त	०.	१.	३
माल-भाड़ा दिया	०.	२.	६
डाक-टिकट	०.	७.	०

अगस्त ३०, शुक्रवार

डर्बनको रवाना — साथमें कस्तूर, दाना, शिवपूजन, देवदास। जेकी, मणिलाल, रामदास और रेवाशंकर शहर आये।

टिकट आदिका दिया	९.	१९.	१०
लॉली स्टेशनके टिकटोंका दिया	०.	८.	६
शिवपूजनका टिकट	३.	३.	४
रोकड़ बाकी	७.	१.	७

अगस्त ३१, शनिवार

डर्बन पहुँचा। सायंकाल फीनिक्स आया। साथमें पुरुषोत्तमदास थे।

१. देखिए "भाषण: ब्रि० भा० संघकी सभामें", पृष्ठ ३०९।

सितम्बर १, रविवार

पूरा दिन फीनिक्समें

सितम्बर २, सोमवार

डर्बन शहर गया। पुरुषोत्तमदास और मैं पैदल चले। सायंकाल वापस आये।

माकडाके सम्बन्धमें तार	०. ९. ९

सितम्बर ३, मंगलवार

शहर गया। रात शहरमें विताई।

सितम्बर ४, बुधवार

पोलक आये। श्री मूसाके यहाँ ठहरे। प्रागजी भी आये।

डर्बनमें कैलेनबैकसे प्राप्त	१. १०. ०
प्रागजीके सम्बन्धमें तारका दिया	०. ८. ०
माकडाके सम्बन्धमें तारका दिया	०. २. ९
अल्बर्टको दिया	१. ०. ०
तार और रेल किराया	०. १०. १०
रोकड़ बाकी	६. १. ०

सितम्बर ५, गुरुवार

तमाम दिन फीनिक्समें। तालेवन्तसिंह आये और गये। प्रागजी, चेट्टियार, पोलक, श्रीमती रावजी और अमीन आये। आनन्दलालके साथ लम्बी वार्ता। उन्होंने छः महीनेके लिए बीड़ी पीना छोड़नेका प्रण किया।

सितम्बर ६, शुक्रवार

फिर शहर गया। कज़िन्ससे भेंट। खानसे भी। सायंकाल वापस आया।

सितम्बर ७, शनिवार

दोपहर बाद शहर गया। सभा हुई। उमर स्वागत-समितिके अध्यक्ष चुने गये।

सितम्बर ८, रविवार

छगनलाल और मैं गाड़ीसे शहर गये। अब्दुल हक लेनेके लिए आये। सभा हुई। उमर अध्यक्ष चुने गये।

सितम्बर ९, सोमवार

पोलक, छगनलाल और मैं पैदल फीनिक्स आये। प्रागजी रेलसे आये।

तार श्लेसिनको	०. १. ०

सितम्बर १०, मंगलवार

सर्दी लग गई। पोलक कल लौट गये। मैं आज शहर गया। समितिकी बैठक हुई। उमर सेठके यहाँ सोया।

472

गुरदीनको तारका दिया	०.	१.	०

सितम्बर ११, बुधवार

शहरसे फीनिक्स वापस आया। डिपो रोडपर बैठक हुई। लॉटनसे मिला।

पोलकको दिया	१.	०.	०

सितम्बर १२, गुरुवार

फीनिक्समें दोपहर तक रहा — दोपहरको ही फिर शहर गया। सायंकाल फीनिक्स लौटा।

सितम्बर १३, शुक्रवार

दोपहर बाद फिर शहर गया और सायंकालकी गाड़ीमें प्रागजीके साथ फीनिक्स आ गया।

सितम्बर १४, शनिवार

प्रातःकालकी गाड़ीसे शहर आया। चन्दा इकट्ठा किया। हिन्दुओंकी सभामें गया और सायंकाल नवीन, छोटू, ललिता, शिवप्रसाद, शिवपूजन और प्रागजीके साथ जो० ब० को रवाना हुआ।

गोविन्दलालके लिए प्राप्त	१०	०	०
रेल	०.	२.	६
प्रागजी और शिवप्रसादका जो० ब० का किराया	२.	१४.	३
पत्नी	०.	१०.	०

सितम्बर १५, रविवार

रेलमें पत्र लिखे।

सितम्बर १६, सोमवार

प्रातःकाल शहर पहुँचा। गॉडफ्रेकी मृत्युकी खबर पाई। समवेदना प्रकट करने गया। फार्ममें आया। अनी और जेकीको बीमार देखा। प्रागजी, हनीफ और अल्बर्ट भी आये।

ढुलाई दी	०.	१.	०

सितम्बर १७, मंगलवार

कैलेनबैक और प्रागजी शहर गये।

यात्रा-टिकटका	१.	६.	३
रेलगाड़ीका	०.	१२.	७
रिक्शा	०.	०.	३
आलूबुखारा	०.	३.	९
दूध	०.	०.	३

सितम्बर १८, बुधवार

शहर गया और शामको लौटा।

जॉनसे प्राप्त	०.	५.	३

सितम्बर १९, गुरुवार

तीसरे पहरकी गाड़ीसे शहर गया। कोटवाल प्रातःकाल केप गये; कैलेनबैक भी।

दूधके भाड़ेका दिया	०.	०.	६
कोटवाल	१.	०.	०
शिवपूजनके लिए पास	०.	२.	६
माल-भाड़ा आदि	०.	२.	११
रोकड़ बाकी	पौं० ८.	८.	०

सितम्बर २०, शुक्रवार

कल रातको पाटीदारोंके यहाँ चन्दा लेने गया। रातको दफ्तरमें सोया। दयाराम सहाय नामक एक लड़का फार्ममें आया। सुलेमान कल लौट आया। मुहम्मद और इब्राहीम भी आज पहुँचे। देसाई और अभयचन्दके तार आये। मैं फार्मपर सुबह लौटा। प्रागजी, कैलेनबैक शहर गये। कालीदासको पत्र लिखा। देसाईको भी।

सितम्बर २१, शनिवार

शेलत अपनी पत्नीके साथ आये। [पत्र —] मणिलाल डॉक्टर, पोलक, लक्ष्मण पांडे, कस्तूर, देवदास, डॉक्टर, छगनलाल, विंटरबॉटम, सोराबजीको।

दफ्तरके तारका दिया	०.	१.	३
डाक-टिकट	०.	१.	६
दूधका भाड़ा	०.	०.	३
माल-भाड़ा	०.	१.	१०
रोकड़ बाकी	८.	३.	२

सितम्बर २२, रविवार

अभयचन्द, श्री कैलेनबैक और गॉर्डन एक ही ट्रेनसे आये। दयाराम डूब गया।

'इं० ओ०' के डाक टिकटके लिए मिले	०.	१.	०

सितम्बर २३, सोमवार

कैलेनबैक, जमनादास और मैं पैदल शहर गये। उसी दिन लौट आये। इंग्लैंडको डाक भेजी। सुलेमान आये। मॉडको तार भेजा।

सितम्बर २४, मंगलवार

फार्म गया।

सितम्बर २५, बुधवार

दो नये लड़के आये। — शिवपूजन, दाना. [?], कानजी, देवी और मैं दोपहरको शहर गये और दोनों दफ्तरमें सोये।

रातको फैंसीके यहाँ उनसे चन्दा लेनेके लिए गये।

नये लड़कोंकी किताबोंके लिए मिले	०. १०. ०

सितम्बर २६, गुरुवार

मॉड आई। सब लोग स्टेशन गये। पुरुषोत्तमदास आया। सुबहकी गाड़ीसे पी० फार्म गये। मॉड, कै०, देवी और मैं फार्मपर आये। कानजी फार्मपर आया।

गॉर्डनसे प्राप्त	१. ०. ०

सितम्बर २७, शुक्रवार[1] भाद्रपद वदी १

[दिन] फार्ममें बिताया। कानजी पाठशाला छोड़ गया।

दूधके लिए दिया	०. ०. ६

सितम्बर २८, शनिवार

अभयचन्द और मॉड गये।

अभयचन्दसे देवीके लिए प्राप्त	०. १०. ०
मेढके सम्बन्धमें चैमने, पोलक और मेढको तीन तार भेजे	०. ५. ६
माल-भाड़ा	०. १. १०
डाक-टिकट, माल-भाड़ा आदि	०. ८. ०
भूल	१. ०. ०
रोकड़ बाकी	८. ९. ०

सितम्बर २९, रविवार

वॉक्सबर्गसे कुछ लोग आये। रावजी और अन्य गये। वेचर ब्राह्मण और रामसामी मुदली भी आये।

सितम्बर ३०, सोमवार

कैलेनबैक, मणिलाल, बाबू और गोविन्दू मेरे साथ शहर गये। मॉड और गीवर्स रेलसे आये।

चमड़ा	१. १५. ०
माल-भाड़ा	०. १. ५
बेरंग पत्रोंका डाक-खर्च चुकाया	०. १. २
रोकड़ बाकी	६. ११. ५

१. डायरीके छपे पृष्ठ (२७३ से २८०), जिनमें २७ सितम्बरसे ४ अक्तूबर तक की तारीखें आती हैं, जिल्द बाँधनेमें भूलसे उलट-पुलट गये लगते हैं — जैसे २९ सितम्बरका पृष्ठ २७ सितम्बरसे पहले लग गया है, आदि। गांधीजीने इन तारीखोंको स्वाक्षरोंमें ठीक किया है।

अक्तूबर १, मंगलवार

[पत्र –] छवीलदास, आनन्दलाल, वेस्ट, अब्दुल हक, कोटवाल, रुस्तमजी, डॉसन, कस्तूर, दादा अब्दुल्लाको। प्रभा, विजया, चन्दा, रमा, और ललिताके बाल काटे। कैलेनबैक गये और आये।

शक्करके लिए प्राप्त	०. ०. ६
मॉडके बक्सोंका दिया	२. १५. ४
डाक-टिकट	०. १. ९
रोकड़ बाकी	पौं० ३. १४. १०

अक्तूबर २, बुधवार

[पत्र –] मूसा आकुजी, वेलशी, शेख रसूल, छगनलाल, मोतीलाल, मिलीको। प्रागजी रातको आये।

शक्करके लिए प्राप्त	०. ०. ६
शक्कर	०. ०. ९
डाक-टिकट	०. १. ०
जॉन	०. २. ६
रोकड़ बाकी	३. १२. ७

अक्तूबर ३, गुरुवार

कैलेनबैक, मैं, प्रागजी, कुप्पू और छोटू शहर गये। हॉस्केनके यहाँ सभा थी। मॉड हम लोगोंके साथ फार्मपर आई।

सुईदानियोंके लिए और बाकी श्लेसिनको दिया	०. १०. ०
रेल	०. ०. ८
ट्राम	०. ०. ३
रोकड़ बाकी	३. १. ८

अक्तूबर ४, शुक्रवार

गीवर्स प्रातःकाल आये। रामदासने बिना नमक और मसालोंका भोजन आरम्भ किया; प्रभाने भी। रजबअली गया।

डाक-टिकटों और दूधके लिए दिया	०. १. ३
रजबअलीका किराया	०. ५. ३
नकद	०. २. ८

अक्तूबर ५, शनिवार

मॉड गई। फलाहारपर रहते मुझे आज नौ दिन हुए, पुरुषोत्तमदासको तीन और जमनादासको चार दिन हुए। नायना शहर गया; भगा भी।

जॉनने वापस जमा कराये	०.	२.	६
शक्करके लिए प्राप्त	०.	०.	६
शक्कर आदि	०.	३.	९
डाक-टिकट और दूध	०.	१.	३
नायनाका किराया	०.	२.	०
रोकड़ बाकी	२.	१६.	२

अक्तूबर ६, रविवार

[पत्र –] लछमन पाण्डे, विंटरबॉटम, उमियाशंकर, आनन्दलाल, कस्तूर, छगनलाल, सोरावजी, वेस्टको। लक्ष्मण गया। उसका चाचा और कानाके बहनोई यहाँ आये हुए थे। कुमारी बुश और मुर्गन आये और गये। मेढ आये; प्रागजी भी।

नायनाके लिए प्राप्त	२.	६.	०
डाक-टिकट. . .[1]कै०	०.	०.	६
मेढने कालीदास और नूर मुहम्मदके तारोंके दिये	०.	२.	०
रोकड़ बाकी पौंड०	५.	०.	८

अक्तूबर ७, सोमवार

मेढ और देसाई गये। रातको दर्जी लोग और रतनजी लल्लूके सम्बन्धमें आये।

अक्तूबर ८, मंगलवार

कैलेनबैक और मैं शहर गये। जमनादास कुछ दूर साथ रहा। शहरमें चन्दा इकट्ठा करने गया। हॉस्केनके घर सभा।

शक्कर आदिके लिए मिला	०.	०.	९
प्रागजीको भाड़े आदिके लिए दिये	०.	५.	०
कैलेनबैक	१.	०.	०
रोकड़ बाकी	३.	१६.	५

अक्तूबर ९, बुधवार

कै० और मैं शहर गये। हमारे साथ गीवर्स भी थे। चैमनेसे भेंट की।
[पत्र] नायक, मखेरा, रामप्यारी, रत्नम्, अब्दुल हकको।

दूधके लिए मिले	०.	०.	६
रोकड़ बाकी	३.	१६.	०

१. यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

अक्तूबर १०, गुरुवार

बुधवारकी टीप देखिए। वह [वहाँ] भूलसे दर्ज की गई थी।

अक्तूबर ११, शुक्रवार

भाई कोटवाल आये। डॉ० डनिंग रातको कैलेनबैकके साथ आये।

भाड़ा दिया पु० दासकी मार्फत	०.	३.	५

अक्तूबर १२, शनिवार

[पत्र –] पोलक, आनन्दलाल, अभयचन्द, छगनलाल, मोहनलाल; तार – पोलक और हिन्दू. . .को।[1] उमियाशंकर, मोरारजी, भगा और नायक दोपहरको आये।

किताबके लिए मिला	१.	०.	०
जेकीके लिए रबर ट्यूबका दिया	०.	५.	६
तारोंका	०.	२.	३
माल-भाड़ा	०.	१.	३
माल-भाड़ा	०.	०.	३
डाक-टिकट	०.	१.	६
रोकड़ बाकी	४.	२.	९

अक्तूबर १३, रविवार

श्री गॉर्डन और मॉड आये; संध्याको चले गये।

अक्तूबर १४, सोमवार

कैलेनबैक, जमनादास और मैं पैदल गये। उमियाशंकर ट्रेनसे गये। मुहम्मद अली, कानजी पाठशाला वापस आये – वॉक्स ११६७।

कानजीके लिए प्राप्त	[०.]	५.	[०]
जमनादासको फल आदिके लिए दिया	१.	०.	०

अक्तूबर १५, मंगलवार

प्रागजी और मैं शहर गये। हॉस्केनके दफ्तरमें सभा हुई।

अक्तूबर १६, बुधवार

कैलेनबैक शहर गये। पत्र — रेवाशंकरभाई, आनन्दलाल, पोलक, जोशी, डॉ० गुल, हरिलालको।[2] पी० नायडू आये और चले गये।

डाक-टिकटोंका दिया	०.	३.	०
कोटवालको दिया	१.	१५.	०

१. यहाँ कुछ अक्षर अस्पष्ट हैं।

२. देखिए "पत्र हरिलाल गांधीको", पृष्ठ ३३०।

अक्तूबर १७, गुरुवार

कै०, कोटवाल और मैं शहर गये। मैं रातको शहरमें रहा।

कुमारी नुडसनसे मिले	०. ५. ०
माल-भाड़ा दिया	०. २. ९

अक्तूबर १८, शुक्रवार

कैलेनबैक, काछलिया और इमामके साथ केप गया।

मिला	पौं० २[०?]. ०. ०

अक्तूबर १९, शनिवार

[केपके] रास्तेमें[1]।

अक्तूबर २०, रविवार

सायंकाल केप [टाउन] पहुँचा। डॉ० गुलके यहाँ ठहरा। रातको हिन्दुओंकी सभामें गया।

अक्तूबर २१, सोमवार

यह दिवस [केपमें] मानपत्र आदिके सम्बन्धमें [कार्यक्रम] समझानेमें बीता। नूरुद्दीनके लोगोंसे मिला। श्री कज़िन्ससे भेंट।

अक्तूबर २२, मंगलवार

श्री गोखले प्रातःकाल पहुँचे। टाउन हॉलमें मानपत्र[3] दिये गये।

अक्तूबर २३, बुधवार

नूरुद्दीनकी सभामें गया। अब्दुर्रहमानके यहाँ चायपान। रातको समितिके सदस्योंसे बातचीत।

अक्तूबर २४, गुरुवार

किम्बरलेको रवाना।

अक्तूबर २५, शुक्रवार

श्रीमती ऑलिव श्राइनर डी'आर आईं। भारतीय विशेष ट्रेनसे आये; मॉडर नदीपर [उनसे हमारी भेंट हुई]। वहाँके मेयर तथा भारतीय लोग बेकन्स फील्ड पहुँचे।

१. गांधीजीने यहाँ यह टीप की है — "सोराबजीको ४५ पौंड भेजने हैं।" किन्तु लगता है कि इसे उन्होंने पीछे काट दिया।

२. डायरीके २९७ से ३०४ तक के पृष्ठ भी, जिनमें २१ अक्तूबरसे २८ अक्तूबरकी तारीखें पड़ती हैं, उलट-पुलट हो गये हैं, जैसा कि २७३ से २८० तकके पृष्ठोंके बारेमें है; देखिए पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ ४०४ पर। दोनों जगह पृष्ठोंकी संख्या ८ है। इससे स्पष्ट है कि ये ३२ पृष्ठके एक फार्मके भाग हैं। गांधीजीने पहले पृष्ठोंमें तारीखें ठीक कर ली थीं; किन्तु यहाँ उन्होंने जिल्दसाजकी भूलका खयाल रखते हुए जिस अशुद्ध क्रममें पृष्ठ लगे हुए थे, उसीमें डायरी लिखी है।

३. देखिए "भाषण: केप टाउनमें गो० कृ० गोखलेकी स्वागत-सभामें", पृष्ठ ३३२-३४।

किम्बर्ले पहुँचे। मेयर आदि स्टेशनपर। सामीके यहाँ ठहरे। टाउन हॉलमें सभा।[1]

अक्तूबर २६, शनिवार

एक खदानको देखने गये। ऑलिवर आये। मैक्लेरेन।[2] रातको भोज।[3]

अक्तूबर २७, रविवार, आश्विन वदी १

ऑलिवरके यहाँ गये। भारतीयोंकी सभा। क्लार्क्सडॉर्पको रवाना। क्रिस्टियाना, ब्लूमहॉफ और विडसॉर्टनमें मानपत्र।

अक्तूबर २८, सोमवार

क्लार्क्सडॉर्प, पॉचेफ्स्ट्रूम और क्रूगर्सडॉर्पमें मानपत्र। जो० ब० पहुँचे। स्टेशनपर मानपत्र। माउंट व्यूमें ठहरे।

नौकरोंको दिया	३. ०. ०

अक्तूबर २९, मंगलवार

कार्लटन होटलमें यूरोपीयों द्वारा स्वागत।

अक्तूबर ३०, बुधवार

हॉस्केनके यहाँ समारोह।

अक्तूबर ३१, गुरुवार

फ्री मेसन हॉलमें भोज।

टी० नायडूको दिया	१०. ०. ०

नवम्बर १, शुक्रवार

ग्रैंड नेशनल होटलमें चीनियोंके साथ जलपान। ड्रिल हॉलमें भारतीयोंकी सभा, स्त्रियों द्वारा मानपत्र। रातको अलेक्जैंडरके यहाँ ठहरे।

नवम्बर २, शनिवार

टॉल्स्टॉय फार्ममें।

नवम्बर ३, रविवार

टॉल्स्टॉय फार्ममें।

नवम्बर ४, सोमवार

टॉल्स्टॉय फार्ममें।

नवम्बर ५, मंगलवार

फार्मसे रवाना। चैपलिनके यहाँ चाय।

नवम्बर ६, बुधवार

वॉक्सबर्ग और जर्मिस्टनकी बस्तियाँ देखीं। सायंकाल नेटालको रवाना।

१. देखिए "भाषण: किम्बर्लेकी सभामें", पृष्ठ ३३४-३५।

२. मैक्लेरेन ब्लूमफॉंटीनके भारतीयोंकी शिकायतें प्रस्तुत करनेके लिए आये थे।

३. देखिए "भाषण: किम्बर्लेमें श्री गोखलेको दिये गये भोजके अवसरपर", पृष्ठ ३३५-३७।

नवम्बर ७, गुरुवार

न्यू कैसिल और डंडीमें मानपत्र। मैरित्सवर्ग पहुंचे। कैम्डन होटलमें ठहरे। टाउन हॉलमें मानपत्र।[1]

नवम्बर ८, शुक्रवार

पाठशालामें भारतीयोंसे भेंट। डर्वनसे विशेष रेलगाड़ी आई। दोपहरको डर्वन रवाना हो गये। डर्वनमें टाउन हॉलमें सभा। मानपत्र।[2]

नवम्बर ९, शनिवार

लड़कोंके खेल। इनाम बाँटे।

नवम्बर १०, रविवार, कार्तिक सुदी १

लॉर्ड्स ग्राउन्डमें भारतीयोंसे मुलाकात। इसीपिंगोके लिए विशेष गाड़ी छूटी। वहाँ समारोह। सायंकाल मोटरसे फीनिक्स गये।

नवम्बर ११, सोमवार

दोपहर बाद फीनिक्ससे रवाना। रातको ड्रिल हॉलमें भोज।[3]

नवम्बर १२, मंगलवार

मार्शल कैम्बेलके यहाँ भोजन। गिरमिटियोंकी सभा। प्रिटोरियाको रवाना हुए।

नवम्बर १३, बुधवार

मार्गमें हाइडेलवर्ग, स्टैंडर्टन और फोक्सरस्टमें मानपत्र। प्रिटोरिया स्टेशनपर मानपत्र। ट्रान्सवाल होटलमें ठहरे।

नवम्बर १४, गुरुवार

जनरल बोथा, जनरल स्मट्स और फिशरसे भेंट। रातको टाउन हॉलमें समारोह।[4]

नवम्बर १५, शुक्रवार

प्रिटोरियासे मोटर द्वारा विंढमसे मिलने गये। वापस आये। ग्लैडस्टनके साथ भोजन। सायंकाल लॉलीको रवाना।

नवम्बर १६, शनिवार

फार्ममें

नवम्बर १७, रविवार

सर टॉमस स्मार्टसे मिलने मोटरसे गया। इमाम [अ० का० बावजीर] से मिले; फैंसी और जीवन प्रेमासे भी। डेलागोआ-बेको रवाना।

१. देखिए "भाषण: मैरित्सवर्गमें गोखलेके स्वागत-समारोहके अवसरपर", पृष्ठ ३४४।
२. देखिए "भाषण: डर्बनमें गोखलेके स्वागत-समारोहमें", पृष्ठ ३४६।
३. देखिए "भाषण: डर्बनमें गोखलेके सम्मान-भोजमें", पृष्ठ ३४७।
४. देखिए "भाषण: प्रिटोरियामें गोखलेके स्वागत-समारोहमें", पृष्ठ ४४७।

कुमारी एस०से प्राप्त	१५. ०. ०[1]
दुखीको	४. ०. ०
डेलागोआ-बेके टिकट	६. ६. ०
कैलेनबैक	४. ०. ०

नवम्बर १८, सोमवार

डेलागोआ-बे पहुँचे। टाउन हॉलमें मानपत्र। होटलमें भोज।[2] जहाज रातके बारह बजे रवाना।

माधवजीसे प्राप्त	२०. ०. ०
नौकरोंको	५. ०. ०

नवम्बर १९, मंगलवार

जहाजपर।

नवम्बर २०, बुधवार

उपवास। रातको बेरा पहुँचे।

नवम्बर २१, गुरुवार

बेरामें मानपत्र — दो वक्त भोजन शुरू।

कैलेनबैकको दिये	९. ०. ०

नवम्बर २२, शुक्रवार

एजेंटको तार कि डर्बनमें किरायेका पैसा नहीं मिला। तैयब शकूरसे ६३ पौंड उधार लिये और एजेंटको दिये। सायंकाल बेरामें घूमे। गोखलेके लिए दैनिक कार्यका विवरण तैयार किया।

नवम्बर २३, शनिवार

रातको जहाज रवाना हुआ।

नवम्बर २४, रविवार

जहाजपर।

नवम्बर २५, सोमवार, कार्तिक बदी १

मोजाम्बिक पहुँचे। प्रातःकाल शहरमें मानपत्र। रिक्शा द्वारा घूमने गये। तीन घंटे बाद जहाज रवाना।

नवम्बर २६, मंगलवार

श्री गोखलेको समुद्र-यात्रामें यह वचन दिया कि मैं तबतक भारतको रवाना न हूँगा जबतक दक्षिण आफ्रिकामें मेरी अनुपस्थितिमें काम चलता रहे, ऐसी व्यवस्था न कर

१. देखिए चित्र पृष्ठ ४१६ के सामने।
२. देखिए "भाषण : लॉरेंको मार्क्विसमें गोखलेके सम्मानमें आयोजित भोजके अवसरपर", पृष्ठ ३४९।

लूँ। बहुत सम्भावना यही है कि कामकी व्यवस्था पोलकके हाथोंमें रहेगी। मैं लन्दनकी समितिके लिए तीन सालमें ६०० पौंड इकट्ठा करनेका प्रयत्न भी करूँगा। लोगोंको यह सूचित कर देनेकी अनुमति मिली कि [गोखलेकी ओरसे] और अधिक सहायता मिलना सम्भव है।

नवम्बर २७, बुधवार

प्रातःकाल जंजीबार पहुँचे। शहर गये। श्री यूसुफ अली आदिसे मिलने गये। विक्टोरिया गार्डन्समें समारोह।

नवम्बर २८, गुरुवार

प्रातःकाल तीनोंका सामान 'प्रेसीडेंट' जहाजमें चढ़ा दिया गया। तीसरे पहर शहरमें मानपत्र दिया गया। दिन. . .[1]में बिताया। जो० व० के मानपत्रोंकी पेटी पीछे छूट गई जान पड़ती है।

नवम्बर २९, शुक्रवार

'प्रेसीडेंट' कल रातको रवाना हो गया। प्रातःकाल टोंगाट पहुँचा।

श्री गोखलेको पेटीके खोनेकी बात मालूम हुई। उन्होंने दुःख प्रकट किया। कैलेनबैकने टोंगाट जाकर 'क्राउन प्रिंस' जहाजको तार दिया। गोखलेसे दोपहर बाद ४ बजे विदा ली। 'ट्रेवोरा' जहाजपर सवार हुए और डेकपर यात्रा की। जहाजमें कै० ने अपने उद्गार प्रकट किये।[2]

डेक और तीसरे दर्जेका किराया	०. १७. ०
पोर्टरोंको दिया	०. १०. ०

नवम्बर ३०, शनिवार

जंजीबार सुबह पहुँचे। शहरमें ठहरे। डेलागोआ-बेमें जीनवालाको तार दिया। जो० व० को भी तार भेजा। कुर्सियाँ आदि खरीदीं। 'ट्रेवोरा' पर १० बजे लौटे।

सफरी कुर्सियाँ आदि	०. ९. ०
धोतियाँ [?] आदि	०. १३. ०
तार	१. २. ०

दिसम्बर १, रविवार

प्रातःकाल दारेसलाम पहुँचे। कप्तानने दूसरे दर्जेका टिकट भेजा ताकि उतरनेमें सुविधा हो। श्री रतनसीके यहाँ भोजन किया। भारतीय पोशाक [पहली बार] पहनी।

दिसम्बर २, सोमवार

मोम्बासासे श्री गोखलेका राजी-खुशीका तार मिला। जो० व०से तार आया कि उनकी पेटी मिल गई है।[3] श्री [गोखलेको] माहीके पतेसे तार भेजा[4] और जो० व०

१. यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

२. देखिए "श्री गांधी-नजर-कैद", पृष्ठ ३५७।

३. देखिए नवम्बर २८ और २९ की टीपें।

४. देखिए "पत्र: गो० कृ० गोखलेको", पृष्ठ ३५०-५१।

रूलेसिनके नाम तार भेजा कि पेटी बीमा करके भेज दी जाये।

तार ०. १६. ०

दिसम्बर ३, मंगलवार

दारेसलाममें मानपत्र। श्री कैलेनबैकने हिन्दी सीखना आरम्भ किया।

टिकटोंके लिए प्राप्त ७. ०. ०

दिसम्बर ४, बुधवार

दारेसलाममें। महाराज मान-हानि केस और आगा खाँ केस आदिकी खबरें पढ़ीं।

दिसम्बर ५, गुरुवार

सायंकाल जहाजमें बैठा। बाबूके यहाँ समारोह।

गुलाम हुसेन नारूलानजी [?] ऐंड सन्ससे

'इं० ओ०' के लिए प्राप्त रु० १२. [०. ०]

मणिलाल देसाईसे विशेषांकके[1] लिए रु० ७. [०. ०]

दिसम्बर ६, शुक्रवार

दारेसलामसे रवाना।

दिसम्बर ७, शनिवार

रातको मोजाम्बिक पहुँचे। उनकी यात्राका अनुभव ठीक चल रहा है। व्यापारी [मिलने] आये।

दिसम्बर ८, रविवार

मोजाम्बिकसे ११ बजे दिनमें रवाना हुआ।

दिसम्बर ९, सोमवार, मार्गशीर्ष सुदी १

चिन्दी पहुँचा।

दिसम्बर १०, मंगलवार

प्रातःकाल बेरा पहुँचा। शहरमें, नैयब शकूरके यहाँ, ठहरा।

दिसम्बर ११, बुधवार

'इनवॉजन कैसिल' जहाजके टिकट खरीदे। उसमें दोपहरको सवार हुआ।

तार रूलेसिन आदिको ०. ६. ०

इनाम आदि, कुलियोंका खर्च १. ०. ०

दिसम्बर १२, गुरुवार

जहाजपर।

दिसम्बर १३, शुक्रवार

डेलागोआ-बे प्रातःकाल पहुँचा। कुछ समय तक उतरनेसे रोका गया; फिर उतरनेकी अनुमति दे दी गई। मायवजीके यहाँ गया। दोपहरको गाड़ी पकड़ी और कोमाटी [पूर्ट] पहुँचा। पुलिस द्वारा पूछताछ।

१. गोखलेकी आफ्रिका-यात्राकी स्मृतिमें प्रकाशित इंडियन ओपिनियनका विशेषांक।

दिसम्बर १४, शनिवार

जो० ब० पहुँचा।

एक बजे [दिन]की गाड़ीसे लॉली पहुँचा। बर्नेटके पुत्रका बप्तिस्मा। मेढ सामान लेकर औरोंसे पहले चले गये।

दिसम्बर १५, रविवार

फार्ममें बिताया। द्वारकादास गांधी आये। गबो, कृष्णसामी और रेवाशंकर आये। गबो अपना सामान साथ लेकर लौट गया।

दिसम्बर १६, सोमवार

फार्ममें। कुमारी बुश और उनकी माँ आईं। कुनके आये।

दिसम्बर १७, मंगलवार

कैलेनबैक, गोविन्दू और मैं पैदल शहर गये। कोटवाल रेलसे आये। कोटवाल और गोविन्दू प्रिटोरिया गये। छोटम मेरे साथ फार्ममें आया। कृष्णाके[1] बारेमें छगनलालका तार आया।

फीनिक्सका टिकट १. १७. १

दिसम्बर १८, बुधवार

प्रातःकालकी गाड़ीसे डर्बन गया।

दिसम्बर १९, गुरुवार

फीनिक्स पहुँचा।

दिसम्बर २०, शुक्रवार

फीनिक्समें बिताया।

दिसम्बर २१, शनिवार

तार मिलनेपर डर्बन गया। सर जॉन ह्यूलेटसे भेंट हुई। तीसरे पहरकी गाड़ीसे वापस आया।

दिसम्बर २२, रविवार

आनन्दलाल, वेस्ट, आदिसे बातचीत की। सायंकाल सभा हुई।

दिसम्बर २३, सोमवार

कृष्णा ठीक दिखाई दिया।

दिसम्बर २४, मंगलवार

प्रभुदास[2] बीमार हो गया। वेस्ट शहर गये। गज्जर आये।

दिसम्बर २५, बुधवार, मार्गशीर्ष बदी १

प्रेसमें देर तक काम किया। वीरजीसे बातचीत। गज्जर गये। उनके साथ प्रागजीको भेजा।

१ और २. श्री छगनलाल गांधीके, क्रमशः छोटे और बड़े पुत्र।

दिसम्बर २६, गुरुवार[1]

नियमित रूपसे काम आरम्भ किया। ५ से ७ बागमें, ८ से ११ अध्ययन, १२ से ४–३० प्रेसमें, ५ से ६ बागमें। बद्री, भवानीदयाल, देवीदयाल, गज्जर और उनकी पत्नी आये; उनके साथ प्रागजी भी आये। इस वर्षके हिसाबको देखनेसे पता चला कि अगले साल प्रेसमें घाटा होगा।

दिसम्बर २७, शुक्रवार

शिवलाल आये।

दिसम्बर २८, शनिवार

रामका पुत्र बीमार। उसे देखने गया। अब्दुल करीम सेठ आये।
रोकड़ बाकी २. १. ६

दिसम्बर २९, रविवार

दादा सेठ, उमर सेठ, रुस्तमजी सेठ, अ० हक और इस्माइल हाफिजी मूसा आये और गये। रातको भवानीदयाल और देवीदयाल आये और गये।

दिसम्बर ३०, सोमवार

वर्षा —

दिसम्बर ३१, मंगलवार

वर्षा — पत्र लिखे। रातको सभा। नये फेरफार समझाये।

ता० [जनवरी] २, [१९१३]

डर्बनसे रवाना। बद्रीने १५ पौंडका चेक दिया।

जनवरी ४

जो० ब० पहुंचा। उसी दिन फार्ममें बर्नेटकी पुत्री बीमार पड़ी। मेढ, देसाई और नायडू आये।

जनवरी ५

कैलेनबैक शहर गये। कुप्पू, शान्ति, उमियाशंकर आये।

जनवरी ६

शिवपूजन. . .[2] मिला।

स्मरणीय[3]

श्रीमती शेर
मार्फत श्रीमती मान
विक्टोरिया पैरेड
मोज [ली ?]
बर्मिंगहम

१. देखिए चित्र पृष्ठ ४१६ के सामने।
२. यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।
३. ये पते प्रायः अंग्रेजीमें हैं। जो गुजरातीमें हैं, उनके आगे गुजराती लिखा है।

एच० वी० गोडबोले
बाक्स १५४१
के[प]टाउन

पी० देसाई
जे० ई० दादा [?] ऐंड कं०
निकल्सन्स शुगर एस्टेट [?]
ग्लैंसडेल

हरिला[ल]
टोडानी पोल नं० १५१४
...[1]नी पोल
कालूपुर रोड [गुजराती]
[अहमदाबाद]

श्रीमती मैकडानल्ड
५२१, वनाटाईन ऐवेन्यू
विनीपेग

बापूभाई दौलतराय मेढ [गुजराती]
रायपुर
अकाशेठका [गुजराती]
कुआ पोल
[अहमदाबाद]

प्रागजी के० देसाई
सालेज
डाकखाना अमलसाड़
ताल्लुका — जलालपुर

ई० डैलवर्न [?]
६ सैंटीनियल चैम्बर्स
सिडनी
आस्ट्रेलिया

मेहता
[मार्फत] एम० स्पैंडजियन [?] महोदय
२६, न्यू डी ला ग्रांड...[2]
ऐंटवर्प

१. यहाँ कुछ शब्द अस्पष्ट हैं।
२. अस्पष्ट है।

"डायरी : १९१२" से

— सौजन्य : गांधी स्मारकनिधि
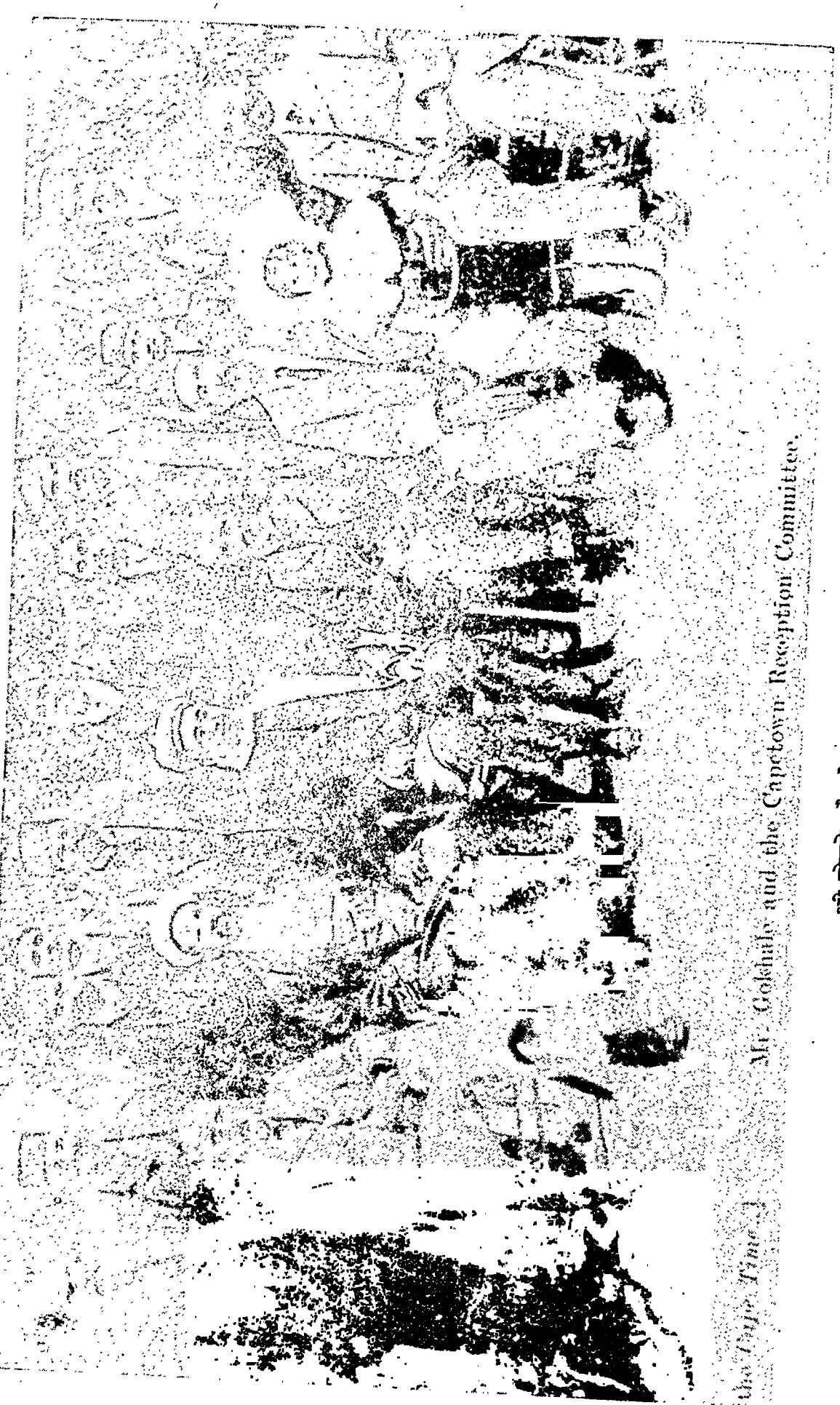
Mr. Gokhale and the Capetown Reception Committee.

श्री गोखले और केपटाउनकी स्वागत समिति

३१०. राष्ट्रीय कांग्रेसमें श्री गोखले

श्री गोखलेने इस उपमहाद्वीप [के अपने दौरे] में अत्यन्त कठिन परिश्रम किया और अब भारत लौटते ही बिना विश्राम लिये वहाँ भी काम शुरू कर दिया है। कांग्रेसके बाँकीपुर अधिवेशनमें गिरमिट-प्रथाको पूरे तौरपर बन्द करनेके समर्थनमें वे एक प्रस्ताव पास करानेमें सफल हो गये हैं। हमारा विश्वास है कि शीघ्र ही इस प्रथाका अन्त हो जायेगा। श्री गोखलेकी आदत किसी कामको अधूरा छोड़नेकी नहीं है। वे जिस कामको हाथमें लेते हैं, उसे भली-भाँति सम्पन्न करते हैं। वे कोई भी लड़ाई अन्ततक लड़ते हैं। वे पीछे हटनेवाले सेनापति नहीं हैं। इसलिए हमारा निश्चित विश्वास है कि इन मूक गिरमिटिया मजदूरोंके हित उनके हाथोंमें सुरक्षित हैं। कहते हैं, अपने प्रस्तावके समर्थनमें बोलनेके अलावा श्री गोखलेने अपने भाषणमें अपने भारतीय आलोचकोंको भी जवाब दिया।[1] मालूम होता है, इन आलोचकोंने कुछ ऐसा खयाल बना रखा था कि श्री गोखलेने कुछ अधिकारोंका त्याग करके घाटेका सौदा किया है। यहाँ मेजर सिल्वर्न-जैसे लोगोंने उनकी आलोचना की है तथा उनपर दक्षिण आफ्रिकाके लोगोंको धमकानेका आरोप लगाया है। यदि अपनी अन्तरात्माके ही निर्देशपर चलनेवाला कोई जनसेवक यह भी चाहे कि सभी लोग उससे खुश रहें तो यह बात असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। श्री गोखले यह मानते हैं कि यदि जनता उनसे खुश रहती है तो बहुत अच्छा; किन्तु यदि अपनी अन्तरात्माके निर्देशपर चलते हुए उन्हें जनता या उसके किसी वर्गको नाखुश भी करना पड़े, तो इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता।

रायटरने [श्री] गोखले द्वारा आलोचकोंको दिये गये जवाबका जो संक्षिप्त सारांश भेजा है, उससे उनके भाषणके बारेमें कोई सही राय बना सकना मुश्किल है। किन्तु, रायटरने यह कहकर हमें एक अचूक कसौटी दे दी है कि हमने दक्षिण

१. रायटरके एक तारके अनुसार श्री गोखलेने गिरमिट-प्रथाको पूरी तरह समाप्त कर देनेका आग्रह करते हुए बांकीपुर कांग्रेसमें एक प्रस्ताव पेश किया था जिसमें भारत सरकारसे भविष्यमें गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्ती रोक देनेका आग्रह किया गया था। तारमें आगे बताया गया था, "...श्री गोखलेने अपने आलोचकोंको लक्ष्य करके कहा कि न मैंने और न श्री गांधीने ही दक्षिण आफ्रिकामें [भारतीय] प्रवासको सीमित करनेका कोई आश्वासन दिया है, और न हमने भारतीयोंका रत्ती-भर अधिकार ही छोड़ा है। मैं श्री गांधीके इस विचारसे सहमत हूँ कि अपने प्रवासको दक्षिण आफ्रिकामें पहलेसे ही रहनेवाले भारतीयोंको वही दर्जा दिलाने तक सीमित रखना, जिसका उपभोग यूरोपीय कर रहे हैं, नीति और शिष्टताकी दृष्टिसे उचित है। भारतीयोंकी शिकायतें निम्न राहतें देकर दूर की जानी चाहिए: बिना किसी कठिनाईके दक्षिण आफ्रिकामें प्रवेश तथा वहाँसे बाहर जाना; अबाध अन्तर्प्रान्तीय आवागमन; जहाँ चाहें वहाँ बसना; भूसम्पत्ति तथा अन्य सम्पत्तिपर भी अधिकार और स्वामित्व प्राप्त करना, . . ., राजनीतिक तथा नगरपालिका-सम्बन्धी मताधिकारका उपभोग करना; तथा सरकारी नौकरी और सार्वजनिक जीवनमें स्थान पाना . . ." । **इंडियन ओपिनियन**, ४-१-१९१३ ।

आफ्रिकामें जितनी भी मांगें पेश की हैं, श्री गोखलेने उन सबका आग्रहपूर्वक समर्थन किया। इसलिए उन मांगोंको यहां चन्द वाक्योंमें बता देना अच्छा होगा। हमारे खयालसे वे इस प्रकार हैं: (१) सम्पूर्ण संघमें प्रवाससे सम्बन्धित पूरी-पूरी कानूनी समानता; परन्तु यद्यपि हमें प्रशासनिक भेदभावका समर्थन नहीं करना चाहिए और न हम उसका समर्थन कर ही सकते हैं, फिर भी यदि प्रतिवर्ष एक निश्चित संख्यामें नये भारतीयोंको संघमें आनेकी इजाजत दी जाती है तो हमें उसका विरोध नहीं करना है। (२) निश्चय ही हमारा लक्ष्य सभी बातोंमें पूर्ण समानता है, किन्तु हम वर्तमान राजनीतिक स्थितिमें किसी प्रकारका हेरफेर करानेके लिए आन्दोलन नहीं करते; हम आरेंज फ्री स्टेटको छोड़कर संघके दूसरे सभी भागोंमें अन्य सारी कानूनी तथा प्रशासनिक निर्योग्यताओंको दूर करानेके लिए अवश्य आन्दोलन करते हैं। (३) जहांतक आरेंज फ्री स्टेटका सवाल है, हम इतना ही चाहते हैं कि यदि कोई सर्वसामान्य प्रवासी विधेयक पास किया जाता है तो प्रवासकी हद तक उसमें समाज या कौमके आधारपर कोई भेदभाव न हो। उक्त राज्यमें हमारी अन्य सब निर्योग्यताएँ तबतक बनी रहेंगी जबतक हमारे ठीक आचरण और समयके स्वाभाविक प्रभावसे फ्री स्टेटके उन यूरोपीयोंकी वर्तमान विद्वेष-भावना नरम नहीं हो जाती, जो पहले फ्री स्टेटके और बादमें दक्षिण आफ्रिकाके नागरिक प्रतीत होते हैं।

श्री गोखलेका पूरा भाषण मिल जानेपर निःसन्देह यही जान पड़ेगा कि उन्होंने अपनी दलील इसी आधारपर तैयार की है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१-१९१३

३११. 'इंडियन ओपिनियन' के पाठकोंके नाम

पाठकोंको इस अंकमें कुछ परिवर्तन दिखाई पड़ेंगे। हमारा तो विश्वास है कि यह प्रगति ही है। हमने ऐसा इस विचारसे किया है कि अगर पत्रको दो कालमोंके बजाय तीन कालमोंमें छापा जाये, तो अधिक अच्छा है। आसानी तो इसमें होती कि इसे पुस्तकाकार प्रकाशित किया जाता। हमारा उद्देश्य तो यह है कि समय-समय-पर स्थायी महत्वके लेखादिका प्रकाशन होता रहे ताकि जो पाठक इन प्रतियोंको सुरक्षित रखना चाहें, वे उन्हें एक जिल्दमें बँधवा सकें। हमारा तो मन्शा यह है कि पहले ही के समान सुपाठ्य सामग्री इसमें दी जाती रहे, लेकिन जहाँतक हो सके संक्षिप्त आकारमें उन्हें प्रकाशित किया जाये। ऐसा करनेसे उतने ही स्थानमें या उससे कम स्थानमें ही अधिकसे-अधिक सामग्री दी जा सकेगी। इस बारके अंकसे ही हमने गुजराती और अंग्रेजीके पृष्ठ कम कर दिये हैं। लेकिन हमारी चेष्टा यही रहेगी कि यद्यपि शब्द कम हों मगर सूचनाएँ अधिकसे-अधिक उनमें समा सकें। इस तरह आशा है कि कम्पोजिटरोंका कार्य तो कम हो जायेगा मगर लेखकोंका कार्य बढ़ जायेगा।

हम यह प्रयास तो गत आठ वर्षसे कर रहे हैं।[1] हमने इस दौरान जहाँ व्यापारियोंके लिए वस्तुओंकी दरें और कीमतें प्रकाशित की हैं वहीं गम्भीर विषयों-पर भी चर्चा की है। 'इंडियन ओपिनियन'के गुजराती अनुभागमें चार पृष्ठसे लेकर बीस पृष्ठ तक की सामग्री दी जाती रही है। अब आशा है कि अधिकतर दो तरहकी सामग्री प्रकाशित होगी। एक तो ऐसी सामग्री रहेगी जिससे समाजको यथासम्भव उन कठिनाइयोंके सम्बन्धमें पूरी-पूरी सूचना देनेका यत्न किया जायेगा जिससे हम पीड़ित हैं। साथ ही इसके निदानकी राह भी सुझाई जायगी। दूसरे, ऐसी सामग्री दी जायेगी जिसमें जन-चरित्रके नैतिक आचार-विचारोंका निरूपण होगा अथवा सार-रूपेण इस समस्यापर महान व्यक्तियोंके विचार प्रस्तुत किये जायेंगे। इस प्रकार, आशा है कि 'इंडियन ओपिनियन' शिक्षाका साधन बन जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–१–१९१३

३१२. सम्राट्की भारतीय नौ-सेना

समाचारपत्रोंमें एक समुद्री तार छपा है जिससे ज्ञात होता है कि भारतके देशी राजा लोग साम्राज्य-सरकारकी सहायताके लिए कुछ जंगी जहाज भेंट देनेको तैयार हैं। इसका तखमीना नहीं लगाया गया है परन्तु इसमें २१० लाख पौंडकी लागत लगेगी। अर्थात् इसमें ३१ करोड़ ५० लाखका खर्च पड़ेगा। इस व्ययका औसत निकालने-पर प्रत्येक भारतीयपर १ रुपयेका खर्च पड़ता है। लेकिन यह आंकड़े अपर्याप्त हैं। इससे सचाईका सही-सही अन्दाजा नहीं लग सकता। जंगी जहाजोंके सम्बन्धमें जो नाम लिए जाते हैं उनमें निज़ाम और मैसूर, बड़ौदा, ग्वालियर, काश्मीर, त्रावण-कोर-कोचीन, और राजपूतानाके महाराज तथा नेपाल-नरेश आदिके नाम आते हैं। इन सारे रजवाड़ोंकी कुल आबादी लगभग ४ करोड़ है। अब इन जंगी जहाजोंकी लागतके लिए जो कर वसूला जायेगा वह यहींकी जनतासे उगाहा जायेगा। वह कर प्रत्येक व्यक्तिके ऊपर ८ रुपये पड़ेगा। अब एक अत्यन्त गरीब आदमीके सिर यह रकम चार महीनेकी कमाई होती है। और यह बात भी निश्चित है कि राजा लोग यह रकम आसमानसे नहीं लानेवाले हैं। इसका बोझ उनकी मासूम प्रजाको ही ढोना पड़ेगा। लेकिन साम्राज्य-सरकारके सम्मानके अनुरूप ही एक शुभ समाचार यह आया है कि रायटरका यह समाचार निराधार है, और सम्भवतः यह बात इसलिए निराधार ठहरी है कि भारतकी किस्मत अच्छी है और भारतीय प्रजापर अभीतक ईश्वरकी कृपा-दृष्टि बनी है। इंग्लैंडके सारे समाचारपत्रोंने[1] इस विचारको अव्यावहारिक मान-कर इसकी उपेक्षा कर दी। कुछ समाचारपत्रोंने तो इसके विरुद्ध जोरदार विचार प्रकट किये। एक-दो तो यहाँतक कह गये कि यदि इस प्रकारकी कोई सहायता भार-

१. वास्तवमें यह अवधि ९ वर्ष है। खण्ड ३, पृष्ठ ३३६-३७ देखें।

तीय रजवाड़ोंसे ली गई तो वह ऐच्छिक तो हरगिज नहीं होगी। भारतीय रजवाड़ोंको वास्तविक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं है। अगर उन्हें केवल इतना-भर कहा जाये कि ऐसा करनेसे साम्राज्य-सरकार उनपर प्रसन्न होगी तो इसे वे अपना कर्त्तव्य मानकर करेंगे। इसके विपरीत, यदि राजनैतिक प्रतिनिधिगण उनपर दवाव डालेंगे तो भी उसी प्रकार वे चन्दा देनेको तैयार हो जायेंगे। किसी समाचारपत्रने तो यहाँतक कह डाला कि साम्राज्य-सरकारके युद्ध-प्रयासोंमें और किसी उपनिवेशसे एक पैसा भी नहीं आता और अकेले भारतको गोरी और काली दोनों फौजोंका भारी खर्चा उठाना पड़ता है। इसके अतिरिक्त भारतीय रजवाड़ोंको भी अपनी फौज इस तरह तैयार रखनी पड़ती है कि जब जरूरत हो वे मोर्चेपर आकर साम्राज्य-सरकारको सहायता दें। यद्यपि भारतपर घुमड़नेवाले बादल छँट गये हैं, तथापि यह बात सम्भव नहीं लगती है कि भारतीय रजवाड़े पूर्ण रूपसे स्वतन्त्र रहेंगे। फिर भी कुछ समाचारपत्रोंने इस अफवाहका स्वागत किया। जर्मनी अपनी नौसेना बढ़ानेमें लगा हुआ है। उसीकी प्रतिद्वन्द्वितामें साम्राज्य-सरकार भी अपनी जल-शक्ति बढ़ा रही है। इसका अर्थ यह हुआ कि ब्रिटिश जनताको अधिक कर अवश्य देना चाहिए। लेकिन अगर प्रजाको इस तरह कर देते ही जाना पड़ा तो वह ऊब जा सकती है। ऐसी स्थितिमें ताज्जुब नहीं कि ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल भारतपर गृद्ध-दृष्टि डाले हुए है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–१–१९१३

३१३. भारतमें श्री गोखलेका भाषण

भारतसे प्राप्त समाचारपत्रोंसे मालूम होता है कि श्री गोखलेके इस देशमें दिये गये भाषणोंके सम्बन्धमें यहाँसे जो तार गये उनसे भारतमें कुछ गलतफहमी पैदा हो गई है। बम्बईके 'गुजराती' नामक पत्रसे जान पड़ता है कि इस गलतफहमीको पैदा करनेमें अवश्य ही मुख्य हाथ अंग्रेजीके अखबारोंका है। इस अखबारने श्री गोखलेके भाषणोंका समर्थन किया है। जान पड़ता है बम्बई पहुँचनेपर श्री गोखलेका ध्यान भारतमें अपने कार्यके बारेमें फैली हुई गलतफहमीकी ओर गया।[1] रायटरके तारोंसे ज्ञात होता है कि श्री गोखलेने कांग्रेसमें बोलते हुए अपने आलोचकोंको पूरा जवाब दिया है।[2] यहाँ हमारे मेजर सिल्वर्नने श्री गोखलेके भाषणका उलटा अर्थ लगाया था, किन्तु गोखलेने उसका भी जवाब दिया और उसे सभीने मान्य किया।[3] भारतमें हमारे महापौर[मेयर] और मेजर सिल्वर्नकी तरहके लोगोंने भी श्री गोखलेके भाषणका अर्थ उलटा लगाया। श्री गोखलेके भाषणके बारेमें गलतफहमी होना कोई अचरजकी

१. देखिए परिशिष्ट २३।
२. देखिए पादटिप्पणी १, पृष्ठ ४१८।
३. देखिए परिशिष्ट २४।

वात नहीं; क्योंकि सार्वजनिक काम करनेवाले लोगोंके सम्वन्धमें ऐसा हमेशासे होता आया है और होता रहेगा।

रायटरके तारोंमें भाषणोंका सार ठीक ही दिया जाता है, यह वात नहीं। फिर भी हमें उन तारोंका [यथाशक्ति ठीक] अर्थ करके यह देखना चाहिए कि बाँकीपुरमें क्या-कुछ हुआ होगा। रायटरके तारोंको समझनेके लिए हमें पहले श्री गोखलेने यहाँ जो-कुछ कहा था, उसका अर्थ समझ लेना चाहिए। इस देशभक्तने यहाँ कहा था कि यदि प्रवासी कानूनमें सैद्धान्तिक समानता स्वीकार करके 'हमारी जरूरत पूरी करने लायक भारतीयोंको आने दिया जाये, तो दूसरे भारतीयोंके प्रवेश-पर प्रतिवन्धमें भारतको कोई आपत्ति न होगी। इसके अतिरिक्त उन्होंने यहाँ यह भी कहा था कि हम फिलहाल राजनीतिक अधिकार नहीं माँगते। श्री गोखलेने अपने भारतीय आलोचकोंको उत्तर देते हुए कहा कि भारत [दक्षिण आफ्रिकामें] प्रवासके मामलेमें कोई अधिकतम सीमा नहीं निर्धारित करता। उन्होंने मताधिकारके सम्वन्धमें कहा कि मैंने दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले भारतीयोंके लिए गोरोंके वरावरके हकोंकी माँग की है; इसमें मताधिकार भी आ जाता है। यदि हम विचारपूर्वक देखें तो यह वात उनके दक्षिण आफ्रिकाके भाषणोंके विरुद्ध नहीं लगेगी। श्री गोखलेपर यह आरोप लगाया गया जान पड़ता है कि उन्होंने भारतके हाथ वाँध दिये हैं और यहाँ और अधिक भारतीय न आने देनेकी जिम्मेदारी भारतपर ही डाल दी है। यह आरोप ठीक नहीं है; क्योंकि उन्होंने तो इतना ही माना है कि यदि संघ-सरकार और अधिक भारतीयोंको न आने देगी तो भारतको उसपर आपत्ति न होगी। उनके इस कथनमें और इसमें कि स्वयं भारत ही प्रवास वन्द कर देगा, वहुत अन्तर है। यही वात मताधिकारके सम्वन्धमें है। वे कहते हैं कि हम यह माँग अभी नहीं करते। पर इसमें, और भारत मताधिकार नहीं माँगता इसमें वहुत वड़ा अन्तर और विरोध है। पिछली बात मंजूर कर लेनेपर भारत हमपर लगी निर्योग्यताओंके लिए जवावदेह हो जाता है। श्री गोखलेने आगे वताया कि उन्होंने एक भी हक छोड़नेकी वात मंजूर नहीं की है। यह कहते हुए कि उन्होंने हमारी माँगोंके अनुसार ही माँगें की हैं, श्री गोखलेने वता दिया कि उन्होंने कोई नई माँग तो नहीं की है, किन्तु साथ ही हम जो माँगते आये हैं उसमें से कुछ छोड़ा भी नहीं है। इस तरह गलतफहमी वम्बईके आलोचकोंकी ही सावित हुई है। क्योंकि उन्होंने आजतक हमारी माँगोंकी कहने लायक आलोचना नहीं की।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–१–१९१३

३१४. डेकके यात्री

डेलागोआ-बेका प्रवासी अधिकारी कैसा बरताव करता है, इस सम्बन्धमें मैं अपना अनुभव बता चुका हूँ।[1] ऐसे बरतावके लिए कुछ हद तक डेकके यात्री भी जिम्मेदार हैं। डेकके यात्रियोंने अपने तौर-तरीकोंसे अपनी साख ऐसी बिगाड़ ली है है कि [उसकी आड़में] भारतीयोंपर कोई भी जुल्म चलता रह सकता है। अपनी कुछ दिनोंकी डेककी यात्राके अनुभवके आधारपर मेरा यह कथन एकदम अनुचित नहीं है।

डेकके यात्रियोंमें गन्दगीकी कोई सीमा नहीं जान पड़ती। जहाजमें नहाने-धोनेकी व्यवस्था होनेपर भी ज्यादातर यात्री तो शायद ही कभी नहाते हैं। वे समझते हैं कि समुद्रके खारे पानीसे स्नान किया ही नहीं जा सकता। यह सिर्फ वहम है, फिर भी वे इस वहमसे चिपटे हुए हैं। कुछ लोग आलस्यवश सप्ताहमें केवल एक बार ही नहाते हैं। डेकपर के बहुत-से भारतीय कपड़े बदलते ही नहीं और बहुत गन्दे लगते हैं। बहुत-से जहाँ बैठे होते हैं वहीं थूक देते हैं। उन्हे एक-दूसरेकी सुविधाका ध्यान भी नहीं रहता। एक व्यक्तिने जहाँ श्री कैलेनबैक बैठे थे बिलकुल वहीं उनके सिरपर से थूका। डेक कूड़ा-करकट और थूकसे इतना भरा होता है कि उसपर नंगे पैर चलनेमें जी घबराता है और पैर फिसल जानेका डर भी लगता है। अच्छी जगह लेनेके लिए लोग एक-दूसरेसे तकरार भी करते हैं। वे पाखानोंका उपयोग इतनी लापरवाहीसे करते हैं कि जिसे सफाईका थोड़ा भी ध्यान है उसे घृणा आये बिना नहीं रहती। हम इस तरह रहें और जहाजके अधिकारी हमारा तिरस्कार करें तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है; और होता भी बिलकुल यही है।

इसके अतिरिक्त ऐसे भारतीय भी डेक यात्रीके रूपमें यात्रा करते हैं जिन्हें यह शोभा नहीं देता, मेरी समझमें यदि सम्पन्न और प्रसिद्ध व्यापारी भी केवल पैसेके मोहके कारण डेकपर यात्रा करें तो उनके प्रतिस्पर्धी गोरे व्यापारियोंका उनके विरुद्ध हो जाना और उन्हें सम्मान न देना स्वाभाविक है। मान लीजिए कि स्टैंडर्ड बैंकका मैनेजर, जिसका वार्षिक वेतन १,००० पौंड या अधिक है, जहाजके पहले दर्जेमें सफर कर रहा है। वह अपने एक भारतीय आसामीको डेकपर गन्दी हालतमें [यात्रा करते] देखता है। उसके पाँच-सात हजार पौंड सदा उसके बैंकमें जमा रहते हैं अथवा उसे बैंकसे २५,००० पौंड तक उधार मिल सकते हैं। वह हर बड़े दिन-पर मैनेजरको अपने डेकके किरायेसे दूने मूल्यका सामान भेंटमें देता है। इस प्रकार यह यात्री स्पष्टतः मैनेजरसे अधिक समृद्ध है; किन्तु तब भी वह डेकपर यात्रा करता है। बैंकके मैनेजरके मनमें अपने आसामीको इस स्थितिमें देखकर क्या खयाल आयेगा? वह हमें और हमारी सम्पत्तिको धिक्कारे बिना कैसे रहेगा?

१. देखिए "श्री गांधी नजर कैद", पृष्ठ ३५६-५९।

मैं यह नहीं चाहता कि हम इस बारेमें गोरोंकी नकल करें। परन्तु मैं यह अवश्य कहूँगा कि यदि हम व्यापार आदिमें गोरोंसे मुकाबला करते हैं, उनके समान हक माँगते हैं और हमारे पास पैसा है तो जिन बातोंमें हमारी अन्तरात्माको ठेस न पहुँचे उन बातोंमें हमें गोरोंको अपनी ओर अंगुली उठानेका अवसर न देना चाहिए। पैसेवाले आदमीका फर्ज है कि वह पहले अपने सम्मानके लिए और भारतके सम्मानके लिए दूसरे दर्जेमें यात्रा करे और सफाईका पूरा ध्यान रखे। हम बहुत-सी बातोंमें अपने सम्मानको भुला देते हैं।

गरीब यात्री डेकपर जायें; परन्तु जिन बातोंमें सम्भव हो उनमें किसीके लिए कुछ कहनेकी गुंजाइश न दें। हम अपनी पैदा की हुई अड़चनें दूर कर दें तो हमें सुख मिलेगा और तब यात्रामें सुविधाएँ देनेकी जिम्मेदारी अधिकारीकी होगी और वह उसे निभानी ही होगी।

यदि हमने आरम्भसे ही ऐसा किया होता तो आज डेकके यात्रियोंकी जो दुर्गति होती है वह कभी न होती। सफाई रखना और साफ कपड़े पहनना कोई बड़ी बात नहीं है। यह मामूली-सी सावधानीका काम है। परन्तु मेरे इस कथनका कोई यह अर्थ न निकाले कि हमें जहाजोंके मेट वगैरह जो कष्ट देते हैं उसका विरोध न करना चाहिए या वे जो-कुछ करते हैं वह उचित है। जिस जहाजमें मैं डेक-यात्रीके रूपमें आया मैंने तो उसमें प्रत्येक शिकायतको दूर करवानेका प्रयत्न किया है। और इन शिकायतोंको दूर कराना ऐसे प्रत्येक यात्रीका कर्त्तव्य है जिसमें अंग्रेजीका ज्ञान आदि होनेसे ऐसा करनेकी शक्ति है। पुरनिया नामके एक यात्रीने एक विवरण भेजा है। यदि यह विवरण सच्चा हो तो इसके विरोधमें कार्रवाई करना अत्यन्त आवश्यक है। मेरे कहनेका मतलब यही है कि हम अपनी ओरसे गलती न करें। हम निर्दोष रहें तो हम अपनी शिकायतें अधिक अच्छी तरह दूर करा सकते हैं। और हम चाहे जैसे हों, किन्तु नहानेकी असुविधा या व्यवस्थाका अभाव, अपर्याप्त या बुरी और खुली टट्टियाँ, ठंड या गर्मीसे बचावके अल्प साधन, रसोई करनेकी असुविधा, स्त्रियोंके लिए विशेष स्थान आदिका अभाव और यात्रियोंको ढोरोंकी तरह एक जगहसे दूसरी जगह हटाते रहना आदि जो खामियाँ हैं, उनका बचाव या जवाब हमारी गन्दी हालत या दूसरी अपूर्णता नहीं हो सकती। इस मामलेमें जहाजोंके एजेंटोंको कदम उठाने चाहिए और यात्रियोंकी शिकायतें दूर करनी चाहिए। मैंने अपने अनुभवकी चर्चा इसी अभिप्रायसे की कि हम मनुष्य और भारतीयोंके रूपमें हर तरहसे अपने कर्त्तव्यका पालन करके भारतकी प्रतिष्ठाको कायम रखें।

मोहनदास करमचन्द गांधी

फीनिक्स

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–१–१९१३

३१५. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-१]

आरोग्यके सम्वन्वमें मुझे पिछले बीस वर्षोंसे विचार करते रहना पड़ा है। विलायत जानेके कारण और एक विशेष प्रकारकी जीवन-पद्धतिसे बँधा हुआ होनेके कारण अपने खाने-पीनेकी सारी व्यवस्था मुझे ही करनी पड़ती थी। कहा जा सकता है कि इन्हीं कारणोंसे इस सम्वन्वमें मुझे ठीक-ठीक अनुभव हुए हैं। इन अनुभवोंके आधारपर मैं अपने कुछ विचार निश्चित कर सका हूँ और वे विचार 'इंडियन ओपिनियन'के पाठकोंके लिए उपयोगी सिद्ध हों, यह सोचकर ये प्रकरण लिख रहा हूँ।

अंग्रेजीमें एक कहावत है कि "रोगको मिटानेकी अपेक्षा उसे होने ही न देना कहीं अधिक अच्छा है।" "पानीसे पहले पाल बाँधना", यह [गुजराती] कहावत भी इसी विचारको प्रकट करती है। रोगको होने न देनेकी दिशामें जो प्रयत्न किये जाते हैं, उन्हें अंग्रेजीमें "हाइजीन" कहते हैं। गुजरातीमें उसे "आरोग्य संरक्षण शास्त्र" कहा जा सकता है। यह शास्त्र वैद्यक शास्त्रसे भिन्न माना जाता है। कोई-कोई इसे वैद्यक शास्त्रका अंग मानते हैं। यहाँ इस भेदको स्पष्ट करनेका एकमात्र कारण इतना ही है कि इन प्रकरणोंमें प्रवान रूपसे आरोग्यका संरक्षण करनेके उपाय वतलाये जायेंगे। जैसे कोई खोया हुआ रत्न मुश्किलसे ही हाथ लगता है और जैसे उसकी देख-रेखमें हम जितना प्रयत्न करते हैं, उससे कहीं अविक प्रयत्न उसके [खो जानेपर] उसकी खोजवीनमें हमें करना पड़ता है, ठीक इसी प्रकार आरोग्य-रूपी रत्नके हमारे हाथसे चले जानेपर उसे पुनः प्राप्त करनेमें वहुत समय और परिश्रम करना पड़ता है। इन्हीं कारणोंसे आरोग्यके संरक्षणपर विचारशील मनुष्यको वहुत ध्यान देना चाहिए। हम प्रसंगानुकूल इसका विचार भी करेंगे कि स्वास्थ्य खो देने-पर उसे पुनः किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।

अंग्रेज कवि मिल्टनने कहा है कि मनुष्यके लिए उसका मन ही स्वर्गलोक और नरकलोक है। जहन्नुम कोई जमीनके नीचे नहीं है और न जन्नत आसमानमें। संस्कृत ग्रंथोंमें भी ऐसा विचार मिलता है: "मन ही वन्वन और मोक्षका कारण है।" इस सूत्रके अनुसार कहा जा सकता है कि मनुष्यके रोगी या निरोगी रहनेका कारण वहुत हद तक वह स्वयं ही है। जिस प्रकार हम अपने कर्मोंसे वीमार पड़ते हैं, ठीक उसी प्रकार विचारोंसे भी वीमार पड़ते हैं। अपने लड़केको हैजा हुआ देखकर वापको भी हो गया, कई वार ऐसे उदाहरण देखनेको मिलते हैं। एक प्रसिद्ध वैद्यने कहा कि महामारी आदि रोगोंसे जितने लोग मरते हैं, उससे कहीं अधिक उसके भयके कारण मरते हैं। "डरपोक वेमौत मरता है", यह कहावत विचारणीय है।

अज्ञान भी आरोग्यको नष्ट करनेका एक प्रधान कारण है। यदि सिरपर कोई आपत्ति आ जाये और हमें तत्सम्वन्वी उपायोंकी जानकारी न हो, तो हम किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं और कुछ अच्छा करनेकी फिक्रमें वुरा कर वैठते हैं।

शरीरसे सम्बन्ध रखनेवाले सर्वसाधारण नियमोंकी जानकारी न होनेके कारण हम अनेक बार ऐसा कुछ कर डालते हैं जो करने योग्य नहीं होता; अथवा स्वार्थी और धूर्त नीम-हकीमोंके हाथोंमें जा पड़ते हैं। यह अत्यन्त आश्चर्यकी बात है, फिर भी है सत्य कि हमें अपने पासमें पड़ी हुई वस्तुका ज्ञान उन वस्तुओंके ज्ञानकी अपेक्षा बहुत कम होता है जो हमसे दूर होती है और जिनसे हमारा सम्पर्क नहीं होता। मैं अपनी गलीका भूगोल नहीं जानता, किन्तु इंग्लैंडके गाँव और नदियोंके नाम मुझे कण्ठस्थ हैं। आकाशके तारोंके विषयमें मैं अवश्य ही बकवास करूँगा, परन्तु अपने घरके छप्परका ज्ञान मुझे नहीं होता। सम्भव है, मैं आकाशके तारोंको गिन डालनेका विचार करने लगूँ, किन्तु मेरे घरकी छतमें क्या-क्या लगा है या उसमें कितनी बल्लियाँ हैं, यह जाननेकी मुझे कोई इच्छा नहीं होती। मेरी दृष्टिके सामने कुदरतका जो नाटक चल रहा है, मैं उसे नहीं देखना चाहता, किन्तु नाटकशालाओंमें जो स्वाँग रचे जा रहे हैं उन्हें देखनेका अवश्य मेरा मन होता है। ठीक इसी प्रकार मेरे शरीरमें क्या होता है, यह शरीर क्या है, यह किन चीजोंका बना हुआ है, इसकी ये हड्डियाँ, यह मांस, रक्त आदि किस प्रकार बनते हैं और इन सबका काम क्या है, मेरे शरीरमें यह बोलनेवाला कौन है, मेरी गतिका आधार क्या है, मनमें एक बार अच्छे और दूसरी बार खराब विचार क्यों आने लगते हैं, मेरी इच्छाके विरुद्ध भी मेरा यह मन करोड़ों मील क्यों दौड़ जाता है, मेरा शरीर तो बीरबहूटीकी गतिसे धीमे-धीमे चलता है तब मेरा यह मन वायुवेगसे भी हजारों गुना अधिक वेग कैसे धारण किये हुए है; इस सबका मुझे कोई भान नहीं है। इस प्रकार मेरे इस शरीरसे, जो मेरे लिए सबसे अधिक निकटकी वस्तु है, मेरे मनका सम्बन्ध कैसा है, उसकी मुझे लगभग कोई जानकारी ही नहीं है।

इस दारुण स्थितिसे छुटकारा पाना हरएकका फर्ज है। शरीर और मनके सम्बन्धको समझ पाना एक बहुत ही कठिन काम है। किन्तु शरीरके साधारण व्यापारके विषयमें थोड़ा-बहुत जान लेना तो हरएक मनुष्यको अत्यन्त आवश्यक मानना चाहिए। बच्चोंके पाठ्यक्रममें भी यह जानकारी शामिल की जानी चाहिए। मेरी अँगुली कट जाये और उसका उपाय मैं न जानूँ, मुझे काँटा गड़े और उसे मैं न निकाल सकूँ, मुझे सर्पदंश हो जाये तो बिना भयभीत हुए मुझे क्या करना चाहिए, इनकी जानकारी न हो! इन सब बातोंका विचार करें तो यह शर्मकी बात प्रतीत होती है। आरोग्यके विषयमें केवल कठिन शब्दोंका प्रयोग करके ऐसा कुछ कह देना जिसे साधारण मनुष्य बिलकुल न समझ सके, यह निरा "मिथ्याभिमान" होगा अथवा इसे "मनुष्यको धोखा देनेका महान् प्रपंच" ही कहा जायेगा।

'इंडियन ओपिनियन'के जो पाठक अभीतक ऐसी पराधीनता और अज्ञानसे मुक्त न हो पाये हों, वे कुछ हद तक इससे मुक्त हो सकें, यही इन प्रकरणोंके लिखनेका हेतु है।

इस प्रकारके लेख और कहीं लिखे ही न गये हों, सो बात भी नहीं है। किन्तु मनुष्योंको विशिष्ट पुस्तकें अथवा अखबार पढ़नेकी आदत पड़ जाया करती है। 'इंडियन

ओपिनियन'के पाठकोंको भी अपनी पसन्दके दूसरे अखबारोंके साथ इस पत्रको पढ़नेकी आदत पड़ गई है। इन पाठकोंमें अनेक ऐसे हैं जो आरोग्य-विषयक पुस्तकें नहीं पढ़ते। सम्भव है, ऐसे लोगोंको इन प्रकरणोंसे लाभ हो। इसके अलावा मुझे ऐसा भी लगता है कि भिन्न-भिन्न पुस्तकोंमें आये हुए [स्वास्थ्य-सम्बन्धी] विचारोंका निचोड़ इन प्रकरणोंमे आयेगा। अनेक पुस्तकें पढ़कर, उनमें व्यक्त किये हुए परस्पर विरोधी मतोंपर चिन्तन करके मैंने अपने ये विचार ग्रथित किये हैं, अतः इन प्रकरणोंमें एकसे अधिक ग्रंथोंके सारांशका समावेश होगा। इतना ही नहीं, इससे इस विषयमें विरोधी मत व्यक्त करनेवाली पुस्तकें पढ़कर नया पाठक जिस उलझनमें पड़ जाया करता है, उससे बचनेकी सम्भावना भी होगी। एक ग्रन्थ एक स्थितिमें गर्म पानीका प्रयोग करनेको कहता है; दूसरा उसी स्थितिमें ठण्डेका। नया पाठक दुविधामें पड़ जायगा। ऐसे परस्पर विरोधी प्रयोगोंका भी इन प्रकरणोंमें यथामति विचार किया जायगा। जिन्हें मूल पुस्तकें पढ़नी होंगी, वे स्वयं उन्हें पढ़कर इन प्रकरणोंमें सूचित निष्कर्षोंमें रद्दोबदल कर सकेंगे। अतः यह मान लेनेमें किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं मानी जानी चाहिए कि 'इंडियन ओपिनियन'के सभी पाठकोंके लिए ये प्रकरण कम-ज्यादा रूपमें उपयोगी साबित होंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–१–१९१३

३१६. पत्र : मणिलाल इच्छाराम देसाईको

[जनवरी ९, १९१३ या उसके बाद][1]

सेवामें,

रा० रा० मणिलाल इच्छाराम देसाई,

बम्बई

महोदय,

आपके पिताके[2] स्वर्गवासका इस देशमें समाचार आनेपर जोहानिसबर्गमें हिन्दुओंको एक सभा हुई। सूचनार्थ निवेदन है कि उस सभामें एक प्रस्ताव द्वारा आपके पिताके स्वर्गवासपर शोक प्रकट किया गया और आपके कुटुम्ब तथा आपके साथ समवेदना प्रकट की गई।

आपका सेवक,

मोहनदास करमचन्द गांधी

सभाध्यक्ष

[गुजरातीसे]

गुजराती, ६–४–१९१३

१. पत्रमें उल्लिखित सभा ९ जनवरी, १९१३ को हुई थी।

२. इच्छाराम सूर्यराम देसाई; गुजरातीके लेखक, पत्रकार और प्रकाशक।

३१७. "अनुग्रह" का एक कार्य

ट्रान्सवालमें प्रवेशाधिकारका दावा करनेवाले, दक्षिण आफ्रिकामें उत्पन्न, दो तरुण भारतीयोंके साथ मुख्य प्रवासी-अधिकारी द्वारा किये गये बरतावके[1] बारेमें श्री पोलकने गृह-मन्त्रीको जो पत्र भेजा था, उसे हम पिछले सप्ताह छाप चुके हैं। इस पत्रमें सारा मामला इतनी अच्छी तरह पेश किया गया है कि और समझानेकी जरूरत नहीं रह जाती! उससे बहुत ही स्पष्ट रूपसे प्रकट हो जाता है कि सम्बन्धित अधिकारीका व्यवहार कितना अन्यायपूर्ण था। उसी समय श्री पोलकने 'नेटाल मर्क्युरी' को भी एक पत्र लिखा था, जिसमें उन्होंने न केवल इन दो तरुण भारतीयोंके, बल्कि श्री गज्जरके मामलेपर[2] भी प्रकाश डाला था। हमारे पाठक श्री गज्जरके मामलेसे

१. दिसम्बर २२, १९१२ को भवानी दयाल तथा देवी दयाल नामके दो भारतीय तरुण, जो ट्रान्सवालके अधिवासी एक भारतीयके पुत्र थे और जिनका जन्म भी वहीं हुआ था, ट्रान्सवाल लौटते हुए डर्बन पहुँचे। दोनोंकी पत्नियाँ भी साथ थीं और उनमें से एकके बच्चा भी था। यद्यपि दोनोंका दावा था कि ३१ मई, १९०२ को वे ट्रान्सवालमें थे और उनमें से एक शैक्षणिक परीक्षा भी पास कर सकता था, किन्तु प्रवासी-अधिकारी कज़िन्सने उन्हें निकासी-अनुमतिपत्र (विज़िटर्स परमिट) देनेसे इनकार कर दिया। पोलकने उनकी शिनाख्ती करने तथा ३१ मई, १९०२ को उनके ट्रान्सवालमें होनेके सम्बन्धमें वहाँके एक प्रतिष्ठित भारतीयका हलफनामा भी प्राप्त किया, किन्तु कज़िन्सने एशियाई-पंजीयकके निर्देशके बिना उनके दावेपर विचार करनेसे इनकार कर दिया। उसने पंजीयकके नाम भी कुछ लिखनेसे इनकार कर दिया। आखिर पोलकने दो वकीलोंकी सहायतासे मामलेको न्यायालयमें पेश किया और तब बड़ी परेशानीके बाद प्रार्थियोंको कज़िन्ससे निकासी-पास प्राप्त हुआ; किन्तु उसने पंजीयनके लिए उनके प्रार्थनापत्रोंको तब भी स्वीकार नहीं किया। इसके बाद पोलकने सारे मामलेका विवरण देते हुए गृह-मन्त्रीको पत्र लिखा और उनसे अनुरोध किया कि प्रवासी कानूनके प्रशासनमें कुछ अधिक नर्मीका रुख अपनाया जाये। **इंडियन ओपिनियन**, ४-१-१९१३।

२. केप-स्थित समरसेट ईस्टके गज्जर नामक एक भारतीय व्यापारीकी पत्नी भारतसे उनके पास आ रही थीं। श्री गज्जर उनकी अगवानी करने डर्बन गये थे। वहाँ जाते समय उन्होंने स्थानीय मजिस्ट्रेटसे नेटालके लिए एक निकासी-अनुमतिपत्र देनेको कहा, किन्तु मजिस्ट्रेटने अज्ञानवश उसे अनावश्यक बताया। परन्तु उन्हें एक प्रमाणपत्र दे दिया गया था। उनके डर्बन आनेपर कज़िन्सने उनको तलब किया और पूछताछ करनेपर पाया कि उनके पास न तो नेटालके लिए निकासी-पास है और न केपसे अनुपस्थित रहनेका अस्थायी अनुमतिपत्र। उसने उनके नाम नेटालके लिए एक निकासी-पास तो जारी कर दिया, किन्तु श्री गज्जरको मन्त्रीसे निर्देश प्राप्त होने तक नेटालमें ही रुके रहनेका आदेश दिया और उनकी पत्नीको भी जहाजपर से नहीं उतरने दिया। उसका तर्क यह था कि चूँकि श्री गज्जरके पास न नेटालके लिए निकासी-पास है और न केपके लिए वहाँसे अनुपस्थित रहनेका अस्थायी अनुमतिपत्र, इसलिए वे "निषिद्ध प्रवासी" हैं, और इस कारण उनकी पत्नीको उपनिवेशमें आनेका अधिकार नहीं है। किन्तु उसने उन्हें "एक अनुग्रहके कार्य" के रूपमें घर लौटनेकी अनुमति दे दी। इस बातकी आलोचना करते हुए श्री पोलकने **नेटाल मर्क्युरी**को एक पत्र लिखा था। **इंडियन ओपिनियन**, ११-१-१९१३।

भी परिचित हैं। हमारे सहयोगीने इन मामलोंपर एक बड़ा जोरदार सम्पादकीय[1] लिखा है, जिसे हम इस अंकमें प्रकाशित कर रहे हैं। साथ ही हम श्री पोलकके पत्रका वह अंश भी छाप रहे हैं जो श्री गज्जरके मामलेसे सम्बद्ध है।

श्री पोलकके पत्रका सबसे दुःखदायी अंश वह है जिसमें वे कहते हैं कि श्री गज्जरको "अनुग्रह"के रूपमें केप लौटनेकी अनुमति दे दी गई है। केप प्रवासी अधिनियमके अन्तर्गत अन्य अधिक कठोर मामले सामने आ चुके हैं; किन्तु जिस खण्डमें प्रान्तसे बाहर जानेवाले भारतीयको अनुपस्थितिके लिए एक खास तरहका अनुमतिपत्र लेनेका विधान है, उसमें शायद ही किसी मामलेमें स्पष्ट इतनी अधिक क्रूरता बरती गई हो। यद्यपि श्री गज्जरके पास अपने नगरके मुख्य कांस्टेबलके हाथकी शिनाख्त लिखित थी, फिर भी यदि उनके साथ यह मूल्यवान "अनुग्रहका कार्य" न किया गया होता तो वे केप प्रान्तके लिए निषिद्ध प्रवासी हो जाते। इस कानूनके अन्तर्गत यदि कोई एक केपनिवासी भारतीय, संघके किसी दूसरे प्रान्तसे अनुमतिपत्र लेकर वहाँ जाता है और वह समरसेट ईस्टके मजिस्ट्रेटकी तरह केप प्रवासी कानूनकी शर्तोंको ठीक-ठीक नहीं जानता तो उसे अपने प्रान्तमें लौटनेसे रोका जा सकता है। श्री पोलकके निरन्तर प्रयत्नके परिणामस्वरूप श्री गज्जरके मामलेमें सरकारको न्याय देनेके लिए मजबूर होना पड़ा, किन्तु केपवासी भारतीयोंको तबतक चैन नहीं लेना चाहिए जबतक उस खण्डमें परिवर्तन नहीं कर दिया जाता, और सरकारसे यह वादा नहीं करा लिया जाता कि परिवर्तन न होने तक धारापर सख्तीके साथ अमल नहीं किया जायेगा।

जहाँतक सम्बन्धित अधिकारीके[2] कार्यका सवाल है, जनताको यह जानकर शायद प्रसन्नता होगी कि उसने अब इस पदकी जिम्मेदारी श्री हैरी स्मिथको सौंप दी है। श्री हैरी स्मिथ नेटालकी हद तक एक पुराने अनुभवी अधिकारी हैं, जिन्हें सम्बन्धित लोगोंके बारेमें आवश्यक कानूनी जानकारी प्राप्त है। किन्तु संघ-सरकारके अधीन श्री हैरी स्मिथ अपने विभागको किस प्रकार चलाते हैं, इसे भारतीय समाज काफी सतर्क होकर देखेगा। श्री कज़िन्स द्वारा नेटालके प्रवासी कानूनका जैसा अमल किया गया, उसकी कटु आलोचना[3] करनेका दुःखद कार्य हमें करना पड़ा है; किन्तु हमें बराबर ऐसा लगता रहा है कि अब जब कि वे संघ-सरकारके अधिकारी हैं और हो सकता है, गृह-विभागके आदेशोंके अनुसार उन्हें अपनी इच्छाके विरुद्ध भी काम करना पड़ रहा हो, इस तथ्यकी उपेक्षा करके हम उनके साथ अन्याय तो नहीं करते रहे। लेकिन कहीं-कहीं, जैसे श्री गज्जरके मामलेमें, हम उनकी कार्रवाईकी ऐसी कोई उदार व्याख्या करनेमें असमर्थ रहे हैं। गृह-विभागके आदेश चाहे कुछ भी हों, दयालु प्रवासी-

१. इसमें **नेटाल मर्क्युरी**ने कज़िन्सकी तीव्र भर्त्सना की थी। उसने लिखा था कि स्पष्ट ही उनका व्यवहार ऐसा है, मानो लोगोंको अधिकसे-अधिक असुविधा देनेके लिए ही उन्हें नियुक्त किया गया हो। पत्रने कज़िन्सको इस पदके लिए सर्वथा अनुपयुक्त व्यक्ति घोषित किया था। **इंडियन ओपिनियन**, ११–१–१९१३।

२. कज़िन्स।

३. देखिए "नया मुल्ला", पृष्ठ २७४-७६ और "नये मुल्लाके बारेमें कुछ और", पृष्ठ २७८-७९।

अधिकारियोंके लिए उनके अमलमें असहाय स्त्री-पुरुषोंके प्रति दयाभाव रखनेकी गुंजाइश बराबर बनी रहेगी। और हमें विश्वास है कि श्री हैरी स्मिथ भारतीय समाजके साथ अपने व्यवहारमें दयालुतासे काम लेंगे, जैसा कि वे पहले अकसर करते रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-१-१९१३

३१८. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-२]

हमारी कुछ ऐसी आदत है कि जरा-सी तकलीफ हुई कि हम डॉक्टर-वैद्य या हकीमके यहाँ दौड़ जाते हैं। यदि ऐसा नहीं किया, तो हमारा हज्जाम या पड़ौसी जिस-किसी दवाको लेनेकी सलाह देता है, हम वही ले लेते हैं। हमारी मान्यता ही ऐसी बन गई है कि बिना दवाके दर्द नहीं जायेगा। यह एक ज़बरदस्त भ्रम है और इस भ्रमके कारण जितने लोग दुःखी हुए हैं और हो रहे हैं, उतने किसी दूसरे कारणसे न होते हैं और न कभी होंगे ह।। अतः दर्द या रोग क्या चीज है, यदि हम इतना साफ समझ पायें तो थोड़ा-बहुत सन्तुलन रख सकते हैं। दर्दका शब्दार्थ होता है दुःख। रोगका अर्थ भी यही होता है। दर्दका इलाज करना तो ठीक है, किन्तु दर्दको मिटानेके लिए दवा लेनी चाहिए, यह निरर्थक बात है। इतना ही नहीं, इससे अनेक बार हानि ही होती है। मेरे घरमें कचरा हो गया हो और मैं उसे केवल ढँक दूं तो इसका जो परिणाम होगा वही परिणाम दवाका समझिए। यदि मैं कचरेको ढँक दूं, तो वह सड़ उठेगा और मुझे हानि पहुँचायेगा। फिर, ढक्कन ही सड़ जाये, तो यह ढँकना एक अतिरिक्त कचरा हो गया। अर्थात् जो कचरा पहले था वह, और यह नया कचरा, इन दोनोंको मुझे साफ करना पड़ेगा। ठीक यही दशा दवा लेनेवालेकी होती है। किन्तु यदि ढाँकनेके बजाय यह कचरा साफ कर दिया जाये तो घर फिर साफ और स्वच्छ हो जायेगा। दर्द या दुःख पैदा करके प्रकृति हमें सूचित करती है कि हमारे शरीरमें कचरा है। प्रकृतिने तो हमारे शरीरमें ही कचरेको साफ करनेके मार्ग बना रखे हैं और जब कोई रोग पैदा हो जाये, तब हमें समझ लेना चाहिए कि हमारे शरीरमें जो कचरा था उसे अब प्रकृतिने साफ करना शुरू किया है। मेरे घरमें जमा हुए कचरेको कोई मनुष्य साफ करनेके लिए आये, तो मैं उसका उपकार मानूँगा। वह मनुष्य इस कचरेको साफ करेगा, तबतक मुझे थोड़ी असुविधा अवश्य होगी। लेकिन मैं चुप रहूँगा। इसी प्रकार जबतक प्रकृति मेरे शरीर-रूपी घरका कचरा साफ कर रही हो, तबतक मैं यदि खामोश रहूँ, तो मेरा शरीर ठीक हो जाये और मैं नीरोग या दुःखसे मुक्त हो जाऊँ। मुझे सर्दी हो गई है, इसलिए मुझे झटपट कुछ दवा लेनेकी — सोंठ आदि खा लेनेकी — फिक्र नहीं करनी चाहिए। मैं जानता हूँ कि मेरे शरीरके अमुक भागमें कचरा इकट्ठा हो गया है, उसे निकालनेके लिए कुदरत आ पहुँची है और मुझे उसे मार्ग देना चाहिए, जिससे कमसे-कम समयमें मैं निर्मल हो जाऊँ। किन्तु यदि मैं प्रकृतिको रोकूं तो उसका काम दुगुना हो जायेगा;

यानी कचरा साफ करना और प्रतिरोधसे जूझना। मैं प्रकृतिकी मदद कर सकता हूँ; जैसे कि जिन कारणोंसे कचरा इकट्ठा हुआ है उन कारणोंको हटा दूं ताकि और कचरा जमा न होने पाये। मतलब यह कि इस बीच खाना बन्द कर दूँ, इससे अधिक कचरा जमा होना बन्द हो जायेगा। साथ ही खुली हवामें कुछ आवश्यक कसरत करूँ। इससे भी मैं शरीरकी चमड़ी आदिके मार्गोंसे कचरेको निकाल सकूँगा। यह देहको नीरोग रखनेका स्वर्ण-नियम है और प्रत्येक मनुष्य स्वयं ही इसे सिद्ध कर सकता है। आवश्यकता इस बातकी है कि हम अपने मनको स्थिर रखें। जो मनुष्य ईश्वरपर सच्ची आस्था रखता है, वह तो सदैव यही करेगा। मनकी ऐसी स्थिति बनानेमें इस प्रकार सोचनेसे मदद मिलेगी कि "यदि मैं वैद्यों आदिकी दवा लूँ तो उससे रोग दूर हो ही जायेगा, ऐसा जिम्मा तो कोई नहीं लेगा। वैद्योंके हाथोंमें सभी लोग नीरोग नहीं हो जाते।" यदि ऐसा होता, तो मुझे यह प्रकरण लिखना ही नहीं पड़ता और हम सब सुखकी जिन्दगी भोगते।

अनुभव तो ऐसा है कि घरमें दवाकी शीशीका एक बार प्रवेश हो जाये तो फिर वह बाहर नहीं निकलती। असंख्य मनुष्य सारी जिन्दगी किसी-न-किसी रोगके शिकार बने रहते हैं और एकके बाद एक दवाएँ लेते चले जाते हैं; वैद्यों और हकीमोंको बदलते रहते हैं। रोगको दूर कर सके, ऐसे किसी वैद्यकी तलाशमें भटकते रहते हैं और अन्तमें स्वयं बर्बाद होकर तथा दूसरोंको बर्बाद करके छटपटा कर मर जाते हैं। प्रख्यात जज स्वर्गीय स्टीफेनने, जो हिन्दुस्तानमें भी रह चुके हैं, एक बार कहा, "एक तो चिकित्सकोंको वनस्पतियोंके विषयमें बहुत कम जानकारी होती है; फिर, वे उन शरीरोंमें इन वनस्पतियोंको उँड़ेलते जिनके विषयमें इससे भी कम जानकारी रखते हैं।" स्वयं चिकित्सकगण भी ठीक अनुभव प्राप्त करनेके बाद यही बात कहते हैं।

डॉ० मेजेन्दीने कहा है: "दवा एक भारी पाखण्ड है।" सर ऐशले कूपर नामके एक प्रख्यात डॉक्टर हुए हैं। उन्होंने कहा है कि "वैद्यकशास्त्र निरी अटकलबाजी-पर रचा हुआ शास्त्र है।" सर जॉन फोर्बीजने कहा है, "वैद्यों और डॉक्टरोंकी चतुराईके बावजूद तमाम लोगोंके रोग स्वयं प्रकृतिने ही दूर किये हैं।" डॉ० बेकरका कहना है कि "लाल ज्वरसे जितने रोगी मरते हैं, उससे कहीं अधिक लोग उस ज्वरकी दवासे मरते हैं।" डॉ० फ्रॉथ कहते हैं कि "वैद्यकसे बढ़कर दूसरा कोई अप्रामाणिक व्यवसाय शायद ही मिले।" डॉ० टॉमस वाटसन कहते हैं: "हमारा यह व्यवसाय एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्नके विषयमें सन्देहके समुद्रपर भटक रहा है।' डॉ० कॉसवेल कहते हैं: "यदि डॉक्टरी या वैद्यकको नाबूद कर दिया जाये, तो मनुष्य जातिका अपार लाभ हो।" डॉ० फ्रैंक कहते हैं: "दवाखानोंमें हजारों मनुष्योंकी हत्या होती है।" डॉ० मैसन गुड कहते हैं: "लड़ाइयों, महामारियों और अकालसे जितने लोगोंकी बलि होती है, उससे कहीं अधिक दवाओंसे होती है।" कई बार देखा गया है कि जहाँ-जहाँ वैद्योंकी संख्या बढ़ती है, रोग भी बढ़ते हैं। जिन अखबारोंमें दूसरे विज्ञापन प्रकाशित नहीं होते, उनमें भी दवाओंके बड़े-बड़े विज्ञा-

पन प्रकाशित होते हैं। 'इंडियन ओपिनियन' में जब विज्ञापन लिये जाते थे, तब उसके कार्यकर्ता विज्ञापन प्राप्त करनेके लिए लोगोंके पास जाते थे। किन्तु दवाओंके विज्ञापन प्रकाशित करनेके आग्रहपूर्ण प्रस्ताव दवाओंके निर्माताओंकी ओरसे अपन-आप आते रहते थे और वे खूब पैसा देनेका लालच भी देते थे। जिसकी कीमत एक पाई है, ऐसी दवाका हम लोग एक रुपया देते हैं। परन्तु अधिकांशतः उत्पादक हमें यह बात नहीं जानने देता कि वह दवा किस चीजकी बनी हुई है। 'छिपी दवाइयाँ' नामकी एक पुस्तक प्रकाशित हुई है। इसे प्रकाशित करनेका हेतु यह है कि बहुत-से लोग व्यर्थ न भटकें। उस पुस्तकमें बतलाया गया है कि सार्सापरिला, फ्रूट साल्ट, शरबत आदि जो प्रसिद्ध और पेटेंट दवाइयाँ हैं और जिनके दाम हम ३ से ७ शिलिंग तक देते हैं, उनकी लागत एक फ़ार्दिंगसे लेकर एक पेनी तक की होती है। मतलब यह हुआ कि हम कमसे-कम ३६ गुना और अधिक-से-अधिक ३३६ गुना दाम देते हैं। यानी हम ३,५०० प्रतिशतसे लेकर ३५,००० प्रतिशत तक मुनाफा देते हैं।

इससे पाठकको इतना तो समझ ही लेना चाहिए कि रोगीको डॉक्टरके यहाँ भाग कर जानेकी जरूरत नहीं है। एकाएक दवा भी नहीं लेनी है। परन्तु सब लोग इतना धीरज नहीं रख पाते। फिर सभी डॉक्टर अप्रामाणिक भी नहीं होते। दवा हमेशा खराब ही होती है, यह भी आम लोग नहीं मानते। ऐसे सब लोगोंसे इतना तो कहा ही जा सकता है कि आप यथासम्भव धीरज रखें। डॉक्टरोंको जबतक बन पड़े, कष्ट न दें। यदि डॉक्टरको बुलाया ही जाये, तो किसी अच्छे डॉक्टरको बुलाना चाहिए और जब एकको बुला लिया, तो उसीको पकड़े रहना चाहिए। और जब वही किसी दूसरेको बुलानेके लिए कहे तभी दूसरेको बुलायें। आपका रोग उस डॉक्टरके हाथकी बात नहीं है। यदि आपकी जिन्दगी बाकी है, तो आप निश्चय ही अच्छे होंगे; और यदि प्रयत्नोंके बावजूद आपकी या आपके सम्बन्धीकी मौत हो जाये, तो समझना चाहिए कि मृत्यु भी जीवनका एक रूप ही है। हम इस प्रकार सोचें और तदनुसार चलें, यही इन प्रकरणोंके लिखनेका हेतु है। इनमें मैं शरीरकी रचना, हवा, पानी, खुराक, कसरत, पानी और मिट्टीके उपचार, दुर्घटनाओं, बच्चोंकी सार-सँभाल, गर्भावस्थाके सम्बन्धमें स्त्रीके कर्त्तव्य और सर्वसाधारण रोगोंके सम्बन्धमें पाठकके साथ चर्चा करनेकी बात सोचता हूँ।

मोहनदास करमचन्द गांधी

फीनिक्स

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-१-१९१३

३१९. पत्र : मणिलाल गांधीको

[जनवरी १८, १९१३ से पूर्व][1]

चि० मणिलाल,

तुम्हारे दो पत्र मिले। मैं कोई कदम उतावलीमें नहीं उठाऊँगा। विचार तो आने ही चाहिए और उनके अनुसार मेरे रहन-सहनमें बड़े-बड़े परिवर्तन भी होने ही चाहिए। लेकिन मैं ऐसा कोई भी कदम नहीं उठाऊँगा जिससे तुम्हें परेशानी हो। तुम्हें निराश नहीं होना चाहिए। ऊँचा उठनेके लिए बड़ा प्रयत्न करना पड़ता है। लेकिन ऊँचे उठ जानेपर तुम्हें असीम प्रकाश मिलेगा। यह बड़े साहसका काम है। तुम यह काम करनेमें समर्थ हो; क्योंकि आत्माके गुण [सर्वत्र] एक-से हैं। जिन आवरणोंने आत्माको ढक रखा है, उनको हटानेपर तुम अपनी शक्ति स्वयं ही देख सकोगे। उसकी कुंजी यम-नियम है। यम-नियमके सम्बन्धमें बादमें लिखनेका सोच रहा हूँ। लिखनेको और भी है, लेकिन अभी समय नहीं है। 'शतक' वाले श्लोकको सुधार दिया है। उसे ठीकसे देखना। समझमें न आये तो फिर पूछना। जो पढ़ो उसपर हमेशा खूब विचार करो। बिना विचारे एक भी बात न बोलना, एक भी शब्द न लिखना तथा एक भी कार्य न करना।

आज डेविड अर्नेस्ट आदि आ रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० १०५) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

३२०. क्या फिर सत्याग्रह करना पड़ेगा?

हमें सारे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजको एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सूचना देनी है। शायद अगले सप्ताह हम उस मामलेका पूरा विवरण दे सकें, जिसके कारण पुनः सत्याग्रह शुरू करना आवश्यक हो गया है; वैसे हमने यह आशा बाँध रखी थी कि अब उसकी आवश्यकता नहीं होगी। हमें मालूम हुआ है कि उन ब्रिटिश भारतीयोंके बारेमें सरकार अपने वादेका पालन नहीं कर रही है, जिन्हें समझौतेकी शर्तोंके अनुसार यथाशक्ति ट्रान्सवाल या संघमें, अधिवासका अधिकार दिया जाना चाहिए। लगता है कि वह सत्याग्रह-समिति द्वारा भेजे गये सभी नामोंको स्वीकार करनेसे

१. इस पत्रमें गांधीजीने अपने जीवनमें जिस भारी परिवर्तनका जिक्र किया है, उससे तात्पर्य सम्भवतः उनके १९१३ के मध्यमें भारत जानेके निश्चयसे है, जो १८-१-१९१३ के इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित किया गया था।

इनकार कर रही है। यद्यपि परिस्थिति नाजुक है, फिर भी अभी पत्र-व्यवहार जारी है और हमें आशा है, उसका अन्त सन्तोषजनक होगा। दूसरे भी ऐसे मुद्दे हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे समझौतेसे सम्वन्धित या उत्पन्न हैं। उन मुद्दोंमें से कोई भी एक मुद्दा समाजमें आग भड़कानेके लिए काफी है। हम सरकारको सावधान हो जानेकी चेतावनी देते हैं और आशा करते हैं कि वह सतर्कतासे काम लेगी। किन्तु यदि वह ऐसा नहीं करती तो हम जानते हैं कि सत्याग्रहके अनुभवी सिपाही, कर्त्तव्यकी पुकारपर, अपना जौहर दिखायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-१-१९१३

३२१. गिरमिट-प्रथा

यदि गिरमिट प्रथाकी बुराइयोंको समझनेके लिए किसी और प्रमाणकी जरूरत हो तो उसकी पूर्ति कुमारी डडलेके उस पत्रसे हो जायेगी जिसे हम 'इंडिया' से लेकर इसी अंकमें अन्यत्र उद्धृत कर रहे हैं। इस महिलाने फीजीमें पन्द्रह साल तक मिशनरीका काम किया है, और इस अनुभवके आधारपर उसे कहना पड़ा है कि इस प्रथामें सुधार सम्भव नहीं है। पाठकोंसे उनका अनुरोध है कि वे किसी सुधारसे सन्तुष्ट न होकर इस प्रथाके खिलाफ तबतक अपने प्रभावका उपयोग करते रहें जबतक कि उसे समाप्त नहीं कर दिया जाता। हम इस खरे पत्रके लिए कुमारी डडलेके आभारी हैं। ऐसे स्वतन्त्र प्रमाणोंका बड़ा मूल्य होता है। हमें विश्वास है कि इस प्रथाके खिलाफ अन्य यूरोपीय मित्र भी प्रमाण पेश करेंगे, और उसका अन्त, जो प्रायः दृष्टिगोचर होने लगा है, निकट लानेमें सहायक सिद्ध हों। हमें विश्वास है, माननीय श्री गोखले इस प्रथाको समाप्त करानेके लिए कृतसंकल्प हैं। अभी पिछले दिनों ही राष्ट्रीय कांग्रेसने इस सम्बन्धमें पुनः एक प्रस्ताव पास किया है। यह प्रस्ताव श्री गोखलेने ही पेश किया था।[1] इस प्रथाकी आड़में स्त्रियों और बच्चोंको गुलामोंकी स्थितिमें ढकेल दिया जाता है, और इसके परिणाम इतने भयंकर निकलते हैं कि उनकी चर्चा भी नहीं की जा सकती। जबतक यह स्थिति कायम है तबतक इस अत्यन्त अन्यायपूर्ण, क्रूर एवं अनैतिक प्रथाको पूर्णतः समाप्त कर देनेके लिए हमें आवाज बुलन्द करते रहना है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-१-१९१३

१. देखिए "राष्ट्रीय कांग्रेसमें श्री गोखले", पृष्ठ ४१८-१९।

३२२. भारतीय बच्चोंकी शिक्षा

सरकारी स्कूलोंके शिक्षकोंके पथप्रदर्शनके लिए 'नेटाल प्रॉविंशियल गज़ट' में निम्नलिखित नियम प्रकाशित हुए हैं :—

> किसी भी वतनी, भारतीय या रंगदार बच्चेको उन स्कूलोंके सिवाय, जो खास तौरपर उनके लिए खोले गये हैं, किसी दूसरे स्कूलमें भरती न किया जाये।
>
> जिन भारतीय स्कूलोंमें पढ़ानेवाले शिक्षक यूरोपीय हैं उनमें दूसरी कक्षासे नीचेकी श्रेणीमें कोई विद्यार्थी न लिया जाये।
>
> यूरोपीय शिक्षकोंके निरीक्षणमें चलनेवाले किसी भी भारतीय स्कूलमें स्कूलके घंटोंमें प्रारम्भिक स्कूलोंके प्रामाणिक पाठ्यक्रममें दिये गये विषयोंके अलावा कोई अन्य विषय न पढ़ाया जाये।
>
> चौथी कक्षा पास कोई भी विद्यार्थी किसी प्राथमिक (एलिमेंटरी) भारतीय स्कूलमें नहीं रहने दिया जायेगा।

अभीतक कोई ऐसे नियम गज़टमें प्रकाशित नहीं थे जिनसे भारतीय बच्चोंके खास तौरसे अपने लिए स्थापित स्कूलोंके अलावा अन्य स्कूलोंमें भर्ती होनेपर प्रतिबन्ध लगता हो। किन्तु प्रस्तुत नियमोंने परिस्थिति पूरी तरह बदल दी है। यह तो प्रान्तीय प्रशासनकी चुनौती है। उसने इसे कानूनका विषय बना दिया है। इसके अलावा ये नियम, बहुत-सी अन्य बातोंमें भारतीयोंकी शिक्षाके लिए बाधक हैं। परिणामतः सरकारी स्कूलोंमें भारतीय भाषाएँ पढ़ाने तथा हमारे बच्चोंके प्रारम्भिक शिक्षासे आगेकी शिक्षा प्राप्त करनेपर रोक लग जायेगी। भारतीय माता-पिताओंका कर्तव्य स्पष्ट है। उन्हें अपने बच्चोंके शिक्षणका राष्ट्रीय पैमानेपर पर्याप्त प्रबन्ध करना चाहिए। हमें अपने स्कूल खोलने चाहिए, जिनमें हमारे बच्चोंको अपनी मातृभाषाएँ सीखने और उनके द्वारा अपना इतिहास पढ़नेका अवसर प्राप्त हो। हमारे लिए यह गम्भीर चिन्ताका विषय है कि हमारे बच्चोंका पालन और संवर्धन ऐसी किसी समुचित नींवके बिना हो रहा है, जिसपर उनके चरित्रका निर्माण हो सके।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–१–१९१३

१. देखिए "भारतीय माता-पिताओंके लिए", पृष्ठ १४०-४१ भी।

३२३. इंग्लैंडका सबसे बड़ा ग्राहक

"स्टेट्समैन" कलकत्ताकी आर० नाइट ऐंड सन्स नामक पेढ़ीने इंग्लैंडके अखबारोंको एक पत्र भेजा है। इस पत्रमें उन्होंने वताया है कि भारत इस समय इंग्लैंडका सबसे बड़ा ग्राहक है। सन् १९११ में उसने इंग्लैंडसे ५,२२,४६,००० पौंडका माल खरीदा था, जबकि इंग्लैंडके महान् प्रतिस्पर्धी जर्मनीसे केवल ३,९२,८४,००० पौंडका। ये महानुभाव आगे वताते हैं कि भारत ब्रिटेनकी उपज तथा तैयार मालका १४$\frac{3}{5}$ प्रतिशत खरीदता है, जबकि आस्ट्रेलिया सिर्फ ८ प्रतिशत और कैनेडा तथा दक्षिण आफ्रिका मात्र ६–६ प्रतिशत ही खरीदते हैं। इन आँकड़ोंमें एक ऐसी नसीहत छिपी हुई है जिसे साम्राज्यके प्रत्येक शुभेच्छुको समझाया जाना चाहिए। ऊपर हमने जिन उपनिवेशोंके नाम लिये हैं वे ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति अपने व्यवहारकी दृष्टिसे सबसे बड़े अपराधी हैं और भारतके मुकाबले ब्रिटेनसे उनका व्यापार भी बहुत कम है। जब भारतको अपनी शक्तिका भान होगा तब स्वशासित उपनिवेशोंमें ब्रिटिश भारतीयोंकी निर्योग्यताओंका सवाल निपटानेमें ब्रिटिश राजनयिक 'असमर्थता'की जिस नीतिका आश्रय लेते रहे हैं उसका औचित्य सिद्ध करना उनके लिए मुश्किल हो जायेगा। उदाहरणके लिए, तब वे दक्षिण आफ्रिकामें दूसरी बार संकटकी घड़ी उपस्थित होने तक प्रतीक्षा करते नहीं बैठे रहेंगे। हम स्पष्ट देख रहे हैं कि यदि गृह-मन्त्रीने यहाँके भारतीयोंको चुभनेवाली अनेक बातोंको दूर नहीं किया तो यह संकटकी घड़ी आकर रहेगी। प्रवास-सम्बन्धी नीति बिलकुल असह्य होती जा रही है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–१–१९१३

३२४. लॉर्ड ऍम्टहिलकी समिति[1]

जो समिति इंग्लैंडमें चलती है और जिसने, सभी मानते हैं, हमारे लिए बहुत बड़ा काम किया है, आज तक का उसका खर्च प्रायः ट्रान्सवालपर ही पड़ा है। यह स्थिति सदा नहीं चल सकती। फिर इस समितिने काम सारे दक्षिण आफ्रिकाके लिए किया है। ऐसी स्थितिमें इसका खर्च केवल ट्रान्सवालपर डालना स्पष्टतः अनुचित है। सभी इस समितिको बनाये रखना नितान्त आवश्यक समझते हैं। इस अंकके दूसरे भागमें पाठक श्री गोखलेके सुझावको पढ़ सकते हैं। उन्होंने कहा है कि इस समितिके खर्चके लिए २०० पौंड प्रति वर्ष इकट्ठे किये जाने चाहिए और तीन वर्षके लिए कुल मिलाकर ६०० पौंड इकट्ठे किये जाने चाहिए।[2] इस सम्बन्धमें 'इंडियन ओपिनियन'के पाठक उचित उद्योग करें तो धनसंग्रहमें देर नहीं लगेगी। जो लोग पैसा

१. देखिए "लॉर्ड ऍम्टहिलकी समिति", पृष्ठ २६९-७० भी।

२. "डायरी: १९१२", में नवम्बर २६ की टीप, पृष्ठ ४११-१२।

देना चाहें वे हमें भेज दें और हम वह पैसा श्री गोखलेको भेज देंगे। हमें आशा है कि विभिन्न समितियाँ[1] भी चन्दा इकट्ठा करेंगी। इस कार्यके महत्वके सम्बन्धमें यहाँ लिखनेकी आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–१–१९१३

३२५. माँ-बापका फर्ज

भविष्यमें अपने बेटोंको क्या बनायें, इस विषयपर बहुत-से माता-पिता बड़ा विचार करते हैं। अंग्रेज परिवारोंमें यह नियम दिखाई देता है कि वे सबसे सुन्दर लड़केको सैनिक बनाते हैं, सबसे होशियारको डॉक्टर या बैरिस्टर और सबसे मन्द-बुद्धिको पादरी। इस नियमके अपवाद बहुत हैं। और एक बड़ा अपवाद यह है कि किसी-किसी अच्छे परिवारमें से एकाध व्यक्ति सार्वजनिक कार्य करनेके लिए तैयार किया जाता है। इस समय भारतकी जैसी दशा है, उसमें हरएक माँ-बापको चाहिए कि वे अपनी सन्तानमें से कौमकी सेवा करनेके लिए एक बेटेको अवश्य तैयार करें। जहाँ परिवारमें एक ही बेटा हो वहाँ यह बात लागू नहीं हो सकती। परन्तु बहुत-से परिवारोंमें एकसे अधिक लड़के होते हैं। यदि ऐसे सभी परिवार अपने एक लड़केको देश-सेवाके लिए तैयार करे तो बहुत ही कम समयमें देशका उद्धार हो जाये। इस सम्बन्धमें प्रत्येक माँ-बापको भली-भाँति विचार करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–१–१९१३

३२६. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-३]

प्रकरण १. नीरोग स्थिति

साधारणतया यह खयाल देखनेमें आता है कि जब एक मनुष्य ठीक ढंगसे खाता-पीता है, घूमता-फिरता है और वैद्यको नहीं बुलाता है, तब उसे लोग नीरोग समझते हैं। लेकिन ऐसा मानना भ्रमपूर्ण ही है। थोड़ा-सा विचार करें तो यह बात समझमें आ सकती है। ऐसे अनेक उदाहरण देखनेमें आते हैं जहाँ व्यक्ति खाता-पीता और घूमता-फिरता है तथा यह मानकर कि उसे कुछ नहीं है अपनी बीमारीकी परवाह नहीं करता।

सच पूछा जाये तो पूर्ण रूपसे नीरोगी मनुष्य इस दुनियामें बहुत थोड़े ही मिलेंगे।

१. ब्रि० भा० सं०, जोहानिसबर्गसे सम्बद्ध अन्य स्थानीय संस्थाएँ।

एक अंग्रेज लेखकने लिखा है कि उसी मनुष्यको नीरोगी कहा जा सकता है जिसके स्वस्थ शरीरमें पवित्र मनका निवास है। मनुष्य केवल शरीर ही शरीर नहीं है, शरीर तो उसका निवास-स्थान है और शरीर, मन तथा इन्द्रियोंका ऐसा घनिष्ठ सम्बन्ध है कि इनमें से एक व्याधिग्रस्त हो तो दूसरे खराब हो जाते हैं। शरीरको गुलाबके फूलकी उपमा दी जाती है। गुलाबके फूलका बाहरी दिखावा ही उसका शरीर है। सुगन्ध उसकी आत्मा — रूह — है। कागजका बना हुआ गुलाबका फूल कौन पसन्द करेगा? सूख जानेपर गुलाबमें उसकी सुवास नहीं मिलेगी। गुलाबकी पहचान तो उसकी सुवास ही है। ठीक इसी प्रकार मनुष्यकी सुवास — उसकी आत्मा-का चारित्र्य ही उसकी पहचान है। गुलाबकी तरह दीखनेवाली अन्य कोई भी वस्तु, यदि उसकी गंध खराब है, हम फेंक देंगे। ठीक इसी प्रकार मनुष्यका शरीर ठीक दिखाई देता हो, किन्तु उसमें निवास करनेवाली रूह यदि अनाचार करनेवाली हो, तो हम उसके शरीरके प्रति मोह नहीं रख सकेंगे। अतः हम देख सकते हैं कि जिस मनुष्यका चरित्र खराब है, उसे नीरोगी नहीं कहा जा सकता। शरीरका आत्माके साथ ऐसा कुछ घनिष्ठ सम्बन्ध है कि जिसका शरीर नीरोगी होगा उसका मन भी नीरोगी ही होगा। इसी मान्यताके आधारपर पश्चिममें एक पन्थ निकल पड़ा है। वह मानता है कि जिसका मन शुद्ध हो, उसे रोग होगा ही नहीं। और जिसे रोग है, वह अपने मनको शुद्ध रखकर शरीरको नीरोगी बना सकता है। यह मत उपेक्षा करने योग्य नहीं है। वास्तवमें यह सही है; परन्तु पश्चिमके सुधरे हुए लोग इसका दुरुपयोग करते हैं। हमें तो इसमें से इतना ही सार लेना चाहिए कि आरोग्यताको बनाये रखनेका सबसे बलवान साधन हमारा मन ही है और मनकी शुद्धता ही आरोग्यताका निर्वाह करनेवाली वस्तु है।

एक मनुष्य क्रोधी है, उसका मिजाज तामसी है; दूसरा आलसी है; तीसरा बहरा है। ये जो सारी खामियाँ हैं, सच देखा जाये तो ये बीमारीके ही चिह्न हैं। कई डॉक्टर ऐसा मानते हैं कि चोरी आदि बुराइयाँ भी रोग ही हैं। विलायतमें कई धनाढ्य स्त्रियाँ दूकानोंसे छोटी-छोटी चीजोंकी चोरी कर लेती हैं। ऐसी मनःस्थितिको विलायतके डॉक्टर चौर्योन्माद (क्लेप्टोमेनिया) की बीमारी कहते हैं। कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं जो खून-खराबी न करें, तो उन्हें चैन नहीं पड़ता। यह भी एक रोग ही है।

इन सब बातोंपर विचार करके हम कह सकते हैं कि वही मनुष्य तन्दुरुस्त है, जिसका शरीर व्यंग-रहित है, अंगोंमें कोई खामी नहीं है, जिसके दाँत ठीक हैं, जिसके कान, आँख, आदि भी ठीक हैं, जिसकी नाक नहीं बहती, जिसकी चमड़ीसे पसीना निकलता है और उसमें बदबू नहीं होती, जिसके पैरोंसे बास नहीं आती और न मुँहसे ही दुर्गन्ध आती है, जिसके हाथ-पैर रोजमर्राके काम कर सकते हैं, जो विषयासक्त नहीं रहता, जो न बहुत मोटा है और न बहुत पतला और जिसका मन तथा इन्द्रियाँ सदैव वशमें रहती हैं। इतना स्वस्थ होना या रहना सहज बात नहीं है। हमें ऐसा आरोग्य नहीं मिला, क्योंकि हमारे माँ-बाप भी ऐसे नीरोग नहीं थे। एक महान् लेखकने कहा है कि यदि माता-पिता सब प्रकारसे योग्य हों और उनके सन्तति हो,

तो वह सन्तति उनसे बढ़-चढ़कर होनी ही चाहिए। यदि यह बात सत्य न हो, तो दुनिया प्रगति करती है, ऐसा माननेवालेको अपने वचन वापस ले लेने होंगे। पूर्ण रूपसे नीरोगी मनुष्यको मौतका डर होता ही नहीं। हम सभी मौतसे डरते हैं, इससे जाहिर होता है कि हम लोग तन्दुरुस्त नहीं हैं। मौत तो हमारे लिए एक बड़ा परिवर्तन है और सृष्टिके नियमानुसार यह परिवर्तन अच्छा ही होना चाहिए। उत्कृष्ट नीरोगताको प्राप्त करनेके लिए प्रयत्नशील होना हमारा कर्त्तव्य है। हम सब आगे इस बातका विचार करेंगे कि ऐसी उत्कृष्ट नीरोगता कैसे प्राप्त की जाये और उसे कैसे कायम रखा जाये।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–१–१९१३

३२७. काफी देरसे

हम अन्यत्र 'टाइम्स ऑफ़ नेटाल' के एक ताजे अंकमें छपी इस आशयकी खबर प्रकाशित कर रहे हैं कि जिन गिरमिटिया भारतीयोंकी गिरमिटकी अवधि समाप्त हो चुकी है, संघ-सरकारने उनसे तथा उनके बीबी-बच्चोंसे प्रतिवर्ष लिये जानेवाले तीन पौंडी करको समाप्त कर देनेका निश्चय किया है। यदि यह खबर सही है तो काफी देरसे मिलनेपर भी इस राहतका स्वागत है। अब वह समय आ गया है, जब दक्षिण आफ्रिकाके लोगोंको इस रक्त-रंजित धनका लालच छोड़ देना चाहिए। हम बहुत सोच-समझकर इसे रक्त-रंजित धन कह रहे हैं। जो कर एक गरीब आदमी, उसकी पत्नी और उसके बच्चोंसे स्पष्टतः इस उद्देश्यसे वसूला जाये कि जिस देशकी सेवा करनेके लिए उसने तथा उसके परिवारने पाँच वर्ष तक गुलामीकी जिन्दगी बिताई, उसी देशसे उसे और उसके परिवारको निकाल दिया जाये या उसे फिर एक निश्चित अवधिके लिए गुलामीके बन्धनमें बँधनेपर मजबूर कर दिया जाये उस करके स्वरूपका सही अन्दाज देनेवाला और कोई शब्द नहीं है। यह कर जिस दिन सचमुच समाप्त कर दिया जायेगा वह दिन समस्त दक्षिण आफ्रिकी भारतीय समाजके लिए खुशी मनानेका दिन होगा; क्योंकि उससे हमारे हजारों मूक देशवासियोंको राहत मिलेगी। यदि यह घृणित कर इस वर्ष उठा लिया जाता है, तो इसका श्रेय श्री गोखलेको होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५–१–१९१३

३२८. परवानेसे सम्बन्धित प्रश्न

इस मासकी २० तारीखको उतरेखमें नेटाल नगरपालिका संघकी जो सालाना बैठक हुई, उसमें संघके अध्यक्षके भाषणमें एक महत्वपूर्ण उल्लेख आया। बताया गया कि संघकी संसदके पिछले अधिवेशनमें जिस वित्तीय-सम्बन्ध विधेयक (फाइनेंशियल रिलेशंस बिल) को छोड़ दिया गया था, वह इस अधिवेशनमें, कुछ परिवर्तनोंके साथ, फिरसे पेश किया जायेगा। संक्षेपमें उसके ये उद्देश्य बताये गये: दूकानदारोंके परवानोंसे प्राप्त आमदनी प्रान्तीय परिषदोंको हस्तान्तरित करना और उनके सम्बन्धमें कानून बनानेका अधिकार भी उन्हींके सुपुर्द कर देना — "जिसका मतलब यह हुआ कि यदि विधेयक इसी रूपमें पास हो जाता है तो परवानोंका नियन्त्रण प्रान्तीय परिषदोंके हाथमें चला जायेगा।" यदि विधेयकका उद्देश्य नगरपालिकाओंके हाथसे व्यापारके परवानोंका नियन्त्रण ले लेना है तो निःसन्देह इसके लिए भारतीय समाजको बधाई दी जानी चाहिए। पर यदि इसका मतलब यह है कि परवानोंका नियन्त्रण संघीय सरकारसे प्रान्तीय परिषदोंको दे दिया जाये तो निःसन्देह इसका परिणाम समाजके हितोंके लिए अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होगा। हम अनुभव करते हैं कि भारतीय जनताको इस विधेयकपर जितना विचार करना तथा इसकी जितनी आलोचना करनी थी, उतनी उसने नहीं की। और हमें ऐसा जान पड़ता है कि इसका दक्षिण आफ्रिका अधिनियमके खण्ड १४७ से विरोध है। उस धारामें कहा गया है कि "जिन मामलोंका विशेष रूपसे, या सामान्यतः सारे संघके एशियाइयोंपर प्रभाव पड़ता हो, उन सबका नियन्त्रण एवं प्रशासन सपरिषद् गवर्नर-जनरलके अधिकारमें होगा," अर्थात् प्रान्तीय परिषदोंके नहीं, बल्कि संघीय संसदके अधिकारमें होगा। जहाँतक नेटालका सम्बन्ध है, सभी जानते हैं कि भारत द्वारा गिरमिटिया मजदूरोंका भेजना बन्द करनेकी बातको लेकर बदलेकी भावनासे श्री जी० एच० ह्यूलेटके प्रस्तावको[1] प्रान्तीय परिषदने १९११ में जो स्वीकृति दी उससे [भारतीय-विरोधी क्षेत्रोंमें] यह आशा बाँधी जा रही है कि संघके भारतीयोंका बोझ और भी बढ़ाया जा सकेगा। इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि जब साम्राज्य-सरकारने दक्षिण आफ्रिका अधिनियममें उसके खण्ड १४७ में दिये गये संरक्षणोंको शामिल करनेपर जोर दिया था तो उसके दिमागमें व्यापारिक परवानोंका सवाल भी था। किन्तु हम आगाह किये देते हैं कि यदि यह विधेयक हमारे द्वारा अनुमानित रूपमें पास हुआ तो वे सभी संरक्षण खत्म हो जायेंगे। और चूँकि साम्राज्य-सरकारके मन्त्रियोंने हमें बतला दिया है कि सम्राट्के हाथमें जो निषेधाधिकार है वह अवास्तविक और भ्रममात्र है और राज्यादेशोंमें इसका उल्लेख केवल एक कूटनीतिक चाल है, इसलिए निष्कर्ष यह निकलता है कि भारतीयोंके व्यापारिक अधिकारोंकी स्थिति अब पहलेसे भी अधिक

१. देखिए पादटिप्पणी २, पृष्ठ ७१।

संकटपूर्ण हो जायेगी। यदि भारतीयोंने इस चुनौतीको स्वीकार करके उसका प्रबल विरोध नहीं किया तो उनके अधिकारोंको जल्दीसे-जल्दी खत्म कर दिया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-१-१९१३

३२९. भारतीय महिलाओं द्वारा आयोजित बाजार

यह बाजार, जिसकी प्रेरक शक्ति श्रीमती वॉगल हैं, इस वर्षके अन्तमें भरनेवाला था। अब वह मई महीनेके आसपास भरेगा। यह तो स्पष्ट ही है कि बाजार भारतीय महिला संघ (इंडियन विमेन्स असोसिएशन) के तत्वावधानमें भरेगा। 'इंडियन ओपिनियन' के पाठकोंमें से जो श्रीमती वॉगलकी योजना और भारतीय स्त्रियोंकी शिक्षामें दिलचस्पी रखते हों, मुझे आशा है कि वे उदारतापूर्वक इसमें सहायता करेंगे और अपनी सहायताकी रकम आदि अप्रैल खत्म होनेसे पूर्व ही भेज देंगे। भारतमें रहनेवाले मददगारोंको अपना माल ज्यादासे-ज्यादा मार्चके अन्ततक भेज देना चाहिए। पता है—मन्त्री, भारतीय महिला संघ, बॉक्स ६५२२, जोहानिसबर्ग।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-१-१९१३

३३०. हमारी लापरवाही

डॉ० म्यूरिसिन स्वास्थ्यके सम्बन्धमें प्रतिवर्ष जो रिपोर्ट निकालते हैं, वह पढ़ने लायक होती है। इस वर्षकी रिपोर्टका सार हमने दूसरी जगह दिया है। डॉ० म्यूरिसिन और डॉ० एडम्सने, जो क्षय-रोगके सम्बन्धमें जाँच करनेके लिए विशेष रूपसे नियुक्त किये गये हैं, हमारी लापरवाहीकी आलोचना की है। डॉ० एडम्सने कहा है कि हम उनके विभागको छूतके रोगोंकी भी खबर नहीं देते। हम हवा और पानीके बारेमें दी गई उनकी हिदायतोंपर ध्यान नहीं देते। उन्होंने हमारी आदतोंकी भी आलोचना की है। हमें स्वीकार करना चाहिए कि यह आलोचना सही है। यह कहना निरर्थक है कि गोरे हमारे सम्बन्धमें हमेशा द्वेष-भावसे ही लिखते हैं। हम चाहते हैं कि हम ऐसे मामलोंमें किसीको भी आलोचना करनेकी गुंजाइश न दें। यदि कुछ नेतागण लगनके साथ इस दिशामें शिक्षण देनेका काम हाथमें ले लें तो हमारी स्थिति बहुत-कुछ बदल सकती है। इस कामको मुख्यतः जमीन-जायदादवाले लोग, जो मकान किरायेपर देते हैं, आसानीसे कर सकते हैं। परन्तु उन्हें पहले किरायेका अतिलोभ छोड़ना चाहिए, तभी वे ऐसा कर सकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-१-१९१३

३३१. "शुं देशनो उदय एम करी शकाये?"[1]

यह पंक्ति एक प्रसिद्ध गुजराती कविताकी है। यह हमें 'गुजराती पंच' का निम्न अनुच्छेद पढ़कर स्मरण हो आई:

श्रीमन्त सरदार बलवन्तराय भाई साहब सिंधियाने दुनियादारी छोड़कर वानप्रस्थ लेनेवाले वैष्णवोंको १२५ रुपये मासिक वृत्ति देनेके लिए दो लाख रुपयेकी रकम मंजूर की है।

यह ठीक है कि श्रीमन्त सरदारने यह रकम अत्यन्त उदार हृदयसे मंजूर की है। यह भी सच है कि कुछ योग्य वैष्णव वानप्रस्थ लेते हैं। वानप्रस्थ लेना — फकीरी अख्तियार करना — एक ऊँची स्थिति है। परन्तु वानप्रस्थीको मासिक वृत्तिका लालच देना तो उससे द्रोह करने-जैसा है। वानप्रस्थीको वृत्ति देनेका क्या अर्थ? वानप्रस्थ और पैसा, दोनों परस्पर विरोधी हैं। हमारा अनुमान है कि उक्त रकम श्रीमन्त सरदारने वानप्रस्थियोंके कुटुम्बियोंको देनेके लिए मंजूर की होगी। ऐसी बात हो तो भी वह हमारे मतानुसार दोषयुक्त है। वानप्रस्थी अपने कुटुम्बके निर्वाहके लिए दुनियापर निर्भर नहीं रहता। वह तो अपने बाल-बच्चोंको ईश्वरके हाथमें सौंप देता है। यदि वह अपने स्त्री-बच्चोंके बारेमें मानवीय सहायता लेकर बीमा करे तो उसका वानप्रस्थ सच्चा वानप्रस्थ नहीं है। इसके अतिरिक्त मनुष्य वानप्रस्थ या फकीरी हिसाब लगाकर नहीं लेता। जब उसे उसका रंग चढ़ता है तब उसे दुनियामें कोई रोक नहीं सकता।

हमें तो लगता है कि श्रीमन्त सरदारकी सहायतासे ढोंग बढ़नेकी सम्भावना अधिक है। बहुत-से नाम-मात्रके "वैष्णव" वानप्रस्थ लेनेके लिए तैयार हो जायेंगे और उनके कुटुम्ब १२५ रु० की मासिक वृत्ति ले लेंगे। कहा जा सकता है कि उचित जाँच-पड़तालके पश्चात् मासिक वृत्ति दी जायेगी। इसका उत्तर है कि सच्चे वानप्रस्थीका कुटुम्ब जाँच-पड़ताल नहीं करायेगा। स्वयं वानप्रस्थी दाताको 'नोटिस' नहीं देगा। धर्मके नामपर ऐसा दान लेना लूटके समान है; और इस तरह वानप्रस्थी या देशभक्त उत्पन्न करनेसे देशका उत्थान नहीं होगा। किसी भी देशका उत्थान इस तरह हुआ हो, इसका एक भी उदाहरण इतिहासमें दिखाई नहीं देता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-१-१९१३

१. अर्थात्, "क्या देशका उत्थान ऐसे किया जा सकता है?"

३३२. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-४]

२. हमारा शरीर

अनल, अनिल, जल, गगन, रसा है।
इन पाँचोंसे विश्व बसा है।।

ऊपरकी इन पंक्तियोंमें शरीरका प्रायः सम्पूर्ण वर्णन आ जाता है। इनमें कहा गया है कि पृथ्वी यानी मिट्टी, पानी, आकाश, वायु और तेज, इन पांच तत्वोंको मिलाकर कुदरत और कुदरतके सृष्टाने यह खेल, जिसे हम संसारके नामसे जानते हैं, रचा है। जिस चीजका यह जगत बना है, ठीक उसी वस्तुसे मिट्टीका यह पुतला, जिसे हम अपना शरीर कहते हैं, बना हुआ है। हमारे यहाँ कहावत है, "यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे।" अर्थात् "जो देहमें है, वही देशमें है।" यदि हम इस सूत्रको याद रखें, तो हम निश्चित रूपसे यह समझ सकेंगे कि शरीरके निर्वाहके लिए स्वच्छ मिट्टी, स्वच्छ जल, स्वच्छ आकाश, स्वच्छ अग्नि (सूर्य) और स्वच्छ हवा, ये अत्यन्त जरूरी हैं; और इनमें से किसी भी तत्वसे भयभीत होनेका कोई कारण नहीं है। सच देखा जाये, तो शरीरमें इनमें से किसी एक भी तत्वके वांछित परिमाणसे कम हो जानेपर ही रोग होता है।

इस शरीरके सम्बन्धमें इतना जान लेनेकी जरूरत है, लेकिन केवल इतना ही जानना हमारे लिए काफी नहीं है।

यह शरीर चमड़ी, हड्डियों, मांस और रुधिरसे बना हुआ है। हड्डियोंका पिंजर शरीरका मुख्य आधार है; हड्डियोंके सहारे ही हम सीधे खड़े हो सकते हैं और चल-फिर सकते हैं। हड्डियाँ ही शरीरके नाजुक अवयवोंका रक्षण करती हैं; जैसे कि खोपड़ी मस्तिष्कका और पसलियाँ हृदय तथा फेफड़ोंका। डॉक्टरोंकी गिनतीके अनुसार हमारे शरीरमें २३८ हड्डियाँ हैं। इन हड्डियोंका बाहरी भाग सख्त है, यह हम सभी देख सकते हैं। किन्तु ऐसी स्थिति भीतरी भागकी नहीं होती। भीतरी भाग नरम और पोला है। एक हड्डी दूसरीके साथ जुड़ी हुई है। जोड़के इस स्थानपर झिल्लियोंका एक आवरण होता है। हड्डियोंका नर्म भाग ही ये झिल्लियाँ हैं।

हमारे दाँत भी हड्डियाँ ही हैं। बचपनमें प्रथम दूधके दाँत आते हैं। वे तो सभीके गिर जाते हैं। इसके बाद पक्के दाँत आते हैं, जो फिर [बुढ़ापेमें] गिरते हैं और दुबारा नहीं आते। दूधिया दाँत ६ से ८ महीनेकी अवस्थामें ही निकलने लगते हैं और बालक जब एक-दो वर्षका हो जाता है, तब प्रायः सभी दाँत निकल आते हैं। दाढ़ें सबके बाद निकलती हैं।

हम अपनी चमड़ीको टटोलें तो हमें अनेक स्थानोंपर मांसके लोंदोंका अन्दाज लगेगा। ये ही स्नायु कहलाते हैं, जिनके सहारे हमारे ज्ञान-तन्तु कार्य करते हैं। हम अपने हाथोंको बन्द करते हैं और खोलते हैं, जबड़ोंको हिला सकते हैं, आँखें मटका सकते हैं। यह सारा कार्य स्नायुओंके आधारपर ही होता है।

शरीर-सम्बन्धी सम्पूर्ण ज्ञान देना इन प्रकरणोंकी मर्यादाके वाहर है। स्वयं लेखकको इतना ज्ञान है भी नहीं। अतः हमारे लिए जितना जानने लायक है, उतना ही इन प्रकरणोंमें दिया जायेगा। तो अव ऊपरकी वातें समझ लेनेपर हम शरीरके मुख्य भागोंपर आते हैं। इनमें जठर या पेट सर्वोपरि माना जायेगा। यह जठर एक क्षणको भी यदि आलस्य कर जाये, तो हमारे सारे अंग ढीले पड़ जायेंगे। अपने जठरपर हम जितना बोझ लादते हैं, उतना भार सहन करनेकी शक्ति महा विकराल प्राणियोंमें भी नहीं होती। जठरका कार्य अन्नको पचाकर शरीरका पोषण करना है। किसी यन्त्रके लिए जैसे इंजिन होता है, उसी प्रकार मनुष्यके लिए जठर है। जठरका यह भाग वाईं ओरकी पसलियोंके अन्दरकी ओर है। इसमें अनेक कार्य होते रहते हैं; भिन्न-भिन्न रस तैयार होते हैं, अन्नमें से सार-तत्व खींचा जाता है और वचा हुआ भाग मल-मूत्र आदि वनकर अँतड़ियोंके जरिये बाहर निकल जाता है। इनके ऊपरकी ओर कलेजेका वायाँ भाग है। जठरकी वाईं ओर प्लीहा है। प्लीहा पसलियोंके भीतरी भागमें दाहिने हिस्सेमें है। कलेजेका काम रक्तको शुद्ध करना और पित्त पैदा करना है। पित्त पाचन-क्रियाके उपयोगके लिए है।

पसलियोंके नीचे छातीकी पोलमें दूसरे उपयोगी विभाग हैं। ये हैं हृदय और फेफड़े। दोनों फेफड़ोंके बीचमें वाईं ओरको हृदयकी थैली है। छातीमें वाईं और दाहिनी ओर मिलाकर २४ पसलियाँ हैं। छातीकी धड़कन पाँचवी या छठी पसलीके बीच होती है। हमारे दो फेफड़े हैं — बायाँ और दाहिना। ये श्वासकी नलिकाओंसे बने हुए हैं। ये हवासे भरे रहते हैं और इनमें रक्तका शुद्धीकरण होता है। फेफड़ोंमें श्वासोच्छ्वासके जरिये हवा पहुँचती है। यह हवा नाकके नथुनोंसे होकर ही पहुँचनी चाहिए। इस प्रकार नथुनोंसे होकर आनेवाली हवा गर्म होकर फेफड़ोंमें पहुँचती है। अनेक मनुष्य इस बातसे अनभिज्ञ होते हैं और वे मुँहके जरिये श्वास लेते हैं और नुकसान उठाते हैं। मुँह तो खाने आदिका काम लेनेके लिए है। अतः हवा हमें केवल नासिका द्वारा ही लेनी चाहिए।

इस प्रकार हम थोड़ेमें शरीरकी रचना देख गये। उसके मुख्य-मुख्य अंगोंका थोड़ा-सा ज्ञान हासिल किया। अव उस रक्तकी जाँच करें, जो इस देहका आधार है। यह रक्त हमारे शरीरका पोषण करता है। इतना ही नहीं, यह हमारी खुराकमें से पोषक तत्वका विभाजन करता है और अनुपयोगी पदार्थोंको — मलमूत्र आदिके जरिए वाहर फेंककर हमारे शरीरका तापमान एक समान बनाये रखता है। यह रक्त शरीर-भरमें फैली हुई नलियों — नसों — के द्वारा बहता रहता है। हमारी यह नाड़ी भी रक्तकी गतिके आधारपर ही चलती है। जो मनुष्य जवान और तन्दुरुस्त है, उसकी नाड़ी एक मिनटमें लगभग ७५ बार चलती है अर्थात् ७५ वार धड़कती है। बच्चोंकी नाड़ी अधिक वेगसे चलती है और बूढ़े मनुष्योंकी मन्द गतिसे।

रक्तको शुद्ध रखनेवाला सबसे वड़ा साधन हवा है। सारे शरीरमें घूमकर रक्त फेफड़ोंमें पहुँचते-पहुँचते वेकाम हो जाता है, उसमें जहरीले पदार्थोंका मिश्रण हो जाता है। इस जहरीले पदार्थको अन्दर खींची हुई शुद्ध हवा पकड़ लेती है और रक्तको अपनी प्राण-वायु दे देती है। यह प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती है। रक्तसे लिये हुए

इस जहरीले पदार्थको समेटकर यह हवा बाहर निकलती है और जो प्राणवायु भीतर छोड़ आई है, वह नसोंके जरिये सारे शरीरमें दौड़ती है। इससे समझा जा सकता है कि बाहर निकलनेवाला उच्छ्वास एक हद तक जहरीला होता है। हमारे शरीर-तन्त्रपर हवाका प्रभाव कुछ इतना अधिक होता है कि इस सम्बन्धमें विस्तारपूर्वक चर्चा हम अलग प्रकरणमें ही करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-१-१९१३

३३३. पत्र : हरिलाल गांधीको

[फीनिक्स]

पौष वदी ४ [जनवरी २६, १९१३][1]

चि० हरिलाल,

भाई मेढको एक पत्र मिला है, जिसमें उनके पिताने तुम्हारे अनुत्तीर्ण होनेका समाचार दिया है। तुम्हें स्वयं पत्र लिखना चाहिए था।

तुम्हारे अनुतीर्ण होनेसे मैं निराश नहीं हुआ हूँ। तुमने यह परीक्षा पास करनेका निश्चय किया है, इसलिए फिरसे इसके पीछे पड़ जाओ। अपनी परीक्षाके पर्चे मुझे भेजना। उन्हें तुमने सँभाल कर रखा ही होगा। यह बताना कि तुम किस विषयमें रह गये।

'मुम्बई' समाचारसे[2] पता चलता है कि तुम श्री गोखलेके सम्मानमें आयोजित सभामें उपस्थित थे। तुम्हारे मनपर उसका जो प्रभाव पड़ा हो, मुझे बताना।

मैं छः महीनेमें वहाँ आ जानेकी तैयारी कर रहा हूं। ऐसा लगता है कि अगर हमारी माँगके अनुसार विधेयक पास हो गया तो अवश्य आ जाऊँगा। इसीलिए फीनिक्समें आकर बस गया हूँ। मैं चाहता हूं, पाँच महीने तक फीनिक्ससे बाहर न जाऊँ।

फीनिक्समें [पहलेसे ही] रहनेवाले बच्चोंको मिलाकर[3] अब कुल ३० लड़कोंको पढ़ाना पड़ता है। जेकी बहन, कुमारी वेस्ट, मगनभाई पटेल[4] नामक एक व्यक्ति, काशी और मैं — इतने लोग पढ़ाते हैं। मैं सबेरे पौने पाँच बजे उठता हूँ और लड़कोंको

१. तीसरे परिच्छेदमें जिस सभाकी चर्चा की गई है, वह श्री गोखलेके दक्षिण आफ्रिकाकी यात्रासे लौटनेपर उनके सम्मानमें बम्बईके शेरिफ द्वारा १६ दिसम्बर १९१२ को बुलाई गई थी। इसलिए यह पत्र उसके बाद ही लिखा गया होगा। और उसके बाद पड़नेवाली पौष वदी ४ को ईसवी सन् की उक्त तिथि ही थी।

२. बम्बईसे प्रकाशित प्रसिद्ध गुजराती दैनिक।

३. गांधीजी अपने साथ टॉल्स्टॉय फार्मके स्कूलके विद्यार्थियोंको भी लेते आये थे। यह स्कूल जनवरी १९१३ में बन्द कर दिया गया था। **इंडियन ओपिनियन**, १८-१-१९१३

४. फीनिक्समें एक अध्यापक। वे मगनलाल गांधी तथा अन्य लोगोंके साथ १९१५ में भारत वापस आ गये थे।

पाँच बजे उठाता हूँ। प्रेसके कर्मचारी, विद्यार्थी और मैं सबके-सब छः बजेसे आठ बजे तक खेतीका काम करते हैं। आठ और साढ़े आठके बीच प्रेस-कर्मचारी तथा विद्यार्थी नाश्ता करते हैं। साढ़े आठ बजे प्रेसके सब लोग फिर वापस खेतमें जाते हैं और वहाँ ११ बजे तक काम करते हैं। मैं लड़कोंको पाठशालामें ले जाता हूँ। वहाँ वे ८–३० बजेसे १०–३० बजे तक किताबी ज्ञान प्राप्त करते हैं, और इसके बाद १०–३० से ११ तक खेतीका काम सीखते हैं।

११ से १२ बजेतक नहाना-खाना चलता है, और १२–३० से ४–३० तक प्रेसका काम। उसमें बड़ी उम्रके लड़के दो घंटे प्रेसका काम सीखते हैं और बादके दो घंटे पाठशालामें पढ़ते-लिखते हैं। मैं दोपहरको पाठशालाकी देखभाल बिलकुल नहीं कर सकता। लगता है, यहाँ काम-धामका सिलसिला ठीक होनेपर यह कर सकूँगा।

५–३० बजे लड़के खाना खाते हैं। ७ से ७–३० बजेतक कथा-कीर्तनके बाद वे सो जाते हैं। ७–३० से ९ बजेतक मणिलालको पढ़ाता हूँ। दास[1] डर्बनमें प्रेस खोलना चाहता है। सम्भवतः वीरजी भी वहाँ जायेंगे।

यह पत्र चंचीको पढ़नेके लिए भेज देना। उसे अलगसे पत्र लिखनेकी फुरसत नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ९५३८)की फोटो-नकलसे।

३३४. एक संशोधन

गत मासकी १८ तारीखके अंकमें हमने नेटालके स्कूलोंके सम्बन्धमें हाल ही प्रकाशित नियमोंका उल्लेख करके बताया था कि ऐसे नियम पहली ही बार बनाये गये हैं जिनके द्वारा भारतीय विद्यार्थियोंका उनके लिए खास तौरपर निश्चित स्कूलोंके अलावा अन्य सरकारी स्कूलोंमें दाखिल होना निषिद्ध कर दिया गया है। किन्तु अब हमारा ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित किया गया है कि इसी प्रकारके नियम कुछ समय पहले भी बनाये गये थे और तब भी हमने उनपर टिप्पणी की थी। हमें खेदके साथ कहना पड़ता है कि इन नियमोंसे हमने यह निष्कर्ष नहीं निकाला था कि कठिनाइयोंकी जो लम्बी सूची पहलेसे ही मौजूद थी, उसमें अधिकारियोंने एक और कठिनाई जोड़ दी। किन्तु महज इस बातसे कि वह कुछ समयसे चली आ रही है, उस बुराईकी गम्भीरता कुछ कम नहीं हो जाती। जब प्रान्तीय सरकार इन नियमोंको नया रूप दे रही थी तब वह इस अवसरका उपयोग दोषोंको स्थायी बनानेके बदले उन्हें दूर करनेके लिए कर सकती थी।

१. पुरुषोतमदास देसाई।

हमारा ध्यान इस तथ्यकी ओर भी खींचा गया है कि हमारी टिप्पणीसे कोई जल्दबाज पाठक यह निष्कर्ष भी निकाल सकता है कि नेटालके भारतीय बच्चे सरकारी स्कूलोंमें चौथी कक्षाके आगे शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते। जिस मित्रने हमें इस प्रकार सावधान करनेकी कृपा की है उसीने यह भी बताया है कि डर्बनके जिस स्कूलको पहले उच्चतर भारतीय विद्यालय (हायर-ग्रेड इंडियन स्कूल) कहा जाता था, उसमें भारतीय बच्चोंको छठे दर्जेतक शिक्षा देनेका प्रबन्ध है। यह बात हम भली-भाँति जानते हैं। किन्तु हमने कहा यह था कि वस्तुतः भारतीय बच्चे प्राथमिक शिक्षासे आगेकी शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते। और पहलेका उच्चतर भारतीय विद्यालय, जिसे बराबर एक असंगत नामसे पुकारा जाता रहा है, प्राथमिक शिक्षासे आगे कोई शिक्षा नहीं देता। उस स्कूलकी छठी कक्षा किसी प्राथमिक स्कूलकी ही है और वह मुश्किलसे भारतके उच्च विद्यालयकी चौथी कक्षाके बराबर है। जो बच्चा केप विश्वविद्यालयसे मैट्रिक करना चाहता है, उसके लिए इस स्कूलमें कोई व्यवस्था नहीं है। सम्भव है, उसे सामान्य उच्च विद्यालयों या नेटाल विश्वविद्यालय-कॉलेजमें प्रवेश ही न मिले। उसे स्वयं कोई शिक्षक रखकर पढ़ना चाहिए। यह ऐसी बाधा है जिसकी यदि समाज शिकायत करता है तो वह उचित ही है। अभी उस दिन केप टाउनमें एक मुस्लिम स्कूलके उद्‌घाटनके अवसरपर श्री मेरीमैनने कहा था कि रंग-भेदके सवालका असली हल शिक्षा है। श्री मेरीमैनकी बात सोलहों आने सही है। किन्तु संघ-सरकार तो रंगदार बच्चोंकी शिक्षाके मार्गमें, चाहे वे वतनी हों या एशियाई, हर तरहकी बाधा ही उपस्थित करती है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–२–१९१३

३३५. हेटसॉगवाद

जब जनरल हेटसॉग संघीय मन्त्रिमण्डलके सदस्य थे, तब उसमें उनकी क्या स्थिति थी, इस सम्बन्धमें 'स्टार' के विशेष संवाददाताने जो-कुछ कहा है, वह यदि सच है, तो बात चिन्ताजनक है। हमने गत सप्ताह 'स्टार' के संवाददाताकी रिपोर्ट छापी थी; इस रिपोर्टके अनुसार श्री गोखलेका आगमन जनरल बोथा और जनरल हेटसॉगके बीच झगड़ेका एक तात्कालिक कारण बन गया। जनरल हेटसॉग चाहते थे कि चूँकि वतनी मामले उनके अधीन हैं, इसलिए श्री गोखले उनसे मिलें।[1] स्पष्ट है कि जनरल हेटसॉगके विचारमें वतनी और एशियाई लोगोंको एक ही श्रेणीमें रखा जाना चाहिए। पर अन्तमें बात जनरल बोथाकी ही रही। वे श्री गोखलेसे

१. स्टारकी रिपोर्टमें बताया गया था कि हेटसॉगके एक मित्रने कहा कि चूँकि वतनी मामलोंके मन्त्रीके रूपमें वे भारतीयोंके सवालसे सम्बद्ध हैं, इसलिए श्री गोखलेसे उन्हें ही बातचीत करनी चाहिए। किन्तु, जनरल बोथा इसे साम्राज्यीय प्रश्न मानते थे और इसलिए प्रधान-मन्त्रीकी हैसियतसे स्वयं ही उसका

स्वयं ही बातचीत करना चाहते थे, क्योंकि उनके आगमनका एक साम्राज्यीय महत्व था। इससे चिढ़कर जनरल हेटसॉगने साम्राज्यीय उत्तरदायित्वपर अपना वह प्रसिद्ध भाषण दे डाला, जिसके कारण उन्हें हठात् मन्त्रिमण्डलसे हटा दिया गया। जनरल बोथाके लिए अपने सहयोगीको हटाना कोई मामूली बात न थी। उन्हें अभी हेटसॉग-वादसे निबटना बाकी है। और हमारे लिए तो इन महान जनरल या उनकी नीतिकी ओरसे आँखें मूँद लेना और भी कठिन है। अब भी वे दक्षिण आफ्रिकाकी राजनीतिमें एक बड़ी हस्ती हैं। स्पष्टतः वे एशियाई-विरोधी दलके उस कट्टरतम वर्गके प्रतिनिधि हैं, जो हमारे पूर्ण पृथक्करण (सॅग्रीग्रेशन) एवं राष्ट्रीय अपमानसे कम किसी भी बातसे सन्तुष्ट नहीं होगा। समझौतेको अभी कानूनी रूप दिया जाना बाकी है; और जैसा कि हमने दो सप्ताह पूर्व संकेत दिया था, उसके प्रायः टूट जानेका खतरा पैदा हो गया है। विक्रेता परवाना-सम्बन्धी विधान अब भी स्पष्ट ही एक शिकायतकी चीज है। प्रवासियोंके मामलेमें अधिकारियोंकी कार्रवाईसे अब भी भारतीय समाज क्षुब्ध है। यदि हेटसॉगवाद विजयी होता है तो हमारे लिए बड़ा कठिन समय आनेवाला है; परन्तु यदि उसकी विजय नहीं होती तो भी बहुत सम्भावना है कि उसके एशियाई-विरोधी कार्यक्रमकी हद तक जनरल बोथा उसे ज्योंका-त्यों स्वीकार कर लें। जहाँ एक-एक मतका महत्व है वहाँ हम मताधिकारहीन लोगोंको बरतरफ कर देना बहुत ही आसान है। परन्तु, जबतक हम सत्याग्रहरूपी शक्तिशाली किन्तु निर्दोष अस्त्रसे सज्जित हैं, तबतक हम मताधिकार-विहीन भले ही हैं, स्वर-विहीन नहीं हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–२–१९१३

निबटारा करना चाहते थे। इसके बाद मन्त्रिमण्डलमें बड़ी गरमागरम बहस हुई, और अन्तमें भारतीय प्रश्नके सम्बन्धमें एक मध्यममार्गी प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। **स्टार**के संवाददाताको समाचार देनेवाले व्यक्तिका कहना था कि जब जनरल हेटसॉगने डी' विल्टके अपने भाषणमें यह कहा था कि हमारे लिए पहले दक्षिण आफ्रिकाके हितोंका महत्व है और फिर साम्राज्यके हितोंका तब उनके मनमें यही घटना रही होगी। उसके विचारसे हेटसॉगका मन्त्रि-मण्डलसे बाहर निकलना जनरल बोथा तथा उनके बीच बहुत दिनोंसे चली आ रही दुर्भावनाकी चरम-परिणति था। **इंडियन ओपिनियन**, २५–१–१९१३।

३३६. जर्मिस्टनके भारतीय

'ईस्ट रैंड एक्सप्रेस' से मालूम हुआ है कि जर्मिस्टन बस्तीके भारतीयोंको फरवरी महीनेके अन्ततक नई बस्तीमें जाना पड़ेगा। वतनी सब चले गये हैं। उन्हें नगरपालिकाने मुआवजेमें १,५०० पौंड दिये हैं। भारतीय अभी नहीं गये हैं। नगरपालिका उन्हें ७०० पौंड तक देनेके लिए तैयार है। हमारा सहयोगी 'एक्सप्रेस' लिखता है कि भारतीयोंको ऐसा मुआवजा लेनेका हक नहीं है। यदि नगरपालिका उन्हें मुआवजा देती है तो यह उसकी मेहरबानी और अच्छाई है। 'एक्सप्रेस'को ऐसा करना अच्छा नहीं लगता। वह कहता है कि यदि मुआवजाके ध्यानसे देना हो तो उसका खर्च ट्रान्सवालकी सरकारको उठाना चाहिए। फिर उसका कुछ भाग नगरपालिका भले ही दे। तथ्य यह है कि यदि नगरपालिका कुछ देती है तो उसका कारण मेहरबानी नहीं, बल्कि भय है — सत्याग्रह, लन्दन-समिति और ब्रिटिश सरकारका भय। उसे भय है, कहीं सोते भारतीय जग गये तो! कहीं लॉर्ड ऍम्टहिल जर्मिस्टन नगरपालिकाको बदनाम करें तो! कहीं ब्रिटिश सरकारने इसे अनुचित माना तो! नगरपालिका शायद इनमें से किसी एक भयकी उपेक्षा कर देती; परन्तु इन सब भयोंके एक साथ उपस्थित होनेपर उसके लिए दीनता अपनानेके अलावा और कोई चारा नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–२–१९१३

३३७. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-५]

३. हवा

संक्षेपमें हमने अपने शरीरकी रचना देखी। इसके आधारपर हमें ज्ञात हुआ कि शरीरको तीन प्रकारकी खुराक चाहिए – हवा, पानी और अन्न। इनमें हवा सबसे महत्वपूर्ण खुराक है। यही कारण है कि प्रकृतिने उसे सब जगह इतना सुलभ रखा है; वह हमें बिना किसी खर्चके उपलब्ध है। ऐसा होते हुए भी आजकलकी नई सभ्यताने हवाको भी कीमती बना डाला है। आजके जमानेमें हवा खानेके लिए हमें दूर देशोंमें जाना पड़ता है और जानेमें पैसा खर्च होता है। बम्बईमें रहनेवाले की तबीयत बिगड़ जाये तो वह माथेरानकी हवा खानेपर ही सुधर सकती है।' और जो बम्बईमें रहते हैं, उन्हें मलाबार हिलमें रहना नसीब हो, तो वहाँ अच्छी हवा मिल पाये। परन्तु इसके लिए रुपया चाहिए। डर्बनमें रहनेवालेको यदि शुद्ध हवा प्राप्त करनी हो, तो उसे बेरियामें जाकर रहना चाहिए। इसमें भी पैसे लगते हैं। अतः, आजके जमानेमें यह कहना गैरवाजिब ही है कि हवा मुफ्तमें मिलती है।

हवा चाहे मुफ्तमें मिले, अथवा उसके लिए पैसा खर्च करना पड़े, लेकिन उसके विना हमारा कार्य क्षण-भर भी नहीं चल सकता। हम देख चुके हैं कि रक्त सारे शरीरमें दौड़ता है और पुनः फेफड़ोंमें आकर साफ होता है और फिर दौड़ता है। उसकी यह गति दिन-रात हमारे शरीरमें चलती रहती है। हम प्रत्येक श्वासके साथ जहरीली हवा वाहर फेंकते हैं और जव श्वास अन्दरको खींचते हैं तो वाहरी हवामें जो प्राणवायु है, उसे भीतर लेते हैं और उससे रक्तको शुद्ध करते हैं। श्वासोच्छ्वासकी यह क्रिया प्रति क्षण चलती है और इसीपर जीवन आधारित है। पानीमें डूवनेपर लोग मर जाते हैं, उसका कारण केवल इतना ही है कि उस समय शरीरमें प्राणवायुका प्रवेश नहीं हो पाता और न भीतरकी जहरीली वायुको वाहर फेंका जा सकता है। जो लोग समुद्रसे मोती निकालते हैं वे एक वख्तर पहन कर पानीमें उतरते हैं और पानीकी सतहके वाहर निकली हुई एक नलीके जरिये वाहरकी हवा लेते रहते हैं। इसीके वलपर वे अधिक समय तक पानीके अन्दर रह सकते हैं।

कुछ डॉक्टरोंने प्रयोग करके यह सावित कर दिया है कि मनुष्यको यदि ५ मिनटके लिए भी हवाके बिना रखा जाये तो उसका प्राणान्त हो जायेगा। कितनी ही वार माताके पार्श्वमें सोया हुआ वालक श्वास-निरोध होनेके कारण मर जाता है। कारण यह होता है कि वच्चेकी नाक और उसका मुँह माँके शरीरसे दव जाता है और उसे वाहरकी हवा नहीं मिल पाती।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि हवा हमारे लिए सवसे अधिक महत्वपूर्ण खुराक है और वह हमें विन माँगे ही मिलती है। जल और अन्न तो जव हम माँगते हैं या उनकी खोज करते हैं, तभी मिल पाते हैं, परन्तु हवा तो हमारी इच्छाके विना भी हमें मिलती रहती है।

जिस प्रकार हम दूषित जल और खराब खुराक लेते हुए हिचकते हैं, यही वात हवाके सम्वन्धमें भी होनी चाहिए। परन्तु हकीकत तो यह है कि जिस हदतक हम विगड़ी हुई हवाका सेवन करते हैं, उस हदतक हम खराव अन्न और जल नहीं ग्रहण करते। दृष्टिका ही दोष है। हम लोग तो मूर्तिपूजक हैं। हवा चूँकि आँखसे दिखाई नहीं देती, अतः हम कव-कव खराव हवाका सेवन करते हैं, इसका हमें खयाल नहीं रहता। दूसरोंका स्पर्श किया हुआ भोजन करते हुए हम हिचकिचाते हैं। दूसरेका छुआ हुआ पानी पीते हुए विचार करते हैं और यद्यपि हम जरा भी घृणाका भाव न रखते हों, तो भी हम उस खुराक या जलका सेवन तो कभी नहीं करते जो दूसरे मनुष्यके द्वारा वमन किया गया है। अकालसे पीड़ित व्यक्तिके समीप भी किसीका उलटी किया हुआ अन्न रख दिया जाये, तो वह मरना कवूल करेगा, उसे ग्रहण करना नहीं। लेकिन पास खड़े हुए व्यक्ति द्वारा वमन की गई — श्वास द्वारा छोड़ी हुई हवा हम सभी विना किसी प्रकारकी नफरत किये ग्रहण करते रहते हैं। आरोग्य-शास्त्रके नियमके आधारपर तो यह वमन की गई हवा वमन किये हुए अनाजके समान ही दूषित है। यह वात सावित हो चुकी है कि एक मनुष्यके द्वारा छोड़ा हुआ श्वासोच्छ्वास यदि दूसरे मनुष्यके फेफड़ोंमें भर जाये, तो उसकी तत्काल मृत्यु हो जायेगी। यह श्वास इतना जहरीला होता है! किन्तु फिर भी एक कोठरीमें

बैठे या सोते हुए मनुष्य इस प्रकारका जहरीला श्वासोच्छ्वास हर समय ग्रहण किया करते हैं। इसे मनुष्यकी खुशकिस्मती ही समझिए कि हवा एक ऐसी चंचल चीज है कि वह हर क्षण बहती ही रहती है और क्षण-भरमें ही सर्वत्र फैल जाती है। बारीक-से-बारीक छिद्रोंमें से भी यह प्रवेश कर सकती है। यही कारण है कि जहाँ हम लोग एक कोठरीमें इकट्ठे होकर हवाको जहरीला बनाते रहते हैं, वहीं दूसरी ओर दरवाजेकी दरारोंमें से बाहरकी हवा कमोबेश आया ही करती है और हम श्वासमें बिलकुल दूषित हवा ही नहीं खींच पाते। जिस हवाको हम बाहर फेंकते हैं, वह निरन्तर शुद्ध होती रहती है। ज्यों ही भीतरकी हवाको हम बाहर छोड़ते हैं कि यह जहरीली हवा बाहरकी हवामें एक क्षणमें प्रवाहित हो जाती है। इस प्रकार प्रकृति शुद्ध हवाके आवश्यक परिमाणको बनाये रखती है। हवा हमारी इस छोटी-सी पृथ्वीके चारों ओर एक बड़े विस्तारमें लिपटी हुई रहती है।

तो इस प्रकार हम जान सकते हैं कि अनेक लोग दुर्बल और बीमार क्यों बने रहते हैं। सैकड़े निन्यानवे फ़ीसदी बीमारियोंका कारण खराब हवा ही होती है, इसमें किसी प्रकारकी शंकाकी गुंजाइश नहीं है। क्षय, ज्वर, आदि अनेक प्रकारके संक्रामक रोगोंका मूल कारण तो हमारे द्वारा सेवन की गई खराब हवा ही है। इसीलिए इन रोगोंको दूर करनेका प्राथमिक, सहज और अन्तिम उपाय शुद्धसे-शुद्ध हवा ही है। इस दुनियामें ऐसा कोई वैद्य, डॉक्टर या हकीम नहीं है जो इसकी बराबरी कर सके। क्षयका रोग फेफड़ोंके सड़ जानेकी निशानी है। फेफड़ा जो सड़ जाता है, सो जहरीली हवाके कारण ही। जिस प्रकार खराब कोयला भर देनेसे इंजिन खराब हो जाता है, वही बात फेफड़ोंकी है। इसीलिए आजके डॉक्टर जो असलियतको समझ पाये हैं, वे क्षयके रोगके लिए सबसे अचूक इलाज यही बतलाते हैं कि चौबीसों घंटे खुली हवाका सेवन किया जाये। इसके मुकाबलेमें दूसरे सारे उपाय गौण हैं। शुद्ध हवाके बिना एक भी उपाय कारगर नहीं हो सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–२–१९१३

३३८. प्रवासके दो मामले

न्यायमूर्ति ब्रूमने प्रवास (इमीग्रेशन)के दो मामलोंमें फैसले दिये हैं। ये दोनों मामले जानने लायक हैं। एक मामलेमें एक पिताने शिकायत की थी कि प्रवासी-अधिकारीने उसके लड़केको निर्वासित कर दिया है। उसने हर्जानेका दावा करते हुए लड़केको अदालतके सामने भी हाजिर करनेकी माँग की। अधिकारीने लड़केके [देशमें रहनेके] दावेको नामंजूर कर दिया था। इसपर पिताने सर्वोच्च न्यायालयसे निषेधाज्ञा लेकर लड़केका निर्वासन रुकवा दिया। इस बीच उसने अधिकारीके सामने अतिरिक्त प्रमाण प्रस्तुत किये; परन्तु अधिकारीने उन्हें भी नामंजूर कर दिया। इसके बाद अधिकारीने लड़केको निर्वासित करनेके लिए कानूनके मुताबिक कार्रवाई की। उसने सम्मन जारी करनेके लिए मुकदमेको मुल्तवी किया। फिर उसका विचार बदल गया

और उसने सम्मन-जारी किये विना और अदालतका हुक्म लिये विना लड़केको निर्वासित कर दिया। उसने यह मान लिया कि उसे ऐसा करनेका अधिकार है। पिताकी दलील यह थी कि अधिकारीको ऐसा अधिकार नहीं है। अदालतने यह दलील नामंजूर कर दी और फैसला दिया कि अधिकारीको अदालतके हुक्मके विना निर्वासित करनेका हक है। इस फैसलेका परिणाम भयंकर होगा। इससे अधिकारीके हाथमें अन्याय करनेकी ऐसी सत्ता आ गई है कि वह चाहे तो हर एक भारतीयका हक खत्म कर सकता है।

दूसरा मामला जमानतकी १०० पौंडकी रकम वापस लेनेका था।[1] अदालतने फैसला दिया है कि यदि १०० पौंड प्रवासी कानूनके अन्तर्गत जमा किये गये हों तो उन्हें वापस देना-न-देना सरकारकी मर्जीपर है। जिसके लिए रुपया जमा किया गया है उसका हक साबित हो जाये तो वह वापस दिया जा सकता है, और इस प्रकार जमा की हुई रकमको जब्त करनेके लिए सरकारको अदालतके हुक्मकी जरूरत भी नहीं है। इस तरहकी दलील देकर अदालतने यह मुकदमा भी खारिज कर दिया है। अदालतने सिर्फ यह कहा है कि जहाँ रुपया निश्छल भावसे जमा कराया गया हो वहाँ सरकारको दया करके उसे वापस दे देना चाहिए।

ऊपरके दोनों मामलोंका परिणाम भयंकर है। इनसे प्रवासी अधिकारियोंकी सत्ता वहुत वढ़ गई है और ऐसी स्थिति आ गई है कि भारतीय भयके कारण ही इस देशमें आना वन्द कर दे सकते हैं। इसके विरुद्ध जवरदस्त आन्दोलन करना हमारा फर्ज है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-२-१९१३

३३९. कांग्रेसमें हमारे सवालपर विचार

अभी इस डाकसे हमें कांग्रेस [के अधिवेशन] का विवरण[2] मिला है। उससे स्पष्ट है कि यहाँके भारतीयोंके प्रश्नपर वहाँ पहलेकी अपेक्षा अधिक चर्चा हुई। अध्यक्ष श्री मुधोलकरने[3] अपने भाषणमें यहाँकी पूरी स्थिति वताई, श्री गोखलेके कामका समर्थन किया, हमारी मदद करते रहनेकी जरूरत वताई और कहा कि गिर-मिटकी प्रथा विलकुल वन्द कर दी जानी चाहिए। स्वागत-समितिके अध्यक्ष माननीय श्री मजहरुल हकने[4] अपने भाषणमें हमारे सवालपर जोर दिया और यहाँ तक

१. जहाँ कहीं कोई एशियाई किसी प्रवासी-अधिकारीके निर्णयके विरुद्ध अपील करके अपने अधिवास-सम्वन्धी अधिकारोंकी कसौटी किसी न्यायालयमें करवाना चाहता था, उसे जमानतके तौरपर सौ पौंड जमा करने पड़ते थे।

२. वाँकीपुर कांग्रेस अधिवेशनका विवरण, १९१२।

३. रघुनाथ नरसिंह मुधोलकर (१८५७-१९२१)।

४. मौलाना मजहर-उल-हक (१८६६-१९३०); इंग्लैंडमें शिक्षा-ग्रहण करते हुए १८८८ में "अंजुमन इस्लामिया" की स्थापना की; १८९३ में अवधमें मुंसिफके पदपर नियुक्त, किन्तु ३ वर्ष बाद ही उक्त पदसे इस्तीफा; मुसलिम लीगके संस्थापकोंमें से एक, बादमें उसके मन्त्री और १९१५ के वम्बई अधिवेशनके अध्यक्ष; पृथक् निर्वाचन पद्धतिके अन्तर्गत १९१० में केन्द्रीय विधान परिषद्के सदस्य; सन् १९१४ में इंग्लैंड जानेवाले

कहा कि यदि संघ-सरकार भारतीयोंके सवालका फैसला सन्तोषजनक रूपमें न करे तो भारत-सरकारपर दबाव डालकर बदलेकी कार्रवाई कराई जाये। उन्होंने बताया कि भारत-सरकारके हाथमें ऐसे बहुत-से साधन हैं, जिनसे संघ-सरकारके होश ठिकाने लाये जा सकते हैं। हमारे सम्बन्धमें पास किया गया यह प्रस्ताव क्रममें दूसरा ही था। इससे भी प्रकट होता है कि हमारे सवालको कितना महत्व दिया गया। प्रस्ताव श्री गोखलेने रखा, यह खबर तो हमें तारसे मिल ही चुकी है। कांग्रेसने जिस आशयका प्रस्ताव पिछली बार पास किया था,[1] यह प्रस्ताव उसी आशयका था। इलाहाबादके 'लीडर' पत्रने लिखा है कि श्री गोखलेने यह प्रस्ताव पेश करते वक्त एक घंटे तक भाषण दिया, जिसे सुनकर श्रोता स्तब्ध रह गये। गिरमिटियोंकी दुर्दशा बताते हुए श्री गोखलेकी आँखोंसे आँसू बहने लगे और उनका कण्ठ रुद्ध हो गया। इस सवालका समर्थन भी प्रमुख नेताओं द्वारा किया गया। माननीय श्री मदनमोहन मालवीय,[2] माननीय श्री मजहरुल हक, श्री लाला लाजपतराय,[3] माननीय श्री हरचन्द्र राय विशनदास, श्री प्रमथनाथ बनर्जी, श्री मदनजीत[4] और श्री सी० वाई० चिन्तामणि[5] समर्थकोंमें थे। इस तरह जब हमारे सवालपर भारतमें इतनी गर्मागर्म चर्चा हो रही है, तब हमें यहाँ दूना प्रयत्न करना चाहिए। भारत हमारी मदद तभी कर सकता है जब हम भी अपनी पूरी शक्ति लगायें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-२-१९१३

कांग्रेस प्रतिनिधि-मण्डलके सदस्य; १९१६ में लखनऊमें कांग्रेस-लीग समझौता करानेमें मदद पहुँचाई; सन् १९१७ में चम्पारन आन्दोलनके समय गांधीजीका साथ दिया और १९२० में असहयोग आन्दोलनमें सक्रिय भाग लिया; **मदरलैंड**की स्थापना की और उसमें लिखे गये अपने लेखोंके कारण १९२१ में जेल गये; बिहार विद्यापीठ और सदाकत आश्रमके संस्थापकोंमें से एक।

१. देखिए "श्री पोलक भारतीय राष्ट्रीय महासभामें" पृष्ठ २०३।

२. पण्डित मदन मोहन मालवीय (१८६१-१९४६); कांग्रेसके "पूज्य पुरुष", सम्पादक, **हिन्दुस्तान**, १८८७-८९, **इंडियन यूनियन**, १८८९-९२ और **अभ्युदय**, १९०७-०९; सदस्य, १९०२-१२ में प्रान्तीय विधान सभाके, १९१०-१२ में केन्द्रीय विधान परिषद्के और १९२४ में भारतीय विधान सभाके; कांग्रेससे १८८६ से ही सम्बद्ध और उसके १९०९ तथा १९१८ के अधिवेशनोंके अध्यक्ष; सन् १९१६ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालयकी स्थापना की और १९१९ से १९४० तक उसके उपकुलपति रहे; हिन्दू महासभाके अध्यक्ष, १९२३-२५; सनातन धर्म महासभाके अध्यक्ष, १९२८; सन् १९३१-३२ की गोलमेज कान्फ्रेंसमें शामिल; देखिए **आत्मकथा**, भाग १, अध्याय १० और भाग ५, अध्याय ३७।

३. पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय (१८६५-१९२८); समाज-सुधारक, पत्रकार, सर्वेंट्स ऑफ़ पीपुल्स सोसाइटीके संस्थापक, कांग्रेसके अग्रणी कार्यकर्ता, अपनी राजनीतिक गतिविधियोंके लिए १९०४ में निर्वासित; १९०६ और १९१४ में भारतीय शिष्ट-मण्डलके सदस्यके रूपमें इंग्लैंड गये; १९२० में कांग्रेसके असाधारण अधिवेशनके अध्यक्ष; लाहौरमें साइमन कमीशनके खिलाफ प्रदर्शन करते हुए पुलिस-लाठी चार्जमें शहीद हो गये।

४. मदनजीत व्यावहारिक; भारतीय कांग्रेसके सामने दक्षिण आफ्रिकी प्रश्नको बराबर लाते रहे; १८९८ में गांधीजीके सुझावपर डर्बनमें इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेसकी स्थापना की; १९०३ में **इंडियन ओपिनियन** प्रारम्भ किया, जिसे १९०४ में गांधीजीने अपने हाथोंमें ले लिया; बादमें **यूनाइटेड बर्मा**के संस्थापक और उसका सम्पादन किया; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २७७ और खण्ड ४, पृष्ठ ३०१ तथा खण्ड ६, पृष्ठ ३२१।

३४०. श्री गोखलेके प्रयत्नका फल

श्री गोखलेके प्रयत्नोंके एकके-बाद-एक परिणाम निकलते जा रहे हैं। एक परिणाम यहाँसे बहुत दूर फीजीमें दिखाई दिया है। वहाँसे प्राप्त एक अखबारका एक अनुच्छेद हमने अंग्रेजी विभागमें उद्धृत किया है। उसमें बताया गया है कि फीजीके गन्नेके खेतोंके गोरे मालिकोंने एक प्रस्ताव पास किया है। इसमें कहा गया है कि भारतमें गिरमिटियोंके सम्बन्धमें आन्दोलन किया जा रहा है, इसीलिए फीजीके गिरमिटके कानूनमें परिवर्तन कर दिया जाये। अर्थात्, मजदूरोंके काम न करनेपर उन्हें सजा देनेसे सम्बन्धित धाराएँ निकाल दी जायें। इसमें शक नहीं कि बुराई इन्हीं धाराओंमें सबसे ज्यादा है। इन धाराओंके कारण ही भारतीय मजदूरोंको कष्ट उठाने पड़ते हैं। साधारण मजदूरों और गिरमिटिया मजदूरोंमें जो बड़ा फर्क है सो उन्हींके कारण है। साधारण मजदूर कसूर करता है तो वह बरतरफ कर दिया जाता है। गिरमिटिया कसूर करता है तो जेल भेज दिया जाता है और जेलसे छूटनेपर फिर जहाँका-तहाँ भेज दिया जाता है। ऊपर बताया गया परिवर्तन होनेपर भी गिरमिटकी प्रथाको कायम रखना अवांछनीय है। गिरमिटको तो सभी रूपोंमें खत्म कर दिया जाना चाहिए। परन्तु गोरे मालिक अपनी हदतक किसी कानूनमें अपने-आप ऐसा परिवर्तन करना चाहते हैं जिससे उन्हें हानि पहुँचनेकी सम्भावना हो तो यह कोई सामान्य बात नहीं है। एक व्यक्ति भी सच्चा प्रयत्न करे तो उसके कितने अच्छे परिणाम निकल सकते हैं!

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–२–१९१३

३४१. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-६]

हवा हम लोग फेफड़ोंके जरिये ही नहीं लेते, उसका कुछ भाग त्वचाके द्वारा भी लेते हैं। हमारी त्वचामें अगणित बारीक छिद्र हैं। इन्हींके जरिये हम लोग हवाका सेवन करते हैं।

जो पदार्थ इतना महत्वपूर्ण है, उसे शुद्ध कैसे रखा जाये, इसे जान लेना हम सभीका फर्ज है। सच देखा जाये, तो ज्यों ही बालक कुछ-कुछ समझने लगे, उसे हवाके महत्वके विषयमें जानकारी दी जानी चाहिए। इन प्रकरणोंको पढ़नेवाले सज्जन यह अत्यन्त सरल, किन्तु महत्वपूर्ण काम अवश्य करेंगे और हवाके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान प्राप्त कर उसके अनुसार चलकर अपने बच्चोंको जानकारी और तदनुसार चलनेकी प्रेरणा भी देंगे। यदि उन्होंने इतना किया, तो मैं खुदको कृतकृत्य मानूँगा।

हवाको दूषित करनेके मुख्य साधन हैं, हमारे संडास, हमारे आँगन और जहाँ अलहदा पेशावघर होते हैं, वहाँ पेशावघर। बहुत कम लोग संडासोंकी गन्दगीसे होनेवाली हानियोंसे परिचित होते हैं। बिल्ली और कुत्ते भी जब पाखाना फिरते हैं, तब प्रायः अपने पंजोंसे जमीनको खोद लेते हैं और उस गढ़ेमें मल-त्याग करके ऊपर पुनः धूल फैला देते हैं। जहाँ सुधरे हुए ढंगके फ्लश — संडास नहीं हैं, वहाँ इसी प्रकार करना चाहिए। हमें चाहिए कि हम अपने संडासमें राख या सूखी मिट्टीकी एक बाल्टी भरकर रखें और हर बार जब उसका उपयोग करें, तब मलपर वह राख या सूखी मिट्टी डाल दिया करें। इससे बदबू भी नहीं फैलेगी और मक्खी आदि कीटाणु भी मैलेपर बैठकर वह गन्दगी फैला नहीं सकेंगे। जिनकी नाक बिगड़ न गई हो अथवा मैलेकी बदबूकी अभ्यस्त न हो गई हो, वे इस बातको अच्छी तरह जान सकते हैं कि मैला खुला रहकर हवामें कितनी गन्दगी फैलाता है। यदि कोई हमारी खुराकमें मैला मिला दे और उसे हमारे सामने लाकर रख दे, तो हमें उलटी हो जायेगी। संडासोंकी बदबू हवामें फैलती रहती है और हम लोग उस हवाका सेवन करते रहते हैं, किन्तु सच पूछें तो पाखाना मिले हुए अन्नमें और इस हवामें तिल-भर भी फर्क नहीं है। यदि कुछ फर्क है, तो इतना ही है कि मलमिश्रित अन्नको हम खुली आँखसे देख सकते हैं, किन्तु हवामें मिश्रित मलको हम देख नहीं पाते। पाखानोंकी बैठक आदि भी बिलकुल साफ रखनी चाहिए। ऐसा काम करते हुए हम लोग शर्म खाते हैं अथवा करते हुए झुंझलाते भी हैं। परन्तु जो मैला हमारे ही शरीरसे निकलता है और जिसे हम दूसरोंके जरिये साफ करवाते हैं, उसे हम स्वयं भी क्यों नहीं साफ कर सकते? ऐसा काम करनेमें मुझे तो कोई बुराई नजर नहीं आती। स्वयं सीखकर हमें यह कार्य अपने बच्चोंको भी सिखाना चाहिए। मैलेकी बाल्टी जब भर जाये, तब मैलेको दो-एक फीट गहरे गढ़ेमें उलटाकर उसपर अच्छी तरहसे धूल ढँक देनी चाहिए। यदि हमें जंगलमें जाकर मैला त्यागनेकी आदत हो, तो घरोंसे काफी दूर जाना चाहिए। वहाँपर हथफावड़ेसे एक छोटा-सा गढ़ा खोदकर उसमें मलत्याग करना चाहिए और खोदी हुई मिट्टीको उसपर ढँक देना चाहिए।

हम लोग पेशाब भी चाहे जहाँ करके हवाको दूषित किया करते हैं। यह आदत सर्वथा त्याग देने योग्य है। जहाँ पेशाब करनेकी खास जगह न बनी हो, वहाँ घरोंसे कुछ दूर जाकर सूखी हुई जमीनपर पेशाब करना चाहिए और उसपर भी धूल डाल देना चाहिए। मलको बहुत गहरा नहीं दबानेके कुछ विशेष कारण हैं। एक तो यह कि यदि उसे बहुत गहरा दबा दिया जाये, तो उसपर सूरजकी गरमी काम नहीं कर सकेगी। और दूसरे यह कि अधिक गहरे दबे हुए मलके कारण आसपासके पानीके स्रोतको हानि पहुँचनेकी सम्भावना है।

हम लोग गलीचेपर, कोठरीकी जमीनपर, आँगनमें, या जहाँ-तहाँ बिना विचार ही थूक देते हैं। थूक भी अनेक बार जहरीला होता है। क्षयके रोगीका थूक बहुत ही जहरीला माना जाता है। उसमें से क्षयके कीटाणु उड़कर दूसरेके श्वासोच्छ्वासमें प्रवेश करते हैं और उसे नुकसान पहुँचाते हैं। थूकनेसे घर खराब होता है, यह बात तो

है ही। इस सम्बन्धमें हमारा फर्ज यह है कि घरोंके अन्दर जहाँ-तहाँ कदापि नहीं थूकना चाहिए। हमें थूकदानी रखनी चाहिए और जब मार्ग चलते हुए थूकनेकी जरूरत महसूस हो, तो सूखी जमीनपर जहाँ खूब धूल दिखाई दे, वहाँ थूकना चाहिए। इससे थूक मिट्टीमें मिलकर सूख जायेगा और कम नुकसानदेह होगा। अनेक डाक्टरोंका अभिप्राय तो यह है कि क्षयके रोगियोंको तो ऐसे बर्तनमें ही थूकना चाहिए जिनमें कीटाणुनाशक औषधि पड़ी हो। ऐसा बीमार सूखी जमीनपर या जहाँ अधिक धूल हो वहाँ भी यदि थूकता है, तब भी उसके थूकके कीटाणु नष्ट नहीं हो पाते। यह धूल उड़ती है, तो उसमें समाये हुए थूकके कीटाणुओंको भी उड़ा ले जाती है और दूसरे लोगोंपर रोगका संक्रमण होता है। यह बात ठीक हो या न हो, फिर भी इससे हम इतना तो समझ ही सकते हैं कि यत्र-तत्र थूकनेकी आदत गन्दी है और नुकसानदेह है।

कुछ लोगोंमें यह आदत होती है कि वे बचे हुए और पकाये हुए अनाजको या शाक-सब्जीके छिलकोंको इधर-उधर फेंकते रहते हैं। इन सबको भी जमीनमें ही थोड़ी-सी गहराईपर दबा दिया जाये, तो ये हवाको खराब नहीं कर सकेंगे और समय पाकर उनसे उपयोगी खाद तैयार होगी। ऐसी कोई भी वस्तु, जो सड़ने लगती है, खुलेमें फेंकी ही नहीं जानी चाहिए। इन सारी सलाहोंको समझ लेनेके बाद इन पर अमल करना बहुत ही सहज है। यह बात हरएक मनुष्य आजमा कर देख सकता है।

हमारी बुरी आदतोंसे हवा किस प्रकार दूषित होती है और उसे खराब होनेसे कैसे बचाया जा सकता है, यह हमने देखा। अब हवाका सेवन किस प्रकार किया जाये, इस विषयमें हम विचार करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–२–१९१३

३४२. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

फीनिक्स
फरवरी १४, १९१३

प्रिय श्री गोखले,

डॉ० गुलने[1] मुझे अभी बताया है कि आपका छाता मिल गया है। कुछ ही दिन हुए, वह श्री जोशीके भारत रवाना होते समय उनके साथ भिजवा दिया गया है। श्री जोशी आपसे केप टाउनमें मिले थे। आपकी टोपी भी मिल गई है। इसे श्री कोटवाल भारत पहुँचनेपर आपको दे देंगे। वे जल्दी ही रवाना हो रहे हैं।

अबतक भारतके अखबारोंकी सभी आलोचनाएँ मुझे मिल चुकी हैं। उन्हें पढ़कर दुःख होता है। लेकिन आपसे बातें होनेके बाद मेरा मन इसके लिए तैयार हो चुका था। मैं देखता हूँ, आप इसका उत्तर अपने ढंगसे दे रहे हैं। इन आलोचनाओंका असर यहाँ भी हुआ है। अय्यर अपने अखबारमें तीखे लेख लिख रहे हैं। मैं आपको सब कतरनें नहीं भेज रहा हूँ; लेकिन आप शायद 'एडवर्टाइज़र' का लेख पढ़ना पसन्द करेंगे। 'एडवर्टाइज़र' में अय्यर द्वारा उद्धृत आलोचनाएँ छापी गई हैं।

जनरल हेटसॉगके अलग हो जानेसे खुद बोथा मन्त्रिमण्डलमें भीतरी झगड़े खड़े हो गये हैं।[2] आपने 'इंडियन ओपिनियन' में देखा होगा कि 'स्टार' के संवाददाताने यह कहकर आपकी प्रशंसा ही की है कि चूंकि जनरल बोथा भारतीय प्रश्नको एक साम्राज्यीय प्रश्न मानते हुए आपसे स्वयं ही मिलना चाहते थे, इसलिए जनरल हेटसॉग अपने सहयोगी-मन्त्रियोंसे लड़ पड़े।[3] मन्त्रालयके इन आन्तरिक झगड़ोंने संसदीय मन्त्रिमण्डलको छिन्न-भिन्न कर दिया है और बहुत सम्भव है कि जिस कानूनको पास करनेका वादा किया गया है, वह फिर स्थगित कर दिया जाये। यदि ऐसा हुआ तो मेरी स्थिति विषम हो जायेगी और फिर मैं सम्भवतः इस वर्षके मध्य तक भारत रवाना नहीं हो सकूंगा।

मन्त्रिगण निश्चय ही अपने वादोंको पूरा नहीं कर रहे हैं। प्रवासी-अधिनियमोंके अमलमें सख्ती बढ़ती जा रही है। वैध अधिवासी भारतीयोंकी पत्नियोंको बहुत परेशान किया जा रहा है और उन्हें बहुत खर्च उठाना पड़ रहा है। सब मामले 'इंडियन ओपिनियन' में संगृहीत हैं।

मैं यह माने लेता हूँ कि आप वहाँ एक स्थायी समिति[4] बना लेंगे और लन्दन जानेपर वहाँकी संस्थाको भी पुनर्गठित कर लेंगे।

१. डॉ० ए० एच० गुल
२ और ३ देखिए "हेटसॉगवाद", पृष्ठ ४४७ तथा उसकी पादटिप्पणी भी।
४. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति, लन्दन।

श्री पेटिटने तारसे ४०० पौंड भेजे हैं और लिखा है कि इनमें आपके दिये हुए ८० पौंड भी शामिल हैं।

श्री कैलेनबैकको जस्टकी 'रिटर्न टु नेचर' पुस्तककी एक प्रति मिल गई है। यह आपको डाकसे कल भेज दी गई है। आशा है, आप इसे पढ़नेका समय निकाल सकेंगे।

क्या यह नीमहकीम जान सकता है कि उसके मरीजकी ठीक क्या हालत है और वे उन हिदायतोंपर चल रहे हैं, या नहीं, जिनके अनुसार चलनेका उन्होंने जिम्मा लिया था?

पता नहीं, आपको कांग्रेसमें बाँटनेके लिए विशेषांक[1] समयपर मिल गया था या नहीं।

आपका,

मो० क० गांधी

[पुनश्चः]

क्या आप श्रीमती वॉगलके बाजारके[2] लिए कुछ कर सकते हैं? यदि आप कुछ ऐसी महिलाओंको जानते हों जो काम भेज सकें तो हम कृतज्ञ होंगे। बाजार जूनमें लगेगा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९२५) से।

सौजन्य: सर्वेंट्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटी।

३४३. श्री गोखलेके भारतीय भाषण

अपने दक्षिण आफ्रिकाके सफल दौरेके बाद श्री गोखलेके भारत लौटनेपर दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी समस्या जिस तरह सामने आई है, उस तरह श्री पोलकके भारत-प्रवासके समयको छोड़कर वह और कभी सामने नहीं आई थी। किन्तु श्री पोलकके भारत-प्रवास-कालमें भारतीय जनता बराबर सहानुभूतिपूर्ण ही रही; उसकी दृष्टि आलोचनात्मक नहीं थी। यह एक तरहकी कमी थी। पर श्री गोखलेके बम्बईमें उतरते ही एक ओर तो अभूतपूर्व स्वागत हुआ, जैसा कि 'टाइम्स' के संवाददाताने बताया है, और दूसरी ओर श्री गोखलेके कार्यकी आलोचना की गई। हमारी नम्र सम्मतिमें यह आलोचना जल्दबाजीसे भरी हुई और अविचारपूर्ण है। जो काम श्री गोखलेने कभी नहीं किया उसे करनेका आरोप उनपर लगाया गया और वही समझौता, जिसका दो साल पहले सभीने अनुमोदन किया था, अब निन्दनीय हो गया; क्योंकि मौकेपर आकर, जाँच-परखकर श्री गोखलेने उसके सम्बन्धमें अपने मौलिक रुखकी पुष्टि कर दी। इसीलिए जहाजसे उतरनेके तुरन्त बाद ही श्री गोखलेको अपने

१. ट्रान्सवाल भारतीय महिला संघ द्वारा प्रेषित।

२. देखिए "भारतीय महिलाओं द्वारा आयोजित बाजार", पृष्ठ ४४१।

कार्य और श्री गांधीने समझौतेमें जो हिस्सा लिया था, उसके बचावमें लग जाना पड़ा।[1] जैसी कि आशा की जाती थी, श्री गोखलेकी दलीलें कायल करने वाली रहीं। पूनामें भी वे इस विषयपर बोले और वहाँ भी उनका स्वागत ज़बर्दस्त हुआ। किन्तु अपने आलोचकोंको मुँहतोड़ जवाब तो श्री गोखलेने बाँकीपुरमें दिया।[2] उन्होंने कांग्रेसके श्रोताओंको वहाँ एक घंटेसे भी अधिक समय तक अपने भाषणसे मन्त्रमुग्ध रखा। इस वादविवादका परिणाम यह हुआ है कि जो पत्र श्री गोखलेकी दक्षिण आफ्रिकाकी सफलताकी या तो खुद आलोचना कर रहे थे या अपने नियमित संवाददाताओंको अनुत्तरदायित्वपूर्ण और गलत जानकारीपर आधारित आलोचनाएँ लिखनेका मौका दे रहे थे, वे सही रास्तेपर आ गये हैं। उन्होंने अपनी गलती स्वीकार की है और मंजूर किया है कि श्री गोखले सही हैं और उन्होंने किसी भी सिद्धान्तकी हत्या नहीं की, और यह भी कि उन्होंने समस्याका ऐसी शान्त, राजनयिकोचित एवं देशभक्तिपूर्ण भावनासे समाधान किया है, जिसे केवल वही कर सकते थे। उन्होंने कुछ भी नया नहीं कहा, या किया। उन्होंने वही काम, जो स्थानीय भारतीय करते थे, अपने मौलिक ढंगपर किया और अपने महान् प्रभाव एवं प्रतिष्ठाका हमारे पक्षमें उपयोग किया। उन्होंने भारतके नामपर कुछ नहीं कहा या किया, क्योंकि वे उसके विधिवत् प्रतिनिधि नहीं थे; फिर भी वे गैर-सरकारी रूपसे सचमुच भारत और साम्राज्य, दोनोंके लिए बोले। अपने समालोचकोंके बावजूद श्री गोखले अपने देशवासियोंके आदरणीय हैं और साम्राज्यका जो सम्मान उन्हें प्राप्त है, वह आज किसी दूसरे भारतीयको प्राप्त नहीं है। हमें आशा है कि हम जल्दी ही कांग्रेसमें दिया हुआ उनका भाषण तथा पक्ष-विपक्षमें हुई आलोचनाओंका सारांश छाप सकेंगे। श्री गोखलेके दक्षिण आफ्रिकाके दौरे और भारतमें उनके लौटनेसे जो खलबली मची है उससे लाभ ही हुआ है। हम ऐसा इस कारण कहते हैं कि उनके अधिकांश आलोचकोंने समझौतेको स्वीकार कर लिया है और स्थितिको ठीक तरहसे समझ लिया है, इसलिए भारतमें आगे हमारे पक्षमें जो भी आन्दोलन होगा वह ज्यादा परिणामकारी होगा। और यह तो ईश्वर ही जानता है कि हमारी मातृभूमि हमें जो भी सहायता दे सके, उस सबकी हमें आज भी कितनी आवश्यकता है। अभी तो सेरमें एक पौनी भी नहीं कती है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-२-१९१३

१. श्री गोखलेके बम्बईके भाषणके लिए देखिए परिशिष्ट २३।

२. देखिए पादटिप्पणी १, पृष्ठ ४१८।

३४४. बढ़िया सुझाव!

एस्टकोर्टके मजिस्ट्रेटने यह सुझाव दिया है कि हरएक काले आदमीपर यानी हरएक भारतीय और हब्शीपर तीन पौंडी कर लगाना चाहिए। जो काला आदमी किसी गोरेकी नौकरी करे उसे उस करमें १० शिलिंगकी छूट दी जाये। यह मजिस्ट्रेट कहता है कि ऐसा करनेसे तमाम भारतीय और हब्शी [गोरोंका] काम करने लग जायेंगे। इसके सिवा वह यह सुझाव भी देता है कि एशियाइयोंको नये परवाने (लाइसेंस) न दिये जायें, उन्हें अपने कारोबारकी जगह न बदलने दी जाये, उन्हें अपनी पेढ़ीमें नये साझेदारोंको स्थान देनेका अधिकार न दिया जाये, जब किसी कारोबारका मालिक मर जाये तो उसका कारोबार किसी गोरे न्यासी (ट्रस्टी)को सौंप कर बिकवा दिया जाये और बन्द करा दिया जाये और जो भारतीय स्वयं अंग्रेजी या डच भाषामें अपनी बहियाँ न रख सकें उनका परवाना रद कर दिया जाये। इसके बाद यह मजिस्ट्रेट कहता है कि यदि ऐसा कानून न बनाया गया तो [व्यापारपर] भारतीयोंका बहुत बड़ा अधिकार ही जम जायेगा। एक मजिस्ट्रेटने खुल्लमखुल्ला यह कहा, परन्तु ऐसे विचार तो सैकड़ों गोरोंके हैं। उनका यह इरादा अभी पूरा नहीं हुआ क्योंकि हममें कुछ तेज बाकी है। परन्तु यदि हमारा तेज इतना ही रहा और उक्त विचार रखनेवाले गोरोंकी संख्या बढ़ गई तो यहाँसे हमारा अस्तित्व मिटनेमें देर न लगेगी। इस बातको समझना इतना ही आसान है जितना किसी त्रैराशिक सवालको समझना।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-२-१९१३

३४५. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-७]

पिछले प्रकरणमें हम देख चुके हैं कि हवा ग्रहण करनेका मार्ग नाक है, मुँह नहीं; यह जानते हुए भी बहुत थोड़े लोग ऐसे हैं, जिन्हें ठीक ढंगसे श्वास लेना आता है। कई लोग मुँहसे ही श्वास लेते हैं। यह आदत हानिकारक है। यदि बहुत सर्द हवा मुँहके मार्गसे ली जाये, तो अनेक बार जुकाम हो जाता है और गला बैठ जाता है। मुँहसे श्वास लेनेवालेके फेफड़ोंमें हवामें मिले हुए रजकण प्रवेश कर जाते हैं, जिनके कारण कई बार फेफड़ोंको बहुत हानि पहुँचती है। इस बातका प्रत्यक्ष उदाहरण लन्दन-जैसे शहरमें शीघ्र ही मिल जाता है। वहाँ जो धुएँकी चिमनियाँ हैं, उनके कारण नवम्बरके महीनेमें कुहरा — पीला धुआँ — छा जाता है। इसमें धूलके बहुत बारीक, काले कण हुआ करते हैं। जो लोग इन रजकणोंसे भरी हुई हवा मुँहके जरिये खींचते हैं, उनके थूकमें इन रजकणोंको देखा जा सकता है। इसे रोकनेके लिए कई स्त्रियाँ, जिन्हें नाकके जरिये श्वास लेनेकी आदत नहीं है, अपने मुँहपर

एक जालीदार कपड़ेकी पट्टी बांध लेती हैं, जिसमें से होकर साफ हवा मुंहमें प्रवेश करती है। कुछ एक दिनों उपयोग कर लेनेके बाद यदि इस पट्टीकी जाँच की जाये, तो इसमें भी ये रजकण दिखाई देंगे। किन्तु ईश्वरने हमारी नाकमें ही ऐसी छलनी लगा रखी है कि हवा नाकसे साफ होनेके बाद ही फेफड़ोंमें पहुँचती है और सो भी गर्म होकर। इसलिए हरएक मनुष्यको नाकके जरिये ही श्वास लेना सीखना चाहिए। यह कुछ मुश्किल बात नहीं है। जब हम बोल न रहे हों, तब मुंह बन्द रखना चाहिए। जिन लोगोंको मुंह खुला रखनेकी आदत पड़ गई हो, उन्हें चाहिए कि रातको सोते समय वे मुंहपर पट्टी बांधें। इससे मजबूरन नाकके जरिये ही साँस लेनी पड़ेगी। ऐसे लोगोंको सुबह और शाम खुली हवामें खड़े होकर नाकके जरिये कोई २० बार श्वास लेनी चाहिए। ऐसा करनेसे नाकसे ही श्वास लेनेकी आदत पड़ जायगी। जो मनुष्य तन्दुरुस्त है और श्वास भी नाकसे ही लेता है, वह भी यदि नाकके जरिये शुद्ध हवामें हमेशा श्वास ले तो उसकी छाती मजबूत और चौड़ी होगी। यह प्रयोग तो हरएक मनुष्यको करके देखना चाहिए। इसे आरम्भ करनेसे पूर्व अपने सीनेका माप ले लेना चाहिए और एक महीनेके बाद पुनः माप लेना चाहिए। प्रयोगके बाद हम देखेंगे कि थोड़ेसे समयमें ही छाती पहलेसे चौड़ी हो गई है। सैंडो आदि पहलवान डम्ब-बेलकी जो कसरत करवाते हैं, उसमें भी यही रहस्य छिपा हुआ है। बहुत तेजीसे डम्ब-बेलकी कसरत करनेपर श्वासोच्छ्वास गहरा और अधिक लेना पड़ता है और उससे छाती खूब चौड़ी और मजबूत बन जाती है।

इस प्रकार हवा कैसे ली जाये, इसे जाननेकी और साथ ही रात-दिन खुली हवा लेनेकी आदत डालना बहुत जरूरी है। हमारी साधारण आदतें कुछ ऐसी पड़ गई हैं कि हम दिनके समय घरमें या दूकानोंमें बन्द पड़े रहते हैं और रातके समय भी तिजोरी-जैसी कोठरियोंमें सोते हैं। जो खिड़कियाँ और दरवाजे होते हैं, उन्हें बन्द कर देते हैं। यह आदत बहुत ही बुरी है।

जितने समय तक बने, और खास तौरसे सोते समय तो, हमें खुली हवा ही लेनी चाहिए। अतः जिन लोगोंको सहूलियत हो, उन्हें तो खुले बरामदों, छतों या छज्जोंमें ही सोना चाहिए। किन्तु जिन लोगोंके नसीबमें ऐसा कर सकना न हो, उन्हें यथासम्भव अपनी कोठरीके सभी दरवाजे और खिड़कियाँ खुली रखनी चाहिए। हवा खाना तो हमारी चौबीसों घंटेकी आवश्यकता है, इससे हमें बिलकुल ही डरना नहीं चाहिए। यह सोचना बिलकुल वहमकी बात है कि खुली हवा अथवा सुबहकी स्वच्छ हवा लेनेसे कोई बीमार हो जायेगा। जिन लोगोंने बुरी आदतोंसे अपने फेफड़ों-को खराब कर लिया है, यह बहुत सम्भव है कि उन्हें एकाएक खुली हवा लेनेके कारण जुकाम हो जाये। लेकिन जुकामसे डरनेका कोई कारण नहीं है। यह थोड़े समयमें ही दूर हो जायेगा। क्षय-रोगके भुक्त-भोगियोंके लिए आजकल यूरोपमें स्थान-स्थानपर खुली हवा मिल सके, ऐसे खुले-खुले मकान बनाये गये हैं। देशमें महामारीका उपद्रव रहा ही करता है। इसका खास कारण भी हमारा हवाको खराब करना और इस खराब हवाका सेवन करनेकी हमारी बुरी आदत ही है। नाजुकसे-

नाजुक मनुष्य भी खुली हवाका सेवन करे, तो उसे फायदा ही होगा। यह एक ऐसा तथ्य है, जिसे पूर्ण रूपसे मान लेना चाहिए। यदि हम हवाको दूषित न करना और स्वच्छ हवाका सेवन करना सीख लें, तो अनेक रोगोंसे सहज ही बच सकेंगे और दक्षिण आफ्रिका-जैसे इस मुल्कमें हमपर गन्दे रहनेका भी जो एक आरोप है, वह भी कुछ हद तक दूर हो सकेगा।

जिस प्रकार खुली हवामें सोना अत्यन्त आवश्यक है, उसी प्रकार मुँह ढँककर न सोना भी जरूरी है। अनेक भारतीयोंकी आदत मुँह ढँककर सोनेकी है। ऐसा करनेसे हम अपने ही श्वासमें छोड़ी हुई जहरीली हवाका पुनः सेवन करते हैं। हवा वस्तु ही ऐसी है कि उसे जरा-सा मार्ग मिल जाये तो वह प्रवेश कर जाती है। हम अपने ओढ़नेके वस्त्रको कैसा ही लपेट कर क्यों न सोयें, तब भी वाहरकी थोड़ी-बहुत हवा तो अन्दर प्रवेश कर ही जाती है। यदि ऐसा न हो तो सिरको ढँककर सोनेसे दम घुट जाता और हम मर जाते। परन्तु ऐसा नहीं होता, क्योंकि थोड़ी-बहुत बाहरकी प्राणवायु हमें मिलती ही रहती है। परन्तु उतना काफी नहीं है। यदि सिरमें हवा लगती हो, तो सिरपर कोई दूसरा वस्त्र लपेट लेना चाहिए अथवा कनटोपी पहन लेनी चाहिए। परन्तु नाक तो अवश्य खुली रखनी चाहिए। चाहे जैसी ठण्ड पड़ती हो, नाक ढँककर तो कभी नहीं सोना चाहिए।

हवाका और उजालेका कुछ ऐसा घनिष्ठ सम्बन्ध है कि इसी प्रकरणमें उजालेके सम्बन्धमें भी दो शब्द लिख देने चाहिए। जिस प्रकार हवाके बिना हमारा निर्वाह नहीं हो सकता, उसी प्रकार उजालेके बिना भी जिया नहीं जा सकता। नर्कमें हमने उजालेका ही अभाव माना है। जहाँ रोशनी नहीं होगी, वहाँकी हवा हमेशा खराब ही होगी। यदि हम किसी अँधेरी कोठरीमें प्रवेश करें, तो वहाँ की हवामें हमें बदबू मालूम होगी। अँधेरेमें हम अपनी आँखका उपयोग भी नहीं कर सकते। इससे साबित होता है कि हम उजालेमें ही रहनेके लिए पैदा हुए हैं। जितने अँधेरेकी जरूरत प्रकृतिने हमारे लिए महसूस की है, उतना उसने हमें सुखदायक रात्रिको पैदा करके प्रदान किया है। बहुतेरे मनुष्योंको कुछ ऐसी आदत पड़ जाती है कि भीषण गरमीके दिनोंमें भी वे लोग अपनी गुफा-जैसी कोठरीमें, उजाले और हवाका रास्ता बन्द करके, बैठते हैं या सोते हैं। जो लोग हवा और उजालेके बिना रहते हैं, निस्तेज और अशक्त नजर आते हैं।

यूरोपमें आजकल ऐसे डॉक्टर हैं जो बीमारोंको खुली हवा और भरसक उजाला प्रदान करके उनके रोगोंको दूर करते हैं। वे लोग केवल चेहरेको ही हवा और उजाला देते हों, यही नहीं; बीमारको लगभग नग्न दशामें ही रखते हैं, और सारे शरीरकी चमड़ीपर उजाले और हवाका असर होने देते हैं। इस प्रकारके इलाजसे भी सैकड़ों लोग अच्छे होते हैं। हवा और उजालेका आवागमन ठीक रूपसे होता रहे, इसके लिए हमें अपने रहनेके स्थानोंके दरवाजे और खिड़कियाँ रात-दिन खुली रखनी चाहिए।

ऊपरके लेखको पढ़कर कुछ लोगोंको ऐसी कुछ शंका हो सकती है कि यदि हवा और उजालेकी इतनी अधिक जरूरत है, तो ऐसे बहुतेरे लोगोंको, जो अपनी

कोठरीमें ही पड़े रहा करते हैं, किसी प्रकारका नुकसान क्यों नहीं होता। ऐसी शंका करनेवाले लोगोंने ठीक विचार नहीं किया, ऐसा कहा जायेगा। ज्यों-त्यों जीवन-निर्वाह कर लेना हमारा उद्देश्य नहीं है। हमारा उद्देश्य तो यह है कि सम्पूर्ण आरोग्यका जीवन जिया जाये। यह भली-भाँति सिद्ध किया जा चुका है कि जहाँ लोग कम हवा और कम उजाला ले पाते हैं, वहाँ वे बीमार हो जाते हैं। शहरके लोग ग्रामीणोंकी अपेक्षा नाजुक होते हैं। कारण यह है कि शहरके लोगोंको हवा और उजाला कम मात्रामें मिलते हैं। डर्बनमें हमारे लोगोंको क्षय आदि रोग विशेष रूपसे हैं। इसका कारण डर्बनका सरकारी डॉक्टर बतलाता है कि हम लोग ऐसी स्थितिमें रहते हैं जिसमें हमें स्वच्छ हवा नहीं मिलती या हम उसके लिए प्रयत्न ही नहीं करते। हवाका और उजालेका विषय आरोग्यकी दृष्टिसे महत्वपूर्ण है और उसे प्रत्येक व्यक्तिको ध्यानपूर्वक समझ लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-२-१९१३

३४६. श्री गोखले देशमें

श्री गोखलेने देशमें हमारे सम्बन्धमें तीन उल्लेखनीय भाषण दिये हैं। इनका विवरण और उनपर की गई टीकाएँ हमें देशसे अभी मिली हैं। ये भाषण बम्बई और पूनामें तथा बांकीपुरके कांग्रेस अधिवेशनमें दिये गये थे। इनमें से कांग्रेसमें दिया गया भाषण सबसे अच्छा माना गया है। कहा जाता है कि वह एक घंटे तक चला और लोगोंने उसे तन्मय होकर सुना। श्री गोखले जब बम्बईमें उतरे तब वहाँ उन्होंने दो पक्ष देखे। इनमें से एक पक्षके नेता सर फीरोजशाह [मेहता][1] थे। उस पक्षकी मान्यता थी कि श्री गोखले तो भारतके हकोंकी बलि दे आये हैं और उन्होंने श्री गांधीका किया हुआ समझौता स्वीकार करके ठीक नहीं किया है। एक लेखकने तो यहाँ तक टीका की कि दक्षिण आफ्रिकाको भेजा गया सब रुपया व्यर्थ चला गया। इस पक्षका कहना था कि कानूनमें तो भारतीयोंके हकोंकी रक्षा होनी ही चाहिए थी; इसके सिवा श्री गोखलेको दक्षिण आफ्रिकामें चाहे जिस भारतीय और चाहे जितने भारतीयोंके जानेकी छूट भी माँगनी थी। इस पक्षकी मान्यता यह भी थी कि यदि भारतीयोंको ऐसी छूट न मिले और परिणामस्वरूप उन्हें दक्षिण आफ्रिका छोड़ना पड़े तो भी कोई बात नहीं। यह पक्ष बहुत ही छोटा है। यह बात बम्बई और पूनाकी तथा कांग्रेसकी उन सभाओंसे सिद्ध हो जाती है, जिनमें श्री गोखले

१. सर फीरोजशाह मेरवानजी मेहता; आरम्भसे ही कांग्रेससे सम्बन्धित; सन् १८९० में कलकत्तामें कांग्रेसके छठवें अधिवेशनके अध्यक्ष; १९०९ में कांग्रेसके चौबीसवें अधिवेशनके अध्यक्ष भी चुने गये, किन्तु उन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया; गांधीजीसे पहली भेंट १८९६ में; दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए भारतीयोंके प्रश्नपर गांधीजीका भाषण सुननेके लिए बम्बईकी सभाका आयोजन उन्होंने किया था।

बोले। इन सभाओंमें उनके विरुद्ध बोलनेवाला कोई भी व्यक्ति खड़ा नहीं हुआ था। फिर भी इस पक्षके कारण 'बंगाली' जैसा पत्र भ्रमित हो गया। जिन अखबारोंने श्री गोखलेकी आलोचना की थी उन्होंने कांग्रेसमें उनका भाषण[1] होनेके बाद बहुत खेद प्रकट किया और लिखा कि उन्होंने वह आलोचना गलतफहमीके कारण की थी। श्री गोखलेने कांग्रेसमें भाषण देकर यह बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि उनके कार्यके विरुद्ध कहने लायक कोई बात है ही नहीं। इतना ही नहीं, बल्कि उनका कार्य बहुत अच्छा रहा।

हमारी तो यह मान्यता है कि देशमें इस विषयपर मतभेद और श्री गोखलेकी आलोचनासे लाभ ही हुआ है। इससे समस्त भारतमें हमारे सवालपर खूब वाद-विवाद हुआ और लोगोंने हमारी लड़ाईका सच्चा रहस्य समझा। अबतक जिन लोगोंका ज्ञान इस सवालके बारेमें गहरा नहीं था, वे अब उसे गहराईसे समझने लगे हैं। यदि वे पहलेसे इस सवालकी गहराईमें गये होते तो यह गलतफहमी होती ही नहीं। [प्रश्न उठता है कि] जिन लोगोंने दो वर्ष पहले समझौता पसन्द किया था, अब वे ही लोग उसी समझौतेको मंजूर करनेपर श्री गोखलेकी आलोचना और समझौतेका विरोध कैसे करते हैं। परन्तु यह जाननेकी इच्छा सभीको होती है कि श्री गोखले-जैसे व्यक्तिने क्या किया होगा, और इसलिए वे विचार करने लग जाते हैं। और विचार करते हुए उतावलीमें वे दोष भी देखते हैं। इस समय भी ऐसा ही हुआ है। परन्तु इसका परिणाम अच्छा ही निकला। यह निश्चित है कि हमारे सवालका महत्व अब भारतमें और इंग्लैंडमें भी, पहलेसे बहुत अधिक माना जाने लगा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–२–१९१३

३४७. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-८]

४. पानी

हम आगे देख चुके हैं कि हवा एक खुराक है। पानी भी इसी तरह खुराक ही है। हवाका इसमें पहला स्थान है और पानीका दूसरा। हवाके बिना मनुष्य कुछ मिनटों तक निर्वाह कर सकता है। पानीके बिना कुछ एक घंटे, और कोई देश-विशेष हो, तो कुछ-एक दिन भी निकाल सकता है। तब भी इतना तो निश्चित है कि जितनी लम्बी मुद्दत तक भोजनके बिना जीवन चलाया जा सकता है, उतनी मुद्दत तक पानीके बिना नहीं चलाया जा सकता। और यदि मनुष्यको पीनेके लिए पानी मिलता रहे तो वह कई दिनों तक अनाजके बिना जी सकता है। हमारे शरीरमें पानी लगभग ७० प्रतिशत है। पानीको छोड़कर शरीरका बाकी वजन केवल ८ से १२ पौंड तक ही माना जाता है। हमारी खुराकमें भी कम-ज्यादा पानी होता ही है।

१. देखिए "राष्ट्रीय कांग्रेसमें श्री गोखले", पृष्ठ ४१८ और "भारतमें गोखलेका भाषण", पृष्ठ ४२१–२२।

इस प्रकार जो वस्तु हमारे लिए इतने महत्वकी है, उसके प्रति हम वहुत कम सावधानी वरतते हैं। महामारी आदि वीमारियाँ हवाके प्रति हमारी लापरवाहियोंके कारण ही हमें आ घरती हैं। पानीके प्रति लापरवाही करनेके कारण भी ऐसे ही परिणाम होते हैं। युद्धमें व्यस्त सेनामें अनेक वार काला ज्वर फूट पड़ता है। यह सावित हो चुका है कि इसका कारण पानीका दूपित होना है; क्योंकि लड़ाईमें सेनाको जहाँ जैसा पानी मिल जाये, पीना पड़ता है। शहरमें रहनेवाले लोगोंमें भी अनेक वार इसी प्रकारके वुखार आदि फैल जाते हैं। उनका कारण भी प्रायः पानीकी खरावी ही होती है। खराव पानी पीनेसे कई वार पथरीका रोग भी हो जाता है।

पानीके खराव होनेके दो कारण होते हैं। एक तो किसी प्रदेशकी स्वाभाविक स्थितिके कारण वहाँका पानी ही विशुद्ध न रहे, और दूसरा यह कि हम पानीको दूपित कर दें। जिस स्थानमें पानी खराव ही होता हो या निकलता हो, उस स्थानका पानी तो कदापि नहीं पीना चाहिए। और प्रायः हम उसे पीते भी नहीं हैं। किन्तु जिस जलको हम अपनी लापरवाहीके कारण दूपित कर देते हैं उसे पीते हुए हम नहीं हिचकते। जैसे कि नदियोंमें हम प्रायः हर प्रकारकी चीजें फेंक दिया करते हैं और फिर उसी जलको पीने और नहानेके काममें लेते हैं। नियम तो यह होना चाहिए कि जिस स्थानपर हम स्नान आदि करते हैं, उस स्थानके जलका हम कभी पीनेके लिए उपयोग न करें। नदियोंका जल हमेशा जिस दिशासे वहता हो और जिस दिशामें कोई स्नानादि नहीं करता हो, वहींसे लेना चाहिए। इस दृष्टिसे हरएक गाँवमें नदीके दो विभाग कर देने चाहिए—प्रवाहके नीचेकी ओरका भाग नहाने-धोनेके लिए, और प्रवाहके ऊपरका भाग पीनेके लिए। सेना आदि जव जलके नजदीक छावनियाँ डालती हैं, तव एक विशेप व्यक्ति नदियोंके प्रवाहकी जाँच करके किनारेपर एक झण्डी खड़ी करता है और उसके ऊपरी भागके प्रवाहकी ओरका जल यदि कोई नहाने-धोनेके लिए उपयोगमें लाता है, तो उसे सजा होती है। हमारे देशमें जहाँ इस प्रकारकी व्यवस्था नहीं है, वहाँ परिश्रमी स्त्रियाँ अनेक वार छोटे-छोटे गढ़े खोदकर उनमें से पानी भरती हैं। यह प्रथा वहुत ही अच्छी है, क्योंकि ऐसा करनेसे पानी रेतमें से छन-छन कर आता है। कुएँके जलमें अनेक वार वहुत-से खतरे हुआ करते हैं। जो कुएँ कम गहरे हैं, उनमें जमीनकी सतहपर की गन्दगी आदि रिसकर जा मिलती है। अनेक वार उनमें पक्षी भी गिरकर मर जाते हैं। कई वार पक्षी अपने घोंसले भी उनमें वनाते हैं और यदि कुएँ ठीक ढंगसे वँध हुए न हों, तो उनमें पानी खींचनेवालोंके पैरोंका मैल भी गिरता रहकर पानीको खराव कर देता है। इसलिए कुएँके जलको पीनेमें विशेप सावधानीकी जरूरत है। टंकियोंमें भरा हुआ पानी तो प्रायः खराव होता है। टंकियोंके पानीको शुद्ध रखनेके लिए समय-समयपर उनकी सफाईका ध्यान रखना चाहिए; उन्हें ढक कर रखना चाहिए और छत आदि स्थान, जहाँसे उनमें पानी आता है, साफ रखे जाने चाहिए। लेकिन इस प्रकारकी स्वच्छता रखनेका प्रयत्न थोड़े ही लोग करते हैं। अतः पानीके दोषोंको भरसक दूर करनेका सुनहरा नियम तो यह है कि पानीको आधे घंटे तक उवाला जाये और ठण्डा होनेपर उसे विना हिलाये दूसरे वर्तनमें ले लिया जाये और फिर

किसी तीसरे बर्तनमें एक अच्छे बड़े और साफ कपड़ेसे छानकर पिया जाये। ऐसा करनेवाला मनुष्य भी अपने उस कर्त्तव्यसे मुक्त नहीं हो पाता, जो उसे दूसरोंके प्रति पालन करना है। जो जल सार्वजनिक उपयोगके लिए है, वह हमारी-तुम्हारी और उस मुहल्लेमें या गाँवमें रहनेवाले सभीकी मिल्कियत है। हर व्यक्ति इस मिल्कियतका उपयोग ट्रस्टीकी तरह करनेके लिए बँधा हुआ है, इसलिए किसीके हाथों कोई ऐसा काम तो होना ही नहीं चाहिए जिससे पानी दूषित हो जाये। नदी या कुओंको खराब नहीं किया जाना चाहिए। पीनेके हिस्सेवाले पानीका नहाने या धोनेमें उपयोग नहीं करना चाहिए। उसके आसपास न मल-मूत्र आदिका त्याग किया जा सकता है, और न मुर्दोंका दाह-संस्कार अथवा उनकी भस्म आदिका उसमें विसर्जन ही।

इस प्रकार पानीकी बहुत सार-सँभाल रखें तो भी एकदम शुद्ध जल नहीं मिल पाता। उसमें क्षार आदिकी मात्रा होती है और अनेक बार सड़ी हुई वनस्पतियोंका अंश भी होता है। वर्षाका जल सर्वाधिक शुद्ध माना जाता है। किन्तु हमारे पास पहुँचते-पहुँचते उसमें हवामें व्याप्त रजकण आदि मिल जाते हैं। शरीरपर शुद्ध जलके परिणामकी बात ही और है। यह जानकर ही अनेक अंग्रेज डॉक्टर अपने बीमारोंको "डिस्टिल्ड" या शुद्ध किया हुआ पानी देते हैं। यह पानी भाप द्वारा बनाया जाता है। जिन लोगोंको कब्जियत आदि रोग हों, वे यदि "डिस्टिल्ड" पानीका उपयोग करें, तो उन्हें इसका प्रत्यक्ष अनुभव हो सकेगा। सभी विलायती दवा बेचनेवाले (केमिस्ट) यह शुद्ध पानी बेचते हैं। "डिस्टिल्ड" जल और उसके उपायोंपर हालमें ही एक पुस्तक लिखी गई है। पुस्तकके लेखकका यह विश्वास है कि यदि उक्त ढंगसे शुद्ध किये हुए जलका प्रयोग किया जाये, तो अनेक रोग दूर हो सकते हैं। हो सकता है, इसमें अतिशयोक्ति हो, तो भी उसमें सन्देह करनेकी कोई खास बात नहीं है कि एकदम शुद्ध किये हुए जलका परिणाम शरीरपर खूब अच्छा होता है।

पानीके दो प्रकार हैं — एक खारा या भारी और दूसरा मीठा और हल्का। यह बात सभी नहीं जानते, किन्तु है जानने योग्य। खारे पानीमें साबुनका झाग नहीं बनता। इसका अर्थ यह है कि उस पानीमें क्षारकी मात्रा अधिक है। जिस प्रकार खारे पानीमें साबुनका उपयोग ठीक नहीं हो पाता, उसी प्रकार भारी पानीमें भी उसका उपयोग कठिन होता है। खारे पानीमें अनाज भी बड़ी मुश्किलसे पकता है। ठीक इसी आधारपर भारी पानी भोजन पचानेमें बाधक हो सकता है और होता है। खारा पानी अरुचिकर और हल्का पानी या तो मीठा होता है या उसका कोई स्वाद नहीं होता। कुछ लोगोंका अभिप्राय यह भी है कि भारी पानीमें पोषक द्रव्य होते हैं और इसलिए उस जलका उपयोग फायदेमन्द है। किन्तु कुल मिलाकर तो यही देखनेमें आता है कि हल्के पानीका उपयोग ही उचित है। वर्षा-जल सर्वाधिक शुद्ध जल होता है। वह तो हल्का ही होता है और सभी लोग उसका उपयोग भी ठीक मानते हैं। भारी जलको भी उबालकर आधे घंटे तक चूल्हेपर रहने दिया जाये, तो वह हल्का हो जाता है। उबालकर उसे, जैसा कि हम पहले कह आये हैं, निथार और छान लेना चाहिए।

पानी कब और कितना पीना चाहिए, अनेक बार यह सवाल भी किया जाता है। इसका सीधा-सा जवाब तो यह है कि जब प्यास लगे तब और जितना भाये उतना पानी पीना चाहिए। खाते हुए पीनेमें भी कोई खास बाधा नहीं है, और न खानेके बाद पीनेमें ही है। खाते समय पानी पीनेवालेको इतना-भर याद रखना चाहिए कि पानी कदापि मुँहका कौर जल्दी निगल सकनेके खयालसे न पिया जाये। मुँहका कौर यदि स्वयं ही गलेसे नीचे नहीं उतरता तो या तो वह ठीकसे चबाया नहीं गया है, या हमारी जठराग्निको उसकी जरूरत नहीं है।

वैसे तो एक बड़ी हद तक पानी पीनेकी जरूरत भी नहीं होनी चाहिए। जिस प्रकार हमारे शरीरकी बनावटमें ७० प्रतिशतसे भी अधिक पानी है, ठीक उसी प्रकार भोजनमें भी है। कुछ खाद्य-पदार्थोंमें तो ७० प्रतिशतसे भी बहुत अधिक मात्रामें पानी होता है। ऐसे खाद्य नहीं हैं कि जिनमें बिलकुल ही पानी न हो। फिर, जो भोजन हम पकाते हैं, उसमें तो पानी बहुतायतसे काममें लिया जाता है। इसके बाद भी पानीकी जरूरत क्यों पड़ती है, इसका ठीक जवाब तो भोजनके स्वभाव और परिमाणसे मिल सकेगा। साधारण रूपसे यहाँ इतना कहा जा सकता है कि जिसकी खुराकमें झूठी प्यास पैदा करनेवाली मिर्च, मसाले आदि वस्तुएँ नहीं होतीं उसे पानी कम मात्रामें ही पीना पड़ता है। जो अपनी खुराक मुख्यतः ताजे मेवोंसे प्राप्त करते हैं, उन्हें पानी पीनेकी कम आवश्यकता होना उचित ही है। जिस मनुष्यको अकारण ही सदैव बहुत प्यास लगा करती हो, उसे प्यासकी बीमारी है, यही समझना चाहिए।

कुछ लोगोंको, वे चाहे जैसा पानी क्यों न पियें, कुछ नुकसान नहीं होता। दूसरे अनेक लोग भी बिना समझे ऐसा ही करने लगते हैं। यदि पूछिए कि नुकसान क्यों नहीं होता तो इस प्रश्नका जवाब भी ठीक वही है जो हवाके प्रकरणमें दिया जा चुका है। हमारे शरीरके खूनमें कुछ ऐसी जबरदस्त शक्ति होती है कि वह कई तरहके जहरोंको नष्ट कर देती है। किन्तु जैसे किसी अच्छी तलवारकी धार लगातार उपयोग करने और उसे सानपर न धरनेसे भोथरी हो जाती है उसी प्रकार यदि हम खूनसे अपनी चौकीदारीका काम लें और उसकी हिफाजत न करें, तो उसकी शक्ति नष्ट होते-होते अन्तमें वह बिलकुल खराब हो जाता है। इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। यदि हम हमेशा खराब पानीका सेवन करें, तो अन्तमें हमारा खून अपना काम नहीं कर सकेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-२-१९१३

३४८. पत्र : एच० एल० पॉलको

जोहानिसवर्ग
फरवरी २५, १९१३

प्रिय श्री पॉल,

हाँ, मैं सचमुच काममें डूवा हुआ हूँ। मैं कुमारी एन० को सब बातोंसे अवगत रख रहा हूँ।

श्री सेरिजके वारेमें, मुझे दु:ख है, अभी कुछ नहीं किया जा सकता। यहाँ कोई ढंगका भारतीय स्कूल नहीं है। किन्तु मेरा सुझाव है कि वे अपनी अर्जी वहाँके अधीक्षक (सुपरिन्टेंडेंट) की मार्फत भेजें। और यदि अधीक्षक उसपर जोरदार सिफारिश लिख दे तो मौका आनेपर श्री एस० के लिए काम मिल जानेकी खासी गुंजाइश हो सकती है।

मुझे दु:ख है कि आप अभीतक उसी दुखी मन:स्थितिमें[१] हैं। आपको उससे मुक्त होनेकी कोशिश करनी चाहिए। दु:ख मनुष्यको निराश वनानेके लिए नहीं, सावधान वनानेके लिए आते हैं।

आपका ही,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी प्रतिलिपि (सी० डब्ल्यू० ४९०२) से।
सौजन्य : यूजिन जोजेफ पॉल, पीटरमैरित्सवर्ग।

३४९. जोहानिसबर्गकी पाठशाला

इस पाठशालाको खुले अभी वहुत समय नहीं हुआ कि इतनेमें ही बाधा आ गई जान पड़ती है। सभीका खयाल था कि पाठशालामें पढ़ाईके घटोंमें तमिल और गुजराती सिखाई जायेंगी। अब यह सुननेमें आ रहा है कि तमिलकी पढ़ाई पाठशालाके समयमें नहीं होगी, उसके लिए कोई दूसरा समय दिया जायेगा। इसका अर्थ यह हुआ कि तमिल नहीं पढ़ाई जायेगी। यदि सरकार ऐसा करेगी तो यह वड़ा अन्याय होगा। स्कूल निकाय (वोर्ड) के सदस्यके साथ गोखलेकी जो बात हुई थी, उसमें उसने स्पष्ट वचन दिया था कि यदि पाठशालामें एक अच्छी संख्यामें किसी भारतीय भाषाको वोलनेवाले छात्र दाखिल होंगे तो सरकार उन्हें उस भारतीय भाषाको पढ़ानेकी व्यवस्था करेगी। तमिल भारतकी एक महत्वपूर्ण भाषा है। उस भाषाको जाननेवाले वच्चे

१. श्री एच० एल० पॉल अपने पुत्र क्लेमेंटकी मृत्युके बाद वड़े दु:खी हो गये थे।

इस पाठशालामें अच्छी संख्यामें दाखिल हुए हैं। इन बच्चोंको तमिल भाषाका उचित ज्ञान कराना सरकारका कर्तव्य है। नव-निर्मित समितिको इस सम्बन्धमें उचित आन्दोलन करनेकी जरूरत है। इस मामलेमें न्याय मिलना मुश्किल बात नहीं है। बच्चे मातृभाषाके माध्यमसे शिक्षा न पायें तो उनकी शिक्षा केवल तोते-जैसी ही होती है। एक लड़का सरकारी भारतीय पाठशालामें पढ़ता था। शिक्षक उसकी मातृभाषा नहीं जानता था। लड़केको तोतेके लिए अंग्रेजी शब्द "पैरट" पढ़ाया गया था, किन्तु उसे यह ज्ञान न था कि उस शब्दका गुजराती अर्थ "पोपट" होता है। अतः जब उसे अंग्रेजी शब्दका अर्थ समझानेके लिए कहा गया तो वह नहीं बता सका। वह तो इतना ही जानता था कि "पैरट" एक प्रकारका पक्षी होता है। यहाँकी पाठशालाओंमें बहुत-से भारतीय बच्चोंकी यही दशा है, क्योंकि सरकारने पद्धति ही ऐसी चला रखी है। बच्चोंको अंग्रेजी भाषाके माध्यमसे ही ज्ञान दिया जाता है। इस कारण सारी शिक्षा तोता-रटन्त ही दिखाई देती है। सभी लोगोंका ऐसा खयाल है कि जोहानिसवर्गकी पाठशाला इस दोषसे मुक्त रहेगी। इस स्थितिको निभानेका दायित्व समितिपर है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-३-१९१३

३५०. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-९]

५. खुराक

वैसे तो हवा, पानी और खाद्य-पदार्थ — तीनों ही हमारी खुराक हैं। तो भी साधारण रूपसे हम खाद्य-पदार्थोंको ही खुराक मानते हैं। और इनमें भी अनाजोंको प्रधानता देते हैं। जो गेहूँ या चावल आदि नहीं खाता, हम मानते हैं कि वह कुछ खाता ही नहीं है।

सच कहें, तो सबसे पहली खुराक हवा है। उसके बिना हमारा कार्य बिलकुल नहीं चल सकता, यह हम देख चुके हैं। और पोषक तत्वके रूपमें इस खुराकका सेवन हम प्रतिक्षण किया ही करते हैं। पानीका दर्जा हवाके बाद आता है, किन्तु वह भोजनसे बढ़कर है। इसीलिए प्रकृतिने यह व्यवस्था कर रखी है कि वह भी अनाज आदिकी अपेक्षा सरलतासे प्राप्त हो सके। अनाज आदिका स्थान तो तीसरा और अन्तिम दर्जेका है।

खाद्योंके विषयमें लिखना जरा कठिन है। कौन-सा खाद्य लिया जाये, कब लिया जाये — इन सारे सवालोंके विषयमें प्रायः मतभेद हैं। सारे समाजोंकी प्रणालियाँ इस दिशामें जुदी-जुदी हैं। यह भी देखनेमें आता है कि भिन्न-भिन्न मनुष्योंपर एक ही खाद्यका भिन्न-भिन्न प्रकारका असर होता है। ऐसी स्थितिमें एक निश्चित निर्णय करना और केवल यही ठीक है, यह कह सकना कठिन ही नहीं, असम्भव है। दुनियाके

कई भागोंमें लोग दूसरे मनुष्योंको मारकर उनका मांस खा जाते हैं। उनके लिए यही खाद्य है। कुछ लोग सिर्फ दूध पीकर निर्वाह करते हैं। उनकी खुराक दूध ही हुई। दूसरे कुछ ऐसे हैं जो निरे फलाहारी हैं और फल ही उनके लिए खाद्य है। अतः इस प्रकरणमें हमने खाद्य शब्दके अन्तर्गत इन सारी वस्तुओंका समावेश मान लिया है।

निश्चयपूर्वक यह कहना कठिन है कि खुराकमें क्या-क्या लिया जाये; तो भी इस सम्बन्धमें कुछ निर्णय कर लेना हरएक आदमीका फर्ज है। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि भोजनके बिना हमारे शरीरका व्यापार चल ही नहीं सकता। इसे प्राप्त करनेके लिए हम सैकड़ों दुःख सहन करते हैं। ऐसी स्थितिमें हमें यह देखनेकी आवश्यकता है कि हम खाते किसलिए हैं। यह जान लेनेपर ही हम इस बात-पर ठीक विचार कर सकेंगे कि हमें कौन-सी खुराक लेनी चाहिए। इसे तो सभी कबूल करेंगे कि लाखमें निन्यानवे हजार नौ सौ निन्यानवे लोग स्वादके लिए खाते हैं। ये लोग इस बातकी भी परवाह नहीं करते कि ऐसा करनेसे वे बीमार होंगे या अच्छे रहेंगे। कुछ लोग तो खूब भोजन कर सकें, इसलिए सदैव जुलाब लेते रहते हैं या भोजन पचानेके लिए चूरन फाँका करते हैं। कुछ लोग खूब स्वादसे डटकर भोजन कर लेनेके बाद उसे कै करके निकाल देते हैं और पुनः स्वादिष्ट भोजनके लिए तैयार हो जाते हैं। कुछ लोग खूब खाकर एक या दो समयके लिए खाना छोड़ देते हैं। कुछ लोग खाते-खाते इतनी लापरवाही कर जाते हैं कि मर ही जाते हैं। लेखकने ये सारे उदाहरण स्वयं देखे हैं। लेखककी खुदकी जिन्दगीमें भी इतने अधिक परिवर्तन हुए हैं कि उसे स्वयं अपने अनेक कृत्योंपर हँसी और कुछ पर शर्म आती है। एक समय था जब लेखक प्रातःकाल चाय पीकर फिर दो-तीन घंटे बाद नाश्ता करता, फिर एक बजे भोजन करता, पुनः ३ बजे चाय लेता और ६ से ७ के बीच शामका भोजन करता। उन दिनों लेखककी स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। उसे शोथ हो जाता था। दवाकी शीशी तो पास ही पड़ी रहती थी। ठीक ढंगसे खाया जा सके, इसलिए अनेक बार कोई रेचक दवा और इसके उपरांत पुष्टईके लिए कोई दूसरी शीशी। यह क्रम चला ही करता था। उस समय लेखकमें काम करनेकी जितनी ताकत थी, उससे आज तिगुनी है, ऐसा वह मानता है, यद्यपि अब उसकी प्रौढ़ावस्था मानी जाती है। यह जिन्दगी सचमुच ही दयनीय है और जरा गहरा सोचा जाये तो ऐसी जिन्दगी अधम, पापपूर्ण और लांछनास्पद मानी जानी चाहिए।

मनुष्य खानेके लिए ही नहीं पैदा हुआ और न खानेके लिए ही जीता है। वह तो अपने कर्ताकी पहचान करनेके लिए जन्मा है और उसी कार्यके लिए जीता है। प्रभुकी यह पहचान शरीरके निर्वाहके बिना नहीं हो सकती और खुराकके बिना शरीरका निर्वाह नहीं हो सकता। इसीलिए खुराक लेना अनिवार्य है। यही ऊँचेसे-ऊँचा विचार है। जो स्त्री-पुरुष आस्तिक हैं, उनके लिए इतना ही बस है। वैसे नास्तिक मनुष्य भी यह तो कबूल करेगा कि आरोग्यकी रक्षा करते हुए ही भोजन करना चाहिए और शरीरको तन्दुरुस्त बनाये रखनेके लिए ही खाना चाहिए।

पशु-पक्षियोंकी बात लीजिए। वे स्वादके लिए नहीं खाते। वे पेटूकी तरह भी नहीं खाते। जब उन्हें भूख लगती है, तो वे भूख-भर खाते हैं। वे अपनी खुराकको

हमारी तरह पकाते भी नहीं हैं। जो-कुछ कुदरतने तैयार कर दिया है, उसीमें से वे अपना भाग ले लेते हैं। तो फिर क्या मनुष्य स्वाद ले-लेकर खानेके लिए पैदा हुआ है? और क्या मनुष्यके ही नसीबमें सदाके लिए बीमारियाँ हैं। जो ढोर मनुष्योंके साथ नहीं रहते, उनमें भुखमरी नहीं होती। उनमें एक गरीब और दूसरा मालदार, एक दिनमें दस बार भोजन करनेवाला और दूसरा मुश्किलसे एक बार खा सकनेवाला, ऐसा भेद भी देखनेमें नहीं आता। ये सारे भेद तो हमारे समाजमें ही बने हैं। ऐसा होते हुए भी पशुओंकी अपेक्षा हम खुदको बुद्धिमान मानते हैं। इससे यह तो स्पष्ट ही है कि यदि हम अपने पेटको ही परमेश्वर मान लेते हैं और उसकी पूजामें ही अपना जीवन बिताते हैं, तो हम पशु-पक्षियोंकी अपेक्षा हलके दर्जेके ही हैं।

गहरा विचार करनेपर हम यह देख सकेंगे कि असत्य, लम्पटता, मिथ्या-भाषण, चोरी आदि दोष जो हमारे हाथों होते हैं, उनका प्रधान कारण हमारी स्वादेन्द्रियकी स्वच्छन्दता ही है। यदि हम अपने स्वादको वशमें कर लें, तो दूसरे विषयोंको नष्ट कर पाना बहुत ही सहज है। तो भी अधिक भोजन करने, लालसापूर्वक खानेको हम पाप नहीं मानते। यदि हम चोरी करें, व्यभिचार करें, या झूठ बोलें, तो अन्य लोग हमारी ओर तिरस्कारकी दृष्टिसे देखते हैं। नीतिके विषयको लेकर झूठ, चोरी और व्यभिचारपर अनेक सुन्दर पुस्तकें लिखी गई हैं। लेकिन जिनकी स्वादेन्द्रिय उनके वशमें नहीं है उनके सम्बन्धमें कोई किताब नहीं है। इसे नीति-अनीतिका विषय ही नहीं माना गया। इसका प्रधान कारण तो यह है कि हम सभी एक ही नावमें बैठे हुए हैं। "कठौता कूँडेपर क्या हँसेगा!" हमारे महापुरुष भी स्वादको पूर्ण रूपसे जीत सके हों, यह देखनेमें नहीं आया। अतः स्वाद ले-ले कर खानेमें किसी प्रकारका दोष नहीं माना गया। बहुत हुआ, तो इतना-भर लिख दिया गया कि हमें अपनी इन्द्रियोंको वशमें रखनेके लिए भरसक मिताहारी बनना चाहिए। किन्तु यह नहीं लिखा गया कि चूँकि हम स्वादके वशीभूत हैं, इसीलिए हममें दूसरे प्रकारकी खराबियाँ देखनेमें आती हैं। अच्छे लोग चोरों, फरेबियों या विषयी मनुष्योंको अपने पास नहीं फटकने देते, किन्तु ये अच्छे लोग साधारण लोगोंकी अपेक्षा अनेक प्रकारके विविध स्वादोंके अधिक वशमें देखे जाते हैं। **गृहस्थका बड़प्पन उसके भोजनसे परखा जाता है।** इसलिए जैसे चोरोंके गाँवमें चोरीको कोई गुनाह नहीं माना जाता, उसी प्रकार चूँकि हम सभी स्वादेन्द्रियके गुलाम बने हुए हैं, अतः इस गुलामीको कोई गिनता ही नहीं है; इस ओर नजर ही नहीं डालता। इतना ही नहीं, उसमें लोग बहुत आनन्द मानते हैं। अतः विवाहका प्रसंग हो तो, स्वादके मारे, हम दावतें करते हैं। यहाँ तक कि किसीकी मृत्युपर भी दावतें उड़ती हैं। त्यौहार आया कि मिष्टान्न आदि बना ही समझिये। मेहमान आये कि तरह-तरहके स्वादिष्ट भोजन बने। अड़ोसी-पड़ौसियोंको, सगे-सम्बन्धियोंको यदि समय-समयपर दावतें नहीं दी गईं और उनके यहाँ हम भोजन नहीं कर पाये, तो यह एक बड़ा अविवेक ही माना जाता है। निमन्त्रितोंको यदि खूब डटकर भोजन न करवाया जाये, तो हम एकदम कंजूस माने जायेंगे। छुट्टियाँ हुईं कि कुछ-न-कुछ स्वादिष्ट भोजन बनना ही चाहिए। रविवार आया कि हम यह मान लेते हैं कि हमें इतना खानेकी छूट है कि पेटमें हवाको भी स्थान न बचे।

इस प्रकार यह जो एक बड़ा दोष है, उसे हमने एक बड़े गुणकी तरह प्रतिष्ठित कर दिया है। खाने-परोसने आदिके विस्तृत आचार निर्दिष्ट हैं, और इस सम्बन्धमें हमें अपनी गुलामी, अपनी हैवानियत नजर नहीं आती। इस अन्धकारसे किस प्रकार उद्धार हो? वैसे यह प्रश्न आरोग्य-विषयकी मर्यादाके बाहर पड़ता है, अतः हम इसे पूछकर ही सन्तोष किये लेते हैं; किन्तु आरोग्यकी हद तक इसपर जितना विचार करना आवश्यक है, उतना तो करना ही चाहिए।

इसपर आरोग्यकी दृष्टिसे विचार करें। दुनियाका यह नियम देखनेमें आता है कि प्रकृति दुनियाके सारे प्राणियोंके लिए — मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट-पतंगे, सबके लिए रोजकी खुराक रोज ही तैयार करती है। कुदरत ऐसा करती है, इसमें कोई नवीनता नहीं है। कुदरतके दरबारमें बीमा करानेकी प्रणाली नहीं। वहाँ कोई भूल नहीं कर सकता। वहाँ कोई सोया नहीं रहता, न कोई आलस्य ही करता है। प्रकृतिका यह रहट प्रतिपल चलता रहता है। यही कारण है कि वर्ष-भरके भण्डार या एक दिनके भण्डारका भी कुदरतको संग्रह नहीं करना पड़ता। उसका यह कानून निरपवाद है और हम मजबूरीसे या अपनी मर्जीसे उसके वशीभूत हैं। यदि हम उस कानूनको समझें और तदनुसार चलें, तो एक दिनके लिए भी किसी घरमें भुखमरीका प्रसंग न हो। अब यदि प्रतिदिनका अनाज और हरएककी जरूरत-भरका ही, अधिक नहीं, पैदा होता हो, तो यह स्पष्ट है कि यदि कोई अधिक खा जाये — जितना नहीं खाना था उतना खा जाये, तो उतना कम हो जायेगा और परिणामस्वरूप दूसरेके हिस्सेमें उतना ही कम पड़ जायेगा। इस प्रकार सहज ही भुखमरीका कारण स्पष्ट हो जाता है। इस संसारमें हजारों बादशाहों और लाखों रईसोंके रसोईघरोंमें उन्हें और उनके नौकरोंको जितना चाहिए, उससे कहीं अधिक भोजन पकाया जाता है। यह सारा वे दूसरोंके मुँहसे ही छीनते हैं। तब फिर दूसरे भूखों क्यों न मरें? दो कुओंमें जलका अन्तःप्रवाह यदि एक हो और उनमें समान रूपसे जल आता हो, और फिर यदि एक कुएँमें किसी उपायसे अधिक जल लिया जाने लगे, तो यह स्पष्ट ही है कि दूसरे कुएँमें अपने-आप जलकी कमी हो जायेगी। अतः यदि ऊपरका नियम सही हो — और यह नियम कुछ लेखकके घरका नहीं है, अत्यन्त बुद्धिशाली पुरुषोंका बताया हुआ है — तो हम अपनी खरी जरूरतसे अधिक जो भोजन कर जाते हैं, वह चोरीका धन है। अखा सुनारने[१] सच ही गाया है: "काचो पारो खावो अन्न, तेवुं छे चोरीनुं धन।"[२] जो-कुछ हम निरे स्वादके लिए खाते हैं, वह सब हमारे शरीरमें दृश्य या अदृश्य रूपसे फूट निकलता है और उस हद तक हम अपनी तन्दुरुस्ती खो बैठते हैं और दुःखी होते हैं। अब इतना देख लेनेके बाद हमें कौन-सी खुराक लेनी चाहिए और कितनी लेनी चाहिए, इसपर सरलतापूर्वक विचार किया जा सकेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–३–१९१३

१. १७वीं शताब्दीके गुजराती कवि।

२. चोरीका धन ऐसा है, जैसा अन्नकी तरह खाया गया कच्चा पारा।

३५१. पत्र: गृह-सचिवको[1]

मार्च ४, १९१३

आपका गत माहकी २४ तारीखका कृपापत्र मिला,[2] जिसमें आपने बन्दरगाह-पर भारतसे आये उन ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें अपनाई गई कार्य-पद्धतिके विषयमें लिखा है, जिन्हें ट्रान्सवालमें निवास-सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हैं।

मेरे संघकी नम्र सम्मतिमें यह उत्तर अत्यन्त असन्तोषजनक है, क्योंकि इसमें बन्दरगाहपर जो वास्तविक वस्तुस्थिति है उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया है।

आपके पत्रोंका आशय ऐसा जान पड़ता है कि भारतीय यात्री ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके असमर्थित दावे लेकर भारतसे यहाँ आते हैं, और ऐसे लोगोंको पंजीयक द्वारा मामलेकी जाँच की जानेतक जहाजपर रोक रखा जाता है। यदि असमर्थित दावेवाले लोग किसी उल्लेखनीय संख्यामें आते और उन्हें संघकी सीमाके भीतर नजरबन्दीमें भी रहने दिया जाता, तो मेरे संघको कोई शिकायत नहीं होती। किन्तु, मेरे संघका अनुभव यह रहा है कि आम तौरपर असमर्थित दावेवाले भारतीय एक तो आते ही नहीं हैं और यदि आते भी हैं तो उन्हें नजरबन्द नहीं रखा जाता, बल्कि वे जिस जहाजसे आते हैं उसीसे वापस भेज दिये जाते हैं।

जहाँतक दयाल-बन्धुओंका सवाल है, मन्त्री महोदय अच्छी तरह जानते हैं कि यद्यपि उनके पास अपने दावे सिद्ध करनेके सभी प्रमाण मौजूद थे, तो भी यदि सर्वोच्च न्यायालयने हस्तक्षेप न किया होता,[3] तो उन दोनों लड़कोंको वापस भेज दिया जाता। मेरे संघका निवेदन यह है कि सर्वोच्च न्यायालयने जो राहत दी है, वह राहत ऐसे प्रार्थियोंको सर्वोच्च न्यायालयकी शरणमें हस्तक्षेपकी माँग करनेके लिए गये बिना ही दे देनी चाहिए।

१. इस पत्रका मसविदा अनुमानतः गांधीजी द्वारा तैयार किया गया था।

२. यह पत्र ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष द्वारा लिखे गये एक पत्रके उत्तरमें भेजा गया था। अध्यक्षने अपने पत्रमें यह अनुरोध किया था कि भारतसे आनेवाले और ट्रान्सवालमें निवासके अधिकारका दावा करनेवाले भारतीयोंको उस बन्दरगाहपर, जिससे होकर वे उपनिवेशमें पहुँचते हैं, जमानत लेकर निकासी अनुमतिपत्र दे दिये जाने चाहिए, ताकि वे अपने दावे सिद्ध कर सकें। उत्तरमें उप-सचिवने लिखा कि नेटालमें ऐसे लोगोंको शीघ्रातिशीघ्र उतरने देनेका प्रबन्ध है जिनके पास अपने दावेके समर्थनमें पर्याप्त प्रमाण मौजूद हों, किन्तु जिन लोगोंके पास ऐसे प्रमाण मौजूद नहीं रहते, उन्हें तबतक जहाजपर ही रोक रखा जाता है जबतक कि पंजीयक उनके दावेको स्वीकार नहीं कर ले। इस सम्बन्धमें दावेदारोंको अपने मामले पेश करनेकी हर सम्भव सुविधा दी जाती है, और यदि भारतीय ऐसे कागजातके बगैर ही चले आते हैं, जिनके बलपर उन्हें प्रवेश मिलता तो अपनी परेशानियोंके जिम्मेदार स्वयं वे ही हैं। **इंडियन ओपिनियन**, ८-३-१९१३

३. देखिए पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ ४२८।

अपनी स्थितिको और अधिक स्पष्ट करनेकी दृष्टिसे मेरे संघके लिए शायद यह बता देना आवश्यक है कि किन वर्गोंके लोगोंको ट्रान्सवालमें प्रवेशका अधिकार है।

प्रवेशके अधिकारी भारतीयोंका एक वर्ग वह है जो एशियाई अधिनियमके अन्तर्गत पंजीकृत है और जिसे पंजीयन-प्रमाणपत्र प्राप्त हैं। इस वर्गके भारतीय ऐसे कागजात पेश कर सकते हैं, जिनसे इनका ट्रान्सवालमें रहनेका अधिकार सिद्ध हो जाये।

दूसरा वर्ग ऐसे भारतीयोंका है जो अभी पंजीकृत तो नहीं है, किन्तु जिन्हें अपना पंजीयन करानेका अधिकार है।[1] इन लोगोंमें से सभीके पास कागजी प्रमाण होना सम्भव नहीं — और विशेषकर ऐसे कागजी प्रमाण तो उनके पास कभी हो ही नहीं सकते, जिन्हें बन्दरगाह प्रवासी-अधिकारी ठीकसे जाँच-परख सकें। कारण यह है कि इनमें से अधिकांश ट्रान्सवालमें रहनेवाले लोगोंके साक्ष्यके आधारपर ही अपने दावोंका समर्थन कर सकते हैं। ऐसी ही बात दयाल-बन्धुओंके साथ भी थी। उनका पंजीयनका अधिकार इस तथ्यपर आधारित था कि वे ३१ मई, १९०२को ट्रान्सवालमें उपस्थित थे। मेरे संघका कहना है कि जबतक उन्हें वह सबूत प्रस्तुत करनेकी सुविधा नहीं दी जाती जो सिर्फ दक्षिण आफ्रिकामें ही उपलब्ध था तबतक उनके लिए अपना दावा सिद्ध करना असम्भव था, और मेरा संघ ऐसे ही लोगोंके लिए सुरक्षाकी माँग करता है। बन्दरगाह प्रवासी अधिकारी अबतक निर्दयतापूर्वक यह सुरक्षा देनेसे इनकार करते रहे हैं और भारतीयोंको इससे बड़ी परेशानी उठानी पड़ी है। मेरे संघको विश्वास है कि उसने जिस राहतकी प्रार्थना की है, वह दे दी जायेगी।

अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–३–१९१३

३५२. स्वागत[2]

अपने देशबन्धुओंके साथ हम भी श्री हाजी दाउद मुहम्मदका हार्दिक स्वागत करते हैं। पवित्र मक्काकी यात्रा करना और "हाजी" कहलाना एक निष्ठावान मुसलमानकी सबसे प्रिय कामना होती है। श्री हाजी दाउद मुहम्मद अपनी कामना पूरी करके अपने देशबन्धुओंकी सेवा करनेके लिए अपने अंगीकृत देशमें लौट आये हैं। हम उनके दीर्घ जीवन तथा उनके दुस्साध्य कार्यमें सफलताकी कामना करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–३–१९१३

१. अस्थायी समझौतेके अन्तर्गत गांधीजी जिन वर्गोंके भारतीयोंको पंजीयनके पात्र मानते थे उनके लिए देखिए "पत्र: ई० एफ० सी० लेनको", पृष्ठ ५८-६०।

२. भाषण: "हाजियोंकी विदाई सभामें," पृष्ठ २७०-७१ और "श्री दाउद मुहम्मद", पृष्ठ २७२ भी।

३५३. गोगाका मामला

श्री गोगा फिर हार गये।[1] फिर भी हम श्री गोगाको विजयी मानते हैं। उनके अथक प्रयत्नके लिए हम उन्हें बधाई देते हैं। हमें विश्वास है कि यदि वे अन्ततक लड़ते रहे तो अवश्य जीतेंगे। उन्होंने एक बार फिर परवाना निकाय (लाइसेंसिंग बोर्ड) के फैसलेके खिलाफ अपील कर दी है। सम्भव है कि सर्वोच्च न्यायालयका फैसला भी उनके विरुद्ध हो। हम श्री गोगाको सलाह देंगे कि यदि वे यहाँ हार जायें तो ब्लूमफाँटीन [कोर्टमें] पहुँचें और यदि वहाँ भी हारें तो इंग्लैंडकी प्रीवी कौंसिल तक जायें। इस बीच दूसरे भारतीयोंके लिए उचित यह होगा कि वे श्री गोगाको प्रोत्साहन दें और सभाएँ करके सरकारको अर्जी भेजें। ऐसे मामलेको लेकर सत्याग्रह भी किया जा सकता है। यदि हममें समझ हो तो ऐसे मामलोंको इकट्ठा करके उनके बारेमें शहर-शहरमें सार्वजनिक सभाएँ की जायें और सरकारको बताया जाये कि जबतक परवाना अधिनियम (लाइसेंसिंग ऐक्ट) रद नहीं किया जाता अथवा उसमें संशोधन नहीं किया जाता तबतक न तो भारतीय शान्त बैठेंगे और न सरकारको शान्त बैठने देंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-३-१९१३

३५४. भवानीदयालका मामला[2]

इस मामलेमें जोहानिसबर्गका ब्रिटिश भारतीय संघ अभी लड़ ही रहा है। सरकारका पिछला पत्रक[3] अच्छा नहीं कहा जा सकता। उससे इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि प्रवासी-अधिकारी सरकारको पूरी जानकारी नहीं देते और सरकार पूरी जानकारी पाना भी नहीं चाहती। यदि उसने पूरी जानकारी प्राप्त की होती तो अपने पिछले पत्रकमें उसने जो अज्ञान प्रकट किया है, वह दिखाई न देता। सरकार भूल जाती है कि जो प्रवासी भारतसे आते हैं, प्रवासी-अधिकारी सन्तोष न होने पर उन्हें जहाजसे

१. एम० ए० गोगा लेडीस्मिथके व्यापारी थे। स्थानीय व्यापार मण्डलके ऊपर बॉरो परवाना कार्यालयने उनका परवाना उनके तथा उनके पुत्रके नाम हस्तान्तरित करनेसे इनकार कर दिया था। परन्तु अपील करनेपर न्याय-मण्डलने इस कार्यवाहीको अवैध घोषित किया और व्यापार मण्डलको मामलेका पूरा खर्च (५९ पौंड) भरना पड़ा। श्री गोगाकी परवाना-हस्तान्तरणकी अर्जीकी पुनः सुनवाई की जानेपर परवाना-अधिकारीने उसे खारिज कर दिया और अपीलमें बॉरो परवाना निकायने परवाना अधिकारीका निर्णय बहाल रखा। श्री गोगाके व्यापारी परवानेके मामलेके सम्बन्धमें देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ३६५, ३७७ और खण्ड ९, पृष्ठ ३४४-४५ तथा खण्ड १०, पृष्ठ ३२७।

२ और ३. देखिए पाद टिप्पणी १, पृष्ठ ४२८ और "पत्र: गृह-सचिवको", पृष्ठ ४७३-७४।

उतरने देते; इतना ही नहीं बल्कि निर्वासित कर देते हैं। सरकार शायद यह
हुए है कि ऐसे भारतीयोंको जहाजोंपर ही नजरबन्द रखा जाता है। यदि
जहाजसे न उतरने देकर वहीं नजरबन्द रख लिया जाये तो हमें जो बेहद खर्च
तकलीफ उठानी पड़ती है, हम उससे बच जायें। अब श्री काछलियाके पत्रसे[1] यह
स्पष्ट हो गया है। सरकारके लिए इसका जवाब देना मुश्किल होगा या फिर
यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उसकी नीयत पुराने लोगोंको भी परेशान करनेकी
श्री पोलकने इस मामलेमें सरकारसे खर्चकी माँग की है। वह मिले या न मिले;
न सरकार यह तो जान सकेगी कि उसके ऐसे जुल्मकी बात सारे ब्रिटिश साम्राज्यमें
ई जा सकती है।

गुजरातीसे]

डियन ओपिनियन, ८-३-१९१३

३५५. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-१०]

[खुराक – चालू]

कौन-सी खुराक ली जाये, इसका विचार करनेसे पूर्व हम, कौन-सी खुराक
ो जाये, इसे देख लें। जो-कुछ मुँहके जरिये हमारे शरीरमें जाता है, उसे यदि
रका नाम दे दें तो शराब, बीड़ी, तम्बाकू, भाँग, चाय, कॉफी, मसाले आदि
एँ भी आहार ही हैं।

लेखकका अनुभव-सिद्ध मत है कि उक्त सभी आहार त्याग देने योग्य हैं।
से कई वस्तुओंका अनुभव तो उसने स्वयं लिया है और कुछके विषयमें दूसरोंका
व देखा और जाना है।

शराब और भाँगके विषयमें तो लिखना ही क्या है? प्रत्येक धर्ममें ये वस्तुएँ
मानी गई हैं। शायद ही कोई होगा जो इनके सेवनके पक्षमें होगा। शराबसे
कुटुम्बोंका सत्यानाश हो गया है। लाखों शराबी पामाल हो चुके हैं। शराबीको
होश-हवास नहीं रहता। अनेक बार तो वह माँ और पत्नीके बीच भेद करना
भूल जाता है। इस व्यसनके परिणामस्वरूप मनुष्यका जठर जल जाता है और
पृथ्वीपर भाररूप बनकर ही जीता है। शराबी नालियोंमें पड़े नजर आते हैं।
मान जानेवाले लोग शराब पी लेनेपर दो कौड़ीके बन जाते हैं। यह स्थिति
शराब पीनेकी हालतमें ही होती है, यह बात नहीं है। देखा गया है कि इस
नसे जकड़ा हुआ मनुष्य होश-हवासमें रहनेपर भी निःसत्व-सा ही रहता है।
मनपर उसका कब्जा नहीं होता; उसका मन एक बच्चेकी तरह चंचल बना
है। शराब और इसी कोटिमें आनेवाली वस्तु, भाँग एकदम त्याज्य वस्तुएँ हैं।
सम्बन्धमें मतभेद होनेकी गुंजाइश नहीं है। कुछ लोगोंका ऐसा खयाल है कि
के तौरपर शराब ली जा सकती है; पर वास्तवमें यह भी जरूरी नहीं है।

१. देखिए "पत्र: गृह सचिवको", पृष्ठ ४७३-७४।

यह बात यूरोपके, जो शराबका घर ही है, डॉक्टर लोग भी कहते हैं। शुरूमें तो अनेक बीमारियोंपर शराबका उपयोग होता था, लेकिन अब यह बन्द हो गया है। वैसे यह दलील पेश करनेवालोंकी नीयत साफ नहीं होती। शराबके हिमायती यह कहकर कुछ ऐसी बात कहना चाहते हैं कि यदि उसका उपयोग दवामें किया जा सकता है तो फिर पीनेमें उसका इस्तेमाल करनेमें आपत्ति क्यों होनी चाहिए। प्रायः जमालगोटा आदि दवाके तौरपर उपयोगमें लिये जाते हैं, लेकिन इस कारण भोजनके तौरपर उनका उपयोग करनेका विचार कोई नहीं कर सकता। हो सकता है कि किसी-किसी बीमारीमें शराबसे फायदा होता होगा, किन्तु शराबसे इतना नुकसान पहुँच चुका है कि हर विचारशील मनुष्यका यह कर्त्तव्य है कि उसके प्राण क्यों न चले जायें, वह दवाके तौरपर भी शराबका उपयोग न करे। यदि शराबसे इस शरीरकी रक्षा करनेके परिणामस्वरूप सैकड़ों मनुष्योंका अकल्याण हो, तो इस शरीरको नष्ट हो जाने देना ही अपना फर्ज है। हिन्दुस्तानमें लाखों मनुष्य ऐसे हैं जो वैद्योंकी सलाहके बावजूद शराबका सेवन नहीं करते। वे लोग शराब पीकर अथवा जो-जो वस्तुएँ निषिद्ध मानी जाती हैं, उनका सेवन करके जीना स्वीकार नहीं करते। अफीमके वशीभूत होकर चीनकी महान जनता अपना स्वतन्त्र राज्य होते हुए भी बड़ी द्रुत गतिसे नष्ट होती जा रही है। अफीमकी लत हो जानेसे हमारे कितने ही राजवंशी जमींदार अपनी जायदाद खो बैठे हैं।

साधारण पाठक जिस प्रकार शराब, भाँग और अफीमके खराब होनेकी बातको सहज ही समझ लेगा, बीड़ी और तम्बाकूके सम्बन्धमें वह उसे उतनी आसानीसे नहीं समझ पायेगा। बीड़ी और तम्बाकूने मनुष्य-मात्रपर अपनी सत्ता कुछ इस तरह जमा रखी है कि उसे नष्ट करनेमें एक जमाना लग जाना सम्भव है। छोटे और बड़े सभी इसकी लपेटमें आ गये हैं। इतना ही नहीं, नीतिवान कहे जानेवाले मनुष्य भी बीड़ीका उपयोग करते हैं। इसके प्रयोगमें तो किसी प्रकारकी शर्म मानी ही नहीं जाती। यह मित्रोंके स्वागतका एक भारी साधन है। इसका प्रचार कम होनेके स्थानपर बढ़ता ही जा रहा है। साधारण मनुष्यको तो इस बातकी खबर भी नहीं है कि बीड़ीके व्यसनकी जड़ें जमानेके लिए बीड़ीके व्यापारी उसके बनते समय क्या-कुछ करते रहते हैं। तम्बाकूमें अनेक प्रकारके खुशबूदार पदार्थ और अफीमका पानी आदि छिड़का जाता है। इन तरकीबोंके कारण बीड़ी हमपर अधिकाधिक अधिकार करती जाती है। उसके प्रचार-प्रसार करनेके लिए हजारों पौंड विज्ञापनोंमें खर्च किये जाते हैं। बीड़ीका व्यवसाय करनेवाली कम्पनियाँ यूरोपमें अपने छापाखाने चलाती हैं, सिनेमा खरीदती हैं, अनेक प्रकारके इनाम बाँटती हैं, पुस्तकालय चलाती हैं और विज्ञापनोंमें पानीकी तरह पैसा बहाती हैं। इन सबका परिणाम यह हुआ है कि स्त्रियाँ भी बीड़ी पीने लग गई हैं। बीड़ियोंकी तारीफमें कविताएँ भी लिखवाई गई हैं, [जिनमें कई बार] बीड़ीको गरीबके दोस्तकी उपमा दी गई है।

बीड़ी और तम्बाकूसे जो हानियाँ हुई हैं, उनका अनुमान नहीं लगाया जा सकता। बीड़ी पीनेवाले लोगोंकी भावनाएँ कुछ ऐसी कुण्ठित हो जाती हैं कि वे

लापरवाहीसे दूसरेके घरमें प्रायः बिना इजाजतके बीड़ी जला लेते हैं। उन्हें किसीकी शर्म नहीं होती।

यह भी देखा गया है कि बीड़ी और तम्बाकू पीनेवाले मनुष्य इन्हें पानेके लिए अनेक दूसरे गुनाह करते रहते हैं। बच्चे घरसे पैसे चुराते हैं और जेलमें कैदी लोग बड़ी जोखिम उठाकर भी चोरी-चोरी बीड़ियोंका संग्रह करते हैं। खाने-पीनेकी दूसरी चीजोंके बिना काम चल जाता है, किन्तु बीड़ीके बिना नहीं चल पाता। युद्धमें भी जिन्हें बीड़ीकी आदत है उन सैनिकोंको यदि बीड़ी न मिले, तो वे ढीले पड़ जाते हैं और उनसे कुछ करते-धरते नहीं बनता।

बीड़ीके सम्बन्धमें स्व० टॉल्स्टॉय लिख गये हैं कि एक मनुष्यके मनमें अपनी प्रेयसीका खून करनेका विचार आया। उसने चाकू निकाला और वार करनेपर तैयार हुआ; किन्तु फिर हिचकिचाकर लौट आया और बीड़ी पीने बैठ गया। ज्यों ही बीड़ीका धुआँ उसके मगजमें पैठा कि उसके जहरसे उसकी बुद्धि आक्रान्त हो गई और वह खून कर बैठा। टॉल्स्टॉयकी यह निश्चित धारणा थी कि बीड़ीका नशा इतना सूक्ष्म है कि कुछ हद तक तो यह शराबसे भी अधिक हानिकर माना जाना चाहिए।

बीड़ीका खर्च भी कुछ ऐसा-वैसा नहीं है। सभी बीड़ी पीनेवालोंको अपनी-अपनी हैसियतके परिणाममें उसका खर्च भारी पड़ता है। कई लोग बीड़ीके पीछे प्रतिमास ५ पौंड या लगभग ७५ रुपया खर्च करते हैं। ऐसा एक उदाहरण लेखकने स्वयं देखा है।

बीड़ीसे पाचन-शक्ति घटती है, स्वादका अन्दाज नहीं लगता, भोजन फीका लगने लगता है और इसलिए उसमें मसाले आदि डालने पड़ते हैं। बीड़ी पीनेवालेके मुँहसे दुर्गंध आती है, धुआँ हवा खराब करता है, कई बार उससे मुँहमें छाले पड़ जाते हैं और मसूड़े और दाँतका रंग बदलकर काला या पीला हो जाता है। कभी-कभी कई लोगोंको दूसरे विशेष भयंकर रोग भी पकड़ लेते हैं। शराबका नशा खराब है, ऐसा माननेवाले लोग बीड़ीका नशा किस प्रकार करने लगते हैं, यह कुछ ऐसी बात है जो सहज ही समझमें नहीं आती। फिर भी जब हम देखते हैं कि बीड़ीका जहर सूक्ष्म होता है और इसलिए उससे होनेवाली हानिका पता नहीं चलता तो शीघ्र ही यह बात समझमें आ जाती है कि दारूसे घृणा करनेवाले लोग बीड़ी क्योंकर पीने लगते हैं। जो मनुष्य नीरोग रहना चाहता है, उसे बीड़ी अवश्य ही छोड़ देनी चाहिए।

शराब, तम्बाकू, भाँग आदि व्यसन हमारा शारीरिक स्वास्थ्य ही नष्ट नहीं करते, उनका मानसिक तथा आर्थिक स्थितिपर भी बुरा असर पड़ता है। हमारी नीतिमत्ताका नाश हो जाता है और हम अपने व्यसनके गुलाम बन जाते हैं।

परन्तु चाय, कॉफी और कोकोके सम्बन्धमें समझाना और यह सिद्ध करना कि ये चीजें भी खराब हैं, अत्यन्त कठिन कार्य है। फिर भी इतना तो मानना ही पड़ेगा कि ये पदार्थ दूषित हैं। इन वस्तुओंमें भी एक प्रकारका नशा होता है। चाय और कॉफीके साथ दूध और शक्करका मेल न हो, तो उसमें पौष्टिकता देनेवाला कोई

भी पदार्थ नहीं है। आम तौरपर चाय और कॉफी आदिका सेवन हम लोग कुछ ही वर्षों पूर्व बिलकुल नहीं करते थे। किसी विशेष प्रसंगपर या दवाके तौरपर इन वस्तुओंका सेवन होता था। लेकिन अब नई सभ्यताके पदार्पणके साथ ये आम हो गई हैं। यों ही मिलनेके लिए आये हुए मेहमानके सामने भी हम ये चीजें पेश कर देते हैं। चायकी पार्टियाँ होती हैं। लॉर्ड कर्जनके कार्य-कालमें तो चायने कहर ही ढा दिया था। उक्त महोदयने चायके व्यापारियोंकी हिमायत करनेकी धुनमें घर-घर चायका प्रचलन करवा दिया और जहाँ लोग पहले स्वास्थ्यप्रद वस्तुओंको पेयके रूपमें लेते थे, वहाँ अब जिसे देखिए वही चाय पीने लगा है।

कोकोका प्रचार अधिक नहीं हुआ। कारण यह है कि वह चायसे कुछ अधिक महँगी है; और यह सौभाग्यकी बात है कि हमारा परिचय भी उससे कुछ कम ही हो पाया है। किन्तु फैशनपरस्त घरोंमें तो कोको अच्छी सत्ता जमाये हुए है।

चाय, कॉफी और कोको — इन तीनों वस्तुओंमें कोई ऐसी बात है कि इनसे हमारी पाचन-शक्ति मन्द हो जाती है। ये नशीली वस्तुएँ हैं, क्योंकि जिनको इनका व्यसन लग जाता है, उनसे इन्हें छोड़ते नहीं बनता। मैं स्वयं जब चाय पिया करता था, तो चायका समय होनेपर यदि चाय नहीं मिलती तो मुझे आलस्य जान पड़ता था। नशेकी यह सच्ची पहचान है। एक बार कोई ४०० स्त्रियाँ और बच्चे कहीं एकत्र हुए। व्यवस्थापकोंने यह निर्णय किया था कि चाय या कॉफी उन्हें नहीं दी जायेगी। इस मेलेमें एकत्रित हुई स्त्रियोंको दोपहरके ४ बजे चाय पीनेकी आदत थी। व्यवस्थापकोंको खबर दी गई कि यदि औरतोंको चाय नहीं मिली, तो वे बीमार हो जायेंगी और चल-फिर भी नहीं सकेंगी। तब निर्णयमें तबदीली की गई। चाय बनाना शुरू होते-होते भाग-दौड़ मच गई कि जल्दी चाय चाहिए। स्त्रियोंके सिर भारी हो चुके थे। उन्हें एक-एक पल कठिन लग रहा था। जब चाय मिली तब इन भली स्त्रियोंकी जानमें जान आई। इस वर्णनमें अतिशयोक्ति नहीं कि गई है; यह यथातथ्य है। चायने एक स्त्रीका हाजमा इतना ख़राब कर दिया था कि उसे कुछ पचता ही नहीं था और हमेशा सिर दर्द करता रहता था। किन्तु उसने जिस दिनसे अपने मनको मारकर चाय पीना छोड़ दिया, उसी दिनसे उसकी तबीयत सुधारपर है। इंग्लैंडकी बेटरसी नगरपालिकाके एक डॉक्टरके अनुसंधानके अनुसार हजारों स्त्रियोंके ज्ञान-तन्तु-सम्बन्धी कुछ रोगोंका कारण उन स्त्रियोंका चायका व्यसन है। चायके कारण तन्दुरुस्ती बिगड़नेके बहुतेरे उदाहरण स्वयं मैंने देखे हैं और मेरा निश्चित मत है कि चायके कारण लोगोंके स्वास्थ्यको बहुत नुकसान पहुँचता है।

कॉफीके सम्बन्धमें तो हमारे यहाँ एक बहुत प्रचलित दोहा है:

'कफ काटन, वायूहरन, धातुहीन, बलछीन।
लोहूको पानी करे, दो गुन, अवगुन तीन॥'

यह दोहा ठीक मालूम होता है। कफ और वायुको नष्ट करनेकी शक्ति कॉफीमें भले ही हो — यह गुण तो दूसरी वस्तुओंमें भी है। जिन्हें उक्त दो कारणोंसे कॉफी लेनेकी जरूरत पड़े उन्हें थोड़ी मात्रामें अदरकका रस पीना चाहिए। वह कॉफीकी

जरूरत पूरी कर देगा। परन्तु जो वस्तु धातुको — जिसका संग्रह करनेकी भरसक जरूरत है — क्षीण, बलको नष्ट और खूनको पानी कर देती है, उसका तो सर्वथा त्याग ही कर देना चाहिए।

कोकोमें भी कॉफीके दोष पाये जाते हैं। उसमें भी वे ही तत्व हैं जो चायमें हैं। इसके सेवनसे चमड़ी मोटी और कठोर पड़ जाती है।

जो लोग स्वास्थ्यमें नीतिको स्थान देते हैं उनके समक्ष इन तीन वस्तुओंके विरोधमें दी गई एक विशेष दलील भी है। चाय, कॉफी, कोको — ये एक बड़ी हद तक गिरमिटिया मजदूरों द्वारा पैदा किये जाते हैं। जहाँ कोको पैदा होता है वहाँ तो सीदियोंपर इतना जुल्म किया जाता है कि यदि हम उसे अपनी नजरोंसे देख पायें तो हमें कोकोके सेवनकी जरा भी इच्छा न हो। कोकोकी खेतीमें होनेवाले जुल्मोंके सम्बन्धमें अनेक ग्रंथ लिखे गये हैं। सच तो यह है कि अपने सारे आहारोंकी उत्पत्तिके विषयमें यदि हम ठीक जानकारी प्राप्त कर पायें तो सौमें से नब्बे पदार्थोंका त्याग कर दें।

इन तीन वस्तुओंके बदले निर्दोष और पुष्टिदायक चाय निम्न प्रकारसे बनाई जा सकती है। इसे जो सज्जन चायका नाम देकर पीना चाहें वे वैसा भी कर सकते हैं। कॉफीके जायकेमें और इस निर्दोष चायके स्वादमें बहुतेरे लोग, जिन्हें कॉफीका स्वाद मालूम है वे भी, कोई भेद नहीं कर पायेंगे। गेहूँ लेकर उसे ठीक ढंगसे साफ किया जाये और फिर कढ़ाईमें सेका जाये। जबतक वह खूब लाल होकर थोड़ा-थोड़ा कालेपन पर न आ जाये तबतक उसे चूल्हेपर रहने दिया जाये। इसके बाद उसे उतारकर छोटी कॉफीकी चक्कीपर मामूली बारीक पीस लिया जाये; और उसमें से एक चम्मच चूर्ण प्यालेमें डाल कर उसपर उबलता हुआ पानी डाला जाये। इसे यदि एक मिनटके लिए चूल्हेपर रख दिया जाये, तो और अच्छा हो। इसमें आवश्यकतानुसार दूध और चीनी डाली जाये। वैसे बिना चीनी या दूधके भी इसे पिया जा सकता है। यह प्रयोग प्रत्येक पाठकके आजमाने योग्य है। इसे अपनाकर चाय, कॉफी और कोकोको छोड़ दिया जाये तो पैसा बचेगा और एक हद तक स्वास्थ्य भी सुरक्षित रहेगा। जो लोग गेहूँको भूननेकी तकलीफ न उठाना चाहें वे यदि ९ पेनी हमारे मैनेजरको भिजवा दें तो उन्हें इसका एक पौंड चूर्ण भिजवा दिया जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-३-१९१३

३५६. पत्र : हरिलाल गांधीको

फाल्गुन सुदी ६ [मार्च १४, १९१३][1]

चि० हरिलाल,

तुम्हारा पत्र बहुत महीने बाद मिला है। तुम पत्र न लिखनेपर हर पत्रमें पश्चात्ताप और खेद प्रकट करते हो। इस पश्चात्तापकी कोई कीमत न तुम्हारे लिए बची है और न मेरे लिए। किसीसे बेवसीकी हालतमें कोई काम न हुआ हो, उसके लिए वह पश्चात्ताप करे और फिर वैसा न करनेके लिए खूब सावधान रहे तभी पश्चात्तापका कोई फल निकलता है। तुम्हारा पश्चात्ताप तो केवल औपचारिकताके अन्तर्गत आता है। क्या बच्चे माँ-बापसे औपचारिकता बरतते हैं?

तुम्हारी परीक्षाके [परिणामके] सम्बन्धमें जैसे ही मुझे दूसरे जरियेसे खबर मिली वैसे ही मैंने तुम्हें पत्र[2] लिख दिया था। किन्तु जिस डायरीमें तुम्हारा पता था वह कहीं इधर-उधर रख दी गई थी, इसलिए पत्र उस समय डाकमें नहीं डाला जा सका। अभी-अभी छुड़वाया है। इसलिए मेरा पहला पत्र और यह पत्र लगभग साथ-साथ ही मिलेंगे।

तुम्हारे पत्रकी राह एक मैं ही आतुरतासे नहीं देखता, बा पूछती रहती है और कुमारी श्लेसिन आदि भी पूछती रहती हैं।

तुम्हारा चित्त वहाँ भी स्वस्थ नहीं हुआ है। तुम क्या चाहते हो, यह मैं नहीं समझा। तुम चंचीको साथ लेकर अहमदाबादमें रहना चाहते हो, यही एक बात मैं समझ सका हूँ। इस विषयमें शायद तुमने डॉक्टरको[3] भी लिखा है। तुम्हें जैसे सुविधा हो वैसे रहना।

तुम्हारे पत्रके दूसरे भागके सम्बन्धमें इतना ही लिखना चाहता हूँ: "जैसे अच्छा लगे वैसे रहो; [किन्तु] जैसे भी हो हरिको प्राप्त करो।" मैं बहस नहीं करूँगा। हमारे मार्ग भले ही अलग-अलग हों, किन्तु यदि हमारा गन्तव्य एक ही हो तो हम वहाँ मिलेंगे। हम विरोधी मार्गोपर भी चलें तो उससे क्या होता है? मुझे यह मिथ्याभिमान नहीं है कि मैं सर्वथा सच्चा हूँ और दूसरे झूठे हैं। इस एक बातको मैंने जरूर पकड़ रखा है कि मुझे अपना कर्त्तव्य जैसा सूझे वैसा ही करना चाहिए। किन्तु, मैं जानता हूँ कि तुम्हें इस प्रकार स्वतन्त्र मान लेनेसे भी [तुम्हें

१. जनवरी २६, १९१३ को हरिलाल गांधीको लिखे पत्रमें गांधीजीने उनके परीक्षा-फलकी चर्चा की है और उनसे प्रश्न-पत्र भेजनेको कहा है। यहाँ वे पुन: प्रश्न-पत्रोंकी माँग करते हैं और कहते हैं कि एक साथ दो पत्र भेजे जा रहे हैं। अत: यह पत्र २६ जनवरीवाले पत्रके कुछ ही दिन बाद लिखा गया होगा।

२. देखिए "पत्र : हरिलाल गांधीको", पृष्ठ ४४५-४६।

३. डॉ० प्राणजीवन मेहता।

यही लगता होगा कि] हम बराबर नहीं हैं। तुम मेरे विचारोंसे उलटा कोई रास्ता लेना चाहो तो भी तुम्हें पैसेके लिए मेरे अधीन होकर रहना पड़ेगा। मैं चाहता हूँ, यदि सम्भव हो तो तुम्हें इस स्थितिसे भी मुक्त कर दूँ और तब तुमसे बराबरीका होकर वाद-विवाद करूँ। परन्तु यह कैसे सम्भव हो? मैंने अपने कर्त्तव्य-ज्ञानके अनुसार कमाईके साधन त्यागकर भूल की हो तो मुझे पछताना पड़ेगा। किन्तु ऐसा करते हुए मैंने बच्चोंका विचार नहीं किया, क्या इतने अंशमें यह अन्याय न माना जायेगा? इसका उत्तर मैं "ना"में देता हूँ। अपनी बुद्धिके अनुसार मैंने उनका भी विचार किया। मेरा यह विचार ठीक था या नहीं, यह तो मुझे और तुम्हें समय ही बतायेगा।

मैं देखता हूँ कि इंग्लैंड जानेका खयाल तुम अब भी करते रहते हो। इसे दबाना। अभी तुम्हारा वक्त नहीं आया।

तुमने अपनी परीक्षाके पर्चे रखे हों तो मुझे भेजना।

मणिलाल खूब पढ़ रहा है। उसका चित्त पढ़नेमें लगा है। मैं उसे डेढ़ घंटे प्रतिदिन देता हूँ। लिखना कि तुमने कौन-कौन-सी पुस्तकें पढ़ी हैं। मेरे प्रश्नका आशय है — परीक्षाके निमित्त। अपने अंग्रेजी लेखका नमूना भेजना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

रामदास और देवदास भी ठीक पढ़ रहे हैं; किन्तु अभी उनका चित्त लगा नहीं है। बा की तबीयत ठीक है। आनन्दलालने अभेचन्दका व्यापार सँभालनेके लिए फीनिक्ससे मुक्ति ले ली है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें प्रति मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ९५३९) की फोटो-नकलसे।

३५७. पत्र : जमनादास गांधीको

फाल्गुन सुदी ६ [मार्च १४, १९१३][1]

चि० जमनादास,

तुम्हारे देशसे भेजे पत्र अब मिले हैं। उन्हें [सबने] बहुत दिलचस्पीसे पढ़ा। मुझे तुम्हारी मनाहीका ध्यान है। परन्तु इन पत्रोंमें तुमने छगनलाल और मगनलालको पढ़वा देनेकी अनुमति दी है। मैंने उन्हें मणिलालको भी दिखा दिया है; इसमें मुझे उसका हित दिखाई दिया। तुम्हारे पत्र इतने अच्छे लगे कि अब और किसीको नहीं दिखाऊँगा। इसके अलावा जिनमें केवल तुम्हारे आन्तरिक उद्गार हैं उन्हें मैं अकेला ही पढ़ूँगा और फिर फाड़ दूँगा।

१. पत्रसे स्पष्ट है कि यह जमनादास गांधीके १४ दिसम्बर, १९१२ को दक्षिण आफ्रिकासे भारतके लिए रवाना होनेके बाद ही लिखा गया होगा; और इस तिथिके बाद पड़नेवाली फाल्गुन सुदी ६ को १९१३ के मार्च महीनेकी १४ तारीख पड़ी थी।

तुम्हारे फोड़े अब अच्छे हो गये होंगे। जबतक तुम्हारा रक्त बिलकुल शुद्ध नहीं हो जाता और अनुभवके आधारपर जबतक तुम अपना अनुकूल आहार नहीं ढूँढ़ निकालते तबतक तुम्हें एक-न-एक रोग लगा ही रहेगा। यह [खराबी] प्रयत्नसे दूर की जा सकती है। मैं तुम्हें अपने साथ रखना चाहता था इसमें मेरा यह लोभ अन्तर्निहित था।

सोंठ हमारी व्यवस्थामें त्याज्य नहीं है किन्तु वह गुणकारी भी नहीं है। फलाहारी मनुष्यको उसका दुष्प्रभाव तुरन्त दिखाई दे जायेगा।

"अंग्रेजी सीखें तो पूरी सीखें" इस उक्तिसे यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि रेलमें यात्रा करें तो पहले या दूसरे दर्जेमें करें। अंग्रेजी शिक्षा शिक्षाके रूपमें बुरी नहीं है। रेलमें यात्रा करना सर्वथा बुरा है। इसलिए उसमें बैठना ही पड़े तो कष्ट सहकर बैठ जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त जहाँ असंख्य लोग विवश होकर कष्ट सहते हैं वहाँ हम ज्ञानपूर्वक कष्ट भोग लें — यानी, जहाँ कष्ट सहना अनीतिकर न हो वहाँ।

फार्ममें जो-कुछ खाया जाता था, वही सब फीनिक्समें माफिक नहीं आ सकता। तुम इसलिए बीमार हो गये कि आवश्यक परिवर्तन करने योग्य समयतक वहाँ नहीं रहे।

जहाजके प्रबन्धक डेकपर यात्रा करनेवाले यात्रियोंकी सँभाल रखनेके लिए बाध्य हैं।

तुम दूध और दहीको न छोड़ो, यह ठीक लगता है। किन्तु उन्हें प्रधानता न दो। ये प्रमाद बढ़ानेवाली वस्तुएँ हैं। भाई कोटवाल अब देशमें हैं। उनसे सम्पर्क स्थापित करना। वे अभीतक फलाहारी हैं। उनके अनुभवसे लाभ उठाना। वे इस सम्बन्धमें गहराईसे सोचेंगे और कुछ ऐसी नई शोध कर सकेंगे जो तुम नहीं कर सकोगे।

ब्राह्मणोंको मान देनेके लिए हमें अपनी आंतरिक भावना वैसी ही बनानी चाहिए और उनपर कटाक्ष न करना चाहिए जिस प्रकार किसी कुलीन कुटुम्बके मनुष्यको देखकर [किसी कारणसे] हमारे मनमें उसके प्रति दया उत्पन्न होती है और सम्मानका भाव भी बना रहता है। वेश्याके पुत्रके प्रति हमारे मनमें स्वाभाविक सम्मानका भाव नहीं होता। किन्तु मेरे कहनेका अर्थ यह नहीं है कि ब्राह्मणोंके दुराचारका समर्थन किया जाये। वे बेकार भीख माँगने निकलें तो उन्हें पढ़ते हुए उठकर चुटकी-भर अन्न देना पढ़ाईका हर्ज करना है। मैं इसमें ब्राह्मणका सम्मान हुआ नहीं मानूँगा, बल्कि इसे तुम्हारी भीरुता अथवा विचारहीनता मानूँगा। अब भी समझमें न आया हो तो फिर पूछना।

दोपहरका सोना प्रयासपूर्वक छोड़ना पड़े तो भी छोड़ देना। सोनेका बहुत जी हो तो स्नान कर लेना।

मैं स्कूलोंके या शिक्षाके विरुद्ध नहीं हूँ, बल्कि उनकी छापके[1] विरुद्ध हूँ। सरकारी स्कूलोंके विरुद्ध एक आपत्ति यह है।

१. अभिप्राय कदाचित् स्कूल और कालेजोंकी डिग्रियोंसे है, जिनके होने-भरसे व्यक्ति योग्य और न होनेसे अयोग्य माना जाने लगता है।

मास्टर सच्चरित्र नहीं हैं और छात्र उनसे अलग रहते हैं, यह दूसरी आपत्ति है। छात्रोंका समय कितने ही विषयोंमें व्यर्थ जाता है, यह तीसरी आपत्ति है, और ये स्कूल बहुत बार हमारी गुलामीकी निशानी बन जाते हैं, यह चौथी आपत्ति है।

पारसी-टोपी पारसियोंकी [ही] नहीं है; बल्कि हमारी [भी] है; भले ही उसे हमने उनसे लिया हो। हमारे पूर्वजोंने उसे लिया, यह उनकी भूल हो सकती है, किन्तु यह ऐसी बात नहीं है, जो अब सुधारी जाय। परन्तु हम नई टोपी अपनानेकी झंझटमें क्यों पड़ें? हंगरीकी टोपी या मुगलिया टोपी पहनना हमारे इस अभिमान और अहंभावका सूचक-सा है कि हम दूसरोंसे भिन्न हैं।

मेरा यह खयाल है कि मेरे [भारत] आनेके बाद भी प्रेस[1] जिस तरह चल रहा है, उसी तरह चलता रहेगा। कुमारी श्लेसिन और कुमारी वेस्टके अन्ततः भारत आनेकी सम्भावना है। श्री पोलक और श्री रिच तो वकालत करेंगे और दक्षिण आफ्रिकामें ही रहेंगे। श्री कैलेनबैकके सम्बन्धमें निश्चित नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है भाई कोटवाल तो मेरे साथ रहेंगे। सम्भव है, मणिलाल मेरे साथ ही रहे। वह खूब पढ़ता है। अभी उसकी पढ़ाई चलेगी। मुझे यह मोह है कि मैं उसे जितनी तेजीसे और जितनी अच्छी तरह पढ़ा सकता हूँ, वैसे कोई दूसरा उसे नहीं पढ़ा सकता और न पढ़ायेगा। जेकी बहन ठीक रहती है। फिलहाल मेरी गोद ली हुई वही एक लड़की है। वह डॉक्टर मेहताके बजाय मेरी लड़की अधिक है, इसलिए ऐसा जान पड़ता है कि मेरे साथ ही रहेगी।

तुम अपनी पोशाकमें विचित्रता न रखो। सिर ढँको, अँगरखा जरूरी जान पड़े तो पहनो और जरूरत जान पड़े तो जूते भी। जूतोंका उपयोग बाहर जाओ, तभी करो; घरमें तो नंगे पैर ही रहो। बाहर भी, ज्यादा गर्मी या सर्दी हो, उसके अलावा नंगे पैर रहो। इन सब बातोंपर आग्रह रखना जरूरी नहीं है। फिर भी जो बात अनुकूल आ गई हो, उसपर कायम रहना चाहिए।

अब तुम्हारे पत्रमें उठाये गये सवालोंके जवाब पूरे हो गये। अधिक लिखनेका समय नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे सम्बन्धमें मैंने जो आशाएँ बाँध रखी हैं वे पूरी हों, उन्हें पूरा करनेमें तुम्हारा मन दृढ़ हो और ईश्वर तुम्हारी सहायता करे।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६४२) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१. इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स।

३५८. एक सार्वजनिक उदाहरण

ऐसा एक सवाल उठाया गया था कि वाइसरॉयकी कौंसिलमें वम्वई विधान-सभाके गैर-सरकारी सदस्योंका प्रतिनिधित्व करनेके लिए श्री गोखलेका चुनाव अवैध है, क्योंकि लोकसेवा आयोग (पब्लिक सर्विस कमीशन)के एक सदस्यकी हैसियतसे वे सार्वजनिक कोषसे वेतन लेते हैं और इसलिए वे एक "सरकारी कर्मचारी" हैं। हमें मालूम हुआ है कि श्री गोखलेने अपना प्राप्य वेतन लेनेसे इनकार करके इस मामलेको अपने विशिष्ट ढंगसे समाप्त कर दिया है। ऐसी वातोंकी आशा उसी व्यक्तिसे की जाती है, जिसने अपना जीवन जन-सेवाके लिए उत्सर्ग कर दिया हो। हम उनके इस कार्यके लिए — जिसे वे तो सर्वथा स्वाभाविक मानेंगे — उन्हें वधाई नहीं वल्कि मातृभूमिको ऐसा महामना पुत्र पानेके लिए हृदयसे वधाई देते हैं। यह सच है कि ऐसी घटना दक्षिण आफ्रिकामें नहीं हो सकती क्योंकि यहाँ तो आयोगके सदस्योंको कानून द्वारा ही उन निर्योग्यताओंसे मुक्त कर दिया गया है, जो अन्यथा अपनी सेवाओंके लिए पारिश्रमिक ग्रहणके कारण उनपर लगतीं। किन्तु इस स्वशासित उपनिवेशमें भी, जहाँ सार्वजनिक नैतिकताके ऐसे दृष्टान्तोंका कमसे-कम पिछले कुछ वर्षोंसे वस्तुतः अस्तित्व ही नहीं रहा है, श्री गोखलेके उदाहरणका अनुकरण किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-३-१९१३

३५९. ब्रिटिश नौसेना

ब्रिटिश राज उसकी नौ-सेनापर टिका हुआ है, ऐसा लाखों अंग्रेजोंका ख्याल है। यूरोपके वहुत-से लोग भी ऐसा ही मानते हैं और ब्रिटिश साम्राज्यमें रहनेवाले लोगोंके मनपर यह वात अंकित की जाती है। इसके सम्वन्धमें संस्थाएँ वनाई गई हैं, और अखवार भी इसीसे भरे रहते हैं। नौसेना संघ (नेवी लीग) नामका एक वड़ा संघ वनाया गया है। नौसेना रखनेपर किया जानेवाला खर्च दिन-प्रतिदिन वढ़ता जा रहा है। अंग्रेज वालकोंको वचपनसे ही यह पढ़ाया जाता है कि इसमें कुछ भी वुराईकी वात नहीं है। नौसैनिकोंका गुणगान किया जाता है। उपनिवेशोंसे इसके खर्चका हिस्सा भी माँगा जाता है। इस खर्चके वारेमें संघ-संसदमें पिछले हफ्ते वहस हुई थी। इसमें श्री मेरीमैनने वहुत ही कटु और विचारणीय भाषण दिया। उन्होंने साफ-साफ कहा कि यूरोप तो पागल हो गया है। उसपर सेनाकी धुन सवार हो गई है। सेनाएँ वढ़ाना एक तरहकी वीमारी है। उनका विश्वास है कि इससे वेचारे गरीव पिसते रहते हैं। इसीलिए उन्होंने सलाह दी है कि

दक्षिण आफ्रिकाको इस पागलपनमें न पड़ना चाहिए। वे स्वयं अंग्रेज हैं; फिर भी ब्रिटेनकी नौसेनापर आधारित महत्ता उन्हें नहीं चाहिए। वे यह मानते हैं कि अंग्रेजोंकी महत्ताका कारण उनकी सेना नहीं है। उन्होंने जनरल बोथा और दूसरे लोगोंको सलाह दी कि दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश नौसेनाकी योजनासे बिलकुल सम्बन्ध न रखे। श्री मेरीमैन मानते हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें जो ब्रिटिश सेना रहती है, वह भी अनावश्यक है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–३–१९१३

३६०. जनरल बोथाका सुझाव

जनरल बोथा सचमुच किसान हैं, इसमें सन्देह नहीं है। यह तो सभी जानते हैं कि उनके पास हजारों एकड़ जमीन है। परन्तु वे इसीसे किसान नहीं बन जाते। नेटालमें एक बड़ी कम्पनी है, जिसके पास लाखों एकड़ जमीन है; किन्तु उस कम्पनीका एक भी व्यक्ति किसान नहीं है। वे सभी किसानोंके बलपर पैसा कमानेवाले लोग हैं। परन्तु जनरल बोथा तो स्वभावसे ही किसान लगते हैं। वे अपनी जमीनपर स्वयं काम करते हैं। उनको जमीनकी अच्छी जानकारी है। वे विभिन्न फसलोंके सम्बन्धमें सब बातें जानते हैं। घोड़ों और भेड़ोंके तो वे विशेषज्ञ ही माने जाते हैं। इतना ही नहीं उनके भाषणोंमें भी खेतीकी महिमाका उल्लेख होता है। उनका यह दृढ़ विश्वास जान पड़ता है कि दक्षिण आफ्रिकाका उद्धार सोनेकी खानोंसे नहीं होगा। कुछ लोग तो ऐसा भी मानते हैं कि सोनेकी खानोंका सोना कुछ बरसोंमें समाप्त हो जायेगा और जोहानिसवर्ग आदि शहरोंकी दशा वैसी ही हो जायेगी जैसी कुछ अमेरिकी शहरोंकी हुई है। इस विषयमें कुछ भी क्यों न हो, परन्तु जनरल बोथाने अभी हालमें जो भाषण दिया है, वह पठनीय है। उन्होंने उसमें अपना यह इरादा व्यक्त किया है कि यदि गोरे किसान अपनी जमीनोंमें स्वयं खेती नहीं करते तो उनसे उनकी जमीनें छीनकर योग्य लोगोंको दे दी जायेंगी। अवश्य ही दूसरे गोरे उन्हें यह कार्रवाई न करने देंगे। इसलिए इन विचारोंपर अमल तो होनेवाला नहीं है; फिर भी इन विचारोंकी कीमत विचार-रूपमें तो है ही। जनरल बोथा, जिन्हें खेतीके सम्बन्धमें इतना उत्साह है, अपने प्रभाव और अधिकारसे खेतीको खूब बढ़ावा दे सकते हैं। हम तो चाहते हैं कि हम लोगोंमें भी इस तरहका कुछ उत्साह उत्पन्न हो और हम भी खेतीकी ओर ध्यान देने लगें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–३–१९१३

३६१. ट्रान्सवालमें प्रवेशका अधिकार किसे है?

हमारे प्रतिनिधिसे उसके दौरेके समय बहुत-से पाठकोंने यह जाननेकी इच्छा प्रकट की कि ट्रान्सवालमें प्रवेशका अधिकार किसे है। यद्यपि इस बारेमें पहले भी जानकारी दी जा चुकी है, तथापि जानकारी दुबारा देनेसे पाठकोंको सुविधा होगी, इसलिए हम उक्त जानकारी फिरसे दे रहे हैं:

ट्रान्सवालमें अब केवल वे ही भारतीय प्रार्थनापत्र आदि दिये बिना प्रवेश कर सकते हैं, जिनके पास १९०८ या १९०७के पंजीयन कानूनके अन्तर्गत जारी किया गया प्रमाणपत्र हो। उन्हें सरहदपर अपना प्रमाणपत्र दिखा कर केवल यही सिद्ध करना पड़ता है कि वह प्रमाणपत्र उन्हींका है।

परन्तु यदि उनके साथ उनकी पत्नी या १६ सालसे कम उम्रका बच्चा हो तो उन्हें अधिकारीके सामने उनके सम्बन्धमें प्रमाण देना होता है। बहुत बार अधिकारी अत्याचार करता है, वह उन्हें आगे नहीं जाने देता; वे सरहदपर रोक लिये जाते हैं। फिर मजिस्ट्रेटके पास भी जाना पड़ता है। वकील करनेमें खर्च बैठता है। इस परेशानीसे बचनेका एक उपाय तो यह किया जाता है कि लोग पंजीयककी खुशामद करके पहलेसे अनुमतिपत्र ले लेते हैं। परन्तु इसका परिणाम बुरा निकला है। तमाम लोग ऐसा करने लगे हैं और अच्छे खासे प्रमाण रखनेवाले लोगोंको भी दिक्कत होने लगी है। इसका दूसरा उपाय यह है कि दिक्कत बरदाश्त की जाये और बाकायदा राहत प्राप्त की जाये। इसमें तात्कालिक परेशानी तो होगी; परन्तु आगे चलकर इससे आसानी हो जायेगी। यदि सब भारतीय इस उपायका आश्रय लें तो समस्या तत्काल हल हो जाये। यदि थोड़े ही लोग इसका आश्रय लेते हैं तो अपेक्षाकृत अधिक समय लगेगा। यह सवाल भी उठाया गया है कि इस सम्बन्धमें देशसे आनेवाले बच्चों और स्त्रियोंको क्या करना चाहिए। ट्रान्सवालमें बच्चोंके सम्बन्धमें अधिकारी निम्नलिखित ढंगका प्रमाण माँगते हैं:

(१) प्रथम श्रेणीके मजिस्ट्रेटका इस आशयका प्रमाणपत्र कि जिस बच्चेके पास प्रमाणपत्र है वह उसी व्यक्तिका बच्चा है जो उसके बापके रूपमें शिनाख्त दे रहा है।

(२) इस प्रमाणपत्रपर शिनाख्तके लिए बाप और बच्चेके अँगूठोंके निशान होने चाहिए।

(३) बच्चेकी आयुका प्रमाण भी होना चाहिए। प्रत्येक बच्चेकी जन्मतिथि बिलकुल ठीक-ठीक ही बताना आवश्यक नहीं है। जहाँ बच्चेकी उम्र उसके कदसे ही असंदिग्ध १६ सालसे कम लगती हो, वहाँ उम्रका प्रमाण देनेकी आवश्यकता नहीं है।

(४) प्रमाणपत्रमें यह स्पष्ट लिखा होना चाहिए कि मजिस्ट्रेटने बच्चेकी वल्दियतके बारेमें पूरा सबूत ले लिया है।

इतने प्रमाण तो सच्चे मामलेमें आसानीसे मिल सकते हैं और जो बाप अपने बच्चेको ट्रान्सवाल लाना चाहता है उसके लिए इस आशयका प्रमाणपत्र साथ रखना

उचित है। परन्तु यह याद रखना चाहिए कि जो लोग ऐसा प्रमाण न लाये हों, उनके हक इससे मारे नहीं जाते। प्रायः गरीब लोगोंको जो प्रमाण दक्षिण आफ्रिकामें मिल सकते हैं, वे देशमें नहीं मिल सकते।

स्त्रियोंके सम्बन्धमें भी ऐसे ही प्रमाणपत्रोंकी आवश्यकताकी बात सुनी जाती है। हमारी तो निश्चित सलाह यह है कि स्त्रियोंके अँगूठोंके निशान हर्गिज न दिये जायें। सरकारको स्त्रियोंकी शिनाख्त इतनी सख्तीसे करानेका कोई अधिकार नहीं है; क्योंकि इसका कोई कारण नहीं। भारतीय अनधिकारिणी स्त्रियोंको लाये हों, ऐसे उदाहरण देखनेमें नहीं आये हैं। इसका अर्थ यह है कि हमें अभी स्त्रियोंके सम्बन्धमें संघर्ष करना ही है। हमारी मान्यता यही है कि स्त्रियोंके सम्बन्धमें विवाहके प्रमाणपत्र होना पर्याप्त है; और हम जानते हैं कि जिन स्त्रियोंके पास ऐसे प्रमाणपत्र है उनके अधिकार कानूनके अन्तर्गत सिद्ध किये जा सकते हैं।

उक्त जानकारी ट्रान्सवालके सम्बन्धमें है। सवाल भी उसीके सम्बन्धमें उठाया गया है। परन्तु सामान्यतः नेटालके सम्बन्धमें भी यही बात लागू होती है। हम जानते हैं कि नेटालमें ज्यादा सख्ती है। नेटालके अधिकारियोंको अधिक सत्ता प्राप्त है। परन्तु जिसके पास ऊपर बताया गया प्रमाण हो, उसके लिए वह पर्याप्त होना चाहिए। इसके अतिरिक्त यह भी याद रखना चाहिए कि हम नेटालमें इस सख्तीके विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं। यदि भारतीय अपने स्वार्थके कारण नेटालके अधिकारीकी आज्ञाको मानेंगे तो उस हद तक ऐसी सत्ता मज़बूत होगी और संघर्षको धक्का पहुँचेगा। नियम ही यह है कि जहाँ गुलाम नहीं, वहाँ मालिक भी नहीं। जहाँ लोग गुलामी करनेके लिए तैयार हो जाते हैं, वहीं दूसरे व्यक्ति मालिक बननेके लिए खड़े हो जाते हैं।

दक्षिण आफ्रिकामें हमारी हालत अपनी शक्ति लगानेसे तत्काल सुधर सकती है। परन्तु यदि हम कमजोरी दिखायेंगे तो हम बिलकुल गिर जायेंगे। दूसरे उपनिवेशोंमें ऐसा नहीं है, क्योंकि दूसरे उपनिवेशोंमें स्थिति मध्यम है। इसलिए लोग यह अनुभव नहीं करते कि उनके पाँवोंमें बेड़ियाँ पड़ी हैं। यहाँ तो सभी भारतीयोंको अपनेतईं बेड़ियोंमें जकड़े हुए होनेका अहसास है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-३-१९१३

३६२. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-११]

[खुराक–चालू]

कितनी वस्तुएँ एकदम त्याग देने लायक हैं, यह हम देख चुके हैं। अव यह वतलाना रह जाता है कि दूसरे भी कुछ पदार्थ अन्य कारणोंसे त्याग देने या कम मात्रामें सेवन करने योग्य हैं। किन्तु इसपर विचार करना मुलतवी रखकर फिलहाल हम इस वातपर विचार करें कि हमारी खुराक क्या हो।

खुराककी वावत हम दुनियाको मोटे तौरपर तीन हिस्सोंमें वाँट सकते हैं: एक हिस्सा तो ऐसे मनुष्योंका है जो स्वेच्छासे अथवा अन्य सुविधा ही नहीं है, इसलिए वनस्पतिसे उत्पन्न पदार्थोंपर अपना निर्वाह करते हैं। सर्वाधिक संख्या ऐसे ही लोगोंकी है। इसमें हिन्दुस्तानका वहुत वड़ा भाग और यूरोप तथा चीन-जापानका एक वड़ा हिस्सा आ जाता है। इन लोगोंमें से थोड़े तो धर्मके कारण ही वनस्पति-जन्य पदार्थोंका सेवन करते हैं, पर वहुतेरे ऐसे हैं जो मांसादि न मिलनेके कारण उसके विना काम चलाते हैं और मौका पानेपर मांसादि रुचिपूर्वक खाते हैं। इटली, आयरलैंड और स्कॉटलैंडके वहुत-से लोग तथा रूसके गरीव लोग और चीनी तथा जापानी आदि इस श्रेणीमें आते हैं। इटलीका मुख्य खाद्य मकरोनी, आयरलैंडका आलू, स्कॉटलैंडका मटर और चीन तथा जापानका चावल माना जाता है। दूसरे हिस्सेमें वे लोग आते हैं जो वनस्पतिके साथ ही मांस-मछली आदि [दिनमें] एक या एकाधिक वार खाते हैं। इसमें इंग्लैंडका वहुत वड़ा भाग, भारतके मातवर मुसलमान और जिन्हें धर्मकी वाधा नहीं है, ऐसे हिन्दू तथा धनाढ्य चीनी और जापानी आदि आ जाते हैं। यह विभाग भी वहुत वड़ा है किन्तु पहले भागसे वहुत छोटा है। तीसरेमें अत्यन्त ठंडे प्रदेशोंमें रहनेवाली कुछेक जंगली मानी जानेवाली जातियाँ और कुछ सीदी भी हैं, जो निरे मांसाहारपर ही निर्वाह करते हैं। मानवताका यह अंश वहुत ही छोटा है और यह भी ज्यों-ज्यों यूरोपीय श्रमणार्थियोंके सम्पर्कमें आता जा रहा है त्यों-त्यों अपने आहारमें वनस्पतिका समावेश करता जा रहा है। इस वस्तुस्थितिके आधारपर हम केवल इतना ही अनुमान कर सकते हैं कि मनुष्य जीवित तो इन तीनों खाद्य-प्रणालियोंके सहारे रह सकता है; किन्तु हमें देखना यह है कि इनमें सर्वोपरि आरोग्यवर्धक आहार कौन-सा है।

शरीरकी रचनाको देखते हुए यह प्रतीत होता है कि प्रकृतिने मनुष्यको वनस्पतिका आहार करनेवाला वनाया है। दूसरे प्राणियोंके साथ हमारी तुलना करते हुए यह देखनेमें आया है कि हमारी [शरीर]-रचना अधिकांशतः फलाहारी जानवरोंके साथ मिलती है। उदाहरणके लिए वन्दरको ले लें। उसकी खुराक हरे और सूखे फल हैं। उसके दाँत और उसका पेट हमसे मिलते-जुलते हैं। [प्राणियोंको] फाड़कर खा जानेवाले जानवर सिंह, व्याघ्र आदिके दाँतों और पेटकी रचना हमसे भिन्न प्रकारकी

है। उनके-जैसे पंजे हमारे नहीं हैं। जो पशु मांसाहारी नहीं हैं, जैसे कि बैल इत्यादि, उनसे भी हमारी कुछ समानता है, किन्तु घासके एक बड़े गठ्ठेको हजम कर जानेके लिए उनकी-जैसी और उनकी जितनी अँतड़ियाँ आदि हमारे नहीं हैं। इसके आधार-पर बहुतसे शोधकर्ता यह कहते हैं कि मनुष्य न मांसाहारी प्राणी है और न वह चाहे जैसी वनस्पतिका आहार करनेके लिए ही बना है। वनस्पतिमें भी उसका मुख्य आहार तो फल आदि ही होने चाहिए।

रसायन-शास्त्रियोंने प्रयोगों द्वारा सिद्ध कर दिखाया है कि मनुष्यके निर्वाहके लिए आवश्यक सभी तत्व फलोंके द्वारा उसे मिल सकते हैं। केला, नारंगी, खजूर, अंजीर, सेव, अनानास, बादाम, अखरोट, मूँगफली, नारियल आदिमें स्वास्थ्यको बनाये रखनेवाले तथा शक्ति प्रदान करनेवाले सारे तत्व विद्यमान हैं। ये शोधकर्ता यह भी मानते हैं कि मनुष्यको पका कर भोजन करनेकी भी जरूरत नहीं है। दूसरे प्राणी केवल सूर्यके तापमें ही पकी हुई वस्तुओंपर निर्भर रह लेते हैं; यह मनुष्यके लिए भी सम्भव होना चाहिए। उनका तो यहाँ तक कहना है कि पकाये जानेके कारण खाने योग्य वनस्पतियोंका सत्व और पोषक तत्व नष्ट हो जाता है। वनस्पतियोंका एक विशेष गुण स्फूर्ति प्रदान करना है; यह आँचपर पकानेसे अंशतः नष्ट हो ही जाता है। ये ऐसा भी कहते हैं कि जिस वनस्पतिको हम पकाये बिना नहीं खा सकते, वह हमारा आहार ही नहीं हो सकती।

इतना तो निश्चित है कि यदि उपर्युक्त कथन ठीक हो तो हमारे घरोंमें — रसोई और भोजनादिमें जो समय जाता है, उससे बहुत कम समयमें यह काम निबटाया जा सकता है। हमारी स्त्रियोंका बहुतेरा समय और घरमें रसोई आदिमें फँसा हुआ स्थान बच सकता है और इस सबके परिणामस्वरूप हम अनेक प्रकारसे स्वतन्त्र हो सकते हैं तथा बचे हुए समय और पैसेका दूसरा अच्छा उपयोग कर सकते हैं।

किन्तु सब लोग रसोई बनाना छोड़ दें, अपनी स्त्रियोंको रसोईरूपी कैदखानेसे मुक्त करें, स्त्रियाँ स्वयं ही उस कैदसे मुक्त होना चाहें — यह सब स्वप्न-सा ही प्रतीत होता है; और कुछ लोग ऐसा भी कहेंगे कि जो हो नहीं सकता है, उसकी चर्चा ही किस लिए। सभी लोग ऐसा कर सकेंगे या नहीं, हम इस बातका विचार नहीं कर रहे हैं। अच्छा क्या है, इतना-भर विचार हम यहाँ कर रहे हैं। यदि हम सर्वोत्तम आरोग्यकी बातको समझ पायें तो सामान्य आरोग्य तो प्राप्त कर ही सकते हैं। सर्वोत्तम आहार कौन-सा है, इतना जान लें तो सामान्य रूपसे हमें क्या खाना चाहिए यह भी हम जान सकेंगे।

यूरोपमें भी इस विषयपर अनेक ग्रंथ लिखे जा चुके हैं। फलाहारके प्रयोग करनेवाले यूरोपीय भी देखनेमें आते हैं। कितने ही ऐसे लोगोंने अपने अनुभव प्रकाशित किये हैं। पर ये सब लोग किसी धार्मिक दृष्टिसे नहीं, केवल स्वास्थ्यकी दृष्टिसे ही फलाहारी बने हैं। जस्ट नामक एक जर्मन हैं। उन्होंने फलाहारपर एक सुन्दर ग्रंथ[1]

१. रिटर्न टु नेचर

लिखा है और अनेक उदाहरणों तथा दलीलों द्वारा सिद्ध कर दिखाया है कि फलाहार सर्वोत्तम आहार है। उन्होंने अनेक रोगियोंको फलाहार और खुली हवाके द्वारा अच्छा किया है। वे तो यहाँ तक कहते हैं कि जिस देशमें जो फल होते हैं, उन्हींसे मनुष्य अपना सम्पूर्ण पोषण प्राप्त कर सकता है।

यहाँ यदि मैं अपने ही प्रयोगका वर्णन करूँ तो कुछ अनुचित नहीं होगा। करीब छः माह हो गये, मैंने कोई अन्न नहीं लिया और निरा फलाहारी ही हूँ। दूध-दही भी नहीं लिया। मेरा आहार केले, मूंगफली, जैतूनका तेल और नीबू या वैसा ही कोई खट्टा फल और खजूर — यही रहा है। मैं यह तो नहीं कह सकता कि यह प्रयोग ठीक सफल हो पाया है। ऐसे महान परिवर्तनके परिणामोंको जाननेके लिए छः माहका समय काफी नहीं है; पर इतना तो कह ही सकता हूँ कि जहाँ दूसरे लोग बीमार पड़े हैं, मेरा स्वास्थ्य ठीक बना रहा है। इसके पहले मुझमें जो मानसिक और शारीरिक शक्ति थी, उससे आज कहीं अधिक है। शारीरिक शक्तिके सम्बन्धमें मुझे इतना तो कहना ही चाहिए कि जितना वजन मैं पहले उठा सकता था, शायद उतना आज नहीं उठा सकता, पर पहले मैं जितने घंटे मजदूरी कर सकता था आज उससे कहीं अधिक समय तक — बिना थके — परिश्रम कर सकता हूँ। मानसिक कार्य अभी बहुत अधिक करना पड़ता है, तब भी मैं उसे ठीक तौरसे कर पाता हूँ। कई रोगियोंपर भी मैंने यह खुराक आजमाई है। उसके परिणाम चमत्कारपूर्ण मिले हैं। उनका वर्णन मैं रोगके प्रकरणमें देनेका विचार करता हूँ। अतः दूसरोंके तथा मेरे अनुभवके आधारपर, और जो-कुछ मैंने पढ़ा-सोचा है, उससे इतना साबित होता है कि फल बहुत ही अच्छा आहार है।

मैं यह नहीं मानता कि यह अध्याय पढ़कर ही कोई पाठक फलाहारका प्रयोग करने लग जायेगा। मेरे इन लेखोंका शायद ही कुछ प्रभाव पाठकोंपर पड़े। किन्तु मुझे अपनी धारणाके अनुसार जैसा-कुछ ठीक लगा है, उसे प्रकट कर देना अपना कर्त्तव्य जान पड़ता है।

यदि कोई पाठक फलाहारका प्रयोग करनेका विचार करे तो उसे मैं जल्दबाजी न करके धीरे-धीरे चलनेकी सलाह दूंगा। वह पहले सारे प्रकरण पढ़ डाले और तब उनका निष्कर्ष निकाल कर जो करना हो करे।

अगले प्रकरणमें हम दूसरे दर्जेके आहारके सम्बन्धमें विचार-विमर्श करेंगे। मेरी समझमें उसके अनुसार चलना अधिक आसान होगा और यह प्रकरण भी उसके बाद ही ठीक समझमें आ पायेगा।

जो पाठक इन प्रकरणोंको ध्यानपूर्वक पढ़ रहे हैं, उनसे मेरी इतनी प्रार्थना है कि वे अपना अन्तिम निर्णय इन प्रकरणोंके समाप्त हो जानेपर ही करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–३–१९१३

३६३. लॉर्ड ऍम्टहिल द्वारा हमारा पक्ष-पोषण

उस दिन लॉर्ड ऍम्टहिलने लार्ड सभामें माननीय श्री गोखलेकी दक्षिण आफ्रिका-यात्रासे सम्बन्धित कागजात देखनेको माँगे।[1] इस श्रेष्ठ पुरुषके मनमें हमारे कार्यके प्रति जो महान् एवं अथक उत्साह है, इसके लिए हम एकाधिक बार भारतीय समाजकी ओरसे कृतज्ञता प्रकट कर चुके हैं। वे ऐसा कोई अवसर कभी नहीं चूके, जब हमारी समस्याकी ओर वे लार्ड सभाका ध्यान आकर्षित करके कुछ लाभ उठा सकते थे; और प्रत्येक भारतीय जानता है कि लॉर्ड महोदयका कार्य हमारे लिए कितना सहायक सिद्ध हुआ है, और उससे मुसीबतोंके बीच हमें किस प्रकार प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है। उनका सबसे ताजा प्रयत्न, जिसका पूरा विवरण हम अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं, श्री गोखलेके दौरेपर आधारित था। लॉर्ड ऍम्टहिलको यह बात गवारा नहीं थी कि श्री गोखलेकी यात्रा बिना किसी ठोस परिणामके लोगोंके दिमागसे उतर जाये। वे इस बातके लिए उत्सुक थे कि यात्राके कारण जो अच्छा वातावरण बना है, उसका पूरा उपयोग ऐसे नये कानून बनवानेके लिए और वर्तमान कानूनोंके अमलको ऐसा रूप देनेके लिए किया जाये, जिससे जो मुसीबतें हमपर निरन्तर लादी जा रही हैं, हमें उनसे राहत मिले। प्रसंगवश उन्होंने श्री गोखलेके व्यक्तित्व एवं योग्यताके प्रति शानदार श्रद्धांजलि अर्पित की। हमें दुःख है कि लॉर्ड एमॉट, जो सरकारकी ओरसे बोले, अवसरके अनुरूप ऊँचे नहीं उठ सके। वे लॉर्ड ऍम्टहिलके उद्गारोंकी उदात्त और मित्रतापूर्ण भावनाको ग्रहण नहीं कर पाये, अतः उन्होंने अत्यन्त रूखा उत्तर दिया। वे बहुत-सी बातोंपर बिलकुल चुप रहे और किसी बातका वादा नहीं किया। उपनिवेशकी भावनाका जरूरतसे ज्यादा खयाल करना और भारतीयोंकी भावनाकी उपेक्षा करना ही वह प्रवृत्ति है जो हमें इतना व्यथित करती है और इसी बातके कारण

१. लॉर्ड ऍम्टहिलने ११ फरवरी, १९१३ को लॉर्ड सभामें पूछा था कि क्या साम्राज्य-सरकारको सरकारी तौरपर ऐसी कोई जानकारी मिली है, जिससे अखबारोंके इस समाचारकी पुष्टि होती हो कि श्री गोखलेकी दक्षिण आफ्रिका-यात्रा सफल रही। उन्होंने इस बातकी जिज्ञासा करते हुए कि क्या ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नका निकट-भविष्यमें कोई सन्तोषजनक हल निकलनेकी आशा है, श्री गोखलेकी यात्रासे-सम्बन्धित कागजात दिखानेकी भी माँग की। उन्होंने इस प्रश्नको साम्राज्यीय हितकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्वपूर्ण बताया और कहा कि इसके बने रहनेसे भारतीयोंमें बड़ा असन्तोष फैला हुआ है, जिसका प्रबलतम रूप १९११ के कांग्रेस अधिवेशनमें प्रकट हुआ। उन्होंने यह भी पूछा कि इस यात्राके परिणाम-स्वरूप जो सद्भावनाका वातावरण तैयार हुआ है, उसका लाभ उठानेके लिए सरकारने क्या-कुछ किया है? उपनिवेश उप-मन्त्री लॉर्ड एमॉटने इसका औपचारिक और रूखा-सा जवाब देते हुए कहा कि गोखलेने गैर-सरकारी तौरपर यात्रा की थी, उन्होंने मन्त्रियोंसे जो निवेदन किया था उसका स्वरूप अनौपचारिक था और सदनके सामने रखनेके लिए तत्सम्बन्धी कोई कागज नहीं है। **इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३।**

हमें यह सोचनेके लिए बाध्य होना पड़ता है कि हमें अपने ही साधनोंपर निर्भर रहना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३

३६४. हिन्दू और मुसलमान सावधान हो जायें

सारा सवाल यह था कि क्या मुस्लिम प्रथाके अनसार विवाहित पत्नी प्रवासी अधिनियमके अर्थमें पत्नी है। न्यायाधीशने निर्णय दिया है कि ऐसी अर्जी निश्चित रूपसे अस्वीकृत कर दी जानी चाहिए, क्योंकि यह विवाह प्रवासी कानूनकी शर्तोंको पूरा नहीं करता।

'केप आर्गस' ने इसी आशयकी रिपोर्ट दी है। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको इससे ज्यादा स्पष्ट और महत्वपूर्ण फैसलेसे शायद ही कभी वास्ता पड़े। अभीतक विवाहके सवालपर असर डालनेवाले जितने भी फैसले हुए, वे सब न्यूनाधिक दुर्बोध ही थे — उनका आशय अदृष्ट नहीं होता था। इसी बार यह सवाल साफ तौरपर सीधे-सीधे पेश किया गया था। यह मुकदमा कसौटीके रूपमें किया गया था और इसमें फैसला हम भारतीयोंके विरुद्ध दिया गया है।[1] यह फैसला किसी एक व्यक्तिके विरुद्ध नहीं है। और इसमें भी सन्देह नहीं कि न्यायाधीश और कुछ नहीं कर सकता था। प्रवासी-अधिकारीको भी दोष नहीं दिया जा सकता। उसे तो अधिनियमपर अमल करना था और उसने उसपर अमल किया। इस फैसलेका मतलब है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंकी सभी पत्नियाँ दक्षिण आफ्रिकामें गैर-कानूनी तौरपर रह रही हैं; और इसलिए वे सरकारकी दयापर आश्रित हैं। वे इस देशमें केवल सरकारकी कृपासे रह सकती हैं। और अगर भविष्यमें भारतीय पत्नियाँ — चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान अथवा पारसी — निकाल बाहर की जायें तो खुद हमारे सिवा और किसीको उसके लिए दोष नहीं दिया जायेगा। यह एक ऐसी स्थिति है जिसे हमारा आत्मसम्मान हमें सहन नहीं करने देता। हम आशा करते हैं कि हर एक अंजुमन, हरएक संघ और प्रत्येक धर्मसभा सरकारके पास सम्मानपूर्ण आवेदन भेजेगी कि नये प्रवासी-विधेयकमें इस प्रकार परिवर्तन किये जाने चाहिए कि प्रतिष्ठित भारतीय धर्मोंके अनुसार किये गये विवाह कानून-सम्मत माने जायें। यह प्रार्थना तुरन्त स्वीकार की जानी चाहिए — सो न केवल इसलिए कि हम ब्रिटिश साम्राज्यके अंग हैं, वरन् इसलिए भी कि यह अन्तर्राष्ट्रीय सौजन्यके मान्य नियमोंके अनुसार होगा।

वास्तवमें यह सत्याग्रहियोंके सामने एक गम्भीर प्रश्न प्रस्तुत करता है। अर्थात् क्या उन्हे अपनी माँगोंमें इस अचिन्तित किन्तु असहनीय कष्टके निराकरणकी बात भी शामिल नहीं कर लेनी चाहिए? जो भी हो, यह एक ऐसा सवाल है जो भारतीयोंसे उनके सर्वस्वकी — उनके व्यापार, उनके धन, उनके आराम, सबकी — कुर्बानी

१. देखिए अगला शीर्षक

माँगता है। उनके या उनके भाइयोंके विवाहोंको अवैध करार दिया जाये, इस कीमत-पर तो अपना यह सर्वस्व बचाना उनके लिए काफी मँहगा सौदा करने जैसा होगा। उन्हें किसी भी बातकी परवाह किये बिना शीघ्र ही इस दिशामें उत्साहपूर्वक क्रिया-शील हो जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३

३६५. भारतीय धर्मोंपर हमला

'केप टाइम्स' में स्त्रियोंके सम्बन्धमें एक फैसला अभी छपा है। हमने ऐसा महत्वपूर्ण और गम्भीर फैसला अबतक कभी नहीं पढ़ा या देखा। बाई मरियम नाम-की एक स्त्री है। वह मुस्लिम शरीयतके मुताबिक ब्याही गई है। उसका पति उसे देशसे लेकर आया। प्रवासी-अधिकारीने उसे प्रवेश करनेसे रोक दिया। उसने कारण यह बताया कि उसका ब्याह कानूनके मुताबिक हुआ नहीं माना जा सकता। यह मुकदमा परीक्षणात्मक मुकदमा माना गया था। सवाल एक ही था। ईसाई धर्मसे भिन्न इस्लाम या किसी अन्य धर्मके अनुसार किया गया विवाह कानूनसम्मत माना जा सकता है या नहीं? जजने फैसला दिया कि ऐसा विवाह कानूनसम्मत नहीं माना जा सकता। और इसलिए इस स्त्रीको केपमें दाखिल होनेका हक नहीं है। इस स्त्रीको वापस जानेकी आज्ञा दी गई है। इस फैसलेका अर्थ यह है कि दक्षिण आफ्रिकामें जितनी हिन्दू या मुसलमान पत्नियाँ हैं उन सबका इस देशमें रहनेका हक आजसे रद हो गया है। इसका अर्थ यह है कि जो हिन्दू, मुसलमान या पारसी स्त्रियाँ इस देशमें रहती हैं वे सिर्फ सरकारकी मेहरबानीसे। यह बहुत साफ है कि अबसे सरकार पत्नियोंको न आने देगी अथवा आने देगी तो वह उसकी बड़ी मेहरबानी ही मानी जायेगी। हम इससे अधिक हीन अवस्थाकी कल्पना नहीं कर सकते।

इसका इलाज हमारे ही हाथमें है। प्रत्येक अंजुमन, धर्म-सभा या अन्य संघ विनम्रतापूर्वक सरकारसे इस कानूनमें संशोधन करने और भारतीय धर्मोंके अनुसार किये गये विवाहोंके कानूनसम्मत माने जानेकी माँग करे। जो समाज अपनी स्त्रियोंकी और जो व्यक्ति अपनी पत्नीकी प्रतिष्ठाकी रक्षा नहीं कर सकता उसकी अवस्था पशुसे भी गई-बीती मानी जाती है। हम जानते हैं कि स्त्रियोंकी प्रतिष्ठाकी खातिर बहुत-सी लड़ाइयाँ हुई हैं और हमारा भी स्त्रियोंकी प्रतिष्ठाकी रक्षामें अपना सर्वस्व खो देना ज्यादा नहीं माना जायेगा।

इस मामलेमें ऊपरकी अदालतमें अपील करनेकी सलाह हम नहीं दे सकते। ऊपरकी अदालत क्या कर सकती है? हमें यह मामला ऐसा नहीं लगता कि अदालत एक बार फिर हमारे विरुद्ध फैसला दे, तभी हम सरकारके पास जायें।

यदि हम इस समय अपनी धन-दौलत, माल-मता और घर-द्वार, सबको दाँव-पर लगाकर लड़ें तो वह भी कोई बड़ी बात न होगी। इन सबको हम अपने सुखके लिए संचित करते हैं। यदि प्रतिष्ठा ही चली गई तो सुख कहाँ और सुखके लिए संचित धनका उपयोग न करें तो हमारे-जैसा दरिद्र और कौन होगा?

इस मामलेपर सत्याग्रहियोंको भी विचार करना चाहिए। विचारणीय यह है कि उन्हें अपनी मांगोंमें इस प्रहारको रोकनेकी भी एक माँग जोड़नी चाहिए या नहीं। हम आशा करते हैं कि इस स्थितिमें कोई भी भारतीय अपना पाँव पीछे न हटायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३

३६६. सरकारका रुख

संघ-सरकारका रुख कैसा है, यह हमें अनेक उदाहरणोंसे मालूम हो सकता है। श्री इब्राहीम मुहम्मद कासिमका हसन नामका एक तेरह सालका लड़का है। उसकी उम्रके बारेमें शक करनेका कोई कारण दिखाई नहीं देता। फिर भी श्री स्मिथने उस लड़केको इस देशमें उतरनेकी आज्ञा देनेसे इनकार कर दिया है और उसके वकीलको सूचित किया है कि उन्हें आदेश मिला है कि वे उन अवयस्कोंको, जिनके जन्मका प्रमाणपत्र भारतसे न आया हो, देशमें हर्गिज न आने दें। इसपर लड़केके बापने निषेधाज्ञा ले ली है। अब यह मुकदमा अदालतमें जायेगा। परन्तु हमें तो यही देखना है कि संघ-सरकारका भाव हमारे प्रति कैसा है। भारतमें रजिस्टरमें जन्म दर्ज करानेकी प्रथा नहीं है, इसलिए सैकड़ों बच्चोंके जन्मके ठीक-ठीक प्रमाणपत्र प्राप्त नहीं किये जा सकते। संघ-सरकार इस तथ्यसे अपरिचित नहीं होगी। फिर भी जब उसने प्रमाणपत्रके बिना प्रवेश न करने देनेकी आज्ञा निकाली है तो उसका अर्थ यही है कि हमें तरह-तरहके कष्ट देकर बच्चोंका आना बन्द कर दिया जाये। स्त्रियोंके सम्बन्धमें तो हम लिख ही चुके हैं। अब बच्चोंको भी परेशान किया जायेगा। इसका परिणाम अन्तमें यही होगा कि हमें यहाँसे निकल जाना पड़ेगा। इसका उपाय [भी] हमारे ही हाथमें है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३

३६७. लॉर्ड सभामें हमारा सवाल[1]

अबतक लार्ड सभामें लॉर्ड ऍम्टहिल द्वारा फिर हमारा सवाल उठाये जानेकी बातका विवरण मिल चुका है। ये महोदय हमारी ओरसे संघर्ष करनेका एक भी अवसर नहीं चूकते। उनके भाषणोंसे प्रकट होता है कि उनके मनमें हमारे कामके प्रति कितना उत्साह है। उन्होंने श्री गोखलेकी इस देशकी यात्राका लाभ उठाकर हमारे सवाल की चर्चा की थी। इसमें उन्होंने श्री गोखलेकी बहुत प्रशंसा और यहाँ बनाये गये कानूनोंके अमलकी आलोचना की। लॉर्ड एमॉटने सरकारकी ओरसे उत्तर दिया; खेद है कि उन्होंने लॉर्ड ऍम्टहिलके कथनका आशय नहीं समझा और बड़ा

१. देखिए "लॉर्ड ऍम्टहिल द्वारा हमारा पक्ष-पोषण", पृष्ठ ४९२।

ही उत्साह-शून्य उत्तर दिया। इस उत्तरको पढ़नेवालेके मनपर यही प्रभाव पड़ता है कि वे उपनिवेशोंसे डरते हैं और जब उपनिवेशोंके स्वार्थपर आँच आते दीखती है तब वे भारतके हितकी उपेक्षा कर देते हैं। यह कोई मामूली जुल्म नहीं है; ऐसे बरतावसे भारतका मन खट्टा होता है। लॉर्ड ऍम्टहिलके भाषणसे हमें यह भी स्पष्ट होता है कि इंग्लैंडकी समिति बहुत उपयोगी है। हम बता चुके हैं कि अब इस समितिका खर्च चलानेके लिए हमारे पास धन नहीं रहा है। श्री गोखले इसकी जिम्मेदारी लेनेके लिए तैयार हैं, हम यह भी लिख चुके हैं। परन्तु हमें चाहिए कि हम उन महानुभावको समितिके खर्चके लिए कुछ-न-कुछ रकम तो भेजें ही। हमने भारतीयोंसे जो अपील की है, उसकी प्रतिक्रिया अभीतक तो निराशाजनक ही रही है। हमें आशा है कि जो लोग इस समितिका महत्व समझते हैं, वे अब कुछ-न-कुछ करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३

३६८. मलय बस्तीका झगड़ा

जब दो पक्ष लड़ते हैं तब कभी-कभी तीसरे पक्षको उसका लाभ मिल जाता है। मलय बस्तीके सम्बन्धमें ऐसा ही होता दीखता है। जोहानिसबर्गके भारतीयोंको मालूम होगा कि मलय बस्तीका कुछ भाग रेलवेको दे दिया गया है। नगरपालिकाने अबतक रेलवेकी ओरसे इस मलय बस्तीका किराया उगाहा है। रेलवेका इरादा इस बस्तीके उक्त भागमें से धीरे-धीरे भारतीयोंको निकाल देनेका है। इस अनिश्चित स्थितिके कारण ही नगरपालिका जो सुधार करना चाहती थी वह रुक गया था। नगरपालिकाने रेलवेसे इस सम्बन्धमें कोई समझौता करनेका बहुत प्रयत्न किया; परन्तु रेल-अधिकारियोंने सहयोग नहीं किया। इससे नगरपालिका चिढ़ गई और उसकी रेलवे-समितिने यह प्रस्ताव पेश किया है कि नगरपालिका अबसे रेल-विभागकी सहायता करे। नगरपालिका बस्तीमें शुरू किये गये सुधारोंको जारी रखना चाहती है और रेलवेकी ओरसे किराया वसूल करनेसे भी इनकार कर देना चाहती है। यदि यह प्रस्ताव मंजूर हो जाये और भारतीय अपना कर्त्तव्य ठीक तरहसे निभायें तो कोई मलय बस्तीको हाथ भी नहीं लगा सकेगा। भारतीयोंका कर्त्तव्य है कि वे बस्तीमें जो गन्दगी फैलाते रहते हैं वह न फैलायें। किरायेके लोभसे वे मकानोंको न बिगाड़ें और जितनी सफाई रखी जा सके, उतनी सफाई रखें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३

३६९. फ्रीडडॉर्पका मुकदमा

इस मुकदमेमें श्री वकलने फैसला एक चीनीके पक्षमें दिया है, और खर्च भी दिलाया है।[1] फैसलेमें श्री वकलने लिखा है कि यह नहीं कहा जा सकता कि [सम्बन्धित] चीनी फ्रीडडॉर्पमें रहता है; वह तो एक गोरेका नौकर है। व्यापार गोरेका है। गोरा अपनी दूकानपर आता है। इसलिए वहाँ निवास तो गोरेका ही कहा जायेगा। यदि "निवास" शब्दका अर्थ इससे विपरीत किया जाये तो किसीके घरमें पाँच मिनट कुर्सीपर बैठनेवाला रंगदार आदमी भी वहाँका निवासी माना जायेगा। यह माननेका कोई कारण नहीं है कि कानून बनानेवालोंके मनमें ऐसा अर्थ रहा होगा। यदि चीनी फ्रीडडॉर्पमें सोता या खाता-पीता या व्यापार करता होता तो उसपर यह अभियोग लग सकता था। फ्रीडडॉर्पके विनियमोंमें रंगदार लोगोंको व्यापारमें नौकर रखनेकी मनाही नहीं है। इस फैसलेसे इतना ही निष्कर्ष निकलता है कि फ्रीडडॉर्पमें व्यापार करनेवाला गोरा चाहे जितने रंगदार लोगोंको नौकर रखकर व्यापार चला सकता है, परन्तु कोई रंगदार आदमी फ्रीडडॉर्पमें घर बनाकर नहीं रह सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३

३७०. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-१२]

[खुराक-चालू]

फलाहारके बाद दूसरे दर्जेका आहार वनस्पतियाँ हैं। इनके अन्तर्गत सब प्रकारकी हरी सब्जियाँ, धान्य, दाल और दूध आदिका समावेश होता है। जिस प्रकार फलाहारके द्वारा मनुष्यको आवश्यक आहारतत्त्व प्राप्त हो जाते हैं, ठीक उसी प्रकार वनस्पतिसे भी। तो भी दोनोंका परिणाम एक-सा नहीं है। हमें जो तत्त्व आहारके द्वारा प्राप्त होते हैं, उनमें अनेक तो हवामें भी हैं, पर हम उन्हें हवासे प्राप्त करके आहारके पदार्थोंके बिना अपना निर्वाह नहीं कर सकते। वैसे वनस्पति-मात्र पकाई जानेपर अपने असली तत्वको खो देती है और एक हद तक निस्सत्व बन जाती है। पर

१. फ्रीडडॉर्प नगरपालिकाने बाड़ा नं० ४९५ से आह काइ नामक एक चीनीको हटा देनेकी दृष्टिसे इस बिनापर मुकदमा दायर किया था कि वह एशियाई है और अपने गोरे मालिकका मुस्तकिल नौकर न होकर थोड़े समयके लिए रखा गया नौकर है। निर्णय आह काईके पक्षमें हुआ; **इंडियन ओपिनियन**, २२-३-१९१३।

हम वनस्पतिको प्रायः विना पकाये खा नहीं सकते। तो भी यदि मनुष्यको पकाया हुआ अन्न खाना है और साग-सब्जियोंके विना भी उसका काम नहीं चल पाता, तो उनमें कौन-कौन-से पदार्थ ठीक हैं, इसकी छानवीन कर लेना उचित होगा।

सारे अनाजोंमें गेहूँ सर्वोपरि हैं। अकेला गेहूँ खाकर भी मनुष्य अपना निर्वाह कर सकता है। उसमें पोषण प्रदान करनेवाले सारे तत्व समुचित परिमाणमें हैं। उसके अनेक प्रकारके पदार्थ भी वन सकते हैं और पचनेमें भी वह सहज है। वच्चोंके लिए तो तैयार खाद्य मिलते हैं, उनमें भी थोड़ा परिमाण गेहूँका होता ही है। गेहूँकी श्रेणीमें ही वाजरा, ज्वार और मक्की आते हैं, और इन सभीसे रोटी या चपाती बनाई जा सकती है; यद्यपि ये सारे अनाज गेहूँकी बराबरी नहीं कर सकते। गेहूँका सेवन किस प्रकार किया जाये, इसे समझ लेना चाहिए। मैदा, जिसे हम मिल-फ्लोरके नामसे जानते हैं, एकदम वेकाम वस्तु है। उसमें कोई सत्व नहीं होता। उसके सम्बन्धमें डॉक्टर एलिन्सन यह कहते हैं कि उन्होंने एक कुत्तेको इस खुराकपर रखा और वह मर गया। पर दूसरे आटेकी रोटीपर कुत्ता वरावर जीता रहा। सफेद आटेमें से गेहूँका दलिया निकाल दिया जाता है और स्वाद तथा पौष्टिक तत्व तो दलियेमें होता है। वैसे मैदेकी रोटीका प्रचलन बहुत है। इसका कारण यह मालूम होता है कि उसके साथ खानेपर दूसरी चीजोंका स्वाद और भी खुल जाता है। उदाहरणार्थ पनीरको खानेवाले उससे पौष्टिक तत्व प्राप्त करते हैं। किन्तु वे उसे ज्यादातर रोटीके साथ खाते हैं। मैदेकी रोटी अच्छी नहीं होती। वह चीमड़ वनती है और उसमें न स्वाद होता और न कोई सत्व। **सवसे अच्छा आटा तो वह है जो ठीकसे साफ किये गये गेहूँको पीसकर घरमें तैयार किया गया हो, और वह भी यदि पत्थरकी चक्कीसे हाथसे पीसा गया हो तो सवसे अच्छा।** जिन्हें पत्थरकी साधारण चक्की ठीक न पड़े वे थोड़ा पैसा लगाकर ऐसी यन्त्र-चक्की घरमें लगा लें जिसका चक्का हाथसे घुमाया जा सकता हो। अथवा वे वाजारसे विना छना वोर-मील लेकर उसका उपयोग कर सकते हैं। पिसा हुआ आटा, विना छना ही, उपयोगमें लेना चाहिए। इस आटेकी रोटी सुस्वाद और पौष्टिक होती है। यह सफेद आटेसे अधिक दिनतक टिकता भी है। इसमें सत्व अधिक होता है, इसलिए इसका मैदेसे कम परिमाणमें उपयोग करने पर भी काम चल जाता है।

वाजारकी रोटी विलकुल वेकाम होती है, यह वात ध्यानमें रखनी चाहिए। वह चाहे सफेद हो चाहे भूरी, उसमें मिलावट होती है। और फिर वह खमीर डालकर आटेको सड़ाकर वनाई जाती है। यह अन्य बड़ा दोष है। आटेको फुलाकर बनाई हुई रोटी हानिकारक होती है, ऐसा अनेक अनुभवी लोगोंका कहना है। वाजारकी रोटीको तैयार करते समय उसपर माँड और चरवी चुपड़ी जाती है, इस कारणसे भी वह हिन्दू तथा मुसलमान, दोनोंके लिए त्याज्य होनी चाहिए। **घरपर पकाई रोटी या चपातीके वजाय वाजारकी रोटीसे पेट भरना तो अहदीपनकी साफ निशानी है।**

गेहूँ खानेका दूसरा अच्छा और सरल तरीका यह है कि गेहूँको मोटा-मोटा दलकर या दलवाकर उसका दलिया बनाकर खाया जाये। दलियेको पानीमें खूब

सिझाकर उसमें दूध या शकर मिलाकर खाया जाये तो वह सुस्वादु तो होता ही है, आहारके रूपमें भी वह दूसरे आहारोंसे अच्छा है।

चावलमें [बहुत] सत्व देखनेमें नहीं आता। और इस विषयमें शंका भी है कि निरे चावलपर मनुष्य अपना निर्वाह कर सकता है या नहीं। उसके साथ दूध, घी या दाल आदि पदार्थ हों, तभी निर्वाह हो सकता है। गेहूँको तो कोरे पानीमें पकाकर भी उसके सेवनसे तन्दुरुस्त रहा जा सकता है।

भाजियाँ तो हम मुख्य रूपसे स्वादके लिए ही खाते हैं। वे गुणमें रेचक होती हैं, अतः उनमें अंशतः रक्त शुद्ध करनेका गुण है। तथापि वे घासकी जाति-की होनेके कारण पचनेमें भारी होती हैं और पेटके लिए अतिरिक्त भाररूप होती हैं। सभीको अनुभव होगा कि जो लोग भाजी-पात अधिक मात्रामें खाते हैं वे काठीसे ढीले-ढाले होते हैं और उन्हें हम "पिलपिलीसा'ब" कहते हैं। उन्हें बारम्बार अपचनकी शिकायत होती है और वे अजीर्णकी औषधियाँ लेते रहते हैं। कुछ-कुछ भाजियाँ तो निरी घास होती हैं, यह हम भली-भाँति देख सकते हैं। अतः हरी भाजियाँ खाई भी जायें तो बहुत ही कम खाई जायें — इतना स्मरण रखना चाहिए।

द्विदल धान्य — चना-मटर, सेम, अरहर, मोठ-मूंग, मसूर आदिका आहार बहुत भारी माना जाता है। इन्हें पचानेमें बड़ी कठिनाई पड़ती है। इन्हें पचानेके लिए जठराग्नि अत्यन्त प्रबल होनी चाहिए। इनका सेवन करनेवाले मनुष्यको बारम्बार अपान छूटते रहते हैं। इसका मतलब यही हुआ कि उसे वह बर्दाश्त नहीं हो पाया। द्विदल धान्योंको हम वातकारक मानते हैं, सो इसीलिए। इन अनाजोंपर लम्बी मुद्दत तक रहा जा सकता है। जिस मनुष्यको बहुत शारीरिक श्रम करना पड़ता हो, वह इन्हें ठीक तौरसे पचा सकेगा और उनसे लाभ भी उठा सकेगा। किन्तु हम सर्वसाधारण लोग कम मेहनत करनेवाले लोग हैं, अतः हमसे उनका सेवन अधिक मात्रामें नहीं हो सकता। मजदूर और गद्दी-तकिये लगाकर बैठनेवाला — ये दोनों एक ही प्रकारका और एक-सी मिकदारका भोजन कदापि नहीं कर सकते।

इंग्लैंडमें डॉ० हेग एक प्रख्यात डॉक्टर हैं। उन्होंने अनेक प्रयोगों द्वारा सिद्ध कर दिखाया है कि दाल आदि बहुत हानिकारक पदार्थ हैं। उनके सेवनसे हमारे शरीरमें एक प्रकारका एसिड पैदा होता है और उससे अनेक रोग पैदा होते हैं और बुढ़ापा भी बड़ी जल्दी आ जाता है। ऐसा होनेके उन्होंने अनेक कारण बताये हैं, किन्तु उन्हें यहाँ गिनानेकी आवश्यकता नहीं। स्वयं मेरा अनुभव तो यही बताता है कि दालोंका सेवन हानिकारक है। इतना होनेपर भी जिनसे इनका स्वाद नहीं छोड़ा जा सके, उन्हें इनका सेवन विचारपूर्वक करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-३-१९१३

३७१. पत्र : गृह-मन्त्रीके निजी सचिवको[1]

फीनिक्स
नेटाल
मार्च २४, १९१३

माननीय गृह-मन्त्रीके निजी सचिव
केप टाउन

प्रिय महोदय,

दो मामले ऐसे जरूरी हैं जिनके बारेमें मुझे लगता है, आपको आवश्यक जानकारी देनेके लिए लिखना उचित होगा। मुझे माननीय गृह-मन्त्री, श्री फिशरकी बीमारीका पता था — आशा है अब वे स्वस्थ हो रहे होंगे — इसीलिए उनके स्थानपर काम करनेवाले मंत्री महोदयको कष्ट देनेकी मेरी इच्छा नहीं हुई। लेकिन पूछनेवाले बहुत आग्रह कर रहे हैं। इसलिए उन्हें नीचे लिखी बातोंकी जानकारी देनेकी कृपा करें :

बहुत अरसा हुआ, एशियाई पंजीयक (रजिस्ट्रार) ने मुझे यह लिखा था कि उन्होंने अस्थायी समझौतेकी शर्तोंके अनुसार पिछले वर्षके लिए शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंको जो अनुमतिपत्र (परमिट) दिये जाने हैं उनसे सम्बन्धित पत्र-व्यवहार माननीय मन्त्रीको भेज दिया है। पंजीयकने प्रवेशार्थियोंके छः नामोंमें से, जो मैंने सत्याग्रहियोंसे और ब्रिटिश भारतीय संघसे सलाह करके भेजे थे, दो नाम नामंजूर कर दिये हैं। मैंने यह प्रार्थना की है[2] कि ये नाम बहाल कर दिये जायें, क्योंकि समझौतेमें यह बात भी मानी गई है कि प्रवेशार्थियोंके नामोंको वे लोग प्रस्तुत करेंगे जिनके नामपर और जिनकी खातिर समझौता दिया गया है। इसलिए यदि यह सूचित किया जाये कि माननीय मन्त्रीने पंजीयकको प्रवेशकर्ताओंमें इन दोनों नामंजूर किये गये नामोंको शामिल करनेकी हिदायत दे दी है, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।

और क्या मैं यह जान सकता हूँ कि प्रस्तावित प्रवासी विधेयक, जिसमें अस्थायी समझौतेकी शर्तें शामिल होंगी, संसदके इस अधिवेशनमें प्रस्तुत किया जायेगा या नहीं?

आपका विश्वस्त,
[मो० क० गांधी]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें संशोधित हस्तलिखित मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ५७४६) की फोटो-नकलसे।

१. इस पत्रके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट २५।
२. एशियाई-पंजीयकको भेजा गया यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

३७२. विवाहका सवाल[1]

भारतीयोंमें गैर-ईसाई विवाहोंकी वैधतापर सर्वोच्च न्यायालयकी केप प्रान्तीय शाखाने जो महत्वपूर्ण निर्णय दिया था, उसपर पिछले सप्ताह हम कुछ विस्तारसे प्रकाश डाल चुके हैं। इस सप्ताह हम नेटाल प्रान्तीय शाखाके "मास्टर" की कार्रवाईके बारेमें मूल्यवान जानकारी प्रकाशित कर रहे हैं। उत्तराधिकार-करका निश्चय करनेके लिए इस अधिकारीने एक मुसलमानी विवाहकी वैधतापर एतराज किया है।[2] इस समय हमपर [और दूसरोंपर] लगनेवाले करके अन्तरकी तफसीलमें जानेकी आवश्यकता नहीं। पर जहाँतक हमारा सम्बन्ध है, "मास्टर" ने जो जबरदस्त प्रश्न उठाया है, वह है भारतके महान धर्मोके अनुसार किये गये विवाहोंकी वैधताका प्रश्न। यहाँ हम यह कह दें कि यह सर्वथा अप्रत्याशित विपदा — इसे "विपदा" ही कहना होगा — हमारे ऊपर किसी नये कानूनके कारण नहीं, बल्कि एक पुराने कानूनकी नई व्याख्याके कारण आई है। भारतीय दक्षिण आफ्रिकामें जबसे बसे हैं तबसे भारतीय धर्मोकी पद्धतिसे किये गये विवाह मान्य किये जाते रहे हैं। ऐसे विवाहोंसे उत्पन्न सन्ततिको अपने मृत माता-पिताओंके कानूनी वारिसके रूपमें प्रचुर सम्पत्ति विरासतमें मिली है। वर्तमान असहनीय परिस्थिति संघकी नई मनोवृत्तिका परिणाम है, जिसने पुराने कानूनोंको अमलमें लानेवाले अधिकारियोंकी बुद्धिको दूषित कर दिया है। वास्तवमें इस नवीन व्याख्याका तार्किक परिणाम यह हुआ है कि पहले जो-कुछ हो चुका है, उसकी वैधतापर आपत्ति की जा सकती है, और विरासतमें मिली जायदादोंके वारिसोंको उनसे वंचित किया जा सकता है। भारतीय समाजको अचानक ऐसी उलझनमें डाल दिया गया है, जिससे वह एड़ी-चोटीका पसीना एक करके ही निकल सकता है; क्योंकि यदि सरकारी नीति हमारे द्वारा समय-समयपर प्रकाशित मामलोंसे प्राप्त पूर्वाभासके अनुरूप ही जारी रही तो, जबतक हम कड़े विरोधके लिए तैयार नहीं होते, वह नये विधानका सहारा लिये बिना ही या तो हमें समाप्त कर देगी या हमारे प्रगतिशील समाजको पंगु बना देगी।

शायद अब यह बात हमारी समझमें आ सकेगी कि लॉर्ड एमॉटने लॉर्ड ऐम्टहिलको जो उत्तर दिया उसमें इतनी झिझक और सावधानी क्यों बरती गई है।[3] ये मामले लॉर्ड

१. देखिए "हिन्दू और मुसलमान सावधान हो जायें", पृष्ठ ४९३-९४ और "भारतीय धर्मोंपर हमला", पृष्ठ ४९४-९५।

२. नेटालमें एक मुसल्मानने अपने वसीयतनामेमें अपनी सारी सम्पत्ति अपनी पत्नीके नाम छोड़ी थी। उत्तराधिकार-करका निश्चय करनेके लिए सर्वोच्च न्यायालयकी प्रान्तीय शाखाके "मास्टर" ने, पतिके कथनसे भिन्न, किसी दूसरे प्रमाणकी माँग की थी और सलाह दी थी कि इस मुद्देपर सम्बन्धित पक्षोंकी सर्वोच्च न्यायालयका निर्णय ले लेना चाहिए।

३. देखिये पाद टिप्पणी १ पृष्ठ ४९२।

महोदयके मितभाषणका कारण तो अवश्य स्पष्ट करते हैं; परन्तु इससे उसका औचित्य सिद्ध नहीं होता। यदि वे जानते थे कि संघ-सरकार झुकेगी नहीं, और यदि लॉर्ड महोदयको हमारा जरा भी खयाल था तो जब लॉर्ड ऍम्टहिलने अवसर दिया था तब उन्हें स्थानीय सरकारके रुखकी कड़ी निन्दा करनी चाहिए थी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–३–१९१३

३७३. भारतीय विवाह

केप टाउनमें चलाये गये विवाह-सम्बन्धी मुकदमेके बारेमें हम पिछले सप्ताह लिख चुके हैं। इसी प्रकारका एक दूसरा मुकदमा बाई जनूबीका हमारे ध्यानमें आया है। यह स्त्री विधवा है। उसके पतिने वसीयतनामे द्वारा अपनी मिल्कियत उसके लिए छोड़ी थी। परन्तु सर्वोच्च न्यायालयका मास्टर इस वसीयतनामेपर अमल करनेसे इनकार करता है। वह कहता है कि बाई जनूबीका विवाह विवाह नहीं माना जा सकता।[1] विवाहका यह प्रश्न इस तरह दिन-प्रति-दिन बहुत गम्भीर होता जा रहा है। और यदि हम सावधानीसे समय रहते कार्रवाई न करेंगे तो हमें बादमें पछताना पड़ेगा। सभी भारतीयोंपर इसका असर पड़नेकी सम्भावना है। सुनते हैं, कुछ लोगोंकी राय है कि स्त्रियोंके मामलेमें सत्याग्रह नहीं किया जा सकता; क्योंकि स्त्रियाँ जेल नहीं भेजी जा सकतीं। स्त्रियाँ जेल जा सकती हैं या नहीं, इस सवालको हम अभी एक ओर रखते हैं। परन्तु क्या पुरुष स्त्रियोंकी और अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके निमित्त जेल नहीं जा सकते? स्त्रियोंको जेलमें भेजनेकी या जानेकी जरूरत पड़े ही, ऐसा नहीं है। पुरुषोंमें केवल मर्दानगी होनी चाहिए: फिर, सत्याग्रहमें तो अभी देर है। संगठन करने, कुछ पैसा देने, सभाएँ बुलाने और प्रार्थनापत्र भेजनेमें सत्याग्रहका क्या सवाल है? इस सवालपर सत्याग्रह नहीं हो सकता, ऐसा बहाना निकालकर यदि हम हाथपर-हाथ धरे बैठे रहेंगे, तो हमारी और हमारी स्त्रियोंकी फजीहत ही होगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–३–१९१३

१. देखिए पाद टिप्पणी २, पृष्ठ ५०१।

३७४. एस्टकोर्टमें परवाना-सम्बन्धी मुकदमा

हमें जब परवाना (लाइसेंसिंग)-अधिकारी कष्ट नहीं देते तब जान पड़ता है गोरे व्यापारी वैसा करनेपर कमर कस लेते हैं। परवाना-अधिकारीने श्री खमीसा इब्राहीमको परवाना दे दिया था, इसलिए आस-पासके गोरे व्यापारियोंने परवाना-निकाय (लाइसेंसिंग बोर्ड)से अपील की। निकायके सदस्योंने भारतीय व्यापारीके विरुद्ध मत प्रकट किया, इसपर श्री खमीसाके वकीलने उनके विरुद्ध आपत्ति उठाई। किन्तु आपत्ति अस्वीकार कर दी गई और निकायने परवाना-अधिकारीका फैसला बदल कर श्री खमीसाका परवाना नामंजूर कर दिया। हमारा विश्वास है कि श्री खमीसा अपना मामला आगे ले जायेंगे। ये सब मामले लॉर्ड ऍम्टहिलकी समितिके सामने भी जाने चाहिए, जिससे ब्रिटिश सरकारसे इन मामलोंमें न्याय प्राप्त किया जा सके।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–३–१९१३

३७५. क्या सीरियाई एशियाई हैं?

सीरिया एशियाका एक प्रदेश है, इसलिए सीरियामें रहनेवाले भी एशियाई ही हैं और उनपर १८८५ का एशियाई कानून लागू होना चाहिए—ऐसी दलील देकर पंजीयकने जोहानिसबर्गमें एक सीरियाईके नाम जमीनकी रजिस्ट्री करनेसे इनकार कर दिया। इसपर उक्त सीरियाईने सर्वोच्च न्यायालयमें अर्जी दी है कि उसके नाम जमीन दर्ज की जानी चाहिए। उसकी दलील यह है:

"यह ठीक है कि मेरा जन्म एशियामें हुआ है। परन्तु मैं ईसाई हूँ। मेरी चमड़ी सफेद है। इस देशके कानून निर्माताओंकी यह इच्छा कभी नहीं रही होगी कि १८८५ का कानून मुझपर—किसी गोरे एशियाई ईसाईपर—लागू हो। यदि यह मुझपर लागू हो तो एशियाई गोरे यहूदियोंपर भी लागू होना चाहिए। परन्तु यह कानून यहूदियोंपर लागू नहीं किया गया है। फिर, यदि १८८५ का कानून मुझपर लागू हो तो १९०७ का पंजीयन कानून भी लागू होगा। और यदि यही निर्णय हो तो उसका परिणाम ऐसा निकलेगा जिसकी कल्पना कानूनके निर्माताओंने कभी न की होगी।"

इस मुकदमेकी सुनवाई करनेवाले जजने मामलेको महत्वपूर्ण बताकर अपना निर्णय अभी स्थगित रखा है। मामला बेशक महत्वपूर्ण है। इसका परिणाम जाननेकी प्रतीक्षा सभी भारतीय उत्सुकतापूर्वक करेंगे। यदि जज कानूनका वही अर्थ करेगा जो उसके शब्दोंसे निकलता है तो एशियाई सीरियाई भले ही ईसाई हों और उसका रंग भी गोरा हो, किन्तु उनकी गिनती हमारी ही पंक्तिमें होगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–३–१९१३

३७६. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान [-१३]

[खुराक—चालू]

अब वनस्पतिमें से कौन-कौन-सी-चीजें त्याग देने योग्य हैं, इसका विचार हमें करना चाहिए। भारतमें प्रायः सर्वत्र मिर्च तथा उसके साथ आवश्यक अन्य मसाले, जैसे कि धनिया, जीरा, काली मिर्च आदि खानेका बड़ा रिवाज है। यह रिवाज दूसरे देशोंमें इतना अधिक नहीं है। यहाँके सीदियोंको यदि हम अपना मसालेदार खाना दें तो वे एकाएक उसे नहीं खा सकेंगे; वह उन्हें बेस्वाद लगेगा। बहुतेरे गोरे, जिन्हें मसालेदार भोजनकी आदत नहीं है, हमारा चटपटा भोजन बिलकुल नहीं खा सकेंगे, और यदि मजबूरीमें खा लें तो उनका पेट खराब हो जायेगा और उनके मुँहमें छाले आ जायेंगे। अनेक गोरोंके विषयमें यह मेरा अपना अनुभव है। इसके आधारपर इतना तो कहा ही जा सकता है कि मसाले स्वयं स्वादिष्ट हों, यह बात नहीं है; चूंकि एक लम्बे अरसेसे हम आदत डाले हुए हैं, अतः उनकी गंध और उनका स्वाद हमें पसन्द आता है। पर यह तो हम जान चुके हैं कि निरे स्वादके लिए खाना आरोग्यके लिए हानिप्रद है।

अब हम मसालेके सेवनके [अन्य] हेतुकी जाँच करें। मसाले खानेका अन्य हेतु केवल यह है कि उससे अधिक खानेमें मदद मिलती है और अधिक खुराक पच भी जाती है। मिर्च, धनिया, जीरा आदिमें पेटकी जठराग्निको प्रदीप्त करनेका गुण है, और उनके कारण हमें अधिक भूख लगती प्रतीत होती है। किन्तु भूख लगनेका अर्थ यदि यह किया जाये कि खाया हुआ पूर्ण रूपसे पच गया और उसका ठीकसे [रस] रक्तादि बन गया तो यह विचार केवल भ्रममूलक होगा। कई लोग बड़ा मसाला खाते हैं, किन्तु उनका पेट अन्ततोगत्वा बहुत नाजुक हालतमें पहुँच जाता है और कइयोंको संग्रहणी हो जाती है। एक मनुष्यको मिर्च खानेकी बहुत आदत थी। वह उसका सेवन नहीं छोड़ सका और छः माह तक बीमारी भोगकर जवानीमें ही चल बसा। अपनी खुराकमें से सारे मसालोंको निकाल देना अत्यन्त अनिवार्य है।

यह सारा विवेचन जो मसालोंके लिए है, नमकपर भी लागू होता है। यह बात बहुतोंको नहीं जंचेगी, कई लोगोंको एकदम विचित्र लगेगी, पर यह है अनुभव-सिद्ध। विलायतमें एक समाज है; उसका मत तो यह है कि नमक तो मसालोंसे भी बढ़कर हानिकारक है। हमें अपनी खुराकमें ही वनस्पतिजन्य लवण मिल जाता है। [वास्तवमें] हमें उसीकी जरूरत है और उतना-भर सिर्फ काफी है। किन्तु समुद्री नमक या अन्य किसी प्रकारका नमक तो अनावश्यक वस्तु है। और [इसीलिए] जैसे शरीरमें जाता है वैसे ही पसीनेके जरिये या अन्य प्रकारसे निकल आता है। मतलब यह कि उसका कोई खास उपयोग शरीरके लिए होता नहीं जान पड़ता। किसी पुस्तकमें तो इस हद तक लिखा है कि नमक खानेसे हमारा खून दूषित होता है और जिसने

अनेक वर्षों तक नमकका सेवन न किया हो और अपने शरीरको अन्य प्रकारसे भी निर्मल रखा हो, उसका रक्त तो ऐसा-कुछ शुद्ध होता है कि उस व्यक्तिपर सर्प-दंशका परिणाम भी नहीं होता। इसका कारण यह है कि ऐसे व्यक्तिके खूनमें इस प्रकारके [जहरी] दंशोंके घातक परिणामोंको दूर करनेका गुण आ जाता है। यह बात सही है या नहीं, यह तो हम नहीं जान सकते, पर इतना मैं अनुभवपूर्वक कह सकता हूँ कि खाँसी, बवासीर, दमा, रक्तप्रवाह आदि रोगोंपर नमक छोड़नेसे तत्काल असर होता है। एक भारतीयको लम्बे अरसेसे दमा और खाँसीका रोग था। नमक छोड़कर दूसरे आनुषंगिक इलाज किये जानेसे उसका रोग जाता रहा। नमक न खानेके कारण किसीको भी कोई नुकसान हुआ हो, ऐसा मैंने तो नहीं देखा। मुझे तो नमक छोड़े दो वर्षसे भी अधिक हो गये, पर मैं उसका कोई बुरा परिणाम नहीं देखता, बल्कि कई फायदे अनुभव कर रहा हूँ। [नमक छोड़नेसे] पानी कम पीना पड़ता है और शरीरमें सुस्ती कम रहती है। नमकको त्यागनेका मेरा अपना प्रसंग तो विचित्र ही था। जिसका[1] साथ देनेके लिए मैंने नमक छोड़ा, उसका रोग तबसे नमक छोड़ देनेपर काबूमें आता रहा है। यदि वह रोगिणी सदाके लिए नमक छोड़ देती तो रोग निर्मूल हो जाता, मेरा यह भी विश्वास है। नमक छोड़ देनेवालेको साग सब्जियाँ और दाल छोड़ देनी पड़ती है। यही कुछ कठिन-सा लगता है। यही मैंने अनेक प्रयोगोंमें देखा। किन्तु, हरी सब्जियाँ तथा दाल छोड़े बिना तो चारा भी नहीं है। मैंने अनुभव किया है कि हरी सब्जियाँ और दाल बिना नमकके पचा पाना मुश्किल ही है। पर इसका मतलब यह नहीं कि नमक पाचन-शक्तिको बढ़ानेवाला पदार्थ है। बल्कि जैसे मिर्च खानेसे पाचन-शक्ति बढ़ती तो नहीं, पर बढ़ती-सी प्रतीत होती है और अन्तमें उसके सेवनसे नुकसान देखनेमें आता है, वही बात नमककी है। अतः नमक छोड़नेवालेको दाल और हरी सब्जियाँ अवश्य छोड़ देनी चाहिए। कोई भी यह प्रयोग स्वयं करके इससे होनेवाले परिणामोंकी जाँच कर सकता है। अफीम छोड़ देनेवालेको जैसे थोड़े दिनों तक कठिनाई महसूस होती है और शरीरमें शिथिलता प्रतीत होती है, वैसी ही नमक छोड़ देनेवालेको महसूस होगी। पर उससे हार नहीं माननी चाहिए। डटे रहनेसे नमक छोड़ देनेवालेको लाभ होगा ही।

दूधको भी त्याग देने योग्य वस्तुओंमें शामिल कर देनेकी हिम्मत इस लेखकने की है। एक तो इसका आधार उसका अपना अनुभव है। पर उस अनुभवको एक ओर रखकर सोचनेकी आवश्यकता है। दूधकी महिमाके सम्बन्धमें हमारी कुछ ऐसी दृढ़ किन्तु मिथ्या धारणा बन गई है कि उससे मुक्त करनेका प्रयत्न करना निरर्थक ही होगा। लेखक न तो यह मानता है कि यहाँ व्यक्त किये सारे विचारोंको पाठक कबूल ही कर लेगा, और न यही मानता है कि जिन्हें उसके ये विचार जँचेंगे, वे सब इन्हें अमलमें ले ही आयेंगे। उसका विचार तो अपना मन्तव्य व्यक्त-भर कर देनेका है। इनमें से जिसे जो उचित जान पड़ेगा वह उसे ग्रहण कर लेगा। अतः, दूधके विषयमें भी लिख देना कुछ अनुचित नहीं होगा। कई डॉक्टरोंने यह जाहिर

१. श्रीमती कस्तूरबा गांधी; देखिए **आत्मकथा,** भाग ४, अध्याय २९।

किया है कि दूधसे मन्थर-ज्वर (मोतीझरा) होता है। इस सम्बन्धमें पत्रक भी प्रकाशित किये गये हैं। दूध वायुमण्डलके कीटाणुओंसे सहज ही दूषित हो जाता है और स्वास्थ्यको हानि पहुँचानेवाले कीटाणु उसमें आसानीसे पैदा हो जाते हैं। दूधको अच्छा बनाये रखनेके लिए हमें बहुत सावधान रहना पड़ता है। दक्षिण आफ्रिकामें तो दूधका सेवन करनेवालेके लिए नियम भी हैं। दूधकी किस प्रकार सार-सँभाल की जाये, उसे कैसे रखा जाये, बर्तन किस प्रकार साफ किये जायें, इत्यादि अनेक बातोंकी सावधानी रखनी पड़ती है। जिस वस्तुके लिए इतना यत्न किया जाये और यदि न किया जाये तो उस पदार्थसे नुकसान हो, उस वस्तुका सर्वथा त्याग किया जाये या उसे रखा जाये, यह विचारणीय माना जायेगा।

और फिर अच्छे और खराब दूधका दारोमदार गाय कैसी है, वह क्या खाती है आदि बातोंपर है। क्षयसे पीड़ित गायका दूध सेवन करनेवालेको क्षय रोग हो जानेके उदाहरण डॉक्टर लोग देते हैं। एकदम पूर्ण स्वस्थ गायका मिलना मुश्किल है। और यदि गाय तन्दुरुस्त न हो तो उसका दूध भी रोगप्रद ही होगा। रोगसे पीड़ित माताका दूध बालकको दिया जानेपर वह भी रोगी बन जाता है, यह सभी जानते हैं। दूध पीते बच्चेको कोई बीमारी होनेपर वैद्य उस बालकको दवा न देकर माताको देते हैं, ताकि उसके दूधके जरिये दवाका असर बालकपर हो। वही बात गायके दूधपर भी लागू होती है। अर्थात् दूधका सेवन करनेवालेके स्वास्थ्यका दूध देनेवाले जानवरको खुराक और उसके स्वास्थ्यके साथ गाढ़ सम्बन्ध होता है। दूधके सेवनमें जब इतनी झंझट और जोखिम है तब क्या उसे छोड़ ही देना उचित नहीं होगा? ताकत देनेका जो गुण दूधमें है वह तो बहुत-सी वस्तुओंमें है। जैतूनका तेल अधिकांशतः दूधके कार्यको पूर्ति कर देता है। मीठे बादामोंको गरम पानीमें भिगोकर, उन्हें छीलकर, उन्हें पीसकर, उसमें पानी मिलाकर शर्बत बना लिया जाये तो दूधके सारे अच्छे गुण उसमें मिल जायेंगे, और दूधसे पैदा होनेवाले खतरे उसमें नहीं होंगे। अन्तमें हम प्रकृतिके नियमकी छानबीन करें। गायका बछड़ा थोड़े दिन दूध पीकर उसे छोड़ देता है और दाँत निकलते ही दाँतका उपयोग होने लगे, ऐसे पदार्थका सेवन करने लगता है। मनुष्य जातिके लिए भी यही होना चाहिए। केवल बाल्यावस्था तक ही दूध पीनेके लिए हम जन्मे हैं। हमें भी जब दाँत निकल आयें तो सेब आदि ताजे फल या बादाम आदि सूखे मेवे या रोटी चबाकर खानी चाहिए। दूधकी पराधीनतासे मुक्त होनेवाला व्यक्ति कितना पैसा और समय बचा सकता है इसका विचार करनेके लिए यह प्रसंग उपयुक्त नहीं है। तो भी पाठक-गण स्वयं ही इसकी जाँच कर सकेंगे। दूधसे बननेवाले पदार्थोंकी भी जरूरत नहीं है। मठेकी खटास (अम्लत्व) नींबूसे मिल सकती है। उससे प्राप्त होनेवाले दूसरे तत्व बादाम आदिसे मिल सकते हैं। घीकी जगह तेलका सेवन तो हजारों भारतीय करते ही हैं।

अब हम तीसरे दर्जेकी खुराककी जरा छानबीन करें। यह वनस्पति और मांसका मिश्रण है। ऐसी खुराक अनेक लोग लेते हैं और उससे होनेवाले अनेक रोगोंसे

पीड़ित होते हैं। वैसे बहुतेरे नीरोग भी नजर आते हैं। हम मांस खानेके लिए पैदा नहीं हुए, यह बात तो हमारे शरीरके सारे अवयवों और अपनी काठीसे ही साफ जाहिर होती है। डॉक्टर किंग्सफोर्ड और डॉक्टर हेगने मांस-सेवनसे होनेवाले दुष्परिणामोंका बड़ा सजीव वर्णन किया है। जो अम्लत्व द्विदल धान्योंसे पैदा होता है, वही मांस-भक्षणसे भी होता है। यह उन्होंने साबित कर बताया है। मांस खानेसे दाँतोंको हानि पहुँचती है। गठियाका दर्द होता है। मांस खानेवाला क्रोधी अधिक होता है और क्रोधी मनुष्य भी एक प्रकारसे रोगी ही कहलाया। क्रोधकी हमारी परिभाषाके अनुसार तो क्रोधी मनुष्य नीरोग नहीं माना जा सकता।

चौथी या अन्तिम श्रेणीकी खुराक यानी केवल मांस-भक्षणका विचार करनेकी जरूरत ही नहीं है। वह स्थिति तो इतनी अधम है कि उसका स्मरणमात्र मांस-भक्षणसे अरुचि पैदा करनेके लिए पर्याप्त है। केवल मांस-भक्षी तो किसी भी प्रकारसे नीरोग नहीं हैं। जो लोग थोड़े भी उन्नत हो जाते हैं या तनिक भी ज्ञानार्जन कर पाते हैं कि उनका मन तुरन्त वनस्पति आहारकी ओर दौड़ने लगता है।

इस सबका सार यही निकला कि केवल फलाहार करनेवाले थोड़े ही निकलेंगे। परन्तु सूखे और ताजे फल तथा गेहूँ और जैतूनके तेलका प्रयोग करने लायक है। और इनके आधारपर मनुष्य अपना स्वास्थ्य बनाये रख सकता है। फलोंमें प्रधान पदका श्रेय केलेको जाता है। इसके अलावा खजूर, आलू-बुखारा, अंजीर आदि भी शक्ति प्रदान करनेवाले फल हैं। ताजे अंगूर रक्तशोधक हैं। नारंगी, संतरा, सेब आदिको केलोंके साथ मिलाकर रोटीके साथ खाया जा सकता है। रोटीमें जैतूनका तेल डालनेसे उसका स्वाद बिगड़ता नहीं है। इस प्रकारकी खुराकमें झंझट भी ज्यादा नहीं है और खर्च भी कम पड़ता है। इसके सिवा इस खुराकको लेनेसे नमक, मिर्च या दूध और चीनी आदिकी आवश्यकता भी नहीं होती। कोरी चीनी तो एकदम बेकाम चीज है। बहुत अधिक मीठा खानेवालेके दाँत बहुत जल्दी गिर जाते हैं और उतना अधिक मीठा खानेसे कोई लाभ भी नहीं होता। गेहूँ, बादाम, मूँगफली, अखरोट, ताजा मेवा इन सबसे खाने योग्य अनेक पदार्थ बनाये जा सकते हैं।

खुराकके सम्बन्धमें अब यही देखना बाकी रह गया कि खुराक कितनी और कब ली जाये। यह हम अगले प्रकरणमें देखेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-३-१९१३

३७७. पत्र : जमनादास गांधीको

फाल्गुन वदी ७ [मार्च २९, १९१३][1]

चि० जमनादास,

तुम्हारे तीन पत्र साथ मिले हैं। तुम हर हफ्ते पत्र चाहते हो; किन्तु हर हफ्ते मुझे तुम्हारा पत्र मिलता नहीं। इसलिए ऐसा कैसे करूँ, यह समझमें नहीं आता। फिर भी अधिक वार लिखनेका प्रयत्न करूँगा।

छः मासकी अवधि पूरी होनेके वाद तुम्हें विना नमकका खाना जारी रखनेकी जरूरत नहीं है। उद्देश्य यह नहीं है कि विना नमकके खाने [का नियम निवाहने] के लिए शरीरकी आहुति दे दी जाये। विना नमक और चीनीका खाना खाकर हम अधिक नीरोग रह सकेंगे, ऐसा मानकर हमने यह व्रत लिया है। यदि ऐसा न हो तो हम नमक या चीनी त्यागनेके लिए वँधे नहीं हैं। विना नमकका खाना निरामिष आहारकी तरह कोई धर्म-विहित वात नहीं है। जव हम ऐसा मानेंगे कि वह है, तव उसे न खायेंगे। दूधके सम्वन्धमें अवश्य मेरा मन वैसा होता है। परन्तु मुझे तो विना नमक, चीनी, शाक और दालका खाना, ये सव मुआफिक आ गये जान पड़ते हैं।

तुम वहाँ नीवू आदि नहीं खा पाते, यह वात मुझे कुछ रुची नहीं। तुम्हारे प्रयोगोंमें मुझे वहुत-सी खामियाँ दिखाई देती हैं। इसमें तुम्हारा दोष तिल-भर भी नहीं है। तुम अनजान होनेसे फेरफार नहीं कर पाये। इसके अतिरिक्त तुमसे स्वतन्त्र प्रयोग नहीं करते वनता। इसलिए यदि तुम अभीतक अलोना खाने आदिका प्रयोग कर रहे हो और वह तुम्हें अनुकूल न पड़ रहा हो तो उसे छोड़ ही देना।

तुम मेरे पत्रोंको सँभालकर रख सको, इसके लिए तुम्हें पत्र लिखनेमें एक ही प्रकारके कागजका प्रयोग करनेका प्रयत्न करूँगा। कुछ पत्र अवश्य ही दुवारा पढ़ने योग्य होंगे। इसके अलावा तुम मेरे विचार जाननेके लिए वहुत उत्सुक जान पड़ते हो, इसलिए यदि तुम्हें मेरा पत्र हर हफ्ते न मिले, तो जो पत्र सवसे हालमें मिला हो उसे तो इस वीच दुवारा पढ़ ही सकोगे।

मुझसे चाहे जो सवाल, चाहे जैसी भाषामें पूछनेमें न झिझकना।

तुम मेरे मना करनेपर भी [भारत] चले गये हो, इसकी चिन्ता न करो। तुम अकेले रहकर अपने विचारोंको दृढ़ नहीं कर सकते। इसी कारण मैंने तुम्हें रोका था। परन्तु खुशालभाई[2] और देवभाभीकी[3] सेवा करनेकी तुम्हारी तीव्र इच्छा देखकर मुझे उसकी तुलनामें तुम्हारे विचारोंको दृढ़ करनेकी अपनी इच्छा गौण लगी।

१. पत्रसे स्पष्ट है कि यह जमनादास गांधीके १४ दिसम्बर, १९१२ को दक्षिण आफ्रिकासे भारतके लिए रवाना होनेके वाद ही लिखा गया होगा; और इस तारीखके वाद पड़नेवाली फाल्गुन वदी ७ को १९१३ के मार्च महीनेकी २९ तारीख थी।

२ और ३. जमनादासके माता-पिता।

इसलिए तुम्हारा जाना ठीक ही हुआ। इसके अतिरिक्त तुम्हें जो-कुछ कड़वा अनुभव होता है, उससे तुम्हारे चरित्रका निर्माण होता है, क्योंकि तुम्हारे सब विचार अच्छे हैं और तुम ऊँचा उठना चाहते हो।

भाषामें "मादरी जबान" आदि उर्दू शब्दोंका प्रयोग करना बिलकुल ठीक है। गुजराती भाषाको संस्कृत भाषाकी ही शाखा रखनेका प्रयत्न करें, तो पारसियों और मुसलमानोंको गुजराती न गिनना चाहिए। ऐसा करना भी चाहें तो सम्भव नहीं है। गुजराती भाषामें उर्दू और फारसी शब्द बहुत प्रयुक्त होते हैं और होंगे। 'ओपिनियन'की भाषा हिन्दुओं और मुसलमानोंको रुचिकर होनी चाहिए। वैसी भाषा बनानेके लिए हम प्रसंगानुकूल अल्लाह और परमेश्वर दोनों शब्दोंका प्रयोग कर सकते हैं। यदि अंग्रेज गुजरातके वतनी बन जायें, तो हम अंग्रेजी शब्दोंको भी जरूरत होनेपर अपनी भाषामें ले लेंगे। इस समय जो अंग्रेजी शब्द लिये जाते हैं उसमें तो दम्भ, अज्ञान या खुशामद रहती है। उसके पीछे भाषाकी उन्नतिका खयाल नहीं है।

यदि हिन्दू भी तुर्कोंकी लड़ाई जैसी किसी स्थितिमें फँस जायें तो उन्हें भी सक्रिय हो उठना चाहिए। इटली और बाल्कन राज्य, दोनों इस लड़ाईमें दोषी हैं; इसलिए हम उनका दोष बताते हैं तो कोई अनाचार नहीं करते। इसमें इटलीके प्रति द्वेष नहीं है। अखबारके बहुत-से पाठक मुसलमान हैं; इसलिए उन्हें यथासम्भव लड़ाईकी खबरें देते रहना हमारा फर्ज है। 'ओपिनियन'को हम नीतिकी शिक्षा देनेका साधन कहते हैं, परन्तु पाठक न हों तो वह इसका साधन कैसे बन सकता है? लड़ाईकी खबरें देकर हम पाठकोंका मनोरंजन निर्दोष रीतिसे करते हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें लड़ाईकी खबरें जाननी चाहिए, इसलिए इस हद तक यह नीतिका विषय हुआ। और अन्तमें, नीति-नियम बताना और अपने कष्टोंका वर्णन करना यद्यपि उसके प्रधान विषय हैं, परन्तु हम उसमें खबरें ही न दें, ऐसा इरादा कदापि नहीं है। सम्भव है, हमारे वहाँ अधिक जातीय भेदभाव हो, किन्तु उसका असर आम लोगोंपर नहीं होता। यहाँ तो उसका असर आम लोगोंपर ही होता है।

पवित्र गिने जानेवाले तीर्थोंमें तेलको त्याज्य मानकर घीको पवित्र मानते हैं। इसका कारण मैंने जो अनुमानसे बताया है, वही है। भारतमें जब मांसाहारी लोग थे, तब किसीने बहुत-से लोगोंको शाकाहारी बनाया और घीको अति पवित्र बना दिया। इसीलिए हम अपने भोजनमें घी असीमित मात्रामें काममें लेते हैं। जितना अधिक घी हो, हम भोजनको उतना ही अच्छा मानते हैं। इससे अधिक अज्ञानकी बात क्या होगी? फिर भी माना यही जाता है। इस प्रकार पवित्र स्थानोंमें भी घीको ऊँचा स्थान मिला। परिवर्तन करनेवालेने समझ लिया कि यदि लोग घी खूब खायेंगे तो उन्हें मांसकी जरूरत ज्यादा न होगी। ऐसे ही कारणसे इंग्लैंडमें निरामिषभोजी लोग मांसके बदले बेहद अंडे खाकर बीमार तक हो जाते हैं। उनके बहुत कम भोज्य पदार्थ ऐसे होते हैं, जिनमें अंडा नहीं होता। उन्होंने अंडेको लगभग पवित्र [खाद्य] मान लिया है।

तुमने वनियेको सिखानेका काम अपने ऊपर लिया होता तो ठीक ही होता। उससे तुम्हारी मानसिक अस्वस्थता कुछ दूर होती और उस कमाईसे एक तरहका सहारा मिलता।

मेरे आनेकी वातको तनिक भी निश्चित मत समझना। स्त्रियों और बच्चोंके वारेमें सत्याग्रह छिड़ सकता है। मुझे लगता है कि उस हालतमें मुझे रुकना पड़ेगा। यदि सत्याग्रह हुआ तो तुम उसमें कैसे भाग ले सकोगे? मुझे तुम्हारा वहाँसे आना ठीक नहीं जान पड़ता। तुम्हारे जानेका उद्देश्य माता-पिताकी सेवा करना है। उसे मुख्य मानकर जो उचित हो वह करना। इसी कारण तुम वड़ौदा या दूसरी जगह वुनाई सीखनेके लिए नहीं जा सकते।

स्वादको जीतनेके सम्बन्धमें तुमने जो श्लोक उद्धृत किया है, वह मैंने देखा था। फिर भी मेरी टीका उपयुक्त ठहरती है। एक श्लोकसे कोई असर नहीं पड़ता। उन्होंने इस विषयको महत्व नहीं दिया है। यदि दिया होता तो हवेली[1] आदिमें हर किसी वहाने मिष्ठान्नके भोजन न होते, हर त्यौहारके दिन घी और गुड़के सीधे न दिये जाते और ब्रह्म-भोज भी न होते। आधुनिक ऋषि या साधु स्वादेन्द्रियको नहीं जीतते, वल्कि वे उसके वशीभूत दिखाई देते हैं। यह विषय वहुत वड़ा है। यदि हम दोष निकालनेकी दृष्टिसे ऐसा कहें तो पापके भागी होंगे। परन्तु जव हमारा मुख्य उद्देश्य अपना और दूसरोंका कल्याण करना होता है तव चाहे कोई कितना ही मान्य पुरुष क्यों न हो, उसमें भी अपूर्णता देखें तो उसपर विचार करना हमारा फर्ज है।

अव तुम्हारे एक पत्रका उत्तर समाप्त होता है। दूसरे पत्रोंका उत्तर फिर अर्थात् अगले हफ्ते लिखनेका प्रयत्न करूँगा। इस प्रकार तुम्हें हर हफ्ते लिख सकूँगा।

यहाँ तो वहुत-कुछ होता है। उसका वर्णन करना सम्भव नहीं है। उतना वक्त नहीं है। किन्तु तुम्हारे पूछे हुए सवालोंके उत्तरके सिलसिलेमें कुछ आ जायेगा।

मणिलाल अपनी पढ़ाईमें व्यस्त रहता है। मैं उसे एक घड़ीकी भी फुरसत नहीं लेने देता। वह तुम्हें पत्र लिखेगा, यह आशा व्यर्थ है। तुम उसे पत्र लिखो तो सम्भव है, वह उत्तर दे दे। जेकी भी व्यस्त तो रहती ही है; फिर, वह पत्र लिखनेमें ढीली है और उसे पत्र लिखना आता भी नहीं, इसलिए उससे भी आशा कम ही रखना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ५६४३) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१. वल्लभ सम्प्रदायका वैष्णव मन्दिर।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

गांधीजीके नाम लेनका पत्र

केप टाउन
अप्रैल ११, १९११

प्रिय श्री गांधी,

प्रवासी विधेयकके सम्बन्धमें आज तीसरे पहर आप यहाँ आये थे। उसीके विषयमें खेदपूर्वक सूचित कर रहा हूँ कि इस समय जनरल स्मट्स आपको विधेयक या उसमें होनेवाले किसी संशोधनके बारेमें इससे पहले कि वह फिर संसदमें लाया जाये कोई सूचना देनेकी स्थितिमें नहीं हैं। पूरे मामलेपर अभी भी विचार किया जा रहा है और सम्भव है उसपर सप्ताहके अन्ततक विचार चलता रहे। इन परिस्थितियोंमें मुझे खेद है, हम आपको ऐसी कोई रूपरेखा नहीं दे सकते जिसका उपयोग आप अपने तारमें कर सकें; मैं तो केवल इतना ही सुझाव दे सकता हूँ कि आप तार दें कि आप विभागसे सम्पर्क बनाये हैं और जब वहाँसे कुछ निश्चित रूपसे पता लगेगा तो फिर भारत तार भेजेंगे।

आपका विश्वस्त
अर्नेस्ट एफ० सी० लेन

श्री मो० क० गांधी
केप टाउन

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४५१) की फोटो-नकलसे।

परिशिष्ट २

गांधीजीके नाम लेनका पत्र

केप टाउन
अप्रैल २१, १९११

प्रिय श्री गांधी,

प्रवासी विधेयकके मसविदेके सम्बन्धमें आपके १९ और २० अप्रैलके लिखे पत्र मुझे मिल गये हैं और मैंने दोनों पत्र मन्त्रीके सामने पेश कर दिये हैं।

जनरल स्मट्सने मुझसे आपको यह सूचित करनेको कहा है कि अगले सप्ताहके प्रारम्भमें संसदके सत्रावसानकी सम्भावनाको देखते हुए, सरकारके लिए इस अधिवेशनमें प्रवासी कानूनको किसी रूपमें आगे बढ़ा सकना सम्भव नहीं होगा।

सरकारकी यह हार्दिक इच्छा है कि इस पेचीदा प्रश्नका कोई हल निकाला जा सके; वह इस बीच फिर इस मामलेका अध्ययन करेगी और देखेगी कि समझौता कर सकनेकी दिशामें क्या किया जा सकता है।

इस बीच जनरल स्मट्स महसूस करते हैं कि सत्याग्रह आन्दोलनके कारण लोगोंने काफी कष्ट सहे और अभी तक सह रहे हैं; उसे अब समाप्त कर देना ही अच्छा होगा। उसके जारी रहनेसे स्थिति निरर्थक ही अधिक उलझती है, और जब सरकार भारतीय प्रवासके प्रश्नका सन्तोषजनक हल निकालनेकी कोशिश कर रही है तब भारतीय समाजको अपना आन्दोलन जारी रखकर मामलोंको पेचीदा नहीं बनाना चाहिए।

जनरल स्मट्सने इस बातपर ध्यान दिया है कि श्रीमती सोढाकी अपील आगामी शनिवारको ब्लूमफॉंटीनमें पेश हो रही है और वे मेरी मारफत यह कहला रहे हैं कि श्रीमती सोढाकी ओरसे आपके आवेदनपत्रपर अनुकूल रूपसे विचार किया जा रहा है।

आपका,
अर्नेस्ट एफ० सी० लेन
गृह-मन्त्रीका निजी सचिव

श्री मो० क० गांधी
केप टाउन

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५४९१) की फोटो-नकल और 'इंडियन ओपिनियन', २९-४-१९११ से।

परिशिष्ट ३

संघ-सरकार द्वारा प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक (१९११) वापस लेनेके कारण

क

ग्लैड्स्टन द्वारा हरकोर्टको भेजे तारका सारांश

प्राइवेट और व्यक्तिगत अप्रैल १२, १९११
फौरी

प्रवासी विधेयक। जे० सी० स्मट्सने आज सुबह बताया कि गांधीका कहना है कि यदि चुने गये प्रवासियोंको ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेश नहीं दिया गया तो ट्रान्सवालमें सत्याग्रह जारी रहेगा। वे चाहते हैं कि जे० सी० स्मट्स इस विधेयकको वापस लेकर उसकी जगह दूसरा विधेयक लायें, जिसमें प्रवास-सम्बन्धी प्रस्ताव केवल ट्रान्सवालपर लागू हों। उनका कहना है कि ऑरेंज फ्री स्टेट द्वारा [प्रवासियोंका] बहिष्कार कतई स्वीकार नहीं किया जा सकता और साथ ही विधेयक केप ऑफ गुड होप तथा नेटालमें नई और गम्भीर कठिनाई पैदा करता है।

जे० सी० स्मट्सका कहना है कि वे ऑरेंज फ्री स्टेटके सदस्योंको, जिन्हें अब प्रान्तीय परिषदके एक प्रस्तावका बल भी प्राप्त है, टससे-मस नहीं कर सकते। वे कहते हैं कि [संसदके] सत्रके इन अन्तिम दिनोंमें नया विधेयक [लाना] असम्भव है, और किसी भी स्थितिमें ट्रान्सवालको सबसे अलग मानना और उसकी सीमापर प्रवासका एक नया प्रशासन-तन्त्र स्थापित करना असम्भव है।

ऐसी परिस्थितियोंमें जे० सी० स्मट्सकी रायमें सबसे अच्छा तरीका इस विधेयकको वापस लेकर अगले वर्ष एक ज्यादा ग्राह्य विधेयक लानेकी कोशिश करना है। उनकी राय है कि सत्याग्रह लगभग समाप्तिपर

है, और नया विधेयक पेश किया जाये, तबतक के लिए वे गांधीसे अस्थायी सुलह कर सकते हैं। साथ ही, यदि आप आग्रह करें तो वे अवश्य ही विधेयकका काम आगे बढ़ायेंगे, लेकिन उनके विचारसे भारत सरकार वर्तमान विधेयकको इतना ज्यादा नापसन्द करती है कि उनके सुझाये कदमपर वह आपत्ति नहीं करेगी। लेकिन वे आपके विचार जानना चाहेंगे।

इसमें जो विलम्ब होगा उसका मुझे खेद है, लेकिन इससे कम आपत्तिजनक कोई रास्ता मैं नहीं देख पाता।

ग्लैड्स्टन

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: सी० ओ० ५५१/१०

ख

हरकोर्टके उत्तरका सारांश

आपके अप्रैल १२ के प्राइवेट और व्यक्तिगत तारके संदर्भमें भारत सरकारकी राय ली जा रही है, और अपनी राय व्यक्त करनेसे पहले मैं उसकी राय जाननेको उत्सुक हूँ।

मैं ऐसा मान रहा हूँ कि जे० सी० स्मट्सको इत्मीनान है कि वे गांधी द्वारा आन्दोलनका पुनरारम्भ रोक सकते हैं, और गांधीके विरोधका आदर करते हुए यदि वे विधेयकको वापस लेते हैं तो उनके ऐसा करनेसे वे इस बातकी कोई सम्भावना नहीं मानते कि गांधीकी प्रतिष्ठा बढ़ने और उनके विश्वासको बल मिलनेसे कि वे संघ-सरकारको भी अपनी शर्तें माननेपर मजबूर कर सकते हैं — भविष्यमें और अधिक उत्पात खड़ा होगा। क्या जे० सी० स्मट्स ऐसी स्थितिमें हैं कि वे मान सकें कि अगले वर्ष वे एक ऐसा विधेयक पेश कर सकेंगे जो गांधीको, जहाँतक दो-दो आपत्तिजनक मुद्दोंका सवाल है, वर्तमान विधेयककी अपेक्षा अधिक मान्य हो? कृपया सूचित करें कि किस तारीख तक आपको मेरे विचार मालूम हो जाने चाहिए।

हरकोर्ट

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल रेकर्ड्स: सी० ओ० ५५१/१०।

ग

साम्राज्य-सरकारको बोथाकी टिप्पणी

. . .[1]मन्त्रियोंने एक ऐसे कानूनकी रचना की थी, जिसमें सभी प्रवासियोंके लिए संविधि द्वारा अनुमोदित एक समान परीक्षा अनिवार्य करनेके साथ-साथ प्रवासी अधिकारियोंको वैसे ही व्यापक अधिकार प्रदान किये गये थे, जैसे कि इस समय आस्ट्रेलियामें प्राप्त हैं, और जिनके अधीन कुछ चन्द चुने हुए एशियाइयों — मुख्यत: शिक्षा-साध्य पेशोंके लोगों — को छोड़कर सारे एशियाइयोंको संघमें प्रवेशसे वंचित किया जा सकता था। तब एक कठिनाई उत्पन्न हुई कि ऐसे एशियाइयोंके संघमें आनेके बाद उन्हें ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेशका अधिकार हो या नहीं। ऑरेंज फ्री स्टेटके क्षेत्रोंसे निर्वाचित सभी संसद-सदस्योंने किसी भी शिक्षित भारतीयको ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेशकी अनुमति दिये जानेका एकमत होकर विरोध किया।

१. इस टिप्पणीके इससे पहलेवाले अनुच्छेद उपलब्ध नहीं हैं।

एशियाइयोंसे सम्बन्धित ऑरेंज फ्री स्टेटके कानूनोंमें किसी प्रकारके परिवर्तनका जोरदार विरोध प्रकट करते हुए ऑरेंज फ्री स्टेटकी प्रान्तीय परिषद्ने एक प्रस्ताव भी पास किया।

दूसरी ओर, भारतीय समाजने कहा कि विधेयकके मसविदेको उसी रूपमें वह स्वीकार करता है, किन्तु अपनी यह माँग पूरी करानेके लिए वह आन्दोलन जारी रखनेको विवश होगा कि विधेयककी शर्तोंके अनुसार प्रवेश पानेवाले शिक्षित एशियाइयोंको संघके अन्य प्रान्तोंमें जैसी स्वतन्त्रता प्रदान करनेका निश्चय किया गया है, वैसी ही स्वतन्त्रता ऑरेंज फ्री स्टेटमें भी प्राप्त हो।

मन्त्रियोंने अनुभव किया कि विकल्पके रूपमें एक ऐसा विधेयक पास किया जा सकता है जो सिर्फ ट्रान्सवालमें ही लागू हो, लेकिन इसमें संवैधानिक प्रश्न उठ खड़े हुए, और फिर जब यह देखा गया कि विधेयकका मुख्य उद्देश्य — अर्थात् भारतीयोंके प्रवासका प्रश्न निपटानेका उद्देश्य — पूरा नहीं होगा तब मन्त्रियोंने विचार किया कि एक ही रास्ता है, और वह यह कि फिलहाल मामलेको जहाँका-तहाँ छोड़ दिया जाये, और सत्र समाप्त होनेपर अवकाशकी अवधिमें कोई ऐसा हल निकालनेकी कोशिश की जाये जो स्थायी साबित हो।

तदनुसार मन्त्रियोंने भारतीय समाजके नेताओंको वस्तुस्थितिकी सूचना दे दी, और उनके पास यह आशा करनेके कुछ कारण हैं कि संसदके अगले सत्रमें प्रवासी अधिनियम पेश होने तकके लिए सत्याग्रह आन्दोलन अस्थायी रूपसे स्थगित रखा जायेगा।

अन्तमें मन्त्रिगण महाविभवको यह सूचित करना चाहते हैं कि उन्हें बड़े खेदके साथ सारे मामलेको कुछ समयके लिए स्थगित करना पड़ा है; लेकिन सरकारके पास विभिन्न क्षेत्रोंसे प्रस्तावित कानूनके खिलाफ जो आपत्तियाँ आई हैं, उन्हें देखते मन्त्रियोंने अनुभव किया कि मामलेपर और विचार करना बहुत जरूरी है ताकि एक ऐसा समझौता हो सके जो सभी पक्षोंको स्वीकार हो।

लुई बोथा

[अंग्रेजीसे]

सी० डी० ६२८३

घ

संघ-संसद्में स्मट्सका भाषण

जनरल स्मट्सने कहा कि इससे पहले कि अध्यक्ष महोदय अपनी कुर्सी छोड़ें, मैं चन्द शब्द कहना चाहूँगा। मुझे दुःख है कि यह विधेयक, जो इस सत्रमें सदनमें पेश किये जानेवाले अत्यन्त महत्वपूर्ण और मूल्यवान विधेयकोंमें से है, विधि-पुस्तिकामें सम्मिलित नहीं किया जायेगा। किन्तु माननीय सदस्यगण देखेंगे कि अन्य अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा आवश्यक कानूनोंको बनानेमें बहुत ज्यादा समय लग जानेके कारण उनके लिए सम्भव नहीं होगा कि इस विधेयकके बारेमें आगे कार्रवाई की जा सके, और प्रवासके प्रश्नको अगले वर्ष कानून बनाकर निपटाने तक ज्योंका-त्यों छोड़ना पड़ेगा। विधेयकको द्वितीय वाचनके लिए प्रस्तुत करते समय मैंने कहा था कि सरकारके सामने दो उद्देश्य हैं। पहला है, दक्षिण आफ्रिकाके प्रवासी कानूनोंमें एकरूपता स्थापित करना; और दूसरा है, भारतीय प्रश्नका, जो पिछले कुछ वर्षोंसे काफी परेशानी और चिन्ताका कारण बन रहा है, कोई हल निकालना। मैंने उन कठिनाइयोंके शीघ्र हल हो सकनेकी सम्भावनाके सम्बन्धमें ब्रिटिश सरकार और संघ-सरकारके बीच हुए पत्र-व्यवहारको संसदकी मेजपर रखा है। हालाँकि इस विधेयकको चालू सत्रमें पास करके उसे कानूनका रूप देना और इस प्रकार ब्रिटिश सरकार तथा संघ-सरकार द्वारा लगभग स्वीकृत हलको कार्यान्वित कर सकना सम्भव नहीं है, फिर भी मुझे इस बातकी काफी आशा है कि मैं इस विधेयकके बिना भी अगले बारह महीने तक सत्याग्रह आन्दोलनको रोक सकूँगा, और अगले सत्रमें संसद इस मसलेपर कोई कानून बनायेगी, इस बीच उसके बारेमें दक्षिण

आफ्रिकामें कुछ शान्ति बनाये रखूँगा। ऐसी स्थितिमें इस प्रश्नसे निपटनेकी कोई तात्कालिक आवश्यकता नहीं है, और इसपर और अधिक गम्भीरतापूर्वक विचार करनेकी दृष्टिसे तथा सामान्य तौरपर सम्पूर्ण दक्षिण आफ्रिकामें इसपर अधिक सावधानीसे सोचा-समझा जाये, इसलिए फिलहाल वह स्थगित रखा जा सकता है। यह विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह केवल भारतीय प्रवाससे ही नहीं, बल्कि समस्त गोरोंके प्रवाससे सम्बन्धित है, और इस विधेयकपर आगेकी कार्रवाईमें विलम्ब होनेसे चूँकि उसपर और अधिक गम्भीरतापूर्वक विचार करनेका अवसर मिलेगा, इसलिए उसे संसदमें शायद ज्यादा आसानीसे पास किया जा सकेगा। अतः मैं प्रस्ताव करता हूँ कि कार्य-सूचीसे इस विषयको रद कर दिया जाये और विधेयक वापस ले लिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

केप टाइम्स, २६-४-१९११

परिशिष्ट ४

गांधीजीके नाम लेनका पत्र

केप टाउन
अप्रैल २२, १९११

प्रिय श्री गांधी,

इसी २१ तारीखके मेरे पत्रके उत्तरमें आपका २२ अप्रैलका पत्र मिला।

मैंने आपका पत्र जनरल स्मट्सको दिखाया है। उन्होंने मुझे यह कहनेको कहा है कि आप जिस भावनासे लिखते हैं उसकी वे कद्र करते हैं और उन्हें पूरी आशा है कि प्रश्नपर समझौतापूर्ण रुख रखकर सोचनेसे एक ऐसा अल्पकालिक हल निकल सकता है जिससे सभी सम्बद्ध लोगोंको एक अधिक स्थायी हल पानेकी दिशामें अपनी शक्तियाँ लगानेकी सुविधा मिल जायेगी।

मुझे यह कहनेका अधिकार है कि मन्त्रीका इरादा संसदके आगामी अधिवेशनमें १९०७ के अधिनियम २ को रद करनेवाला एक ऐसा कानून पेश करनेका है जिसमें नाबालिग बच्चोंके अधिकारोंको सुरक्षित रखा जा सके। उक्त कानून बनानेमें मन्त्रीका अभिप्राय ऐसी व्यवस्थाएँ करना है जो कानूनकी दृष्टिसे सभी प्रवासियोंको समानता प्रदान करेंगी; फिर चाहे उनके अमलमें कितना ही भेदभाव क्यों न बरता जाये।

जो दूसरा मुद्दा आपने उठाया है उनके सम्बन्धमें मुझे यह कहना है कि उक्त प्रस्तावित कानूनमें उन सभी सत्याग्रहियोंको पंजीकृत करनेका अधिकार प्राप्त कर लिया जायगा जो यदि वर्तमान प्रतिरोध न होता तो १९०८ के अधिनियम संख्या ३६ के बावजूद उचित समयपर पंजीयन करा लेनेके कारण [इस समय भी] पंजीयनके अधिकारी होते।

मौजूदा अल्पकालिक प्रमाणपत्रोंको नियमित कर सकनेका अधिकार भी प्राप्त कर लिया जायेगा। मन्त्री महोदय उन शिक्षित सत्याग्रहियोंको, ये अल्पकालिक प्रमाणपत्र देनेको तैयार हैं, जो इस समय ट्रान्सवालमें हैं परन्तु वर्तमान एशियाई कानूनोंके अन्तर्गत जिनका पंजीयन नहीं किया जा सकता। मैं समझता हूँ ऐसे लोगोंकी संख्या अधिकसे-अधिक पाँच या छः है। जिनके पास ये प्रमाणपत्र होंगे वे, जो कानून बनने जा रहा है उसका ध्यान रखते हुए, ट्रान्सवालमें रहनेके अधिकारी होंगे।

अन्तमें मैं यह कह दूँ कि यदि आप इस प्रकारका आश्वासन दे दें कि समाज अपना सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित कर देगा तो मन्त्री महोदय महाविभव गवर्नर-जनरलसे उन सत्याग्रही कैदियोंकी रिहाईके

प्रश्नपर उदारतापूर्वक विचार करनेको कहेंगे जो वर्तमान एशियाई कानून तोड़नेके अपराधमें कैद भुगत रहे हैं।

मैं आशा करता हूँ कि भारतीय समाजसे सलाह करनेके बाद आप जनरल स्मट्सको उनके प्रिटोरिया वापस आनेपर सत्याग्रह समाप्त कर दिये जानेकी सूचना दे सकेंगे, ताकि वे सम्राट्की सरकारको ऐसा आश्वासन दे सकें कि भारतीय समाजके नेता समस्याके निश्चित हलकी दृष्टिसे सरकारसे सहयोग करना चाहते हैं।

आपका,
अर्नेस्ट एफ० सी० लेन
गृह-मन्त्रीका निजी सचिव

श्री मो० क० गांधी
केप टाउन

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५००) की फोटो-नकल तथा २९-४-१९११ के से भी।

परिशिष्ट ५

गांधीजीके नाम ई० एम० गॉर्जेसका पत्र

प्रिटोरिया
मई १९, १९११

महोदय,

आपके ४ तारीखके पत्रके ही सिलसिलेमें माननीय मन्त्रीने मुझे आपको यह और सूचित करनेका आदेश दिया है कि —

(क) उन एशियाइयोंको जिनको अधिनियम २/०७ या ३६/०८ के अन्तर्गत १ जनवरी, १९०८ के बाद निर्वासित किया गया था और जिनको इन अधिनियमोंके अन्तर्गत पंजीयन करानेका वैध अधिकार है किन्तु जो सत्याग्रह आन्दोलनके कारण अभी तक प्रार्थनापत्र नहीं दे सके हैं, उनको अगले ३१ दिसम्बर तक, अधिनियमों और विनियमोंकी व्यवस्थाओंके अधीन रहते हुए, प्रार्थनापत्र देनेकी अनुमति दी जायेगी।

(ख) अधिनियम २/०७ या अधिनियम ३६/०८ और इनके अन्तर्गत बनाये गये विनियमोंके अनुसार अगले ३१ दिसम्बरको या उससे पहले पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र देनेकी अनुमति उन एशियाइयोंको भी दी जायगी जिनका निर्वासन तो नहीं हुआ था लेकिन जो सत्याग्रह आन्दोलनके कारण पंजीयनके लिए प्रार्थना-पत्र दिये बिना ही दक्षिण आफ्रिकासे चले गये थे और जो साबित कर सकते हैं कि उनको पंजीयन करानेका वैध अधिकार है; बशर्ते कि (क) और (ख) के अंतर्गत प्राप्त प्रार्थना-पत्रोंकी संख्या तीससे अधिक न हो।

(ग) आपके पत्रके पाँचवें अनुच्छेदके संदर्भमें हमारी जानकारी यह है कि दक्षिण आफ्रिकामें ऐसे १८० भारतीय और चीनी हैं जिनका पंजीयन स्वेच्छिक प्रणालीके अंतर्गत नामंजूर कर दिया गया था और जिन्होंने अभीतक अधिनियम २/०७ या ३६/०८ के अंतर्गत अपने प्रार्थनापत्र पेश नहीं किये हैं। मुझे उनके सम्बन्धमें आपको सूचित करना है कि यदि कोई अनुसूचित विलम्ब किये बिना उनके नामोंकी एक सूची पेश कर दी जाये तो उनको उल्लिखित

अधिनियमोंकी व्यवस्थाओंके अधीन रहते हुए अगले ३१ दिसम्बर तक अपने प्रार्थनापत्र भेजनेका अवसर दिया जायेगा।

(घ) जो सात शिक्षित भारतीय अभी ट्रान्सवालमें हैं और जिनके नाम आपने बतलाये हैं उनको कानूनके रद्दोबदल होने तक यहाँ निवास करनेके लिए अस्थायी अधिकारपत्र दे दिये जायेंगे। और कानूनमें रद्दोबदल हो जानेपर ट्रान्सवालमें उनके निवासको प्राधिकृत करनेके लिए स्थायी अधिकार-पत्र दे दिये जायेंगे। तीन शिक्षित मुसलमानोंके निवासको भी एक विशेष रियायतके तौरपर, इसी प्रकार प्राधिकृत कर दिया जायेगा। भविष्यमें प्रतिवर्ष आनेवाले शिक्षित भारतीयोंकी प्रस्तावित संख्या छः ही रहेगी; इन प्रवासियोंकी हमारे बीच यही संख्या तय हुई थी। चालू वर्षमें मामलेकी विशेष परिस्थितिके कारण ही उसे दस तक बढ़ाया गया है।

मन्त्री महोदयको भरोसा है कि एशियाई समाज इन अनुरोधोंके स्वीकार किये जानेका यही अर्थ लगायेगा कि सभी विवादग्रस्त प्रश्नोंपर अन्तिम रूपसे समझौता हो चुका है। इस सम्बन्धमें आपका इस आशयका उत्तर आनेपर एशियाई पंजीयन अधिनियमोंके उल्लंघनके लिए इस समय सजा काटनेवाले सत्याग्रहियोंकी रिहाई करानेके उद्देश्यसे न्याय विभागके साथ लिखा-पढ़ी की जायेगी।

जाली प्रमाणपत्र रखने या दूसरे किसीके लिए जारी किये गये प्रमाणपत्रोंको इस्तेमाल करनेके सिलसिलेमें सजा काटनेवाले बन्दियोंको रिहा नहीं किया जा सकता।

आपका,
ई० एम० गॉर्जेस
कार्यवाहक गृह-सचिव

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५३३) की फोटो-नकल और २७-५-१९११ के **इंडियन ओपिनियन**से भी।

परिशिष्ट ६

गांधीजीके नाम गृह-सचिवका तार

प्रिटोरिया
मई २०, १९११

आपके कलके पत्र और आज फोन द्वारा उसके संशोधनके सम्बन्धमें: मेरे १९ के पत्रके अनुच्छेद छः में उल्लिखित १८० एशियाइयोंमें ट्रान्सवालमें युद्धपूर्व तीन वर्षके निवासके आधारपर ऐसे लोगोंको शामिल करनेपर कोई आपत्ति नहीं जो अभी दक्षिण आफ्रिकामें हैं पर जो पंजीयनके लिए उचित अवधिके अन्दर प्रार्थनापत्र नहीं दे सके थे। आपके २९ अप्रैलके पत्रके पहले प्रश्नके सम्बन्धमें: व्यक्तियोंके वास्तविक वर्तमान अधिकारोंको छीननेका तो कोई मन्शा नहीं लेकिन सारे संघके लिए एकरूप और एक सामान्य प्रकारके कानूनसे विभिन्न प्रान्तोंमें [भारतीयोंकी] स्थितिपर निःसन्देह प्रभाव पड़ेगा। दूसरे प्रश्नके बारेमें ऊपर कहा जा चुका है। तीसरे और चौथे प्रश्नके बारेमें मैं कलके पत्रके अनुच्छेद क और ख में कह चुका हूँ। पाँचवें प्रश्नको मेरे कलके पत्रके अनुच्छेद घ में लिया जा चुका है। छठवाँ प्रश्न: शिक्षाका कोई निर्धारित

मानदण्ड नहीं। सातवाँ प्रश्न: पर्याप्त रूपसे शिक्षित पंजीकृत भारतीयोंको परवाने लेते समय अँगुली या अँगूठा-निशानी देना जरूरी नहीं। आठवाँ प्रश्न: जाने-माने एशियाइयोंको यदि वे अंग्रेजीमें हस्ताक्षर कर सकें तो परवाने लेते समय अँगुली या अँगूठा-निशानी देना जरूरी नहीं।

मूल अंग्रेजी तार (एस० एन० ५५३६) की फोटो-नकल और २७-५-१९११ के **इंडियन ओपिनियन**से भी।

परिशिष्ट ७

क

ट्रान्सवाल स्थानीय शासन अध्यादेश, १९११ का प्रारूप

एशियाइयोंसे सम्बन्धित अंश

एशियाई बाजार[1]

६६ (१) परिषद एशियाइयोंकी दूकानोंके लिए बाजारों या अन्य क्षेत्रोंका अलगसे निर्धारण कर सकेगी, उन्हें ठीक हालतमें रखेगी तथा चलायेगी। ये बाजार और क्षेत्र केवल एशियाइयोंके लिए ही होंगे। वह समय-समयपर स्वयं जो उपनियम बनायेगी उसके अनुसार उनका नियन्त्रण तथा पर्यवेक्षण कर सकेगी, और उनमें स्थित भूमि या किसी भी इमारत या अन्य किसी भी रचनाको ऐसे विनियमों द्वारा समय-समयपर निर्धारितकी जानेवाली शर्तों तथा किरायेकी दरोंपर एशियाइयोंको पट्टेपर दे सकेगी।
(२) परिषद्को ऐसे बाजारों तथा क्षेत्रोंको बन्द करने और उनके लिए अन्य उपयुक्त प्रस्थान जुटानेकी क्षमता प्रदान करनेके लिए इससे पहलेके खण्डके उप-खण्ड (४) से (७) तककी सारी व्यवस्थाएँ यथोचित परिवर्तनोंके साथ लागू होंगी।
(३) परिषद् गवर्नर-जनरलके अनुमोदन और उनकी सहमतिके बिना एशियाइयोंके लिए अलगसे सुरक्षित ऐसे बाजारों या अन्य क्षेत्रोंको न तो निर्धारित करेगी और न बन्द और इस खण्डके अन्तर्गत बनाये गये किसी भी उपनियमका तबतक कोई प्रभाव नहीं होगा और न वह तबतक लागू होगा जबतक कि उसके लिए गवर्नर-जनरलका अनुमोदन और सहमति प्राप्त न कर ली गई हो।

६७. (१) परिषद् अपने स्थापित किये हुए या अपने नियन्त्रणमें रहनेवाले किसी भी वतनी बस्ती या एशियाई बाजार या कस्बेमें तैंतीस वर्ष तक की अवधिके लिए गवर्नर-जनरल द्वारा अनुमोदित पद्धति और शर्तोंके अनुसार जमीनके टुकड़े पट्टेपर उठा सकेगा।
(२) ऐसा प्रत्येक पट्टा वैध होगा, चाहे उसकी लिखा-पढ़ी नाजिर-रजिस्ट्रीके सामने न हुई हो और ऐसा

---

१. क्रूगरकी सरकारने एशियाइयोंको कुछ निश्चित बस्तियोंमें सीमित करनेका निर्णय सबसे पहले अप्रैल १८९९ में किया था और इनको विनियमित करनेकी सत्ता नगर परिषदोंको सौंपी गई थी; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ६२-६३। अप्रैल १९०३में युद्धके बाद बनी ब्रिटिश सरकारने ट्रान्सवालके लेफ्टिनेन्ट गवर्नर लॉर्ड मिल्नरके शासन-कालमें बाजार नोटिस जारी किया था; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३१४-१५। १९०५ में एक अध्यादेश द्वारा "बाजारों" की सीमाएँ निर्धारित करनेकी शक्ति नगर-परिषदोंको दे दी गई थी; देखिए, खण्ड ५, पृष्ठ २७-२८; खण्ड ३, पृष्ठ ३२८-३०; खण्ड ४, पृष्ठ ७९-८१, खण्ड ५, पृष्ठ ८४-८६ और पृष्ठ १५३-५६; खण्ड ६, पृष्ठ ५० और खण्ड ८, पृष्ठ १९४, २४३, २४८ और २८७।

प्रत्येक पट्टा या उसका प्रत्यर्पण वैध होगा, यदि उसे गवर्नर-जनरल द्वारा निश्चित विनियमोंके अनुसार परिषद् द्वारा रखी जानेवाली पंजी (रजिस्टर) में पंजीकृत किया गया हो।

ऐसे प्रत्येक पट्टे या उसके प्रत्यर्पणपर तबादिला-शुल्क या टिकट-शुल्कसे सम्बन्धित किसी भी कानूनके अन्तर्गत अदा किया जानेवाला शुल्क ऐसे विनियमों द्वारा संविहित ढंगसे अदा किया जायेगा और परिषद् इस प्रकार अदा होनेवाले शुल्कका सारा ब्योरा वित्त-मंत्रीको देगी।

सफाई, इत्यादि

७५. परिषद् समय-समयपर निम्नलिखित सभी प्रयोजनों या इनमें से किसी भी एकके लिए उप-नियमोंकी रचना कर सकेगी या उनमें रद्दोबदल कर सकेगी;

(१२) चायघरों, कॉफीघरों, जलपानगृहों, होटलों, भोजनालयों, भोजन और ठहरनेकी व्यवस्थावाले आवासों और सभी दुग्धविक्रेताओं, डेरियों, दूधकी दूकानों, गोशालाओं, नानबाईकी दूकानों, मांसकी दूकानों, और सभी फैक्टरियों और स्थानोंको जहाँ, भोज्य तथा पेय पदार्थ विक्रय या उपयोगके लिए बनाये या तैयार किये या बेचे जाते हैं, परवाने देने और उनको विनियमित करनेके लिए;

(१३) काफिरोंके भोजनालयोंको परवाने देने और उनको विनियमित करनेके लिए;

(१४) ठेलेवालों और फेरीवालोंको परवाने देने और उनको विनियमित करनेके लिए; इस शर्तके साथ कि अपनी ही भूमिपर उगाई हुई केवल ताजी चीजोंको बेचनेवालोंको, ठेलेवालों या फेरीवालोंके लिए अपेक्षित परवाने नहीं लेने पड़ेंगे;

(१५) सार्वजनिक या निजी स्थानोंपर कपड़े धोनेका नियमन करने या रोकने और धुलाईके कामके लिए व्यक्तियोंको परवाने देनेके लिए;

एशियाई चायघर[1]

८८. परिषद् समय-समयपर निम्नलिखित सभी प्रयोजनों या इनमें से किसी भी एकके लिए उप-नियमोंकी रचना कर सकेगी या उनमें रद्दोबदल कर सकेगी;

(६) एशियाई चायघरों या भोजनालयोंको विनियमित करने और उनको परवाने देनेके लिए।

परवाने

९१. परिषद् नाटक-गृह, संगीत-भवन, सार्वजनिक भवन, नाचघर या आमोद-प्रमोदके किसी अन्य स्थान या मनुष्योंके उपयोगके लिए भोज्य या पेय वस्तुओंको बेचने, इस्तेमाल या तैयार करनेवाली दूकानों, या ठहरने तथा खानेकी व्यवस्थावाले किसी भी आवास या धुलाईका काम करनेवाली दुकानोंके लिए या फेरीवालों-ठेलेवालोंको इससे ठीक पहलेके खण्डमें उल्लिखित आधारों और निम्नलिखित सभी या इनमें से किसी भी एक आधारपर परवाने देनेसे इनकार कर सकती है:

(क) कि प्रार्थी अच्छे चाल-चलनका सन्तोषप्रद प्रमाण पेश नहीं कर सका;

(ख) जिसके लिए परवाना माँगा गया है उस स्थानमें या प्रार्थीके स्वामित्ववाले या उसके द्वारा अधिकृत उससे लगे हुए स्थानोंमें बहुधा बुरी चाल-चलनके लोगोंका आना-जाना रहता है;

(ग) कि जिस स्थानके लिए परवाना माँगा गया है उसे मंजूर करनेसे पड़ोसके लोगोंको असुविधा या परेशानी होगी;

(घ) कि ऐसा परवाना मंजूर करना लोक-हितके विरुद्ध होगा;

और परिषद् द्वारा परवाना देनेसे इनकार करनेके विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकेगी।

---

१. सन् १९०५ में ही एक कानून पास करके सभी भारतीय होटल-मालिकोंके लिए परवाने लेना जरूरी बना दिया गया था; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ २९ और ८४–८५ खण्ड ६, पृष्ठ ३३८–३९ और ३४५–४६; खण्ड ७, पृष्ठ ९१–९२ और ३२९।

९२. परिषद् अपने उपनियमोंके अनुसार मंजूर किये गये उस परवानेके सम्बन्धमें, जिसके आधार-पर मनुष्योंके उपयोगके लिए भोज्य तथा पेय वस्तुओंके निर्माण, तैयारी, विक्रय या उपभोगका व्यापार या व्यवसाय करनेका अधिकार परवानाधारीको मिल जाता है,

(क) ऐसी भोज्य तथा पेय वस्तुओंको तैयार करनेमें वतनी, एशियाई, या रंगदार मजदूरोंको काम-पर रखना निषिद्ध करने या प्रतिबन्धित करनेकी शर्त लगा सकेगी;

(ख) भोज्य तथा पेय वस्तुओंके विक्रयका दूकानोंमें सोलह वर्षसे कम अवस्थाकी लड़कियोंको काम-पर रखना या ऐसी दूकानोंमें रातको आठ बजेके बाद स्त्रियोंसे काम कराना निषिद्ध या प्रतिबन्धित करनेकी शर्त लगा सकेगी;

किन्तु शर्त यह रहेगी कि इस खण्डके अन्तर्गत परिषद् द्वारा लगाई शर्तें परवानेपर स्पष्ट रूपसे दर्ज की जाये और परवानाधारी उन शर्तोंसे युक्त परवानेके प्रपत्रकी एक दूसरी प्रतिपर हस्ताक्षर करेगा। परिषद् इस प्रकार पृष्ठांकित और हस्ताक्षरित दूसरी प्रतिको अपने पास रखेगी और किसी भी न्यायालयमें उसे पेश किये जानेपर उसे उन लगाई गई शर्तोंका स्पष्टतः प्रमाण माना जायेगा।

९३. इस अध्यादेशमें किसी बातके इसके विरुद्ध होते हुए भी, परिषद् रिक्शा खींचनेवालों, या सड़क-पर चलनेवाली यान्त्रिक गाड़ियों, ट्राम-गाड़ियों, बसों, मोटरगाड़ियों, घोड़ागाड़ियों, ट्रॉलियों, या अन्य गाड़ियोंके चालकोंको अपने विवेकसे परवाने मंजूर करनेसे इनकार कर सकती है।

मतदाता सूची[1]

११४. ऐसे प्रत्येक गोरे स्त्री या पुरुषको, जो २१ वर्ष या इससे अधिक अवस्थाका ब्रिटिश नागरिक हो और जो नगरपालिकाकी सीमामें स्थित किसी ऐसी इमारतका स्वामी हो और उसमें निवास करता हो, जिससे प्राप्त हो सकनेवाली कुल वार्षिक आय १२ पौंड और इससे अधिक है या नगरपालिकाकी सीमामें स्थित किसी ऐसी अचल सम्पत्तिका स्वामी हो जो सम्पत्ति-कर या इमारतके मूल्य-निर्धारणके आधारपर कर-अदायगीके योग्य हो, नगरपालिकाकी मतदाता-सूचीमें सम्मिलित किये जानेका अधिकारी होगा, परन्तु पति और पत्नी दोनों एक ही सम्पत्तिके आधारपर मतादाता-सूचीमें सम्मिलित नहीं किये जायेंगे।

ट्राम-गाड़ियाँ

१७१. परिषद् समय-समयपर निम्नलिखित सभी या इनमें से किसी एक प्रयोजनके लिए उप-नियमोंकी रचना या उसमें रद्दोबदल कर सकेगी:

(क) परिषद् द्वारा स्थापित, अर्जित, या संचालित किसी भी ट्राम-पथके इस्तेमालका नियमन करनेके लिए और परिषद्की ट्रामगाड़ियोंके इस्तेमालके सम्बन्धमें रद्दोबदल करनेके लिए;

(ख) परिषद्की ट्राम-गाड़ियोंके वतनियों और एशियाइयों द्वारा इस्तेमालका नियमन करनेके लिए और वतनियों और सभ्य आचार या उचित वेष-भूषासे हीन सभी व्यक्तियों द्वारा ऐसी ट्राम-गाड़ियोंके इस्तेमालको निषिद्ध या प्रतिबन्धित करनेके लिए,[2]

(ग) ट्राम-गाड़ियोंमें काम करनेके लिए परिषद् द्वारा नियुक्त व्यक्तियोंकी सेवाकी शर्तों और कर्तव्यका नियमन करने और ऐसे व्यक्तियोंपर लापरवाही, कर्तव्य-चूक, या ट्रामगाड़ियोंके सही और उचित संचालनपर बुरा प्रभाव डालनेवाले अन्य अपराधोंके लिए (वेतन रोक कर) जुर्माना करनेके लिए।

---

१. इस खण्डमें नगरपालिकाके चुनावमें भारतीयोंके मताधिकारका जिक्र न करके उनको इस अधिकारसे वंचित किया गया था। ट्रान्सवालके भारतीयोंको इस अधिकारसे १९०३ में ही वंचित कर दिया गया था; खण्ड ३, पृष्ठ ३५६-५७ खण्ड ४, पृष्ठ २०५-०६; और खण्ड ९, पृष्ठ २९०-३००।

२. देखिए, खण्ड ५, पृष्ठ १९४-९५, २००-०१, २०२-०३, २१५, ३३२, ३४३ और ३५०-१ खण्ड ६, पृष्ठ ५११-१२; खण्ड ८, पृष्ठ २८७; और खण्ड ९, पृष्ठ ३१५।

ऐसा कोई भी उप-नियम इस अध्यादेश या नगरपालिकाकी सीमामें लागू किसी भी अन्य कानूनकी व्यवस्थाओंके साथ असंगत, उनके विरुद्ध या उनके प्रतिकूल नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-६-१९११

प्रार्थनापत्र: ट्रान्सवाल प्रान्तीय परिषद्को

ख

जोहानिसबर्ग
जून ५, १९११

माननीय प्रशासक
तथा सदस्यगण
प्रान्तीय परिषद्,
ट्रान्सवाल

ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी हैसियतसे श्री अ० मु० काछलियाका प्रार्थनापत्र

विनम्र निवेदन है कि

१. प्रार्थीने १७ मईके सरकारी सूचनापत्रमें प्रकाशित स्थानीय शासन अध्यादेश १९११[1] का प्रारूप पढ़ लिया है। प्रार्थीको बड़ी गहरी आशंका है कि उसकी कई धाराएँ यहाँ वैधरूपसे रहनेवाले ब्रिटिश भारतीय निवासियोंपर नई-नई गम्भीर निर्योग्यताएँ थोप देंगी।

२. प्रार्थी देखता है कि अध्यादेशका खण्ड ६६ और ६७ परिषद्को केवल एशियाइयोंके लिए बाजारों या अन्य क्षेत्रोंका अलगसे निर्धारण करने, उन्हें ठीक हालतमें रखने तथा चलाने और परिषद् द्वारा समय-समयपर बनाये जानेवाले उप-नियमोंके अनुसार उनका नियन्त्रण करनेका अधिकार प्रदान करता है और खण्ड ६६ के उपखण्ड (३) के अनुसार परिषद् (गवर्नर-जनरलके अनुमोदन और उसकी सहमतिसे) ऐसे किसी स्थानपर जहाँ सबकी नजर पड़ सके अपनी मंशाके बारेमें सूचना-पत्र लगवाकर ऐसे बाजारोंको बन्द कर सकती है। इसके सम्बन्धमें प्रार्थी कहना चाहता है कि जातीय भेदभावके आधारपर अमुक लोगोंको अलग बसानेके सामान्य प्रश्नको न भी उठाया जाये, जिसके बारेमें आपके प्रार्थीको सिद्धान्तः आपत्ति है, तो भी परिषद्को जो शक्तियाँ प्रदान की गई हैं उनको, ब्रिटिश भारतीयोंके, विशेषकर ऐसे बाजारोंमें अपना कारोबार जमा लेनेवाले दूकानदारोंके खिलाफ, बड़े ही हानिकारक ढंगसे प्रयुक्त किया जा सकता है। नगरोंका आकार बढ़नेपर लगभग हर बार पहलेके "बाजारोंको" बन्द कर दिया गया है और उसके फलस्वरूप दूकानदारोंको नगरके केन्द्रों और मार्गोंसे अधिक दूर-दूर स्थित दूसरे बाजारमें भेज दिया गया है। अवधिके बारेमें इस तरहकी अनिश्चितता व्यवसाय और खुशहालीके प्रतिकूल पड़ती है और ऐसे "बाजारों" में दूकान बनाने और धन्धा करनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंके लिए भीषण कठिनाई उत्पन्न कर देती है।

३. खण्ड ७५ (१२), (१३) और (१४) और खण्ड ८८ (६) का एशियाइयोंके हितोंसे विशेष सम्बन्ध है। इन खण्डोंके अन्तर्गत परिषदें भोजनालयों, मांसकी दूकानों, एशियाइयों और काफिरोंके भोजनालयों, ठेलेवालों, फेरीवालों, धोबियों और धुलाईघरोंका तथा उन्हें दिये जानेवाले परवानोंका नियन्त्रण करती रहेगी; और प्रार्थी देखता है कि विधानमें उल्लिखित दूसरे व्यवसायोंसे सम्बन्धित परवानोंके परिषद्

---

१. ट्रान्सवाल सरकारने १९०८ में लगभग इसी प्रकारके पंजीयनकी एक व्यवस्था करनेकी कोशिश की थी लेकिन बादमें उसे त्याग देना पड़ा था; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २४३, २४८, २८६-८७, ३०९-१०।

द्वारा नामंजूर कर दिये जानेपर तो रेजीडेंट मजिस्ट्रेटके यहाँ अपील की जा सकती है, लेकिन खण्ड ९१ में स्पष्ट व्यवस्था है कि "उक्त परवानोंमें से किसीके परिषद द्वारा नामंजूर हो जानेपर कोई अपील नहीं की जा सकेगी।" संघके जिन प्रान्तोंमें परवाना निकायों या परिषदोंको इसी प्रकारकी अनियन्त्रित सत्ता प्रदान की गई है या की गई थी, वहाँके ब्रिटिश भारतीयोंके अनुभवको देखते हुए, प्रार्थी मनमानी नामंजूरीके विरुद्ध उचित रूपसे संगठित न्यायिक न्यायाधिकरण (जुडीशियल ट्रिब्युनल) में अपील करनेके अधिकारसे स्पष्टतः वंचित किये जानेका बड़ी उत्कटतासे विरोध करता है। साथ ही, मैं यह भी कह दूँ कि ऐसी व्यवस्था प्रजाकी स्वतंत्रतापर कुठाराघात करती है।

४. साथ ही प्रार्थी इस महती सभाका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि चीनी गिरमिटिया मजदूरोंकी वापसीके बाद एशियाई चायघर या भोजनालय रह ही नहीं गये हैं इसलिए अब उनको परवानोंके द्वारा नियन्त्रित करनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठता। इस प्रान्तमें रहनेवाले छोटे-से एशियाई समाजकी आवश्यकताएँ खानगी भोजनालयोंसे पूरी हो जाती हैं।

५. खण्ड ९२ के आधारपर एशियाई मजदूरोंको कामपर रखना निषिद्ध किया जा सकता है और उसके कारण उपयोगी उद्योगोंमें काम करनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंके लिए भारी कठिनाई पैदा हो जायेगी और कुछको तो अपनी जीविकासे भी हाथ धोना पड़ सकता है। प्रार्थीका विनम्र मत है कि इस खण्डमें एशियाइयोंके साथ जो भेदभाव किया गया है उसे हटा दिया जाना चाहिए।

६. आगे प्रार्थीका निवेदन है कि चालकोंके परवाने देने या न देनेकी परिषदको स्वविवेकके आधारपर जो शक्ति प्रदान की गई है (खण्ड ९३), उसके निर्णयके विरुद्ध न्यायिक न्यायाधिकरणमें अपील करनेका अधिकार दिया जाना चाहिए।

७. इस प्रान्तमें मौजूद एशियाइयोंके बारेमें दुर्भाग्यपूर्ण पूर्वग्रहको देखते हुए हमारे समाजने विवशतावश राजनीतिक मताधिकारकी माँग तो नहीं की परन्तु खण्ड ११४ ने हमारे समाजके लोगोंको नगरपालिकाकी मतदाता सूचीसे अलग रखकर उनपर जो एक स्पष्ट निर्योग्यता थोप दी है उससे हमारे मनको बड़ी गहरी चोट पहुँची है। यह निर्योग्यता केवल उन गोरे लोगोंपर लागू होती है जो गम्भीर किस्मके अपराधोंके दोषी पाये गये हों।

प्रार्थी इस महती सभाको स्मरण दिलाना चाहता है कि भारतीय लोग करके रूपमें नगरपालिकाको काफी बड़ी राशि देते हैं और जैसा कि आँकड़ोंसे सहज ही सिद्ध हो जाता है, वे कानूनका सबसे अधिक पालन करनेवालोंमें से हैं। इसलिए प्रार्थीको इसपर बड़ी आपत्ति है कि उनका शुमार सजायाफ्ता गोरोंके साथ किया गया है।

८. खण्ड १७१ (ख) की व्यवस्थाके अनुसार "वतनियों, एशियाइयों और सभ्य आचार या उचित वेष-भूषासे हीन सभी व्यक्तियों" के लिए ट्रामगाड़ियोंका इस्तेमाल निषिद्ध या प्रतिबन्धित किया जा सकता है। एशियाई समाजके लिए यह प्रतिबन्ध अपमानपूर्ण है और असुविधाजनक भी, और प्रार्थीके विनम्र मतसे यह सर्वथा अनावश्यक है।

९. अन्तमें, प्रार्थी बड़ी उत्कटतासे उपरोक्त कष्टोंकी ओर इस महती सभाका ध्यान आकर्षित करता है कि ऊपर बताये अनुसार हमारी सहायता करनेके लिए अध्यादेशके प्रारूपका संशोधन किया जाये। इस कृपा और न्यायपूर्ण कार्यके लिए प्रार्थी अपना कर्तव्य मानकर दुआ करता रहेगा।

अध्यक्ष,
अ० मु० काछलिया
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

'इंडियन ओपिनियन', १०-६-१९११; और कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स (सी० ओ० ५५२/२२) से भी।

परिशिष्ट ८

उपनिवेश कार्यालयको दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिका पत्र

थैनेट हाउस
२३१-२३२, स्ट्रैंड, डब्ल्यू० सी०
जून १७, १९११

उपनिवेश-उपमन्त्री
उपनिवेश कार्यालय, एस० डब्ल्यू०
महोदय,

आपका इसी माहकी १३ तारीखका कृपापत्र, संख्या १८५४२/१९११, प्राप्त हुआ। उसमें मुझे उपनिवेश-मन्त्रीकी ओरसे इस बातके लिए आमन्त्रित किया गया है कि यदि मुझे ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा औपचारिक रूपसे किये गये निवेदनके अतिरिक्त कुछ और कहना हो तो मैं उसे लिखित रूपमें उनके सामने पेश कर दूँ। ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके निवेदनकी एक प्रति मुझे भेजी गई है। किन्तु मुझसे केप और नेटालके भारतीयोंकी ओरसे उनकी बात पेश करनेके लिए भी कहा गया है और उनके स्मरणपत्रोंकी प्रतियाँ भी मेरे पास भेजी गई हैं; इसलिए मैं मन्त्री श्री हरकोर्टसे अनुमति चाहूँगा कि मुझे [समस्त] दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजकी स्थितिके बारेमें सामान्य रूपसे कुछ कहने दिया जाये।

२. भारतीय समाजके विभिन्न समुदायोंमें जो भावना सबसे अधिक प्रबल है, वह है भारी क्षोभ और अरक्षितताकी। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समझ गये हैं कि यदि सम्राट्की सरकार उनके पक्षमें बार-बार हस्तक्षेप न करे तो उनका जीवन दूभर हो जायेगा। उन लोगोंने काफी गहरी आशंकाके साथ उस वार्ताकी प्रगतिपर नजर रखी है जिसकी परिणति संघके अधिनियमके पास होनेके रूपमें हुई है। ट्रान्सवालके भारतीयोंको भय था कि केप और नेटालके परवाना कानूनोंमें निहित सिद्धान्तोंको वहाँ भी लागू कर दिया जायेगा; और केप और नेटाल प्रान्तोंके भारतीयोंको यह भय था कि ट्रान्सवालमें लागू बस्तियोंके पंजीयन और प्रवास सम्बन्धी कानूनोंको उनके यहाँ लागू कर दिया जायेगा। वेरीनिगिंगके समझौतेके बादसे यह एक प्रवृत्ति देखनेमें आई है कि समूचे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके साथ एक ही तरहका बरताव किया जाये; और इसका आधार हो उनके साथ [विभिन्न प्रदेशोंमें] जैसा बरताव होता रहा है उसका सख्तसे-सख्त रूप। उपनिवेश-मन्त्रीको स्मरण होगा कि लॉर्ड मिलनरने १९०३ में जब बाजार-सम्बन्धी आदेश जारी किया था, तब नेटालने उसे शीघ्र ही अपना लिया था। नेटालके परवाना-सम्बन्धी सख्त कानूनको केपने अपना लिया था, और अब ट्रान्सवालमें भी उसे लागू करनेकी कोशिश की जा रही है। इसीलिए दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंमें यह भावना बड़ी तेजीसे घर करती जा रही है कि यदि वे अपने यत्किंचित् नागरिक अधिकार और सुविधाएँ बनाये रखना चाहते हैं तो उनको अपने हितोंपर संघमें चारों ओरसे होनेवाले नित नये हमलेके खिलाफ एक संयुक्त मोर्चा खड़ा करना चाहिए। वास्तवमें केप और नेटालके भारतीयों द्वारा पिछले सत्याग्रह आन्दोलनके दौरान अनेक प्रकारसे ट्रान्सवालके अपने भाइयोंके दावोंका इतनी मुस्तैदीके साथ समर्थन किये जानेका यह भी एक मुख्य कारण था।

३. ट्रान्सवालके भारतीयोंको सदासे इसका बड़ा भय रहा है कि १८८५ के कानून ३ की उस धाराको लागू करनेकी कोशिश की जायेगी, जो उन्हें निर्दिष्ट बस्तियोंमें रखनेके लिए बाध्य करती है।

ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने १९०३में निर्णय दिया था कि निर्दिष्ट बस्तियोंसे ही बाहर व्यापार करनेवाले भारतीयोंको भी व्यापारिक परवाने दिये जाने चाहिए, परन्तु भारतीयोंको निर्दिष्ट बस्तियोंमें ही निवास और व्यापार करनेपर विवश करनेके उद्देश्यसे पास किया गया सबसे पहला कानून था क्रीडडॉर्प बाड़ा अधिनियम। बस्ती अधिनियम और स्वर्ण कानूनने तो भारतीयोंकी बड़ीसे-बड़ी आशंकाको भी सही सिद्ध कर दिया है। हालाँकि १८८५के कानून ३ की एक व्यवस्थाके अनुसार अचल सम्पत्तिका स्वामित्व भारतीयोंके नामपर दर्ज नहीं हो सकता, किन्तु ट्रान्सवालके न्यायालयोंने यूरोपीयों और भारतीयोंके बीच हुए ऐसे करारोंको, जिनसे भारतीयोंको उसका न्यायिक स्वामित्व प्राप्त होता है, मान्यता दी है, जैसा कि सैयद इस्माइल तथा एक अन्य **बनाम** एस० जैकब्स एन० ओ० के मुकदमेमें हुआ था। परन्तु इन नये कानूनोंका परिणाम यह होगा कि ऐसी अचल सम्पत्तिके पंजीयित यूरोपीय स्वामियों और न्याय्य भारतीय स्वामियोंको दण्डित किया जायेगा। मेरे जैसे यूरोपीय स्वामियोंपर काफी बड़ा जुर्माना इसलिए किया जा सकेगा कि उन्होंने भारतीय रंगदार लोगोंको उनकी अपनी जगहमें निवास करनेकी अनुमति दी; और भारतीय स्वामियोंकी सारी सम्पत्तिको, जो उनकी अपनी ही है, जब्त किया जा सकेगा। इन विविध कानूनोंके फलस्वरूप भारतीयोंके विनियोजित धनकी सुरक्षा खतरेमें पड़ जायेगी और भारतीय व्यापारियोंको अनिवार्यत: ऐसी पृथक बस्तियोंमें जाकर रहना पड़ेगा जहाँ वे कोई कारोबार नहीं कर सकते और जहाँ अपने मौजूदा ग्राहकोंके साथ उनका कोई भी सम्बन्ध बना नहीं रह सकता। उनमें से सैकड़ों बिल्कुल बरबाद हो जायेंगे और बिना अपने किसी अपराधके इतनी क्षति उठानेके कारण उनको आफ्रिका छोड़नेपर विवश होना पड़ेगा। इस प्रकार बरबाद होनेवालोंमें से कई ऐसे होंगे जिन्होंने सत्याग्रहियोंके साथ सहानुभूति तो रखी है और रुपये पैसेसे उनकी सहायता भी की है, पर स्वयं कभी संघर्षमें सक्रिय रूपसे भाग नहीं लिया। परन्तु यदि ये कानून लागू कर दिये गये और उनके लागू कर दिये जानेकी आशंका सर्वथा सकारण है, तो मुझे कोई सन्देह नहीं है, कि अभी जिस संघर्षको समाप्त मानकर सन्तोष किया जा रहा है, उससे भी कहीं अधिक कटु संघर्ष शुरू हो जायेगा; क्योंकि इन विनाशकारी प्रयत्नोंके विरोधमें समाजके सभी लोगोंके कमर कसकर एक हो जानेकी पूरी सम्भावना है। आजकल जिस नीतिपर अमल किया जा रहा है, वह केवल परेशान करनेकी नीति नहीं है, इसका एक जाना समझा हुआ उद्देश्य है और वह यह कि जिन वैध अधिवासी भारतीयोंको किसी और तरीकेसे नहीं हटाया जा सकता, उनकी स्थिति बिलकुल असहनीय बनाकर उन्हें देश छोड़नेपर विवश कर दिया जाये और देखनेमें यही लगे कि वे अपनी इच्छासे देश छोड़ कर जा रहे हैं।

४. ये बातें केप और नेटालके भारतीयोंपर भी काफी हद तक लागू होती हैं। केपके प्रवासी कानूनका उपयोग निवासी भारतीयोंकी पहलेसे घटती जा रही संख्याको और घटानेके लिए किया गया है। अभी हाल ही में कुछ ऐसे मामले सामने आये हैं जिनमें अनुपस्थितिके लिए मंजूर अवधिसे दो-तीन दिन भी ज्यादा अनुपस्थित हो जानेपर प्रान्तके काफी पुराने निवासी भारतीयोंको प्रवेश नहीं दिया गया; उनमें से कुछ तो ऐसे भी हैं, जिनका कारोबार वहाँ अभीतक फैला हुआ है। नेटालके कानूनमें अधिवासकी परिभाषा है, किन्तु केपके कानूनमें अधिवासकी कोई परिभाषा नहीं दी गई है, और उसका अमल जिस प्रकार किया जा रहा है, उससे लोगोंको लगातार कष्ट होता रहता है। सच तो यह है कि इन दोनों प्रान्तोंके भारतीयोंका ख्याल है कि प्रवास-सम्बन्धी प्रशासनका रवैया उनके प्रति सबसे अधिक कठोर और असहानुभूतिपूर्ण है, और उसके अधिकारी यह मान कर चलते हैं कि वहाँ पूर्व-अधिवासी भारतीयको किसी भी बहाने पुन: प्रवेश न करने देना ही उनका कर्त्तव्य है। प्रवासी अधिकारी बहुधा बड़े मनमाने ढंगसे काम करते हैं। मन्त्री श्री हरकोर्ट १४ तारीखके तारोंको देखकर स्वयं ही निष्कर्ष निकाल लेंगे कि ये अधिकारी बहुधा न्यायालयोंके आदेशोंका अपमान और उल्लंघन भी करते हैं। परन्तु जिन भारतीयोंको उनका शिकार बनना पड़ता है उनमें से हरएककी सामर्थ्य तो इतनी नहीं होती कि वह प्रान्तीय न्यायालयोंकी शरण ले सके;

और इसमें कोई सन्देह नहीं कि केप और नेटाल दोनों ही प्रान्तोंके प्रवासी अधिकारियोंने अपनी मनमानीसे कई निर्दोष व्यक्तियोंको बड़ा कष्ट पहुँचाया है। केपके भारतीयोंका सुझाव है कि प्रान्तके प्रवासी कानूनोंमें रद्दोबदल करते समय प्रवासी-अधिकारीके ऊपर एक प्रवासी बोर्ड बनानेकी व्यवस्था की जानी चाहिए और उसमें भारतीयोंको प्रभावपूर्ण प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए।

५. परवाना कानूनोंसे भारतीय व्यापारी और फेरीवाले बड़ी मुसीबतमें पड़ गये हैं। तटवर्ती प्रान्तोंके परवाना-अधिकारियोंने कई विचित्र-से कारणोंका बहाना लेकर, और कभी-कभी तो बिना किसी कारणके ही, भारतीय व्यापारियोंको "उखाड़ने" की नीति अपना ली है। केपमें सैकड़ों भारतीय फेरीवाले बरबाद हो चुके हैं, और जिनमें वे काम करते थे, ऐसी सैकड़ों फर्में बन्द हो चुकी हैं। नेटालमें १९०९ के संशोधन कानूनसे भारतीय समाजपर होनेवाले पहलेके घोर अन्यायको रोकनेमें निःसन्देह ही काफी सहायता मिली, लेकिन अब परवाना-अधिकारी परवानादारोंको उनकी जीविकासे वंचित करनेके अन्य तरीके निकाल रहे हैं। जिन भारतीय व्यापारियोंने ऋणदाताओंसे कोई करार कर रखा है, वे तो व्यापार चालू रहनेपर ही उन करारोंकी पूर्ति कर सकते थे, लेकिन उन्हें परवाना देनेसे इनकार कर दिया गया है। यदि भारतीय व्यापारी अपना कारोबार किसी दूसरी दूकानमें ले जाना चाहता है, तो उसके परवानेपर स्थानान्तरणके लिए आवश्यक पृष्ठांकन करनेसे इनकार कर दिया जाता है और यदि वह अपने कारोबारमें किसीको साझेदार बनाना चाहता है तो परवाना-अधिकारी उसे इसकी भी इजाजत नहीं देते। यदि वह अपना कारोबार अपने पुत्रको सौंपना चाहता है तो उसकी इजाजत नहीं दी जाती और कोशिश यह होती है कि परवाना जिसके नाम-पर है, उसके जीवन-काल तक ही परवानेकी अवधि सीमित कर दी जाये, जिससे कि पुत्र अपने पिताके कारोबारका उत्तराधिकारी न हो सके। परवाना दूसरोंके नामपर भी करवाना, यहाँतक कि उपनिवेशमें जन्मे किसी भारतीयके नामपर करवाना भी लगभग असम्भव है। यदि इसी प्रकार उनकी उन्नतिके रास्ते एकके बाद एक बन्द होते रहे, जैसा कि दिख रहा है, तो वास्तवमें यह कहना कठिन है कि उपनिवेशमें जन्मे भारतीयोंका भविष्य क्या होगा। केप और नेटालके भारतीयोंका मत है कि अब निवासी भारतीय समाजकी संख्यामें आगे कोई वृद्धि होनेकी सम्भावना नहीं है; इसे देखते हुए भारतीय व्यापारपर लगे ये प्रतिबन्ध शीघ्र ही हटाये जाने चाहिए। परन्तु इसके विपरीत श्री जी० एच० ह्यूलेटने, जैसा कि उन्होंने खुद ही स्वीकार किया है, भारतीय व्यापारी समाजको इस मान्यताके कारण कि भारत-सरकार द्वारा गिरमिटिया मजदूरोंका भेजा जाना बन्द किये जानेमें उनका हाथ रहा है, दण्डित करनेके उद्देश्यसे हाल ही में नेटाल प्रान्तीय परिषद्में एक प्रस्ताव पास कराया है, जिसमें यह माँग की गई है कि सम्बन्धित कामकाज, जिसके बारेमें अभी केवल संघ-संसद् ही कानून बनाती है, उसके बजाय परिषद्को सौंप दिया जाये। नेटालके भारतीयोंने ऐसी हर कार्रवाईका जोरदार विरोध किया है। उनका यह विरोध दक्षिण आफ्रिका अधिनियमके खण्ड १४७ की लागू व्यवस्थाओंपर आधारित है। मैं मन्त्री श्री हरकोर्टकी और अधिक जानकारीके लिए इस सम्बन्धमें नेटाल भारतीय कांग्रेसमें हुई बहस और प्रस्तावकी एक प्रति इसके साथ नत्थी कर रहा हूँ।

६. भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीय पुरुषों, स्त्रियों और बच्चोंपर तीन पौंडी वार्षिक कर लगनेके कारण दक्षिण आफ्रिकाके समूचे भारतीय समाजमें बड़ी कटुता फैल गई है, विशेषकर स्त्रियों और बच्चों-पर कर लगनेसे उनमें क्षोभ है। इससे भारतीय समाजकी भावनाओंको बड़ी ठेस लगी है। उनका कहना है कि कमसे-कम स्त्रियों और बच्चोंको तो इस करसे विमुक्त रखकर उन्हें ऐसे करोंसे उत्पन्न होनेवाली बुराइयोंसे बचाना चाहिए। १९१० के संशोधन अधिनियमसे परिस्थितिमें बहुत ही थोड़ा सुधार हुआ है। कुछ मजिस्ट्रेट तो कभी-कभी कुछ व्यक्तियोंको पूरी छूट दे देते हैं, कुछ मजिस्ट्रेट एक निश्चित अवधिके लिए कुछ व्यक्तियोंको अस्थायी तौरपर विमुक्त कर देते हैं, परन्तु कुछ मजिस्ट्रेट ऐसे भी हैं जो बिलकुल छूट नहीं देते; किन्तु मेहरबानीके तौरपर करकी अदायगीके लिए बहुत थोड़ा-सा समय दे देते हैं

और फिर अदायगी नहीं पानेपर दुर्भाग्यकी मारी स्त्रियोंको सपरिश्रम कारावासकी सजा दे देते हैं। इस प्रकारकी जबरन वसूलीसे अनिवार्यतः पैदा होनेवाली आर्थिक और सामाजिक बुराइयोंको अधिक विस्तारसे पेश करना मैं अनावश्यक समझता हूँ।

७. मन्त्री श्री हरकोर्टने दक्षिण आफ्रिका संघके गवर्नर-जनरलको जो खरीते भेजे थे, उनको पढ़कर केप और नेटालके भारतीयोंको बड़ा सन्तोष हुआ था। उपनिवेश-मन्त्रीने उनमें कहा था कि ट्रान्सवालके विवादके सम्बन्धमें जो भी समझौता किया जाये, उसमें केप और नेटालके भारतीयोंके अधिकारों और सुविधाओंको कम नहीं होने देना चाहिए। पर दुर्भाग्य की बात है कि पिछले सत्रके दौरान संसदमें जो विधेयक पेश किया गया, उसका भारतीय हितोंपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता था; और अगले वर्ष पेश होनेवाले विधेयकके बारेमें भी बड़ी आशंका यह है कि उसमें सभी आवश्यक रक्षोपाय सम्मिलित नहीं किये जायेंगे। निवेदन है कि वर्तमान नेटाल कानूनमें जैसा किया ही गया है, संविहित अधिवासकी स्पष्ट परिभाषा की जानी चाहिए, मौजूदा परीक्षाओंको अधिक सख्त नहीं बनाना चाहिए और भारतसे मुनीम तथा अन्य विश्वस्त सहायक लानेका भारतीय व्यापारियोंका मौजूदा अधिकार सुरक्षित रहना चाहिए। मुझे अधिकार देकर यह अनुरोध करनेके लिए विशेष रूपसे हिदायत दी गई है कि उपनिवेश-मन्त्री इन प्रान्तोंके भारतीय निवासियोंको गम्भीर हानि और अन्यायसे बचानेके लिए प्रत्येक प्रस्तावित प्रवासी विधानकी बड़ी सावधानीसे छानबीन करें।

८. दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी शिकायतोंके दो बड़े कारण हैं। पहला तो यह कि दक्षिण आफ्रिका अधिनियमके खण्ड १४७ में सम्मिलित संरक्षणके उपायोंके प्रयोजनको निष्फल बनानेके लिए ऐसे कानून बनाये जा रहे हैं, जो हैं तो एशियाई-विरोधी, पर जिनकी भाषा ऐसी रखी जाती है जिससे ऐसा लगे कि वे सर्वसामान्य रूपसे सभी लोगोंपर लागू होते हैं। दूसरा यह कि विधान-विशेष तो चाहे स्वीकार्य हो लेकिन उसके अन्तर्गत बनाये गये विनियम ऐसे होते हैं जिनमें बहुधा जातीय भेदभावकी अत्यन्त आपत्तिजनक व्यवस्थाओंका समावेश रहता है और ये विनियम बहुधा मंजूरीके लिए संसदमें पेश नहीं किये जाते।

९. लगता है कि मैंने दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके कष्टोंके बारेमें पहले कही बातोंको ही काफी हद तक दोहराया है। लेकिन साम्राज्य-सम्मेलनमें स्वशासित उपनिवेशोंके (डोमीनियन्सके) भारतीय निवासियोंके साथ होनेवाले बरतावसे सम्बन्धित चर्चाका दिन निकट आ रहा है और चूँकि उपनिवेश-मन्त्रीके साथ मैं परिस्थितिके बारेमें व्यक्तिगत रूपसे बातचीत नहीं कर सकूँगा इसलिए मैंने सोचा कि यह ज्यादा अच्छा रहेगा कि कोई भी तत्सम्बन्धी मामला ऐसा न रह पाये जिसका पर्याप्त निरूपण न हुआ हो, फिर चाहे कुछ बातोंको दोहराना ही पड़ जाये। मन्त्री श्री हरकोर्ट, प्राप्त जानकारीके अतिरिक्त यदि कोई और ऐसी जानकारी चाहें, जो मैं उन्हें दे सकता हूँ, तो मैं बड़ी खुशीसे उनकी सेवाके लिए तैयार रहूँगा।

आपका

एच० एस० एल० पोलक

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स; सी० ओ० ५५१/२२।

परिशिष्ट ९

संरक्षककी रिपोर्टका सारांश

भारतीय-प्रवासी संरक्षक द्वारा सन् १९१०के प्रकाशित विवरणसे स्पष्ट है कि १९०९की अपेक्षा सन् १९१०में गिरमिटिया-प्रथाके अन्तर्गत नेटाल आनेवालोंकी संख्या दोगुनीसे भी काफी अधिक थी। यह संख्या सन् १९०९ में २४८७ और सन् १९१० में ५८५८ थी। जहाजपर १६ व्यक्ति मरे, जिसके बारेमें संरक्षकका कथन है कि "यह संख्या औसत संख्यासे बहुत अधिक है। इस बढ़ी हुई संख्याका मुख्य कारण था मद्राससे छठी बार आफ्रिका जानेवाले 'उमलोटी' नामक जहाजपर आठ मौतोंका हो जाना।" पाठकोंको स्मरण होगा कि उमलोटी जहाजपर गर्दन तोड़ बुखार (स्पॉटेड फीवर) फैल गया था। संरक्षक द्वारा प्रस्तुत निम्नलिखित विवरणसे उस ज्वरके फैलनेके बारेमें कुछ जानकारी प्राप्त होती है। वह कहता है: सर्जन सुपरिंटेंडेंटने मुझे सूचित किया कि अनेक बच्चे बहुत ही कमजोर हालतमें जहाजपर चढ़ाये गये थे; और यह विवश होकर करना पड़ा था नहीं तो बहुतसे भारतीयोंको रोक देना पड़ता। इससे स्पष्ट है कि एजेंटोंको एक बड़ा जत्था भेजनेकी ऐसी फिक्र सवार थी कि वे यात्राके दौरान बीमारी फैलने या मौतें हो जानेका खतरा उठानेको तैयार थे; और हुआ भी यही, एक भयंकर बीमारी फैल गई। हमें यह भी बताया गया है कि इस जहाजपर जो भारतीय सवार थे उनमें से अनेक तो जहाजसे उतर चुकनेके बाद मरे थे। गर्दनतोड़ बुखारके कारण मरनेवाले आठ भारतीय इन्हींमें से थे। वर्ष-भरमें इस बुखारसे १४ मौतें हुईं। हम तो ऐसा समझते हैं कि इन हकीकतोंको[1] देखते हुए हमारे द्वारा उस समय की गई पूछताछके उत्तरमें संरक्षकने जो यह कहा था: "भयका कोई कारण नहीं है", "थोड़े ही लोग मरे हैं", "आशा है कि रोग अब तक शान्त हो गया है",—यह किसी हालतमें भी पूरी जानकारी नहीं थी।

---

१. गिरमिटिया भारतीयोंका एक जत्था उमलोटी जहाज द्वारा रवाना हुआ था। (ये भारतीय विशेषकर सर लीएज ह्यूलेटके बागानोंके लिए भेजे गये थे)। जहाज सितम्बर १९१० में डर्बन पहुँचा; यात्रियोंमें से कुछ भारतीय गर्दनतोड़ बुखारसे मर गये। सरकारकी ओरसे कुछ सूचना न मिलनेके कारण २२ सितम्बरको संपादक **इंडियन ओपिनियन**ने भारतीय प्रवासियोंके संरक्षक पोल्किगहॉर्नेको लिखा कि जो समाचार छपा है क्या वह सही है। २४ सितम्बरको पोल्किगहॉर्नेने अपने उत्तरमें यह स्वीकार किया कि "कुछ" मौतें हुई जरूर हैं और विश्वास दिलाया कि "भयका कोई कारण नहीं है।" सम्पादकने उस अधिकारीको फिर पूछा कि मरनेवालोंकी अथवा उन भारतीयोंकी जो उस रोगसे पीड़ित हैं अथवा जिन्हें उस रोगके कारण रोक रखा गया है, संख्या क्या है। अधिकारीने उत्तरमें लिखा कि "फलाँ तारीखके **नेटाल मर्क्युरी**में समाचारको देखिए"। इस उत्तरपर १ अक्तूबरके **इंडियन ओपिनियन**में सम्पादकने कड़ी टिप्पणी लिखी। इसपर उस अधिकारीने सम्पादकको और कोई सूचना या समाचार देनेसे इनकार कर दिया। २६ अक्तूबरको नेटाल इंडियन कांग्रेसने पोल्किगहॉर्नेको एक पत्र भेजा; उत्तरमें इस अधिकारीने कहा कि आप जो जानकारी चाहते हैं वह प्रस्तुत की जा सकती है, परन्तु शर्त यह है कि उसे **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित न किया जाये। कांग्रेसने ३१ अक्तूबरको उसे यह लिख भेजा कि चूँकि यह मामला सार्वजनिक है इसलिए आप जो उत्तर भेजेंगे, वह समाचार-पत्रोंको जरूर दिया जायेगा। **इंडियन ओपिनियन**से यह नहीं कहा जा सकता कि आप दैनिक

इस वर्षमें कुल मिलाकर १९५५ मौतें हुईं। गत वर्षकी संख्यासे यह संख्या २६८ अधिक है। इन मौतोंके मुख्य कारण ये : २४९ को पेचिश हुई थी, १८९ को फेफड़ोंका क्षय-रोग, १३३ को खाँसी इत्यादि और २८३ को निमोनिया। इस वर्ष २४ आत्महत्याएँ हुईं; यह गत वर्षकी संख्यासे १० कम है। २४ आत्महत्याएँ बहुत बड़ी संख्या है — इनका कारण क्या था सो एक रहस्य है; संरक्षक इसके बारेमें बिलकुल चुप हैं। पेचिश, क्षय-रोग और निमोनियाके कारण इतनी बड़ी संख्यामें मौतें हो जानेपर अधिकारियोंका ध्यान जाना चाहिए। 'फ्री इंडियन्स' में २२.१५ प्रतिशतके हिसाबसे होनेवाली मौतोंका कारण वह बतलाया जाता है कि गिरमिटिया माता-पिताओंके सभी बच्चोंको 'फ्री' श्रेणीमें रख दिया गया था। इस वर्ष भारतीय बच्चोंकी मौतोंका अनुपात २२.३३ प्रतिशत पहुँच गया है, जब कि गत वर्षकी रिपोर्टमें यह अनुपात बहुत ही कम अर्थात् ६.५६ प्रतिशत ही बताया गया था। संरक्षकके विचारसे बच्चोंकी मृत्यु-संख्यामें इस वृद्धिका कारण, सम्भवतः, कुछ हद तक यह है कि सालके पिछले छः महीने मौसम खराब रहा था। हम नहीं समझते कि मौसम इतना ज्यादा खराब था कि मृत्यु-संख्याका औसत इतना बढ़ जाये। सुना था कि बच्चोंकी बढ़ी हुई मृत्यु-संख्यापर "विचार किया जा रहा है", और हम यह समझ रहे थे कि संरक्षक महोदय इसकी कोई माकूल वजह बतलायेंगे।

संरक्षकका कथन है कि स्पष्ट ही मजदूरीकी दरें बढ़ रही हैं। निःसन्देह यह बात केवल उन भारतीयोंकी मजदूरीके बारेमें कही गई है, जिन्होंने फिरसे गिरमिटिया बनना स्वीकार किया है। इस बातका कोई आभास नहीं दिया गया था कि पहले-पहले गिरमिट स्वीकार करनेवालोंकी मजदूरी बढ़ाई जानेवाली है या नहीं। अतएव, १५,११४ और आदमियोंके लिए प्रार्थनापत्र आये थे। संरक्षकको आशा है कि दुबारा गिरमिट लेनेवालोंकी औसत-संख्यामें वृद्धि होनेके फलस्वरूप १९११ के अन्तमें सम्भवतः गिरमिटियोंकी संख्या उतनी ही हो जायेगी जितनी गत दो वर्षोंमें रही है। ऐसा हो जाना सम्भव है। क्योंकि वेतन-वृद्धिकी बात छोड़ दें तो भी तीन-पौंडी करके भयसे वे अपनी स्वतंत्रता छोड़नेको तैयार हो जायेंगे। हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि संरक्षककी धारणा है कि अब मालिक लोग सामान्यतया अपने भारतीय नौकरोंके साथ व्यवहार करनेमें गत वर्षोंकी अपेक्षा अधिक सावधान रहने लगे हैं और जब वे यह पाते हैं कि भारतीयोंके साथ ओवरसियरों या सरदारोंने अनुचित व्यवहार किया है, तो अब वे उनके अपराध ढँकनेको कम, उन्हें नौकरीसे निकाल बाहर करनेको ज्यादा तैयार रहा करते हैं। यह बात कुछ हद तक सन्तोषजनक है, और निःसन्देह हमारा यह कर्त्तव्य है कि इसके लिए उन लोगोंको धन्यवाद दें जिनका गिरमिटिया-प्रथाके दोषोंको जनताके सामने लानेमें बहुत बड़ा हाथ रहा है। नियत समयसे अधिक काम करनेके प्रश्नपर अभी तक संरक्षकके सन्तोषके योग्य कोई फैसला नहीं हुआ है। संरक्षक महोदयके खयालसे एक हद तक इसका कारण दिन-भरका काम तय करनेकी कठिनाई है। उन्हें इतना और कहना था कि कामका ऐसा नाप तय करके काम लेनेकी प्रथा बिलकुल अनीतिपूर्ण है। हमने तो यही देखा है कि गन्नेकी जितनी फसल काटकर एक मजबूत मर्द या स्त्री मजदूर तीसरे पहरसे पहले ही निर्धारित काम समाप्त कर देता है इतनी कटाई समाप्त करनेके लिए अपेक्षाकृत कम मजबूत व्यक्तियोंको सूरज डूबनेके बाद तक काम करते रहना पड़ता है। और गाड़ियोंमें माल भरनेके कामके सम्बन्धमें यह कहा जा सकता है कि काम खत्म करनेका प्रश्न मुख्यतः गाड़ियाँ कितनी हैं और उन्हें कितनी दूर ले जाना है, इन दो बातोंपर निर्भर करता है। यदि अन्य शर्तें संतोषजनक हों तो भी निश्चित परिमाणमें काम करनेकी प्रणाली बहुतेरे गिरमिटिया भारतीयोंका जीवन भाररूप बना देगी। यह बात आसानीसे समझी जा सकती है कि जो मजदूर अपने निर्धारित किये गये कामको अमुक अवधिमें पूरा करनेमें असमर्थ

समाचारपत्रोंमें प्रकाशित खबरकी "प्रति काममें न लायें।" देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ३५१ और **इंडियन ओपिनियन**, १-१०-१९१०, १५-१०-१९१० और १९-११-१९१०।

रहते हैं; उनको व्यवस्थापकों और सरदारोंकी नाराजगी सहनी पड़ती है। बुरे बरतावकी जहाँ-जहाँ शिकायत होती है वहाँ-वहाँ उसके मूलमें दिन-भरके कामके एक निश्चित परिमाणकी प्रणाली ही रहा करती है।

सहायक संरक्षकने अपनी रिपोर्टमें कहा है कि जिनको पात्र समझा गया ऐसी अनेक स्त्रियोंको १८९५ के कानून १७ के अन्तर्गत लिये जानेवाले ३ पौंडी शुल्कसे मुक्त कर दिया गया है; और उनको प्राप्त सूचनाके अनुसार स्त्रियोंको शुल्क अदायगीके सम्बन्धमें सामान्यतया बेजा तौरपर दबाया भी नहीं जाता। संरक्षकका यह कथन भी है कि मजिस्ट्रेटने ४८५ स्त्रियोंको शुल्क अदायगीसे छूट देनेवाले प्रमाणपत्र बाँट दिये हैं। यह बात साफ तौरपर समझ ली जानी चाहिए कि इन आँकड़ोंसे चाहे जो जाहिर होता हो, स्त्रियोंसे यह शुल्क कदापि तलब नहीं किया जाना चाहिए। किसी देशके निर्माण और विकासके लिए अत्यधिक परिश्रम करनेवाले पुरुषोंको उसमें स्वतन्त्र व्यक्तियोंकी तरह रहने-बसनेकी अनुमति प्राप्त करनेके लिए कर चुकाना पड़े — यही काफी खराब बात है; परन्तु १३ वर्षसे अधिक उम्रकी औरतों और लड़कियोंसे इतना अधिक शुल्क वसूल किया जाना तो अंधेर ही है। हमें ऐसे अनेक मामलोंका पता है जिनमें मजिस्ट्रेटोंने भारतीय स्त्रियोंको शुल्क अदायगीसे छुटकारा दिलानेवाले प्रमाणपत्र देनेसे इनकार कर दिया है। इस तरहकी बातको मजिस्ट्रेटकी दयापर छोड़ देनेकी क्या जरूरत है? वेरुलममें मजिस्ट्रेट उन सब स्त्रियोंको, जो छुटकारा प्रमाणपत्र माँगती हैं, ऐसा प्रमाणपत्र दे दिया करता है और वह इस प्रकार अपने विवेकाधिकारका क्षेत्र संकुचित न रखनेकी बुद्धिमत्ता प्रकट करता है; परन्तु स्टैंगरमें मजिस्ट्रेटने अपने जिलेकी किसी निर्धन स्त्रीको शायद ही ऐसा छुटकारा देनेकी कृपा दिखलाई हो।

इस वर्ष भारतसे एक भी नया गिरमिटिया नहीं भेजा गया; इसके लिए हम भारत-सरकारके कृतज्ञ हैं। हमारा विश्वास है कि भारत सरकारका यह काम यहाँ बसे हुए भारतीयोंके लिए लाभकारी सिद्ध होगा। 'नेटाल मर्क्युरी' का खयाल है कि भारतीय प्रवासियोंका यहाँ आना बन्द हो जानेके फलस्वरूप भारतीय आबादीकी अपेक्षा यूरोपीय आबादी अधिक अनुपातसे बढ़ेगी। इसके दो कारण हैं: एक तो यह कि यूरोपीय प्रवासियोंके लिए अब द्वार खुला रहेगा, और दूसरे, वह भारतीय प्रवासियोंके लिए बन्द रहेगा। ऐसा होगा या नहीं, सो देखना बाकी है, परन्तु कमसे-कम अब यहाँ बस गये भारतीयोंको सतानेका कोई बहाना नहीं रहेगा। वे यहाँ निश्चित रूपसे बस गये हैं, इसलिए उनका भला या बुरा भविष्यमें बहुत अंश तक यूरोपीय समाजके ऊपर निर्भर करता है। यदि दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश साम्राज्यकी परम्पराओंको निभाते रहेंगे, तो भयका कोई भी कारण न रहेगा और इस देशमें सभी जातियाँ सुखचैनसे रहेंगी। रही हमारी बात, सो हम तो तबतक दम न लेंगे जबतक गिरमिटिया-प्रथा समाप्त नहीं हो जाती। हम तो सबकी स्वतन्त्रतामें विश्वास करते हैं। हम दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजको स्वतन्त्र और सुखी देखना चाहते हैं। और यह तबतक सम्भव नहीं है जबतक हजारों पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे उस परिस्थितिमें रहते रहेंगे जिसके अच्छेसे-अच्छे रूपको भी आधी गुलामी ही कहा जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-११-१९११

परिशिष्ट १०

गांधीजीके नाम कॉडिजका पत्र

[अडयार
नवम्बर १२, १९११]

प्रिय श्री गांधी,

न्यासपत्र भेज रहा हूँ। उसमें गवाहों तथा न्यासकर्ताके हस्ताक्षर विधिवत् हो चुके हैं। मैं १६ दिसम्बरको कल्कत्तेसे गुजर रहा हूँ। मैंने श्री नटेसनको पत्र लिखकर उनसे पूछा है कि क्या प्राचीन आर्यावर्तकी भूमिपर मुझे आपसे दुआ-सलाम करनेका अवसर मिल पायेगा। चूँकि हम आपसमें अभिन्न हैं इसलिए आशा है इससे आपको उतनी ही प्रसन्नता होगी जितनी मुझे। यदि मैं अपने मनकी बात आपसे कहूँ तो कहना होगा कि जहाँतक प्रकट सद्‌गुणोंका सवाल है मुझे आप जैसा कोई व्यक्ति नहीं मिला। मेरी समझमें बालक कृष्ण[1] आपके समकक्ष हैं। माधुर्यमें तो वे आपसे भी बढ़े-चढ़े हैं, परन्तु मैं तो सयानोंकी बात कर रहा था। आप रहस्यवादी हैं और फिलहाल जिन्हें जानने और जिनसे प्रेम करनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है वे लोग हैं चमत्कारवादी (ऑकल्टिस्ट) जिन्हें चमत्कार दिखाई पड़ते हैं और जिनका उसके बिना काम ही नहीं चलता। प्रिय बन्धु डॉ० . . .[2] भी आपकी तरह सच्चे रहस्यवादी हैं। उन्हें चमत्कार (विज़न) इत्यादिसे घृणा है। क्या ही अच्छा होता यदि वे भी आपकी तरह विशाल-हृदय होते! अस्तु! पूर्व इसके कि आप लौटें और यह पत्र आपके हाथ तक पहुँचे, हम लोगोंकी भेंट कल्कत्तेमें ही हो जायेगी। यदि ऐसा न हो पाया तो यह मानियेगा कि हम लोग इस पत्रके द्वारा एक-दूसरेसे स्नेह-मिलन कर रहे हैं। ईश्वर करे आप बड़ा-दिन प्रिय कैलेनबैकके साथ फीनिक्समें सुखपूर्वक मनायें।

आपका भाई,
जॉन एच० कॉडिज़

[पुनश्च:]

चि० मणिलाल, रामदास, देवदास, मगनलाल, अन्य लोगों — श्रीमती गांधी एवं सभी स्त्री-बच्चोंको मेरा स्नेहाभिवादन कहें।

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५५९२) की फोटो-नकलसे।

१. अभिप्राय जे० कृष्णमूर्तिसे है।
२. शब्दावली स्पष्ट नहीं है।

परिशिष्ट ११

साम्राज्य-सम्मेलनमें उपनिवेशीय भारतीयोंके सम्बन्धमें लॉर्ड क्रूका भाषण

लन्दन
जून १९, १९११

क

१९ जून, १९११ को लन्दनमें उपनिवेश-मन्त्री माननीय एल० हरकोर्टकी अध्यक्षतामें साम्राज्य-सम्मेलन हुआ था। दक्षिण आफ्रिका संघकी ओरसे उसमें जनरल एल० बोथा (संघके प्रधानमन्त्री), एफ० एस० मलान (शिक्षा-मन्त्री) और सर डेविड डी' विलियर ग्राफ (सार्वजनिक निर्माण, डाक और तार मन्त्री) सम्मिलित हुए थे। उपनिवेशोंमें रहनेवाले भारतीय प्रजाजनोंकी समस्याओंके सम्बन्धमें एक ज्ञापन भी प्रचारित किया गया था।

जिन विषयोंपर विचार हुआ उनमें न्यूजीलैंडके प्रधान-मन्त्रीका एक प्रस्ताव भी था। [इस प्रस्तावके द्वारा] पहले तो वे यह कोशिश कर रहे थे कि रंगदार प्रजातियोंको उनके ही क्षेत्रों तक सीमित रखा जाये किन्तु बादमें उन्होंने अपने प्रस्तावका विषय बदल कर उसे 'ब्रिटिश और विदेशी जहाजरानीके सम्बन्धमें स्वशासन-प्राप्त उपनिवेशोंके लिए ज्यादा व्यापक कानूनी सत्ता रखनेवाले अधिकार' कर दिया।

सम्मेलनकी कार्यवाही भारत-मन्त्री लॉर्ड क्रूके भाषणसे आरम्भ हुई जिसमें उन्होंने उपनिवेशोंमें रहनेवाले भारतीयोंके सम्बन्धमें कुछ सामान्य बातें कहीं। उनके भाषणके कुछ अंश नीचे दिये जाते हैं:

. . . यदि कोई प्रश्न ऐसा है जिसके केवल साम्राज्यकी सुख-समृद्धिको ही नहीं, बल्कि उसके साम्राज्यत्वको ही खतरा है, तो वह है गोरी प्रजातियों और वतनी प्रजातियोंके बीचकी यह गाँठ; कारण, मैं कह चुका हूँ कि उपनिवेशों और मातृ-देश [इंग्लैंड] के बीच ऐसा कोई प्रश्न है ही नहीं जो दोनों ओरकी सद्भावना और सुमतिसे तय न किया जा सके, फिर चाहे वह वाणिज्यका प्रश्न हो, चाहे प्रतिरक्षाका और चाहे वह उन प्रश्नोंमें से कोई प्रश्न हो जिनपर हम यहाँ विचार करेंगे. . . मुझे मालूम हुआ है कि यह ज्ञापन जो मेरे सामने है, सम्मेलनके सब सदस्योंको दिया गया है, और जिन्होंने इसे पढ़ा है वे स्वीकार करेंगे कि इसमें उस प्रश्नके सामान्य सिद्धान्तों और इस उलझनके उन विशिष्ट उदाहरणोंपर विचार किया गया है जो विभिन्न उपनिवेशोंमें भारतीयोंके प्रवेशाधिकारके सम्बन्धमें या वहाँ आ जानेपर उनके साथ किये जानेवाले व्यवहारके सम्बन्धमें उत्पन्न हुए हैं।

अब मैं पहले यह कहना चाहता हूँ कि मैं दो तथ्योंको पूरी तरह मानता हूँ; सम्राट्की सरकार भी इन्हें मानती है। पहला तथ्य यह है कि साम्राज्यकी रचनाको देखते हुए इस विचारका प्रतिपादन नहीं किया जा सकता कि सम्राट्के समस्त प्रजाजनोंके बीच बिलकुल अबाध रूपसे अदला-बदली हो सकती है; अर्थात् सम्राट्के प्रत्येक प्रजाजनको, चाहे वह कोई भी क्यों न हो, वह कहीं भी क्यों न रहता हो, साम्राज्यके किसी भी भागमें जाने या उससे भी अधिक वहाँ बसनेका, स्वाभाविक अधिकार है। हम इस बातको पूरी तरह स्वीकार करते हैं और भारत-कार्यालयके प्रतिनिधिके रूपमें मैं भी पूरी तरह स्वीकार

करता हूँ कि साम्राज्यकी रचना जैसी है, उसमें सम्राट्के समस्त प्रजाजनोंका साम्राज्यके सब भागोंमें अबाध रूपसे आना-जाना असम्भव है। या इसी बातको दूसरी तरहसे कहें तो स्वशासित उपनिवेशोंको अपने-अपने बारेमें यह तय करनेका अधिकार है कि वे किसे अपने यहाँ नागरिकके रूपमें आने दें और किसे नहीं; उनके इस अधिकारपर आपत्ति करनेका अधिकार किसीको नहीं है।

यह एक तथ्य है; और इसे मैं सम्राटकी सरकारकी ओरसे पूरी तरह स्वीकार करता हूँ। मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि इस मामलेमें उपनिवेशोंके सम्मुख जो कठिनाइयाँ हैं उनकी गम्भीरता इस देशके हम लोग प्रायः कम आँकते हैं; क्योंकि हम ऐसी किसी समस्यासे परेशान नहीं है। यह संयोगकी बात है कि इस देशमें रंगदार प्रजातियाँ कभी इतने बड़े पैमानेपर नहीं आई जिससे वैसी कठिनाइयाँ उत्पन्न हुई हों जैसी मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि स्वशासित उपनिवेशोंमें आप सज्जनोंके सम्मुख हैं...।

... उदाहरणार्थ, कितने ही लोग जब इस मतका त्याग कर चुके है कि मजदूर केवल पूर्ति और माँगकी परिस्थितियोंसे नियन्त्रित किये जा सकते हैं। आजकल बहुत लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने यह मत त्याग दिया हैं कि मजदूरोंकी मजदूरी और उनके द्वारा किये गये काममें कोई बड़ा सम्बन्ध होना आवश्यक है; और चूंकि ऐसा है, इसलिए यह स्पष्ट है कि भारतसे जैसे सस्ते मजदूर लाये जा सकते हैं, वैसे सस्ते मजदूरोंकी प्रतिस्पर्धा उन्नीसवीं शताब्दीके अधिकांश भागमें ब्रिटेनमें और न्यूनाधिक संसार-भरमें सामान्यतः अपनाई गई कठोरतर राजनीतिक अर्थ-व्यवस्थाके दिनोंमें जितनी कष्टप्रद जान पड़ती थी अब उससे अधिक कष्टप्रद जान पड़ती है...। यदि वह समय अभी आया नहीं है, तो निश्चय ही वह बहुत दूर भी नहीं है जब संगठित मजदूर किसी भी प्रकारके कम मजदूरी पानेवाले मजदूरोंके लाये जानेपर, यदि उनका स्वरूप स्पर्धात्मक होगा तो, गम्भीर आपत्ति करेंगे; फिर चाहे वे किसी भी रंग या जातिके क्यों न हों। दरअसल भारतीयोंके प्रवासके प्रश्नसे सम्बन्धित यह एक मुख्य कठिनाई है, बेशक इसके सिवा अत्यन्त भद्दे तरीकेके रंगभेदकी समस्या तो है ही।

... यह ऐसा पूर्वग्रह या विश्वास है जो लोगोंके अधिक सुरक्षित और सामान्यतः अधिक सभ्य होनेके साथ-साथ प्रबलतर होता जाता है। और इसलिए यह उन सहज और मूर्खतापूर्ण पूर्वग्रहोंसे भिन्न है जो वतनी प्रजातियोंके विरुद्ध होते हैं। मैं तो यहाँ तक कहनेके लिए तैयार हूँ कि अधिकांश मामलोंमें किसी गोरेमें गर्व करनेके योग्य जितनी कम व्यक्तिगत विशेषता होती है, उसमें अपने गोरेपनका गर्व करनेकी प्रवृत्ति उतनी ही अधिक होती है और वह अपनेको उतना ही अधिक महत्त्वपूर्ण समझता है...।

१८९७ के सम्मेलनमें श्री चेम्बरलेनने अपने भाषणमें ... यदि आप अनुमति दें तो मैं कहना चाहता हूँ कि वे शब्द विचारणीय हैं। श्री चेम्बरलेनने वहाँ जो बात बहुत सुन्दर ढंगसे कही थी मैं उसे बढ़ाकर कहनेका प्रयत्न नहीं करूँगा। किन्तु मैं आपको शायद यह याद दिला सकता हूँ कि भारतीय अपने प्राचीन इतिहासके, अपनी वंश-परम्पराकी प्राचीनताके आधारपर जो जातीय दावे करते हैं उनकी और भारतीयोंके दावोंके पोषक ऐसे ही अन्य तथ्योंकी, कमसे-कम इस समय तो, हम उपेक्षा नहीं करना चाहेंगे। अगले गुरुवारके जिस समारोहकी प्रतीक्षा हम सभी कर रहे हैं, उसकी सार्थकता बहुत बड़ी हद तक ब्रिटिश सम्राटोंकी उस दीर्घ वंश-परम्परापर निर्भर है, जो स्टुअर्ट, ट्यूडर और प्लांटजनेट वंश और उनसे भी आगे नार्मन लोगोंकी विजय और सेक्सन राजाओंके धुँधले युगों तक जाती है। लेकिन भारतमें ऐसे लोग हैं जिनका वंशाभिमान स्वयं इंग्लैंडके सम्राट्के वंशाभिमानकी भाँति ही दृढ़ आधार-पर स्थित और वास्तविक है। फिर, इतिहासके सम्बन्धमें हमें कभी यह न भूलना चाहिए कि भारतमें केवल लोक-सेवा और प्राचीन साहित्यके क्षेत्रमें ही बड़ी संख्यामें विशिष्ट लोग उत्पन्न नहीं हुए, बल्कि बहुत कुछ हमारी जातिकी भांति ही भारतीयोंमें भी राजनीतिज्ञ, सैनिक और अन्य अत्यन्त प्रसिद्ध लोग बड़ी संख्यामें हुए हैं। अब निस्संदेह ऐसे लोग भी हैं जिन्हें ये बातें नहीं जँचती। ... यदि हमारा आदर्श वाक्य यह हो कि "इस सबके बावजूद मनुष्य मनुष्य हैं" तो सचमुच भारतके बहुतसे

लोगोंका दावा वास्तविक और ठोस है। चाहे हम बौद्धिक विकासको महत्त्व दें, चाहे धार्मिक मतामतसे भिन्न धार्मिक मनोवृत्तिको महत्त्व दें, चाहे हम अदृष्ट वस्तुओंके प्रति अनुपम भक्ति और उनकी समझको, जो भारतमें असाधारण रूपसे गहरी है और जो मेरा खयाल है, अपेक्षाकृत कठिनाई और भौतिकताकी पूजाके इन दिनोंमें बहुत-से लोगोंको प्रभावित करती है, महत्त्व दें; चाहे हम शुद्ध बौद्धिक शक्तिको महत्त्व दें जिसका, मैं स्वीकार करता हूँ, कुछ दिशाओंमें बहुत फलप्रद प्रयोग नहीं किया जा सकता; किन्तु जो दूसरी दिशाओंमें अधिकसे-अधिक तेज और अच्छा उपकरण सिद्ध होती है—हम चाहे इन सब वस्तुओंको महत्त्व दें या इनमेंसे किसी एकको महत्त्व दें यह तथ्य असन्दिग्ध है कि भारत और भारतीय हमारे सामने एक ऊँचा और वास्तविक दावा प्रस्तुत कर सकते हैं।

...भारतको उन गृहीत तथ्योंको मंजूर करना चाहिए जो मैंने अपने इस निवेदनके आरम्भमें बताये थे। उसे यह मंजूर करना चाहिए कि स्वशासित उपनिवेशोंको अपनी नागरिकताके नियम बनानेकी असन्दिग्ध स्वतन्त्रता है और मैं भारत कार्यालय और भारत सरकारकी ओरसे प्रसन्नतापूर्वक कह सकता हूँ कि हम इस मामलेमें जो स्थिति है उसे भारतके लोगोंको समझानेका सदा पूरा प्रयत्न करेंगे। वर्तमान स्थितियोंमें स्वशासित उपनिवेशोंमें प्रवेशकी जैसी माँगें हैं उन्हें अतिशयतापूर्ण ही कहा जा सकता है; हम भारतको वैसी माँगें प्रस्तुत करनेमें प्रोत्साहन न देंगे और हम उन्हें साम्राज्यकी वास्तविक परिस्थितियाँ समझानेका यथाशक्ति प्रयत्न करेंगे।...यदि ब्रिटिश साम्राज्यके किसी भागमें भारतीयोंकी निर्योग्यताका प्रश्न उठता है तो उसके बारेमें भारतके सभी वर्गों और विचारोंके लोग...एक हो जाते हैं। इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि भारतमें जो हमारे शासनके विरुद्ध हैं उनके लिए यह बात एक बड़ा उपयोगी शस्त्र बन जाती है...। वे पूछते हैं—यदि साम्राज्यके विभिन्न भागोंमें भारतीय निर्योग्यताओंसे पीड़ित हैं तो ब्रिटेनसे सम्बन्ध बनाये रखनेसे लाभ ही क्या है? ...मैं यह भी बता दूँ कि भारतपर स्वशासनका सिद्धान्त लागू करनेकी वर्तमान प्रवृत्तिसे यह मामला और भी उलझ जाता है और कठिन हो जाता है, क्योंकि यदि किसी उपनिवेशकी सरकारकी ओरसे धारासभामें पास किये गये कानून या प्रशासनिक कार्यके विरुद्ध भारतकी व्यवस्थापिका सभा (लेजिस्लेटिव असेम्बली) कोई खास आपत्ति उठाती है, जिसकी सम्भावना सदा ही रहती है, तो मुझे विश्वास है कि आप मुझसे सहमत होंगे कि मामलेको बिना समझे उसपर नाराज होनेकी अपेक्षा उसे कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाना चाहिए।

...दूसरी ओर, जो लोग वहाँ बस चुके हैं उनको संरक्षण देनेके बारेमें मैं आपको स्मरण दिला दूँ कि उनमें से कुछ लोग वस्तुतः वहाँ बहुत लम्बे अर्सेसे रहते हैं। कमसे-कम एक उपनिवेश ऐसा है जिसमें पूर्वके लोग कोई २०० वर्षसे बसे हुए हैं।

...मैं यह बहुत अच्छी तरह जानता हूँ कि कठिनाई वस्तुतः स्वयं मन्त्रियोंके पूर्वग्रही विचारोंसे उत्पन्न नहीं होती; अक्सर उनके लिए अपने अधीनस्थ कर्मचारियोंको, उन बिलकुल छोटे कर्मचारियोंको जिनमें रंग विद्वेषकी भावना शायद बहुत तीव्र है, इस तरहके छोटे प्रतीत होनेवाले प्रश्नोंका उतना महत्त्व समझा सकना आसान नहीं होता — जितना महत्त्व उन्हें हम या जिनका सम्बन्ध भारतसे पड़ता है और जो भारतको जानते हैं वे देते हैं...। इंग्लैंड और स्वशासित उपनिवेशोंमें भले ही निकट सम्बन्ध और पूर्ण सद्भाव हो, किन्तु हमारा साम्राज्य तबतक एक सुसंगठित साम्राज्य नहीं कहा जा सकता जबतक खासी मात्रामें वही सद्भाव साम्राज्यके उस विशाल भागके प्रति भी उत्पन्न न हो जाये जिसका भारत एक अत्यन्त प्रमुख भाग है; और जिसमें सम्राट्के अधीनस्थ वे सभी उपनिवेश भी सम्मिलित हैं जिनमें–विभिन्न वतनी प्रजातियाँ बसी हुई हैं।...यदि इंग्लैंड लगातार साम्राज्यके विभिन्न भागोंके बीचकी समस्याओंमें फँसा रहे तो यह स्पष्टतः दुर्भाग्यकी बात होगी; और इससे साम्राज्यकी एकतामें अन्तर पड़ जायेगा।

...मैं यह बात एक बार फिर दुहराता हूँ कि मैं ऐसा नहीं कहता कि यह प्रश्न वस्तुतः पूरी तरह तय किया जा सकता है। मैं नहीं समझता कि यह प्रश्न सम्पूर्ण रूपसे सदाके लिए हल हो सकता

है; किन्तु मुझे इस बातका पूरा यकीन है कि यदि उपनिवेश एकमतसे समस्त कार्रवाईमें भारतके प्रति समझौते और मैत्रीकी भावना दिखायेंगे तो. . . ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-१०-१९११ और २१-१०-१९११

ख

साम्राज्य सम्मेलनमें भारत-कार्यालयका ज्ञापन

श्री चेम्बरलेनने १८९७ में उपनिवेश प्रधानमन्त्री-सम्मेलनमें दिये गये अपने भाषणमें वे सामान्य सिद्धान्त, जिनको महामहिम सम्राट्की सरकार सम्राट्के भारतीय प्रजाजनों और स्वशासित उपनिवेशोंके सम्बन्धोंके विषयमें प्रतिपादित करना चाहती है, इस प्रकार निरूपित किये थे:

हम उपनिवेशोंके उन गोरे निवासियोंके, जो अपेक्षतया लाखों-करोड़ों एशियाइयोंके अति निकट हैं, इस निश्चयसे पूरी सहानुभूति रखते हैं कि वहाँ ऐसे लोगोंको भारी संख्यामें न आने दिया जायगा जिनकी सभ्यता, जिनका धर्म और जिनके रीति-रिवाज भिन्न हैं एवं जिनका बड़ी संख्यामें आना गम्भीर रूपसे वर्तमान मजदूर आबादीके उचित अधिकारोंके विरुद्ध पड़ेगा। मैं पूरी तरह समझता हूँ कि उपनिवेशोंके हितकी दृष्टिसे इस प्रकारके प्रवासको हर तरहकी जोखिम उठाकर भी रोका जाना चाहिए; और इस उद्देश्यसे रखे गये प्रस्तावोंका हम कोई विरोध न करेंगे। किन्तु हमारा आपसे यह कहना है कि आप साम्राज्यकी उस परम्पराका ध्यान अवश्य रखें जिसमें प्रजाति या रंगके कारण कोई पक्षपात नहीं बरता जाता। महामहिमामयी साम्राज्ञीके भारतीय प्रजाजनों या समस्त एशियाइयोंको भी, रंग या प्रजातिके कारण, न आने देनेके कार्यसे उन्हें बहुत क्षोभ होगा और मुझे निश्चय है कि उसपर स्वीकृति देना महामहिमामयी साम्राज्ञीको भी कष्टदायक होगा। इस देशमें आनेपर आपका ध्यान जिस बातकी ओर खींचा गया है उसपर विचार कीजिए। विशाल भारतीय साम्राज्य ब्रिटेनका एक उज्ज्वलतम और महानतम अधीनस्थ देश है; उसमें ३०,००,००,००० लोग रहते हैं। वे आपके समान ही राजभक्त हैं और उनमें सैकड़ों और हजारों लोग सभ्यतामें हमसे किसी प्रकार कम नहीं हैं। यदि उच्च वंशमें उत्पन्न होनेका कोई महत्व है तो वे हमसे अधिक कुलीन हैं; उनकी परम्पराएँ हमसे अधिक पुरानी हैं और उनके कुल भी हमसे पुराने हैं, वे सम्पत्तिशाली हैं, सुसंस्कृत हैं और उनकी वीरता विशिष्ट है; ये वे लोग हैं जिन्होंने अपनी पूरीकी-पूरी सेनाएँ साम्राज्ञीकी सेवामें अर्पित कर दी हैं और भारी कठिनाई और मुसीबतके दिनोंमें, उदाहरणार्थ भारतीय विद्रोहके अवसरपर अपनी वफादारीसे साम्राज्यको बचाया है। मैं कहता हूँ कि आप लोग, जिन्होंने यह सब देखा है, उन लोगोंका तिरस्कार करनेकी इच्छा नहीं रख सकते। मेरे खयालसे यह आपकी उद्देश्य-सिद्धिके लिए नितान्त अनावश्यक है; इससे दुर्भाव, असन्तोष एवं चिढ़ उत्पन्न होनेकी संभावना है तथा तिरस्कार करनेकी ऐसी इच्छा महामहिमामयी साम्राज्ञीकी ही नहीं, बल्कि उनके सब प्रजाजनोंकी भावनाके भी प्रतिकूल होगी।

मेरे खयालसे आपको जिस बातपर विचार करना है वह है प्रवासका स्वरूप। कोई व्यक्ति इसी कारण अवांच्छनीय प्रवासी नहीं हो सकता कि उसका रंग हमारे रंगसे भिन्न है; बल्कि अवांच्छनीय प्रवासी उसे होना चाहिए जो मैला हो, या अनाचारी हो या कंगाल हो या उसके विरुद्ध कोई दूसरी आपत्ति हो। इस आपत्तिकी व्याख्या संसदीय कानूनसे की जा सकती है और उसीके द्वारा उन सब लोगोंका, जिनको आप वस्तुत: देशमें नहीं आने देना चाहते, प्रवेश रोकनेकी व्यवस्था की जा सकती है। अस्तु, सज्जनो, मेरा विश्वास है कि यह-एक ऐसा मामला है जिसे हम आपसमें मैत्रीपूण बातचीतसे तय

कर सकते हैं। मैं कह चुका हूँ कि नेटाल उपनिवेशके लोगोंने ऐसी व्यवस्था कर ली है; मेरे खयालसे उससे उन्हें पूर्ण सन्तोष है और स्मरण रखिए कि उनका स्वार्थ सम्भवतः आपसे बड़ा है क्योंकि उनका प्रदेश प्रवासके लिए अधिक समीप पड़ता है। यह प्रवास वहाँ बहुत बड़े पैमानेपर आरम्भ भी हो चुका है और वहाँके लोगोंने एक कानून बना लिया है जिससे उनका खयाल है वह सब मिल जाता है जो उन्हें अभीष्ट है एवं जिसपर मेरी की गई आपत्ति भी लागू नहीं होती। साथ ही वह कानून इस भावनाके विरुद्ध भी नहीं है जिसमें मेरा विश्वास है, आप भी मेरे साथ हैं। इसलिए मुझे आशा है कि आपके यहाँके प्रवास कालमें हमारे लिए कानूनकी एक ऐसी शब्दावली तैयार कर लेना सम्भव हो सकता है जिससे महामहिमामयी साम्राज्ञीकी भावनाओंको चोट न पहुँचे और साथ ही आस्ट्रेलियाई उपनिवेशोंकी उस वर्गकी आक्रमणसे रक्षा भी हो जाये जिसके विरुद्ध उनका आपत्ति करना उचित है।"

इसके बाद ब्रिटिश साम्राज्यमें भारतकी स्थितिपर १९०७ के उपनिवेशीय सम्मेलनमें श्री ऐस्क्विथने भी जोर दिया था। उन्होंने कहा था: "जिन जहाजोंपर हमारे भारतीय सह-प्रजाजनोंको नौकरी नहीं दी जाती उनमें माल-ढुलाईके सम्बन्धमें हम किसी भी हालतमें ऐसी कोई रियायत स्वीकार करना नहीं चाहते जो केवल हमें ही दी जा सकती हो। हम किसी प्रकार इससे सहमत नहीं हो सकते और यहाँ मौजूद प्रत्येक व्यक्ति कहेगा कि हम इस तरहकी शर्तसे मर्यादित रियायत न लेना अधिक पसन्द करेंगे।

खास कठिनाइयाँ

सन् १८९७ के बादके घटनाक्रमका संक्षेपमें उल्लेख करना अनावश्यक है; किन्तु स्वशासित उपनिवेशोंमें एशियाई प्रश्न जिन रूपोंमें उठे हैं, वे संक्षेपमें बताये जा सकते हैं।

नेटाल

भारतीय मजदूर केवल नेटालमें आते हैं; वहाँ कुलियोंकी बहुत बड़ी संख्या आ जानेसे भारतीय निवासियोंकी आबादी बढ़ गई है। ये कुली अपनी गिरमिट पूरी होनेके बाद एक विशिष्ट कर देना स्वीकार करके उपनिवेशमें ही रह जाते हैं। यह आबादी कुछ हद तक उन लोगोंके "स्वतन्त्र" प्रवाससे भी बड़ी है जो प्रवासी अधिनियमके अन्तर्गत लागू की गई शिक्षा-परीक्षा पास करके आ सके हैं। व्यापारिक परवानों, नगरपालिका मताधिकार और भारतीय बच्चोंकी शिक्षाके सम्बन्धमें कठिनाइयाँ पैदा हुईं, और १९०८ में संसद द्वारा दो विधेयकोंके पास किये जानेसे वे और भी उग्र हो गईं। इनमें एक विधेयक एशियाइयोंको नये व्यापारिक परवाने देना बन्द करनेके सम्बन्धमें था और दूसरा एक निश्चित समयके बाद एशियाइयों द्वारा व्यापारिक परवानोंका रखा जाना निषिद्ध करनेके सम्बन्धमें। ये विधेयक भविष्यके लिए सुरक्षित कर दिये गये और उसके बाद अमलमें नहीं लाये गये। किन्तु सन् १९०९ में १८९७ के व्यापारिक परवाना कानूनमें इस आशयका संशोधन कर दिया गया कि वर्तमान परवानोंको नया करनेके सम्बन्धमें सर्वोच्च न्यायालयमें अपील की जा सकती है, यद्यपि परवानोंका हस्तान्तरण करने या नये परवाने देनेके सम्बन्धमें अपील नहीं की जा सकती।

ट्रान्सवाल

ट्रान्सवालमें, जहाँसे युद्धकालमें अधिकांश भारतीय चले गये थे, स्वायत्तीकरण (एनेक्सेशन) के बाद बड़ी संख्यामें भारतीयोंके आनेसे और दक्षिण आफ्रिकी गणतन्त्रके कुछ कानूनों और विनियमोंके निश्चित प्रभावके सम्बन्धमें सन्देह होनेसे भारी कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गईं। शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत उन्हीं एशियाई लोगोंको उपनिवेशमें प्रवेशके अनुमतिपत्र दिये गये थे जो वहाँ युद्धसे पूर्व रहते थे। यह विधान १९०७ के एशियाई कानून संशोधन अधिनियमसे, जो उत्तरदायी शासन दिये जानेके तुरन्त बाद पास किया गया था, स्थायी बना दिया गया और यद्यपि उसी वर्षका प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम नेटालके अधिनियमके नमूनेका बनाया गया था, किन्तु इन दोनों अधिनियमोंका संयुक्त प्रभाव यह होता था कि

कोई भी एशियाई, जबतक वह यह सिद्ध न कर सके कि वह युद्धसे पूर्व एक वैध नागरिक था, फिर वह सुशिक्षित भी क्यों न हो, अधिकारके रूपमें उपनिवेशमें प्रविष्ट होनेका दावा नहीं कर सकता था। साम्राज्यके अन्य किसी भी भागमें ऐसी स्थिति नहीं है; तथापि यह अनिच्छापूर्वक महामहिम सम्राट्की सरकार द्वारा स्वीकार कर ली गई। वैध निवासियोंकी शिनाख्तके लिए बनाई गई कड़ी धाराओंसे बड़ा तीव्र और कटु विवाद उठ खड़ा हुआ, यद्यपि ट्रान्सवाल सरकारने यह घोषित किया कि व्यापारके जाली कागजातकी बिक्रीसे ऐसा करना आवश्यक हो गया है। यह विवाद केवल कुछ महीनेके लिए १९०८ के एक संशोधन कानूनसे कुछ कम हुआ। इधर एक ओर भारतीयोंने सोच-विचारकर कानूनके विरुद्ध सत्याग्रहकी नीति स्वीकार की, दूसरी ओर भारतीयोंको जेलमें भेजने और निर्वासित करनेकी कुछ घटनाओंसे उधर भारतमें रोषकी भावना जाग्रत हुई; दक्षिण आफ्रिकामें इसकी सचाई और गुरुतापर बहुत ही कम ध्यान दिया गया।

केप ऑफ गुड होप और ऑरेंज फ्री स्टेट

केप उपनिवेशमें, जहाँ केवल वे भारतीय ही प्रविष्ट होने दिये जाते थे जो शिक्षा-परीक्षा पास कर सकते थे, और ऑरेंज फ्री स्टेटमें, जहाँ एशियाई प्रश्न कभी उठा ही नहीं था, पिछले कुछ अरसेमें ऐसा कुछ नहीं हुआ है जिसकी ओर ध्यान देना आवश्यक हो। केवल एक दो शिकायतें इसकी अपवाद हैं: कुछ पुराने निवासियोंको, जो अस्थायी अनुमतिपत्र लेकर भारत वापस चले गये थे, कानूनी बारीकियोंके आधारपर केप कालोनीमें फिर प्रविष्ट नहीं होने दिया गया और इससे कष्ट हुआ।

दक्षिण आफ्रिका संघ

संघ अधिनियमके अंतर्गत जिन मामलोंमें एशियाइयोंपर भेदभावकारी प्रभाव पड़ता है, उन्हें संघ-सरकारके लिए सुरक्षित कर दिया गया था। संघ-सरकारने अभी हालके संसदीय अधिवेशनमें एक प्रवासी विधेयक प्रस्तुत किया जिसका उद्देश्य इस प्रश्नका अन्तिम निर्णय करना था। यह विधेयक अधिवेशनके अन्तमें वापस ले लिया गया, किन्तु यह मालूम हुआ कि यह विषय फिर उठाया जायेगा। इस बीच संघ-सरकारने एक अस्थायी समझौता कर लिया है जिसके फलस्वरूप सत्याग्रह आन्दोलन बन्द कर दिया गया है। भारतसे नेटालको गिरमिटिया मजदूरोंका प्रवास बन्द होनेसे संघमें अशिक्षित वर्गोंके भारतीयोंकी भर्ती और भी रुक गई है। इस प्रकार दक्षिण आफ्रिकामें आगे व्यावहारिक समस्या यहाँ रहनेवाली एशियाई आबादीके प्रशासनकी होगी जो नेटालमें ही खासी बड़ी संख्यामें हैं। . . .

नीतिके प्रश्न

इससे पहले दिये गये संक्षिप्त विवरणसे प्रकट होता है कि भारतीयोंके प्रवासका प्रभाव विभिन्न रूपोंमें और विभिन्न मामलोंमें कई उपनिवेशोंपर पड़ता है। किन्तु कहा जा सकता है कि यह प्रश्न तीन शीर्षकोंके अन्तर्गत आता है:

(१) नये प्रवासियोंका प्रवेश।

(२) जिन भारतीयोंको प्रवेश करने दिया गया है उनका दर्जा और उनकी अवस्था।

(३) उपनिवेशीय समुद्रोंमें चलनेवाले जहाजोंमें भारतीयोंकी नियुक्ति।

(१) प्रवासियोंका प्रवेश

महामहिम सम्राट्की सरकार इस सिद्धांतको पूर्णतः स्वीकार करती है कि प्रत्येक उपनिवेशको यह निर्णय स्वयं करने दिया जाना चाहिए कि वह अपने यहाँ किन लोगोंको बसने देना चाहता है। जिम्मेदार भारतीयोंका तो नहीं किन्तु कुछ भारतीय बड़ी उग्रताके साथ कहते हैं कि ब्रिटिश साम्राज्यका सदस्य होनेसे किसी भी ब्रिटिश प्रजाजनको साम्राज्यमें जहाँ चाहे वहाँ रहनेका अधिकार होना चाहिए। सर्वसम्मत राजनीतिक तथ्योंसे यह तर्क रद हो जाता है। साथ ही यह मानना भी बहुत महत्त्वपूर्ण है कि बादशाहके

प्रजाजन, चाहे इनके शरीर-गठन, रीति-रिवाज और धर्म यूरोपीय प्रजातियोंसे कितने भी भिन्न क्यों न हों, विदेशी नहीं हैं। यह बात पर्याप्त रूपसे अनुभव नहीं की गई है कि विशुद्ध स्थानीय कारणोंसे अधिराज्यों (डोमिनियन्स) ने ऐसी नीति अपनाई है जिसके कारण एशियाई ब्रिटिश प्रजाजनोंको भी विदेशी एशियाइयोंके समान मान लिया गया है। वस्तुतः उपर्युक्त कारणोंसे कैनेडा अधिराज्यमें जापानी प्रवासियोंकी अपेक्षा भारतीय प्रवासियोंके प्रति अधिक कठोरता बरती जाती है। एक दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य, जिसकी सामान्यतः उपेक्षा कर दी जाती है, यह है कि ब्रिटिश साम्राज्यके कुछ भागोंमें एशियाई ब्रिटिश प्रजाजनोंके प्रति बहिष्कारकी ऐसी नीति अपनाई गई है जिसे ब्रिटिश-साम्राज्यके बाहरके देशोंने भी नहीं अपनाया है। निःसन्देह यह सच है कि यद्यपि यूरोपीय शक्तियोंके अधिकारके उष्ण कटिबन्ध और उससे संलग्न भागोंमें स्थित देशोंकी जलवायु और परिस्थितियाँ ब्रिटिश सम्राट्के अधीन उपनिवेशोंसे मिलती-जुलती हैं किन्तु वहाँकी स्थानीय अवस्था अभीतक वैसी नहीं हुई है जिसके कारण उपनिवेशोंने अपनी प्रवास नीति ऐसी बनाई है। फिर भी यह एक विचित्र तथ्य है कि दूसरे राष्ट्र ब्रिटिश भारतीयोंको ऐसे विशिष्ट अधिकार देते हैं जो उपनिवेशोंमें उन्हें नहीं दिये जाते।

यदि यह विचार ठीक हो कि किसी भी प्रजातिकी ब्रिटिश प्रजाके हर व्यक्तिको साम्राज्यके किसी भी भागमें अबाध प्रवेशका अधिकार होना चाहिए तो फिर साम्राज्यमें यूरोपीयोंके नये राष्ट्र बनानेकी नीतिका इसके साथ मेल नहीं बैठता; और इस असंगतिपर पर्दा डालनेकी कोशिश व्यर्थ है। इस स्थितिमें ब्रिटिश सरकारको इतना कहनेका अधिकार है कि उपनिवेशोंकी नीतिका निर्माण और उसकी अभिव्यक्ति ऐसे ढंगसे की जाये कि उससे गैर-यूरोपीय ब्रिटिश प्रजाजनोंके आत्म-सम्मानपर ख्वाहमख्वाह आघात न लगे। प्रवेश-निषेधको प्रजातीयताकी अपेक्षा शैक्षणिक कसौटीपर आधारित करनेसे इस बातकी रक्षा हो जाती है; यद्यपि इसे व्यक्तिशः मामलोंपर लागू करनेमें प्रजातीय आधारपर भारतीयोंको प्रविष्ट न होने देने की गुंजाइश बनी रहती है। कैनेडाके कानूनमें प्रवासको सीमित करनेके ऐसे तरीके मौजूद हैं जिनसे किसी प्रजाति-विशेषके विरुद्ध बिना कानूनी भेदभाव किये (१) स्थानीय जलवायु या आवश्यकताके लिए अनुपयुक्त समझे गये प्रवासियोंका या किसी विशेष वर्ग, व्यवसाय या चरित्रके प्रवासियोंका प्रवेश रोकनेकी; और (२) प्रवासियोंको एक न्यूनतम निश्चित रकम लेकर ही आने देनेकी सत्ता मिल जाती है।

इस बातसे तो सभी सहमत होंगे कि प्रत्येक उपनिवेशका सर्वाधिक बड़ा नैतिक कर्तव्य यह है कि वह सबसे अलग हटकर कोई ऐसी कार्रवाई न करे जिससे साम्राज्य किसी विदेशी शक्तिके साथ युद्धमें फँस जाये। किन्तु इस बातपर अच्छी तरह विचार किया गया प्रतीत नहीं होता कि प्रत्येक उपनिवेशको शेष साम्राज्यके प्रति कर्तव्य-दृष्टिसे यह तय कर लेना चाहिए कि उसकी घरेलू नीतिसे भारतके प्रशासनमें कोई अनावश्यक परेशानी पैदा न होने पाये। जिन राजनीतिज्ञोंने भारतीयोंको केवल मजदूरों और छोटे व्यापारियोंके रूपमें ही देखा है, उनके लिए यह कठिन है कि वे उस समूचे देशका साम्राज्यके लिए महत्त्व समझ सकें जिसमें ३० करोड़ लोग रहते हैं, जिसकी सभ्यता अति प्राचीन और बहुत उच्च कोटिकी है, जिसने साम्राज्यकी सेनाओंके लिए कुछ उत्तम सैनिक सामग्री दी है और अब भी देता है तथा जहाँ आर्थिक एवं व्यापारिक उद्यमकी जबर्दस्त गुंजाइश है। जो लोग भारतसे परिचित नहीं हैं उन्हें यह समझाना कठिन है कि भारतीय सेनाके पुराने सैनिकोंने जब यह देखा कि ब्रिटिश साम्राज्यके भागोंमें ही उन्हें "कुली" कहा जाता है और उनके साथ तिरस्कारपूर्ण और कठोर व्यवहार किया जाता है तो उनमें कितना तीव्र और स्वाभाविक रोष उत्पन्न हुआ। (यह घटना वास्तविक है।) ये वे सैनिक थे जिन्होंने ब्रिटिश ध्वजाके नीचे सक्रिय सेवा की है और पदक प्राप्त किये हैं एवं जिनके साथ उनके अंग्रेज अफसरोंने सम्मानपूर्ण और शिष्ट व्यवहार किया है; अवश्य ही वे अपने चरित्रके कारण इसके अधिकारी थे। माना कि इस तरहकी बातें बहुत कुछ सरकारके नियन्त्रणसे बाहर होती हैं; किन्तु लोगोंकी भ्रान्त धारणाएँ बड़ी आसानीसे अनिष्टको जन्म दे सकती हैं इसलिए इस गम्भीर तथ्यको स्पष्ट करना

उचित प्रतीत होता है कि साम्राज्यके कई भागोंमें भारतकी वस्तुस्थितिके विषयमें ऐसी अनेक धारणाएँ फैली हुई हैं जो मूलतः गलत हैं। . . .

. . . किन्तु कुल मिलाकर प्रवास-सम्बन्धी कठिनाई कुछ क्रमिक विधानोंके द्वारा दूर की जा चुकी है। इन विधानोंसे भेदभावकारी और अपमानजनक भाषाका प्रयोग किये बिना एशियाइयोंका अति-प्रवास रोकनेमें सफलता मिल गई है। यह बात मान ली गई है कि वे लोग, जिनके रहन-सहनका तरीका अधिराज्योंके अपने राजनीतिक और सामाजिक आदर्शोंसे भिन्न है, अधिराज्योंमें स्थायी निवासीके रूपमें प्रविष्ट नहीं किये जायेंगे।

किन्तु अस्थायी आगन्तुकोंके प्रवेशकी बात, जिसपर आपत्ति लागू नहीं होती, अभी सन्तोषजनक रूपसे तय नहीं हुई है। यदि यह प्रश्न गम्भीर न होता तो यह बात हास्यास्पद कही जा सकती थी कि जो विनियम कुलियोंको ध्यानमें रखकर बनाये गये थे, उनका प्रभाव उन सभी राजाओंपर, जो महामहिम सम्राट्के मित्र (अलाइ) हैं और जिन्होंने अपनी सेनाएँ उनको सौंप दी हैं; या जो सज्जन साम्राज्यकी प्रिवी कौंसिलके सदस्य हैं, या जिन्हें महामहिम सम्राट्के निजी अंग-रक्षक होनेका सम्मान प्राप्त है, पड़ता है। इसमें शक नहीं कि यदि ऐसी विशिष्ट स्थितिवाला कोई व्यक्ति किसी उपनिवेशमें आयेगा तो वह लौटाया नहीं जायेगा। किन्तु यह प्रसिद्ध है कि इन भारतीय सज्जनोंमें यह भावना बहुत ही प्रबल है कि जहाँ वे यूरोपके किसी भी देशकी राजधानीमें उसके सर्वोत्तम समाजमें स्वतन्त्रतापूर्वक आ-जा सकते हैं, वहाँ वे कतिपय उपनिवेशोंमें छोटे-छोटे अधिकारियोंकी क्षोभकारी पूछताछसे गुजरे बिना पैर नहीं रख सकते, जब कि भारतमें बड़ीसे-बड़ी नौकरियोंके द्वार महामहिमके उपनिवेशवासी प्रजाजनोंके लिए खुले हैं।

ब्रिटिश-सरकारने पिछले कुछ वर्षोंमें भारतमें नागरिकताकी भावनाको उत्पन्न और पुष्ट करनेके जो प्रयत्न किये हैं, उनमें निःसन्देह भारतीयोंके प्रति उपनिवेशोंमें आम तौरपर फैली हुई कटुताकी भावनासे बाधा पड़ी है। ताजके प्रति भारतीयोंके विशाल लोक-समुदायकी वफादारी एक विशिष्ट तथ्य है और यह ध्यान देने योग्य है कि ब्रिटिश शासनकी छोटी-छोटी बातोंकी आलोचना करनेवाले बहुत-से भारतीय सच्चाईके साथ इस वफादारीका अनुभव करते हैं। अभी हालमें जो संवैधानिक परिवर्तन किये गये हैं उनसे उस देशके लोगोंको उसके शासनमें अधिक भाग दिया गया है और उससे भारतीयोंको सीधे सरकारके ध्यानमें यह बात लानेका और भी अधिक अवसर मिला है कि साम्राज्यमें भारतके स्थानके प्रश्नपर उनके क्या विचार हैं। भारतीयों और उपनिवेशोंमें उपनिवेशोंके प्रश्नपर ही गम्भीर मतभेद हैं और यही एक ऐसा प्रश्न है जिसपर भारतमें राजद्रोहको भड़कानेवाले आन्दोलनकारी और नरम विचारके भारतीयोंके पूर्ण राजभक्त प्रतिनिधि एक ही मत रखते हैं। भारत-सरकार यदि उपनिवेशोंके दृष्टिकोणसे सहमत बनी रहती है तो वह भारतको निराशाकी उस व्यापक भावनासे मुक्त नहीं रख सकती जो उपनिवेशों द्वारा उसे प्रतिष्ठाका अधिकारी न माननेकी इच्छासे उत्पन्न होती है। उच्च-शिक्षा प्राप्त तथा उच्चवंशीय अनेक भारतीयोंको साम्राज्यके दूसरे भागोंको देखनेकी सहज और सराहनीय इच्छा होती हैं; किन्तु इस समय उनका उपनिवेशोंमें जानेका मार्ग अवरुद्ध है। महामहिम सम्राट्की सरकारको पूरी आशा है कि ऐसी कार्रवाई जो निम्न श्रेणीके भारतीयोंका इतनी बड़ी संख्यामें प्रवेश रोकनेके लिए आवश्यक है कि उससे उपनिवेशोंकी आबादी ही बदल जाये और गम्भीर स्थानीय कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जायें, उन आगन्तुकोंपर लागू न की जायेगी जिनका सामाजिक दर्जा अच्छा है, जो अच्छी स्थितिवाले ऐसे व्यापारी हैं जिनका भारतसे बाहर व्यापार है या जो विश्वविद्यालयके उपाधि-प्राप्त विद्वान हैं।

(२) उपनिवेशोंमें रहनेवाले भारतीयोंका दर्जा

केवल दक्षिण आफ्रिकामें ही भारतीय निवासियोंकी आबादी कुछ ज्यादा है और वह मुख्यतः नेटाल सरकार द्वारा जानबूझकर भारतीय गिरमिटिया मजदूरोंके बुलाये जानेके कारण है। गिरमिटिया भारतीयोंका लाया जाना तब आरम्भ हुआ था जब नेटाल शाही उपनिवेश था। किन्तु वह उत्तरदायी सरकार बननेपर

भी जारी रहा। कैनेडा और आस्ट्रेलियामें भारतीय प्रवासी अपेक्षाकृत कम ही हैं और वे वहाँ अपने व्यापारिक कार्यसे आये हैं। किन्तु दक्षिण आफ्रिकामें पिछली कई शताब्दियोंसे, उष्ण कटिबन्धीय आफ्रिकाके पूर्वी तटपर व्यापार करनेवाले व्यापारियोंके कुछ प्रतिनिधियोंके प्रवेशके अतिरिक्त, भारतीय ज्यादातर सरकारकी उस कार्रवाईके कारण पहुँचे हैं जो उसने नेटालकी यूरोपीय आबादीके एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण भागके कहनेसे और उसके लाभकी दृष्टिसे की थी।

तब जहाँतक भारतीय आबादीके अस्तित्वका सम्बन्ध है, उपनिवेश भारतमें अशान्ति दूर करनेकी दिशामें बहुत-कुछ कर सकते हैं। इसके लिए वे ऐसी प्रशासनिक नीतिसे बचें जिससे यह प्रकट हो कि वे भारतीयोंको निकाल बाहर करना चाहते हैं या उनको दीन-हीन अवस्थामें पहुँचा देना चाहते हैं। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय मुख्यतः यूरोपीय व्यापारियोंसे होड़ करते हैं — जो प्रायः निम्न वर्गके यूरोपीय विदेशी हैं — और ब्रिटिश कोलम्बियामें उनकी होड़ विदेशोंसे आये गोरे मजदूरोंसे है। इसलिए इस आर्थिक होड़से समय-समयपर संघर्ष उत्पन्न होना स्वाभाविक है। किन्तु नेटालमें नगरपालिका अधिकारियोंका भारतीय व्यापारियोंसे किया गया व्यवहार कभी-कभी बहुत अनुचित रहा है और अब भी परवाना देनेवाले निकायोंके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालयमें अपीलके द्वारा अपने व्यापारिक अधिकारके स्वामित्वको बचानेकी गुंजाइश केवल उन व्यक्तियोंको दी गई है जिनको पहलेसे व्यापारिक परवाने मिले हुए हैं। वर्तमान परवानोंको हस्तान्तरित करना या नये परवाने देना पूर्णतः नगरपालिका-अधिकारियोंके हाथोंमें है। नेटालमें कुछ कानून-निर्माणकी और ट्रान्सवालमें कुछ प्रशासनिक कार्रवाईकी योजनाओंसे भारतीयोंमें बहुत डर पैदा हो गया है और यह आशा की जाती है कि जब संघको यह सन्तोष हो जायेगा कि असीमित एशियाई प्रवासके विरुद्ध संरक्षणकी व्यवस्था की जा चुकी है, तब संघके निवासी भारतीयोंके साथ उदारताका व्यवहार करनेकी कृपा करेंगे।

उदारतापूर्ण व्यवहारकी किसी भी पद्धतिमें निम्नलिखित बातें सम्मिलित मानी जा सकती हैं:

(१) ऐसे कानून न बनाये जायें जिनका मन्शा परेशान करनेवाले विनियमोंके द्वारा सम्मानित व्यापारियोंसे आजीविकाके साधन छीने जानेका हो;

(२) सफाई-सम्बन्धी कानून केवल सफाईकी आवश्यकताओं तक ही सीमित रखे जायें और ऐसे विनियम बनाये जायें जो भारतीय अधिवासियोंको परेशान करनेके अप्रत्यक्ष साधनके रूपमें उन कानूनोंका उपयोग करनेपर लगा सकें;

(३) शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाएँ दी जायें। निःसन्देह इनके परिणामस्वरूप मिली-जुली प्राथमिक शालाओंमें एशियाई और यूरोपीय बच्चोंका साथ-साथ पढ़ना लाजिमी नहीं है;

(४) यह निश्चय कर लिया जाये कि प्रवासी कानूनोंका उपयोग कानूनी वाक्छलका सहारा लेकर वैध निवासियोंको निर्वासित करने, या अधिवासी परिवारोंको भंग करने, या अस्थायी आगमन पासों (टेम्पोररी विजिटिंग परमिट्स) द्वारा निवासी भारतीयोंको जिन सम्बन्धियोंकी तत्काल आवश्यकता हो उनका अस्थायी प्रवेश अस्वीकृत करनेके लिए न किया जायेगा। (ऐसी एक घटना हुई है जब बेटेको अपने बापकी अन्त्येष्टिमें भाग लेनेके लिए अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया गया था। यह घटना ब्रिटिश कोलम्बियाकी बताई जाती है। ऐसी घटनासे उन लोगोंमें, जो अन्त्येष्टि-सम्बन्धी रीतियोंको सर्वाधिक महत्व देते हैं, बहुत ही कटुता पैदा होगी)।

यह लगभग निश्चित है कि कैनेडा, आस्ट्रेलिया या न्यूजीलैंडमें भारतीयोंकी कोई बड़ी आबादी कभी न होगी। इन उपनिवेशोंमें आदिवासियोंकी आबादी बहुत कम है और वह कुछ जगह घट रही है और उनकी आबादी कालान्तरमें व्यवहारतः विशुद्ध यूरोपीय हो जायेगी। किन्तु दक्षिण आफ्रिकामें वतनी लोगोंकी संख्या ही गोरोंसे इतनी अधिक है कि अकुशल श्रम लगभग सदा वतनियोंके हाथोंमें रहेगा। इतना ही नहीं, बल्कि वहाँ एक छोटा एशियाई तत्व लगभग दो शताब्दीसे मौजूद है। केप कालोनीमें राज-काज

किसी तरहके संघर्षके बिना चलाना और डच ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा लाये गये मलायी लोगोंसे काम लेना सम्भव हो सका है। ये मुसलमान हैं और इनकी सामाजिक आदतें भिन्न हैं। वे मछुओं, ड्राइवरों और छोटे किसानोंके रूपमें अच्छे माने जा चुके हैं। इस विचारका समर्थन नहीं किया जा सकता कि दक्षिण आफ्रिकामें केवल गोरे और काले लोग ही रह सकते हैं और उसमें गेहुँआ रंगकी प्रजातियोंके लिए कोई स्थान नहीं है; क्योंकि यद्यपि एक अपेक्षाकृत नये बसे हुए क्षेत्रके बारेमें, जैसे दोनों भूतपूर्व गणतन्त्रोंके प्रदेशोंके बारेमें, यह बात कही जा सकती है, फिर भी केप कालोनीमें आबादीका एक बड़ा तत्व जिसमें मलायी ही नहीं बल्कि रंगदार लोग भी हैं, सभ्यता और स्वभावकी दृष्टिसे आफ्रिकी वतनियों और यूरोपीयोंके बीचके हैं। इस मध्यस्थ तत्वके अस्तित्वसे जो कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं, उनको कम आँकनेका कोई इरादा नहीं है, फिर वह मध्यस्थ तत्व चाहे मिश्रित रक्त हो या विशुद्ध एशियाई। किन्तु यह विश्वास किया जाता है कि यदि प्रशासन न्याययुक्त हो तो ये कठिनाइयाँ खतरनाक रूप धारण नहीं कर पायेंगी।

(३) उपनिवेशीय समुद्रोंमें चलनेवाले जहाजोंमें भारतीयोंकी नियुक्ति

पहले दिये हुए संक्षिप्त इतिहासमें इस मुद्देके सम्बन्धमें जो-कुछ कहा जा चुका है उसके अतिरिक्त कुछ कहना अनावश्यक है। वहाँ यह बता दिया गया है कि १९१० के न्यूजीलैंड जहाजरानी विधेयकसे भारतीय जहाजियोंपर कौन-कौनसी गम्भीर निर्योग्यताएँ लग जायेंगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-९-१९११, १६-९-१९११, २३-९-१९११ और ३०-९-१९११

परिशिष्ट १२

प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक (१९१२) पर संघीय मन्त्रियोंकी टिप्पणियाँ

क[1]

आज प्रातःकाल जनरल स्मट्सने बातचीतके दौरान प्रवासी विधेयकके मसविदेका उल्लेख किया। मैंने उनसे पूछा कि धारा २८ के अन्तर्गत इमला-परीक्षाके आधारपर जो सीमित संख्यामें शिक्षित भारतीय प्रविष्ट होंगे उनमें से कोई यदि फ्री स्टेटमें प्रविष्ट होना चाहेगा, तो उसकी स्थिति क्या होगी। मन्त्री महोदयने कहा कि फ्री स्टेटमें या किसी अन्य प्रान्तमें उसके प्रवेशपर कोई प्रतिबन्ध न होगा और उसपर जो एकमात्र विशेष निर्योग्यताएँ लागू की जायेंगी वे, जैसा कि धारा २८ की उपधारा २ में बताया गया है, फ्री स्टेटमें अचल सम्पत्ति खरीदने या व्यापार या खेती करनेके निषेधकी होंगी। जनरल स्मट्सके कथनानुसार उसको डॉक्टरके रूपमें अपना कारबार जमानेमें कोई रुकावट न होगी। हाँ, उसके धन्धेको लाभप्रद बनानेकी दृष्टिसे पर्याप्त संख्यामें उसके देशवासी वहाँ न हों, यह एक बाधा हो सकती है। फ्री स्टेटकी कानूनकी पुस्तकके अध्याय ३३ की शेष धाराएँ रद नहीं की जा रही हैं, किन्तु इमला-परीक्षाके अन्तर्गत प्रविष्ट होनेवाले भारतीयोंकी हद तक उसके अनुच्छेद ७ और धारा ८ के अतिरिक्त अन्य सारे अनुच्छेद व्यवहारतः अमल बाहर होंगे, क्योंकि उनका दर्जा और उनके अधिकार

१. गवर्नर जनरल लॉर्ड ग्लैडस्टन और जनरल स्मट्सके बीच जो बातचीत हुई थी, उसके आधार-पर गवर्नर जनरलके निजी सचिवने रिपोर्ट तैयार की थी। इसे २८ अक्तूबर १९११ को ग्लैडस्टनने उपनिवेश कार्यालयको भेजा था।

इस विधेयकके मसविदेमें सुरक्षित कर दिये गये हैं। मैंने मन्त्रीसे पूछा कि क्या उन्हें ऐसा नहीं लगता कि अनुच्छेद ७ और ८ को स्पष्टरूपसे कायम रखनेका श्री गांधी और उनके अनुगामियों द्वारा तीव्र विरोध किया जायेगा। उन्होंने कहा कि जबतक फ्री स्टेटमें प्रवेशका अधिकार सुरक्षित है, जैसा विधेयकके मसविदेमें दिया गया है, तबतक श्री गांधी कोई आपत्ति न करेंगे। मुझे ऐसे आशापूर्ण उत्तरकी अपेक्षा नहीं थी; लेकिन जनरल स्मट्सने जिस विश्वासके साथ यह बात कही उसमें इस निष्कर्ष-पर पहुँचा हूँ कि उनका श्री गांधीसे पत्र-व्यवहार हुआ होगा और उन्होंने इस मुद्देपर अपनी दिलजमई कर ली होगी। उन्हें इस बातका विश्वास हो गया प्रतीत होता था कि जहाँतक विधेयकका सम्बन्ध है, वह इस देशमें रहनेवाले भारतीय समाजको स्वीकार्य होगा। ऑरेंज फ्री स्टेटके सदस्योंके रुखके सम्बन्धमें जनरल स्मट्सने स्वीकार किया कि २८ वीं धाराकी उपधारा १ उतनी आगे नहीं जाती जितनी वे चाहते हैं। उनकी इच्छा तो यही होगी कि अपने प्रान्तमें किसी भारतीयको प्रवेश न करने दें, और यह तो समय ही बतायेगा कि वे इसपर अड़े रह सकेंगे या नहीं। उन्होंने यह आशा प्रकट की कि वे कमसे-कम इतना तो मानेंगे ही — कि यदि वे विधेयकको केवल इसलिए विफल करनेकी चेष्टा करेंगे कि उससे उनकी सारी आकांक्षाएँ कुछ पूरी नहीं होतीं तो उसे सहन नहीं किया जा सकता। उनका यह खयाल भी है कि उनके पास एक प्रबल तर्क है और वह यह है कि वर्तमान कानूनके अंतर्गत उस प्रान्तमें भारतीयोंके प्रवेशपर कोई पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्तिके मामलेमें प्रवेशको अनुमति देना या इनकार करना मन्त्रीकी मर्जीपर छोड़ दिया गया है और यदि मन्त्री भारतीयोंपर सम्पत्ति खरीदने या व्यापार या खेती करनेके सम्बन्धमें लगे कानूनी प्रतिबन्धको ध्यानमें रखते हुए फ्री स्टेटमें असीमित संख्यामें एशियाइयोंको दाखिल करना ठीक समझें तो उन्हें उससे कोई विमुख नहीं कर सकता। स्मट्सका खयाल यह मालूम होता था कि यदि उन्हें यह स्थिति भली-भांति समझा दी जाये तो उनके रुखमें कोई परिवर्तन होना असम्भव नहीं है। मैं यह भी कह दूँ कि मुझे यह भली-भांति मालूम है कि उपधारा २ का मसविदा जनरल हर्कोर्टको खास तौरसे दिखाया गया था और उन्होंने उसकी शब्दावलीपर कोई आपत्ति नहीं की।

२. मैंने जिक्र किया कि मुझे विधेयकके मसविदेमें ऐसी कोई व्यवस्था दिखाई नहीं दी जिससे मन्त्री द्वारा श्री गांधीको पत्र-व्यवहारमें दिया गया यह वचन पूरा हो सके कि उन सत्याग्रहियोंके पंजीयनकी व्यवस्थाकी जायेगी जो यदि सत्याग्रह न करते तो पहले ही पंजीयनके अधिकारी होते। स्मरण रहे कि इस मुद्देका उल्लेख लॉर्ड ग्लैडस्टनके २३ अक्तूबरके गोपनीय खरीतेके मुद्दे (२) के अनुच्छेद १५ में किया गया है। जनरल स्मट्सने उत्तर दिया कि यह पता चला है कि इस वचनकी पूर्तिके लिए कोई खास कानून बनानेकी आवश्यकता नहीं है और वस्तुतः अब पंजीयनके प्रमाणपत्र दिये जा रहे हैं।

३. इमला-परीक्षाके सम्बन्धमें जनरल स्मट्सने स्वयं ही यह वक्तव्य दिया कि वे परीक्षाकी आस्ट्रेलियाई प्रणालीको उसी रूपमें अपनाने और परीक्षाका विषय केवल यूरोपीय भाषाओं तक सीमित रखनेकी उपयुक्तता-पर विचार कर रहे हैं। उनका खयाल है कि यूरोपीय भाषाओंकी एक सूची बनानेमें कोई कठिनाई न होगी और चूँकि इस समय गोरे प्रवासियोंमें यहूदी प्रजातिके लोग बहुत बड़ी संख्यामें हैं, इसलिए वे यीडिश भाषाको सम्मिलित करनेके लिए भी तैयार हैं।

४. उन्होंने कहा कि वे अगले अधिवेशनमें विधेयकके पास होनेके बारेमें बहुत आशान्वित हैं और उस सम्बन्धमें पूरा प्रयत्न करेंगे क्योंकि प्रवासके प्रश्नको नियमित रूप देना और तय करना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने यह बात जितनी जोर देकर कही वह अधिक सन्तोषप्रद है क्योंकि कुछ महीने पहले तो लक्षण ऐसे थे जिनसे लगता था कि इस मामलेमें दिलचस्पी कुछ कम होनेकी संभावना है . .[1]

. . . उत्पादक उद्योगमें लगे हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि गोरोंके प्रवासके सामान्य प्रश्नपर

१. इसके आगेका एक पृष्ठ खो गया है।

उनके वक्तव्य, भाव और उद्देश्य दोनों ही दृष्टियोंसे, कमसे-कम अपने एक सहयोगीके सार्वजनिक वक्तव्योंसे काफी भिन्न हैं।[1]

६. ट्रान्सवालके एशियाई प्रश्नके सम्बन्धमें डिवीजनल कोर्टने स्वर्ण कानूनके खण्ड ७७ और १३० की जो व्याख्या की है और जिसका उल्लेख लॉर्ड ग्लैडस्टनके इसी २३ तारीखके खरीते सं० ८१७ में किया गया है, उन्होंने गम्भीर चिन्ता प्रकट की। उनके खयालसे यह निर्णय कानूनके विरुद्ध है; किन्तु वे उसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहते। वे यह समझते हैं कि इसका प्रभाव यह होगा कि इस अधिनियमके पारित होनेसे पूर्व कस्बोंके बाहर जहाँ-कहीं खान-क्षेत्रसे एशियाइयोंके बाड़ोंको उठानेका अधिकार था, उसका उपयोग अब भी किया जा सकता है। इसका परिणाम यह होगा कि एकबारगी ही एशियाई दूकानें बड़ी संख्यामें समस्त रीफ (स्वर्ण क्षेत्र) में खुल जायेंगी, जिसके फलस्वरूप गोरे व्यापारियोंको निकलना पड़ेगा तथा सोने और शराबके गैरकानूनी व्यापारको, जिसमें एशियाइयोंके प्रवृत्त होनेकी खासी गुंजाइश है, बहुत प्रोत्साहन मिल जायेगा। उनके विचारसे अतिरिक्त कानून बनाना आवश्यक हो सकता है और इस विशेष कठिनाईका तथा ट्रान्सवालमें एशियाई व्यापारके आम प्रश्नका हल, जिसके लिए वे इच्छुक थे, नेटालकी प्रणालीसे मिलती-जुलती एक लाइसेंस-प्रणाली लागू करके प्राप्त किया जा सकता है। स्मरण रहे कि मन्त्रियोंने अपने २ सितम्बरके खरीते सं० १०२८ में एक ऐसे उपायपर विचारकी ओर संकेत किया था जो उसी मासकी ४ तारीखके लॉर्ड ग्लैडस्टनके खरीते सं० ७३७ के साथ (उपनिवेश-) मन्त्रीको भेजा गया था। जनरल स्मट्सके विचारमें यह योजना जान पड़ती है कि स्थानीय अधिकारी ट्रान्सवालमें समस्त व्यवसायोंके लिए लाइसेंसकी एक व्यापक प्रणाली आरम्भ करें जिसमें एशियाइयोंसे कोई भेदभाव न किया जाये, उनके वर्तमान अधिकार कायम रखे जायें और उन्हें अनुचित कष्टसे अपना बचाव करनेके लिए किसी केन्द्रीय अधिकारीके सम्मुख अपील करनेकी छूट दी जाये। स्पष्ट है कि वे इस सम्बन्धमें अभी किसी निश्चित परिणामपर नहीं पहुँचे हैं और वे समझते हैं कि ऐसे किसी भी प्रस्तावका कई क्षेत्रोंमें भारी विरोध किया जायेगा। फिर भी उन्होंने कहा कि इस प्रान्तमें एशियाई व्यापार जिस तेजीसे बढ़ रहा है, उसे देखते उसको नियन्त्रित करनेके लिए कुछ कार्रवाई करना अत्यन्त आवश्यक है, और उनकी रायमें परवानेकी प्रणाली आरम्भ करनेका व्यावहारिक प्रभाव यही होगा, चाहे उसका रूप प्रजातीय भेदभावसे कितना ही मुक्त क्यों न हो। उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कि गोरे व्यापारी एशियाई स्पर्धाके रहते टिक नहीं सकते। उन्होंने इस बातको भी स्वीकार किया कि गोरे व्यापारियोंके व्यापारके तरीके ऐसे हैं जिनसे वे बहुत अधिक सहानुभूतिके पात्र नहीं ठहरते; क्योंकि उन्हें जो अवसर प्राप्त हुआ है, उसका उन्होंने अनुचित लाभ उठाया है और उनकी वृत्ति अत्यधिक मुनाफा लेनेकी है। किन्तु ऐसा होनेपर भी वे इसके वैकल्पिक उपायका सामना करनेके लिए तैयार नहीं हैं जिससे देशका समस्त फुटकर व्यापार एशियाइयोंके हाथोंमें चला जायेगा। एक ओर गोरे व्यापारियोंके अवांछनीय व्यापारिक तरीके हैं और दूसरी ओर एशियाई व्यापारका असीमित विकास है। ये दोनों ही बुरे हैं। इन दोनोंमें से उन्हें पहलेका चुनाव करनेमें कोई झिझक नहीं हो सकती, बशर्ते कि वे दक्षिण आफ्रिकाको गोरोंका देश बनानेके अपने आदर्शको व्यर्थ सिद्ध न करना चाहें। उनके कथनकी ध्वनिसे मुझे कोई सन्देह नहीं रहा है कि वे इस प्रश्नपर गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहे हैं। वे इस मामलेको केवल सैद्धान्तिक विचारका विषय मानकर ऐसा नहीं कर रहे, बल्कि कोई प्रभावकारी कार्रवाई करनेकी दृष्टिसे कर रहे हैं, और मुझे भय है कि यह आशा करना व्यर्थ होगा कि इस प्रश्नको झमेलेमें डाल रखा जायेगा।

एच० जे० स्टैनले

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स, सी० ओ० ५५१/४४

१. अनुच्छेद ५ को मूलमें ही सम्भवतः जानबूझकर शामिल नहीं किया गया है।

ख

नवम्बर २८, १९११

१. ट्रान्सवालके सत्याग्रह विवाद-सम्बन्धी समझौतेको वैध रूप देनेके लिये कानूनी व्यवस्था करना आवश्यक नहीं समझा जाता।

२. धारा ५ (च)। अधिवाससे आवश्यक रूपसे निवासका अधिकार नहीं मिलता; अर्थात् एशियाई पंजीयन सम्बन्धी कानूनोंका पालन न करनेसे किसी भी अधिवास-प्राप्त व्यक्तिका निवासका अधिकार चला जायेगा।

३. धारा ५ (ङ) और (छ)। उपनिवेश-मन्त्री द्वारा उठाया गया मुद्दा ध्यानमें रखा जायेगा।

४. धारा ५ (ज)। यह आशंका नहीं की जाती कि "गोरा" शब्दके प्रयोगसे कोई कठिनाई उत्पन्न होगी। वर्तमान रूपमें इस धाराका उद्देश्य यह है कि जब कभी कोई सरकार संसारके दूसरे भागोंसे संघमें रंगदार या एशियाई मजदूर लानेका विचार करे तो वह संसदमें जानेके लिए बाध्य हो।

५. प्रथम अनुसूची। यद्यपि ट्रान्सवालके १९०८ के अधिनियम सं० ३६ पर महामहिम सम्राट्ने कभी स्वीकृति नहीं दी है, फिर भी वह विधि-पुस्तिकामें है और बादमें कानूनी प्रश्न उठ सकते हैं; इनके निराकरणके लिए उपयुक्त यह है कि ट्रान्सवाल संसद द्वारा पारित किये गये कानूनोंकी सूचीमें से इसे निकाल दिया जाये।

६. धारा ७ और २८ (२)। खण्ड ४ (क) की व्यवस्थाके अन्तर्गत संघमें प्रविष्ट भारतीयोंको ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेशके लिए अतिरिक्त अनुमतिकी आवश्यकता न होगी; किन्तु यदि वे उस प्रान्तमें प्रविष्ट हो जाते हैं तो उनपर स्वभावत: व्यापार, खेती और भूमिके स्वामित्व-सम्बन्धी निर्योग्यताएँ, जो ऑरेंज फ्री स्टेटकी विधि-पुस्तिकाके अध्याय ३३ में दी गई हैं, लागू होंगी।

यद्यपि ये धाराएँ ऐसी नहीं हैं जिनसे भारतीय नेता पूरी तरह सहमत हों, फिर भी यह खयाल किया जाता है कि वे उनके लिए अत्यन्त सन्तोषजनक सिद्ध होंगी, क्योंकि वे उन आवेदनोंके अनुसार हैं जो भारतीय नेताओंने समय-समयपर सरकारको भेजे हैं।

७. भारत-सचिवने नेटालमें रहनेवाले उन भारतीयोंकी स्थितिके सम्बन्धमें, जो केपमें और केपसे बाहर जाकर अन्यत्र प्रवास करना चाहते हैं, जो प्रश्न उठाया है, उसके विषयमें मन्त्रीगण यह कहना चाहते हैं कि धारा ७ की व्यवस्थाका उद्देश्य नेटालकी भारतीय आबादीको अन्य प्रान्तोंमें प्रवास करनेसे रोकना है। केप, ट्रान्सवाल और ऑरेंज फ्री स्टेटके यूरोपीय निवासी नेटालके रहनेवाले भारतीयोंके बेजा प्रवेश-पर अत्यन्त तीव्र रोष प्रकट करेंगे और मन्त्रीगण यह कहनेके लिए तैयार नहीं हैं कि इस धाराकी व्यवस्थाके अन्तर्गत चुने हुए भारतीयोंको भी भविष्यमें इस प्रान्तमें प्रविष्ट होने दिया जायेगा।

मन्त्री यह बताना चाहते हैं कि दक्षिण आफ्रिकाकी भारतीय आबादीके सम्बन्धमें जो कठिनाइयाँ हैं, उनको देखते हुए सरकारको अत्यन्त सावधानीसे कार्रवाई करनेकी आवश्यकता है और यदि संसदके केपके सदस्योंका खयाल यह बन जाये कि नेटालमें रहनेवाले भारतीयोंको केप प्रान्तमें आनेकी अनुमति दे दी जायेगी तो उनके विरोधसे यह विधेयक सम्भवत: समाप्त भी हो सकता है।

लुई बोथा

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स; सी० ओ० ५५१/१४

ग

गोपनीय

नवम्बर ३०, १९११

प्रवासी विधेयक: सन्दर्भ मेरा आजकी तारीखका तार

आपके प्रश्नोंके सम्बन्धमें मन्त्रियोंका उत्तर मिल जानेपर मैं जे० सी० स्मट्ससे मिला। वे सत्याग्रहियोंके पंजीयन प्रमाणपत्रोंके वैधीकरणका प्रश्न उठानेका तीव्र विरोध करते हैं। एक अलग विधेयककी आवश्यकता होगी। सरकार प्रमाणपत्र जारी कर रही है और वही उनकी वैधतापर आपत्ति कर सकती है। उन्हें जारी करके [आपत्ति करनेसे] स्वयं उसीको बाधा पहुँचेगी। उसका उद्देश्य सत्याग्रहियोंकी स्थितिको सुरक्षित करना है। मेरा खयाल है कि इस मुद्देपर उसपर दबाव न डालना ही सर्वोत्तम है।

मन्त्रियोंके विवरणोंके उत्तर ३ के सम्बन्धमें जे० सी० स्मट्स आपके दृष्टिकोणको पूर्णतः स्वीकार करते हैं। किन्तु वे कहते हैं कि यह नया है और विधेयकमें नये प्रवासियोंके लिए व्यवस्था करना खतरनाक होगा। वे ज्यादा अच्छा यही समझते हैं कि यदि यह सवाल उठाना ही है तो संसदमें उठाया जाये, और उसका जो समुचित समाधान सम्भव होगा, देंगे। गांधीने इस प्रश्नको नहीं उठाया है।

उत्तर ४के सम्बन्धमें उनका विचार है कि गांधी कठिनाई उपस्थित नहीं करेंगे। उनका खयाल है कि उस अनुच्छेदपर भेदभावके दृष्टिकोणसे नहीं, बल्कि अन्य दृष्टिकोणोंसे विचार किया जा सकता है। अब लाइबेरियासे, और उनका खयाल हैं कि अन्य स्थानोंसे, वतनियोंको लानेके प्रयत्न किये जा रहे हैं और इसलिए उन्होंने ऐसे मामलोंमें कानून बनाना आवश्यक होनेपर उसकी व्यवस्था रखी है। सरकारने यहाँ भूमि और अन्य विकास कार्योंके लिए गोरोंको लानेकी जो योजना स्वीकार की है, उसको देखते हुए गोरोंको मुक्त रखना चाहिए।

वे यह नहीं कह सकते कि उन्होंने कोई ऐसी योजना बना ली है जिसपर वे और गांधी सहमत हैं। उनमें मोटे तौरपर तो मतैक्य है, किन्तु जे० सी० स्मट्स यह जोखिम लेना नहीं चाहते कि अकल्पनीय घटनाओंके फलस्वरूप शब्दोंकी व्याख्याके आधारपर या अन्य प्रकारके वचन-भंगका जो आरोप लगाया जाना सम्भव है, वह उनपर लगे।

ऑरेंज फ्री स्टेट और केपमें तथा यहूदियोंके विरोधके कारण उनको सन्देह है कि वे विधेयकको स्वीकार करा सकेंगे, और इसीलिए वे ऐसी स्थिति बनाना चाहते हैं जिसमें विधेयकके सम्बन्धमें पहले ही से कोई पूर्वग्रह उत्पन्न हो।

ग्लैडस्टन

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: सी० ओ० ५५१/४४

घ[1]

जनवरी ६, १९१२

प्रवासी विधेयकके मसविदेके विषयमें महाविभव गवर्नर जनरलने इसी १८ तारीखको सं० १५/२३४ और १५/२३५ संक्षिप्त विवरण भेजे हैं, उनके सम्बन्धमें मन्त्रीगण सादर निवेदन करते हैं कि उपनिवेश-मन्त्री और भारत-मन्त्रीने जो अतिरिक्त मुद्दे उठाये हैं उनपर उन्होंने सावधानीसे विचार किया है।

---

१. गांधीजी श्री लेनसे २२ दिसम्बर १९११को जोहानिसवर्गमें मिले थे। तब उन्हें नये प्रवासी विधेयककी एक प्रति दिखाई गई थी; देखिए पृष्ठ १९७। गांधीजीने लेनको लिखे गये अपने २९ जनवरीके पत्रके अन्तमें 'पुनश्च' करके लिखा है कि विधेयक २५ जनवरीको जिस रूपमें प्रकाशित किया गया है वह पिछली बार उन्होंने जिस रूपमें उसे देखा था उससे कुछ बदला हुआ है।

सत्याग्रहियोंसे अभी हालमें जो समझौता हुआ है उसके सम्बन्धमें मन्त्रियोंको यह आशंका नहीं है कि उस समझौतेकी शर्तोंके अधीन भारतीयोंको जारी किये गये प्रमाणपत्रोंके वैधीकरणके सम्बन्धमें कोई कठिनाई उत्पन्न होगी। भारतीय नेताओंने स्वयं ऐसा कानून बनानेकी माँग नहीं की है और मन्त्रियोंकी रायमें संघकी किसी भावी सरकारकी ओरसे कोई प्रश्न उठाये जानेकी भी सम्भावना नहीं है, क्योंकि उक्त प्रमाणपत्रोंकी संख्या सीमित है और ये सब कुछ ही अर्सेमें जारी किये जा चुकेंगे और ऐसे किसी भी प्रमाणपत्रको जो अधिकृत रूपसे जारी किया जा चुका हो, वापस लेने या उसे मान्य करनेसे इनकार करना किसी भी सरकारके लिए कानून-सम्मत और सम्भव होते हुए भी अव्यावहारिक होगा।

धारा ५ (छ): दक्षिण आफ्रिकाके कानूनमें और पुरानी रूढ़ियोंमें बहुपत्नीक विवाह मान्य नहीं रहे हैं और मन्त्री महोदय विधेयकके मसविदेमें ऐसी सुविधाएँ देनेमें असमर्थ हैं जिनके फलस्वरूप दक्षिण आफ्रिकामें वर्तमान स्थिति बदलती हो।

धारा ५ (ज): भारतीय नेताओंने, जिन्हें विधेयकका यह मसविदा दिखाया गया है, धारा ५ (ज) के वर्तमान रूपपर कोई आपत्ति नहीं की है; किन्तु यदि विधेयकको संसदमें पारित करते समय ऐसा प्रतीत हो कि "गोरा" शब्दके प्रयोगका विरोध किया जा रहा है, तो मन्त्री लोग संशोधनके प्रश्नपर विचार करनेके लिए तैयार हैं।

धारा ६ और ७: मन्त्री यह कहना चाहते हैं कि उपनिवेश-मन्त्रीने इन धाराओंका जो अर्थ लगाया है, वह ठीक है।

धारा ७ और २८ (२): भारतीय नेताओंने धारा ३३ के उल्लेखपर कोई आपत्ति नहीं की है, बल्कि इसके विपरीत यह सूचित किया है कि वर्तमान रूपमें धारासे उन कठिनाइयोंका सन्तोषजनक हल निकलता दिखाई देता है जो इस मामलेमें अनुभव की गई हैं। मन्त्री फिर भी यह कहना चाहते हैं कि यह खण्ड जिस रूपमें बना है उस रूपमें पास हो सकेगा या नहीं यह बहुत कुछ ऑरेंज फ्री स्टेटके उन संसद सदस्योंके रुखपर निर्भर है जो इस परिच्छेदकी व्यवस्थाओंमें किसी भी प्रकारकी शिथिलता करनेके घोर विरोधी हैं।

जे० सी० स्मट्स

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: सी० ओ० ५५१/२५

परिशिष्ट १३

प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक (१९१२) और ऑरेंज फ्री स्टेट संविधानके अंश

अबतक जिन कानूनोंके द्वारा संघके विभिन्न प्रान्तोंमें प्रवासको प्रतिबन्धित किया जाता रहा है उनके समेकन और संशोधन तथा एक संघीय प्रवासी विभागकी स्थापनाकी व्यवस्था करने और संघमें अथवा उसके किसी भी प्रान्तमें प्रवासका नियमन करनेकी दृष्टिसे।

गवर्नर-जनरल उचित समझे तो प्रवेशके किसी भी स्थानपर एक प्रवासी निकायकी नियुक्ति कर सकता है। उक्त निकायका काम निषिद्ध प्रवासी बताये गये व्यक्तिको संघमें प्रवेश देनेके प्रश्नपर मन्त्रीको सलाह देना होगा। साथ ही वह उसे प्रवेशसे सम्बन्धित अन्य बातोंमें भी सलाह देगा। (खण्ड ३)।

"निषिद्ध प्रवासी" शब्द-समुच्चयमें निम्नलिखित लोग आते हैं:
(क) ऐसा कोई भी व्यक्ति, जो इमला-इम्तहान पास नहीं कर सकता हो; अर्थात् जब कोई प्रवासी अधिकारी अपनी पसन्दकी किसी भी भाषाके कमसे-कम पचास शब्दका इमला बोले और वह व्यक्ति उक्त अधिकारीको सन्तोष देने योग्य ढंगसे उस भाषाके उन शब्दोंको न लिख सके:
(ख) ऐसा कोई भी व्यक्ति, जिसे मन्त्री किसी भी सरकार या कूटनीतिक सूत्र (चाहे वह ब्रिटिश हो या विदेशी) से प्राप्त सूचनाके आधारपर संघके लिए अवांछित निवासी अथवा अभ्यागत समझे। (खण्ड ४)।

छूट-सम्बन्धी धारामें निम्नलिखित लोग शामिल हैं:
(ङ) खण्ड सातकी धाराओंका बन्धन मानते हुए ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसका जन्म संघमें सम्मिलित दक्षिण आफ्रिकाके किसी हिस्सेमें हुआ हो;
(च) खण्ड सातकी धाराओंका बन्धन मानते हुए ऐसा कोई भी व्यक्ति जो प्रवासी अधिकारीको यह विश्वास दिला दे कि वह अब भी संघ अथवा संघके किसी प्रान्तका अधिवासी और उसमें रहनेका अधिकारी है, और साथ ही वह उसे यह प्रतीति भी करा दे कि संघसे अपनी अनुपस्थितिके कालमें वह वैसा [निषिद्ध] व्यक्ति नहीं हो गया है, जैसे व्यक्तिका विवरण ऊपरके अन्तिम खण्डके अनुच्छेद (ख), (ब), (ङ), (च) या (छ) में दिया गया है;
(छ) खण्ड सातकी धाराओंका बन्धन मानते हुए, ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसके सम्बन्धमें प्रवासी अधिकारीको यह विश्वास हो जाये कि वह निम्नलिखित प्रकारके व्यक्तिकी पत्नी या सोलह सालसे कम उम्रका बच्चा है:

(अ) किसी ऐसे व्यक्तिकी पत्नी या बच्चा, जिसे ऊपरके अन्तिम खण्डके अनुच्छेद (क) में वर्णित इमला-इम्तहान पास कर लेनेके कारण संघमें प्रवेश करनेकी अनुमति मिल गई है; या

(आ) किसी ऐसे व्यक्तिकी पत्नी या बच्चा, जिसका वर्णन इस खण्डके अनुच्छेद (च) में कर दिया गया हो; किन्तु शर्त यह है कि उस पत्नी या बच्चे (प्रसंगानुसार जो भी हो) को उन वर्गोंमें नहीं आना चाहिए जिन वर्गोंका वर्णन ऊपरके अन्तिम खण्डके अनुच्छेद (ग), (घ), (ङ), (च) या (छ) में किया गया है। (खण्ड ५)[1]

(१) प्रत्येक निषिद्ध प्रवासी, जो इस कानूनके लागू होनेके बादसे संघमें प्रवेश करेगा या यहाँ पाया जायेगा, अपराधी माना जायेगा और निम्नलिखित सजाओंका भागी होगा:
(क) बिना जुर्मानेका विकल्प दिये अधिकसे-अधिक तीन महीनेकी सादी या सख्त कैद; और
(ख) मन्त्री द्वारा जारी किये गये वारंटके आधारपर संघसे किसी भी समय निष्कासन।

(२) निष्कासित किये जाने तक निषिद्ध प्रवासीको ऐसी हिरासतमें रखा जा सकता है, जिसकी व्यवस्था विनियम द्वारा की गई हो।

(३) यदि उपर्युक्त कैद या हिरासतमें रखे गये निषिद्ध प्रवासीके सम्बन्धमें सन्तोषप्रद ढंगसे मन्त्रीको यह आश्वासन दिया जा सके कि निषिद्ध प्रवासी एक महीनेके भीतर संघसे चला जायेगा और फिर लौटकर वहाँ नहीं आयेगा तो उसे कैद या हिरासतसे मुक्त किया जा सकता है।

(४) कारावासकी ऐसी कोई भी अवधि निषिद्ध प्रवासीके संघसे निष्कासित किये जाते ही समाप्त हो जायेगी। (खण्ड ६)

भले ही कोई व्यक्ति इस अधिनियमके लागू होनेके समयसे अथवा इसके बाद किसी प्रान्त-विशेषका अधिवासी और वहाँ रहनेका अधिकारी हो, किन्तु इस अधिनियमकी किसी भी धाराकी व्याख्या उसे ऐसे किसी दूसरे

---

१. यहाँ **इंडियन ओपिनियन**में टिप्पणी-स्वरूप यह वाक्य जोड़ दिया गया है: "अनुच्छेद (ग), (ङ), (च), और (छ) रोग-विशेषसे बीमार लोगों और अपराध-विशेषके लिए दण्डित लोगोंसे सम्बन्धित है।"

प्रान्तमें प्रवेश करने या उसमें रहनेका अधिकारी बननेकी दृष्टिसे नहीं की जायेगी, जिसमें रहनेका अधिकारी वह नहीं बन चुका है। प्रान्तमें प्रवेश करने या रहनेका अधिकार प्राप्त करनेके लिए उसे खण्ड चारके अनुच्छेद (क) में वर्णित इमला-इम्तहान पास करना पड़ेगा, और उसे किसी भी समय उस इम्तहानमें बैठनेके लिए तलब किया जा सकता है। जहाँतक इस अधिनियमके उद्देश्योंका सवाल है, ऐसा हर व्यक्ति उक्त दूसरे प्रान्तकी दृष्टिसे तबतक निषिद्ध प्रवासी होगा, जबतक वह उक्त परीक्षा पास न कर ले; आवश्यक परिवर्तनोंके साथ ऊपरके अन्तिम खण्डकी धाराएँ उसपर लागू की जायेंगी। (खण्ड ७)

(१) किसी भी निषिद्ध प्रवासीको संघमें या (प्रसंगानुकूल) ऐसे किसी प्रान्तमें, जहाँ उसका रहना अवैध हो, कोई व्यापार अथवा रोजगार करनेके लिए परवाना अथवा, पट्टा-स्वामित्व अथवा पूर्ण स्वामित्व अथवा किसी जमीन या किसी अचल सम्पत्तिपर किसी भी प्रकारसे अधिकार प्राप्त करनेका हक नहीं होगा।

(२) ऐसा कोई भी परवाना, अथवा कोई अनुबन्ध, दस्तावेज या अन्य कागज, जिसके द्वारा इस खण्डकी धाराओंको तोड़कर ऐसा कोई अधिकार प्राप्त किया जाता है, (यदि किसी निषिद्ध प्रवासीने प्राप्त कर लिया हो तो) निषिद्ध प्रवासीको निषिद्ध प्रवासीके रूपमें सजा मिलते ही रद हो जायेगा। (खण्ड ८)

(१) ऐसे किसी भी व्यक्तिको, जिसके बारेमें कुछ उचित कारणोंसे निषिद्ध प्रवासी होनेकी आशंका हो बिना वारंटके कोई भी प्रवासी अधिकारी या पुलिस अधिकारी गिरफ्तार कर सकता है; उसके बाद उसे यथासम्भव शीघ्रसे-शीघ्र कानूनी कार्रवाईके लिए मजिस्ट्रेटकी अदालतमें पेश किया जायेगा। (खण्ड ९)

प्रवासी अधिकारी संघमें प्रवेश करनेवाले किसी भी व्यक्तिको विनियम द्वारा निर्धारित प्रारूपमें यह घोषणा करनेके लिए तलब कर सकता है कि वह, या यदि उसके साथ कोई हो तो वह निषिद्ध प्रवासी नहीं है। साथ ही अधिकारी उसे घोषणापत्रमें विनियम द्वारा निर्धारित अन्य विवरण देने और उस प्रारूपको हर दृष्टिसे पूरी तरह भरने तथा उस घोषणा पत्रके समर्थनमें कागजी और अन्य प्रमाण पेश करनेको कह सकता है।

स्टाम्प-करके सम्बन्धमें संघमें लागू किसी कानूनमें विपरीत व्यवस्था होनेके बावजूद ऐसे हर घोषणापत्रपर हलफनामों या गम्भीर अथवा प्रमाणित घोषणापत्रोंपर सामान्य रूपसे लगनेवाला स्टाम्प-कर माफ रहेगा।

यदि कोई व्यक्ति कहे जानेपर भी इस खण्डकी व्यवस्थाओंका पालन नहीं करता या प्रारूपमें किसी ऐसी बातको सत्य बताता है, या उपर्युक्त ढंगका कोई ऐसा प्रमाण पेश करता या देता है जिसके बारेमें उसे मालूम है कि यह झूठा है, तो वह अपराधी माना जायेगा। (खण्ड १८)

ऐसे किसी भी व्यक्तिको,

(क) जिसे इस कानूनके लागू होनेके पूर्व या बाद इसकी द्वितीय अनुसूचीमें वर्णित धाराओंमें से किसी धारा अथवा उन धाराओंके किसी संशोधनका उल्लंघन करनेके कारण सजा दी गई हो;

(ख) जो किसी भी सरकारके, पूरे या आंशिक, खर्चेपर संघसे अथवा संघमें सम्मिलित किसी हिस्सेसे निकाल दिये जाने या किसी कानूनके अन्तर्गत संघ या इस समय संघमें सम्मिलित उसके किसी हिस्सेसे निकल जानेके अपने ऊपर जारी किये गये आदेशके बावजूद वहाँ बिना किसी कानूनी अधिकारके वापस लौट आया हो या जिसने ऐसे किसी आदेशका पालन नहीं किया हो;

(ग) जिसने प्रवासी अधिकारी द्वारा संघमें अथवा किसी प्रान्तमें प्रवेश करनेकी अनुमति नहीं दिये जानेपर भी संघ या प्रान्तमें प्रवेश किया हो;

(घ) जो प्रवासी अधिकारीके सामने लिखित रूपसे स्वीकार कर ले कि वह संघ अथवा प्रान्तके लिए निषिद्ध प्रवासी है;

यदि वह पहलेसे ही हिरासतमें न हो तो, बिना वारंटके गिरफ्तार किया जा सकता है और मन्त्रीके आदेशपर संघ या (प्रसंगानुकूल) प्रान्तसे निष्कासित किया जा सकता सकता है, और निष्कासित किये जाने तक विनियम द्वारा निर्धारित हिरासतमें रखा जा सकता है। (खण्ड २१)

(१) यदि किसी व्यक्तिपर इस कानून अथवा किसी विनियमका उल्लंघन करके या किसी प्रान्तमें प्रवेश करने और उसके सिलसिलेमें मुकदमा चलाया जाये तो यह सिद्ध करनेका दायित्व कि उसने ऐसा कोई अपराध नहीं किया है, उस व्यक्तिपर रहेगा, जिसपर आरोप लगाया गया हो। (खण्ड २३)

(१) इस कानूनमें कोई विपरीत विधान हो तब भी मन्त्री अपने विवेकानुसार संघ या किसी प्रान्त-विशेषमें किसी भी निषिद्ध प्रवासीको अनुमतिपत्रमें निवासकी अवधि अथवा किसी अन्य बातसे सम्बन्धित शर्तें निर्धारित करके प्रवेश करने और रहनेका अस्थायी अनुमतिपत्र दे सकता है।

(२) यदि कोई व्यक्ति संघ या किसी प्रान्तमें वैध ढंगसे रह रहा हो और वह फिर लौट आनेके इरादेसे वहाँसे बाहर जाना चाहता हो किन्तु उसे किसी कारणसे ऐसी कोई आशंका हो कि वापस आने-पर वह यह सिद्ध नहीं कर पायेगा कि वह निषिद्ध प्रवासी नहीं है, तो मन्त्री अपने विवेकानुसार उसे भी अनुमतिपत्र दे सकता है।

इस उपखण्डमें उल्लिखित अनुमतिपत्र, जिस व्यक्तिका नाम उस अनुमतिपत्रमें अंकित रहेगा उसे अनुमतिपत्रमें ही निर्धारित अवधिके भीतर संघ या प्रान्त-विशेषमें (प्रसंगानुकूल) लौट आनेका स्पष्ट अधिकार प्रदान करेगा। किन्तु, अनुमति जारी करनेके पूर्व मन्त्री कथित व्यक्तिके नाम-गामके सम्बन्धमें ऐसे प्रमाण और शिनाख्तके ऐसे साधन पेश करनेकी माँग करेगा जो विनियम द्वारा निर्धारित कर दिये गये हों। (खण्ड २५)

(१) सन् १९०८ के कानून ३६ में यदि कोई विपरीत विधान हो तब भी किसी ऐसे व्यक्तिको, जिसे इस अधिनियमके खण्ड चारके अनुच्छेद (क) में वर्णित इमला-परीक्षा पास करनेके बाद संघमें प्रवेश करनेकी अनुमति दी गई हो, उक्त ट्रान्सवाल कानूनकी धाराओंके अन्तर्गत पंजीयन करानेके लिए बाध्य नहीं समझा जायेगा।

(२) यदि किसी ऐसे व्यक्तिको, जो ऑरेंज फ्री स्टेट विधि-पुस्तिकाके अध्याय ३३ में वर्णित लोगोंकी श्रेणीमें आता हो, उक्त इमला-इम्तहान पास करनेके कारण संघमें प्रवेश करनेकी अनुमति दी गई हो या इस अधिनियमके खण्ड सातके इमला-अनुसार इम्तहान पास करनेके कारण किसी अन्य प्रान्तसे ऑरेंज फ्री स्टेटमें प्रवेश करनेकी अनुमति दी गई हो तो वह हर दृष्टिसे अध्याय ३३ के अनुच्छेद सात और आठकी व्यवस्थाओंसे बँधा रहेगा। (खण्ड २८)

प्रान्तोंके प्रवासी कानून रद किये जाते हैं; और साथ ही उस अंशको छोड़कर, जो ट्रान्सवालमें वैध रूपसे बसे नाबालिगोंके पंजीयनसे सम्बन्धित है, १९०७ का ट्रान्सवास एशियाई कानून संशोधन अधिनियम २ भी सम्पूर्णतः रद किया जाता है।

ऑरेंज फ्री स्टेटके कानून

नीचे ऑरेंज फ्री स्टेट संविधानके अध्याय ३३ के खण्ड ७ और ८ दिये जा रहे हैं:

७. पिछले अनुच्छेदोंमें उल्लिखित (अर्थात्, अरब, चीनी, कुली या रंगदार एशियाई) किसी भी व्यक्ति या उसके वैध उत्तराधिकारीको इस राज्यमें किसी भी परिस्थितिमें अपने नामपर दर्ज कोई अचल सम्पत्ति रखनेका अधिकार नहीं है।

८. पिछले अनुच्छेदोंमें उल्लिखित किसी भी रंगदार व्यक्तिको किसी भी परिस्थितिमें राज्याध्यक्ष इस राज्यमें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपमें कोई व्यापारिक कारोबार चलाने या खेती-बाड़ी करनेके उद्देश्यसे बसनेकी अनुमति नहीं देगा। और इस राज्यमें बसनेकी अनुमति प्राप्त करनेके पूर्व प्रत्येक प्रार्थीको उस लैंड-ड्रास्टके सामने, जिसे वह अपना प्रार्थनापत्र देगा, शपथपूर्वक एक घोषणापत्रपर हस्ताक्षर करना होगा। उसमें वह घोषणा करेगा कि वह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष किसी भी तरह इस राज्यमें कोई व्यापारिक धन्धा या खेती-बाड़ी नहीं करेगा। और यदि कोई भी रंगदार व्यक्ति उस व्यवसाय या व्यापारके अलावा कोई और धन्धा करेगा जिसके लिए उसने इस देशमें बसनेकी अनुमति ली थी तो वह निम्नलिखित अनुच्छेदमें

निर्धारित जुर्माने अथवा कैदका भागी होगा। (प्रथम अपराधके लिए अधिक-से अधिक २५ पौंड या जुर्माना; इसे न देनेपर अधिकसे अधिक तीन मासकी या सादी कैदकी सजा, और उसके बादके अपराधोंपर जुर्मानेकी रकम या कारावासकी अवधि हर बार दुगनी होती चली जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९१२

परिशिष्ट १४

गांधीजीके नाम गृह-सचिवका तार

जनवरी ३१, १९१२

आपके कलके तारके सिलसिलेमें: जहाँतक खण्ड पाँचकी बात है; कोई भी कानूनी अधिकार नहीं छिनते, क्योंकि किसी भी हालतमें अधिकारीके हाथमें विवेकाधिकार तो रखना ही होगा। उसके निर्णयको निकाय बदल सकता है; किन्तु सबसे अंतिम निर्णयका अधिकार मन्त्रीको होगा। खण्ड ७ के अन्तर्गत वर्तमान अधिकारोंमें कोई फर्क नहीं पड़ता; क्योंकि अन्तर्प्रान्तीय प्रवास अब भी प्रशासनिक विवेकाधिकारका विषय रहेगा। परन्तु निःसन्देह यह बात अच्छी तरह समझ ली गई है कि जहाँतक सम्भव होगा इस प्रकारके प्रवासको बहुत सीमित रखा जायेगा। आपको मालूम ही है कि यह वही नीति है जिसे वर्तमान प्रवासी अधिनियमोंके अन्तर्गत अमलमें लाया गया था। रही नेटालमें अधिवास प्रमाणपत्रोंकी बात, उन्हें जारी करना वैकल्पिक था और उनके दुरुपयोगकी शिकायतें मन्त्रीके पास बराबर आती रही हैं। बिना किसी शिनाख्त और पंजीयनकी प्रणालीके अधिवास-सम्बन्धी प्रमाणपत्र देते रहना असम्भव है, क्योंकि अक्सर ये प्रमाणपत्र ऐसे लोगोंके पास पहुँचवा दिये जाते हैं जो उनके अधिकारी नहीं हैं। अनुमतिपत्रोंकी जो प्रणाली केपमें लागू है वह संघके अन्य प्रान्तोंमें तो है भी नहीं। मन्त्री महोदयको विश्वास है कि केपमें भी इस प्रणालीको सही ढंगसे अमलमें लाया जाये तो इससे उन भारतीयोंको अवश्य संतोष होगा जो लम्बे या थोड़े अर्सेके लिए अपने देशकी या अन्य देशोंकी यात्रा करना चाहते हैं। खण्ड २८के बारेमें कहना यह है कि ज्ञापन देना प्रवासकी शर्त नहीं है। वह तो केवल इसलिए रखी गई है जिससे फ्री स्टेटमें प्रविष्ट होनेवाला व्यक्ति खेती-बाड़ी, व्यापार-व्यवसायमें हाथ न डाल सके। ऐसी परिस्थितिमें मन्त्री महोदय नहीं समझते कि इसके विरुद्ध क्या आपत्ति हो सकती है। यदि यह बात उचित मानी जाती है कि एशियाई लोग उस प्रान्तमें कृषि अथवा व्यापार न करें, तो ऐसी स्थितिमें उनसे इस आशयका ज्ञापन लेना भी उचित ही है।

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६१९) की फोटो-नकलसे

परिशिष्ट १५

गांधीजीके नाम गृह-सचिवका तार

फरवरी ७, १९१२

६/इ. आपके पहली फरवरीके तारका संदर्भ, जान पड़ता है आपको कुछ गलतफहमी हुई है। विधेयकमें कहीं भी न्यायालयोंको क्षेत्राधिकारसे वंचित नहीं रखा गया है, और यह सोचना गलत है कि धारा पांच या अन्य किसी धाराके अन्तर्गत अन्तमें न्यायालयमें अपील नहीं की जा सकेगी। अधिवास प्रमाणपत्रोंके बारेमें, समूचे संघमें ऐसी एक व्यवस्था करना बिलकुल असम्भव है। नेटाल तकमें इन प्रमाणपत्रोंका घोर दुरुपयोग हुआ है, और एक हजारसे अधिक प्रमाणपत्र अनधिकारी लोगोंके पास पाये और जब्त किये जा चुके हैं। प्रवासियों द्वारा दिये जानेवाले हलफनामेके सम्बन्धमें परिच्छेद ३३ के खण्ड आठके अन्तर्गत उठनेवाले प्रश्नके सिलसिलेमें ऑरेंज फ्री स्टेट कुछ कठिनाइयाँ बतला रहा है और विभाग इसके बारेमें विधि-विभागके अधिकारियोंकी राय ले रहा है। विधेयककी धाराके वर्तमान स्वरूपके अनुसार भी क्या हलफनामा अपेक्षित है, यह बात संदिग्ध मालूम होती है। आशा है कि इस व्याख्याके साथ विधेयककी व्यवस्थाएँ स्वीकार्य होंगी, क्योंकि भेदमूलक व्यवस्थाओंसे रहित एक सामान्य प्रवासी कानून पास करनेकी किसी दूसरी कोशिशकी बिलकुल भी सम्भावना नहीं। मन्त्रीने दक्षिण आफ्रिकाके सभी भागोंके लोगोंको अत्यधिक उत्तेजित करनेवाले इस प्रश्नके बारेमें अन्तिम रूपसे समझौता करनेकी भरसक कोशिश की है, और उनको आशा है कि उससे सीधे सम्बन्धित लोग उनकी कोशिशोंको बल पहुँचायेंगे, और वे आशा व्यक्त करते हैं कि आप अपने देशवासियोंपर अपने निर्विवाद प्रभावका उपयोग इसी लक्ष्यके लिए करेंगे। विधेयकमें भेदमूलक व्यवस्थाएँ नहीं हैं और आप सदा ही प्रतिष्ठा और आत्मसम्मानकी जिस भावनापर सबसे अधिक जोर देते रहे हैं, उसे भी यह सन्तुष्ट करता है।"

[अंग्रेजीसे]

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रति (५६१९) की फोटो-नकलसे।

परिशिष्ट १६

गांधीजीके नाम लेनका पत्र

केप टाउन
मई १४, १९१२

प्रिय श्री गांधी,

मन्त्री महोदयने मुझसे कहा है कि मैं आपके २४ फरवरीके पत्रके सिलसिलेमें आपको लिखूँ। उस पत्रमें आपने प्रस्तावित प्रवासी विधेयकके सम्बन्धमें अपने वकील द्वारा दी हुई रायका जिक्र किया था। जनरल स्मट्सने मुझसे कहा है कि मैं संसदमें आजकल पेश प्रवासी विधेयकके प्रारूपके खण्ड २८ के उप-खण्ड २ के स्थानपर रखे जानेवाले उप-खण्डके नये प्रस्तावित प्रारूपकी एक प्रति आपको

सूचनार्थ भेज दूँ। आपको स्मरण होगा कि उस समय यह स्पष्ट नहीं था कि क्या धारा जिस रूपमें पेश की गई थी उसकी व्यवस्थाओंके अन्तर्गत भी शिक्षित एशियाई प्रवासियोंको वैसा हलफनामा देना अनिवार्य होगा, जैसा कि ऑरेंज फ्री स्टेट कानूनके परिच्छेद ३३ के खण्ड ८ के अन्तर्गत अपेक्षित है; और विभागने किसी निश्चित निर्णयपर पहुँचनेसे पहले उसपर विचार करनेकी बात कही थी।

अब विचार कर लिया गया है और इस पत्रके साथ जो मसविदा भेजा जा रहा है वह विधेयकमें इस समय मौजूदा धाराके स्थानपर रखनेकी दृष्टिसे ही तैयार किया गया है, जो इस पत्रके साथ भेजा जा रहा है। कानूनी सलाहकारोंका मत है कि यदि हलफनामेसे सम्बन्धित व्यवस्थाएँ विधेयकमें सम्मिलित कर ली जायें तो परिच्छेदकी अनुसूची २ में उल्लिखित हलफनामा पूरा करनेकी आवश्यकता नहीं रह जाती।

आपने अधिवासका जो प्रश्न उठाया है उसके सम्बन्धमें मुझे यह कहना है कि मन्त्री महोदय एक और धारा जोड़ना चाहते हैं, जो इसके बारेमें सभी सन्देह दूर कर देगी और इसलिए जिसे आपकी सहमति प्राप्त हो जायेगी।

मन्त्री महोदय बहुत शीघ्र ही यह विधेयक "असेम्बली"में पेश करनेवाले हैं, इसलिए यदि आप अपने पास भेजे गये इस संशोधनके बारेमें अपने विचार जल्द ही भेज दें तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।

आपका,

अर्नेस्ट एफ० सी० लेन

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६५०-१) की फोटो नकलसे।

परिशिष्ट १७

संघ-संसदमें प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक (१९१२)के सम्बन्धमें स्मट्सका भाषण

केप टाउन,

मई ३०, १९१२

गृह-मन्त्रीने पिछले महीनेकी ३० तारीखको विधान सभामें प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकको द्वितीय वाचनके लिए प्रस्तुत किया था। उन्होंने कहा कि तपेदिक आयोगको कह दिया गया था कि विधेयककी दृष्टिसे महत्व रखनेवाले प्रश्नोंके बारेमें वह अपना प्रतिवेदन पहले ही दे दे। उनकी रायसे प्रतिवेदन बड़े कामका है और सभा शायद कानून बननेसे पहले ही उसकी कुछ सिफारिशें आंशिक रूपसे स्वीकार कर लेगी। हालाँकि विशुद्ध दक्षिण आफ्रिकी दृष्टिकोणसे विधेयक अत्यधिक अविलम्बनीय महत्त्व नहीं रखता, फिर भी व्यापकतर दृष्टिकोणसे तो वह महत्त्वपूर्ण और अविलम्बनीय है ही। इस विधेयकमें जिन प्रश्नोंको हल किया गया है, वे साम्राज्यके लिए बड़ा महत्व रखते हैं। यह विधेयक एशियाइयोंके और दक्षिण आफ्रिकामें एशियाइयों, विशेषकर भारतीयोंके प्रवासके सम्बन्धमें ब्रिटिश सरकारके साथ १९१० में ही तय की गई कुछ बातोंको लागू करने और उनको कानूनमें शामिल करनेके लिए तैयार किया गया है। मन्त्रीने कहा कि यह विधेयक दक्षिण आफ्रिकामें केवल गोरोंके प्रवासकी ही नहीं बल्कि उससे कुछ भिन्न तथा अधिक पेचीदा एशियाइयोंके प्रवासकी समस्यासे भी सम्बन्ध रखता है। दक्षिण आफ्रिकाकी एशियाई जनता — विशेषकर भारतीय जनताने अपना एक दृष्टिकोण बना लिया है और इसमें उसे इंडिया ऑफिस तथा ब्रिटिश सरकार दोनों ही का समर्थन प्राप्त है। अपने इस दृष्टिकोणके अनुसार वह दावा करती है कि उसमें और गोरी जनतामें कोई भेद नहीं किया जाना चाहिए। भारतीय जनता प्रशासनिक कार्यों या

व्यवहारके क्षेत्रमें भेदभाव होनेपर तो कोई आपत्ति नहीं करती, लेकिन भेदभाव जब भी वैधानिक व्यवस्थाओंके क्षेत्रमें किया जाता है तो वह बहुत मुस्तैदीके साथ कसकर विरोध करती है। ब्रिटिश सरकार उसके इस रुखकी ताईद करती है। और, सदस्यगण जानते ही हैं कि वर्तमान सरकारने काफी परेशानी उठाकर और उससे बातचीतके बाद इस स्थितिको स्वीकार कर लिया है और यह मान लिया है कि इस देशके कानूनमें ऐसा कोई भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए; और इस भेदभावको, जो कानून पास कर दिया जाये, उसे लागू करनेके क्षेत्र तक ही सीमित रखा जायेगा। इस देशमें प्रवासी कानूनको अमलमें लानेमें काफी कठिनाईका सामना करना पड़ता है, क्योंकि हम एक ओर तो बड़े जोरसे चाहते हैं कि गोरे यहाँ अधिकसे-अधिक संख्यामें आयें पर दूसरी ओर उतने ही जोरसे चाहते हैं कि एशियाई न आयें। (वाह! वाह!) इसलिए हमें एक ऐसा कानून पास करना है जो सभी वर्गोंके लिए समान तो हो, लेकिन जिसका उद्देश्य एक प्रकारके लोगोंको प्रवेश देना और दूसरे प्रकारके लोगोंको बाहर रखना हो। यह काम चीन देशकी पहेली बूझने जैसा ही पेचीदा था। हमने बहुत काफी सोच-विचारके बाद आस्ट्रेलियामें प्रचलित शैक्षणिक परीक्षा लागू करनेका कलोनियल ऑफिसका सुझाव मान लिया है। भारत-सरकारने भी उसका समर्थन किया। ऊपरसे देखनेमें यह परीक्षा बड़ी सख्त है, लेकिन खूबी यह कि उसे एक जगह सख्तीसे, पर दूसरी जगह ढिलाईसे भी लागू किया जा सकता है, जिससे कि इसका उपयोग गोरोंको इस देशमें प्रवेश देने और एशियाइयोंके प्रवेशको रोकनेके लिए किया जा सकता है। विधेयककी सबसे मुख्य व्यवस्था इसमें शामिल की गई आस्ट्रेलियाई परीक्षाकी व्यवस्था है और उसीपर सबसे अधिक बहसकी सम्भावना भी है। वह सरकारके हाथमें बहुत अधिक शक्ति दे देती है, लेकिन मैं सरकारकी ओरसे यह कहनेको तैयार हूँ कि इस कानूनको जिस तरह अमलमें लाया जायेगा उसमें हमारा यह मंशा जरा भी नहीं है कि इस देशमें गोरोंके प्रवासको आजके मुकाबिले अधिक मुश्किल बनाया जाये। मंशा तो इससे उलटा है। पहलेके कालमें उस समयके कानूनके अन्तर्गत केवल शैक्षणिक योग्यतापर जरूरतसे ज्यादा जोर देनेकी प्रवृत्ति रही है। (वाह! वाह!)। इस देशमें प्रवेशकी इच्छा रखनेवाले व्यक्तिसे, जो साथ ही शरीरसे स्वस्थ और हर प्रकारसे भला नागरिक बनने योग्य हो, किसी एक यूरोपीय भाषामें अपने ज्ञानकी परीक्षा देनेके लिए कहा जाता था। उनमें कुछ भाषाएँ ऐसी भी थीं, जिनसे कमसे-कम इस देशमें उनको कोई काम नहीं पड़ता था। यदि किसी व्यक्तिको [यहूदियोंकी] यिडिश भाषाकी बड़ी अच्छी जानकारी हो, तो मैं तो उसका कोई उपयोग नहीं समझता। और यही बात रूसी तथा अन्य कई भाषाओंपर भी लागू होती है। हमें इस देशमें एक खास स्वभाव तथा चरित्रके तथा शरीरसे स्वस्थ व्यक्तियोंकी आवश्यकता है। प्रवासियोंमें हमें इस देशके लिए अनुपयोगी भाषाओंकी शैक्षणिक योग्यता या साहित्यिक ज्ञानको अत्यधिक महत्त्व नहीं देना चाहिए। और अन्य सभी बातोंमें प्रवासी विभाग इसी प्रकार चलेगा, जैसा कि वर्तमान कानूनोंके अन्तर्गत चल रहा है। मैं यह कहनेके लिए बिलकुल तैयार हूँ कि भविष्यमें गोरोंके लिए ऐसी कोई भी परीक्षा नहीं रखी जायेगी जो पहलेकी परीक्षाओंसे अधिक सख्त हो। और भारतीय तथा एशियाई लोगोंके लिए हम ब्रिटिश सरकारके सहयोगसे ऐसा प्रबन्ध कर रहे हैं कि शिक्षित और शिक्षा-साध्य काम-धन्धेवाले एशियाइयोंको प्रति वर्ष एक सीमित संख्यामें प्रवेशकी अनुमति दी जाये — हाँ, एक सीमित संख्यामें ही; लेकिन अन्य लोगोंके लिए ऐसे ढंगसे व्यवस्था की जायेगी कि इस देशमें एशियाइयोंकी बाढ़-सी न आ जाये।

मैं कोई ऐसी बात नहीं कहना चाहता, जिससे इस सभाकी राय किसी तरह प्रभावित हो। आपने विधेयक देख लिया है और आप इसको संविधि पुस्तकमें सम्मिलित करानेके लिए अत्यन्त उत्कंठित हैं, हालाँकि आपने अधिवासियोंके सम्बन्धमें एक ऐसा मुद्दा उठाया है, जिसे मैं एक संशोधनके रूपमें प्रस्तुत करना चाहता हूँ। भारत-सरकारने भी यह विधेयक देख लिया है और सहमति प्रकट की है और उसकी इच्छा है कि इसे यथाशीघ्र संविधि पुस्तकमें सम्मिलित कर लिया जाये। श्री स्मट्सने

आगे कहा कि निषिद्ध प्रवासियोंकी परिभाषाके बारेमें इस विधेयकमें वैसी ही व्यवस्थाएँ हैं जैसी आमतौर-पर अन्य विधेयकोंमें होती हैं। इस सिलसिलेमें मुझे इतना ही कहना है कि इस खण्डमें अब हमें तपेदिक आयोगके प्रतिवेदनके अनुसार एक और पैरा बढ़ाना पड़ेगा। उसमें यह व्यवस्था की जायेगी कि कुछ परिस्थितियोंमें तपेदिकके रोगियोंको भी इस देशमें प्रवेशकी अनुमति दी जा सकेगी। तपेदिकके रोगियोंके इस देशमें प्रवेशकी अनुमति देनेके प्रश्नपर मतभेद जरूर है, पर यह भी तो है कि इन रोगियोंके तपेदिककी अवस्थाका खयाल किये बिना उन सभीके लिए द्वार बन्द कर देनेसे वे काफी मुश्किलमें पड़ जायेंगे और इसीलिए आयोग इस नतीजेपर पहुँचा है कि यदि वे आयोगके प्रतिवेदनमें उल्लिखित कुछ शर्तें पूरी करते हों तो कुछ परिस्थितियोंमें उनको प्रवेशकी अनुमति दी जा सकती है। मैं चाहता हूँ, प्रतिवेदनके उतने भागको स्वीकार कर लिया जाये। (बहुत खूब! वाह!)। हमें उस देशमें तपेदिकके प्रकोपके विरुद्ध संघर्ष करना चाहिए, क्योंकि वह देशका एक सबसे खतरनाक रोग बनता है। हमें अपने समुद्र-तटोंपर काम शुरू करना चाहिए, जिससे कि इस रोगका प्रभाव और अधिक न फैल सके। (वाह! वाह!) मैं मानता हूँ कि हमें अपने द्वार बिलकुल ही बन्द नहीं कर देने चाहिए, लेकिन प्रतिवेदनकी सिफारिशें स्वीकार कर ली जायें, तो देशके बाहरसे इस रोगके और अधिक संक्रमणकी रोकथाम की जा सकती है। विधेयकमें अपवादोंकी भी व्यवस्था की गई है, जिससे कुछ वर्गोंके लोगोंको इस देशमें आनेकी छूट रहेगी और और उनपर इस विधेयकी व्यवस्थाएँ बिलकुल लागू नहीं होंगी। गत वर्षके विधेयककी तत्सम्बन्धी व्यवस्थाएँ कुछ अधिक व्यापक बना दी गई हैं, जिससे कि अब सभी दक्षिण आफ्रिकी लोग अपने स्त्री-बच्चों सहित विदेशोंसे वापस आ सकेंगे। एक अनुच्छेदके बारेमें ट्रान्सवालके खान-मण्डल (चेम्बर ऑफ माइंस) के साथ कुछ मतभेद हो गया था। धारा पाँचमें व्यवस्था की गई थी कि निम्नलिखित लोग, अर्थात पड़ोसी सरकारके किसी कानून या उसके साथ हुए किसी समझौता (कन्वेंशन) के अनुसार संघमें प्रवेश करनेवाले लोग, निषिद्ध प्रवासी नहीं होंगे। इस व्यवस्थाके अनुसार आफ्रिकाके पूर्वीय तट (ईस्ट कोस्ट) के सभी वतनी मजदूरोंको विमुक्ति मिल जाती है। जिस इकरारनामेका उल्लेख किया गया है, वह मोजाम्बिक-समझौता है। खान-मण्डलने कई आपत्तियाँ कीं और कहा कि इस खण्डके अनुसार बसूटोलैंडसे आनेवाले वतनी लोग प्राविधिक दृष्टिसे निषिद्ध प्रवासी बन जा सकते हैं। उनका कहना है कि न्यासालैंडसे आनेवाले वतनी भी इसके अनुसार निषिद्ध प्रवासी माने जा सकते हैं। मेरा खयाल है कि इन आपत्तियोंमें अधिक बल नहीं है। बसूटोलैंडसे आनेवाले वतनियोंके सम्बन्धमें गत वर्षके भर्ती-कानूनके उपबन्धोंमें व्यवस्था की गई थी। मण्डलने न्यासालैंडके वतनियोंका मामला भी उठाया था दरअसल, बसूटोलैंडसे आनेवाले वतनी निषिद्ध प्रवासी नहीं हैं, क्योंकि किसी भी अन्य कानूनके अनुसार यहाँ आनेवाले वतनियोंको छूट दे दी गई है, लेकिन यदि कोई सन्देह हो तो मैं खान-मण्डलके साथ बातचीत करनेको तैयार हूँ। न्यासालैंडके वतनियोंके बारेमें मुझे यह बतलाया गया है कि उनकी भर्ती न्यासालैंडमें नहीं की जाती। वे बहुधा पुर्तगाली प्रदेशोंमें चले जाते है और वहाँ विटवाटर्सरैंड वतनी मजदूर संघके एजेंट उनकी भर्ती करते हैं, और इस प्रकार वे "मोजाम्बिक-समझौते" के अंतर्गत आ जाते हैं। इसलिए मेरा खयाल है कि इन आपत्तियोंके सिलसिलेमें किसी भी संशोधनकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। इस विधेयकके अन्तर्गत एक दूसरा महत्त्वपूर्ण मुद्दा दक्षिण आफ्रिकामें एशियाइयोंकी गतिविधियोंके बारेमें उठाया गया था। संघमें बड़े पैमानेपर एशियाइयोंके प्रवासकी रोकथाम तो भविष्यमें की जा सकेगी, परन्तु अन्तर्प्रान्तीय आवागमनका पेचीदा प्रश्न फिर भी रह जाता है; और जिन मुद्दोंके बारेमें ब्रिटिश सरकारने जोर दिया था उनमें एक यह भी है। ट्रान्सवाल या फ्री स्टेटमें तो एशियाइयोंको प्रवासकी अनुमति लगभग दी ही नहीं जाती, परन्तु केप और नेटाल प्रान्तोंके कानूनोंके अन्तर्गत भारतीय और एशियाई लोग शैक्षणिक परीक्षा पास करके न केवल दूसरे देशोंसे बल्कि दूसरे प्रान्तोंसे भी इनमें प्रवेश पा सकते हैं। केप जानेके इच्छुक नेटालके भारतीय केप कानूनके अन्तर्गत एक

मामूली-सी परीक्षा पास करके प्रवेश पा सकते हैं; और इसी तरह ट्रान्सवाल या केपके जो एशियाई नेटालमें प्रवेश करना चाहते हों, वे नेटाल कानूनके अन्तर्गत परीक्षा पास करके प्रवेश पा सकते हैं। इस तरह वे केप या नेटालमें प्रवेश पा सकते हैं, क्योंकि इन प्रान्तोंमें एशियाइयोंके प्रवासके बारेमें कोई कानून नहीं है; पर चूँकि ट्रान्सवाल और फ्री स्टेटमें है इसलिए एशियाई लोग आजकल ट्रान्सवाल और फ्री स्टेटमें नहीं जा सकते। माननीय सदस्य इस विषमताको समझ सकते हैं और ब्रिटिश सरकारने हमसे कहा है कि इस विधेयकको इस तरह लागू न किया जाये कि एशियाइयोंकी हालत बदतर हो जाये। विधेयकके अंतर्गत तो एशियाइयोंकी अन्तर्प्रान्तीय गतिविधियोंपर प्रतिबन्ध लगाये गये हैं, किन्तु ब्रिटिश सरकारने कहा है कि वास्तविक प्रशासन इस ढंगसे किया जाये कि कानूनमें केप और नेटालके बारेमें जितनेकी व्यवस्था की गई है उससे अधिक प्रतिबन्ध न लगाये जा सकें। ट्रान्सवालकी स्थितिके सम्बन्धमें मन्त्रीने कहा कि वहाँ "हमें कोई बाधा नहीं है और हम इस प्रान्तमें संघके अन्य हिस्सोंसे एशियाइयोंका प्रवेश रोक सकते हैं।" हम संघके भीतरी प्रान्तोंमें अपना कानून लागू करना चाहते हैं, पर हम इसके लिए तैयार हैं कि उसे अमलमें लानेमें वर्तमान कानूनके अन्तर्गत अभीतक जितनी सख्ती बरती जाती रही है उससे अधिक न बरती जाये। अब प्रश्न उठता है कि इस विधेयकके कानून बन जानेपर फ्री स्टेट-जैसे प्रान्तमें वास्तविक स्थिति क्या होगी। वह स्थिति यही होगी कि इस अधिनियमके अन्तर्गत एशियाइयोंको एक सीमित संख्यामें प्रतिवर्ष संघमें प्रवेश करने दिया जायगा, बशर्ते कि ऐसे एशियाई शिक्षित या शिक्षा-साध्य पेशेवाले लोग हों और उतनी ही संख्यामें आयें जितनेकी सरकार मंजूरी दे। अब अगर इस प्रकार प्रवेश करनेवाले एशियाई चाहेंगे, तो वे संघके किसी भी प्रान्तमें और फ्री स्टेटमें भी बस सकेंगे; किन्तु फ्री स्टेटके मौजूदा कानूनकी व्यवस्थाओंके अनुसार वे कुछ विशेष प्रकारके व्यापार और धन्धे नहीं कर सकते और न भू-सम्पत्तिके स्वामी ही हो सकते। यदि वे वहाँ जाना भी चाहेंगे तो ये सारे प्रतिबन्ध और वहाँ लगाई जानेवाली सभी निर्योग्यताएँ उनपर लागू रहेंगी। यदि धारा २८ से पूरी तरह सन्तोष न होता हो तो मैं इसे अधिक स्पष्ट बनानेके लिए इसमें यह संशोधन शामिल करनेको तैयार हूँ कि एशियाइयोंको संघमें कहीं भी, फ्री स्टेटमें भी, जानेकी छूट तो रहेगी पर फ्री स्टेटमें वे ऐसे किसी भी अधिकारका उपभोग नहीं कर सकेंगे जिससे वे फ्री स्टेटके मौजूदा कानूनमें आजकल वंचित हैं। फ्री स्टेटमें कुल मिलाकर इसका नतीजा यह होगा कि गोरोंकी दृष्टिसे स्थिति अधिक निरापद हो जायेगी, क्योंकि फ्री स्टेटका मौजूदा कानून सचमुच ही बड़ा ढीला-ढाला है। फ्री स्टेटके मौजूदा कानूनके अनुसार कोई भी एशियाई प्रान्तमें प्रवेश तो कर सकता है पर उसे अपने प्रवेशके दो महीनेके अन्दर वहाँ बने रहनेकी अनुमतिके लिए प्रार्थनापत्र दे देना चाहिए। अनुमति मिल जानेपर ही वह रह सकता है, लेकिन एक बार द्वार तो खुल जाता है। एशियाई लोग पहले तो फ्री स्टेटमें प्रवेश कर लेते हैं और उसके दो महीने बाद बसनेकी अनुमति ले लेते हैं। यह बड़ी ही दुर्भाग्यपूर्ण व्यवस्था है, क्योंकि यदि लोगोंको प्रान्तमें आनेसे रोकना हो तो उनको सीमापर ही रोक देना सबसे अच्छा होगा। एक बार प्रवेश पा लेनेके बाद उनको निकालना काफी मुश्किल हो जाता है। लेकिन इसके बाद अब फ्री स्टेटमें स्थिति अधिक निरापद हो जायेगी। मन्त्रीने अपना भाषण जारी रखते हुए कहा कि प्रवासी विभागके प्रशासनके बारेमें जब-तब काफी असन्तोष पैदा हो जाता है। विभागके अधिकारी बड़े योग्य और मेहनती हैं, पर हैं तो आखिर आदमी ही। उनसे कभी-कभी गलतियाँ भी हो जाती हैं, जिनको लेकर जनतामें कुछ चीख-पुकार मचने लगती है। वे जो निर्णय करते हैं, उनकी कभी-कभी आलोचना की जाती है, परन्तु इससे बचा जा सकता है, और इसलिए मैं कुछ स्थानोंपर सलाहकार-निकाय नियुक्त करना चाहता हूँ। संघमें रेल या जहाज द्वारा प्रवेश करनेके हर केन्द्रके लिए एक-एक निकाय नियुक्त करना तो मुमकिन नहीं, लेकिन केप टाउन और डर्बनमें ऐसे निकाय बना देना चाहिए जो प्रवासी अधिकारियों द्वारा प्रवेश करनेसे रोके जानेवाले लोगोंके मामलोंपर विचार

करें। इन बोर्डोंका गठन इस प्रकार किया जायेगा कि वे अपीलोंपर निष्पक्ष और न्यायपूर्ण ढंगसे विचार कर सकें। विधेयकमें कुछ संशोधन आवश्यक होंगे, जैसे कि यह संशोधन कि दक्षिण आफ्रिकाका अधिवासी बन जानेवाले व्यक्तिको न्यायालयमें अपील करनेकी अनुमति होनी चाहिए। मन्त्रीने विधेयकको द्वितीय वाचनके लिए प्रस्तुत किया। (हर्ष-ध्वनि।)

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-६-१९१२

परिशिष्ट १८

अस्थायी समझौतेके सम्बन्धमें लॉर्ड सभामें लॉर्ड ऍम्टहिलका भाषण

लन्दन
जुलाई १७, १९१२

लॉर्ड महोदयो, मैं लम्बा भाषण देकर आपका समय नष्ट नहीं करना चाहता; परन्तु मुझे अपने नामसे पेश हुए प्रश्नकी सफाईमें कुछ शब्द तो कहने ही पड़ेंगे। मुझे विवश होकर यह प्रश्न पूछना पड़ा है; क्योंकि दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंके साथ होनेवाले बरतावके इतने अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्नके बारेमें मन्त्री महोदयसे जानकारी हासिल करनेका अन्य कहीं कोई दूसरा मौका नहीं मिल सकता था। आपको स्मरण होगा कि मन्त्री महोदय कामन्स सभाके सदस्योंको साम्राज्यीय उपनिवेशोंके दौरे-पर ले गये थे। दौरा इतना दिलचस्प था और इतना लम्बा था कि उसे और अधिक नहीं बढ़ाया जा सकता था। हममें से जो लोग पिछले कुछ वर्षोंसे इस प्रश्नमें दिलचस्पी रखते आ रहे हैं, वे आजकल अत्यन्त चिन्तित हो उठे हैं। हमारी चिन्ताके दो कारण हैं — पहला तो यह कि भूतपूर्व उपनिवेश मन्त्रीने इतने अर्से पहले जिस समझौतेको कार्यान्वित करनेका वचन इतने निश्चित और आशापूर्ण शब्दोंमें दिया था उसे इस बार फिर स्थगित कर दिया गया है; और दूसरा यह कि उस समझौतेको कार्यान्वित करनेका भार अब दूसरे लोगोंपर है। जनरल स्मट्स, जो पहले गृह-मन्त्री थे, इस समझौतेको अमलमें लानेके लिए वचनबद्ध थे, क्योंकि इसे, जैसा कि हमारा विश्वास है, दक्षिण आफ्रिकाका भारतीय समाज ही नहीं, सम्राट्की सरकार और भारत-सरकारने भी सन्तोषप्रद मानकर इससे सहमति प्रकट की थी। परन्तु अब दुर्भाग्यवश विधेयकको स्थगित कर दिया गया है, और गृह-मन्त्रीके पदपर भी अब एक दूसरे सज्जन, मेरा ख्याल है कि श्री फिशर, विराजमान हैं। और उनके सम्बन्धमें हम जानते हैं कि दुर्भाग्यवश ब्रिटिश भारतीय समाजके प्रति उनका रुख — मैं इतना ही कहूँगा — जनरल स्मट्ससे कम ही मैत्रीपूर्ण है। हम बहुत ही स्पष्ट रूपसे यह जानना चाहेंगे कि क्या नये गृह-मन्त्रीके आनेसे समझौतेकी स्थितिमें कोई अन्तर पड़ेगा, और साथ ही निःसन्देह यह भी कि इस समझौतेको स्थगित करनेका ठीक-ठीक कारण क्या है।

माननीय सदस्योंको याद होगा एक सालसे भी अधिक समय पहले उन लॉर्ड महोदयने, जो इस सभाके नेता और उन दिनों मन्त्री पदपर थे, हमें पूरे विश्वासके साथ आशापूर्ण शब्दोंमें आश्वस्त किया था कि समझौता शीघ्र ही होनेवाला है और उनको सचमुच पूर्ण विश्वास था कि समझौता हो ही जायगा। मैं आपको यह भी याद दिला दूँ कि समझौता क्या था। समझौतेका सार यह था कि १९०७ का ट्रान्सवाल अधिनियम २ रद कर दिया जायेगा, क्योंकि वह दक्षिण आफ्रिकाके हमारे सहयोगी भारतीय नागरिकोंकी भावनाओंको इतनी अधिक ठेस पहुँचाता है। वह अधिनियम सर्वथा अनुपयोगी है और दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंका अपमान करना और उनकी भावनाओंको

ठेस पहुँचाना ही उसका एकमात्र उपयोग है। अतः अल्पवयस्कोंके अधिकारोंको सुरक्षित रखते हुए उस अधिनियमको रद किया जाना था तथा एशियाइयोंके प्रवासको प्रतिबन्धित करनेके सिद्धान्तको इस प्रकार समाविष्ट किया जाना था कि जातीय भेदभावको उपनिवेशमें मान्यता न मिले। और प्रतिबन्धकी बातसे भारतीयोंने स्वयं सहमति व्यक्त की थी और इसे अनिवार्य ही नहीं उचित भी माना था। भारतीयोंकी केवल यही एक मांग रही है कि रंगके आधारपर उनके साथ भेदभाव न किया जाये। उनका कहना है: "यदि आप हमें उपनिवेशमें प्रवेश नहीं ही देना चाहें तो प्रशासकीय तौरपर भेदभाव करके वैसा कीजिए। या फिर आप आर्थिक सुविधाके आधारपर वैसा कीजिए, किन्तु स्पष्ट रूपसे यह कहकर तो मत कीजिए कि हम एक निम्नतर प्रजातिके लोग हैं।" हमें तो आशा थी कि समझौता बहुत पहले ही कार्यान्वित हो जायेगा। उसे दो बार स्थगित किया जा चुका है। इसलिए मैं सबसे पहले तो यही जानना चाहूँगा कि इसे स्थगित करनेके ठीक-ठीक कारण क्या हैं और इसके बाद मैं जानना चाहूँगा कि क्या सम्राट्की सरकार समझती है कि संघ-संसद्में हालमें जो विधेयक पेश हुआ है वह वास्तवमें समझौतेकी उन शर्तोंको पूरा करता है जिनका मैंने उल्लेख किया है। मुझे मालूम है कि दक्षिण आफ्रिकाके कई बड़े अधिकारी वकील कहते हैं कि यह विधेयक उन सीधी-सादी और स्पष्ट शर्तोंको पूरा नहीं करता, बल्कि एक दूसरे रूपमें प्रजातिगत भेदभावको बरकरार रखता है। इसके बारेमें सम्राट्की सरकारकी क्या राय है? और यदि उसकी रायमें यह उन शर्तोंको पूरा नहीं करता तो इसे ठीक करनेके लिए वह क्या कदम उठाने जा रही है?

और यह भी कहा गया है कि यह विधेयक तटवर्ती प्रान्तोंके भारतीयोंको उन अधिकारोंसे भी वंचित करता है, जिनपर अभीतक किसीने कोई आपत्ति नहीं उठाई थी। हो सकता है कि यह बात गलत हो, पर इसके बारेमें भी मैं माननीय मन्त्रीसे सूचना चाहता हूँ। वे बतायें कि सचाई क्या है। मेरा खयाल है कि सम्राट्की सरकारने अक्टूबर १९१० के अपने खरीतेमें कहा था कि ट्रान्सवालके भारतीयोंकी समस्याके हलके रूपमें ऐसा कोई भी समझौता स्वीकार नहीं किया जायेगा जो अन्य प्रान्तोंमें भारतीयोंके अधिकारोंको कम करता हो। दक्षिण आफ्रिकी सरकार संघ बननेके काफी पहलेसे लगातार यही कहती आई है कि वह इस देशमें विधिपूर्वक निवासी बन चुके भारतीयोंके अधिकारोंमें कोई कमी नहीं करना चाहती। जब लॉर्ड सेल्बोर्न [दक्षिण आफ्रिकामें] उच्चायुक्त थे, उन दिनों इस विषयसे सम्बन्धित उनके सभी भाषणोंका मुख्य स्वर यही बात थी; उन्होंने कहा था कि वे इस देशमें विधिपूर्वक निवासी बन चुके भारतीयोंके साथ पहलेकी बनिस्बत किसी भी तरह कम अच्छा बरताव नहीं करना चाहते। वे केवल एक इस चीज पर अड़े रहे कि समाजके सहज-सुखद जीवनके लिए जिन पादरी-पुजारियों, डॉक्टरों और वकीलोंकी आवश्यकता है ऐसे कुछ उचित अपवादोंको छोड़कर बाकी किसी भारतीयको प्रवेश नहीं दिया जायेगा; और अब तो अपवादकी श्रेणीमें आनेवाले उन लोगोंके प्रवेशके बारेमें सभी दल सहमत हैं। समाजकी आवश्यकताओंको देखते हुए प्रति वर्ष अधिकसे-अधिक छः लोगोंको प्रवेश देना उचित माना गया। आशा है कि इस नये विधेयककी समुचित जाँच-परखके बाद यह निष्कर्ष नहीं निकाला जायेगा कि यह वास्तवमें इस देशके भारतीयोंके मौजूदा अधिकारोंमें कटौती करता है, क्योंकि यदि ऐसा हुआ तो यह बहुत ही गम्भीर और अक्षम्य विश्वासघात होगा। इसलिए मुझे भरोसा है कि हम यही सुनेंगे कि सम्राट्की सरकारने इस दृष्टिसे विधेयककी बड़ी सावधानीसे जाँच-परख कर ली है और वह इस मुद्देपर संघ-सरकारके साथ मैत्रीपूर्ण ढंगसे लिखा-पढ़ी कर रही है।

अपना प्रश्न पूछनेकी सफाईमें मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। वह यह कि जिस समझौतेके बारेमें हमसे तब कहा गया था कि बस होने ही वाला है उसको इतने दिन तक स्थगित करते जानेके इस कालमें समझौतेकी भावनाका उल्लंघन हुआ है, ऐसा लगता है। भारतीय समाज सत्याग्रह आन्दोलनका अपना विचार त्यागनेके लिए इसीलिए सहमत हो गया था कि हमें यह आशा बँधाई गई थी कि समझौता फौरन ही

हो जायेगा। और इस देशमें भारतीय समाजके मित्रोंने यदि कोई भी कदम नहीं उठाया और इस दौरान काफी धैर्य और संयमसे काम लिया है, सो इसीलिए कि हमसे कहा गया था कि समझौता बस होने ही वाला है। हमने बड़े धैर्यके साथ समझौता कार्यान्वित होनेकी बाट जोही है और संसद्में प्रश्न पूछकर और प्रस्ताव पेश करके सरकारको परेशान नहीं किया है। हम सरकारके साथ काफी भरोसे और विश्वासके साथ पेश आये हैं और हमने लम्बे अर्से तक धैर्यपूर्वक राह देखनेके बाद ही अब सरकारसे पूछा है कि वह इस समस्याके सम्बन्धमें क्या कर रही है। मैं कहता हूँ कि इस विलम्बका अनुचित लाभ उठाकर समझौतेकी भावनाका उल्लंघन किया गया है। समझौतेकी भावना यह थी कि इस देशके विधि-सम्मत भारतीय निवासियोंके साथ यथासम्भव अच्छेसे-अच्छा बरताव किया जाये। मैं अपनी बात स्पष्ट करनेके लिए कुछ उदाहरण पेश करूँ। सबसे पहला तो यह कि ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने इस्लामी रीतिके अनुसार ब्याही गई एक पतिकी एकाधिक पत्नियोंके प्रवेशके विरुद्ध निर्णय करके एक बड़ा गम्भीर मार्ग अपनाया है। एक और काफी बदनाम मुकदमा भी सामने आ चुका है, जिसमें निर्णय किया गया है कि मुसलमानोंकी दूसरी पत्नियोंको ट्रान्सवालमें प्रवेश नहीं दिया जा सकता। यह तो पहलेसे भी दो कदम आगे है। मुझे लगता है कि यह जानबूझकर की जा रही हरकतका एक हिस्सा है, क्योंकि इस बातको आधार बनाकर कि ट्रान्सवालके कानूनमें बहुपत्नीक विवाहोंको मान्यता नहीं दी गई है, मुसलमान पत्नियोंका प्रवेश बिलकुल ही बन्द करानेके निर्णयके लिए कोशिश की जा रही है। उसके बाद यह ऐलान करनेमें कोई अड़चन ही नहीं रह जायेगी कि इन विवाहोंकी सन्तान जारज है। इसके बारेमें अधिक विस्तारसे कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं। सदस्यगण बड़ी आसानीसे इसका अनुमान लगा सकते हैं। आप समझ ही सकते हैं कि यदि मुसलमानोंके धर्मका ऐसा अपमान और अनादर किया गया तो भारतमें, मिस्रमें, बल्कि साम्राज्यके हर उस भागमें, जहाँ सम्राट्की वफादार मुस्लिम प्रजा हजारोंकी तादादमें मौजूद है, इसके क्या परिणाम होंगे। ब्रिटिश ध्वज जहाँ-जहाँ फहरा है, उसके नीचे हर जगह शासनकी भावना निश्चित रूपसे धार्मिक सहिष्णुताकी ही रही है। मुझे तो उस सिद्धान्तको छोड़नेका कतई कोई आधार नहीं दिखाई देता और निश्चय ही ब्रिटिश शासनके अधीन जहाँ-जहाँ भी ब्रिटिश प्रजाजन मौजूद हों, वहाँ इस सिद्धान्तको लागू करना सम्राट्की सरकारका कर्त्तव्य है, फिर इसके लिए चाहे जो खतरा उठाना पड़े। प्रश्न गम्भीर है। और किसी बातको न देखा जाये, तो भी इस हरकतको चलने देनेपर अनेक घर बरबाद हो जानेका प्रश्न तो है ही; सो इस प्रकार कि तब पत्नियोंको प्रवेश नहीं दिया जायेगा या देशसे बाहर निकाल दिया जायेगा, परिवार बिखर जायेंगे, कारोबार चौपट हो जायेंगे, जिनके निवासके अधिकारपर कभी कोई आपत्ति नहीं उठाई गई ऐसे व्यक्तियोंको बाहर निकाल दिया जायेगा; और इस सबके परिणाम क्या होंगे —इसका अनुमान तो कोई भी माननीय सदस्य यदि चाहे तो लगा सकता है। मैं जानना चाहता हूँ कि सम्राट्की सरकारने ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयके इस निर्णयके सम्बन्धमें क्या किया है। क्या उसने जतला दिया है कि इस हरकतको आगे भी कायम रखनेका परिणाम कितना घातक होगा? क्या उसने इसके विरुद्ध कोई आपत्ति की है? और यदि की है तो किस प्रकार की; और उसका उसे क्या उत्तर मिला है?

एक बात और है, और वह है प्रवासी अधिकारियोंकी मनमानी करनेकी उत्तरोत्तर बढ़ती हुई प्रवृत्ति। एक मामलेमें मैंने उपनिवेश कार्यालयसे लिखा-पढ़ी की थी, लेकिन उससे मैं सन्तुष्ट नहीं हो सका। उस मामलेसे यह स्पष्ट हुआ कि यदि कोई भारतीय इस देशमें निवासके अपने अधिकारके बारेमें सर्वोच्च न्यायालयको सन्तुष्ट कर दे, तो भी प्रवासी अधिकारी उसे देशसे बाहर रहनेपर विवश कर सकता है। उस विशिष्ट मामलेमें किये गये निर्णयसे यही सिद्ध हुआ। कहा जाता है कि वर्तमान विधेयक प्रवासी अधिकारियोंकी मनमानी करनेकी शक्तिमें वृद्धि करता है। मैं जानना चाहता हूँ कि इसमें कोई सचाई है या नहीं। जनरल स्मट्सने विधेयक पेश करते समय उस चीजकी, जो उनके अपने विचारसे

प्रवासी अधिकारियों द्वारा जब-तब की जानेवाली अति है, एक प्रकारसे कुछ सफाई दी थी। प्रवासी अधिकारियोंकी इसी कार्रवाईके समान उधर मोजाम्बिकके पुर्तगाली अधिकारियोंका काम भी है जो संघके प्रवासी विभागके कहनेपर देशके विधि-सम्मत निवासियोंके बाल-बच्चोंको प्रवेश नहीं करने देते। इसका परिणाम क्या निकला है? परिणाम बहुत ही गम्भीर निकला है, परन्तु मैं तो लाख सर खपानेके बाद भी नहीं समझ पाया कि उसकी ओर अधिक ध्यान क्यों नहीं दिया गया। परिणाम यह है कि जर्मन लोग भी अब हमारी नकल करने लगे हैं। जर्मन पूर्व आफ्रिकामें अब वे हमारी मिसाल देकर भारतीय-विरोधी कानून बना रहे हैं। और यदि हमें यह स्वीकार करनेपर विवश होना पड़ा कि चूँकि हम भी ऐसा ही करते हैं इसलिए एक अन्य देश द्वारा किये जानेवाले इस बहिष्कारका हम विरोध नहीं कर सकते, तो भारतीय जनताके सामने एक राष्ट्रके रूपमें हमारी क्या स्थिति होगी? कुछ और बातें भी हैं जो अपेक्षाकृत छोटी, पर बहुत ही गम्भीर हैं। उदाहरणके लिए, नेटालके व्यापारिक परवाना कानूनोंका अमल स्पष्ट रूपसे इस उद्देश्यसे करनेकी प्रवृत्ति उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है कि उनसे भारतीयोंके नेटालमें रहनेके वे सारे अधिकार, जिनपर आजतक किसीने कोई आपत्ति नहीं की, छिन जायें और इस प्रकार वे इस देशको छोड़नेपर विवश हो जायें। मैं जिसका जिक्र कर चुका हूँ, इस विलम्बके कालमें स्वर्ण-कानूनको और ट्रान्सवालके कस्बा-अधिनियमको भी इसी ढंगसे लागू किया जा रहा है। उस अधिनियमके अन्तर्गत बनाये जानेवाले विनियमोंकी प्रवृत्ति भारतीयोंको कुछ निश्चित बस्तियोंमें रहनेपर विवश कर देना है, हालाँकि स्वयं ये विनियम ही अवैध प्रतीत होते हैं। . . . चीनीकी गुलामीमें भी यही होता था। उसकी एक परिस्थिति यह थी कि चीनी मजदूरोंको कुछ निश्चित बस्तियोंमें रहना पड़ता था। तब फिर भारतीयोंको कुछ निश्चित बस्तियोंमें रहनेपर विवश करनेकी इस जानी-बूझी कोशिशकी सफाईमें सरकार क्या कहना चाहती है, वह इसका क्या औचित्य ठहराती है?

ट्रान्सवालके विधि-सम्मत भारतीय निवासियोंके उत्पीड़नके लिए इस विधेयकको किस ढंगसे प्रयुक्त किया गया है इसके मैं अनेक उदाहरण पेश कर सकता हूँ। हाँ, उसके लिए "उत्पीड़न" के अलावा और किसी शब्दका इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। मैं जानना यह चाहता हूँ कि क्या सम्राट्की सरकार इन उत्पीड़क कार्योंपर निगाह रखती आई है और क्या उसने सम्राट्की प्रजा, हमारे उन भारतीय सह-प्रजाजनोंकी रक्षाके लिए कुछ किया भी है जो दक्षिण आफ्रिकामें रहते हैं और जिनको वहाँ रहनेका पूरा अधिकार है और जिस अधिकारपर कभी कोई आपत्ति नहीं उठाई गई है। मैं इसपर जोर दे रहा हूँ, क्योंकि यह मामला ऐसे प्रवासियोंका नहीं जो बिना किसी अनुमतिके देशमें आ धमके हों। और मुझे आशा है कि मेरे इस प्रश्नका उत्तर देनेवाले लॉर्ड महोदय इसका वही उत्तर नहीं देंगे जो मुझे पहले अक्सर मिलता रहा है। मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि सामनेकी सरकारी बेंचोंके सदस्यगण उस उत्तरको ही मेरे लिए समुचित मानते हैं, परन्तु मैं जिनकी ओरसे बोल रहा हूँ उनके लिए वह समुचित नहीं। और न ऐसे किसी भी व्यक्तिके लिए समुचित है जो इस प्रश्नको संसद्के राजनीतिक दलोंकी सामान्य उखाड़-पछाड़से अलग रखकर इसपर समझदारी और साम्राज्यके दृष्टिकोणसे विचार करता हो। मुझे अक्सर जो उत्तर मिलता रहा है वह यह है कि एक स्वशासित उपनिवेशके मामलोंमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। यह उत्तर कई लोगोंको सन्तोषजनक लगता है, लेकिन वह है बड़ा सड़ा-गला-सा, एक मूढ़ता-भरा उत्तर ही। पहली चीज यह कि हस्तक्षेपका इसमें प्रश्न ही नहीं। मैं आपको माल्केवाले मामलेकी याद दिला दूँ। आप यदि एक ऐसी महिलाकी खातिर, जो यदि ब्रिटिश नागरिक थी भी तो केवल आधी ब्रिटिश नागरिक थी, न्यायालयके निर्णयको बदलवानेके लिए एक ऐसे देशकी सरकारके मामलोंमें हस्तक्षेप कर सकते हैं, जिसको आप किसी भी तरह बाध्य नहीं कर सकते, तो आपको निश्चय ही ऐसे हजारों व्यक्तियोंके बारेमें, जो पूरी तौरपर ब्रिटिश नागरिक हैं, कुछ करने, कुछ कहने, कुछ माँगने और किसी तरहका समझौता करनेका भी अधिकार है; और

आपको ऐसा समझौता करनेका अधिकार है, विशेष रूपसे उन लोगोंके साथ जो आप ही के राष्ट्र-बन्धु हैं, जो ब्रिटिश झण्डेके नीचे हमारे सम्राट्की सत्ताके अधीन हैं, और सबसे मुख्य बात तो यह है कि जिनके आधारभूत हित वही हैं जो हमारे हैं। यदि आप साम्राज्यके सम्पूर्ण कल्याणसे सम्बन्ध रखनेवाले मामलोंके बारेमें भी हमारे समुद्रपारके डोमीनियनोंमें रहनेवाले हमारे सजातीय बन्धुओंके साथ कोई समझौता नहीं कर सकते, तो मैं कहूँगा कि वास्तवमें साम्राज्यका कोई अस्तित्व भी नहीं रह सकता।

मैं चाहता हूँ कि ईश्वर मुझे ऐसी शक्ति या इतनी समझ दे कि मैं उसके बलपर उसी प्रकार लोकमत तैयार कर सकूँ और हमारे भाग्यको भले या बुरेके लिए प्रभावित करनेवाले अखबारोंके जादूगरोंको उसी तरह अपने ऊपर कृपालु बना सकूँ, जिस तरह कि माल्टावाले मामलेके सिलसिलेमें किया गया था। पिछले पाँच सालसे ट्रान्सवालके हमारे भारतीय बन्धुओंके मामलेका औचित्य उससे दस हजार गुना अधिक रहा है। यदि माल्टावाले मामलेमें लोकमत और अखबारोंके प्रभावके बलपर इस देशकी सरकारको कुछ करनेके लिए, और जिस देशपर हमारा कोई काबू नहीं है उस देशमें भी हस्तक्षेप करनेके लिए, तैयार किया जा सकता था, तो यदि मुझे वह तरकीब आती तो ट्रान्सवालके हमारे भारतीय बन्धुओंके मामलेमें सरकारको कितना अधिक सक्रिय बनाया जा सकता था? आशा है कि माननीय लॉर्ड (मन्त्री) महोदयको मैंने पूरी स्पष्टताके साथ बतला दिया है कि मैं किन-किन बातोंका उत्तर चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-९-१९१२

परिशिष्ट १९

कस्बा-कानून संशोधन अधिनियम (१९०८) के सम्बन्धमें साम्राज्य-सरकारकी सेवामें संघके मन्त्रियोंकी टिप्पणियाँ

(क)

जून १६, १९११

महाविभव गवर्नर-जनरल महोदयने अपनी इसी १२ तारीखकी टिप्पणी, संख्या १५/१३९, में ब्रिटिश भारतीय संघके प्रार्थनापत्रपर और दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति द्वारा अपने ५ मईके पत्रमें ट्रान्सवाल स्वर्ण-कानूनके खण्ड १३० के परिणामोंके सम्बन्धमें उठाये गये प्रश्नपर मन्त्रियोंके विचार माँगे हैं। उक्त टिप्पणीके साथ माननीय उपनिवेश-मन्त्रीसे प्राप्त एक तार भी भेजा गया है। गवर्नर जनरल महोदयने अपनी ८ मईकी टिप्पणीमें उपर्युक्त प्रार्थनापत्रकी एक प्रति पहले ही भेज दी थी। अब, इस सम्बन्धमें मन्त्रिगण यह कहना चाहते हैं कि उनके विचारमें बस्तियों और बाजारोंके बाहर सम्पत्तिका स्वामित्व प्राप्त करने या उसे किसी अन्य प्रकारसे अपने कब्जेमें रखने — सम्बन्धी एशियाइयोंके अधिकारके सम्बन्धमें १८८५ के कानून संख्या ३, और उसके बाद पास किये गये कानूनोंसे उत्पन्न स्थितिपर पुनः विचार करना आवश्यक नहीं है।

गवर्नर-जनरल महोदयकी टिप्पणीके साथ संलग्न पत्रोंमें जिस शिकायतकी ओर विशेष रूपसे ध्यान दिलाया गया है, उसका सम्बन्ध १९०८ के बहुमूल्य और अपधातु अधिनियमके खण्ड १३० के अन्तर्गत क्लार्क्सडॉर्पमें की गई पुलिस कार्रवाईसे है; और ब्रिटिश भारतीय संघने १९०८ के कस्बा कानून संशोधन अधिनियमका जो उल्लेख किया है, वह मन्त्रियोंकी समझमें कुछ आया नहीं, क्योंकि उस कानूनमें वैसी कोई व्यवस्था है ही नहीं, जिसकी शिकायत प्रार्थनापत्रमें की गई है।

और बहुमूल्य तथा अपधातु अधिनियमके जिस खण्डका उल्लेख किया गया है, उसके सम्बन्धमें मन्त्रिगण यह कहना चाहते हैं कि उस कानूनका सम्बन्ध मुख्यतः, बल्कि लगभग सम्पूर्णतः, खनिज पदार्थों और खननके अधिकारोंसे है, और ट्रान्सवालके खनन सम्बन्धी कानूनके अन्तर्गत रंगदार लोग इन अधिकारोंसे सदा ही वंचित रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि खण्ड १३० की शब्द-योजना इतनी व्यापक है कि १९०८ के कानून तथा उसके पहलेके स्वर्ण कानूनके अन्तर्गत दिये गये सारे अधिकार उसमें समाहित हो जाते हैं; किन्तु १९०८ के अधिनियम संख्या ३५ के पास होनेके पूर्व भारतीयोंने जो भी कारोबार, या कारोबार चलानेके अधिकार, प्राप्त किये थे, उनमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप करनेका कोई इरादा नहीं है। मन्त्रियोंको बताया गया है कि क्लार्क्सडॉर्पके जिन बाड़ोंके सम्बन्धमें [पुलिस] कार्रवाई की गई है, उन्हें भारतीयोंने इस कानूनके पास होनेके बाद व्यावसायिक उद्देश्योंसे चोरी-छिपे प्राप्त किया था, और इस प्रकार उल्लिखित खण्डका उल्लंघन किया था। उनका खयाल है कि यह कार्रवाई स्थानीय व्यापारी समुदायके इशारेपर की गई है; क्योंकि वह इस बातको लेकर बहुत क्षुब्ध हैं कि भारतीयोंके चलते गोरे व्यापारियोंका कारोबार बड़ी तेजीसे उखड़ता चला जा रहा है। फिर भी मन्त्रिगण आगे जाँच-पड़ताल करवा रहे हैं ताकि उक्त कानूनके खण्ड १३० की धाराओंको बेजा सख्तीसे अमलमें लानेकी सम्भावनाको यथासम्भव टाला जा सके।

जे० सी० स्मट्स

(ख)

दिसम्बर २, १९११

सन् १९०८ के ट्रान्सवाल कस्बा-कानून संशोधन अधिनियम और ट्रान्सवाल स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके बारेमें महाविभव गवर्नर-जनरल महोदयकी १ सितम्बरकी टिप्पणी, संख्या १५/१७०, के सम्बन्धमें मन्त्रिगण यह निवेदन करना चाहते हैं कि ऐसा प्रतीत होता है, अदालतोंने टैम्बलिनके मामले[1] में दिये गये अपने हालके निर्णय द्वारा १९०८ के (ट्रान्सवाल) कानून ३५ के खण्ड १३० के अर्थ तथा व्याप्तिकी उस हद तक अन्तिम व्याख्या कर दी है, जिस हद तक उससे रंगदार लोगोंका कस्बोंके बाहरके घोषित क्षेत्रोंमें गोरे मालिकोंसे पट्टेपर भाड़े लेने और उन्हें अपने कब्जेमें रखनेका अधिकार प्रभावित होता हैं।

खान क्षेत्रोंकी सीमामें आनेवाली बस्तियाँ (टाउनशिप्स) में ऐसे लोगोंकी स्थितिके सम्बन्धमें महाविभवको ज्ञात ही होगा कि सरकारी और गैरसरकारी, दोनों तरहके कस्बोंमें जमीनके पूर्ण स्वामित्वके

---

१. रूडीपूर्टमें अल्फ्रेड टैम्बलिन नामक एक व्यक्तिपर अहमद खाँ और अब्दुल्ला खाँ नामक दो एशियाइयोंको शिकमी-पट्टेपर खान क्षेत्रमें एक बाड़ा देनेके कारण १९०८ के स्वर्ण अधिनियमके खण्ड १३० के अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया। उसके वकीलने यह दलील पेश की कि पुराने स्वर्ण कानूनके अन्तर्गत बाड़ा-मालिकको किसी भी रंगदार व्यक्तिको शिकमी-पट्टेपर अपना बाड़ा देनेका अधिकार प्राप्त था और वर्तमान स्वर्ण कानूनके खण्ड ७७ के अन्तर्गत रंगदार लोगोंको बाड़ेका स्वामित्व प्राप्त करनेका अधिकार भी दिया गया है। किन्तु, इसके बाद सुनवाई स्थगित कर दी गई। आगे चलकर क्रूगर्सडॉर्पके एक मजिस्ट्रेटने टैम्बलिनको दोषी पाया और उसे सजा दे दी। अपील करनेपर दक्षिण आफ्रिकाके सर्वोच्च न्यायालयकी ट्रान्सवाल शाखाने टैम्बलिनको रिहा कर दिया और यह व्यवस्था दी कि सम्बन्धित दोनों एशियाई स्वर्ण-कानूनके खण्ड ७७ के अन्तर्गत सुरक्षित हैं। देखिए **इंडियन ओपिनियन**, २४-६-१९११ और २-९-१९११।

पट्टेकी एक शर्त यह है कि उसपर किसी रंगदार व्यक्तिको नहीं रहने दिया जायेगा। फिर भी, मन्त्रिगण अपने पहलेके इस आश्वासनको दुहराना चाहते हैं कि इन बस्तियोंमें ऐसे अनुदानोंकी तारीखसे पूर्व लोगोंने जो निहित स्वार्थ प्राप्त कर लिये हैं, उनमें दखलन्दाजी करनेका उनका कोई इरादा नहीं है। किन्तु, नये अधिकार प्राप्त करनेकी कोशिशोंके विरुद्ध वे कोई कार्रवाई न करें, यह असम्भव है। इस सम्बन्धमें वे इतना और कहना चाहते हैं कि एशियाई समाजके लोग उन कस्बों (टाउनशिप्स) को एशियाई आबादीसे भर देनेके लिए संगठित रूपसे प्रयत्न कर रहे हैं जहाँ उन्हें पहले कोई अधिकार नहीं प्राप्त थे, और फलस्वरूप यूरोपीय समाज अत्यधिक क्षुब्ध होता जा रहा है, — इतना क्षुब्ध कि इससे सम्भवतः मन्त्रियोंको मजबूर होकर स्वामित्व-पट्टोंमें निहित शर्तोंको लागू करनेके लिए कस्बा कानूनके अन्तर्गत कार्रवाई करनी पड़ेगी।

एस० डब्ल्यू० सावर

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २७-४-१९१२

परिशिष्ट २०

गांधीजीके नाम गोखलेका पत्र

पैनेट हाउस
२३१-३२ स्ट्रैंड
लन्दन, डब्ल्यू० सी०
जुलाई २७, १९१२

प्रिय श्री गांधी,

मैंने आपको इस बातकी निश्चित सूचना देनेके लिए परसों तार भेजा है कि मैंने 'सैक्सन' जहाजसे अपनी यात्राका टिकट ले लिया है। जहाज ५ अक्तूबरको साउदैम्पटनसे चलेगा। इसका मतलब यह हुआ कि मैं २२ अक्तूबरको केप टाउन पहुँचूँगा। इस तरह मुझे दक्षिण आफ्रिकामें २४ दिनोंका समय मिलेगा और १६ नवम्बरको मुझे डरबनसे बम्बईके लिए अवश्य ही प्रस्थान कर देना पड़ेगा। पिछले शनिवारको मुझे लॉर्ड क्रू का एक पत्र मिला था। उसमें प्रस्ताव था कि मैं भारतीय लोक-सेवाओंके सम्बन्धमें नियुक्त होनेवाले शाही कमीशनमें एक स्थान स्वीकार कर लूँ। मैंने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। किन्तु कमीशन अगली जनवरीके पहले अपना काम शुरू नहीं करेगा। अतः, उसके कारण मुझे ५ अक्तूबरसे पहले दक्षिण आफ्रिकाके लिए प्रस्थान करनेकी जरूरत नहीं पड़ेगी। कुमारी पोलकने मुझे बताया है कि आज ही उन्होंने आपको एक पत्र भेजा है, जिसमें उन्होंने मुझे अपनी यात्राका टिकट लेनेमें जो कठिनाई हुई उसका जिक्र किया है। किन्तु, आज सुबह मुझे यूनियन कैसिल कम्पनीके अध्यक्ष सर ओवेन फिलिप्सका एक पत्र मिला है। उसमें उन्होंने लिखा है कि सब कुछ ठीक हो जायेगा और मेरी यात्राको सुविधापूर्ण बनानेके लिए पूरी व्यवस्था कर दी जायेगी। यदि श्री ओवेनका उत्तर असन्तोष-जनक होता तो उस हालतमें मेरा इरादा अखबारों और अनेक सम्पादकोंके नाम पत्र लिखनेका था। 'वेस्ट मिन्स्टर गजट' के श्री स्पेंडर, 'डेली न्यूज' के श्री गार्डिनर, 'नेशन' के श्री मैसिंघम, जो 'टाइम्स' के भी कर्मचारी हैं, इस सम्बन्धमें अपनी पूरी ताकत लगा देते। श्री रैम्जे मैकडानल्डका इरादा तो सदनमें प्रश्न पूछनेका भी था। श्री हरकोर्ट भी इस बातको लेकर बहुत क्षुब्ध थे। उनसे मैं स्पेंडर-परिवारके घर दिनके भोजनपर मिला था। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं उन्हें यह सूचित कर

हूँ कि श्री ओवेनका उत्तर सन्तोषजनक है अथवा नहीं। किन्तु, मेरा खयाल है, अब इस सम्बन्धमें कुछ करनेकी जरूरत नहीं है, हालाँ कि मैं इस मामलेको समाप्त करके एक प्रकारसे दुःखी भी हूँ; क्योंकि इसमें एक सिद्धान्तका प्रश्न समाहित था और वह न्यूनाधिक अनिर्णीत ही रह गया।

कुमारी पोलकने मुझे यह भी बताया है कि उन्होंने आपको लिखे पत्रमें ऐसा आभास दिया है कि उन्हें इसी सर्दियोंमें दक्षिण आफ्रिका जाना चाहिए, ताकि वे वहाँकी परिस्थितिकी चश्मदीद जानकारी प्राप्त करके हमारी दक्षिण आफ्रिकी समस्याओंको हल करनेका प्रयत्न कर सकें। मैं उनसे सर्वथा सहमत हूँ, और मुझे पूरी आशा है कि आप उनके सुझावको स्वीकार कर लेंगे। मैंने देखा है कि उन्हें इस पदके दायित्वोंको सँभालनेमें कितनी जबरदस्त कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है, और उनके काममें सहायता पहुँचानेके लिए कमसे-कम इतना तो किया ही जाना चाहिए कि उन्हें दक्षिण आफ्रिकाकी परिस्थितियोंकी चश्मदीद जानकारी प्राप्त करनेका एक अवसर दिया जाये। उनका विचार हर दृष्टिसे सही है। यदि खर्चेकी बातको लेकर आपको स्वीकृति देनेमें कोई बाधा होनेकी सम्भावना हो तो मैं भारत लौटनेपर, उनकी यात्रामें जो सौ-एक पौंड लगेंगे, उनका प्रबन्ध करनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेता हूँ। अतः, आज कृपया उनकी योजनाको स्वीकृति दे दें और तार द्वारा उन्हें अपनी यात्राके टिकट आदिका प्रबन्ध करनेकी अनुमति भेज दें।

मैं ५ अगस्तको यूरोपके लिए प्रस्थान कर रहा हूँ। यहाँ नेशनल लिबरल क्लब (व्हाइट प्लेस, एस० डब्ल्यू०) के पतेपर आये पत्र मैं जहाँ-कहीं भी होऊँगा, मुझे भेज दिये जायेंगे।

हृदयसे आपका,
गो० कृ० गोखले

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५६७२) की फोटो नकलसे।

परिशिष्ट २१

स्वर्ण-कानून और कस्बा-अधिनियम (१९०८) के बारेमें भारत सरकारको पोलकका पत्र

अप्रैल १९, १९१२

सचिव, भारत-सरकार
वाणिज्य और उद्योग विभाग
शिमला
[महोदय,]

हाल ही में प्रकाशित श्वेत-पत्र (सी० डी० ६०८७) के सम्बन्धमें, जिसमें "ट्रान्सवालके स्वर्ण कानून और १९०८ के कस्बा अधिनियमोंके अन्तर्गत भारतीयोंकी स्थितिके बारेमें हुआ पत्र-व्यवहार" दिया गया है, और विशेष रूपसे उसके पृष्ठ १७ पर छपी संघ-सरकारकी टिप्पणी (संलग्न संख्या ९) के दूसरे अनुच्छेदके बारेमें मैं इस प्रान्तके भारतीय समाजकी ओरसे निम्नलिखित बातें निवेदित करना चाहता हूँ।

२. सन् १८८५ का कानून ३ एशियाकी वतनी जातियोंके ऊपर लागू होता है, और उसके अन्तर्गत भारतीयों तथा अन्य एशियाइयोंको बस्तियों या बाजारोंको छोड़कर अन्यत्र कहीं अचल सम्पत्ति रखनेका निषेध है।

३. परन्तु ट्रान्सवाल प्रशासनने उन्हें ऐसी बस्तियोंमें भी भूसम्पत्तिकी निःशुल्क मिल्कियत देने या लम्बी अवधिका पट्टा देनेसे इनकार कर दिया है, और उन्हें बाड़ोंका, जिनमें ये बस्तियाँ विभाजित हैं, केवल २१ वर्षका पट्टा प्राप्त करनेकी अनुमति दी है। जोहानिसबर्गमें तो केवल माहवारी किरायेपर ही भूमि प्राप्तकी जा सकती है।

४. किन्तु, किसी भारतीय द्वारा भूसम्पत्तिकी मिल्कियतके कानूनी निषेधके बावजूद ट्रस्ट-जैसी एक नामाचारके लिए भारतीयोंके यूरोपीय मित्रोंके नाम हस्तान्तरित कर दिया जाता है, किन्तु चीज बनानेका रिवाज बन गया। इस रिवाजके मुताबिक किसी भी जायदादका स्वामित्व उसकी खरीद और भुगतान कोई भारतीय व्यापारी ही करता है और वही उसका वास्तविक मालिक भी होता है। इस प्रकारकी जायदादें सट्टेबाजीकी गरजसे नहीं खरीदी गई थीं, बल्कि व्यापार बढ़ानेकी गरजसे खरीदी गई थीं, और उनके वास्तविक भारतीय मालिकोंमें से लगभग सभीने हजारों पौंडकी लागतसे इन जायदादों पर अपने रहने और व्यापार करनेके लिए खासे ठोस और आधुनिक ढंगकी इमारतें बनवाईं।

५. इस बातके पर्याप्त प्रमाण हैं कि ये सारी कार्रवाइयाँ कानूनसे बचनेकी गरज़से नहीं की गईं।

६. १८८५ का कानून ३ लागू होनेसे पहले, क्लार्क्सडॉर्पकी व्यापारिक पेढ़ी, मेसर्स मुहम्मद इसमाइलने सार्वजनिक नीलाममें कस्बेमें कुछ दूकानें खरीदीं — इस शर्तपर कि वे उनके लिए मासिक परवानेका शुल्क देंगे। ये दूकानें उनके नाम रजिस्टर कर दी गईं। क्लार्क्सडॉर्पके बाड़ा-मालिकोंका आम रिवाज यह बन गया कि वे दूकानोंका परवाना शुल्क हर छमाहीके हिसाबसे दें। मेसर्स मुहम्मद इसमाइल भी इसी प्रकार अपने शुल्कका भुगतान करते थे। कुछ समयके बाद एक भारतीय-विरोधी आन्दोलन खड़ा हुआ, गणतांत्रिक सरकारने हस्तक्षेप किया, और बिना किसी सुनवाईके और भारतीय मालिकोंको कोई मुआवजा दिये बगैर उनके बाड़े जब्त कर लिये गये। भारतीय मालिकोंने लूटपाटकी इस अनुचित और अकारण कार्रवाईका जोरदार विरोध किया। लम्बी लिखा-पढ़ीके बाद सरकारने भारतीय व्यापारियोंको सूचित किया कि उन्हें मिल्कियत रखनेकी फिर अनुमति दे दी जायेगी, बशर्ते कि भूमि-पंजी (लैंड रजिस्ट्री) में उन्हें किसी यूरोपीयके नाम रजिस्टर करवाया जाये। यह शर्त मंजूर कर ली गई और स्वयं अधिकारियोंके सुझावपर भूमिको उपर्युक्त ढंगसे हस्तान्तरित कर दिया गया था।

७. स्वर्गीय श्री अबूबकर आमदने, जो दक्षिण आफ्रिकाके अग्रणी भारतीय व्यापारी थे, १८८५ में कानून लागू होनेसे पहले, प्रिटोरियामें चर्च स्ट्रीटपर एक दूकान खरीदी थी, लेकिन हस्तान्तरणकी अनुमति उन्हें कानून लागू होनेकी तारीखसे पहले नहीं दी गई थी। भारतीय मालिककी मृत्यु हो गई, और सीधे उनके उत्तराधिकारियोंके नाम दूकानका हस्तान्तरण करनेकी अनुमति नहीं दी गई, बल्कि उनके एवजमें उनके द्वारा नामजद कतिपय यूरोपीयोंके नाम की गई। इस अन्यायपूर्ण स्थितिको ट्रान्सवालकी नई सरकारने १९०७ में अनुभव किया, और उसने उसी वर्षके अधिनियम २ में उत्तराधिकारियोंके नाम हस्तान्तरणकी व्यवस्था करनेका प्रयत्न किया। इस बीच जायदाद मेरे नाम दर्ज थी। किन्तु, सर्वोच्च न्यायालयमें प्रार्थनापत्र देनेपर उसने निर्णय दिया कि अधिनियम २ की व्यवस्थाओंकी वाक्य-रचना इस प्रकार की गई है कि उत्तराधिकारियोंके नाम हस्तान्तरणका निषेध होता था। आखिर १९०८ के अधिनियम ३६ को बनाते समय मेरे नाम दर्ज दूकानको उत्तराधिकारियोंके नाम हस्तान्तरित करनेकी व्यवस्था की गई और इस सारी कार्यवाहीको संसद द्वारा निर्मित ट्रान्सवालके अधिनियमकी एक धारामें लिपिबद्ध कर दिया गया।

८. १९०५ में सैयद इसमाइल तथा एक अन्य बनाम जैकब्स, एन० ओ० वाले अपीलके मामलेमें अदालतने ऐसे वास्तविक ट्रस्टोंको स्पष्ट रूपसे मान्यता प्रदान कर दी। कुछ महीने बाद जब ऐसे हस्तान्तरणोंकी वैधतापर विलेख कार्यालय (डीड्स ऑफिस) ने शंका उठाई और विभाग द्वारा कानूनी सम्मति ली गई तो यह निर्णय हुआ कि इस मामलेमें सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयसे इस प्रकारके

हस्तान्तरणकी वैधता निर्विवाद रूपसे निश्चित हो जाती है और उसके बादसे इस प्रकारके कई हस्तान्तरण किये गये।

९. गत १९ फरवरीको लार्ड सभामें बहसके दौरान १९०८ और १९०९ के कस्बा कानून संशोधन अधिनियमोंके कार्यान्वयनके विषयमें लॉर्ड ऍम्टहिल द्वारा पूछे गये प्रश्नोंके उत्तरमें दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटेनके भूतपूर्व उच्चायुक्त और ट्रान्सवालके गवर्नर लॉर्ड सेल्बोर्नने इस बातकी ताईद की कि ये हस्तान्तरण खुले ढंगसे और बिना किसी छिपावके होते रहे थे। अधिकृत रिपोर्ट (ऑफीशियल रिपोर्ट) में उनका यह कथन उद्धृत है: एक ब्रिटिश भारतीय प्रजाजन भूमिका स्वामी नहीं हो सकता और प्रत्यक्ष रूपसे खान उद्योग भी नहीं चला सकता। लॉर्ड महोदय, मैं यहाँ वही बात कहता हूँ, जो मैंने ट्रान्सवालकी एक सभामें कही थी। मैं नहीं समझता कि ये दोनों प्रतिबन्ध न्यायोचित हैं। मेरी रायमें ये [प्रतिबन्ध] न केवल न्यायोचित ही नहीं हैं, बल्कि अत्यन्त मूर्खतापूर्ण हैं; क्योंकि वे सर्वथा अव्यावहारिक हैं। किसी भी ब्रिटिश भारतीयको भूमिका पूर्ण स्वामित्व प्राप्त करनेका निषेध है, **किन्तु किसी गोरेके साथ आपसी व्यवस्था करके उसके जरिये वह भूमिको बिल्कुल पक्के ढंगसे अपने कब्जेमें रखता है।**

१०. तब, जहाँ यह साफ है कि कानूनमें भारतीयोंको अचल सम्पत्तिके स्वामित्वका निषेध है, वहाँ यह उतना ही साफ है कि उपनिवेशकी अदालतों और सरकार द्वारा मान्य अप्रत्यक्ष स्वामित्वका रिवाज बन जानेके कारण कुछ अतिरिक्त आनुषंगिक खर्चोंको छोड़कर ट्रान्सवालके भारतीय समाजके अपेक्षाकृत धनी वर्गको कोई वास्तविक कठिनाई नहीं हुई है।

११. यदि साम्राज्य-सरकार और ट्रान्सवालके भारतीय १८८५ के कानून ३ की निषेधक धाराको रद करनेपर जोर देते हैं तो वे ऐसा न केवल समाजके कम सम्पन्न सदस्योंकी रक्षाके लिए करते हैं, बल्कि उस जातिभेदपर आधारित निर्योग्यताको दूर करानेके लिए भी करते हैं जो न तो ट्रान्सवालके वतनियोंपर लागू है और न अन्य किसी [गैर भारतीय] रंगदार ब्रिटिश प्रजापर ही।

१२. यह बात समझ ली जानी चाहिए कि जहाँ भारतीयोंने व्यक्तिशः भूमिके अप्रत्यक्ष स्वामित्वके अधिकारका लाभ उठाया है यह अधिकार सम्भावनाकी दृष्टिसे समाजके प्रत्येक सदस्यको प्राप्त है।

१३. सन् १९०८ में १९०७ के कस्बा अधिनियमका संशोधन करते हुए कस्बा संशोधन अधिनियम (१९०८ का, संख्या ३४, ट्रान्सवाल) पास किया गया। यह कानून विशेष रूपसे कस्बोंमें स्थित बाड़ोंके बारेमें बनाया गया था। यह कानून तथा इसके बाद १९०९ का एक संशोधन अधिनियम, दोनों सामान्य नियम निर्धारित करते थे, अर्थात् उनमें कोई जातीय भेदभाव नहीं किया गया था, और उनमें अमुक परिस्थितियोंमें और अमुक शर्तोंपर पट्टेको पूर्ण स्वामित्वके अधिकारमें बदले जानेकी व्यवस्था की गई थी।

१४. यद्यपि साधारण परिस्थितियोंमें किसी पट्टेदारको पूर्ण स्वामित्वका पट्टा प्राप्त करनेके लिए अर्जी देना आवश्यक नहीं है, लेकिन कुछ परिस्थितियोंमें इस प्रकारकी अर्जी देना अनिवार्य कर दिया गया।

१५. इन अधिनियमोंमें भूमिका पूर्ण स्वामित्व देनेकी शर्तें निर्धारित करनेवाले विनियमों (देखिये, श्वेतपत्रका परिशिष्ट सी० डी० ६०८७)[1] के प्रकाशनकी व्यवस्था की गई थी।

१६. ये शर्तें १९०९ के सरकारी नोटिस (ट्रान्सवाल), संख्या ६४०, के अन्तर्गत प्रकाशित की गई थीं। उसकी उपधारा (घ) निम्नलिखित है:

"यह (स्वामित्वके पट्टे द्वारा प्रदत्त भूमि) या इसका कोई भाग किसी भी रंगदार व्यक्तिको हस्तान्तरित नहीं किया जा जायेगा, और न उसे पट्टेपर अथवा किसी भी अन्य रूपमें ही दिया जायेगा;

---

१. यहाँ नहीं दिया गया।

और पंजीकृत स्वामीके घरेलू नौकरों या उसके असामियोंको छोड़कर कोई रंगदार व्यक्ति उस भूमिपर नहीं रहेगा। पूर्वोक्त शर्तका उलंघन होनेपर ट्रान्सवाल सरकारको अधिकार होगा कि वह इस पट्टेको रद कर दे और उस भूमिपर बनाई गई इमारतों या किसी अन्य निर्माणका अथवा उक्त भूमिमें किये गये किसी सुधारका कोई मुआवजा दिये बगैर उसे वापस अपने कब्जेमें ले ले।"

१७. यह ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि मुख्य कानूनकी व्यवस्थाएँ भेदभावसे मुक्त हैं, किन्तु शाही पट्टेकी शर्तें, जो मुख्य कानूनका अभिन्न अंग हैं, इस अर्थमें जातिभेदपर आधारित एक गम्भीर निर्योग्यता थोप देती हैं कि भारतीय समाजको अप्रत्यक्ष रूपसे अचल सम्पत्तिके स्वामित्वका जो अधिकार अभीतक प्राप्त रहा है, उसे उससे वंचित करता है। इसके अतिरिक्त ऊपरके अनुच्छेद १४ में उल्लिखित परिस्थितियोंमें उन भारतीयोंको, जिन्हें आज भूसम्पत्तिका अप्रत्यक्ष स्वामित्व प्राप्त है, भविष्यमें बिना कोई मुआवजा दिये उनकी वैध ढंगसे प्राप्त सम्पत्तिसे वंचित कर दिया जायेगा।

१८. भारतीय समाजका कहना है कि ये शर्तें कानूनके विपरीत हैं, अथवा यों कहें कि कानून स्वयं ही गैरकानूनी है, और इसलिए अवैधानिक है। उसका कहना है कि १९०८ और १९०९ के कस्बा संशोधन अधिनियमोंका अभिप्राय स्पष्टतया भेदभावपूर्ण विनियमोंकी रचनाका निषेध करनेका है। दूसरी ओर, १९०६ के ट्रान्सवाल संविधानमें व्यवस्था है कि भेदभावपूर्ण कानूनोंपर शाही स्वीकृति होने तक उसे अमलमें न लाया जाये। चूँकि १९०८ और १९०९ के अधिनियम सामान्यतः सभीपर लागू होते थे, इसलिए उन्हें [शाही अनुमति प्राप्त करनेके लिए] रोका नहीं गया, बल्कि गवर्नरने उनपर तुरन्त स्वीकृति दे दी। उनके अन्तर्गत बनाये गये भेदभावपूर्ण विनियम संसदकी जानकारीमें कभी नहीं लाये गये और न उन्हें सम्राटके उपनिवेश-मन्त्रीके परीक्षणके लिए ही भेजा गया। उसका कहना है कि संविधानकी शर्तें पूरी नहीं की गई हैं और इन विनियमोंको कानूनकी कोई शक्ति अथवा प्रभाव प्राप्त नहीं है।

१९. कुछ तो अपना व्यापार फैलानेकी दृष्टिसे और कुछ इन विनियमोंकी वैधता जाँचनेकी दृष्टिसे श्री अहमद मूसा भायातने भू-सम्पत्तिकी अप्रत्यक्ष मिल्कियतके अपने उस अधिकारका उपयोग करते हुए, जिसे अबतक इस प्रान्तकी अदालतों और सरकारकी मान्यता प्राप्त रही है, पिछले वर्षके उत्तरार्द्धमें बॉक्सवर्ग कस्बेमें कुछ बाड़ोंकी पूरी मिल्कियत खरीद ली। ये बाड़े श्री लुई वाल्टर रिच, बैरिस्टर-इन-लॉके नाम रजिस्टर कराये गये। श्री रिच कुछ समय पहले तक इंग्लैंडमें दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके मन्त्री थे, और इस समय जोहानिसबर्गमें दक्षिण आफ्रिका संघके सर्वोच्च न्यायालयमें वकालत कर रहे हैं।

२०. उन्होंने उक्त बाड़े जब खरीदे उससे पहले उस कस्बेके गोरे निवासियोंने मिलकर निश्चय किया था कि कस्बेका कोई बाड़ा भारतीयोंके हाथ अप्रत्यक्ष रूपसे नहीं बेचेंगे। इसमें उनका उद्देश्य बॉक्सबर्गको विशुद्ध रूपसे गोरोंकी बस्ती बनाये रखना और भारतीयोंको बस्तियोंमें सीमित रखना था। श्री भायातको एक ऐसा व्यक्ति मिल गया जो अपने बाड़े बेचनेको इच्छुक था, अतः उन्होंने उक्त सम्पत्ति खरीद ली और बहुत धन व्यय करके उस जमीनपर उपयुक्त इमारतें बनवाईं, और चूँकि वे सरकारसे व्यापारिक-परवाना पहले ही ले चुके थे, इसलिए उन्होंने उस इमारतमें आम वस्तुओंके विक्रयका रोजगार शुरू कर दिया।

२१. किन्तु, श्री भायातके यूरोपीय व्यापारी प्रतिद्वन्द्वियोंकी व्यापारिक ईर्ष्या जग उठी है। श्री भायातको संगठित बहिष्कारका शिकार बनाया गया है। वहाँके गोरे निवासियोंने संघ-सरकारपर दबाव डालकर सर्वश्री रिच और भायातके खिलाफ मुकदमा दायर करवा दिया है ताकि अदालतसे उनका स्वामित्वका पट्टा रद कर दिया जाये, उन्हें उस जमीनसे निकाल बाहर किया जाये, और उनसे हर्जाना वसूला जाये। अपने बचावके लिए दोनों [श्री रिच और श्री भायात] को व्यय-साध्य मुकदमेबाजी करनी पड़ रही है, और श्री भायातके सामने बिना कोई मुआवजा पाये अपनी जायदाद और व्यापारसे हाथ धो बैठनेका खतरा

मौजूद है। यहाँ इतना और कह दिया जाये कि उनका माल जोहानिसबर्गकी यूरोपीय पेढ़ियोंने सप्लाई किया है। ये पेढ़ियाँ श्री भायातको एक अत्यन्त ईमानदार व्यापारीके रूपमें कई वर्षोंसे जानती हैं।

२२. सरकारके ध्यानमें ये तथ्य लाते समय मैं दक्षिण आफ्रिकी संघमें विनियमोंके जरिये कानून बनानेकी बढ़ती हुई प्रवृत्तिकी ओर विशेष रूपसे ध्यान खींचना चाहता हूँ। संघ-संसद और साम्राज्य-सरकारको इनकी कोई जानकारी नहीं है। मैं यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि भारतीय समाज कोई नई सुविधा या अधिकारकी नहीं, बल्कि सिर्फ उस अधिकारको बनाये रखनेकी माँग कर रहा है जो उसे उक्त अधिनियमोंके लागू होनेसे पहले प्राप्त था। किन्तु, फिर भी वह १८८५के कानून ३ की उन भेदभावपूर्ण व्यवस्थाओंको रद करनेकी अपनी माँगपर दृढ़ है, जिनके अनौचित्यके विरुद्ध साम्राज्य-सरकारने युद्धसे पहले भी और उसके बाद भी कई बार रोष प्रकट किया है।

२३. अतः मैं सरकारसे अनुरोध करूँगा कि वह इस बातके लिए अधिकसे-अधिक प्रयास करे कि जिस समाजपर पहले ही बहुत निर्योग्यताओंका भार है, उसपर और अधिक निर्योग्यताएँ न थोपी जायें, और उसका वह अधिकार, जो वास्तविक और संभावित है, तथा जिसे अबतक मान्य किया गया है और उचित ठहराया गया है, बरकरार रहे।

[आपका,]
एच० एस० एल० पोलक

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ६–७–१९१२।

परिशिष्ट २२

गोखलेके साथ हुई भेंटपर ग्लैडस्टनकी टिप्पणी

गवर्नमेंट हाउस
प्रिटोरिया
नवम्बर २६, १९१२

गोपनीय

महोदय,

श्री गोखले कल मेरे साथ भोजन करने आये, और [भोजनोपरान्त] हमने ब्रिटिश भारतीय प्रश्नपर चर्चा की।

२. मैंने प्रधानमन्त्रीसे निश्चित पता चला लिया है कि उनके कुछ मन्त्रियोंने और ऑरेंज फ्री स्टेटमें बहुतसे लोगोंने श्री गोखलेके किसी भाषणके अंश-विशेषका बहुत बुरा माना है क्योंकि उनकी रायमें उसमें धमकी दी गई थी। लेकिन मैं सन्तुष्ट हूँ कि श्री गोखलेका कोई इरादा धमकी देनेका नहीं था। उनकी इच्छा श्रोताओंको भारतमें जो स्थिति है उससे, और दक्षिण आफ्रिकामें लगातार संघर्षसे उत्पन्न होनेवाले सम्भावित खतरेसे परिचित करानेकी थी। खतरा और भी ज्यादा हो सकता है क्योंकि हर बात बढ़-चढ़कर ही पहुँचती है और दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंका क्रान्तिकारी लोग भारतमें अंग्रेजोंके विरुद्ध उपयोग करनेकी कोशिश कर रहे हैं। डर्बनमें अपने एक भाषणमें उन्होंने अपना मंशा स्पष्ट किया। उन्होंने कहा कि प्रवासी विधेयक (इमिग्रेशन बिल) पास हो जाये, इसके लिए मैं हृदयसे उत्सुक हूँ, हालाँकि आस्ट्रेलियन ढंगकी परीक्षाके स्थानपर कनाडियन ढंगकी परीक्षा लागू करनेकी श्री फिशरकी स्पष्ट

इच्छासे मैं चिन्तित भी हूँ। पर मन्त्रियोंका कहना है कि ये विचार श्री फिशरके हैं, उनके नहीं। श्री गोखले परवानेके सवाल और ३ पौंडी करको कहीं ज्यादा महत्त्व देते प्रतीत होते थे।

३. ३ पौंडी करके विषयमें प्रधानमन्त्रीने मुझे बताया कि उनकी रायमें नेटालमें बहुत ज्यादा विरोध होनेकी सम्भावनाके बावजूद श्री गोखलेकी रायको मान्य कर सकना मुमकिन होगा। श्री गोखलेने जो-कुछ कहा उससे मैं यह जान सका हूँ कि प्रधानमन्त्रीने उन्हें सन्तोषजनक आश्वासन दिया है।

४. परवानेके सवालपर मुश्किल पैदा होनेकी सम्भावना है, किन्तु इस समय मेरी रायमें सारा ध्यान प्रवासी विधेयकको पास करनेकी तरफ लगाना सर्वोत्तम होगा। मुझे पूरा इत्मीनान है कि प्रधानमन्त्री और जनरल स्मट्स उसे पास करानेके लिए सचमुच उत्सुक हैं। श्री गोखलेने भारतकी स्थितिके बारेमें जो थोड़ी-बहुत अविवेकपूर्ण भाषाका प्रयोग किया, उससे उत्पन्न उत्तेजना शायद धीरे-धीरे समाप्त हो जायेगी।

५. श्री गोखलेने, श्री अलेक्जैंडर सहित जो विधेयकके विरोधियोंके समर्थक थे, यूनियनिस्ट दलके अधिकांश प्रभावशाली सदस्योंसे भेंट की है। इन सबसे उन्होंने इस आशयका सन्तोषजनक वचन प्राप्त कर लिया है कि विधेयकके सदनमें आनेपर वे उसका समर्थन करेंगे। सोमवारको लारेंको मार्किवससे रवाना होनेसे पहले उन्होंने सर टॉमस स्मार्टसे भेंट करनेका कार्यक्रम बनाया था।

६. [संसदके] पिछले सत्रमें विधेयकका द्वितीय वाचन बहुत विलम्बसे किया गया था। विरोधी दलके नेताओंकी खामोशी, और सामान्य सदस्योंमें से कुछ लोगोंके दृढ़ विरोधने विधेयकके भाग्यका निर्णय कर दिया था।

७. मैं यह नहीं मान सकता कि [संसदके] अगले सत्रमें यूनियनिस्ट पार्टी जनरल बोथा और उनके सहयोगियोंको, साम्राज्यके सर्वोच्च हितोंको ध्यानमें रखते हुए, दक्षिण आफ्रिकामें उन तमाम शिकायतोंको दूर करनेके उनके प्रयत्नमें अपना समर्थन देनेसे फिर इनकार कर देगी जिनके कारण भारतमें भारी उपद्रव और खतरेकी स्थिति उत्पन्न होती रहती है। यदि विरोधी दलके नेता अगले सत्रमें साम्राज्यके प्रति अपना कर्तव्य करें और यदि मन्त्रिगण विधेयकको जल्दी ही पेश करनेका अपना वादा पूरा करें, तो कोई कारण नहीं है कि फिरसे वही खेदजनक विफलता हाथ लगे।

८. श्री गोखलेने संघ-सरकारके सौजन्य और सद्भावके प्रति और सभी सम्बन्धित अधिकारियों द्वारा दक्षिण आफ्रिकामें उनके ठहरनेकी पूरी अवधि-भर उनके आराम और सुविधाके लिए किये गये प्रबन्धके लिए कृतज्ञता व्यक्त की।

९. भारतमें उतरनेके बाद वे यथाशीघ्र अपनी रिपोर्ट लॉर्ड हार्डिजको देंगे, जो निःसन्देह यथासमय आपको प्रेषित कर दी जायेगी।

आपका,
ग्लैडस्टन
गवर्नर-जनरल

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स (सी० ओ० ५५१/३०)।

परिशिष्ट २३

बम्बईमें गोखलेका भाषण

दिसम्बर १४, १९१२

माननीय श्री गोखले जब बोलनेके लिए उठे तो लोगोंने बड़े उत्साहके साथ उनका स्वागत किया। श्री गोखलेने अपना भाषण प्रारम्भ करते हुए कहा:

अध्यक्ष महोदय, देवियो और सज्जनो, मैं आपको नहीं बता सकता कि भारत वापस आकर मैं कितना प्रसन्न हूँ। और इस विशाल जनसमुदायने मेरा जो सौजन्यपूर्ण तथा हार्दिक स्वागत किया है तथा अध्यक्ष महोदयने दक्षिण आफ्रिकामें मेरे कार्योंकी जिस मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है, उससे मेरी प्रसन्नता और भी बढ़ जाती है। वहाँ मुझे अपने कामके दौरान काफी श्रम करना पड़ा, किन्तु निस्सन्देह हमारे दक्षिण आफ्रिकी देशभाइयोंने मेरी यात्रापर बड़ा सन्तोष प्रकट किया है, और उनके सन्तोष तथा आपके द्वारा किये गये इस हार्दिक स्वागतके रूपमें मुझे उस कठिन श्रमका पर्याप्त पुरस्कार मिल गया है। आप शायद जानते होंगे, और यह बात मैं सार्वजनिक रूपसे भी कह चुका हूँ कि मैंने यह यात्रा हमारे दक्षिण आफ्रिकावासी महान् देश-बन्धु श्री गांधीके हार्दिक निमन्त्रणपर की थी। उन्होंने इसके लिए मुझसे बार-बार आग्रह किया था। किन्तु, जब मैंने पहले-पहल वहाँ जानेका निश्चय किया तो मेरा इरादा था कि मैं उस देशमें जहाँतक हो सके, बिना किसी शोर-शराबेके जाऊँ और सभी प्रमुख भारतीय केन्द्रोंका दौरा करके, वहाँ हमारे देशभाइयोंके साथ जो बरताव किया जाता है, उसके सम्बन्धमें तथ्य एकत्र करके लौट आऊँ और फिर उन तथ्योंको इस देशकी सरकार और जनताके सामने पेश कर दूँ, ताकि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय पक्षको समर्थन देनेके लिए यहाँ अधिक सरगर्मीसे कोशिश की जा सके। लेकिन, केप टाउन पहुँचकर जब मैंने सचमुच देखा कि संघ-सरकार किस तरह मुझे हर प्रकारकी सम्मान-सुविधा प्रदान करनेको उत्सुक है और उन सारे प्रमुख केन्द्रोंमें किस तरह न केवल हमारे देशभाइयोंने, बल्कि यूरोपीय समुदायके लोगोंने भी मेरे लिए सभा आदिकी पूरी व्यवस्था कर रखी है, तब मेरे सामने इसके अलावा और कोई चारा नहीं रह गया कि मैं इन सारी व्यवस्थाओंकी भावनाके साथ हार्दिक सहयोग करूँ और मुझे जो अवसर सुलभ कराया गया था उसका पूरा-पूरा उपयोग करूँ। इस परिस्थितिमें यदि मैंने कुछ और किया होता तो उसका मतलब मैं जिस उद्देश्यकी सेवा करने वहाँ गया था उसके साथ विश्वासघात करना और अपने-आपको, उस विश्वासके अयोग्य साबित करना होता जो मेरे दक्षिण आफ्रिकी देशभाइयोंने मुझमें व्यक्त किया।

समय कैसे बिताया

इसके बाद श्री गोखलेने बताया कि किस प्रकार उनका दक्षिण आफ्रिकाका चार सप्ताहका प्रवास प्रमुख भारतीय केन्द्रोंका निरीक्षण करनेमें बीता। उन्होंने कहा कि मैं इस दौरान वहाँ बसे हजारों भारतीयोंसे ही नहीं, बल्कि बहुत-से यूरोपीयोंसे भी मिला, जिनमें से कई तो काफी प्रसिद्ध लोग हैं। मैं जिन सभाओंमें बोला, उनमें से कुछ तो विशुद्ध रूपसे भारतीयोंकी थीं और कुछ यूरोपीयोंकी; किन्तु अधिकांश सभाओंमें इन दोनों समुदायोंके श्रोता शामिल थे। मैंने सभी मतों और विभिन्न हितोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले अनेक प्रमुख लोगोंके साथ हुई मुलाकातों और गोष्ठियोंमें इस प्रश्नके विभिन्न पहलुओंपर विचार-विमर्श किया। प्रश्नके भारतीय पक्षसे मैं पहलेसे ही अवगत था, और केप टाउन पहुँचनेपर भारतीयोंकी हद तक इस मामलेसे सम्बन्धित तथ्योंको पूरी तरह देखने-समझनेमें मुझे देर नहीं लगी।

फिर, मुझे यूरोपीय समुदायके व्यक्तियोंसे मिलनेकी जो सुविधा दी गई, उसकी बदौलत उस समुदायके विभिन्न वर्गोंके लोगोंकी भावनाओं और विचारोंको जाननेका असाधारण अवसर प्राप्त हुआ। सारे प्रश्नको हर दृष्टिसे परखनेके बाद मैं १४ नवम्बरको प्रिटोरियामें मन्त्रियों, जनरल बोथा, जनरल स्मट्स और श्री फिशरसे मिला। हमारी बातचीत काफी देर तक, [करीब] दो घंटे, चली। हमने सारे मामलेकी ब्योरेवार समीक्षाकी और हमारे बीच पूरी तरह खुलकर, विचारोंका आदान-प्रदान हुआ। मन्त्रियोंने अपने सामने रखे गये मामलेपर ध्यानपूर्वक विचार करनेका वचन दिया और बताया कि उनके विचारसे परिस्थितिकी क्या-क्या विषमताएँ हैं। दूसरे दिन मुझे सारे मामलेको गवर्नर-जनरल, परम श्रेष्ठ लॉर्ड ग्लैडस्टनकी सेवामें प्रस्तुत करनेका सुअवसर मिला। इसके बाद मैं अपने मनमें अपनी सामर्थ्य-भर सब-कुछ कर डालनेका सन्तोष लेकर दक्षिण आफ्रिकासे रवाना हो गया; और साथमें, वहाँ मेरे देशभाइयोंने मुझपर जो स्नेह-रसकी वर्षा की, यूरोपीय समुदायके लोगोंने मेरे साथ जो असीम सौहार्द्रपूर्ण व्यवहार किया तथा संघ-सरकारने मेरे प्रति जो अतीव सम्मान और शिष्टताके भाव प्रदर्शित किये, मैं उस सबकी जीवन्ततम स्मृति लेकर आया हूँ।

एक विषम परिस्थिति

श्री गोखले ने आगे कहा: वहाँकी वस्तुस्थितिके सम्बन्धमें बतानेसे पहलेमें आपसे व्यक्तिगत किस्मकी एक-दो बातें कहना पसन्द करूँगा। पहली बातका सम्बन्ध दक्षिण अफ्रिकामें मेरी स्थितिकी घोर विषमतासे है। मैं आपसे सच कहता हूँ, मुझे अपने जीवनमें पहले कभी भी इतनी कठिन और नाजुक परिस्थितिका सामना नहीं करना पड़ा था, और न मैंने अपने-आपको उत्तरदायित्वकी भावनासे कभी इतना दबा पाया था, जितना कि दक्षिण आफ्रिकामें बिताये गये चार हफ्तोंमें पाया।

दूसरी बातका सम्बन्ध मेरे प्रिय और प्रख्यात मित्र श्री गांधीसे है। मेरे केपमें उतरनेसे लेकर दक्षिण आफ्रिकासे प्रस्थान करने तक, बल्कि उसके बाद भी, जब मैं पूर्व आफ्रिकाकी यात्रापर था, श्री गांधी मेरे साथ रहे और हमने अपनी जागरणकी घड़ियोंका प्राय: एक-एक क्षण साथ ही बिताया। उन्होंने मेरे निजी सचिवके सारे दायित्व अपने ऊपर ले लिये थे; सच कहें तो वे मेरे 'पीर-बवर्ची' आदि सभी कुछ थे। जिस निष्ठापूर्ण स्नेहके रसमें उन्होंने मुझे सराबोर रखा, इस अवसरपर मैं उसके सम्बन्धमें नहीं बोलना चाहता। किन्तु वे दक्षिण आफ्रिकामें भारतके लिए जो महान् कार्य कर रहे हैं, उसके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए दो शब्द कह देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ; यद्यपि उनके कार्यको देखते हुए वह सर्वथा अपर्याप्त होगा।

त्याग-वीर

देवियो और सज्जनो, जो लोग आजके श्री गांधीके व्यक्तिगत सम्पर्कमें आये हों, केवल उन्हींको इस पुरुषके अद्भुत व्यक्तित्वका एहसास हो सकता है। निस्सन्देह, वे उस धातुके बने हुए हैं, जिस धातुसे सूरमा और बलिदानी लोगोंका निर्माण होता है। बल्कि इतना कहना भी कम ही होगा। उनमें वह अद्भुत आत्मिक शक्ति विद्यमान है, जो उनके इर्दगिर्दके लोगोंको भी सूरमा और बलिदानी बना देती है। यह बात कितनी अविश्वसनीय प्रतीत होती है कि अभी हालके ट्रान्सवाल सत्याग्रह संघर्षके दौरान वहाँ रहनेवाले हमारे सत्ताईस सौ देशवासी अपने देशके सम्मानकी रक्षा करनेके लिए श्री गांधीके नेतृत्वमें जेल गये। उनमें से कुछ तो अच्छी हैसियतवाले लोग थे और कुछ छोटे-छोटे व्यापारी, किन्तु खासी बड़ी संख्या निर्धन और असहाय लोगोंकी थी, जो फेरी लगाकर, मेहनत-मजदूरी या ऐसे ही कुछ काम करके दिन काटते हैं। उन्होंने कोई शिक्षा नहीं पाई है, और अपने देश-जैसी किसी चीजके सम्बन्धमें तो वे सोचने-बोलनेके आदी ही नहीं हैं। फिर भी, उन्होंने अपने देशके लिए अपमानजनक कानूनकी सत्ताको स्वीकार करनेके बजाय ट्रान्सवालके जेल-

जीवनकी विभीषिकाको सहर्ष झेला, और कइयोंने बार-बार। संघर्षके दौरान अनेक घर बरबाद हो गये, अनेक परिवार छिन्न-भिन्न हो गये। जो कभी धन-सम्पदावाले लोग थे, वे अपना सब-कुछ गँवाकर दरिद्र बन बैठे। स्त्रियों और बच्चोंको अकथनीय कष्ट सहने पड़े। किन्तु वे श्री गांधीकी आत्मशक्तिसे अभिभूत थे और इसीने उन्हें कुछ-से कुछ बनाकर इस बातका एक उदाहरण उपस्थित कर दिया कि मनुष्यकी आत्मिक शक्ति मानव-मस्तिष्कपर — बल्कि कह सकते हैं भौतिक परिवेशपर भी कैसा जबरदस्त प्रभाव डाल सकती है। अपने संपूर्ण जीवनमें मैं ऐसे केवल दो व्यक्तियोंको जानता हूँ, जिन्होंने मुझे श्री गांधीकी तरह आध्यात्मिक रूपसे प्रभावित किया है — और वे हैं हमारे महान वयोवृद्ध देश-भक्त श्री दादाभाई नौरोजी तथा मेरे स्वर्गीय गुरु श्री रानडे। ये ऐसे लोग हो गये हैं, जिनके सामने कोई अशोभनीय कार्य करते हुए न केवल हमें शर्म आती है, बल्कि जिनकी उपस्थितिमें मनमें भी कोई अशोभनीय बात लाते डर लगता है। दरअसल दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके पक्षको खड़ा ही किया है श्री गांधीने। वे सर्वथा निःस्वार्थ भावसे आज बीस वर्षोंसे इस देशके लिए अपनी लड़ाई लड़ते आ रहे हैं और इस बीच उन्होंने अपने दामनमें कोई दाग नहीं लगने दिया है। भारतपर उनका बड़ा ऋण और आभार है। उन्होंने इस उद्देश्यके लिए अपना सब-कुछ बलिदान कर दिया है। उनकी वकालत बड़े जोरसे चल रही थी; उससे उन्हें सालाना पांच छः हजार पौंड प्राप्त हो जाते थे। यह रकम दक्षिण आफ्रिकामें किसी भी वकीलके लिए बहुत अच्छी आय मानी जायगी। किन्तु, वे इस सबका परित्याग करके प्रति मास तीन पौंडपर गलियोंमें रहनेवाले सर्वथा विपन्न आदमीकी जिन्दगी बिता रहे हैं। उनके सम्बन्धमें एक उल्लेखनीय बात यह है कि यद्यपि वे निरंतर इस संघर्षमें लगे रहे हैं, फिर भी उनके मनमें यूरोपीयोंके प्रति किसी प्रकारका दुर्भाव नहीं है। और अपनी यात्राके दौरान मुझे किसी भी बातसे उतनी खुशी नहीं हुई, जितनी इस बातसे हुई कि दक्षिण आफ्रिकाका समस्त यूरोपीय समुदाय श्री गांधीको सम्मानकी दृष्टिसे देखता है। मैंने देखा कि ज्यों ही किसी सभामें प्रमुख यूरोपीयोंको मालूम होता कि श्री गांधी उसमें उपस्थित हैं, वे उनसे हाथ मिलानेके लिए तुरन्त उनके चारों ओर घिर आते। इस प्रकार यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता था कि यद्यपि यूरोपीय लोग उनके विरुद्ध लड़ रहे हैं और संघर्षमें उन्हें कुचल देनेके लिए पूरी तरह प्रयत्नशील हैं, किन्तु व्यक्तिके रूपमें वे उनका बड़ा आदर करते हैं। मेरे विचारसे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय पक्षके लिए श्री गांधीका नेतृत्व उसकी सबसे बड़ी निधि है। और यह मेरा असीम सौभाग्य था कि कठिन परिस्थितियोंसे मुझे सुरक्षित निकाल ले जानेके लिए मेरी पूरी यात्रामें वे मेरे साथ रहे।

परिस्थितिका विश्लेषण

दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी स्थितिके सम्बन्धमें बताते हुए श्री गोखलेने कहा कि दक्षिण आफ्रिका संघमें चार प्रान्त हैं — केप कालोनी, नेटाल, ट्रान्सवाल और ऑरेंजिया; और पूरे संघमें कोई डेढ़ लाख भारतीय रहते हैं। इनमें से मोटे तौरपर सवा लाख लोग नेटालमें रहते हैं, कोई बीस हजार केपमें और लगभग दस हजार ट्रान्सवालमें रहते हैं। ऑरेंजियामें शायद ही कुछ भारतीय हों। उनकी संख्या सौसे अधिक नहीं होगी। कारण यह है कि कुछ साल पहले तत्कालीन बोअर सरकारने घरेलू नौकरोंके रूपमें काम करनेवाले भारतीयोंके अतिरिक्त अन्य सभी भारतीयोंको वहाँसे जबरदस्ती निकाल दिया था। दक्षिण आफ्रिकाकी कुल भारतीय आबादीका अस्सी प्रतिशत हिस्सा गिरमिटिया मजदूरों, भूतपूर्व गिरमिटिया मजदूरों या उनके वंशजोंका है। शेष बीस प्रतिशतमें वे स्वतन्त्र लोग हैं, जो गिरमिटिया मजदूरोंके साथ-साथ वहाँ गये थे। इस परिस्थितिकी यह विशेषता आप लोगोंको समझनी है कि दक्षिण आफ्रिकाके बीच यहाँकी तरह कोई शिक्षित वर्ग नहीं है। जिन्हें हम शिक्षा-साध्य या सुसंस्कृत पेशा कहते हैं, उन पेशोंमें लगे हुए लोगोंकी संख्या उँगलियोंपर गिनने लायक है। अधिकांश लोग या तो व्यापारी हैं अथवा मजदूर अथवा घरेलू नौकर। व्यापारियोंमें भी बहुलता टुटपुँजिए व्यापारियोंकी ही है, यद्यपि कुछकी

हैसियत अच्छी-खासी है। मोटे तौरपर हम कह सकते हैं कि उपर्युक्त तीनों प्रान्तोंमें कोई दो हजार व्यापारी हैं और पाँच-छः हजार फेरीवाले। मजदूरोंमें से अधिकांश अब भी गिरमिटके अधीन काम कर रहे हैं, जब कि शेष लोग या तो भूतपूर्व गिरमिटिया हैं या उनके वंशज। केपमें भारतीयोंको नगर-पालिका मताधिकार भी प्राप्त हो सकता है और राजनीतिक मताधिकार भी। नेटालमें उन्हें नगरपालिका मताधिकार तो प्राप्त है, किन्तु राजनीतिक मताधिकार नहीं, और दोनों डच प्रान्तोंमें उन्हें बड़ी सख्तीके साथ नगरपालिकाके चुनावमें और अन्य राजनीतिक चुनावोंमें मताधिकारसे वंचित रखा गया है। अबतक अलग-अलग प्रान्तोंके लिए अलग-अलग प्रवासी कानूनोंकी व्यवस्था है। केप और नेटालमें भारतीय किसी यूरोपीय भाषामें एक परीक्षा पास करके ही प्रवेश कर सकते हैं। पिछले कुछ वर्षोंसे दोनों प्रान्तोंको मिलाकर इस तरह प्रवेश करनेवालोंकी संख्या औसतन ४० से ५० के बीच ही रही है। यह संख्या वास्तवमें इतनी कम है कि आश्चर्य होता है। ट्रान्सवाल और ऑरेंजियामें नये भारतीयोंके प्रवेशपर फिलहाल पूरी रोक लगी हुई है। केप कालोनी और नेटालमें व्यापारियों तथा फेरीवालोंको अपने परवाने हर साल बदलवाने पड़ते हैं। नये परवाने देना-न-देना स्थानीय अधिकारियोंकी इच्छापर निर्भर है, जो लगभग सारेके-सारे भारतीय व्यापारियोंसे व्यापारिक प्रतिद्वंद्विता रखनेवाले यूरोपीय लोगोंमें से चुने जाते हैं। दूसरी ओर, ट्रान्सवालमें नियमानुसार तो परवाना-शुल्क देने-भरसे परवाने जारी कर देने पड़ते हैं। किन्तु, वहाँ स्वर्ण-कानून और कस्बा-अधिनियम नामसे दो ऐसे कानून लागू हैं, जिनका सम्मिलित प्रभाव इन परवानोंको बेकार बना देता है। इन कानूनोंके अन्तर्गत जहाँ कहीं भी किसी क्षेत्रको स्वर्ण-क्षेत्र घोषित किया जाता है, वहाँ भारतीय विशेष बस्तियोंमें ही रह या व्यापार कर सकते हैं, और ये बस्तियाँ आमतौरपर नगरोंसे कुछ दूर ही हुआ करती हैं। केप कालोनी और नेटालमें भारतीय भूसम्पत्ति रख सकते हैं या अन्य अचल सम्पत्ति प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु ट्रान्सवाल और ऑरेंजियामें उन्हें यह अधिकार उपलब्ध नहीं है। इनके अतिरिक्त अनेक अन्य छोटी-छोटी निर्योग्यताएँ भी हैं, जिनमें विभिन्न प्रान्तोंमें लागू कम-ज्यादा सख्त ढंगकी क्षोभकारी सामाजिक निर्योग्यताएँ भी शामिल हैं। और अन्तमें यह कि भारतीय बच्चोंकी शिक्षाके लिए लगभग कोई व्यवस्था नहीं है। यत्र-तत्र कुछ प्राथमिक विद्यालय देखनेको मिलते हैं, जिन्हें मुख्यतः मिशनरी संस्थाएँ या स्वयं भारतीय समाज चलाता है। लेकिन, पूरे दक्षिण आफ्रिकामें उनके लिए किसी प्रकारकी माध्यमिक अथवा उच्चतर या तकनीकी शिक्षाकी कोई व्यवस्था नहीं है।

एक हृदय-विदारक परिस्थिति

वक्ताने कहा कि दक्षिण आफ्रिका पहुँचकर भारतीयोंकी स्थितिका मोटे तौरपर निरीक्षण करनेके बाद एक बार तो, मुझे मानना पड़ेगा, मेरा हृदय बैठ गया। स्थिति अनेक प्रकारसे सचमुच दयनीय और हृदय-विदारक थी। यह तो सर्वविदित था कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी दशा बोअर गणतन्त्रके समयमें भी बहुत बुरी थी, और उसके ब्रिटिश साम्राज्यमें मिलाये जानेके बादसे वह और भी बिगड़ती चली गई। किन्तु, यह बात बहुत कम लोग जानते थे कि संघ-सरकारके निर्माणके बादसे ट्रान्सवालकी कठोर भारतीय-विरोधी भावनासे धीरे-धीरे सारा संघ विषाक्त होता चला गया है और परिणामतः केपमें ही नहीं, बल्कि नेटालमें भी भारतीयोंकी स्थिति बदसे-बदतर होती रही है। वहाँ पहुँचनेपर मैंने देखा कि सारे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय समाजका प्रत्येक वर्ग अपने भविष्यके सम्बन्धमें एक गम्भीर आशंकासे भरा हुआ है, और उनके बीच सामान्य रूपसे अरक्षा, तबाही और उत्पीड़नकी एक ऐसी भावना फैली हुई है, जो निश्चय ही किसी भी समाजके नैतिक बलको तोड़ देगी। यूरोपीय आबादीका एक बहुत बड़ा हिस्सा स्पष्टतः वहाँ भारतीयोंके लिए वस्तुस्थितिको इतना असह्य बना देनेपर तुला हुआ है कि वे अपने-आप उस देशको छोड़कर चले जायें। बात इतनी ही नहीं है कि उनपर लागू कुछ कानून बहुत कठोर और अन्यायपूर्ण हैं। जो कानून अपने-आपमें कठोर अथवा अन्यायपूर्ण नहीं हैं, उनके अमलमें भी इतनी सख्ती बरती जाती है कि समाजको लगभग हताश होकर रह जाना पड़ता है। उदाहरणके लिए, नेटाल और केपमें

पुराने भारतीय निवासियोंसे सम्बन्धित प्रवासी कानूनका प्रयोग इस ढंगसे किया जा रहा है कि हर आदमी इस आशंकासे भर उठता है कि यदि उसने भारत अथवा किसी अन्य स्थानकी यात्रा करनेके लिए अस्थायी रूपसे भी इस देशको छोड़ा तो उसके लिए वापस लौट पाना कठिन हो जायेगा। जिस समय मैं केप टाउन पहुँचा उसी समय वहाँ एक ऐसा मामला घटित हुआ, जिससे मेरे कथनकी पुष्टि हो जाती है। इस समय स्थिति यह है कि यदि उस प्रान्तका कोई भारतीय निवासी वहाँसे अस्थायी रूपसे बाहर जाना चाहता हो तो उसे साथमें एक अनुमतिपत्र लेकर जाना पड़ता है, जिसमें उसके लौटनेकी अवधि निर्धारित कर दी जाती है। एक ऐसा ही भारतीय व्यापारी एक वर्षकी अवधिका अनुमति पत्र लेकर भारत-यात्रापर आया था और अपना कारोबार उसने अपनी पत्नी और बच्चोंके हाथों सौंप दिया था। किन्तु उसे वापस लौटनेमें एक दिनकी देर हो गई। देरी इसलिए हो गई कि जहाजको तूफानकी वजहसे मार्गमें चार दिनों तक रुक जाना पड़ा था। यदि जहाज समयानुसूचीके अनुसार चलता तो वह अपने अनुमतिपत्रकी अवधि समाप्त होनेसे तीन दिन पहले ही केप टाउन पहुँच गया होता। लेकिन, फिर भी उसे इस कानूनी मुद्देके आधारपर वापस भेज दिया गया कि वह निर्धारित समयके भीतर नहीं लौटा। इस तरह उसका कारोबार बरबाद हो गया और उसकी पत्नी और बच्चोंको लाचार होकर देश छोड़ना पड़ा। इसी तरह नेटालके पुराने बाशिन्दोंको अधिवासके, प्रमाणपत्र दिये जाते हैं, और ऐसा माना जाता है कि इन प्रमाणपत्रोंकी रूसे उन्हें देशसे बाहर जाने और जब चाहे वापस आ जानेका अधिकार प्राप्त हो जाता है। इसमें शर्त सिर्फ इतनी है कि प्रवासी अधिकारीको इन प्रमाण-पत्रोंकी प्रामाणिकताके सम्बन्धमें भरोसा हो जाना चाहिए। किन्तु, दरअसल इस सत्ताका उपयोग आज नेटालसे अस्थायी रूपसे बाहर रहनेके बाद वहाँ लौटनेवाले ऐसे लोगोंसे जवाब-तलब करनेके लिए किया जा रहा है, जिनके प्रमाणपत्र पन्द्रह-पन्द्रह या सोलह-सोलह वर्ष पुराने हैं। ये कहाँ रहते थे, पहले-पहल यहाँ आनेपर वे क्या करते थे, और इसी तरहकी अन्य अनेक बातोंके सम्बन्धमें उनसे बारीकसे-बारीक तफसील माँगी जाती है। और यदि बिना कुछ सोचे-विचारे अचानक दिये गये इन उत्तरों और उनके कागजातमें अंकित तथ्योंके बीच कोई अन्तर हुआ तो यह इन प्रमाणपत्रोंको अस्वीकार कर देने और उनके मालिकोंको सर्वथा बरबाद होकर भारत लौटनेको मजबूर कर देनेका पर्याप्त कारण माना जाता है। अब मैं मंचपर उपस्थित यूरोपीय मित्रोंसे कहूँगा कि यदि आपसे अचानक इस सम्बन्धमें तरह-तरहके सवाल पूछ लिये जायें कि जब आप इस देशमें पहले-पहल आये थे तब कहाँ रहते थे, क्या करते थे, इत्यादि, तो आपमें से कितने लोग बिना कोई गलती किये ऐसे प्रश्नोंके उत्तर दे पायेंगे? फिर, सारी केप कालोनी और नेटालमें व्यापारिक तथा फेरी-संबन्धी परवानोंका सवाल उपस्थित है, जिससे भारतीयोंके मनमें बड़ी उथल-पुथल मची हुई है। दोनों प्रान्तोंमें अब स्पष्ट रूपसे यह नीति प्रारम्भ कर दी गई है कि भारतीयोंको जहाँतक हो सके, नये परवाने न दिये जायें और जैसे-जैसे अवसर मिलता जाये, उनके पुराने परवानोंको भी समाप्त कर दिया जाये। चूँकि इन परवानोंको हर साल बदलवाना पड़ता है, इसलिए हर भारतीय व्यापारीका मन इस सम्बन्धमें अतिशय अनिश्चितताकी भावनासे भरा रहता है कि जब उसके परवानेके बदले जानेका समय आयेगा तब कहा नहीं जा सकता क्या होगा। बम्बईका व्यवसायी समाज इस बातको आसानीसे समझ सकता है कि ऐसी वस्तु-स्थितिके परिणाम कितने विनाशकारी होंगे और भविष्यके सम्बन्धमें निरन्तर चिन्तित रहनेसे सम्बन्धित व्यक्तियोंके कारोबार किस प्रकार ठप होकर अन्तमें वे बरबाद हो जायेंगे। ट्रान्सवालमें तो स्वर्ण क्षेत्रका अनवरत विस्तार, जिसके परिणामस्वरूप भारतीय व्यापारियोंको केवल बस्तियोंमें रहने और व्यापार करनेको बाध्य होना पड़ता है, अपने-आपमें एक भयंकर मुसीबत है।

क्रूर अत्याचार

किन्तु, स्थानीय अधिकारी इस क्रूर अत्याचारकी नीतिको और भी आगे बढ़ा रहे हैं। वे जिस पुरानी बस्तीमें भी भारतीयोंको अपना कारोबार सफलतापूर्वक चलाते देखते हैं, उसे तोड़कर उन्हें ऐसी

नई बस्तियोंमें जानेको मजबूर कर देते हैं जो व्यापारिक दृष्टिसे और भी अनुपयुक्त स्थानोंमें स्थित होती हैं। मैंने स्वयं ऐसी अनेक बस्तियोंका निरीक्षण किया, और उसके आधारपर मैं केवल यही कह सकता हूँ कि उनसे सम्बन्धित सारी नीति तीव्रतम भर्त्सनाके योग्य है। इस प्रकार आप लोग देख सकते हैं कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय व्यापारियोंका मन कितना अधिक अशान्त और चिन्ताग्रस्त है। श्रमिक वर्गको अन्य निर्योग्यताएँ तो झेलनी पड़ती ही हैं, उन लोगोंकी अपनी एक खास मुसीबत भी है — ३ पौंडी परवाना-कर; इसके कारण उन्हें अकथनीय कष्ट सहने पड़ते हैं। मैं निःसंकोच होकर कह सकता हूँ कि इससे अधिक क्रूरतापूर्ण करकी कल्पना नहीं की जा सकती। इसके अन्तर्गत १९०१ के बाद अपनी गिरमिटकी अवधि पूरी करनेवाले सभी गिरमिटिया भारतीयों और उनकी सन्तानोंको ३ पौंडका वार्षिक कर देना पड़ता है, और इस वर्गके १६ सालसे अधिक उम्रके सभी पुरुष और १३ सालसे अधिक उम्रकी सभी स्त्रियाँ इस करकी देनदार हैं। कर नहीं देनेपर उन्हें सख्त कैदकी सजा दी जाती है। किसी भी कानूनके अन्तर्गत एक १३ सालकी लड़कीको प्रतिवर्ष ३ पौंडका कर राज्यको देना पड़े और न देनेपर उसे सपरिश्रम कारावासकी सजा भोगनी पड़े, इस कल्पना-मात्रसे भय लगता है। यदि आप किसी साधारण-से परिवारकी बात लें, जिसमें माता-पिताके अलावा १३ और १५ सालकी दो लड़कियाँ हों और दो छोटे बच्चे, तो आप पायेंगे कि उस परिवारको सिर्फ नेटाल उपनिवेशमें रहने-भरकी अनुमतिके लिए प्रतिवर्ष १२ पौंड चुकाना पड़ता है — और सो भी तब, जब उस पुरुष और स्त्रीने गिरमिट प्रथाके अन्तर्गत उस उपनिवेशकी समृद्धिके लिए पाँच साल तक श्रम किया है। अब हम उस पुरुषका माहवारी पारिश्रमिक लगभग २५ शिलिंग मान सकते हैं और वह स्त्री अपनी दो लड़कियोंके साथ, घरका काम-काज देखनेके बाद, कुल मिलाकर प्रतिमास कोई १६ शिलिंग कमा सकती हैं। तो उस परिवारकी कुल मासिक आय २ पौंडकी हुई।

उसमें से १ पौंड, यानी आधी रकम तो इस घृणित परवाना-करके लिए दे देनी है। और उसके बाद उन्हें मकान-भाड़ा देना है, भोजन-वस्त्रका प्रबन्ध करना है और समाजपर सामान्य रूपसे लगे अन्य करोंका भुगतान करना है। फिर क्या आश्चर्य, यदि दो वर्ष पूर्व नेटाल विधान-मण्डलके एक प्रमुख सदस्यने खुले आम कहा कि इस करने कितने ही परिवारोंको छिन्न-भिन्न कर दिया है, कितने ही पुरुषोंको जरायमपेशा बना दिया और कितनी ही स्त्रियोंको लज्जाजनक जीवन बितानेपर मजबूर कर दिया है। वहाँ मुझे जो हृदय-द्रावक दृश्य देखने पड़े उनमें से एक था डर्बनमें आयोजित उन लोगोंकी सभा, जिन्हें ३ पौंडी कर देना होता था। सभामें कोई ५,००० लोग उपस्थित थे। जब एकके बाद एक पुरुष और स्त्रीने आ-आकर इस करके कारण होनेवाले अपने कष्टोंकी कहानी सुनानी शुरू की तो मेरा मन एक साथ घृणा, दया और दुःखके भावोंसे भर उठा। वहाँ मैं एक ६५ सालकी वृद्धासे मिला, जिसे यह कर न दे सकनेके कारण छः बार जेल जाना पड़ा था। आज इतने दिन बाद भी मैं उसका स्मरण करके विचलित हो उठता हूँ। इस परिस्थितिमें यदि शीघ्र ही कोई काफी सन्तोषजनक समाधान नहीं निकल आता तो दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजको बहुत कष्ट और हानियाँ सहनी पड़ेंगी और कुछ ही वर्षोंमें उसे तबाह होकर उस देशको छोड़ ही देना पड़ेगा।

यूरोपीय समाजकी स्थिति

तो भारतीय समाजकी यह स्थिति मैंने देखी। अब मैं आपके सामने यूरोपीय समाजकी स्थितिका वर्णन करना चाहता हूँ। उसकी स्थितिको भी ठीकसे समझना आवश्यक है। हमें उसके हितों, उसकी कठिनाइयों, उसके दृष्टिकोण, बल्कि उसके पूर्वग्रहोंकी भी सही जानकारी होनी चाहिए। इन मुट्ठी-भर लोगोंको — जिनकी संख्या यही कोई साढ़े बारह लाख होगी — एक विशाल वतनी आबादीके बीच रहना पड़ता है, जिसकी सभ्यताका स्तर इनकी सभ्यतासे सर्वथा भिन्न है। इन दोनों प्रजातियोंके

सम्पर्कसे पहले ही अनेक गम्भीर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं नैतिक समस्याएँ उठ खड़ी हुई हैं, जिनके कारण उस उपमहाद्वीपके यूरोपीयोंका मन उद्विग्न, आशंकित, बल्कि कह सकते हैं, भयभीत है। और वे अपनी इस कठिनाई और उलझी हुई परिस्थितिके बीच दक्षिण आफ्रिकाके जीवनमें एक तीसरे तत्त्वको आते हुए देख रहे हैं, जो एक भिन्न प्रकारकी सभ्यतामें पले हैं और एक दूसरे ढंगकी जीवन-प्रणाली तथा विचार-पद्धतिका प्रतिनिधित्व करते हैं। यह ठीक है कि इस समय दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी आबादी १२½ लाख यूरोपीयोंके मुकाबले केवल डेढ़ लाख हैं। किन्तु, यूरोपीयोंको लगता है कि भारतमें तो ३० करोड़ लोग रहते हैं और यदि भारतीय निर्बाध रूपसे दक्षिण आफ्रिका आते रहे तो कोई कारण नहीं कि लाखों भारतीय यहाँ आकर यूरोपीय आबादीपर छा नहीं जायेंगे और इस देशको लगभग दूसरा भारत ही नहीं बना डालेंगे। यह भय है तो बिल्कुल दुराशंकाओंपर ही आधारित किन्तु इसकी जड़ें बहुत गहरी, मजबूत और व्यापक हैं, और इसकी ओरसे आँखें बन्द कर लेनेसे कोई लाभ नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त, एक बात यह है कि वहाँ चमड़ीके रंगको लेकर बड़ा जबरदस्त पूर्वग्रह फैला हुआ है, और इस पूर्वग्रहको डच लोग अंग्रेजोंसे भी अधिक तीव्रतासे महसूस करते हैं; इसके सिवा छोटे यूरोपीय व्यापारी भारतीय स्पर्धाके भयसे आतंकित हैं। उन्हें लगता है कि भारतीयोंके अपेक्षाकृत कम खर्चीले जीवन-स्तरके कारण वे खुली होड़में उनके विरुद्ध टिक नहीं सकते। इन सारे कारणोंका सम्मिलित परिणाम है भारतीयोंके विरुद्ध अपनाई गई आजकी कठोर और दमनकारी नीति। इस नीतिका स्पष्ट उद्देश्य भारतीयोंके जीवनको इतना दूभर बना देना है कि लगभग बाध्य होकर उन्हें वह देश छोड़ देना पड़े, या यदि वे वहाँ रहें ही तो एक हेय, तिरस्कृत और दलित समाजके सदस्योंके रूपमें रहें।

एक गम्भीर परिस्थिति

तो ऐसी गम्भीर, चिन्ताजनक और अत्यन्त कठिन वहाँकी स्थिति है। जबतक दक्षिण आफ्रिकाके यूरोपीयोंका मन इस भयसे ग्रस्त है कि भारतीय जबर्दस्त संख्यामें यहाँ आकर यूरोपीयोंपर छा जायेंगे, तबतक हमारे देशभाइयोंके लिए पूर्ण समानताकी बात तो छोड़िए — इतना भी न्यायपूर्ण और मानवीय व्यवहार प्राप्त करनेकी कोई सम्भावना नहीं है कि वे चैनसे रहते हुए धीरे-धीरे एक स्वशासित समाजके योग्य स्थान प्राप्त करनेकी दिशामें प्रगति कर सकें। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके अच्छेसे-अच्छे यूरोपीय मित्र भी — जिन्हें भारतीयोंका मित्र कहा जा सकता है, ऐसे बहुत थोड़े यूरोपीय हैं — मानते हैं कि जबतक यूरोपीयोंके मनको इस प्रकार उनपर छा जानेके भयसे मुक्त नहीं कर दिया जाता तबतक वे भारतीय समाजके प्रति अधिक न्यायपूर्ण और मानवीय व्यवहारकी दलीलको पेश करके यूरोपीयोंपर कोई विशेष प्रभाव नहीं डाल सकते। एक दूसरा और इससे काफी बड़ा वर्ग ऐसे यूरोपीयोंका है जिनमें न्यायकी भावना शेष है और वे भारतीयोंके प्रति अपनाई गई वर्तमान नीतिपर हार्दिक लज्जाका अनुभव करते हैं। भारतीय अपने प्रति होनेवाले वर्तमान व्यवहारके विरुद्ध जो संघर्ष चला रहे हैं, यह वर्ग भी यूरोपीयोंके मनसे यह भय दूर हो जानेपर उससे सहानुभूति रखनेको तैयार है — लेकिन यह भय दूर हो जानेके बाद ही, उससे पहले नहीं। स्वयं दक्षिण आफ्रिकाका भारतीय समाज भी स्पष्टतः उस भयको दूर करनेकी आवश्यकता महसूस करता है, हालाँ कि वह भय न्यूनाधिक निराधार ही है। यह बात इस तथ्यसे स्पष्ट हो जाती है कि पिछले कुछ वर्षोंसे उस उपनिवेशमें जानेवाले मुक्त भारतीय प्रवासियोंकी संख्या ४० से ५० के बीच ही रही है — यद्यपि वहाँके आम यूरोपीय लोग इस संख्याको सही नहीं मानते और न उन्हें यह समझाया ही जा सकता कि यह संख्या सही है। इसलिए कुछ समयसे श्री गांधीके नेतृत्वमें हमारे दक्षिण आफ्रिकी देशभाई इस नीतिका अनुसरण कर रहे हैं कि उस देशके कानूनमें साम्राज्यके समानताके हकदार प्रजाजनोंके रूपमें अपने सैद्धांतिक अधिकारोंकी अक्षुण्णतापर आग्रह

रखते हुए, अन्याय और अत्याचारकी वर्तमान नीतिमें व्यवहारतः ऐसे सुधार करवानेका प्रयत्न किया जाये जिससे समाज सुख-शांतिसे जीवन बिताते हुए फूले-फले और धीरे-धीरे उसकी प्रतिष्ठा और महत्त्वमें वृद्धि हो; और जो एक बार थोड़ेसे-थोड़े समयके लिए भी दक्षिण आफ्रिका हो आयेगा, वह इस बातको अच्छी तरह समझ जायेगा कि वर्तमान परिस्थितियोंमें भारतीयोंके अनुसरण करने योग्य यही एकमात्र बुद्धिमत्तापूर्ण, ठोस, व्यावहारिक और राजनयिकोचित नीति है। पिछले साल श्री गांधी और जनरल स्मट्सके बीच हुए जिस समझौतेके अन्तर्गत सत्याग्रह संघर्ष स्थगित कर दिया गया, उसमें इसी नीतिके अनुसार संघ-सरकार इस बातसे सहमत हो गई कि प्रस्तावित नये प्रवासी कानूनमें वह भारतीयोंके विरुद्ध कोई कानूनी भेद-भाव नहीं करेगी। उधर श्री गांधीने अपनी ओरसे यह स्वीकार किया कि प्रशासन व्यवहारमें कानूनको अमलमें लानेवाली कार्यपालिकामें निहित विवेकाधिकारका जैसा उचित समझे वैसा उपयोग करे, बशर्ते कि प्रतिवर्ष एक न्यूनतम संख्यामें ऐसे भारतीयोंको आने दिया जाये, जिनका आना समाजकी विशिष्ट आवश्यकताओं और विभिन्न क्षेत्रोंमें होते रहनेवाली इस ढंगकी कमियोंको पूरा करनेके लिए जरूरी है। और ट्रान्सवालके लिए, जहाँ वर्तमान कानूनके अन्तर्गत एक भी भारतीयको प्रवेश नहीं दिया जाता, यह न्यूनतम संख्या छः है। संपूर्ण संघके लिए चालीसकी न्यूनतम संख्याकी माँग की जा रही है, और पिछले सात सालसे इतने ही स्वतंत्र भारतीय प्रवासी औसतन प्रतिवर्ष प्रवेश करते रहे हैं। समझौतेका सार यह है कि कानूनी असमानताको दूर करके साम्राज्यके प्रजाजनोंके रूपमें भारतीयोंके सैद्धांतिक अधिकारोंको भी कायम रखा जाये, और नये प्रवासियोंकी संख्याको मौजूदा औसतके आधारपर सीमित करके यूरोपीयोंके मनको भी भारतीयोंके अन्धाधुन्ध प्रवेशके भयसे मुक्त कर दिया जाये। एक बार यह सब हो जानेके बाद वहाँके भारतीय अन्य बातोंमें अधिक न्यायपूर्ण, मानवीय और समान व्यवहारके लिए ज्यादा कारगर ढंगसे संघर्ष कर सकेंगे। मैंने भी दक्षिण आफ्रिकामें जो-कुछ किया, इसी विचारसे किया। वहाँका भारतीय समाज जो कुछ माँग कर रहा है, मैंने उससे तनिक भी कम या अधिक नहीं माँगा। मुझे एक सुविधा यह थी कि यूरोपीय समुदायके लोगोंसे मिलने-जुलनेका जैसा अवसर मुझे प्रदान किया गया वैसा पहले किसी भारतीयको नहीं मिला था। इस प्रकार मैं यूरोपीय समुदायके लोगोंके आमने-सामने खड़ा होकर, न्याय और मानवताके लिए अपनी पुकार प्रत्येक हृदय, प्रत्येक अन्तरात्मा तक पहुँचा सका।

'खुले दरवाजे' की नीति

श्री गोखलेने कहा — किन्तु कल भारत लौटनेपर कुछ क्षेत्रोंमें व्यक्त किये गये इस विचारको सुनकर मैं आश्चर्यचकित रह गया कि दक्षिण आफ्रिकामें मैंने जो नीति अपनाई थी, वह गलत थी। उनके विचारसे मुझे वहाँ मुक्त प्रवेशसे कम किसी बातकी माँग नहीं करनी चाहिये थी। उनका कहना है कि इस सम्बन्धमें श्री गांधीने भारतके अधिकारोंका परित्याग कर दिया है; और मैंने उस परित्यागकी पुष्टि कर दी। इस विषयमें मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि आलोचकोंने दक्षिण आफ्रिकाकी समस्याकी कोई सही समझका परिचय नहीं दिया है। वहाँके भारतीय समाजकी मुख्य समस्या अधिकाधिक भारतीयोंको प्रवेश दिलानेके लिए खुले दरवाजेकी नीतिपर आग्रह करना नहीं है। उसकी मुख्य समस्या तो यह है कि किस प्रकार, आज वह जिस स्थितिमें रह रहा है, उसमें ऐसे सुधार कराये जायें जिससे उसका जीवन अधिक सह्य हो सके और उसे एक स्वशासित समाजके महत्त्वपूर्ण अंगके रूपमें विकसित होनेके सुअवसर प्राप्त हों। इसे प्राप्त करनेका एकमात्र उपाय यही है कि वे सम्पूर्ण प्रश्नके प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण रखें। मैं बहुत आसानीसे दक्षिण आफ्रिकामें व्यवहारतः खुले दरवाजेकी नीतिकी माँग कर सकता था। मैं उसके सम्बन्धमें जोशीले भाषण दे सकता था और फिर अपने मनमें इस बातकी खुशी लेकर स्वदेश लौट आ सकता था कि मैंने जोशीले भाषण दिये। किन्तु, उससे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके पक्षको कोई बल नहीं मिल सकता था। यूरोपीय समाजपर भी इसका यही प्रभाव होता कि वे भारतीयोंसे

किसी भी कीमतपर छुटकारा पानेके लिए और भी कृत-संकल्प हो जाते और परिणाम होता उस उपमहाद्वीपसे अन्ततः भारतीयोंको निकाल देनेकी प्रक्रियाको बढ़ावा देना। जहाँतक श्री गांधीके विरुद्ध आरोपका सम्बन्ध है, वह वास्तविक तथ्योंके साथ उपहास करना है। आखिर साम्राज्यमें समान व्यवहारके हमारे अधिकार आज मुख्यतः सैद्धान्तिक ही तो हैं। लेकिन उन्हें सैद्धान्तिक रूपमें भी अक्षुण्ण बनाये रखनेके लिए श्री गांधी चार बार जेल गये और उन्होंने अपने सैकड़ों देशभाइयोंको भी ऐसा करनेके लिए प्रेरित किया। इसमें सन्देह नहीं कि ये सैद्धान्तिक अधिकार धीरे-धीरे ऐसे अधिकारोंके रूपमें परिवर्तित हो जायेंगे, जिनका हम सचमुच व्यवहारमें उपभोग करने लगेंगे; किन्तु यह तो धीरे-धीरे ही होगा और यह बहुत-कुछ इस बातपर निर्भर करता है कि स्वयं भारतमें हमारी स्थिति कितनी-क्या सुधर पाती है।

मौजूदा आसार

उपसंहारमें श्री गोखलेने कहा: देवियो और सज्जनो, इससे पहले कि मैं बैठूँ, आप पूछ सकते हैं कि इस समय दक्षिण आफ्रिकामें क्या आसार नजर आते हैं। तो सुनिए। दक्षिण आफ्रिकामें हमारी शिकायतोंकी सूची इतनी लम्बी है जैसा कि हमारी मुलाकातके दौरान जनरल बोथाने कहा था, कि आज दक्षिण आफ्रिकामें शक्तिशालीसे-शक्तिशाली जिस मन्त्रिमण्डलकी कल्पना की जा सकती है, उसमें भी उन सारी शिकायतोंको एकाएक दूर कर सकनेकी शक्ति नहीं है, और यदि उसने ऐसा कोई प्रयास किया तो उससे तुरन्त सता छीन ली जायेगी। परिस्थिति ऐसी है कि यद्यपि हमें निरन्तर संघर्ष करते रहना चाहिए; और फलके रूपमें इससे अधिककी अपेक्षा नहीं करनी चाहिए कि धीरे-धीरे, किन्तु निश्चय ही, हमारी दशामें सुधार होता जायेगा। लेकिन, मेरा खयाल है, कुछ बातोंमें तो शीघ्र ही राहत मिलेगी। मुझे पूरी आशा है श्री गांधी और जनरल स्मट्सके बीच सत्याग्रह आन्दोलनसे सम्बन्धित जिस अस्थायी समझौतेको सरकार संसदके पिछले अधिवेशनमें पास करानेमें असमर्थ रही थी, उसे वह इस साल पास करा लेगी। मेरा खयाल है, प्रवासी कानूनके अमलमें भी शीघ्र ही अधिक नरमी और लिहाज बरता जाने लगेगा। इसके सिवा मुझे पूरी आशा है कि इस वर्ष क्षोभकारी तीन पौंडी परवाना-कर भी उठा दिया जायेगा। यों तो मन्त्रियोंने मुझे यह कहनेका अधिकार दे दिया है कि वे इस शिकायतको यथासम्भव शीघ्रसे-शीघ्र दूर करनेके लिए भर-सक कुछ उठा नहीं रखेंगे। शिक्षाके क्षेत्रमें भी स्थितिके काफी सुधरनेकी सम्भावना है, और स्वर्ण-कानून तथा कस्बा-अधिनियम-जैसे कानूनोंका प्रशासन उत्तरोत्तर कम कष्टप्रद होता जायेगा। किन्तु, मुझे भय है कि एक बातमें स्थितिमें जल्दी कोई सुधार नहीं होगा, और सम्भव है, सुधरनेसे पहले एक बार यह स्थिति और भी बिगड़ जाये। मेरा मतलब व्यापारिक परवानोंकी बातसे है। किन्तु, इस मोर्चेपर हमारा समाज केवल न्यूनतम न्यायके लिए लड़ रहा है। और इस लड़ाईमें उसे न केवल भारत-सरकार और साम्राज्य-सरकारकी सहानुभूतिका बल प्राप्त है, बल्कि दक्षिण आफ्रिकाके यूरोपीय समाजके अपेक्षाकृत अधिक विवेकशील लोगोंकी हमदर्दी भी उसके साथ है। यदि हम यहाँ, स्वदेशमें अपने कर्तव्यका भली-भाँति पालन करें तो वहाँ इस संघर्षमें हमारे भाई अवश्य विजयी होंगे। मैं इस विषयकी थोड़ी चर्चा करके अपना भाषण समाप्त करूँगा। देवियो और सज्जनो, मेरा यह दृढ़ मत है — और इंग्लैंड तथा दक्षिण आफ्रिकामें भी हमारे पक्षसे सहानुभूति रखनेवाले बहुतसे लोग यही मानते हैं — कि अबतक भारतने समुद्र-पारके अपने उन सपूतोंके प्रति अपने कर्तव्यका पालन नहीं किया है, जो इसके सम्मानकी रक्षाके लिए असाधारण कठिनाइयोंके बीच संघर्ष कर रहे हैं। यह सच है कि हममें से एक व्यक्ति — मेरे मित्र श्री रतन टाटाने एक महान् और शानदार उदाहरण पेश किया है, और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि दक्षिण आफ्रिकाका भारतीय समाज उन्हें अत्यन्त स्नेह और कृतज्ञताके भावसे देखता है। मद्रासकी एक समितिने भी कुछ काम किया। और यहाँकी समितिने भी कुछ चन्दा जमा किया है, किन्तु इस समस्यासे जो बड़े-बड़े प्रश्न जुड़े हुए हैं, उन्हें देखते हुए यह सभी बहुत थोड़ा है। फिर भी, मुझे आशा है कि अतीतमें हमने कितनी भी लापरवाही क्यों न दिखाई हो, अब हम इस दिशामें अधिक जागरूकतासे

काम लेंगे। मैं आशा करता हूँ कि भविष्यमें दक्षिण आफ्रिकामें जो-कुछ होगा, उसमें हम अधिक दिलचस्पी लेंगे, और वहाँके घटनाक्रमपर अधिक सतर्कतासे निगाह रखेंगे, ताकि हमारे दक्षिण आफ्रिकी देशभाइयोंको यह अनुभूति हो सके कि हम एक होकर दृढ़तापूर्वक उनके साथ डटे हुए हैं। मैं यह आशा भी करता हूँ कि हम पहलेसे काफी अधिक धन एकत्र करके उन्हें भेजेंगे। याद रखिए कि इस लम्बे संघर्षके कारण आर्थिक तथा अन्य दृष्टियोंसे भी वहाँके भारतीय समाजकी शक्ति निश्शेष हो चुकी है। यह भी याद रखिए कि सहायताकी आवश्यकता इस अत्यन्त असाधारण संघर्षको चलानेके लिए ही नहीं है, बल्कि भारतीय समाजके बच्चोंके नैतिक तथा भौतिक उत्कर्षके लिए शैक्षणिक तथा अन्य सुविधाएँ प्रदान करनेके लिए भी है। और अन्तमें याद रखिए यह कि उक्त संघर्ष मात्र दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजके हितोंसे ही नहीं, साम्राज्यमें एक राष्ट्रकी हैसियतसे हमारे पूरे भविष्यसे सम्बद्ध है। अतः हम इस बातमें अपने कर्त्तव्यका जिस हद तक निर्वाह करेंगे, उसी हद तक हम इस साम्राज्यमें एक सभ्य समाजके आत्मसम्मानके उपयुक्त पदकी ओर प्रगति करेंगे। और हम जिस अनुपातमें इस कर्त्तव्यको निभायेंगे, उसी अनुपातमें अपने देशके आशीर्वाद और अपनी भावी सन्ततिकी कृतज्ञताके पात्र होंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-१-१९१३ और १-२-१९१३

परिशिष्ट २४

सिल्बर्न और एफ० सी० हॉलैंडरको गोखलेका उत्तर

(क)

११ नवम्बर, १९१२ को डर्बनमें श्री गोखलेके सम्मानमें आयोजित प्रीति-भोजमें बोलते हुए सिल्बर्नने कहा था कि इस देशमें श्री गोखलेकी यात्राको मैं ध्यानसे समझता रहा हूँ और मेरी समझमें उन्हें वास्तविक स्थितिके सम्बन्धमें बहुत कम बताया गया है। बहुतोंका खयाल है कि ब्रिटिश और बोअर लोग उनके देशभाइयोंके प्रति वैर-भाव रखते हैं, किन्तु बात ऐसी है नहीं। निस्संदेह एक राजनीतिज्ञकी हैसियतसे मैं मानता हूँ कि भारतीय कुछ कष्टोंसे पीड़ित हैं। मैं यह भी मानता हूँ कि उन कष्टोंको जितना जल्दी हो सके दूर कर देना चाहिए और मैं स्वयं तीन पौंडी करको हटानेमें पूरी सहायता करूँगा; किन्तु यह स्मरण रहे कि वतनियोंको लेकर हमारे सामने एक बहुत ही कठिन प्रजातीय समस्या उपस्थित है, और किसी तीसरे पक्षको बीचमें लानेसे सवालके सुलझनेके बजाय और अधिक उलझ जानेकी सम्भावना है। इसके अलावा, इस सवालका निपटारा उन्हीं लोगोंको करना है, जो यहाँ रहते हैं, और मैं श्री गोखलेसे अनुरोध करूँगा कि वे भारत वापस जाकर भारत तथा इंग्लैंडकी सरकारोंको सूचित कर दें कि इस समस्याका समाधान दक्षिण आफ्रिकामें होना है, और इस देशके ब्रिटिश लोग ग्रेट ब्रिटेन अथवा भारतकी ओरसे किसी प्रकारका हस्तक्षेप बर्दाश्त नहीं करेंगे। ('आनरेबल मि० गोखलेज विजिट टु साउथ आफ्रिका, १९१२', पृष्ठ ३७) श्री गोखलेने अपने भाषणमें उसका उत्तर देते हुए कहा था कि "मुझे इंग्लैंडके इतिहास और परम्पराका पर्याप्त ज्ञान है और उसके आधारपर मैं महसूस करता हूँ कि यदि अंग्रेज लोगोंसे कुछ प्राप्त करना है तो वह इन तरीकोंसे नहीं, बल्कि उनकी ईमानदारी और न्यायकी भावनाको जगाकर ही प्राप्त किया जा सकता है। . . . तो कमसे-कम मैं कभी ऐसा-कुछ नहीं कर सकता जिससे एक स्वशासित उपनिवेशके अधिकारोंमें कोई कमी आये। किन्तु, स्थिति विचित्र है। भारत-सरकार दक्षिण आफ्रिकी सरकारसे सीधे कुछ नहीं कह

सकती; वह अगर कुछ कह सकती है तो साम्राज्य-सरकारके माध्यमसे ही और इसलिए इन मामलोंमें साम्राज्य-सरकार ही उनकी सुरक्षाका एकमात्र साधन है। . . . मैं मेजर सिल्वर्नसे पूछना चाहूँगा कि यदि वे भारतमें हों और मेरी ही स्थितिमें हों तो वे क्या करेंगे? मेरा खयाल है, वे वही करेंगे जो कोई भी ब्रिटिश जन करेगा, अर्थात्, अपने दुःख-दर्दको साम्राज्य-सरकारके सामने रखेंगे . . ."

(ख)

गोखलेने ७ नवम्बर, १९१२ को मैरित्सवर्गमें भाषण देते हुए कहा था कि एक ओर एक विस्तीर्ण देशमें विशाल वतनी आबादीके बीच बिखरे हुए मुट्ठी-भर यूरोपीय समाजके लोग हैं . . . दोनों प्रजातियोंकी सभ्यताके स्तर दो हैं, और उनके पारस्परिक संसर्गसे बहुतसी समस्याएँ पहले ही उत्पन्न हो चुकी हैं। . . . स्वभावतः यूरोपीय समाज अपनी सभ्यताको सुरक्षित रखना चाहता है . . .। अब इसके अतिरिक्त यहाँ भारतीय तत्त्वका समावेश हो गया है। इस समय उनकी संख्या बहुत कम है, किन्तु बहुत-से यूरोपीयोंके मनमें यह भय बना हुआ है कि यदि कुछ सख्त कदम नहीं उठाये गये तो उनकी संख्यामें वृद्धि होती जायेगी और सम्भव है कि एक दिन वे यूरोपीय समाजपर छा जायें। मुझे अब लगता है कि भारतीय जिन बातोंकी शिकायत करते हैं और शायद सही ही करते हैं, उनमें से बहुतोंका कारण यही भय है। इसके बाद आती है व्यापारिक स्पर्धाकी बात। यूरोपीयोंको यह भय है कि अपने अपेक्षाकृत सादे जीवन-स्तरके कारण भारतीय व्यापारी अपना माल यूरोपीयोंकी बनिस्बत सस्ते दामोंपर बेचेंगे। किन्तु यह ऐसा सवाल है, जिसके दो पहलू हैं। यह शिकायत समस्त समाजकी नहीं बल्कि उन टुट-पुँजिये व्यापारियोंकी शिकायत है, जिन्हें इस स्थितिके कारण असुविधा होती है। समाज तो यदि कुछ चाहता है तो यह कि वह चीजें सस्तीसे-सस्ती कीमतपर खरीद सके। (**इंडियन ओपिनियन**, १६-११-१९१२)। ८ नवम्बरको डर्बन टाउन हालमें अपने स्वागत-भाषणके दौरान हॉलैंडरने[1] उपर्युक्त भाषणमें से केवल दो चुनी हुई उक्तियोंका स्मरण करते हुए कहा कि मैं मैरित्सवर्गमें दिये गये भाषणकी दो उक्तियोंका उल्लेख विशेष रूपसे करनेका साहस करता हूँ। बताया जाता है कि श्री गोखलेने कहा, मैं यह महसूस करता हूँ कि जहाँ दो स्तरकी सभ्यताओंका विकास साथ-साथ हो रहा हो, वहाँ उनके पारस्परिक संसर्गसे अवश्य ही गंभीर कठिनाइयाँ उत्पन्न होंगी. . .। मैं इन दो उक्तियोंका स्वागत करता हूँ, क्योंकि इससे बहुत ही स्पष्ट रूपसे यह सिद्ध हो जाता है कि हमारे विशिष्ट अतिथि अपने कर्तव्यका निर्वाह उदात्त भावसे कराना चाहते हैं और वे यह महसूस करनेको तैयार हैं कि . . . इस प्रश्नके सम्बन्धमें एकाधिक दृष्टिकोण हो सकते हैं। बल्कि मेरा तो निश्चित मत है कि दक्षिण आफ्रिका आनेके बादसे श्री गोखलेने यह महसूस किया है कि एक और भी प्रश्न है और वह अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण है और इसके सामने इस देशके अन्य सारे प्रश्न गौण हैं। यह वह प्रश्न है जिसे हम वतनी प्रश्नके नामसे जानते हैं। प्रजाति और रंगसे सम्बन्धित अन्य सारे प्रश्न एक-दूसरेसे इस प्रकार अन्तर्सम्बद्ध हैं कि यदि कोई उनमें से किसी एकका समाधान ढूँढ़नेका प्रयत्न करे तो उसे दूसरे प्रश्नोंकी मौजूदगीके कारण बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

ऑनरेबल मि० गोखलेज विजिट टु साउथ आफ्रिका, १९१२, इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स और **इंडियन ओपिनियन**, १६-११-१९१२ से।

१. डर्बनके महापौर एफ० सी० हॉलैंडर।

परिशिष्ट २५

गांधीजीके नाम गृह-सचिवका पत्र

दक्षिण आफ्रिका संघ,
गृह-विभाग
केप ऑफ़ गुड होप
अप्रैल ४, १९१३

महोदय,

आपके पिछले महीनेकी २४ तारीखके पत्रके सम्बन्धमें गृह-मन्त्रीने मुझे यह कहनेका आदेश दिया है कि कुछ चुने हुए ब्रिटिश भारतीयोंको ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके अनुमतिपत्र देनेके बारेमें कुछ दिन पहले आपने जो सवाल उठाया था, उसपर वे गौर कर रहे हैं। श्री फिशरका विचार है कि इस मामलेमें आप ट्रान्सवालके भारतीय समाजके उस वर्गके लोगोंका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं जो गत तीन-चार वर्षोंसे "सत्याग्रही" के रूपमें विख्यात है, और मन्त्री महोदयका खयाल है कि आपने उन्हीं लोगोंके लिए अनुमतिपत्र जारी करनेकी सिफारिश की है जिनके हित न्यूनाधिक समाजके इस विशेष वर्गसे मिलते-जुलते हैं। मन्त्री महोदय यह देख सकनेमें असमर्थ हैं कि कहीं भी ऐसी कोई बात निहित है अथवा स्वीकार की गई है कि इस मामलेमें आप ट्रान्सवालकी समस्त एशियाई आबादीका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, और वस्तु-स्थिति चूँकि ऐसी है, इसलिए आप जो रुख अख्तियार कर रहे हैं उसे वे कुछ समझ नहीं पा रहे हैं।

सही स्थिति यह है कि जब शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंको ट्रान्सवालमें बसे अपने देशभाइयोंके लाभके लिए प्रति वर्ष एक सीमित संख्यामें यहाँ प्रवेश करनेकी अनुमति देनेके प्रश्नपर विचार किया जा रहा था तब सरकारने वचन दिया था कि वह प्रति वर्ष ऐसे छः लोगोंको प्रवेश करनेकी अनुमति देगी; किन्तु, ऐसा कुछ तय नहीं हुआ था कि ये छः के-छः आपके द्वारा मनोनीत लोग ही होंगे। किन्तु अब आप स्पष्ट ही इसी बातको सिद्ध करनेकी कोशिश कर रहे हैं। जैसा कि मैं अपने १५ जनवरीके पत्रमें आपको बता चुका हूँ, ट्रान्सवालके भारतीय समाजके विभिन्न वर्गोंने सन् १९१३ में प्रवासी अधिनियमसे विशेष रूपसे बरी किये जानेके लिए बाईस नाम पेश किये, और जो अनुमतिपत्र जारी किये जानेवाले हैं, उनमें प्रत्येक वर्गको यथासम्भव कुछ-न-कुछ हिस्सा देनेके विचारसे श्री फिशरने अनुमतिपत्रोंकी संख्या छःसे बढ़ाकर दस कर देनेका निर्णय किया। और ऐसा करते हुए उन्होंने आपके द्वारा दिये गये छः नामोंमें से चारको स्वीकार कर लिया और उन्हें जो अन्य सोलह नाम दिये गये थे उनमें से छः पर स्वीकृति दी। उनके इस निर्णयका आधार यह था कि आप एशियाई आबादीके एक बड़े भागकी ओरसे बोल रहे थे; किन्तु, जहाँतक उन्हें मालूम है, आप समस्त ब्रिटिश भारतीय आबादीकी ओरसे नहीं बोल रहे थे।

किन्तु, यह स्पष्ट है कि इस विषयमें आपके और सरकारके बीच एक गलतफहमी रही है, और इसलिए मन्त्री महोदय आपके द्वारा पेश किये गये दो नामोंको स्वीकार करनेके सम्बन्धमें अब और कोई आपत्ति नहीं उठायेंगे। फिर भी एक बात समझ लेनी चाहिए। यहाँ अनेक संघ और समितियाँ पहलेसे ही मौजूद हैं, और कारण नहीं कि आगामी वर्षोंमें उनकी संख्यामें वृद्धि नहीं होगी। किन्तु, इनमें से किसी भी संस्थाके द्वारा, या उसकी ओरसे, शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंको इस उपनिवेशमें प्रवेश देनेके लिए भविष्यमें जो प्रस्ताव रखे जायेंगे, सरकार उन्हें निर्विवाद रूपसे स्वीकार कर लेनेके लिए अपने-आपको किसी तरह बाँध नहीं सकती। सरकारने इन लोगोंको एक निश्चित संख्यामें प्रति वर्ष प्रवेश देनेका वादा

किया है, और प्रवेशकर्ताओंकी सूचीमें स्थान प्राप्त करनेके लिए जो भी प्रार्थनापत्र आयेंगे, सबपर ध्यान-पूर्वक विचार किया जायेगा। लेकिन यह बिलकुल स्पष्ट है कि जबतक कोई निश्चित व्यवस्था — उदाहरणार्थ, हर उचित मामलेमें भारत सरकार सिफारिश करे, अथवा वास्तवमें प्रवेशार्थियोंका चुनाव ही वही करे — नहीं कर दी जाती तबतक इन विभिन्न संस्थाओं द्वारा पेश किये जानेवाले परस्पर-विरोधी दावोंके बीच सामंजस्य स्थापित करना बहुत कठिन होगा; और यह तो तय ही है कि ऐसे दावे पेश किये जायेंगे।

आपके हालके पत्रमें उल्लिखित दूसरे मुद्देके सम्बन्धमें, मैं यह बता दूँ कि नया प्रवासी विधेयक इसी सप्ताह प्रकाशित किया जा रहा है। खण्ड २५ (१) में किसी भी व्यक्तिको खण्ड ४ (जिसमें उन लोगोंकी परिभाषा की गई है, जिन्हें निषिद्ध प्रवासी माना जा सकता है) से बरी करनेकी सत्ता शामिल कर ली गई है। अतः जिन ब्रिटिश भारतीयोंके नाम प्रवेशकर्ताओंकी वार्षिक सूचीमें शामिल कर लिये जायेंगे वे उस प्रान्तकी हद तक, जिसमें रहनेका उन्हें अधिकार है, खण्ड ४ की शर्तोंसे मुक्त रहेंगे।

आपका आज्ञाकारी सेवक
ई० एम० गॉर्जेस
गृह-सचिव

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५७५०) की फोटो-नकलसे।

साधन-सूत्र

'केप टाइम्स': केप टाउनका एक दैनिक समाचारपत्र।

'कलोनियल आफिस रेकर्ड्स: कलोनियल ऑफिस, लन्दनके पुस्तकालयमें मौजूद; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

'डायमंड फील्ड एडवर्टाइज़र': किम्बर्लेका एक दैनिक समाचारपत्र।

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली, 'गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

'गांधीजीनी साधना': रावजीभाई पटेल; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद; १९३९।

'गुजराती': बम्बईसे गुजराती और अंग्रेजीमें प्रकाशित एक साप्ताहिक।

'आनरेबल मिस्टर जी० के० गोखलेज़ विज़िट टु साउथ आफ्रिका, १९१२': इन्टरनेशनल प्रिन्टिंग प्रेस,' फीनिक्स; १९१२।

'इंडियन ओपिनियन' (१९०३–६१): शनिवारको प्रकाशित होनेवाला एक साप्ताहिक; डर्बनमें स्थापित और बादमें फीनिक्सको स्थानांतरित; अंग्रेजी और गुजरातीमें प्रकाशित; शुरूमें इसके हिन्दी और तमिल विभाग भी थे।

'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री': एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९६३।

'नेटाल मर्क्युरी' (१८५२–): डर्बनका एक दैनिक समाचारपत्र।

साबरमती संग्रहालय: गांधीजीके दक्षिण आफ्रिका-काल और १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित सामग्रीका पुस्तकालय और आलेख संग्रह; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'रैंड डेली मेल': जोहानिसबर्गका एक दैनिक समाचारपत्र।

'स्टार': जोहानिसबर्गका एक सान्ध्य दैनिक।

'टाइम्स ऑफ इंडिया': बम्बई और दिल्लीसे प्रकाशित एक दैनिक समाचारपत्र।

'ट्रान्सवाल लीडर': जोहानिसबर्गका एक दैनिक समाचारपत्र।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(अप्रैल १९११—मार्च, १९१३)

अप्रैल १ के पूर्व: क्लार्क्सडॉर्पमें बाड़ोंके यूरोपीय मालिकोंने स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत सरकारी वकील द्वारा दिये गये आदेशके अनुसार भारतीय किरायेदारोंको बेदखलीके नोटिस दिये।

अप्रैल १: भारत सरकारने १ जुलाई, १९११ से दक्षिण आफ्रिकाके लिए गिरमिटियोंकी भरतीपर प्रतिबन्ध लगानेके लिए एक विज्ञप्ति जारी की।

अप्रैल २: गांधीजी केप ब्रिटिश भारतीय संघकी बैठकमें शामिल हुए। यह बैठक संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकमें इस संशोधनकी माँग करनेके लिए बुलाई गई थी कि केपके अधिकार सुरक्षित रहें।

अप्रैल ५: गांधीजीने रिचको पत्र लिखते हुए यह भाव व्यक्त किया कि वांछित संशोधनके बिना संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक पास नहीं किया जायेगा।

स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत ट्रान्सवालके भारतीयोंकी कठिनाइयों और क्लार्क्सडार्पके अत्याचारोंके बारेमें मॉड पोलकको लिखा।

जी० एच० ह्यूलेटने नेटाल प्रान्तीय कांग्रेसमें प्रस्ताव रख कर माँग की कि व्यापारिक परवानोंको जारी करनेपर नियन्त्रणका अधिकार प्रान्तीय परिषदको देनेके लिए संघीय कानून पास किया जाये।

अप्रैल ६: टी० एल० श्राइनरने संघ-संसदमें माँग की कि गिरमिटके बन्द हो जानेके कारण तीन पौंडी कर हटा दिया जाये। जनरल स्मट्सने उत्तर देते हुए हस्तक्षेप करनेसे इनकार किया और सदनको सूचना दी कि भारतका रुख अनुत्साहकारक होनेके कारण नेटालमें १ जुलाईसे पहले बहुत ही कम गिरमिटिया भारतीयोंके आनेकी सम्भावना है।

अप्रैल ७: गांधीजीने ट्रान्सवाल संघर्षको समाप्त करनेके लिए ई० एफ० सी० लेनको अपने वैकल्पिक प्रस्ताव भेजे: या तो शिक्षित प्रवासियोंको, विशेषकर नाबालिगों और पत्नियोंके सम्बन्धमें ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज फ्री स्टेटके पंजीयन कानूनोंके अमलसे मुक्त रखने तथा वर्तमान अधिकारोंकी सुरक्षाके लिए संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकमें संशोधन किया जाये, या उसे छोड़कर ट्रान्सवाल प्रवासी कानूनोंमें संशोधन कर दिया जाये।

अप्रैल ८: ई० एफ० सी० लेनसे इस बातकी पुष्टि माँगी कि उनके दो विकल्पोंमें से एकके स्वीकृत हो जानेपर संघ या ट्रान्सवालमें प्रति वर्ष ६ शिक्षित भारतीयों ो प्रवेशकी अनुमति मिल जायेगी।

अप्रैल ११: डर्बनके भारतीय नेताओंका शिष्टमण्डल इस सम्बन्धमें बातचीत करनेके लिए महापौरसे मिला कि राज्याभिषेक समारोहके अवसरपर भारतीयोंका दर्जा क्या होगा।

अप्रैल १५ : एल० डब्ल्यू० रिचने गांधीजीके जोहानिसबर्ग कार्यालयमें वकालत शुरू की।

अप्रैल १७ : जोज़ेफ़ रायप्पन, लिअंग क्विन तथा दूसरे सत्याग्रही जेलसे छोड़े गये।

अप्रैल १९ : स्मट्सने एक भेंटमें अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए गांधीजीको बताया कि वे वर्तमान या आगामी अधिवेशनमें संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक पास कर देंगे।

अप्रैल २० : ई० एफ० सी० लेनको सूचित किया कि ट्रान्सवालकी समस्या हल होने-तक़ नेटाल भारतीय कांग्रेस, ब्रिटिश भारतीय संघ तथा केपके भारतीय सत्याग्रह समाप्त करनेके लिए तैयार नहीं हैं। और आशा व्यक्त की कि उनका वैकल्पिक हल अब भी इस अधिवेशनमें स्वीकार कर लिया जायेगा।

अप्रैल २१ : लेनने गांधीजीको सूचना दी कि सरकार मौजूदा अधिवेशनमें संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकपर विचार नहीं कर सकी। सरकार विश्रान्तिकी अवधिमें इसे हल करनेके बारेमें सावधानीसे विचार करेगी। इस बीच भारतीयोंको सत्याग्रह स्थगित कर देना चाहिए।

गांधीजी लेनसे मिले और उन्हें बताया कि यदि कुछ आश्वासन दिये जायें तो सत्याग्रह स्थगित किया जा सकता है। लेनने स्मट्सको टेलीफोन किया और वे कुछ आश्वासन देनके लिए राजी हो गये।

अप्रैल २२ : गांधीजीने पत्र लिखकर ई० एफ० सी० लेनको सूचना दी कि यदि स्मट्स कुछ आश्वासन दे दें तो सत्याग्रह स्थगित हो सकता है।

उपर्युक्त इरादेके उत्तरमें स्मट्सने लिखा कि वे आगामी अधिवेशनमें एक कानून पेश करेंगे जो (क) इस विचारसे कि नाबालिग बच्चोंके अधिकार सुरक्षित रहें, १९०७ के अधिनियम २ को रद करेगा; (ख) सभी प्रवासियोंको कानूनी समानता देगा; ऐसें सत्याग्रहियोंको पंजीयनका अधिकार देगा जो सत्याग्रह न करते तो १९०८ के अधिनियमके अनुसार उसके अधिकारी होते; (ग) शिक्षित सत्याग्रहियोंके अस्थायी प्रमाणपत्रोंको (वर्षमें ५ या ६ से अधिक नहीं) नियमित करनेका अधिकार देगा। स्मट्सने यह भी लिखा कि यदि गांधीजी सत्याग्रह स्थगित करनेका आश्वासन दें तो वे गवर्नर जनरलसे सत्याग्रही बन्दियोंको मुक्त करनके सम्बन्धमें अनुकूल विचार करनेके लिए कहेंगे।

न्यायालय द्वारा रम्भाबाई सोढाकी अपील खारिज।

अप्रैल २४ : किम्बर्लेकी भारतीयोंकी सभामें बोलते हुए गांधीजीने बताया कि अब "कठिन समस्याका हल निकट आ रहा है।"

अप्रैल २५ : स्मट्सने संघ विधान सभामें संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकको वापस लिया।

अप्रैल २६ : गांधीजी जोहानिसबर्ग लौटे।

अप्रैल २७ : जोहानिसबर्गकी भारतीयोंकी सभामें गांधीजीने अस्थायी समझौतेके बारेमें स्मट्सके साथ हुए पत्र-व्यवहारके बारेमें बताया और प्रस्ताव स्वीकार करनेके पक्षमें सलाह दी। सभाने निर्णय किया कि (क) यदि स्मट्स अपने वचन पूरा कर दें तो सत्याग्रह बन्द कर दिया जाये और (ख) गांधीजी व काछलियाके स्थानपर एच० एस० एल० पोलकको इंग्लैंड भेजा जाय।

'इंडियन ओपिनियन'ने घोषणा की कि चीनियोंने अस्थायी समझौतेको स्वीकार करनेके पक्षमें निर्णय किया है।

अप्रैल २८: गांधीजीने अस्थायी समझौतेके सम्बन्धमें 'स्टार'को दी गई भेंटमें घोषणा की कि समझौता हो जानेपर उनका सार्वजनिक जीवनसे अवकाश ग्रहण करनेका इरादा है।

अप्रैल २९: गांधीजीने ई० एफ० सी० लेनको लिखे पत्रमें समझौतेकी शर्तोंका ब्रिटिश भारतीयों द्वारा लगाया गया अर्थ सूचित किया और स्मट्ससे उसके पुष्टीकरणकी माँग की; प्रार्थना की कि आर० एम० सोढाका पंजीयन किया जाये; उस सरकारी नौकरको पुन: नौकरी दिलाई जाये जिसे सत्याग्रहके कारण अलग कर दिया गया था; चीनी बन्दियोंको छोड़ दिया जाये, आदि।

मई १: ब्रिटिश भारतीय संघने ट्रान्सवालके भारतीयोंकी शिकायतोंके बारेमें उपनिवेश मन्त्रीको याचिका भेजी। उन शिकायतोंमें १८८५ के कानून ३, स्वर्ण-कानून और बस्ती अधिनियमसे उत्पन्न शिकायतें भी शामिल थीं।

मई ३: गांधीजीकी स्मट्ससे भेंट।

मई ४: उन भारतीयों तथा चीनियोंके वर्गीकरणके बारेमें ई० एफ० सी० लेनको पत्र लिखा जिनके द्वारा स्वेच्छया पंजीयनके लिए अर्जी दिये जानेकी सम्भावना थी। ३०० पौंड भेजनेके लिए धन्यवाद देते हुए ए० ई० छोटाभाईको लिखा। यह रकम छोटाभाईने अपने पुत्रके मामलेमें की गई व्यावसायिक सेवाके लिए भेजी थी। गांधीजीने फीनिक्सको न्यासिकोंके सुपुर्द करके उक्त रकमका उपयोग वहाँ स्कूलपर करनेका इरादा जाहिर किया।

मई ८ के पूर्व: गांधीजीको सूचना दिये बिना ही हरिलालका भारतके लिए प्रस्थान।

मई ८: गांधीजीने एच० एस० एल० पोलकको पत्र लिखकर उनकी इंग्लैंड और भारतकी यात्राके खर्चका तखमीना दिया और बताया कि स्मट्सने सत्याग्रहियोंकी माँगोंके बारेमें अनुकूल उत्तर दिया है।

पत्र लिखकर डॉ० प्राणजीवन मेहताको सुझाव दिया कि वे नेटालके ६ सत्याग्रहियोंको इंग्लैंडमें पढ़नेका खर्च दें; वकालत न करनेका अपना निश्चय प्रगट किया।

मई ९: सत्याग्रहकी सफलतापर भेजी गई बधाईके लिए प्रान्तिक परिषद्को तार द्वारा धन्यवाद दिया।

मई १५: नेटाल भारतीय कांग्रेसने प्रस्तावित निरंकुश शैक्षणिक कसौटी, प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकमें वर्तमान अधिकारोंकी काट-छाँट तथा भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंपर लगाये गये तीन पौंडी करके सम्बन्धमें उपनिवेश-मन्त्रीको स्मृतिपत्र (जिसका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था) भेजा।

हरिलाल गांधी डेलागोआ-बे से टॉल्स्टॉय फार्म लौटे।

मई १६: क्लार्क्सडॉर्पके भारतीयोंने गृह-मन्त्रीसे अपील की कि स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत दिये गये नोटिस वापस ले लिये जायें और कानून रद कर दिया जाये।

मई १७: ट्रान्सवाल नगरपालिका अध्यादेश तथा स्थानीय शासन अध्यादेशके मसविदे सरकारी 'गज़ट'में प्रकाशित किये गये।

मई १८ के पूर्व: हरिलालका अन्तिम रूपसे दक्षिण आफ्रिकासे भारतके लिए प्रस्थान।

मई १८: गांधीजीने गृह-मन्त्रीको लिखा कि २९ अप्रैल, १९११ के पत्रमें उन्होंने समझौतेके विषयमें जो सुझाव दिये थे उनके बारेमें उन्हें स्मट्सका उत्तर चाहिए।
ब्रिटिश लोकसभामें स्वर्ण-कानून, बस्ती-अधिनियम और ट्रान्सवालके भारतीयोंकी उनसे उत्पन्न कठिनाइयोंके बारेमें प्रश्न पूछे गये।

मई १९: लेननें गांधीजीको उनके ४ मईके पत्रका उत्तर दिया।
उक्त पत्रके उत्तरमें गांधीजीने कहा कि वे लोग भी १८० एशियाई सत्याग्रहियोंमें शामिल हैं जो स्वेच्छया पंजीयन प्रणालीके अन्तर्गत अथवा किसी एशियाई कानूनके अन्तर्गत पंजीयनकी अर्जी नहीं दे सके; २९ अप्रैलके उनके पत्रमें दिये गये समझौतेकी शर्तोंके विषयमें कोई आपत्ति न होनेके कारण उन्हें स्वीकृत ही समझ लेनेके बारेमें उन्होंने तार द्वारा उत्तर भेजनेकी प्रार्थना की।
गांधीजीने सत्याग्रह द्वारा उपलब्ध शुभ परिणामों तथा ट्रान्सवाल, नेटाल एवं केपमें भारतीयों द्वारा उठाये जानेवाले कष्टोंके बारेमें गो० कृ० गोखलेको लिखा।

मई २०: स्मट्सने तार द्वारा गांधीजीको सूचना दी कि,
(क) १८० भारतीयोंमें वे लोग भी शामिल हैं जो युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें तीन साल तक निवासके आधारपर समयपर अर्जी नहीं दे सके थे;
(ख) मौजूदा व्यक्तिगत अधिकारोंको छीना नहीं जायेगा किन्तु भावी सामान्य तथा समान विधानसे विभिन्न प्रान्तोंपर प्रभाव पड़ेगा। •
(ग) भावी एशियाई प्रवासियोंके लिए किसी निश्चित शैक्षणिक स्तरकी आवश्यकता नहीं होगी।
(घ) प्रसिद्ध अथवा शिक्षित पंजीकृत एशियाइयोंको परवाने लेनेके लिए अँगूठे या अंगुलियोंकी छाप देनेकी आवश्यकता नहीं।
गांधीजीने ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे अस्थायी समझौतेकी स्वीकृति की सूचना दी और उन सत्याग्रहियोंकी सूची भेजी जो रिहा होनेको थे।

मई २० के बाद: स्मट्ससे मिलनेवाले शिष्टमण्डलके लिए विवरण तैयार किया।

मई २२: ब्रिटिश भारतीय संघने 'इंडियन ओपिनियन' में एक नोटिस छापा कि वे भारतीय जो अस्थायी समझौतेके अन्तर्गत पंजीयनके अधिकारी हैं, अपने नाम अवैतनिक मन्त्रीके पास भेजें।

मई २३: गांधीजीने रायटरको दी गई एक भेंटमें अस्थायी समझौतेके बारेमें बताया।

मई २६: एशियाई पंजीयकको पत्र लिखा और उसके साथ अस्थायी समझौतेके अन्तर्गत पंजीयनके अधिकारी चीनियोंकी सूची और विशेष प्रमाणपत्रोंके लिए तीन मुसलमानोंके नाम भी भेजे।

मई २७: 'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए गांधीजीने अस्थायी समझौतेपर सन्तोष व्यक्त किया, किन्तु चेतावनी दी कि यदि स्मट्सने १९०७के अधिनियम २को रद करने और ट्रान्सवाल प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियममें संशोधन करनेके अपने वचनोंका पालन नहीं किया, और यदि एशियाई विरोधी कोई नया विधान पेश किया तो सत्याग्रह पुनः आरम्भ कर दिया जायेगा।

मई ३० : लन्दनमें लीग ऑफ ऑनरकी सभामें एच० एस० एल० पोलकने दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी समस्यापर भाषण दिया।

मई ३१ : गांधीजीने जी० ए० नटेसनको पत्र लिखते हुए अस्थायी समझौतेपर सन्तोष प्रकट किया और नटेसनके कार्यकी प्रशंसा की।

जून १ : क्लार्क्सडॉर्पके भारतीयोंने बताया कि गृहमन्त्री स्वर्ण-कानूनमें कोई परिवर्तन नहीं कर सके।

जून २ : गांधीजीने पार्क स्टेशनपर सोढाको भारत जाते हुए विदाई दी।
अस्थायी समझौतेके अन्तर्गत ५ सत्याग्रही रिहा किये गये।
दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिने ट्रान्सवालमें स्वर्ण कानून तथा बस्ती अधिनियमके अमल तथा भारतीयोंकी अन्य कठिनाइयोंके बारेमें उपनिवेश कार्यालयको लिखा।

जून ३ : गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में सत्याग्रहकी सफलतापर प्रकाश डाला।

जून ५ : जोहानिसबर्गमें सत्याग्रहियोंके फुटबॉल मैचके बाद गांधीजी तथा एल० डब्ल्यु० रिचने सभामें भाषण दिये।
ब्रिटिश भारतीय संघने नगरपालिका परिषद अध्यादेशके मसविदेका विरोध करते हुए ट्रान्सवाल प्रशासक तथा प्रान्तीय परिषदको याचिका भेजी।

जून ६ : ब्रिटिश भारतीय संघने क्लार्क्सडॉर्पके भारतीयोंकी ओरसे गृह सचिवको स्वर्ण-कानूनके अमलके बारेमें लिखा।

जून ९ : गांधीजी जोहानिसबर्गमें विलियम हॉस्केनको दिये गये भोजमें शामिल हुए।

जून १० : गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए ट्रान्सवाल नगरपालिका परिषद अध्यादेशके मसविदेकी आलोचना की और बताया कि इसका उद्देश्य एशियाई फेरीवालोंको कुचल डालना है।

जून १५ : रूडीपूर्टमें टैम्बलिन नामक एक गोरेपर एशियाइयोंको बाड़े किरायेपर देनेके कारण मुकदमा चलाया गया।

जून १६ : डर्बनमें सोराबजी शापुरजीकी विदाईके अवसरपर गांधीजीने भाषण दिया।

जून १७ : पोलकने दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिसे ट्रान्सवालके भारतीयोंकी शिकायतोंके बारेमें उपनिवेश कार्यालयको लिखा। उन शिकायतोंमें स्वर्ण-कानून, बस्ती-अधिनियम तथा भूतपूर्व गिरमिटियोंपर लगाये गये तीन पौंडी करसे उत्पन्न कष्ट भी शामिल थे।

जून १९ : नेटालके भारतीय नेताओंने टाउन क्लार्कको लिखा कि प्रजातीय भेदभाव बर्ते जानेके कारण वे राज्याभिषेकसे सम्बन्धित सरकारी समारोहोंमें भाग नहीं ले सकते।
लन्दनमें उपनिवेश मन्त्रीकी अध्यक्षतामें इम्पीरियल कांग्रेसकी पहली बैठक।

जून २१ : गांधीजी नेटालके भारतीय नेताओंके साथ राज्याभिषेक समारोहके सम्बन्धमें डर्बनके महापौरसे मिले।

जून २२ : वेस्टमिन्स्टर ऐबेमें सम्राट् जार्ज पंचमका राज्याभिषेक हुआ।
डर्बनमें भारतीयों द्वारा समारोहका बहिष्कार।

जून २४: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में सम्राट्के प्रति अपनी राजभक्तिकी पुष्टि की।

जून २७: भारतीय प्रवासी निकायके शिष्टमण्डलने भारतसे प्रवासके वन्द हो जानेपर अन्य मजदूरोंको उपलब्ध करनेकी समस्यापर स्मट्सके साथ वातचीत की।

सर विलियम वुलने ब्रिटिश लोकसभामें ट्रान्सवालके स्वर्ण-कानून तथा वस्ती-अधिनियमको भारतीयोंके विरुद्ध अमलमें लानेके सम्वन्धमें प्रश्न पूछे।

जून ३०: सर्वोच्च न्यायालयके ट्रान्सवाल खण्डपीठने फैसला करते समय नियम वनाया कि "कोई भी भारतीय एकसे अधिक पत्नी इस देशमें न लाये और वह स्त्री वास्तवमें निश्चित रूपसे उसकी पत्नी हो"।

जुलाई १: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन'में लिखते हुए इंग्लैंडमें पोलक द्वारा किये गये कार्यकी प्रशंसा की।

जुलाई १ के वाद: गांधीजीने फीनिक्सकी गतिविधियोंको विस्तृत करनेके लिए डॉ० प्राणजीवन मेहताको १,००० पौंड तक की आर्थिक सहायता देनेके वारेमें लिखा।

जुलाई ४: क्षय-रोग विरोधी कार्यके वारेमें डॉ० म्युरिसनको लिखा।

जुलाई ५: ब्रिटिश भारतीय संघ तथा हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्षोंने गृह-सचिवसे लिखकर पूछा कि क्या न्यायमूर्ति वेसेल्सके निर्णयका असर मुसलमानोंको अपने मजहव द्वारा स्वीकृत एकसे अधिक पत्नियाँ लाने देनेकी वर्तमान प्रथापर भी पड़ेगा।

जुलाई ८: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन'में न्यायमूर्ति वेसेल्स द्वारा वाई रसूल तथा आदमजी इस्माइलके मामलोंमें दिये गये इस फैसलेपर विचार किया कि एक भारतीय एक ही पत्नी ला सकता है, और कहा कि ब्रिटिश उपनिवेशोंमें ऐसा कानून वनाना सम्भव नहीं जो कि एक मान्यता प्राप्त धर्मका अपमान करे।

जुलाई ११: रूडीपूर्टमें मजिस्ट्रेटने वाड़े एशियाइयोंको किरायेपर देनेके अपराधमें टैम्वलिनको स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत २ पौंड जुर्माने या दो दिनकी कैदकी सजा दी।

जुलाई १२: ब्रिटिश लोकसभामें ट्रान्सवाल नगरपालिका अध्यादेशके मसविदेके सम्वन्धमें प्रश्न पूछे गये।

जुलाई २०: लॉर्ड ऐम्टहिल तथा सर मंचरजी मेरवानजी भावनगरीने दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिकी ओरसे उपनिवेशोंमें भारतीयोंके साथ होनेवाले वरताव तथा इम्पीरियल कान्फ्रेंसके रुखके वारेमें उपनिवेश कार्यालयको लिखा और प्रार्थना की कि जनरल वोथासे शिष्टमण्डलको भेंट देनके वारेमें कहा जाये।

जुलाई २२ के पूर्व: स्मट्सने ब्रिटिश भारतीय संघ तथा हमीदिया इस्लामिया अंजुमनको सूचना दी कि उन्होंने मुसलमानोंकी पत्नियोंके प्रवासके वारेमें न्यायमूर्ति वेसेल्स द्वारा दिया गया निर्णय देखा है और उनके ध्यानमें लाये गये कष्टोंके मामलों-पर वे अलग-अलग विचार करेंगे।

जुलाई २६ के आसपास: दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिने भारतीय पत्नियोंके नेटालमें प्रवेशके वारेमें उपनिवेश कार्यालयको लिखा।

जुलाई २८: एच० एस० एल० पोलकका लन्दनकी विश्व प्रजातीय कांग्रेसमें भाषण।

जुलाई ३१: एच० कैलेनबैकको उनके यूरोप प्रस्थान करते समय गांधीजी तथा काछलियाके हस्ताक्षरयुक्त विदाईपत्र भेंट।

पॉचेफस्ट्रूममें एशियाई विरोधी सम्मेलनने एशियाइयोंके विरुद्ध गोरोंके हितोंकी रक्षाका निर्णय किया।

अगस्त २: दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिने भारतीय पत्नियोंके ट्रान्सवाल प्रवेशके बारेमें उपनिवेश कार्यालयको लिखा।

अगस्त ३: क्रूगर्सडॉर्पके अधिवासी मजिस्ट्रेटने एल० डब्ल्यू० रिचको अपने बाड़े रंगदार तथा स्वर्ण-कानून भंग करनेवाले लोगोंको किरायेपर देने या हस्तांतरित करनेके विरुद्ध नोटिस दिया।

अगस्त ५: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन'में नेटालके भारतीयोंको सलाह दी कि वे डर्बनके क्षयरोग-विरोधी अभियानमें डॉ० म्युरिसनको सहायता दें।

अगस्त १२: गांधीजीने गृह-सचिवको लिखा कि २१ अगस्त, १९११ तक वे अस्थायी समझौतेके अन्तर्गत सत्याग्रहियोंकी सूची पूरी करनेकी कोशिश करेंगे।

अगस्त १४: लन्दन 'टाइम्स'ने संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक तथा अस्थायी समझौतेपर लिखा।

अगस्त १५: ब्रिटिश भारतीय संघने गृह-सचिवको लिखा है वे क्रूगर्सडॉर्पमें अपने नाम पंजीकृत जायदादपर रंगदार लोगोंको रखनेके कारण रिचपर चलाये जानेवाले अभियोगमें हस्तक्षेप करें।

अगस्त १८: गिरमिटिया भारतीयोंके स्त्री-बच्चोंको नौकरी देनेके संशोधित नियम संघ-गज़टमें प्रकाशित।

अगस्त १९: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में रिच तथा ट्रान्सवालके भारतीयोंको स्वर्ण-क़ानून और बस्ती-अधिनियमके अन्तर्गत सरकारके भारतीय दूकानदारोंको उखाड़ फेंकनेके प्रयत्नका विरोध करनेके उनके निर्णयपर बधाई दी।

अगस्त २१: अस्थायी समझौतेके अन्तर्गत भारतीयोंकी संशोधित सूची जो अन्तिम नहीं थी, एशियाई पंजीयकको भेजी।

अगस्त २२: संघके मन्त्रीने तीन पौंडी कर तथा ट्रान्सवालके स्थानीय शासन अध्यादेशके मसविदेपर संक्षिप्त विवरण गवर्नर जनरलको भेजा।

अगस्त २८: गवर्नर जनरलने तीन पौंडी कर तथा ट्रान्सवाल नगरपालिका परिषद् अध्यादेशके मसविदेपर संघके मन्त्रीका संक्षिप्त विवरण उपनिवेश कार्यालयको भेजा।

[सर्वोच्च न्यायालयके ट्रान्सवाल स्थित खण्डपीठने रूडीपूर्टके अधिवासी मजिस्ट्रेट द्वारा स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत दी गई सजाके खिलाफ ए० टैम्बलिनकी अपील बहाल की।

सितम्बर ३: जोहानिसबर्गमें दादाभाई नौरोजीके जन्मदिवस मनानके लिए बुलाई गई सभामें गांधीजीका भाषण।

सितम्बर ५: रायटरने तार द्वारा पंजाब और राजस्थानमें दुर्भिक्ष पड़नेकी सूचना दी।

सितम्बर ६ : दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिने उपनिवेश कार्यालयको क्रूगर्स-डॉर्प, क्लार्क्सडॉर्प तथा रूडीपूर्टमें जायदादके न्यायोचित भारतीय मालिकोंके (स्वर्ण-कानूनके अन्तर्गत) तंग किये जानेकी शिकायत की।

सितम्बर ७ : एन० एस० एल० पोलकने एशियाई विरोधी आन्दोलनके सम्बन्धमें केप 'टाइम्स'को लिखा।

सितम्बर ९ : गांधीजीने मगनलाल गांधीको पत्र लिखकर सूचित किया कि फीनिक्समें लोगोंने व्यक्तिगतरूपसे मकान बनानेपर जो खर्च किया है वह उन्हें नहीं लौटाया जा सकता।

सितम्बर १६ : नेटालके भारतीय नेताओं द्वारा डर्बनमें 'तीन पौंडी कर विरोधी संघ' की स्थापना।

सितम्बर २३ : गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन'में जार्ज टाउन वस्तीमें भारतीयोंका व्यापार रोकनेके नगर परिषद्के प्रयत्नका विरोध करनेके पक्षमें जर्मिस्टनके भारतीयों द्वारा किये गये निर्णयका स्वागत किया।

सितम्बर २४ : पत्रमें डॉ० प्राणजीवन मेहताको लिखा कि वे अपनेको भारतमें सेवाकार्य करनेके योग्य बना रहे हैं।

सितम्बर २७ : गान्धीजी टॉल्स्टॉय फार्मकी पाठशालाके बच्चोंके साथ जोहानिसबर्गके फुटबाल मैचमें उपस्थित।

सितम्बर २८ : इटली द्वारा तुर्कीके प्रदेशपर आक्रमण।

सितम्बर ३० : नेटाल भारतीय कांग्रेस द्वारा राष्ट्रीय कांग्रेसके आगामी अधिवेशनकी अध्यक्षता कर सकनेके विषयमें 'इंडियन ओपिनियन' में शर्तें पेश करते हुए अपनी सहमति प्रकट की।

अक्तूबर १ : जर्मिस्टन नगरपालिका द्वारा जार्ज टाउन वस्तीको खाली करनेके लिए भारतीयोंको एक मासका नोटिस।

'जर्मिस्टन भारतीय संघ' की स्थापना।

अक्तूबर २ : गांधीजी जोहानिसबर्गमें मुसलमानोंकी सभामें शामिल हुए। सभा तुर्कीके विरुद्ध युद्ध छेड़नेके कारण इटलीकी निन्दा करनेके लिए बुलाई गई थी।

अक्तूबर ७ : गांधीजीने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी अध्यक्षता करनेके लिए उपलब्ध निमन्त्रणके बारेमें हरिलाल गांधीको लिखा।

अक्तूबर ९ : ब्रिटिश भारतीय संघने जर्मिस्टनके भारतीयोंको जार्ज टाउन वस्ती खाली करनेके लिए टाउन कौंसिल द्वारा दिये गये नोटिसके बारेमें ट्रान्सवाल प्रशासकको लिखा।

अक्तूबर १० : गांधीजीने डॉ० प्राणजीवन मेहताको लिखा कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस-की अध्यक्षता करनेका निमन्त्रण किसने दिया है यह स्पष्ट नहीं है फिर भी उन्होंने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया है बशर्ते कि उनकी उपस्थिति वस्तुतः वहाँ आवश्यक हो और उससे उनकी आजादीमें कोई बाधा न पड़े। उन्होंने आगे लिखा कि दक्षिण आफ्रिकाके मामलोंके निपटते ही वे भारतके लिए प्रस्थान कर देंगे।

अक्तूबर २२: डॉ० प्राणजीवन मेहताको सूचित किया कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्षपदके सम्बन्धमें आया हुआ तार पूछताछ मात्र था, निमन्त्रण नहीं; और तार दे दिया गया है कि अध्यक्षपदके लिए उनके नामपर विचार न किया जाये। यह भी सूचित किया कि डॉ० मणिलाल भारतमें कांग्रेसके अधिवेशनमें उपस्थित होना चाहते हैं।

अक्तूबर २३: जोहानिसवर्गमें गुजराती नववर्ष-दिवसके उत्सवके अवसरपर भाषण दिया।

अक्तूबर २४: गो० कृ० गोखलेसे पत्र लिखकर प्रार्थना की कि वे गिरमिट-प्रथाके खिलाफ डॉ० मणिलाल द्वारा किये जानेवाले प्रयत्नोंमें सहायता दें।

अक्तूबर ३०: गोखलेको पत्र लिखा; उसमें उन्हें दक्षिण आफ्रिका आनेका निमन्त्रण दिया और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्षपदके सम्बन्धमें हुई गलतफहमीपर प्रकाश डाला।

नवम्बर ६: ए० एम० भायातने एल० डब्ल्यू० रिचके नाम पंजीकृत वॉक्सवर्गके एक अहातेमें दूकान खोली।

नवम्बर ८: वॉक्सवर्गमें गोरोंकी सार्वजनिक सभाने भायात द्वारा दूकान खोलनेका विरोध किया और सरकारसे माँग की कि वह स्वर्ण-कानूनके खण्ड १३१ के अन्तर्गत रिचके खिलाफ मुकदमा चलाये।

नवम्बर ११: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में तीन पौंडी करके विरुद्ध जी-जानसे लड़नेका निश्चय व्यक्त किया और भारतके दुर्भिक्ष पीड़ितोंके लिए धन एकत्र करनेकी अपील की।

नवम्बर १३–१५: व्लूमफॉंटीनमें दक्षिण आफ्रिका कृषि संघके वार्षिक सम्मेलनने एक प्रस्ताव पासकर सरकारपर जोर दिया कि वह एशियाइयोंको व्यापारिक पर-वाने देना तथा जमीन हस्तांतरण करना वन्द कर दे।

नवम्बर १४: 'इंडियन ओपिनियन' ने रायटरका यह समाचार प्रकाशित किया कि गांधीजीके नाम वापस ले लेनेपर पण्डित विशननारायण दर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष चुन लिये जायेंगे।

पोलकने १७ जूनको दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिसे जो पत्र भेजा था उसका आंशिक उत्तर देते हुए उपनिवेश कार्यालयने लिखा कि तीन पौंडी करपर संघ-मन्त्री द्वारा भेजे गये विवरणके तथ्य सही हैं; कानून साम्राज्य-सरकारकी पूर्ण स्वीकृतिपर ही पास हुआ है और संघ-मन्त्रीने कानूनके उपवन्धको रद करनेसे जो इनकार किया है उसका भी वह अनुमोदन करती है।

नवम्बर १५: गांधीजीने जोहानिसवर्गके भारतीय महिला संघ वाजारमें श्रीमती वॉगलको भेंट किया जानेवाला अभिनन्दनपत्र पढ़ा।

नवम्बर १८: छूट दिलानेवाले अप्रैल, १९१० के परिपत्रके वावजूद भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंसे ३ पौंडी कर वसूल करनेके नेटाल सरकारके प्रयत्नकी गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में विश्वासघात कह कर निन्दा की।

नेटाल भारतीय कांग्रेसने न्यायमन्त्रीको पत्र लिखा और अप्रैल, १९१० के परि-

पत्रपर दृढ़ रहने तथा भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंसे तीन पौंडी कर वसूल न करनेकी प्रार्थना की।

नवम्बर २५: गांधीजीने "इंडियन ओपिनियन" में नेटालके भारतीयोंसे ३ पौंडी कर हटानेके लिए कार्यवाही करनेकी अपील की।

दिसम्बर ६: लॉर्ड लेमिंग्टनने लॉर्ड-सभामें उपनिवेश कार्यालय तथा संघ सरकारके बीच ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिसे सम्बन्धित पत्र-व्यवहारको प्रस्तुत करनेका प्रस्ताव रखा; और ट्रान्सवाल स्वर्ण-कानून, बस्ती-अधिनियम तथा नगरपालिका अध्यादेशके अमलके बारेमें सूचना देनेके लिए कहा।

दिसम्बर ७: गांधीजीने ई० एफ० सी० लेनको लिखे पत्रमें सुझाव दिया कि यदि संघ-संसदके मौजूदा अधिवेशनमें सामान्य विधान पास नहीं किया जा सकता तो ट्रान्सवाल प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमको संशोधित कर देना चाहिए।

दिसम्बर ८: पत्र द्वारा गोखलेको दक्षिण आफ्रिका आनेका पुनः निमन्त्रण दिया।

दिसम्बर १९: 'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए भारतीयोंसे अकाल सहायता कोषमें मुक्त-हस्त होकर चन्दा देनेकी अपील की।

दिसम्बर २०: जोहानिसबर्गमें एलेक्स बेन्सनको श्रद्धांजलि समर्पित करनेके लिए बुलाये गये चीनियोंके सम्मेलनमें भाषण दिया।

दिसम्बर २१: प्रिटोरियासे ई० एफ० सी० लेनका तार उपलब्ध; उन्होंने गांधीजीको मिलने तथा नये प्रवासी विधेयकका मसविदा देखनेके लिए आमन्त्रित किया।

दिसम्बर २२: गांधीजीने नये संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकका मसविदा देखा।

दिसम्बर २६ अथवा उसके बाद: भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कलकत्ता अधिवेशनमें एच० एस० एल० पोलक, चिन्तामणि तथा सोराबजी शापुरजीके भाषण। प्रस्तावोंमें दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी निर्योग्यताओंके बारेमे अफसोस जाहिर करते हुए प्रतिशोधात्मक उपायोंकी माँग की गयी और सरकारपर जोर डाला गया कि गिरमिट-प्रथाको सर्वथा बन्द कर दिया जाये। पोलकने अपने भाषणमें बताया कि आगामी वर्ष श्री गोखलेका दक्षिण आफ्रिका जानेका इरादा है।

दिसम्बर ३०: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में अधिकारियों द्वारा नाथलिया नामक भारतीय बालकको नेटालमें प्रवेशकी अनुमति न देनेकी निन्दा की और कहा कि मामलेको उच्चतर न्यायालयोंमें ले जाया जाये।

१९१२

जनवरी १: जोहानिसबर्गमें डॉ० अब्दुर्रहमानकी अध्यक्षतामें आफ्रिकी राजनीतिक संगठनकी उद्घाटन सभा हुई।

जनवरी ४: ब्लूमफॉंटीनमें मजदूर सम्मेलनने गिरमिट-प्रथाको बन्द कर देनेकी माँग की।

जनवरी ४ (?): पोर्टरने रिपोर्ट दी कि मलय बस्ती, जोहानिसबर्गमें भयानक रूपसे चेचक फैल गया है।

जनवरी ५: ब्रिटिश भारतीय संघने गृह-सचिवसे एक ऐसे मामलेकी शिकायत की

जिसमें डर्बनके प्रवासी-अधिकारियोंने एक वर्षसे भी कम आयुवाले बच्चेके लिए अभ्यागत (विज़िटर्स) पासकी माँग की थी।

जनवरी ६: 'इंडियन ओपिनियन' ने भारतमें बम्बई महाप्रान्तके अन्तर्गत काठियावाड़, अहमदाबाद और खेड़ामें अकाल पड़नेकी खबर दी। 'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए गांधीजीने भारतके दुर्भिक्षमें राहत पहुँचानेके लिए धन देनेकी अपील की; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसमें पोलकके कार्यकी सराहना की और गोखलेके दक्षिण आफ्रिकाकी यात्रा करनेके निर्णयका स्वागत किया।

एच० एस० एल० पोलकने भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंपर लगाये गये ३ पौंडी करके बारेमें भारत-सरकारको लिखा।

जनवरी १२: गांधीजीने गो० कृ० गोखलेको पत्र लिखकर उनकी दक्षिण आफ्रिकाकी यात्राका स्वागत किया।

एल० डब्ल्यू० रिचको कानूनी नोटिस दिया गया कि स्वामित्वके अधिकार मंसूख कर दिये जानेपर वे बॉक्सवर्गके बाड़ेका अधिकारपत्र तथा कब्जा सरकारको सौंप दें।

जनवरी १३: गांधीजीने भारतीयोंको चेतावनी दी कि वे चेचकके मामलोंको छिपायें नहीं।

जनवरी १५: ट्रान्सवाल नगरपालिका अध्यादेश मसविदे, चेचक, व्यापारिक परवाने, आदिके बारेमें 'इवनिंग क्रानिकल' को भेंट दी।

जनवरी १६: डर्बनमें प्लेगके मामलोंका पता लगा।

जनवरी १८: सार्वजनिक स्वास्थ्य विभागकी सहायताके लिए डर्बनके भारतीयों द्वारा प्लेग समितिका संगठन।

गांधीजी रोकी गई एक भारतीय पत्नीके सम्बन्धमें चैमनेसे मिले।

जनवरी २० के पूर्व: भारतीय फेरीवालोंको सूचना दी गई कि उन्हें किम्बर्लेमें फेरी लगानेके परवाने नहीं दिये जायेंगे।

सर्वोच्च न्यायालयने सरकारके खिलाफ की गई मुहम्मद हसन नामक एक भारतीय नाबालिगकी अपील खारिज की।

जनवरी २९: गांधीजीने ई० एफ० सी० लेनको लिखा कि नये संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकका 'गज़ट' में प्रकाशित पाठ उस मसविदेसे कुछ भिन्न है जो उन्होंने देखा था। नये विधेयकके खण्ड ५, ७, २५ तथा २८ पर अपने विचार व्यक्त किये।

जनवरी ३०: संघ-विधानसभामें नये संघ प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकका प्रथम वाचन। गांधीजीने खण्ड ५, ७, २५ तथा २८ के बारेमें जनरल स्मट्सको तार भेजा। उक्त तारका उत्तर मिला कि विधेयकका द्वितीय वाचन ८ फरवरीसे पहले नहीं होगा और उल्लिखित मामलोंपर विचार किया जा रहा है।

जनवरी ३१: गृह-सचिवने गांधीजीको भेजे गये तारमें सेक्शन ५, ७, २५ तथा २८ की पुष्टि की।

फरवरी १: गांधीजीने ई० एफ० सी० लेनको तार देकर ३१ जनवरीके उत्तरके प्रति अपना असन्तोष व्यक्त किया और प्रार्थना की कि खण्ड ७ और ८ में परिवर्तन किये जायें। कहा कि उत्तर उपलब्ध होने तक वे सार्वजनिक कार्यवाही नहीं करेंगे।

फरवरी ३: नये प्रवासी विधेयकके बारेमें "इंडियन ओपिनियन" में लिखते हुए बताया कि यह स्मट्सके वादेको पूरा नहीं करता। उन उपबन्धोंकी आलोचना की जो न्यायिक अपीलका अधिकार छीनकर पत्नियों और नाबालिगोंके अधिवास सम्बन्धी अधिकारोंका निश्चय करनेका अधिकार प्रवासी अधिकारियोंको देते हैं तथा शिक्षित व्यक्तियोंके अन्तर्प्रान्तीय आवागमनमें बाधा डालते हैं।

"इंडियन ओपिनियन" के गुजराती विभागमें नये प्रवासी विधेयकके महत्वपूर्ण खण्डोंका अनुवाद किया और उनपर टिप्पणियाँ दीं।

फरवरी ४: नये प्रवासी विधेयकका विरोध करनेके लिए केप और नेटालमें सभाएँ।

फरवरी ७: गृह-सचिवने १ फरवरीके गांधीजीके तारके उत्तरमें लिखा कि नये विधेयकमें न्यायालयोंमें अपीलके अधिकारको कहींपर भी निषिद्ध नहीं किया गया। सारे संघमें अधिवास सम्बन्धी प्रमाणपत्रोंकी प्रणाली असम्भव है; ऑरेंज फ्री स्टेटमें आवश्यक हल्फिया बयान सम्बन्धी खण्ड ८ के बारेमें विचार किया जा रहा है; गांधीजीसे अपील की कि वे अपने देशवासियोंको विधेयक स्वीकार करनेके लिए राजी करें।

इसके उत्तरमें गांधीजीने तार देकर माँग की कि विधेयकमें संशोधन किया जाये ताकि शिक्षित एशियाइयोंके अन्तर्प्रान्तीय प्रवासके सम्बन्धमें वर्तमान अधिकार बने रहें। उत्तर उपलब्ध होनेतक सार्वजनिक कार्यवाही अब भी स्थगित रहेगी।

फरवरी ८: स्मट्सने उत्तर दिया कि उन्हें आशा है कि वे उपर्युक्त बातोंके बारेमें सन्तोषजनक आश्वासन दे सकेंगे।

गांधीजीने तार दिया कि कमसे-कम वर्तमान कानूनी स्थितिको बनाये रखनेका आश्वासन देना आवश्यक है; वे विधेयकके उन स्वरूपोंकी जो अस्थायी समझौतेके अन्तर्गत नहीं आते, आलोचना करनेका अपना अधिकार सुरक्षित रखते हैं।

फरवरी ९: सर्वोच्च न्यायालयके नेटाल खण्डपीठने मजिस्ट्रेटके इस निर्णयकी पुष्टि की कि यद्यपि एन० मुडले गिरमिटके समाप्त होनेपर ही नौकरीपर लगा है फिर भी उसे तीन पौंडी कर देना पड़ेगा।

फरवरी १०: गांधीजीने "इंडियन ओपिनियन" में एशियाइयोंका बहिष्कार करने तथा निहित अधिकारोंमें हस्तक्षेप करनेकी नीतिके कारण नये प्रवासी विधेयककी कटु आलोचना की। आशा व्यक्त की कि सरकार भारतीयोंके विरोधपर सहानुभूतिके साथ विचार करेगी।

फरवरी ११: नये प्रवासी विधेयकका विरोध करनेके लिए किम्बर्लेमें भारतीयोंकी सार्वजनिक सभा।

फरवरी १२: यूरोपसे लौटनेपर कैलेनबैकका गांधीजी द्वारा क्रूगर्सडॉर्पमें स्वागत।

फरवरी १३: ट्रान्सवाल सर्वोच्च न्यायालयमें न्यायमूर्ति वेसेल्सने फातिमा जसातकी वह अपील जो उन्होंने मजिस्ट्रेट द्वारा प्रवेशकी अनुमति न देनेके विरुद्ध की थी,

इस आधारपर खारिज कर दी कि एक मुसलमान केवल एक पत्नीको ला सकता है।

फरवरी १५: गांधीजीने ई० एफ० सी० लेनको लिखा कि उन्हें अभीतक उत्तर नहीं मिला; वे न्यायालयोंमें अपील करनेके मामलेपर कानूनी सम्मति लेना चाहते हैं।

प्रवासी विधेयकके कुछ उपबन्धोंपर अपनी कानूनी राय देनेके लिए आर० ग्रेग-रोवस्कीको लिखा।

ब्रिटिश भारतीय संघ तथा हमीदिया इस्लामिया अंजुमनने गृहमन्त्रीको लिखा कि फातिमा जसातके मामलेमें हस्तक्षेप न किया जाये।

फरवरी १७ के पूर्व: गांधीजीने एन० मूडलेकी अपीलके सम्बन्धमें सर्वोच्च न्यायालयके फैसलेपर 'इंडियन ओपिनियन' में टिप्पणी दी।

फरवरी १८: सोरावजी शापुरजी भारतसे लौटे।

फरवरी १९: लॉर्ड-सभामें लॉर्ड ऍम्टहिल द्वारा ट्रान्सवालके भारतीयोंपर बहस प्रारम्भ।

फरवरी २१: गांधीजीने आगाखाँके प्रतिनिधिको अभ्यागत अनुमतिपत्र देनेके सम्बन्धमें एशियाई पंजीयकको तार भेजा।

फरवरी २२: सर्वोच्च न्यायालयने बॉक्सवर्गके बाड़ोंके सम्बन्धमें एल० डब्ल्यू० रिच और ए० एम० भायातके नाम सम्मन जारी किये।

फरवरी २४: गांधीजीने ई० एफ० सी० लेनको पत्र द्वारा वकीलोंकी रायके बारेमें सूचना दी कि प्रवासी समाहरण विधेयकपर आदेश मिल जानेकी स्थितिके सिवा वह अन्य स्थितिमें न्यायालयोंके अधिकार क्षेत्रको समाप्त करता है और वर्तमान अधिकारोंमें से कुछको छीन लेता है; प्रार्थना की कि उक्त त्रुटियोंको दूर किया जाये।

फरवरी २७: शाही विधान परिषद्, कलकत्तेमें गो० कृ० गोखलेने नेटालके गिरमिटिया मजदूरोंके बारेमें प्रश्न पूछे।

फरवरी २९: ब्रिटिश भारतीय संघने फातिमा जसातके मामलेके सम्बन्धमें गृहमन्त्रीको अनुस्मारक तार भेजा।

मार्च २: गृहमन्त्रीने तार द्वारा सूचना दी कि फातिमा जसातके मामलेमें उनके हस्तक्षेपकी आवश्यकता नहीं।

मार्च ४: अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके कलकत्ता अधिवेशनमें दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके बारेमें प्रस्ताव पास किया गया; एच० एस० एल० पोलकने भी भाषण दिया।

शाही विधान परिषद्, कलकत्तामें उपनिवेशोंके लिए गिरमिटिया मजदूर भेजना सर्वथा बन्द करनेके सम्बन्धमें गोखलेका प्रस्ताव ११ मतोंसे गिर गया।

मार्च ५: ब्रिटिश भारतीय संघने फातिमा जसातके मामलेमें हस्तक्षेप करनेके लिए फिरसे गृहमन्त्रीको लिखा।

मार्च ७: शाही विधान परिषद्में गोखलेने फ्रीडडॉर्प बस्तीसे भारतीयोंको हटाये जानेके बारेमें प्रश्न पूछे।

मार्च ९: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में नाथलिया नामक भारतीय नाबालिगके मामलेमें उपनिवेश कार्यालय द्वारा हस्तक्षेप करनेसे इनकार करनेपर अफसोस

जाहिर किया। उसे नेटालमें प्रवेश नहीं करने दिया गया था। साथ ही फातिमा जसातके निर्वासनके विरुद्ध संघर्ष करनेके लिए भारतीयोंसे अपील की।

जोहानिसबर्गमें प्रागजी खण्डूभाई देसाई तथा सुरेन्द्र राय मेढको विदाई देनेके अवसरपर सत्याग्रहीके रूपमें इनके कार्यकी प्रशंसा की।

मार्च १३: मन्त्रीने ब्रि० भा० संघ तथा हमीदिया इस्लामिया अंजुमनको पत्र द्वारा सूचित किया कि वे फातिमा जसातके मामलेसे सम्बन्धित अपने निर्णयपर पुनः विचार नहीं करेंगे।

मार्च १६: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन'में शाही विधान परिषद्में गिरमिट प्रथाको सर्वथा बन्दकर देनेके सम्बन्धमें प्रस्ताव पास करानेके लिए गोखलेके प्रयत्नोंकी सराहना की।

मार्चका अन्त: स्वर्ण-कानून तथा बस्ती-अधिनियमके अन्तर्गत भारतीयोंकी स्थितिपर संघ तथा साम्राज्य सरकारोंके बीच हुए पत्रव्यवहारको लेकर लन्दनमें श्वेत-पत्र प्रकाशित।

अप्रैल १: गांधीजीने रतन टाटाको लिखे गये सार्वजनिक पत्रमें सत्याग्रह-कोषके आय-व्ययका ब्यौरा दिया।

अप्रैल २: प्रिटोरियामें व्हाइट लीग कांग्रेसने गोरे और रंगदार लोगोंके बीच समानताकी रोकथामके लिए शपथ ली।

अप्रैल ४: गांधीजीने पत्रमें ई० एफ० सी० लेनसे पूछा कि प्रवासी विधेयक इस अधिवेशनमें पेश किया जायेगा या त्याग दिया जायेगा।

अप्रैल ११: पत्र द्वारा ई० एफ० सी० लेनका ध्यान कार्यवाहक गृह-उपसचिवकी टिप्पणी की ओर आकर्षित किया और आशा व्यक्त की कि इसका अर्थ आरेंज फ्री स्टेटसे शिक्षित भारतीयोंका बहिष्कार करना नहीं होगा।

अप्रैल १५: टिटानिक अटलांटिक-महासागरमें डूबा।

अप्रैल १९: एच० एस० एल० पोलकने दक्षिण आफ्रिकामें—खासकर बॉक्सबर्गमें सम्पत्तिके भारतीय मालिकोंके अधिकारों तथा मुस्लिम पत्नियोंके ट्रान्सवाल प्रवेशके बारेमें भारत सरकारको लिखा।

अप्रैल २४: जोहानिसबर्गमें मजिस्ट्रेट जोर्डनने हसन मुहम्मदकी पत्नीके मामलेमें फैसला दिया कि उनका विवाह वैध न होने कारण उन्हें ट्रान्सवालमें रहनेका अधिकार नहीं।

अप्रैल २७: एच० एस० एल० पोलकने जर्मिस्टन बस्तीके बारेमें भारत-सरकारको लिखा।

अप्रैल २८: जर्मिस्टन बस्तीकी सभामें गांधीजी, अ० मु० काछलिया, एल० डब्ल्यु० रिच, सोराबजी शापुरजी, थम्बी नायडू तथा अन्य लोगोंके भाषण।

अप्रैल २९: सर्वोच्च न्यायालयमें बाक्सबर्गके मामलेकी सुनवाई; फैसला सुरक्षित रखा गया।

ब्रिटिश लोकसभामें नाथलियाके मामलेके सम्बन्धमें प्रश्न।

मई ४ के पूर्व: स्पोर्टिंग स्टारको लिखे पत्रमें गांधीजीने वांडरर्स ग्राउंडमें प्रवेशकी अनुमति देनेके विषयमें एशियाइयोंको उच्चतर और निम्नतर दो श्रेणियोंमें विभक्त करनेका विरोध किया।

गांधीजी नेटाल भारतीय फुटबाल संघके संरक्षक पुनः निर्वाचित।

मई ७: जर्मिस्टन नगर पालिका द्वारा पासके गाँवमें रहनेवाले भारतीयोंको दिये गये एक मासके भीतर गाँव छोड़ देनेके आदेशपर ब्रिटिश लोक-सभामें प्रश्न।

मई ११: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए बहुपत्नीक विवाहके अन्तर्गत विवाहित पत्नियोंको ट्रान्सवालमें प्रवेशकी अनुमति देनेके जॉर्डनके फैसलेकी निन्दा की।

मई १४: ई० एफ० सी० लेनका पत्र; जिसमें नये प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकके ऑरेंज फ्री स्टेटमें आवश्यक हलफिया बयानसे सम्बन्धित खण्ड २८ में प्रस्तावित संशोधन दिया गया था और गांधीजीको सूचित किया गया था कि स्मट्स अधिवासके प्रश्नको हल करना चाहते हैं।

मई १६: गांधीजीने जोहानिसबर्गमें भारतीयोंके लिए पृथक स्कूल खोलनेसे इनकार करनेके ट्रान्सवाल प्रान्तीय परिषद्के निर्णयकी आलोचना की।

ब्रिटिश लोकसभामें जर्मिस्टनके भारतीयोंको दिये गये बेदखलीके नोटिसोंके बारेमें प्रश्न; उपनिवेश मन्त्री द्वारा हस्तक्षेप करनेमें अपनी असमर्थता व्यक्त।

मई २१: गांधीजीने ई० एफ० सी० लेनको उत्तर देते हुए इस बातपर सन्तोष व्यक्त किया कि सरकार नये प्रवासी विधेयकके अन्तर्गत आरेंज फ्री स्टेटमें हलफिया बयान तथा अधिवाससे सम्बन्धित कठिनाईको हल करना चाहती है।

मई ३०: प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक द्वितीय वाचनके लिए संघ विधान सभामें पेश।

मई ३१: गांधीजीने नये प्रवासी विधेयकके अन्तर्गत शिक्षित भारतीयोंके अन्तर्प्रान्तीय आवागमनके बारेमें ई० एफ० सी० लेनको लिखा।

जून १ के पूर्व: व्यापारिक परवानोंसे सम्बद्ध केप ब्रिटिश भारतीय संघकी याचिका विधान सभाके सदनमें पेश।

जून १: "एक दुर्भाग्यपूर्ण मामले" पर 'इंडियन ओपिनियन' में गांधीजीने एक भारतीय गिरमिटिया महिलाके साथ उसके मालिक द्वारा किये गये क्रूर व्यवहारका वर्णन किया और समस्त गिरमिट-प्रथाकी निन्दा की।

जून ६: प्रिटोरिया स्थित सर्वोच्च न्यायालयमें एल० डब्ल्यू० रिच तथा भायातके विरुद्ध मुकदमेकी सुनवाई।

जून ७: गांधीजी प्रिटोरिया जाकर चैमने और लेनसे मिले।

जून २२: संघ विधान सभामें प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकके द्वितीय वाचनपर हुई बहसके समय स्मट्सने बताया कि सरकार विधेयकको यथासम्भव इसी अधिवेशनमें पास करना चाहती है।

जून २४: संघ-संसद २३ सितम्बर, १९१२ तक के लिए उठ गई और प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयक स्थगित कर दिया गया।

जून २५: गांधीजीने तार द्वारा गृह-सचिवसे पूछताछ की कि संसदके स्थगित हो जाने-पर सरकारका प्रवासी विधेयकके बारेमें क्या इरादा है और अस्थायी समझौतेका भविष्य क्या होगा।

जून २६: फ्रीडडॉर्प स्थित बाड़ोंके यूरोपीय स्वामियोंको तीन मासके अन्दर एशियाई कब्जेदारोंको अपने बाड़ोंसे निकालनेके लिए दिये गये नोटिसोंके बारेमें गांधीजीने द० आ० ब्रि० भा० समितिको तार द्वारा सूचना दी।

तमिल कल्याण समितिकी बैठकमें प्रवासी विधेयकपर भाषण दिया।

जून २७: प्रवासी विधेयकको स्थगित कर देनेसे उत्पन्न स्थितिपर विचार करनेके लिए केप ब्रिटिश भारतीय संघकी बैठक।

जून २८: गांधीजी तथा कस्तूरबाका डर्बनको प्रस्थान।

जून २९: डर्बन पहुँचे।

दाउद मुहम्मद तथा अन्य हज यात्रियोंकी विदाईके अवसरपर डर्बनमें भाषण।

जून ३०: एच० एल० पॉलकी डर्बन स्थित भारतीय शैक्षणिक संस्थामें पुरस्कार वितरण समारोहकी अध्यक्षता की।

जुलाई ३: गांधीजी द्वारा दाउद मुहम्मदको मक्का जाते समय विदाई।

एच० एस० एल० पोलकने नेटालमें भारतीयोंकी शिक्षाके सम्बन्धमें भारत सर-कारको लिखा।

जुलाई ५: डर्बनसे जोहानिसबर्गके लिए प्रस्थान।

जुलाई ६ के पूर्व: सर्वोच्च न्यायालयने बाक्सबर्ग बाड़ोंसे सम्बन्धित मामलेमें एल० डब्ल्यू० रिच तथा भायातके विरुद्ध निर्णय दिया। रिचको आदेश दिया कि वे बाड़ोंका कब्जा सौंप दें और भायातको बेदखल कर दें।

जुलाई ६: कज़िन्स नेटालमें कार्यवाहक प्रवासी अधिकारी नियुक्त।

गांधीजीने पत्र लिखकर ई० एफ० सी० लेनसे पूछा कि प्रवासी विधेयक तथा अस्थायी समझौतेके भविष्यके बारेमें सरकारके क्या इरादे हैं।

जुलाई ७: डर्बनसे जोहानिसबर्ग पहुँचे।

जुलाई ११: एशियाई पंजीयक, एम० चैमनेसे मिले।

जुलाई १३: 'इंडियन ओपिनियन' में डॉ० म्युरिसनके इस वक्तव्यकी आलोचना की कि भारतीय झूठ बोलनेके आदी होते हैं।

भारतीय पत्नियोंके प्रवेशके सम्बन्धमें साक्ष्य निर्धारित करते हुए नेटालके प्रवासी अधिकारी कज़िन्स द्वारा जारी किये गये परिपत्रकी निन्दा की।

नेटाल भारतीयोंको सलाह दी कि वे अधिवासी प्रमाणपत्रोंके बन्द कर देनेके विरुद्ध संघर्ष करें।

जुलाई १६: कार्यवाहक गृह-सचिवने सूचना दी कि सरकार आगामी अधिवेशनमें संशो-धित विधान पेश करेगी; इस बीच वर्तमान विधानका प्रशासन चालू रहेगा।

जुलाई १७: गांधीजीने उत्तर देते हुए गृह-सचिवको लिखा कि सन्तोषजनक विधान पास होने तक अस्थायी समझौतेके चालू रहनेके बारेमें उन्हें ज्ञात हो गया है,

और इसलिए वर्षमें छः एशियाइयोंको प्रवेशकी अनुमति दी जायेगी; इस बातकी पुष्टि होनेपर वे नाम पेश करेंगे।

लॉर्डसभामें लॉर्ड ऍम्टहिलने अस्थायी समझौतेको भंग करनेसे सम्बद्ध उदाहरण दिये; कहा कि फिशर जिन्होंने गृहमन्त्रीके रूपमें स्मट्सका स्थान ग्रहण किया, भारतीयोंके प्रति स्मट्सके मुकाबले कम स्नेह रखते हैं।

जुलाई १९ : कार्यवाहक गृहसचिवने पुष्टि की कि पिछले वर्षका अस्थायी समझौता विधान पास होने तक चालू रहेगा और वर्षके लिए छः शिक्षित भारतीयोंको प्रवेशकी अनुमति दी जायेगी।

जुलाई २० : भारतसे लौटनेवाले लोगोंसे नये प्रमाण माँगनेके लिए गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में नेटालके प्रवासी अधिकारी कज़िन्सकी पुनः आलोचनाकी। इच्छा व्यक्त की कि नेटाल भारतीय कांग्रेस मामलेको हाथमें ले।

'इंडियन ओपिनियन' में भारतीयोंको सलाह दी कि वे डॉ० म्युरिसनकी सब तरहसे सहायता करें और मामलोंको न छिपाएँ।

जुलाई २१ : श्रीमती तिलककी मृत्युपर जोहानिसवर्गमें बुलाई गई शोकसभामें भाषण दिया।

जुलाई २२ : एशियाई पंजीयकको पत्र लिखकर माँग की कि कार्यवश पंजीयन कार्यालय जानेवाले भारतीयोंको प्रतीक्षाके लिए स्थानकी सुविधा दी जाये। गृह-सचिवसे लिखकर प्रार्थना की कि आर० एम० सोढ़ाको व्यापारिक परवाना जारी किया जाये और उनसे पंजीयन प्रमाणपत्र प्रस्तुत करनेके लिए न कहा जाये।

जोहानिसवर्गमें वी० ए० चेट्टियारको दिये गये विदाई भोजके अवसरपर भाषण दिया।

जुलाई २३ : एम० चैमनेसे भेंट।

जुलाई २५ : गोखलेने गांधीजीको तार द्वारा सूचित किया कि वे ५ अक्तूबरको इंग्लैंडसे दक्षिण आफ्रिकाके लिए जहाजसे प्रस्थान करेंगे।

जुलाई २६ : चैमनेने गांधीजीको सूचित किया कि उनके कार्यालयमें जानेवाले भारतीयों-को स्थानकी कोई सुविधा नहीं दी जा सकती।

प्रवासी भारतीय पत्नियोंसे विवाहका प्रमाण प्रस्तुत करनेके लिए प्रवासी अधि-कारी कज़िन्स द्वारा जारी किये गये परिपत्रका विरोध करते हुए नेटाल भारतीय कांग्रेसने गृहसचिवको लिखा।

मणिलाल डॉक्टर केपसे फीजीके लिए रवाना।

जुलाई २९ : पंजीयन कार्यालयमें प्रतीक्षा स्थलके लिए फिरसे एशियाई पंजीयकको लिखा।

जुलाई ३० : गो० कृ० गोखले भारतीय प्रशासनिक सेवाके सम्बन्धमें बनाये गये शाही आयोगके सदस्य नियुक्त।

जुलाई ३१ : ए० ओ० ह्यूमकी मृत्यु।

अगस्त १ : जोहानिसवर्गके तमिल समाज द्वारा ए० वी० चेट्टियारको दिये गये भोजमें गांधीजीका भाषण।

रतन टाटा द्वारा सत्याग्रह कोषके लिए तीसरी बार २५,००० रु० का दान। बम्बईकी सार्वजनिक सभाने उपनिवेशोंमें — विशेषकर दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारकी निन्दा की।

अगस्त ३: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में जर्मिस्टनके भारतीयोंको सलाह दी कि वे नये एशियाई बाजारके लिए चुने गये अस्वास्थ्यकर स्थानपर स्थानान्तरण न करें। शिक्षित व्यक्तियोंके आजीविका उपार्जन करनेके अधिकारके बारेमें गृहमन्त्रीको लिखा; आर० एम० सोढ़ाके लिए व्यापारिक परवानेके सम्बन्धमें निर्णय करनेकी माँग की।

अगस्त १०: अ० मु० काछलियाके साथ रूडीपूर्ट तथा क्रूगर्सडॉर्प गये।

'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए भारतीयोंसे अपील की कि वे गो० कृ० गोखलेके दक्षिण आफ्रिका पहुँचनेपर उनका उपयुक्त स्वागत करनेके लिए एक हो जायें।

अगस्त ११: टॉल्स्टॉय फार्म लौटे।

अगस्त १६: एशियाई पंजीयकने गांधीजीको सूचना दी कि आर० एम० सोढा तथा अन्य विशेष रूपसे [पंजीयनसे] मुक्त शिक्षित एशियाइयोंको उनके अधिवासको वैध बनानेवाले विधानके पास होने तक व्यापारिक परवाने जारी नहीं किये जा सकते।

अगस्त १७: 'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए भारतीयोंका ध्यान जोहानिसबर्गमें दूसरी बार चेचक फैलनेकी रिपोर्टकी ओर खींचा और अपील की कि वे बीमारीकी रोकथामके लिए डा० पोर्टरको सहायता दें।

अगस्त २२: जोहानिसबर्गके थियॉसॉफिकल लॉजमें भाषण दिया।

'ट्रान्सवाल लीडर' को दी गई भेंटमें चेचककी रोकथामके लिए रंगदार लोगोंको सर्वथा पृथक कर देनेका विरोध किया।

अगस्त २५: गो० कृ० गोखलेके स्वागतका प्रबन्ध करनेके सम्बन्धमें बुलाई गई ब्रि० भा० सं० की बैठकमें भाषण दिया; आगाखाँके दक्षिण आफ्रिका तथा पूर्व आफ्रिका आनेके इरादेके बारेमें घोषणा की।

अगस्त ३०: कस्तूरबा गांधी तथा अन्योंके साथ डर्बनके लिए प्रस्थान।

अगस्त ३१: डर्बन पहुँचे; फीनिक्सके लिए रवाना हुए।

'इंडियन ओपिनियन' में स्वर्गीय ए० ओ० ह्यूमपर लिखा।

केप टाउन लौटनेवाले ४ भारतीयोंके मामलेपर टिप्पणी की। उन्हें प्रवेशकी अनुमति नहीं दी गई थी, क्योंकि खराब मौसमके कारण उन्हें लानेवाला जहाज देरसे पहुँचा था।

सितम्बर ४: एच० एस० एल० पोलक तथा श्रीमती पोलक भारतसे डर्बन पहुँचे।

सितम्बर ७: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में एच० एस० एल० पोलक द्वारा भारतमें किये गये कार्यकी सराहना की।

सितम्बर १२: जोहानिसबर्ग मजिस्ट्रेटके न्यायालयमें फ्रीडडार्पके वाड़ोंसे रंगदार किरायेदारोंको बेदखल करनेके लिए गोरोंको मजबूर करनेकी कार्यवाही प्रारम्भ।

सितम्बर १४: फीनिक्स न्यासपत्र 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित।

गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए प्रवेशके इच्छुक भारतीयोंके सम्बन्धमें नेटाल प्रवासी अधिकारी, कज़िन्स द्वारा की गई गैर-कानूनी कार्रवाईकी आलोचना की।

'इंडियन ओपिनियन' में विज्ञापन देना वन्द करनेका इरादा जाहिर किया।

डर्बनसे जोहानिसबर्गके लिए प्रस्थान।

अक्तूबर ५: गोखलेका इंग्लैंडसे दक्षिण आफ्रिकाके लिए प्रस्थान।

अक्तूबर ८: मॉंटेनीग्रो द्वारा तुर्कीके खिलाफ युद्धकी घोषणा।

अक्तूबर ९: गांधीजी एम० चैमनेसे मिले।

अक्तूबर १६: पत्र लिखकर हरिलाल गांधीको वताया कि उन्होंने इंग्लैंडमें कानूनके अध्ययनके लिए उनके स्थानपर सोरावजीको क्यों चुना।

अक्तूबर १८: कैलेनबैक और अन्य लोगोंके साथ केपके लिए प्रस्थान।

अक्तूबर २०: केप पहुँचे।

अक्तूबर २१: गांधीजी कज़िन्ससे मिले।

गोखले स्वागत समितिने जनरल बोथाको लिखा कि गोखलेकी आसन्न यात्राको दृष्टिगत करते हुए भूतपूर्व गिरमिटियोंपर से ३ पौंडी कर स्थगित कर दिया जाये।

अक्तूबर २२: गो० कृ० गोखले केप टाउन पहुँचे।

सिटी हॉलमें स्वागत; महापौरने अध्यक्षता की। डॉ० ए० एच० गुलने आम अभिनन्दन पढ़ा। हिन्दू संघ, कोंकणी मुस्लिम लीग तथा तमिल समाजने मानपत्र भेंट किये। गांधीजी, संसद सदस्य डब्ल्यू० पी० श्राइनर तथा डा० अब्दुर्रहमानके भाषण। उत्तरमें गो० कृ० गोखलेका भाषण। गांधीजीने भेंटमें 'केप आर्गस' को वताया कि गोखले दक्षिण आफ्रिकामें सम्पूर्ण भारतीय प्रश्नकी जाँच पड़ताल करेंगे।

अक्तूबर २३: गो० कृ० गोखलेने डब्ल्यू० पी० श्राइनर तथा सर फ्रेड्रिक स्मिथको भेंट दी। स्वागत समितिसे भी भेंट की। शिकायतोंपर विचार किया।

अक्तूबर २४: सिविल सर्विस क्लबमें जॉन ऐक्स० मेरीमैनसे भेंट।

गांधीजीके साथ किम्बर्लेके लिए प्रस्थान।

वेलिंग्टनमें भारतीयोंके शिष्टमण्डल।

अक्तूबर २५: डे'आरमें भारतीयोंका शिष्टमण्डल, श्रीमती कार्नराइट श्राइनर (ओलिव श्राइनर) से मिले।

किम्बर्लेसे विशेष रेलगाड़ी। २०० भारतीयोंने मॉडर रिवरमें गोखलेसे गाड़ीमें भेंट की।

वीकान्सफील्डमें महापौर तथा अन्य लोगों द्वारा स्वागत।

सायंकाल ५.३० पर किम्वर्ले पहुँचे। महापौर तथा अन्य लोगोंने स्वागत किया।

टाउन हॉलमें स्वागत, महापौरने अध्यक्षता की। गांधीजीने सभामें भाषण दिया।

अक्तूबर २६: खानें देखने गये।

ब्लूमफॉंटीनके भारतीयोंकी शिकायतोंके वारेमें बतानेके लिए जे० मैक्लेरेनको वलाया।

सायंकाल ८.४५ पर भोज; वीकान्सफील्डके महापौरने अध्यक्षता की; गांधीजीने भाषण दिया।

अक्तूबर २७: कान्स्टेंशिया हॉलमें भारतीयों द्वारा स्वागत।

सायंकाल ६ वजे गोखले और गांधीजी द्वारा किम्वर्लेसे प्रस्थान।

विडसार्टन, क्रिस्चियाना तथा व्लूम हॉफमें मानपत्र भेंट किये गये।

इन सभी स्थानोंमें प्रमुख नागरिक उपस्थित रहे।

अक्तूबर २८: क्लार्क्सडॉर्पमें विशेष रेलगाड़ी मिली, जिसमें २०० सवारियाँ थी।

प्रातः ६.३० वजे एक्सचेंज हॉलमें स्वागत, महापौरने अध्यक्षता की।

ब्रिटिश भारतीयों द्वारा शिकायतोंका चिट्ठा भेंट।

प्रातः ८.३० वजे पॉचेफस्ट्रूम पहुँचे। टाउन गार्डन्समें स्वागत तथा मानपत्र भेंट।

सायं २.०० वजे क्रूगर्सडार्प पहुँचे। स्टेशनपर महापौर द्वारा स्वागत और मानपत्र भेंट। वर्गर्सडॉर्पकी भारतीय वस्ती गये।

सायं ४.०० वजे जोहानिसवर्ग पहुँचे। स्टेशनपर महापौर द्वारा स्वागत। ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा भेंट किया गया अभिनन्दन पत्र गांधीजीने पढ़ा, साथ ही जोहानिसवर्गके हिन्दुओं, हमीदिया इस्लामिया अंजुमन, तमिल कल्याण समिति, पाटीदार संघ, पीटर्सवर्ग तथा क्रैडॉकके भारतीयोंने भी मानपत्र भेंट किये।

अक्तूबर २९: जोहानिसवर्ग यूरोपीय समिति द्वारा गोखलेका कार्लटन होटलमें स्वागत। विधान सभा सदस्य पैट्रिक डंकन, विधान सभा सदस्य ड्रमण्ड चैपलिन तथा विलियम हॉस्केनके भाषण। गोखलेने उत्तर देते हुए दक्षिण आफ्रिका आनेका अपना उद्देश्य बताया।

अक्तूबर ३०: क्रेसवेल तथा दूसरे विधानसभाके सदस्यों एवं पुर्तगाली वाणिज्य दूतने गोखलेसे भेंट की।

'ट्रान्सवाल लीडर'के प्रतिनिधिने गोखले तथा गांधीजीसे भेंट ली।

गोखलेने पारसी शिष्टमण्डलको भेंट दी।

दोपहरके वाद गांधीजी व गोखले विलियम हॉस्केनके मकानपर हुई सभामें सम्मिलित हुए।

अक्तूबर ३१: ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा मैसॉनिक हॉलमें भोज, महापौरने अध्यक्षता की। महापौर एलिस, विलियम हॉस्केन, पैट्रिक डंकन, जे० जे० डोक, एल० डब्ल्यू० रिच, गोखले तथा गांधीजीके भाषण।

नवम्बर १: चीनी-संघ द्वारा गोखलेका सम्मान।

पठान-शिष्टमण्डल, ईसपमियाँ-शिष्टमण्डल, हवीव मोटन-शिष्टमण्डल, व्यापारी शिष्टमण्डलको भेंट दी।

ट्रान्सवाल महिला संघ द्वारा स्वागत; श्रीमती वॉगल द्वारा मानपत्र भेंट।

ड्रिल हॉलमें भारतीयोंकी सभा।

नवम्बर २: गांधीजी व गोखलेका टॉल्स्टॉय फार्मके लिए प्रस्थान।

नवम्बर ३: गांधीजीने गोखलेकी यात्रा तथा उनका भारतके लिए प्रस्तावित प्रस्थानके वारेमें श्रीनिवास शास्त्रीको लिखा।

472

नवम्बर ५: टॉल्स्टॉय फार्ममें दो दिन आराम करनेके बाद गोखले गांधीजीके साथ जोहानिसबर्ग लौटे। ड्रमण्ड चैपलिनके घरपर चाय; पर्सीफिट्ज़ पैट्रिकसे मुलाकात।

नवम्बर ६: जर्मिस्टन तथा बॉक्सबर्ग बस्तियाँ देखीं।
एलिससे भेंटके लिए गये।

नवम्बर ७: न्यू कैसिल तथा डंडीमें मानपत्र भेंट।
लेडी स्मिथमें लोगोंको भेंट दी।
मैरित्सबर्ग पहुँचे। टाउन हॉलमें स्वागत; गांधीजीका भाषण।

नवम्बर ८: भारतीय हाईस्कूलकी सभामें भारतीयोंके बारेमें विचार किया गया।
परवाना अधिकारीसे मुलाकात।
मैरित्सबर्ग स्वागत समिति द्वारा कैमडन होटलमें दोपहरके भोजनकी व्यवस्था; गांधीजीका भाषण।
दोपहरके बाद विशेष रेलगाड़ीसे डर्बनके लिए प्रस्थान।
डर्बन पहुँचे। स्टेशनपर महापौर, चीफ मजिस्ट्रेट तथा अन्य लोगों द्वारा स्वागत। जुलूसका श्री मूसाके मकानकी ओर प्रस्थान। सायंकाल, टाउन हॉलमें स्वागत; महापौरने अध्यक्षता की। महापौर तथा अन्य लोगोंके भाषण। अभिनन्दनपत्र भेंट। गांधीजीने भी भाषण दिया।

नवम्बर ९: व्यापारियोंका शिष्टमण्डल।
अल्बर्ट पार्कमें बच्चोंके खेलोंमें पुरस्कार वितरण किये।

नवम्बर १०: लॉर्ड्स ग्राउंडकी सभामें तीन पौंडी कर देनेवालोंकी शिकायतें सुनीं। दोपहरके बाद विशेष रेलगाड़ीसे इसीपिंगो गये; सायं ५ बजे लौटे। सायंकाल मोटरसे फीनिक्स गये।

नवम्बर ११: दोपहरके बाद फीनिक्ससे डर्बन लौटे।
सायंकाल ड्रिल हॉलमें भोज, सर डेविड हंटरने अध्यक्षता की। भोजमें गांधीजीने भी भाषण दिया।

नवम्बर १२: सिडनहम कालेज देखने गये। व्यापार-मण्डलसे मिले।
माउंट एजकम्ब गये; वहाँ गिरमिटिया भारतीयोंसे मिले।
पारसी रुस्तमजीके घरमें स्वागत समितिसे मिले।
प्रिटोरियाके लिए प्रस्थान।

नवम्बर १३: मार्गमें फोक्सरस्ट, स्टैंडर्टन और हाइडेलबर्गमें मानपत्र भेंट।
सायंकाल प्रिटोरिया पहुँचे। स्टेशनपर उप-महापौर, चैमने तथा अन्य लोगों द्वारा स्वागत।

नवम्बर १४: प्रातः मन्त्रियों — बोथा, स्मट्स तथा फिशरसे भेंट।
सायंकाल टाउन हॉलमें स्वागत, गांधीजीने भी भाषण दिया।

नवम्बर १५: प्रातः विढमसे मिलनेके लिए मोटरसे जोहानिसबर्ग गये।
गवर्नर जनरलके साथ दोपहरका भोजन।
दोपहरके बाद लॉलीके लिए प्रस्थान।

नवम्बर १६: गवर्नर जनरलने गोखलेके साथ हुई बातचीतका गुप्त विवरण साम्राज्य-सरकारको भेजा।

नवम्बर १७: चैपलिनके घरपर सर थॉमस स्मार्टसे मिले।

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्ष, इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, पाटीदार संघके अध्यक्ष तथा श्री फिलिप्सको मिलने गये।

सायं ८.४५ पर लोरेंको मार्क्विसके लिए प्रस्थान।

नवम्बर १८: लोरेंको मार्क्विसमें भोज; गांधीजीने भी भाषण दिया।

बीराके लिए जहाजसे प्रस्थान।

नवम्बर २०: बीरा पहुँचे।

नवम्बर २१: बीरामें मानपत्र भेंट।

नवम्बर २३: बीरासे प्रस्थान।

नवम्बर २५: मोजाम्बिक पहुँचे। नगरमें मानपत्र भेंट।

दोपहरके बाद मोजाम्बिकसे प्रस्थान।

नवम्बर २६: जहाजपर गांधीजीने वचन दिया कि अपनी अनुपस्थितिमें दक्षिण आफ्रिकामें कार्य चालू रखनेकी व्यवस्था किये बिना वे भारतके लिए प्रस्थान नहीं करेंगे; कार्य सम्भवत: पोलकके हाथोंमें सौंप दिया जायेगा।

नवम्बर २७: जंजीबार पहुँचे। नगर देखने गये। विक्टोरिया गार्डन्समें समारोह।

नवम्बर २८: दोपहरके बाद नगरमें मानपत्र भेंट किया गया।

गोखले, गांधीजी तथा कैलेनबैकका एस० एस० प्रेजीडेंटसे प्रस्थान।

नवम्बर २९: प्रातः टोंगा पहुँचे।

दोपहरके बाद गोखलेसे विदाई ली।

गांधीजी तथा कैलेनबैक एस० एस० ट्रेवोरापर सवार; डेकमें सफर।

नवम्बर ३०: गांधीजी और कैलेनबैक जंजीबार पहुँचे।

दिसम्बर १: दार-ए-सलाम पहुँचे। जहाजसे उतरे। गांधीजीने पहली बार भारतीय पोशाक पहनी।

दिसम्बर ६: दार-ए-सलामसे प्रस्थान।

दिसम्बर ७: मोजाम्बिक पहुँचे।

दिसम्बर ८: मोजाम्बिकसे प्रस्थान।

दिसम्बर १३: गांधीजी डेलागोआ-बे पहुँचे। जहाजसे उतरनेकी अनुमति देनेसे पहले उन्हें रोक लिया गया।

गो० कृ० गोखले बम्बई पहुँचे।

दिसम्बर १४: गांधीजी जोहानिसबर्ग पहुँचे और लॉली गये।

बम्बईमें गोखलेने दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी स्थिति और समस्याओंपर सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

दिसम्बर १८: गांधीजीका डर्बन प्रस्थान।

दिसम्बर २१: डर्बनमें सर जॉन ह्युलेटसे भेंट।

दिसम्बर २२: दयालवन्धुओंको, जो अपनी पत्नियोंके साथ भारतसे ट्रान्सवाल आ थे, प्रवासी अधिकारी कज़िन्सने डर्वनमें उतरनेकी अनुमति नहीं दी।

दिसम्बर २८: भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके वांकीपुर अधिवेशनमें गो० कृ० गोखले गिरमिट-प्रथाको सर्वथा बन्द कर देनेकी माँगसे सम्वन्धित प्रस्ताव पास।

'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए गांधीजीने आतंकवादियों द्वारा दिल्लीमें हार्डिंजकी हत्या करनेके प्रयत्नोंकी निन्दा की।

दिसम्बर ३०: आगजी और अमीअप्पन दोनों दुबारा विवाह करके भारतसे लौट डर्वन पहुँचे। आगजीकी पत्नीको जहाजसे उतरनेकी इजाजत नहीं दी गई अमीअप्पनकी पत्नीको प्रवेशकी अनुमति देनेसे इनकार कर दिया गया।

१९१३

जनवरी २: गांधीजीका डर्वनसे प्रस्थान।

जनवरी ३: डर्वनकी गोखले समितिने आगजी और अमीअप्पनके मामलेके वारेमें मन्त्रीको तार दिया।

जनवरी ४ के पूर्व: गज्जर नामक केपके एक भारतीयको जो डर्वन गया था, रा नीतिक प्रवासी घोषित किया गया।

एच० एस० एल० पोलकने नेटालके प्रवासी अधिकारी कजिन्स द्वारा दयालवन्धुओं तंग करनेके सम्वन्धमें गृहमन्त्रीके सचिवको लिखा; दयालवन्धु तथा गज्जरके वा 'नेटाल मर्क्युरी' को भी लिखा।

'नेटाल मर्क्युरी' ने सम्पादकीयमें कज़िन्सकी कड़ी निन्दा की।

जनवरी ४: गांधीजी जोहानिसवर्ग पहुँचे।

'इंडियन ओपिनियन' में लिखते हुए वम्बई तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रे वांकीपुर अधिवेशनमें दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी समस्याओंपर दिये गये गोखले भाषणोंकी सराहना की।

एक और लेखमें 'इंडियन ओपिनियन' के अभिन्यास तथा विषयसूचीमें किये ग परिवर्तनोंका विवेचन किया।

'इंडियन ओपिनियन' के गुजराती विभागमें सामान्य ज्ञान तथा स्वास्थ्यपर लेर मालाएँ प्रारम्भ कीं।

जनवरी ७: अ० मु० काछलियाने दयालवन्धुओंके वारेमें गृहमन्त्रीके सचिवको लिखा

जनवरी ८: एशियाई पंजीयक द्वारा फोक्सरस्टमें रोके गये दयालवन्धुओंपर मुकदम चलानेका आदेश।

जनवरी ११ के पूर्व: हैरी स्मिथकी कज़िन्सके स्थानपर नेटाल प्रवासी अधिकारी रूपमें नियुक्ति।

जनवरी ११: 'इंडियन ओपिनियन' में निज़ाम द्वारा सत्याग्रह कोषके लिए २,५०० रु देनेकी घोषणा प्रकाशित।

जनवरी १८ के पूर्व: गांधीजी व स्कूल टॉल्स्टाय फार्मसे फीनिक्स स्थानान्तरित।

जनवरी १८: 'इंडियन ओपिनियन' ने गांधीजीके इस निर्णयकी सूचना दी कि यदि अपेक्षित प्रवासी विधेयक संसदके आगामी अधिवेशनमें पास हो जाता है तो वे इस वर्षके मध्यमें भारतके लिए प्रस्थान कर देंगे।

गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में लिखा कि सरकार ट्रान्सवाल या संघमें अधिवासके अधिकारी भारतीयोंके सम्बन्धमें दिये गये अपने वचनसे फिर गई है और समाजमें प्रचण्ड क्षोभ फैलनेकी सम्भावनाकी ओर संकेत किया।

जनवरी २४ के पूर्व: एच० एस० एल० पोलक आगजी तथा अमीअप्पनकी पत्नियोंके प्रवेशके सम्बन्धमें मुख्य प्रवासी अधिकारीसे मिले।

जनवरी २५ के पूर्व: 'स्टार' में गोखलेकी दक्षिण आफ्रिकाकी यात्राके समय बोथा और हर्टसॉगके बीच मतभेद होनेकी रिपोर्ट प्रकाशित।

जनवरी २५: भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंपर से ३ पौंडी कर हटानेके सरकारके निर्णयके सम्बन्धमें 'टाइम्स आफ नेटाल' में रिपोर्ट प्रकाशित।

गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में उक्त निर्णयका स्वागत किया।

एक दूसरे लेखमें व्यापारिक परवानोंके लिए कानून बनानेका अधिकार प्रान्तीय परिषदोंको दिलानेवाले प्रस्तावित वित्तीय-सम्बन्ध विधेयकपर विचार किया; भारतीयोंसे जबरदस्त विरोध करनेकी अपील की।

जनवरी २७: उप-गृह-सचिवने ब्रि० भा० सं० को सूचना दी कि दयालबन्धुओंपर से मुकदमा उठा लिया जायगा और उनका पंजीयन कर दिया जायेगा।

जनवरी ३१: संघ विधान सभामें टी० श्राइनरने शस्त्र तथा गोला-बारूद विधेयकमें रंगभेदका विरोध किया।

फरवरी १: ब्रि० भा० सं० ने गृहमन्त्रीको लिखा कि ट्रान्सवालमें अधिवासका दावा करनेवाले भारतसे लौटे हुए लोगोंको प्रवासी अधिकारी द्वारा बन्दरगाहोंपर अभ्यागत पास जारी कर देने चाहिए।

फरवरी ७: वित्त-मन्त्रीने संघ-संसदमें बताया कि भारतीयोंपर से तीन पौंडी कर हटानेका प्रश्न अभी विचाराधीन है।

गृह-मन्त्रालयने ब्रि० भा० सं० को सूचना दी कि बन्दरगाहोंपर आनेवाले तथा प्रवेशके अधिकारका दावा करनेवाले भारतीयोंके विषयमें सब प्रकारकी पूछताछ प्रवेशवाले बन्दरगाहपर ही होनी चाहिए।

फरवरी ८ के पूर्व: एम० ए० कोतवालके नाबालिग पुत्रको अस्थायी अनुपस्थितिके बाद डर्बन लौटते समय अधिवासी प्रमाणपत्रके होते हुए भी जहाजसे उतरनेकी अनुमति नहीं दी गई क्योंकि उसके पिता नेटालमें नहीं थे।

निर्वासनसे बचनेके लिए सर्वोच्च न्यायालयसे निषेधाज्ञा लेनी पड़ी।

केप टाउन निवासी मौलवी अब्दुल वहीदके नाबालिग पुत्रके 'मार्कग्राफ' जहाजसे डर्बन पहुँचनेपर उसे रोक लिया गया और उसी जहाजसे असंरक्षित अवस्थामें ही वापस भेज दिया गया।

फरवरी ८: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में प्रवासी अधिकारियोंको दिये गये तानाशाही अधिकारोंकी आलोचना की।

फरवरी ११ : लॉर्ड ऍम्टहिलने लॉर्ड-सभामें गोखलेकी दक्षिण आफ्रिकाकी यात्राके परिणामके बारेमें प्रश्न पूछा और प्रस्ताव रखा कि कागजात सदन-पटलपर रखे जायें। उपनिवेश उपसचिवने उत्तर दिया कि यात्रा गैर सरकारी थी और उनके पास सदनके सामने रखनेके लिए कोई कागजात नहीं।

फरवरी १३ : ब्रि० भा० सं० के अध्यक्षने गृह-मन्त्रालयको फिरसे लिखा और जोर दिया कि भारतसे लौटनेवाले भारतीयोंको प्रवेशके बन्दरगाहोंपर अभ्यागत पास दे दिये जायें।

फरवरी १४ : गांधीजीने पत्रमें गोखलेको लिखा कि बोथा मन्त्रिमण्डलमें आन्तरिक मत-भेदोंके कारण प्रतिज्ञात विधान पुनः निलम्बित कर दिया जायेगा; यदि ऐसा हुआ तो वे वर्षके मध्यमें भारतके लिए प्रस्थान करनेमें असमर्थ होंगे। मन्त्रीगण अपने दिये गये आश्वासनोंका पालन नहीं कर रहे हैं और प्रवासी अधिनियमको अत्यन्त कठोरताके साथ अमलमें लाया जा रहा है।

फरवरी २४ : उप-गृह-सचिवने ब्रि० भा० सं० को सूचना दी कि प्रवेशके इच्छुक ट्रान्सवालके भारतीयोंके लिए बन्दरगाहोंपर किये गये प्रबन्धोंको बदला नहीं जा सकता।

फरवरी २८ : एम० ए० गोगाकी परवाना अधिकारीके उस निर्णयके खिलाफ की गई अपील खारिज हुई जो उसने उनके व्यापारिक परवानेको उनके और उनके पुत्रके नाम परिवर्तित करनेके सम्बन्धमें दिया था।

मार्च ३ : संघ संसदमें वित्तीय सम्बन्ध विधेयकका जिसमें भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयों-पर से ३ पौंडी कर हटानेका उपबन्ध था, द्वितीय वाचन पारित हुआ।

मार्च ४ : ब्रि० भा० सं० ने पुनः गृह-सचिवको लिखा कि बन्दरगाहोंपर उन ट्रान्सवाली भारतीयोंकी कठिनाइयाँ दूर की जायें जो पहलेसे ही पंजीकृत हैं या जो पंजी-यनके अधिकारी हैं।

मार्च ८ : दाउद मुहम्मद मध्य पूर्व तथा भारतका दौरा कर दक्षिण आफ्रिका लौटे।

मार्च ९ : जोहानिसबर्ग साहित्यिक तथा वाद-विवाद संघकी स्थापना; गांधीजी संरक्षक निर्वाचित।

मार्च १४ : केप सर्वोच्च न्यायालयमें न्यायमूर्ति सर्लने हसन ईसप द्वारा अपनी पत्नी बाई मिरियमके निर्वासनके खिलाफ की गई अपील इस आधारपर खारिज कर दी कि वह हसन ईसपकी वैध पत्नी नहीं है, क्योंकि उसका विवाह मुसलमानी प्रथाके अनुसार हुआ था।

मार्च १५ : गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन'में नाबालिगों तथा पत्नियोंको ट्रान्सवाल प्रवेशके लिए आवश्यक प्रक्रिया तथा साक्ष्यके बारेमें बताया।

मार्च २० : एक ट्रान्सवाली सीरियाईने उच्च न्यायालयमें अपील की कि हुतर बस्तीमें उसके नामपर दो बाड़ोंका पंजीयन किया जाये, क्योंकि सीरियाइयोंको भारतीयों तथा रंगदार लोगोंपर लागू होनेवाले कानूनोंसे विमुक्त रखा गया है; निर्णय सुरक्षित रखा गया।

मार्च २२ के पूर्व : इब्राहीम कासिमके नाबालिग पुत्र हसनमियाँके मामलेपर 'इंडियन ओपिनियन' में टिप्पणी करते हुए गांधीजीने लिखा कि संघ-सरकार प्रवेशके इच्छुक नाबालिगोंके जन्म-प्रमाणपत्र पेश करनेपर जो इतना जोर दे रही है उससे मालूम पड़ता है कि वह बच्चोंके प्रवेशमें कठिनाइयाँ उत्पन्न करना या उसे बिलकुल बन्द करना चाहती है।

मार्च २४ : गृहमन्त्रीके निजी सचिवको लिखा कि पिछले वर्षमें प्रवेशके लिए गांधीजीने शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंके जो छः नाम भेजे थे उनमें से जिन दोको एशियाई पंजीयकने नामंजूर किया था उन्हें अस्थायी समझौतेकी शर्तके अनुसार पुनः ले लिया जाये। पूछताछ की कि क्या अस्थायी समझौतेको मूर्त रूप देनेवाला प्रस्तावित प्रवासी विधेयक संसदके वर्तमान अधिवेशनमें पेश किया जायेगा।

मार्च २६ : बाई मरियमके मामलेमें दिये गये न्यायमूर्ति सर्लके फैसलेपर विचार करनेके लिए जोहानिसबर्गमें तमिल कल्याण समितिकी बैठक।

मार्च २९ के पूर्व : सर्वोच्च न्यायालयके नेटाल खण्डपीठके मास्टरने एक मुसलमान विधवा बाई जनूबीके मामलेमें उत्तराधिकार-कर निश्चित करनेके लिए उसके विवाहकी वैधतापर सन्देह व्यक्त किया और माँग की कि इस सम्बन्धमें सर्वोच्च न्यायालयका निर्णय प्राप्त किया जाये।

मार्च २९ : गांधीजीने उक्त मामलेपर 'इंडियन ओपिनियन' में टिप्पणी करते हुए एक पुराने कानूनकी इस नई व्याख्याको 'अप्रत्याशित विपत्ति' का नाम दिया।

मार्च ३० : सर्लके निर्णयपर विचार करनेके लिए जोहानिसबर्गके हमीदिया इस्लामिया हॉलमें भारतीयोंकी सार्वजनिक सभा बुलाई गई, दुःख व्यक्त किया गया और सरकारसे प्रार्थना की गई कि भारतीय धर्मोंके अनुसार किये गये विवाहोंकी वैधता स्वीकार करनेके लिए प्रतिकारात्मक विधान पेश किया जाये।

पारिभाषिक शब्दावली

अधिनियम – ऐक्ट
अधिराज्य – डोमिनियन
अधीक्षक – सुपरिंटेंडेंट
अनुमतिपत्र – परमिट
अभ्यावेदन – रिप्रेजेन्टेशन
अवधान समिति – विजिलंस कमिटी
असंशोधित – अनरिवाइज्ड
अस्थायी प्रमाणपत्र – टेंपररी परमिट
अस्वच्छ क्षेत्र स्वामित्व हरण आयोग – इनसैनिटरी एरिया एक्सप्रोप्रिएशन कमिशन
आहत सहायक दल – ऍम्ब्यूलंस कोर
एशियाई पंजीयन अधिनियम – एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट
कस्बा अधिनियम – टाउनशिप ऐक्ट
कस्बा कानून – टाउनशिप-लॉ
कानून मुन्शी – आर्टिकल्ड क्लार्क
गृह-मन्त्री – मिनिस्टर ऑफ इंटीरियर
गृह-सचिव – सेक्रेटरी फॉर इंटीरियर
गोरा संघ – व्हाइट लीग
जन-स्वास्थ्य विभाग – पब्लिक हेल्थ डिपार्टमेंट
डोली वाहक दल – स्ट्रेचर बेअरर कोर
दस्तावेज – डीड
धारा – क्लॉज
नगर परिषद् – टाउन कौंसिल
नामांकनपत्र – नॉमिनेशन
निकाय – बोर्ड
निकासी अनुमतिपत्र – विजिटर्स परमिट
निरीक्षण निकाय – सुपरिंटेंडिंग बोर्ड
निर्वासन – डिपोर्टेशन
निषिद्ध प्रवासी – प्रोहिबिटेड इमिग्रैंट
निष्कर स्वामित्व – फ्री होल्ड
निष्पादक – एक्ज़ीक्यूटर्स
नौसेना संघ – नेवी लीग
न्यायपीठ – बेंच
न्याय समिति – ज्युडिशियल कमिटी
न्यायिक न्यायाधिकरण – ज्युडिशियल ट्रिब्यूनल
न्यायोचित स्वामित्व – इक्विटेबल ओनरशिप
न्यासपत्र – ट्रस्ट डीड
न्यासी – ट्रस्टी
पंजीकृत, पंजीयित – रजिस्टर्ड
पंजीयन पुस्तक – रजिस्टर
पंजीयन प्रमाणपत्र – रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट
पट्टा स्वामित्व – लीज होल्ड
परवाना – लाइसेंस
परवाना अधिनियम – लाइसेंसिंग ऐक्ट
परवाना निकाय – लाइसेंसिंग बोर्ड
पृथक्करण – सेग्रीगेशन
प्रगतिवादी दल – प्रोग्रेसिव पार्टी
प्रतिष्ठान – सेटिलमेंट
प्रवास – इमिग्रेशन
प्रवासी अधिकारी – इमिग्रेशन ऑफिसर
प्रवासी कानून – इमिग्रेशन-लॉ
प्रवासी प्रतिबंधक अधिनियम – इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट
प्रवासी प्रतिबंधक विधेयक – इमिग्रैंट्स रिस्ट्रिक्शन बिल
प्रशासक – ऐडमिनिस्ट्रेटर
बस्ती – लोकेशन
बस्ती समिति – लोकेशन कमिटी
ब्रिटिश कॉमन्स् सभा – हाउस ऑफ कॉमन्स्
भठियार खाना – बेकरी
भारत कार्यालय – इंडिया ऑफिस
भारतीय प्रवासी आयोग – इंडियन इमिग्रेशन कमिशन
भारतीय प्रवासी न्यास निकाय – इंडियन इमिग्रेशन ट्रस्ट बोर्ड
भारतीय राष्ट्रीय महासभा – इंडियन नेशनल कांग्रेस
भारतीय विधान परिषद – इंडियन लेजिस्लेटिव कौंसिल
भारतीय व्यापार मण्डल – इंडियन चैंबर ऑफ कॉमर्स
महा न्यायवादी – ऍटर्नी जनरल

महापौर – मेयर
महावाणिज्यदूत – कौंसल जनरल
महाविभव – हिजहाइनेस
माल दफ्तर – रेवेन्यू ऑफिस
मुहिम – कैंपेन
याचिका – पिटिशन
इंडियन कमिटी
रंगविद्वेष – कलर प्रेजुडिस
रेल्वे निकाय – रेल्वे बोर्ड
लेख प्रमाणक – नोटरी पब्लिक
लेखा-जोखा – बैलेंस शीट
लोकसेवा आयोग – पब्लिक सर्विस कमिशन
वतनी – नेटिव
विक्रेता (व्यापारिक) अनुमतिपत्र अधिनियम –
डीलर्स लाइसेंसेज ऐक्ट
वित्तीय-सम्बन्ध विधेयक – फाइनेंशियल रिलेशंस बिल
विधान परिषद – लेजिस्लेटिव कौंसिल
विधि पुस्तिका – स्टैच्यूट बुक
विधि विभाग – लॉ डिपार्टमेंट
विधेयक – बिल
विनियम – रेगुलेशन
विभाग – डिविजन
विश्व प्रजाति सम्मेलन – युनिवर्सल रेसेज कांग्रेस
विषय क्रम – ऑर्डर पेपर
शान्तिरक्षा अध्यादेश – पीस प्रिज़र्वेशन ऑर्डिनेंस
शाही आयोग – रॉयल कमिशन
शिष्टमण्डल – डेपुटेशन
शिक्षा परीक्षा – एज्यूकेशन टेस्ट
शुल्क सूची – टैरिफ बुक
संघ प्रवासी विधेयक – यूनियन इमिग्रेशन बिल
संघ संसद – यूनियन पार्लियामेंट
फॉर लैंड्स
संरक्षक – प्रोटेक्टर (ऑफ एशियाटिक्स)
संविदा – कॉन्ट्रैक्ट
संस्था – इन्स्टिट्यूट
संस्थान – स्टेट
संस्थापक – प्रमोटर
सत्याग्रह, अनाक्रामक प्रतिरोध – पैसिव रेजिस्टेंस
सत्याग्रही, अनाक्रामक प्रतिरोधी – पैसिव रेजिस्टर्स
सपरिषद गवर्नर – गवर्नर-इन-कौंसिल
सपरिषद सम्राट् – किंग-इन-कौंसिल
सर्वोच्च न्यायालय – सुप्रीम कोर्ट
साम्राज्य सम्मेलन (शाही परिषद) – इंपीरियल
कॉन्फरेंस (कन्वेन्शन)
स्वामी-सेवक अधिनियम – मास्टर ऐण्ड सर्वेंट्स ऐक्ट
हिदायतें – नोटिसेज
क्षमतावादी – एनेब्लींग

शीर्षक-सांकेतिका

सांकेतिका

अ

आ

इ

ई

उ

ऊ

ए

ऐ

ओ

क

ख

ग

च

ठ

ड

ध

प

फ

ब

भ

य

र

ल

व

श

स

ह

क्ष

४७२